

प्रकाशक—

विश्वविद्यालय हिन्दी प्रकाशन,

लखनऊ विश्वविद्यालय,

लखनऊ ।

प्रथम संस्करण; सं० २०२५ वि०

मूल्य २०/- रुपये

परिवर्द्धित मूल्य २५/-

लखनऊ विश्व विद्यालय हिन्दी प्रकाशन,

मुद्रक—

स्टेन्डर्ड प्रिन्टर्स, ८६, न्यू माडल हाउस,

लखनऊ

पूज्य पिता  
स्वर्गीय बाबू जयप्रसाद जी अग्रवाल  
की पुण्य स्मृति को  
सादर, सविनय समर्पित ।



## कृतज्ञता-प्रकाश

श्रीमान् सेठ शुभकरन जी सेकसरिया ने लखनऊ विश्वविद्यालय की रजत-जयंती के अवसर पर बिसवाँ सुगर फैक्टरी की ओर से बीस सहस्र रुपये का दान देकर हिन्दी-विभाग की सहायता की है। सेठ जी का यह दान उनके विशेष हिन्दी अनुराग का द्योतक है। इस धन का उपयोग हिन्दी में उच्चकोटि के मौलिक एवं गवेषणात्मक ग्रन्थों के प्रकाशन के लिए किया जा रहा है जो श्री सेठ शुभकरन सेकसरिया जी के पिता के नाम पर सेठ भोलाराम सेकसरिया ग्रन्थ माला से संग्रन्थित हो रहे हैं। हमें आशा है कि यह ग्रन्थ माला हिन्दी साहित्य के भंडार को समृद्ध करके ज्ञान वृद्धि में सहायक होगी। श्री सेठ शुभकरन जी की इस अनुकरणीय उदारता के लिए हम अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करते हैं।

दीनदयालु गुप्त

भूतपूर्व प्रोफेसर तथा अध्यक्ष,  
हिन्दी तथा आधुनिक भारतीय भाषा विभाग,  
लखनऊ विश्वविद्यालय







महाकवि चन्द वरदार्पा



महाराज पृथ्वीराज चौहान (तृतीय)

## अध्ययन क्रम

आमुख

१-६

संक्षिप्त रूप

७

पहला अध्याय

१-२३

राजपूत : शब्द तथा इतिहास

१-७

राजपूतों के ३६ वंश तथा उनका इतिहास

७-२३

दूसरा अध्याय

२४-१५०

हिन्दू पात्र : शासक वर्ग

राजा-२४, अजयसिंह-२६, अनंगपाल-२७, अरिमंत-३४, अस्थूलनंद-३५, आनन्द-देव-३५, आनन्दराज-३६, आनलराज अथवा आना-३६, उद्धारहार-३९, किशनराज अथवा कृष्णराज-३९, चतुरवाहुमाण, चाहुवान, चौहान-४०, चंदराय-४२, चन्द्रगुप्त-४२, चन्देलराज परमहिंदेव-४३, जोगसूर-४५, जयचन्द गाहड़वाल-४५, जयसिंह-६३, धर्मसार अथवा धर्मसार-६४, धर्माधिराज-६४, नागहस्त-६५, प्रतापसिंह-६६, प्रथवरार्द्ध-६६, पृथ्वीराज चौहान-६७, बालभरार्द्ध-९८, विन्दसूर अथवा विन्दसार-९९, विबुधसिंह-९९, वीरसिंह-१००, भोलाराय ( भीमदेव ) चालुक्य-१०१, महदेव अथवा महादेव-११४, महासिंह-११४ मानिक्यराय-११५, मोहन्त-११७, मोहसिंह-११८, रामसिंह-११८, रैनसी अथवा रैनसिंह-११९, लोहधीर अथवा लोहसार-१२१, विजयपाल-१२२, वीरदण्ड-१२५, वीरसिंह-१२५, वीसलदेव-१२६, वैरसिंह-१३७, संकाविहार-१३८, संग्रामसिंह-१३८, सम्प्रतिराय-१३९, सामन्तदेव-१४०, सारंगदेव-१४०, सेनराय अथवा सेनराज-१४४, सोमेश्वर-१४४, हरिहरराय-१४९।

तीसरा अध्याय

१५१-२७६

हिन्दू पात्र : सामन्त वर्ग

अचलेश चौहान-१५१, अमरसिंह सेवड़ा-१५२, अल्हणकुमार १५६, आरजसिंह-१५८, आल्हा-ऊवल-१५९, कचराराय-१६५, कनकराय बड़गुज्जर-१६७, कन्ह (कर्नाटक नरेश)-१६८, कन्ह चौहान-१६९, कान्ह कमधज्ज-१७१, काशी नरेश-१७२, कुम्भा जी-१७३, कुमोदमनि-१७४, कूरभराय-१७५, केहरि कण्ठीर-१७६, कैमास दाहिम-१७७, खेमकरन खंगार, वीरसिंह तथा जरासिंह-१८३, गोविन्दराय गहलोत-१८३, चण्डपुण्डोर-१८५, चामण्डराय दाहिम-१८८, छगनराय-१९१, जंधाराभीम-१९२, जसवन्त सिंह-१९३, जैसिंह कमधज्ज-१९४, जैतप्रमार-१९४, जीवनराय-१९७, तिरहुत नरेश-१९७, देवराज वगरी अथवा वगरीराव-१९९, धर्माइन कायस्थ-१९९, धीर पुण्डीर-२००, नरपाल ( नैपाल नरेश )-२०३,

नरसिंह दाहिम-२०४, नाहरराय-२०६, निहदुरराय-२०७, पंचाइन ( चन्देरी नरेश )-  
 २०९, पञ्जूनराय कूरम-२११, प्रतापसिंह-२१३, पर्वतराय-२१४, प्रसंगराय खींची-२१४,  
 पल्लन कुमार-२१५, पहाड़राय तोमर-२१५, पावस पुण्डरी-२१६, वखरेत-२१७, बलभद्र  
 कमधञ्ज-२१७, बलिभद्र तथा उसका भाई-२१८, बालराय-२१९, बालुकाराय कमधञ्ज-  
 २१९, बिसराज-२२१, बेनीदत्त ब्राह्मण-२२२, मकवाना-२२३, मल्लसिंह-२२४, महादेवराय-  
 २२५, मंगल मेवातपति-२२५, रतनसिंह-२१८, रनधीर राय-२२८, रयसल्लराय कमधञ्ज-  
 २२९, रावन-२३१, रावल समरसिंह-२३५, लापन बघेल-२४५, लंगालगरीराय-२४६,  
 लापनसिंह-२५०, लोहाना आजानवाहु-२५२, विजयपाल-२५४, वीरचन्द कमधञ्ज-२५५,  
 वीरमराय-२५५, सजमराय-२५७, सलपराय प्रमार-२५९, सारगदेव जाट-२६०, सारंग-  
 देव सोलंकी-२६१, सिंह प्रमार-२६२, सुमंत-२६३, सुलपपवार-२६७, हरिसिंह-२६८,  
 हाड़ा हम्मीर-२६९, हाट्टलीराय-२६९, हैजमकुमार प्रतिहार-२७५ ।

### चौथा अध्याय

२७७-३४१

#### मुसलमान पात्र

अरबखाँ-२८०, आलमखाँ-२८१, उजबकखाँ-२८२, कलीखाँ कुंजरी-२८२, खाँ पैदा  
 मद्रमूद-२८२, खानखाना-२८३, खानखाना हजस्तखाँ-२८४, खिलचीखाँ-२८५, खुरासानखाँ-  
 २८६, गाजीखाँ-२८६, जलाल जलूस-२८७, जहाँगीर खाँ-२८७, तातारखाँ-२८८, तातार  
 निमुरतखाँ-२९३, दुस्तमखाँ-२९५, घरिखाँ-२९६, निमुरतखाँ-२९६, नूरमुहम्मद-२९७,  
 गिश्वमी खाँ-२९८, पहाड़ीखाँ गोरी-२९८, बलीखाँ एवं अलीखाँ-२९८, बाहबलखाँ-२९९,  
 भट्टमहनगखाँ-३००, मंगोल लल्लरी-३०१, महमूदखाँ-३०२, मियाँ मनसूर रुहिल्ला-  
 ३०२, मियाँ मुस्तफा-३०३, मोर कम्मोदखाँ-३०४, रूमीखाँ तथा बहरामखाँ-३०४, शाह-  
 जह बुद्दीन मुईजूद्दीन मुल्तान गोरी-३०५, सहवाजखाँ-३३०, सुभानखाँ-३३०, हवाशखाँ-  
 ३३१, हिन्दूखाँ-३३१, हुजावनूगीखाँ-३३२, हुस्सैन खाँ-३३२, हुस्सैन-३३४ ।

### पाँचवाँ अध्याय

३४२-३६२

#### काल्पनिक पात्र

लिंग परिवर्त-३४३, सकेतिक भाप-३४३, पूर्व जन्म की स्मृति-३४४, फलादि द्वारा  
 मन्तानोत्तरति-३४५, अप्राकृत जन्म-३४५, राजा का दैवी चुनाव-३४६, अत्ताताई-३५०,  
 बावन वीर-३५४, अन्य काल्पनिक पात्र-३५४, श्रुति-मुनि-३५४, काजी, फकीर, बीलिया  
 आदि-३५९ ।

### छठा अध्याय

३६३-४०९

#### स्त्री-पात्र

इच्छिन-३६३, इन्द्रावती-३६६, कमला (पृथ्वीराज की माता)-३६९, करनाटी-

३७३, कुँअर पद्मसेन—३७६, चित्ररेखा—३७६, जुन्हाई—३७८, सुन्दरी—३८०, दाहिमी—३८१, दूती अथवा योगनी—३८४, पद्मावती—३८५, पृथावाई—३८९, पुण्डरनी—३८९, लाले (खन्नाणी बाला), ३९०, सयोगिता—३९०, मुरसुन्दरी—४००, शशिवृत्ता—४०१, हसावती—४०७ ।

सातवाँ अध्याय

४१०-४३१

राज्य कवि एवं पुरोहित वर्ग

कमल भट्ट—४११, कविचन्द—४११, गुरुराम—४२०, जगदेव भाट—४२३, दुर्गा-  
केदार—४२४ भानु—४२७, माघो भाट—४२८, श्रीकंठ—४३०, हाजीखाँ काजी—४३१ ।

उपसंहार

४३२-४३५

परिशिष्ट

४३७-४९०

१. प्रबन्ध चिन्तामणि—(अ) वीसल विग्रहराज—४३७;  
(ब) परमर्दि सेवक—४३७;  
(स) पृथ्वीराज वध—४३८;
२. पृथ्वीराज विजय महाकाव्य—चाहमान वंश कीर्तनम्—४३९,
३. बिजौलिया का शिलालेख—४४५,
४. सुर्जन चरित—(१) चाहमान उत्पत्ति—४४८,  
(२) चाहमान वंशावली—४४९,  
(३) कान्यकुब्जेश्वर जयचन्द की कन्या कान्तिमती—४५२,  
(४) बाण वेध—४५३,
५. हम्मीर महाकाव्य—४५५,
६. हर्षनाथ के मंदिर का शिलालेख—४५६,
७. सृजान चरित—४५९,
८. गाहड़वाल-वंश—४६०,
९. महाकवि चन्द वरदायी का वंश-वृक्ष—४६१,
१०. दिल्ली के तंवरों की वंशावली (१)—४६३,  
दिल्ली के तंवरों की वंशावली (२)—४६४,
११. देवगिरि के यादवों की वंशावली—४६५,
१२. चौहानों की वंशावली—  
१. हर्षनाथ के मंदिर की प्रशस्ति के अनुसार—४६६,  
२. बिजौलिया के शिलालेख के अनुसार—४६७,  
३. पृथ्वीराज विजय महाकाव्य के अनुसार—४६९,

४. प्रवन्ध कोश में दी हुई चौहानों की वंशावली के अनुसार—४७१,
  ५. हम्मीर महाकाव्य के अनुसार—४७३,
  ६. सुर्जनचरित के अनुसार—४७५,
  ७. रासो के विभिन्न संस्करणों के अनुसार
  ८. पं० सदाशिव दीक्षित के अनुसार—४७७,
  १३. भीमदेव चालुक्य का वंशवृक्ष—
    १. चालुक्य वंश—श्री के० एम० मुंशी के अनुसार—४८०,
    २. चालुक्य वंश—डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल के अनुसार—४८१,
  १४. मुहज्जुद्दीन मुहम्मद गोरी का वंश वृक्ष—४८२,
  १५. सहायक ग्रन्थ सूची—४८३-४९०
-

## आमुख

आदि कालीन हिन्दी साहित्य में पृथ्वीराज रासो का स्थान निर्विवाद रूप से अन्यतम है। इस महत्व पूर्ण कृति के एक अंश को पढ़ने का सर्वप्रथम अवसर मुझे एम० ए० (प्रथम वर्ष) में प्राप्त हुआ। कृति की महत्ता से प्रभावित होकर मैंने एम० ए० (द्वितीय वर्ष) में भी 'चन्द वरदायी' का अध्ययन विशेष कवि के रूप में किया। मेरी रुचि देखकर श्रद्धेय गुरुवर डॉ० विपिनविहारी त्रिवेदी जी ने मुझे पृथ्वीराज रासो के पात्रों की ऐतिहासिकता पर शोध-कार्य करने का आदेश दिया। अतः उनकी आज्ञा तथा तत्कालीन विभागाध्यक्ष डॉ० दीनदयालु जी गुप्त की सहमति से मैं 'पृथ्वीराज रासो के पात्रों की ऐतिहासिकता' के अध्ययन से प्रवृत्त हुआ। सन् १९६१ में इसी प्रबन्ध पर लखनऊ विश्वविद्यालय से पी-एच० डी० की उपाधि प्राप्त हुई।

इतिहास के अनेक स्थल इतने अंधकार पूर्ण हैं कि निरन्तर खोज होते रहने पर भी अभी तक उन पर सम्यक् प्रकाश नहीं डाला जा सका है। भारत की केन्द्रीय राजसत्ता का अन्त होने के उपरान्त लगभग १३वीं शताब्दी के पूर्व तक उत्तरी भारत का इतिहास ऐसा ही अंधकारमय है।

राजा हर्ष के उपरान्त प्रायः सभी राज्यों ने अपनी-अपनी शक्ति का प्रदर्शन किया। १० वीं शताब्दी के अन्तिम चरण में उत्तरी भारत में पाल, गाहड़वाल, चालुक्य, चन्देल तथा चौहान राज्यों के अतिरिक्त गुजरात तथा मालवा के दो और स्वतंत्र राज्य स्थापित हो चुके थे। ११ वीं-१२ वीं शताब्दी में उत्तर भारत की शक्तियों का प्रायः ह्रास हो चुका था। वहाँ सात प्रमुख स्वतंत्र राज्य थे जिनमें कोई भी किसी एक बड़े राज्य के आधीन रह कर कार्य करने को प्रस्तुत न था।

इस युग की राजनीतिक पृष्ठभूमि देखने से स्पष्ट हो जाता है कि सातवीं-आठवीं शताब्दी में बाह्य शक्तियाँ प्रबल नहीं थीं। ९वीं शताब्दी तक राजनीतिक सगठन इतना अशक्त हो गया था कि उसका सामना कर, कोई भी सफलता की आशा नहीं कर सकता था। परस्पर विरोध एवं शक्ति के छिन्न-भिन्न हो जाने के कारण विदेशी आक्रमणकारियों को मानों खुला निमंत्रण प्राप्त हो गया था।



तत्कालीन साहित्य में भारत के राज्यों के पारस्परिक झगड़ों पर अच्छा प्रकाश पड़ता है। पृथ्वीराज रासो सामयिक राजनीतिक अवस्था का जीता-जागता प्रमाण है। दिल्ली-अजमेर के अन्तिम हिन्दू शासक पृथ्वीराज चौहान (तृतीय), कन्नौजपति जयचन्द गाहड़वाल, गुर्जरेश्वर भीमदेव चालुक्य, चन्देलराज परमदिदेव के पारस्परिक संघर्ष एवं गजनीपति शाह महावुद्दीन गोरी के आक्रमणों का 'रासो' में रोचक चित्रण हुआ है।

अपनी विकसनशील प्रवृत्ति के कारण रासो का अस्तित्व भी शका की दृष्टि से देखा जाने लगा, इसका मूल कारण था ऐतिहासिक व्यक्तियों का चित्रण। इतिहास वेत्ताओं ने चरित्रों के विवरणों को तात्पत्र्यों एवं शिला लेखों से मिलना प्रारम्भ किया और फिर हुई जमकर ग्रन्थ की कटु आलोचना। इतिहासकारों ने रासो को अप्रामाणिक एवं अतिहासिक घोषित कर दिया किन्तु साहित्यिक विद्वानों ने रासो का साथ न छोड़ा तथा कतिपय तथ्यों से, जो इतिहास की कसौटी पर भी पूरे उतरते थे, प्रेरणा ग्रहण कर अन्वेषण कार्य प्रारम्भ रखा तथा रासो की प्रामाणिकता एवं संभावित प्रक्षेपों को विज्ञानों ने एक मत से स्वीकार किया। पृथ्वीराज रासो की विविध वाचनाओं के विवरणों को देखने से स्पष्ट होता है कि मुख्यतः पृथ्वीराज रासो के चार-संस्करण प्राप्त होते हैं—

- (१) लघुतम,
- (२) लघु,
- (३) मध्यम तथा
- (४) बृहद्

उक्त सभी रूपान्तरों पर दृष्टिपात करने से ऐसा प्रतीत होता है कि प्रारम्भ में मूल रासो का परिमाण निश्चित रूप से पर्याप्त कम रहा होगा, किन्तु जैसे-जैसे समय व्यतीत होता गया तथा यह ग्रन्थ जनता के मध्य प्रसिद्ध होता रहा, वैसे-वैसे इसमें विकासात्मक परिवर्धन होता गया होगा।

मूल रासो के परिमाण का ठीक-ठीक पता लगाना अत्यन्त कठिन कार्य है। किन्तु रासो के चारों संस्करणों को देखने से इतना अवश्य स्पष्ट होता है कि इसमें कम से कम प्रारम्भ में तीन कथानक अवश्य रहे होंगे। इस काव्य ग्रन्थ का 'सयोगिता स्वयंवर' मुख्य भाग होगा। वास्तव में संयोगिता के कारण ही रासो ग्रन्थ प्राणवान है। 'कईमास वध' प्रकरण भी मूल रासो का एक अंश अवश्य रहा होगा, क्योंकि कैमास वध विषयक अपभ्रंश के तीन पद्यों ने इसकी प्रामाणिकता में अब किसी को सन्देह नहीं रह गया है तथा तृतीय और अन्तिम प्रकरण जिनके विषय में निश्चित रूप से कहा जा सकता है वह शाहवाहुद्दीन गोरी ने युद्ध तथा पृथ्वीराज द्वारा शब्द ब्रेधी बाण चलाकर उसका वध है।

रासो के लघुतम रूपान्तर की धारणा की प्रति संवत् १६६७ की है। गेयकाव्य होने के कारण इसमें स्वनः ही परिवर्तन एवं परिवर्धन होता रहा होगा। यह संस्करण मगों अथवा समयों में विभाजित नहीं है। इस ग्रन्थ की दो प्रतियाँ उपलब्ध हैं जिनमें से एक

तो बीकानेर के श्री अगरचन्द नाहटा तथा दूसरी दिल्ली के डॉ० दशरथ शर्मा के पास है। लेखक को डॉ० शर्मा वाली प्रति की फोटो कापी देखने का सौभाग्य प्राप्त है। उक्त प्रति की एक फोटो कापी लखनऊ विश्वविद्यालय में सुरक्षित है। सम्भव है मूल रासो की कथा इसी प्रति की कथा के आस-पास रही होगी। कालान्तर में इसमें विकास हुआ होगा और परिणाम स्वरूप रासो का लघु रूपान्तर सम्मुख आया होगा।

इस रूपान्तर में पर्याप्त परिवर्धन हुआ। अनेक नए-नए प्रकरणों को जोड़कर कथा को बढ़ाया गया। परिणाम स्वरूप अर्न्तिहासिक तत्वों का समावेश भी होने लगा। इस रूपान्तर में लगभग उन्नीस सर्ग अथवा समय हो गए जिनमें दो हजार पद तथा ३५ सी श्लोक हैं। इस रूपान्तर की अभी तक केवल ५ प्रतियों की सूचना प्राप्त हो सकी है जो बीकानेर तथा लहौर के पुस्तक संग्रहालयों में सुरक्षित है।

मध्यम रूपान्तर की कथा में और भी अधिक विकास हो गया है लघु रूपान्तर से इसका परिमाण लगभग दूने से भी कुछ अधिक हो गया है इसमें कुछ ऐसे प्रकरण जोड़ दिए गए हैं जिनका अस्तित्व लघुतम एव लघु रूपान्तरों में नहीं है, यह रूपान्तर भी लघु के समान सर्गों अथवा समयों से विभाजित है तथा इनकी संख्या ४० से ४७ तक कही जाती है, सम्पूर्ण संस्करण में लगभग ९ से १२ हजार तक श्लोक संख्या है तथा इसकी कुल ११ प्रतियाँ बीकानेर, अबोहर, लाहौर, पूना तथा कलकत्ता के पुस्तकालयों में विद्यमान है।

रासो के बृहद् रूपान्तर में अत्यधिक पाठ वृद्धि हुई है। इस संस्करण में कुछ ऐसी कथाओं को भी स्थान दे दिया गया है जिनका पृथ्वीराज के चरित्र से कोई सीधा सम्बन्ध नहीं है। यदि इन प्रकरणों को ग्रन्थ से निकाल भी दिया जावे तक भी मूल कथा में किसी प्रकार का व्यवधान उपस्थित नहीं होता। रासो के पाठवृद्धि पर विचार करते हुए डॉ० नामवर सिंह से अपना विचार व्यक्त किया है कि—'वाद के परिवर्धन काल में लोहाना आजानवाहु, पद्मावती विवाह पातिसाह ग्रहण, होली कथा, दीपमाला कथा तथा पृथ्वीराज विवाह जोड़े गए। असम्भव नहीं है कि इनमें से कुछ स्वतंत्र काव्य रूप में प्रसिद्ध रहे हों तथा १७ वीं-१८वीं शताब्दी में ही किसी ने इन्हें रासो के अन्तर्गत मानकर लिपि षट् कर लिया हो।' वास्तविकता कुछ भी हो, पर इतना निर्विवाद रूप से सत्य है कि बृहद् संस्करण में प्रक्षिप्त अंश बहुत अधिक बढ़ गया जिससे सम्पूर्ण रासो ग्रन्थ शंका की दृष्टि से देखा जाने लगा। रासो के बृहद् रूपान्तर में ६४ से ६९ तक समय अथवा सर्ग तथा १३ से १७ हजार तक पद अथवा अनुष्टुप की ३१ मात्रा के हिसाब से ३० स ३६ हजार तक श्लोक संख्या विद्यमान है। इस रूपान्तर की अभी तक ३३ प्रतियों की सूचना प्राप्त हुई है जो यूरोप, चम्बई, कलकत्ता, आगरा, काशी, बीकानेर आदि स्थानों में सुरक्षित है।

उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि समय-समय पर मूल रासो में अवश्य ही परिवर्धन होता रहा है। नगरी प्रचारिणी सभा काशी द्वारा प्रकाशित पृथ्वीराज रासो बृहद् रूपान्तर

के अन्तर्गत आता है। इसी रासो का अध्ययन करने के उपरान्त, उसकी प्रामाणिकता के सम्बन्ध में विवाद उठ खड़ा हुआ। अधिकतर विद्वानों का यह मत है कि वर्तमान प्रकाशित पृथ्वीराज रासो, अनेतिहासिक, अप्रामाणिक एवं काल्पनिक है। अन्य तीन रूपान्तरों पर दृष्टिपात करने से स्पष्ट हो जाता है कि कुछ स्थल ऐसे अवश्य हैं जिसके सम्बन्ध में तीनों संस्करणों में कोई उल्लेख तक प्राप्त नहीं होता। अतः निश्चित है कि बृहद् रूपान्तर में कुछ क्षेपक होने के कारण ही वह आज-कल इतने विकृत रूप में मिलता है तथा उसकी ऐतिहासिकता भी शंका का विषय बन गई है। आज समस्त रूपान्तरों के आधार पर रासो का वैज्ञानिक एवं संशोधित पाठ प्रस्तुत करने की नितान्त आवश्यकता है, जिससे साधारण पाठक भी रासो की वास्तविकता का आनन्द ले सके। डॉ० विपिनविहारी त्रिवेदी जी ने लखनऊ विश्व-विद्यालय के तत्वावधान में रासो के सम्पादन का कार्य प्रारम्भ किया था किन्तु उनके असामयिक निधन से यह कार्य अधूरा पड़ा है।

प्रस्तुत अध्ययन क्रम में पृथ्वीराज रासो के सभी संस्करण तथा वाचनाएं उपलब्ध नहीं हो सकीं किन्तु फिर भी पृथ्वीराज रासो का अप्रकाशित रॉयल एशियाटिक सोसाइटी लन्दन का मध्यम, और लघु रूपान्तर तथा धारणोज का लघुतम रूपान्तर, डॉ० त्रिवेदी जी की कृपा से मिल गया। लेखक ने प्रबंध का मूल आधार नागरी प्रचारिणी सभा काशी से प्रकाशित बृहद् पृथ्वीराज रासो को ही बनाया है, किन्तु साहित्य संस्थान उदयपुर से प्रकाशित पृथ्वीराज रासो से भी प्रबन्ध को पूर्ण बनाने के लिए पर्याप्त सहायता ली गई है।

प्रस्तुत अध्ययन की रूप रेखा निर्धारित करने में कोई एक ग्रन्थ निश्चित पथ प्रदर्शन नहीं कर सका है। फलतः कुछ स्थलों को छोड़कर लगभग सम्पूर्ण प्रबन्ध का विषय विभाजन निजी मान्यताओं के आधार पर किया गया है। यहाँ प्रस्तुत अध्ययन क्रम के विभाजन की संक्षिप्त रूप रेखा देना अनुपयुक्त न होगा।

प्रस्तुत प्रबन्ध सात अध्यायों में विभक्त है जिनमें पृथ्वीराज रासो में आए हुए प्रमुख पात्रों की ऐतिहासिक कमीटी पर परखने का प्रयास किया गया है। प्रथम अध्याय में राजपूत शब्द की व्युत्पत्ति-विवेचना के साथ-साथ राजपूत जाति के प्रमुख वंशों का संक्षिप्त परिचयात्मक इतिहास वर्णित है।

दूसरे अध्याय में शासक वर्ग के अन्तर्गत आने वाले हिन्दू पात्रों की ऐतिहासिकता पर विचार किया गया है। ऐतिहासिकता को अधिकाधिक प्रामाणिक बनाने के उद्देश्य से इतिहास ग्रन्थों के अतिरिक्त संस्कृत, प्राकृत तथा अपभ्रंश साहित्य और डिगल साहित्य की ख्यात तथा बातों एवं शिला लेखादि का भी उपयोग लेखक ने किया है।

तीसरे अध्याय में शासित वर्ग के अन्तर्गत आने वाले मुख्य हिन्दू पात्रों की चर्चा है। जिन पात्रों के सम्बन्ध में इतिहास सर्वथा मौन है, उनके विषय में अध्ययन की आधारभूत सामग्री रूप में साहित्यिक कृतियों से सहायता ली गई है।

चौथा अध्याय प्रमुख मुसलमान पात्रों से संबन्धित है। इस अध्याय में मुसलमान शासक एवं शासित दोनों वर्गों के पात्रों को एक ही साथ अध्ययन का आधार बना लिया गया है।

पाँचवाँ अध्याय काल्पनिक पात्रों से संबन्धित है। इस अध्याय में कवि कल्पना प्रसूत पात्रों के विवेचन के साथ साथ कथा विकास में उनके योगदान की चर्चा भी कर दी गई है।

छठे अध्याय में स्त्री पात्रों की विवेचना है। पृथ्वीराज रासो जैसे वीर काव्य में स्त्री पात्रों का चित्रण प्रायः कम ही हुआ है किन्तु जो भी प्रसंग वश आ गई है, उनकी प्रामाणिकता भी देखने का प्रयास किया गया है।

सातवाँ अध्याय विभिन्न राज्यों के राज कवि एवं पुरोहित वर्ग से सम्बन्धित है। इस कोटि के पात्रों की संख्या भी बहुत कम है। इसी अध्याय में उन पात्रों की भी चर्चा हुई है जो सामान्य स्तर के हैं किन्तु कथा-विकास की दृष्टि से महत्व पूर्ण हैं।

प्रस्तुत प्रबन्ध में पृथ्वीराज रासो के लगभग सभी प्रमुख पात्रों का ऐतिहासिक विवेचन प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया गया है। किसी भी युग के पात्रों की ऐतिहासिकता खोजना अत्यन्त दुरूह कार्य है। यह जान सकना सरल नहीं है कि आज से लगभग २०-२१ वर्ष पूर्व भारत के स्वतंत्रता संग्राम में किन-किन पुष्पात्माओं ने अपने अमूल्य प्राणों की आहुति दी थी, न जाने कितने नाम ऐसे होंगे जिनके विषय में आज हम जानते तक नहीं, किन्तु फिर भी उनके साथ एक इतिहास सम्बद्ध है। रासो तो हिन्दी साहित्य का आदि महाकाव्य है। इसके समस्त पात्रों को ऐतिहासिक ग्रन्थों में खोजना भारी भूल होगी। तत्कालीन मुसलमानों में ही इतिहास लिखने की प्रथा थी, वह पक्षपात के कारण हिन्दुओं की उपेक्षा तथा अपने आश्रयदाता मुसलमान शासकों की अतिशयोक्ति पूर्ण प्रशंसा किया करते थे। यह भी अत्युक्ति न होगी कि प्रायः वह अपने इस प्रकार के ग्रन्थों द्वारा विपक्षियों के विषय में भ्रान्ति पूर्ण प्रचार ही अधिक करते थे। ऐसी पक्षपात पूर्ण स्थिति में उनके ग्रन्थों में कुछ प्रामाणिक सामग्री खोजना मृग-तृषणा के अतिरिक्त कुछ नहीं। फिर भी पात्रों के विषय में अधिक से अधिक प्रामाणिक एवं ऐतिहासिक सामग्री जुटाने का प्रयत्न किया गया है। वास्तविकता यह है कि बिना मूल रासो का पता लगाए हुए, उसके पात्रों के विषय में भी अधिकार पूर्ण एवं प्रामाणिक रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता है। रासो में अत्यधिक लेपक होने के कारण बहुत से काल्पनिक नामों का भी समावेश हो गया है, जिसके कारण ऐतिहासिक पात्रों का विवरण भी विकृत होकर रह गया है। ऐसी विषम स्थिति से पात्रों का वास्तविक मूल्यांकन करना अत्यन्त कठिन है, फिर भी लेखक का यही प्रयत्न रहा है कि रासो के पात्रों का वास्तविक स्वरूप पाठकों के समक्ष रखवा जा सके।

इस प्रबन्ध लेखन-काल में अन्य अनेक महानुभावों से समय-समय पर बहुमूल्य सुझाव

प्राप्त होते रहे, उन सभी के प्रति लेखक हृदय से आभार मानता है। सर्व प्रथम लेखक हिन्दी विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय के रीडर तथा हिन्दी विभाग, ब्रडौदा विश्वविद्यालय के अध्यक्ष स्वर्गीय डॉ० विपिनबिहारी त्रिवेदी के प्रति अपनी हादिक कृतज्ञता प्रकट करता है, जिनके स्नेह पूर्ण पथ प्रदर्शन एवं सतत् प्रोत्साहन से ही यह कार्य पूर्ण हो सका। प्रस्तुत कृति में प्रकाशित पृथ्वीराज चौहान तथा चन्दवरदायी के चित्र लेखक को उन्हीं से प्राप्त हुए थे। इसके अतिरिक्त वह सर्वश्री मुनिराज जिनविजय डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी, डॉ० दशरथ शर्मा, डॉ० माताप्रसादगुप्त, डॉ० केसरीनारायण शुक्ल अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, डॉ० भगीरथ मिश्र तथा डॉ० सरयूप्रसाद अग्रवाल का भी कृतज्ञ है, जिन्होंने अपने प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष सुझावों से प्रस्तुत प्रबन्ध को अधिकाधिक सारगर्भित बनाने में हाथ बटाया है। लखनऊ विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के भूतपूर्व अध्यक्ष एवं प्रोफेसर डॉ० दीनदयालु जी गुप्त का लेखक हृदय से ऋणी है, जिनकी सद्भावना उसे सदैव उपलब्ध रही है। मैं अपने अग्रज एवं सहयोगी डॉ० प्रेमनारायण टण्डन तथा डॉ० प्रभाकर शुक्ल का भी अत्यन्त आभारी हूँ जिन्होंने प्रबन्ध के प्रकाशन में पग-पग पर प्रेरणा तथा सभी प्रकार की सहायता एवं सुविधा प्रदान की है।

—कृष्णचन्द्र अग्रवाल

## संक्षिप्त रूप

उ० स०	— उदयपुर संस्करण ।
उ०	— उदाहरणार्थ ।
ए० बी० ओ० आर० आई०	— एनल्स आव दि भंडारकर ओरियंटल रिसर्च इंस्टिट्यूट ।
गी० ही० ओ०	— गौरीशंकर हीराचन्द ओझा ।
छ०	— छन्द ।
ज० आर० ए० एस० बी० बी०	— जर्नल आव दि रायल एशियाटिक सोसाइटी बाम्बे ब्रांच ।
जे० आर० ए० एस० एल०	— जर्नल आव दि रायल एशियाटिक सोसाइटी लंदन ।
जे० आर० ए० एस० बी०	— जर्नल आव दि रायल एशियाटिक सोसाइटी बंगाल ।
डॉ०	— डॉक्टर ।
घा०	— धारणोज ।
ना० प्र० प०	— नागरी प्रचारिणी पत्रिका ।
ना० प्र० स०	— नागरी प्रचारिणी सभा ।
ना० प्र० सं०	— नागरी प्रचारिणी संस्करण ।
पृ०	— पृष्ठ ।
पृ० रा०	— पृथ्वीराज रासो ।
म० म०	— महामहोपाध्याय ।
रा० ए० सो० ल०	— रायल एशियाटिक सोसाइटी लन्दन ।
स०	— समय ।
स० सं० उ०	— साहित्य संस्थान उदयपुर ।

---



## राजपूत : शब्द तथा इतिहास

राजपूताने में यों तो अनेक छोटी-बड़ी जातियाँ हैं किन्तु जो स्थान वहाँ राजपूतों को प्राप्त है वह अन्य को नहीं। राजपूत 'शासक' जाति है। प्रमादवश चाहे कोई इन्हें हूण, तुर्क, यूनानी, शक आदि अनायों की-जिन्होंने भारतवर्ष में आकर हिन्दू धर्म तथा सभ्यता को ग्रहण कर लिया था-सन्तान लिख दें, किन्तु यह शुद्ध आर्य नस्ल के प्राचीन क्षत्रियों के ही वंशज हैं। प्राचीन काल में इस जाति का प्रभुत्व न केवल उत्तर भारत में, अपितु दक्षिण भारत में भी था, किन्तु अब इनकी प्रधानता केवल राजपूताने में ही रह गई है।

'राजपूत' शब्द एक जाति या वर्ण-विशेष के लिए मुसलमानों के इस देश में आने के उपरान्त प्रचलित हुआ है। यह शब्द संस्कृत के 'राजपुत्र' का अपभ्रंश रूप है। आदि काल में 'राजपुत्र' शब्द किसी जाति विशेष के लिए प्रयुक्त नहीं होता था, अपितु यह शब्द क्षत्रिय राजकुमारों अथवा राजवंशियों का सूचक था। इसका एक मात्र कारण यह था कि आदि काल से ही भारतवर्ष क्षत्रियों के आधीन था। कौटिल्य के 'अर्थशास्त्र' कालिदास के काव्य और नाटकों, अश्वघोष के ग्रन्थों, महाकवि बाणभट्ट के प्रसिद्ध ग्रन्थ 'हर्षचरित' तथा 'कादम्बरी'

१. जन्मप्रभृति राजपुत्रानूक्षेत् कर्कटकसघर्माणोहिजनकमक्षाः राजपुत्राः ।

—'अर्थशास्त्र' पृ० ३२ ।

२. राजसूयदीक्षितेन भया राजपुत्रशतपरिवृत वसुमित्रं गोप्तारमादिश्य ।

—मालविकाग्निमित्र अंक ५, पृ० १०४ ।

३. अथ तेजस्विसदनं तपः क्षेत्रं तमाश्रयम् ।

केचिदिक्ष्वाकवीं जग्भू राजपुत्रा विवत्सवः ॥८॥ —सौन्दरानन्द काव्य, सर्ग १ ।

४. केसरिकिशोरकंरिव विक्रमंकरसंरपि विनयव्यवहारिमिरात्मनः प्रति—

विम्बेरिव राजपुत्रोः सह रसमाणः प्रथमे वयसि सुखमतिचिरमुदारु ।

—कादम्बरी, पृ० १४-१५ ।



आदि पुस्तकों एवं प्राचीन शिलालेखों तथा दानपत्रों में राजकुमारों और राजघराने के अन्य व्यक्तियों के लिए 'राजपुत्र' शब्द का प्रयोग हुआ है। चीमी यात्री ह्वेनसांग ने वि० सं० ६८६ से ७०२ (६२९-६४५ ई०) तक भारतवर्ष का भ्रमण किया तथा अपनी यात्रा का विस्तृत वर्णन लिखा। उस वर्णन में तरकालीन युग के भूगोल, इतिहास, धर्म, रहन-सहन आदि का बड़ा ही महत्वपूर्ण चित्रण प्रस्तुत किया गया है। अपने ग्रन्थ में उसने कई स्थानों पर राजाओं का नामोल्लेख कर उनको क्षत्रिय ही लिखा है और राजपूत शब्द का प्रयोग कहीं भी नहीं किया। अतः स्पष्ट है कि ह्वेनसांग के समय तक क्षत्रियों को राजपूत कहने का प्रचार न हुआ था। मुसलमानों के शासनकाल में क्षत्रियों के राज्य क्रमशः तिरोहित होते गए तथा बचे खुचों को उनकी आधीनता स्वीकार करनी पड़ी अर्थात् वह स्वतंत्र राजा न रह कर मुसलमानों के सामन्त बन गए। ऐसे अवसर पर राजवंशी होने के कारण उनके लिए 'राजपूत' शब्द का प्रयोग होने लगा। कालान्तर में शर्नः शर्नः यही शब्द जातिसूचक बन कर जन साधारण में प्रचार पा गया।

क्षत्रिय वर्ण भारतवर्ष पर वैदिक काल से शासन कर रहा था और आयों की वर्ण-व्यवस्था के अनुसार प्रजा का रक्षण करना, दान देना, यज्ञ करना, वेदादि शास्त्रों का अध्ययन करना तथा विपयासक्ति में न पड़ना आदि क्षत्रियों के मुख्य धर्म माने जाते थे। मुसलमानों के भारत में आने के उपरान्त से यही क्षत्रिय जाति 'राजपूत' कहलाने लगी।

राजपूत मुडौल, कद्दावर तथा पौरुषवान होते हैं। इनमें दाढ़ी रखने का आम रिवाज है। प्रायः यह सीधे-सादे तथा मिलनसार प्रवृत्ति के हुआ करते हैं। राजपूत अपनी स्त्री का बड़ा सम्मान करते हैं। वह अपनी मर्यादा के लिए हर समय अपनी जान हथेली पर रखे रहते हैं। राजपूतों के अपने देश, जाति तथा मान-मर्यादा की रक्षा करने के लिए केशरिया

१. मालिमाऽप्रभृतिग्रामेषु संतिष्ठमानश्री प्रतीहारवशीय सर्व्वराजपुत्रैश्च ।

—आवू पर तेजपाल के मंदिर का वि० सं० १२८७ का शिलालेख, ए० इ० जि० ८, पृ० २२२ ।

२. सत्त्वनिव राजराजनकराजपुत्रराजामात्यसेनापति ।

—ताखिमपुर से मिला हुआ राजा धर्मपाल का दानपत्र, ए० इ० जि० ८, पृ० २४९ ।

३. ह्वेनसांग ने महाराष्ट्र के राजा पुलकेशी बलभी के राजा ध्रुवपट ( ध्रुवमत ) आदि कई राजाओं को क्षत्रिय ही लिखा है। वि० वु० रे० वे० व० जि० २, पृ० २५६-६७ ।

४. 'पृथ्वीराज रासो' में रजपूत (राजपूत) शब्द मिलता है—

लगो सुजाय रजपूत सीस । धार्यो सुतेग करि करियरीस ।

पृ० १०, पृ० २५०८, नागरी प्रचारिणी सभा काशी !

५. प्रजानां रक्षणं दानमिन्द्राध्ययनमेव च ।

विषयेऽप्रसक्तितश्च क्षत्रियस्य समासतः ॥ मनुस्मृति १।८९ ॥

वाना धरण कर शत्रु के साथ मर मिटने के अनेक उदाहरण प्रसिद्ध हैं। इस वीरोचित भाव को देखकर ही वीर कवि सूर्यमल्ल मिश्रण ने वीर सतसई में लिखा है—

हूँ बलिहारी रानियां जाया वंश छतीस।

सेर सलूनो चुन ले, मोल समर्प सीस ॥ १०० ॥

अर्थात् हे राजपूत क्षत्राणियो ! तुम धन्य हो जिनकी कोख से यह ३६ वंश उत्पन्न हुए हैं। जो वीर सुपुत्र सेर भर आटा लेकर अर्थात् उदर पालनार्थ अत्यन्त अल्प वेतन लेकर भी अपना सब कुछ समर्पण करने को सदा तत्पर रहते हैं तथा रणक्षेत्र में सदा अपना सिर हथेली पर रखे रहते हैं।

प्रसिद्ध इतिहासकार कर्नल टॉड ने राजपूत जाति का चित्रण करते हुए लिखा है— 'महान शूरता, देशभक्ति, स्वामिधर्म, प्रतिष्ठा, अतिथि सत्कार तथा सरलता, यह गुण सर्वांश में राजपूतों में प्राप्त होते हैं'।

यही नहीं, प्रसिद्ध मुगल सम्राट अकबर के प्रधान मंत्री मोलवी अबुलफजल ने भी राजपूतों को प्रशंसा इस प्रकार की है—विपात्तिकाल में राजपूतों का असली चरित्र जाज्वल्यमान प्रकाशित होता है। राजपूत सैनिक रणक्षेत्र से भागना जानते ही नहीं हैं, बल्कि जब भी युद्ध की दशा सन्देहजनक हो जाती है तब वे लोग अपने घोड़ों से उतर जाते हैं और शूर-वारता के साथ अपन प्राण न्योछावर कर देते हैं।

अंग्रेजी यात्री वरनियर भी अपनी 'भारत यात्रा' पुस्तक में लिखता है कि 'राजपूत लोग जब युद्ध क्षेत्र में जाते हैं तब आपस में गले मिलते हैं गोया उन्होंने मरने का पूरा निश्चय कर लिया है। स्पार्टा देश (योरप) के वीर लोग भी ऐसे अवसरों पर अपने बाल सुलझाते थे। इसी प्रकार राजपूत लोग केसरिया कसूमल वाना पहिनते थे। ऐसा वीरता के उदाहरण ससार की अन्य जातियों में कहाँ पाये जाते हैं ! किस देश और जाति ने इस प्रकार की सभ्यता, साहस और अपने पूर्वजों के रिवाजों को इतनी शताब्दियों तक अनेक संकट सहते हुए कायम रखा है।'।

राजपूतों की वीरता से प्रभावित होकर विदेशियों ने भी उनकी प्रशंसा की और भारतीय काव्यों में भी इनकी वीरता का मुक्तकंठ से गान किया गया है—रासो ऐसा ही काव्य है—मुख्यतः रासो युद्ध-प्रधान काव्य होने के कारण इसमें उस समय की आदर्श वीरता का चित्रण मिलता है। डॉ० विपिनबिहारी त्रिवेदी ने भी इनकी वीरता से प्रभावित होकर लिखा है—'क्षात्र धर्म और स्वामि-धर्म निरूपण करने वाले इस काव्य में तेजस्वी क्षत्रिय वीरों के युद्धोत्साह तथा तुमुल नाद और बेजोड़ युद्ध दर्शनीय है। असार-संसार यश की श्रेष्ठता और

1. 'High courage, patriotism, loyalty, honour, hospitality and simplicity are qualities which must atonce be conceded to them'.

प्रधानता को दृष्टिगत करके उसकी प्राप्ति स्वामि-धर्म पालन में निहित की गई है। स्वामि-धर्म की अनुवर्तिता का अर्थ है प्रतिपक्षी से युद्ध में तिल-तिल करके कट जाना, परन्तु मुंह न मोड़ना। इस प्रकार स्वामि-धर्म में शरीर नष्ट होने की बात को गौण रूप देकर यश सिरमौर कर दिया गया है; और भी एक महान प्रलोभन तथा इस संसार और सांसारिक वस्तुओं से भी अधिक आकर्षक मित्र-लोक वास तथा अनन्य सुन्दरी अप्सराओं की प्राप्ति है। धर्मभीष्ट और त्यागी-योद्धा के लिए शिव की मुण्डमाला में उसका सिर पोहे जाने तथा तुरन्त मुक्ति प्राप्ति आदि की व्यवस्था है।<sup>१</sup> पृथ्वीराज रासो इसी प्रकार की भावनाओं से ओत-प्रोत है। एक स्थान पर डॉ० त्रिवेदी वीरों के अनुशासन तथा स्वामि-धर्म के विषय में लिखते हैं कि 'उस युग की वीरता का यह आदर्श कि स्वामि-धर्म ही प्रधान है, कोरा आदर्श मात्र न था। उसका संस्थापन सेना की सामूहिक दृढ़ता और स्थायित्व तथा विशेषरूप से उसकी युद्धोचित प्रवृत्ति की जागरूकता को ध्यान में रखते हुए अति आवश्यक अनुशासन (discipline) को लेकर हुआ था। अनुशासन ही सेना और युद्ध की प्रथम आवश्यकता है। आदि काल से लेकर आज तक सेना में अनुशासन की दृढ़ता रखने के लिए नाना प्रकार के नियमों का विधान पाया जाता है। यहाँ आज्ञाकारिता को दासता से जोड़ना ठीक नहीं है क्योंकि उस युग में किराए के टट्टुओं (Mercenaries) से भारतीय सम्राटों की सेनाएँ नहीं सजाई जाती थीं। युद्ध क्षत्रियों का व्यवसाय था और स्वामि-धर्म हेतु प्राणोत्सर्ग करना उनका कर्तव्य था। यहाँ दासता और धन के लोभ का प्रश्न उठाना तत्कालीन वीरयुग की भावना को समझने में भूल करना है। सम्राट या सेनापति की आज्ञापालन के अनुशासन को चिरस्थायी और व्रतस्वरूप बनाने के लिए स्वामि-धर्म का इतना उत्कट प्रचार किया गया था कि वह सामान्य सैनिकों की नसों में कूट-कूट कर भर गया था और इसी आदर्श की रक्षा में उनके कट मरने का कार्य दुहाई दे रहा है। दार्शनिक जामा पहने हुए स्वामि-धर्म योद्धा का परम आभूषण था।'<sup>२</sup>

इस प्रकार के वातावरण में पने हुए वीर क्षत्रियों की वृत्ति असार-संसार में यश की अमरता तथा स्वामि-धर्म के प्रति सजग हो जाती होगी तभी तो इन योद्धाओं के लिए युद्ध अनिवर्चनीय आनन्द के क्षण उपस्थित करता है। युद्ध-क्षेत्र में तिल-तिल कर-मर मिटने वाले क्षत्रियों के उद्गार कितने प्रभावशाली हैं, साथ ही इनके वीरोचित उत्साह को देखकर हैरान होना पड़ता है—

(१) मरना जाना हवक है। जुग रहेगो गल्हां।  
सा पुरुसाँ का जीवन थोड़ाई है भल्लाँ।

१. रेवातट, भूमिका भाग, पृ० २०।

२. वही, पृ० २०-२१।

- (२) जाणणी जणै न बार बार थिर रहे न काया ।  
सापुरसां का जीवणा थोड़ा ही फुरमाया ॥
- (३) जीविते लक्ष्मते लक्ष्मी मृते चापि मुरांगणा ।  
क्षणे विध्वंसिनी काया का चिन्ता मरणे रणे ॥
- (४) जीवंतहू की रति सुलभ । मरन अपच्छर हूर ।  
दो हथान लड्डू मिले । न्याय करे वर सूर ॥

करीब ७०० वर्षों से उत्तरीय भारत की जनता का कण्ठहार जगनिक विरचित 'आल्हा खण्ड' भी ऐसी ही भावनाओं से ओतप्रोत है ।

उस समय के राजपूत योद्धा जैसे वीर थे वैसे ही वीरता से परिपूर्ण उनकी पत्नियाँ, माताएँ, बहनें तथा बेटियाँ भी थीं । अपभ्रंश-साहित्य ऐसे उदाहरणों से भरा पड़ा है । यदि शत्रु की सेना परास्त हो गई है तो निश्चय ही उसके पति के द्वारा और यदि पति की सेना भग्न हुई है तो निश्चय ही मेरा पति युद्ध भूमि में मारा गया है ।' कितना दृढ़ विश्वास है उसे अपने पति की वीरता पर—

जइ भग्ना पारकड़ा तो सहि मज्जु पिण्ण ।

अह भग्ना अन्हहं तणा तो तें मारियडेण ॥<sup>१</sup>

और भी, वीरांगना को अपने पति की मृत्यु पर शोक के स्थान पर हर्ष अधिक होता है । वह अपनी प्रिय सखी से कहती है कि—हे बहिन ! अच्छा हुआ, यदि मेरा पति युद्ध भूमि में मारा गया । यदि वह भागा हुआ घर पर आता तो मैं समवयस्काओं ( सखियों ) में लजाती—

भल्ला हुआ जु मारिआ वहिणि महारा कंतु ।

लज्जेज्जतु वयसिअहु जइ भग्ना घर एतु ।<sup>२</sup>

रमणियाँ कायर पति को युद्ध-भूमि से भागने पर मरा हुआ ही समझती हैं । उनके जीवित रहने पर भी शृंगार नहीं करतीं, विधवाओं का वेप धारण किए रहती हैं । एक वीरांगना, मनिहारी से जो उसे चूड़ियाँ पहनाने आई है, कहती है—हे सखि मनिहारिन ! चली जा, फिर इस मकान पर न आना । पति मरे हुए घर आ गए हैं (युद्ध से भाग कर आना मरण तुल्य है) फिर मुझ जैसी विधवाओं के लिए शृंगार कैसा—

मणिहारी जा री सखी , अच न हवेली आव ।

पोव मुवा घर आविया , विधवा किसा बलाव ॥<sup>३</sup>

१. हेमचन्द्र, सिद्ध हेमशब्दानुशासनम्, ११४ ।

२. वही, ९२ ।

३. वियोगी हरि, वीर सतसई, ८४ ।

और भी-उस पुत्र की उत्पत्ति से क्या लाभ तथा मृत्यु से क्या हानि जिसके पिता की भूमि दूसरे से आक्रान्त हो अर्थात् दूसरे द्वारा अग्रहरण कर ली गई हो-यह है उस समय की वीर माता की उक्तियाँ-

पुत्ते जाएं कवणु गुणु अवगुणु कवणु भुएण ।

जा वप्पी की मुहंडी चम्पिज्जइ अवरेण ॥<sup>१</sup>

इसी प्रकार की उक्ति राजस्थानी कवि सूर्यमल्ल मिश्रण ने भी प्रस्तुत की है। वीर माता अपने कायर पुत्र को रणभूमि से भागा हुआ देखकर उसे सम्बोधित करते हुए कहती है-  
हा पुत्र ! आयु क्षीण कराने वाला स्तन पान कराके जब महाकष्ट से तेरा पालन-पोषण किया या तब मैंने यह नहीं जाना या कि तू अपनी जननी का दूध लजा कर आ खड़ा होगा ।

पूत महा दुख पालियो वय खोवण थन पाय ।

एम न जाय्यो आवही, जायण दूध लजाय ॥<sup>२</sup>

इसी प्रकार के विचार महाकवि भर्तृहरि ने अपने 'वैराग्य शतक' तथा श्री वियोगी हरि जी ने वीर सतसई में व्यक्त किए हैं यहाँ पर उन्हें क्रमशः उद्धृत किया जाता है-

माः तु केवलमेवयौवनवनच्छेदे कुठारा वयम् ।

कह्यौमाय, भूख चूमिकं कर गहाय करवाल ।

जनि लजवयो दूध मो पयोधरनु की लाल ।

जणणी जणै कपूत मत, चंगो जौवन खोय ।

जण तू वर विहङ्गणों, कं कुलमडण होय ॥<sup>३</sup>

उसी युग की रमणियाँ ही गौरी से वर मांग सकती हैं कि इस जन्म में तथा अन्य जन्मों में भी हमें ऐसा पति देना जो अंकुशों द्वारा व्यक्त मदांघ हाथियों से हँसता हुआ भिड़ जावे-

आर्योह जामोह अर्नाह वि गीरि सु दिज्जहि कन्तु ।

गय मत्तह चत्तङ्कुसहं जो अविमडई हसन्तु ॥<sup>४</sup>

और भी, युद्ध-मदिरा में झूमता हुआ वीर क्षत्रिय योद्धा उस प्रिय देश को जाना चाहता है जहाँ खड्ग के खरीदार हैं, रण के दुर्भिक्ष ने उसे भग्न कर रक्खा है और विना जूझे हुए वह रह नहीं सकता-

खग विसाहिउ जहि लहहु पिय तहि देसोह जाहुं ॥

रण दुर्भिक्षे भग्नाइ विणु जुज्जे न चलाहुं ॥<sup>५</sup>

१. हेमचन्द्र, सिद्धहेमशब्दानुशासन, १२९ ।

२. वियोगी हरि, वीर सतसई, ११५ ।

३. वही; छं० ८७ ।

४. हेमचन्द्र, सिद्धहेमशब्दानुशासन; ३८३ ।

५. वही; ३८६ ।

अंत में डा० त्रिवेदी के शब्दों में 'जाति गौरव के लिए निजी हित-अहित की अवमानना करने वाले, भारतीय मान-मर्यादा के रक्षक, हिन्दू-शासन का आदर्श रूप से पालन करने वाले, प्राचीन संस्कृति के पोषक राजपूत योद्धाओं ने शत्रुओं की पीठ नहीं दिखाई, जातीय सम्मान के लिए प्राण होम दिए, वचन का निर्वाह किया, सब कुछ उत्सर्ग करके शरणागत की रक्षा की, निःशस्त्र, बाहत, निरीह और पलायन करने वाले शत्रु पर हाथ नहीं उठाया, धोखा नहीं दिया, प्रतारणा नहीं की, झूठ नहीं बोले, विश्वासघात नहीं किया, और युद्ध में स्त्री-बच्चों पर हाथ नहीं उठाया। वे मिट गए, उनके विशाल साम्राज्य ध्वस्त हो गए परन्तु राजपूती आन, बान और शान भारतीय इतिहास में सदा के लिए स्वर्णाक्षरों में लिख गई।'।

## राजपूतों के ३६ वंश तथा उनका इतिहास

राजपूतों के चार वंश तथा अनेक राजकुल अथवा राजवंश मिलते हैं, किन्तु मुख्य राजकुल (clan) ३६ ही हैं जो प्रायः राजपूताने में पाए जाते हैं। कवि चंद वरदाई विरचित 'पृथ्वीराज रासो' में भी हमें ३६ राजकुल होने की सूचना प्राप्त होती है—

रवि ससि जादववंश, ककुथ परमार स्र तोमर ।  
चाहुवान चालुक, छंद सीलार अभीयर ॥  
दोय मंत (दोयमंत) मकवान, गरुड गंहिल गोहिलपुत ॥  
चापोरकट परिहार, राव राठोर रीसजुत ॥  
देवरा टांक सैधवं अनिग (अनग) योतिक प्रतिहार दधिपट् ।  
कारट्टपाल कोटपाल हुव । हरितट गोर कला (मा) ष मट ॥  
घन्य (घान्य) पालक निकुंभवर । राजपाल कवि नीस ॥  
कालच्छुरकं आदि दे । वरने वंश छत्तीस ॥<sup>१</sup>

विक्रम सम्बत् की १२ वीं शताब्दी में काश्मीरी वं० कन्हन ने राजतरंगिणी नामक 'काश्मीर का इतिहास' लिखा था। उसके ७वें तरंग से एक श्लोक से ज्ञात होता है कि उस समय भी क्षत्रियों के ३६ कुल सम्झे जाते थे।<sup>१</sup> आज भी राजपूताने में राजवंशों के विषय में एक प्राचीन लोकोक्ति प्रचलित है कि—

दस रत्रियों दस चन्द को द्वादस ऋषि प्रमाण ।

चार हुतासन से भये वंश छत्तीस दखान ॥

१. रेवातट, भूमिका भाग पृ० २३ ।

२. पृथ्वीराज रासो, सभा संस्करण, छं० १ : ७७ । रू० १ : १३५-३६ ।

३. प्रह्लापयन्तः समूति षटत्रिंशति कुणेषु ।

तेजस्विनो मास्त्वतोपि सहन्ते नोदकैः स्त्रियः ॥ १६१७॥

किन्तु समस्या तब उत्पन्न होती है जब इतिहास में विभिन्न स्थानों पर एक ही वंश के सूर्य, चन्द्र अथवा अग्नि से उत्पन्न होने की कथा मिलती है। संभवतः यह सब क्षमेला पौराणिक-कथाओं के अनुकरण के कारण ही उत्पन्न हुआ होगा।

एक और वंशावली वि० सं० १९७० ( ई० सं० १९१३ ) में वंगाल एशियाटिक सोसाइटी के उपाध्यक्ष महापहोषाध्याय पं० हरप्रसाद शास्त्री को जोधपुर में मिली थी, जो प्रायः एक शताब्दी पूर्व बघेलखण्ड में मिली हुई बताई जाती है। वंशावली इस प्रकार है—

चन्द्रवंशी—(१) यादव । (२) गोड़ । (३) कावा । (४) कौरव (चंदेल) । (५) भाटी । (६) केवरा । (७) तंवर । (८) सोरठा । (९) कटारिया । (१०) सोमवंशी ।

ऋषिवंशी—(१) सेंगर । (२) गौतम । (३) विसेन । (४) चमर गोड़ । (५) ब्रह्मनगोड़ । (६) मट गोड़ । (७) राजगोड़ । (८) दीन दीक्षित । (९) दीक्षित । (१०) विलकेता । (११) विलखरिया । (१२) कनपुरिया ।

यज्ञवंशी (अग्निवंशी)—(१) पड़िहार । (२) सोलंकी । (३) प्रमार । (४) चौहान ।

सूर्यवंशी—(१) गोहिल (सिसोदिया) । (२) सिकरवार । (३) गड़गूजर । (४) कछवाहा । (५) वनाफर । (६) गहरवार (राठोड़, बडेल, बुन्देल) । (७) बघेल (८) सरनेत । (९) निकुंभ । (१०) छीड़ो ।

आजमगढ़ के स्वर्गीय राजा रणजोरसिंह विरचित 'क्षत्रकुल वंशावली' में ३६ राज-वंशों का उल्लेख निम्न प्रकार से किया गया है—

सूर्यवंशी—(१) सूर्यवंशी । (२) रघुवंशी । (३) दागी । (४) कछवाहा । (५) बड़गूजर । (६) सरस्वार । (७) दिखत । (८) सिरनेत । (९) सीसादिया । (१०) गूहवार (बदला) । (११) करछुली । (१२) बोदा । (१३) कन्नोजिया । (१४) विलकंत । (१५) चंवरगौर । (१६) राठौर ।

चंद्रवंशी—(१) गहरवार (बुन्देलों से भिन्न) । (२) चन्देल । (३) सोमवंशी । (४) तीर ।

नागवंशी—(१) पायक । (२) वेस ।

ऋषिवंशी—(१) गौतम । (२) सेंगर । (३) विसेन ।

अग्निवंशी—(१) चौहान । (२) सुलंकी । (३) नाहर । (४) बघेल । (५) गुहोलत । (६) नदवान । (७) खागर । (८) परहार । (९) पमार । (१०) खडेत । (११) भदौरी ।

राजा रणजोर सिंह ने एक छठवाँ वंश असुर (दैत्य) वंश माना है—

दैत्यवंशी—(१) निकुंभ । (२) निवार । (३) कटोच । (४) कटियार । (५) अमेठिया । (६) काठी । (७) जेठवा । (८) ठोठ । (९) सिकरवार । (१०) दहिमा । (११) मोहिल ।

३६ राजवंशों की पाचवीं तालिका हेमचन्द्र कृत कुमारपाल चरित (सं० १२१७ वि०) में दी हुई है—(१) इक्ष्वाकु । (२) सोम । (३) यदु । (४) परमार । (५) चौहान । (६) चालुक्य । (७) छिन्दक । (८) सिलार (राजतिलक) । (९) चापोटक । (१०) प्रतिहार । (११) करक । (१२) कूरपाल (कूपट) । (१३) चन्देल । (१४) ओहिल । (१५) पोलिक । (१६) मोदी । (१७) धान्यपालक । (१८) दहिमा । (१९) तुरुन्दलीक । (२०) निकुम्प । (२१) हूण । (२२) हरियड़ । (२३) मोरवर । (२४) पौरवर । (२५) सूर्य । (२६) संधव । (२७) चटुक । (२८) राट । (२९) शक । (३०) करट । (३१) पाल । (३२) वात्तल । (३३) चट्टयाणक । (३४) अभंग । (३५) नट (जट) । (३६) राज्यपालक ।

छठवीं वंशावली, कर्नेल टॉड कृत 'राजस्थान' (प्रथम भाग) में मिलती है। उसमें ३६ राजवंशों का उल्लेख इस प्रकार हुआ है—(१) सूर्य । (२) चन्द्र । (३) गहलोत । (४) यदु । (५) तवर । (६) राठौर । (७) कछवाहा । (८) पंवार । (९) चौहान । (१०) सोलंकी । (११) परिहार । (१२) चावड़ा । (१३) टांक । (१४) जाट । (१५) हूण । (१६) काठी । (१७) वल्ला । (१८) झाला । (१९) जेठण । (२०) गोहिल । (२१) सरवैया । (२२) सिलार । (२३) डाभी । (२४) गौड़ । (२५) डोड़ । (२६) गहरवार । (२७) वड़गूजर । (२८) सेंगर । (२९) सिकरवार । (३०) वैस । (३१) दहिमा । (३२) जोहिया । (३३) मोहिल । (३४) निकुम्भ । (३५) राजपाली । (३६) दाहिमा । इनके अतिरिक्त (३७) हुल तथा (३८) डाहरिया ।

प्रसिद्ध इतिहासकार श्री जगदीशसिंह गहलोत क्षत्रियों के ३६ राजवंशों के विषय में अपना मत इस प्रकार निर्धारित करते हैं—‘तुलना और खोज करते हुए पूर्व व पश्चिम के ३६ राजवंशों का समावेश किया है। जिसका आधार पुरानी पुस्तकें व वयोवृद्ध जानकर लोग और दन्त कथाएँ हैं। इन ३६ राजवंशों के सिवाय अन्य भी कई राजवंश हुए होंगे परन्तु क्योंकि इससे अधिक संख्या लोक प्रसिद्ध नहीं है। इसलिए हम भी छत्तीस संख्या परिमित रखते हैं। हमारी सम्मति में वास्तव में नामावली इस प्रकार होनी चाहिए—

सूर्यवंशी—(१) गहलोत । (२) कछवाहा । (३) राठोड़ । (४) वड़गूजर । (५) निकुम्भ । (६) कठेरिया काठी । (७) मौर्यवैस । (८) जोहिया ।

चन्द्रवंशी—(१) यादव । (२) गौड़ । (३) तंवर । (४) नागवंशी । (५) झाला । (६) कलचुरी (हैहय वंशी) । (७) मौखरी (गुप्तवंशी) । (८) कटोच । (९) पलवार । (१०) अग्निवंशी । (११) परमार । (१२) चौहान । (१३) सोलंकी । (१४) पडिहार ।

ऋषिवंशी—(१) पडिहारिया (देवल आदि) । (२) सेंगर । (३) दाहिमा ।



(४) गौतम । (५) उदयनिया । (६) वाण । (७) पल्लव । (८) गर्ग । (९) दईया । (१०) भृगुवंशी । (११) जेठवा । (१२) कदम्ब ।”

इतना ही नहीं लोकोक्तियों में भी राजपूतों के ३६ वंश ही प्रचलित हैं । वीर रसावतार महाकवि सूर्यमल मिश्रण विरचित ‘वीर सतसई’ के निम्न छन्द से भी राजपूतों के ३६ वंश होना ही प्रकट होना है ।

हूं बलिहारी राणियां जाया बंस छतीस ।

चून सलूणी सेर ले, मौल समर्प सीस । १००।

वीर सतसई के सम्पादक त्रय ने अपनी टिप्पणी में ३६ वंश इस प्रकार गिनाए हैं ।<sup>१</sup>

(१) झाला । (२) हाला । (३) ऊभट । (४) बाघेला । (५) सरवहिया । (६) सोलंकी । (७) मौलिह । (८) मांगलिया । (९) राठोड़ । (१०) चावड़ा । (११) दहया । (१२) डावी । (१३) बला । (१४) गोड़ । (१५) सीसोदिया । (१६) टाक । (१७) चाहिल । (१८) चाचिक । (१९) पहिहार । (२०) बालेसा । (२१) दाहिमा । (२२) सोनगरा । (२३) वारड़ । (२४) खीचीं । (२५) वरड़ा । (२६) बीरूपा । (२७) कछवाहा । (२८) हाड़ा । (२९) देवड़ा । (३०) जाडेचा । (३१) परमार । (३२) सिकरवाल । (३३) भाटी । (३४) काठी । (३५) तोमर और । (३६) चन्देल ।

विभिन्न ग्रन्थों के आधार पर हमने राजवंशों को गिमाने का प्रयत्न किया है । उपर्युक्त समस्त ३६ वंशों का इतिहास का वर्णन करना यहाँ पर अप्रासंगिक होगा, अतः प्रमुख वंशों का ही विस्तृत विवरण नीचे दिया जा रहा है ।

चौहान-‘पृथ्वीराज रासो’ में लिखा है कि ‘अर्बुदगिरी पर अनेक ऋषियों को यज्ञ करते देखकर<sup>२</sup> राक्षसों ने नाना प्रकार के उपद्रव करना प्रारंभ कर दिया’, यह देखकर सब मुनिगण वशिष्ठ जी के पास गए और उनसे राक्षसों का अन्त करने की प्रार्थना की<sup>३</sup> तब गुरु वशिष्ठ ने ध्यान लगाकर हवन किया, जिससे प्रतिहार, चालुव्य तथा प्रमार क्रमशः ये तीन वीर पुरुष उत्पन्न हुए जिन्होंने राक्षसों से युद्ध किया :—

तव सु रिप्य वाचिष्ठ । कुण्ड रोचन रचि तामह ।

धरिय ध्यान जजि होम । मध्य वेदी सुर सामह ॥

1. History of Marwar by Jagdish Singh Gahlot,  
Page 404-5, Published by Hindi Sahitya Mandir, Jodhpur, 2nd Edition  
1925 A. D.

२. ‘वीर सतसई’ सम्पादक प्रो० कन्हैयालाल सहगल, प्रो० पतराम गोड़ तथा डा० ईश्वरदीन आशिषा, पृ० ५६, बंगाल हिन्दी मंडल, ८, रायल एक्सचेंज प्लेस, कलकत्ता, प्रथम आवृत्ति, वि० सं० २००५ ।

३. पृ० २० रा०, सभा संस्करण, सं० १, छ० २४४ । ४. वही, छ० २४५-४७ ।

५. वही, छ० २४८ ।

तव प्रगट्यौ प्रतिहार । राज तिन ठौर सुधारिय ।

फुनि प्रगट्यौ चालुक्क । ब्रह्मचारी व्रत धारिय ॥

पांवार प्रगट्या वीर वर । कह्यौ रिष्य परमार धन ।

त्रय पुरष जुद्ध कीनौ अतुल । यह रण्यस पुंहत तन ॥ २५०॥<sup>१</sup>

किन्तु इतने पर भी दानवों का उपद्रव शान्त न हुआ ।<sup>१</sup> उनका निरन्तर उपद्रव बढ़ता देखकर गुरुवर वशिष्ठ ध्यान लगाकर फिर से यज्ञ-कुण्ड की विधिवत रचना कर पुनः यज्ञ हेतु बैठे तथा उसके प्रभाव से देवताओं का अंश ग्रहण करने वाले, असुरों का विनाश करने वाले महाशक्तिशाली पुरुष को उत्पन्न करने का विचार किया<sup>२</sup> तथा फिर ब्रह्मा की स्तुति करके मंत्रों के प्रभाव से अग्नि-कुंड से एक शक्तिशाली पुरुष उत्पन्न किया, जिसका शरीर ऊँचा, मुख रक्तवर्ण तथा जो चारों भुजाओं में खड्ग धारण किए हुए था, इसी कारण उसे चाहुवान (चतुर्वहिमाण) कहा गया ।

अनल कुंड किय अनल । सज्जि उपगार सार सुर ॥

कमलासन आसनह । मंडि जग्योपवीत जुरि ॥

चतुरानन स्तुत सद्ध । मंत्र उच्चारसार किया ॥

सुकरि कमंडल वारि । जुजित आह्वान थान किय ॥

जां जग्नि पानि श्रव आहुति जजि । मजि सु दुष्ट आह्वान करि ॥

उप्पज्यौ अनल चहुवान तव । चव सु बाहु असि बाह धरि ॥ २५१॥<sup>३</sup>

अग्नि से उत्पन्न होने वाले चारों प्रतिहार, चालुक्क, परमार तथा चाहुवान वीरों ने मिलकर ऋषियों का यज्ञ निर्विघ्न समाप्त कराया ।

कवि जोधराज कृत 'हम्मीर रासो' में भी पृथ्वीराज रासो से ही मिलती-जुलती कथा प्राप्त होती है । उसमें भी चाहुवानों की उत्पत्ति के विषय में लिखा है कि—'इधर सृष्टि के शासन कर्ता क्षत्रियों के समूह उन्मूलन हो जाने से जब परस्पर अन्याय आचरण के कारण प्रजा पीड़ित हो उठी तथा दैत्यों के उपद्रव से ऋषिगणों के यज्ञादि कर्मों में भी विघ्न पड़ने लगा तब ऋषिगण संसार की रक्षा और उसके उचित शासन के निमित्त फिर क्षत्रियों के उत्पन्न करने की अभिलाषा से यज्ञ करना विचार कर सर्वदगिरि अर्थात् आवू पर्वत पर गए । वहाँ पर सब ऋषियों ने शिव की आराधना की । तब शिव ने भी वहाँ आकर मुनियों की प्रार्थना स्वीकार की और वे उक्त पर्वत पर अचल रूप से विराजमान हुए; अस्तु तब मुनिवरों ने भी सुन्दर वेदिका रचकर यज्ञकर्म आरम्भ किया । इस यज्ञ में द्वैपायन, वशिष्ठ, लोम, दालिम, जैमिनी, हर्षन, धौम्य, भृगु, घटयोगि, कौशिक, वत्स, मुद्गल, उद्दालक, मातंग, पुलह

१. पृ० रा० रा०. सभा संस्करण, स० १, छ० २५० । २. वही, छ० २५१ ।

३. वही; छ० २५३ । ४. वही; छ० २५५ ।

५. कवि जाधोराज, हम्मीर रासो, छ० ५४-७०, सम्पादक श्याम सुन्दर दास, वी० ए०, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, द्वितीय संस्करण, १९२९ ।

अग्नि, गीनम, गर्ग, सांडिल्य, भरद्वाज, जाबालि, मारकंडेय, जरतकाल, जे.जुत्ये, पराशर, च्यवन और पिप्पलाद आदि मुनियों का समारोह हुआ था। इसके अतिरिक्त शिव और ब्रह्मा भी स्वयं वहाँ उपस्थित थे। इस प्रकार समुचित प्रकार से जिस समय यज्ञ हो रहा था और वेदिका से उत्पन्न हुई अग्नि शिखाएं आकाश का स्पर्श कर रही थीं, उसी समय उस वेदिका में से चालुक्य, प्रमार और पण्डित अग्नि क्रम से उत्पन्न हुए। इन्होंने मुनिवरों की आज्ञा पाकर दैत्यों से युद्ध भी किया; किन्तु उन्हें परास्त करने में वे समर्थ न हो सके। तब ऋषियों ने उक्त यज्ञ स्थल को त्यागकर उसी पहाड़ पर नैऋत दिशा में दूसरा अग्नि कुंड निर्माण किया। इस वेर के यज्ञ में ब्रह्मा ने ब्रह्मा, भृगू मुनि ने होता, वशिष्ठ ने आचार्य्य, वत्स ने ऋत्विक् और परशुराम ने यजमान का कार्य संपादन किया। निदान इस यज्ञ से जो अग्नि के समान तेजवाला पुरुष उत्पन्न हुआ उसका नाम चहुवान जी हुआ, क्योंकि इनके चार बाहु थे और प्रत्येक बाहु खड्ग, धनुष, शूल और चक्र इन चारों आयुधों को धारण किए हुए था। इस पुरुष ने ऋषियों के आशीर्वाद और निज कुल देवी आशापूरा के प्रसाद से सम्पूर्ण दैत्यों का वध कर ऋषि और देवताओं को प्रसन्न किया।

वर्तमान काल में निर्दिष्ट चारों वर्ण के क्षत्रिय अपने को अग्नि वंशी ही मानते हैं। वाल्मीकि रामायण के सर्ग ५४ तथा ५५ में लिखा है कि एक बार विश्वामित्र, आवू पर्वत पर निवास करने वाले वशिष्ठ जी की गाय नदिनी को हर कर ले गए। इस पर वशिष्ठ ने अग्नि कुंड से एक वीर पुरुष को प्रकट किया, जो शत्रु से युद्ध कर गाय छीन लाया। अग्नि-वंशियों की उत्पत्ति का मूल श्रोत सभवतः रामायण की यही कथा रही है। इस विषय में डॉ० दशरथ णर्मा का कथन युक्ति सगत प्रतीत होता है—‘आज से हजारों वर्ष पूर्व जब शकादि की उत्पत्ति का समझना एवं समझाना आवश्यक हुआ तब वशिष्ठ एवं कामधेनु की कथा की कल्पना की आवश्यकता हुई। लगभग एक हजार वर्ष बाद जब पल्लवादि भारतीय जन-समाज के अंग बन गए और परमारादि कई अन्य जातियों की उत्पत्ति को समझना आवश्यक हुआ तब इन जातियों के असली इतिहास को न जानते हुए कई कवियों ने उसी पुराने रामायण के कथानक पर परमारादि की उत्पत्ति कथा हमारे पूर्वजों के सम्मुख रखी।’

म० म० पं० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा के मतानुसार चौहान अग्निवंशी नहीं, वर्ग वे सूर्यवंशी थे। ‘राजपूतों’ को क्षत्रिय न मानने वालों की एक दलील यह भी है कि राजपूतों में चौहान, सोलंकी, प्रतिहार और परमार ये चार कुल अग्नि वंशी हैं और उनके मूलपुरुषों का आवू पर वशिष्ठ के अग्नि कुंड से उत्पन्न होना बतलाया जाता है। अग्नि से उत्पत्ति मानने का तात्पर्य यही है कि वे क्षत्रिय नहीं थे, जिससे उनको अग्नि की साक्षी से संस्कार कर क्षत्रियों में मिला लिया। इसका उत्तर यह है कि इन चार राजवंशों को अग्निवंशी होना

केवल 'पृथ्वीराज रासो' में लिखा है, परन्तु उसके कर्त्ता को राजपूतों के प्राचीन इतिहास का कुछ भी ज्ञान न था, जिससे उसने मन माने झूठे सम्बन्ध और बहुधा अप्रामाणिक घटनाएँ उसमें भर दी हैं। ऐसे ही वह पुस्तक वि० सं० की १६वीं शताब्दी के पूर्व की बनी हुई भी नहीं है। जो विद्वान 'पृथ्वीराज रासो' को सम्राट पृथ्वीराज के समय का बना हुआ मानते हैं उनमें से किसी ने भी उसकी पूरी जाँच नहीं की। यदि वह प्राचीन शोध की कसौटी पर कसा जाता तो उसकी वास्तविकता प्रकट हो जाती। जब से प्रसिद्ध विद्वान बूलर को कश्मीर से कश्मीरी पंडित जयानक का बनाया हुआ और पृथ्वीराज के समय में ही लिखा हुआ 'पृथ्वीराज विजय महाकाव्य' प्राप्त हुआ तब से शोधक वृद्धि के विद्वानों की श्रद्धा 'पृथ्वीराज रासो' पर से उठ गई। 'पृथ्वीराज रासो के निर्माण काल के पूर्व उक्त क्षत्रिय वंश अग्निवंश के नाम से विख्यात न थे जैसा कि निम्नलिखित विवरण से प्रत्यक्ष होता है—

पृथ्वीराज चौहान के दरबार में आने वाले कश्मीरी कवि पंडित जयानक ने 'पृथ्वीराज विजय महाकाव्य' में अनेक स्थलों पर चौहानों को सूर्यवंशी लिखा है। 'यथा जिस प्राचीन रघु के श्रेष्ठ काकुत्स्थ कुल में इक्ष्वाकु और रघु को धारण किया अर्थात् जो काकुत्स्थ कुल इक्ष्वाकु और रघुकुल के नाम से प्राचीन काल में चला वही कुल कवियुग में चाहमान को प्राप्त करके अपने चौथे प्रवर में आया अर्थात् उसी का चौथा नाम कलियुग में चाहमान से उत्पन्न हुआ। अपने वंश गुरु सूर्य के प्रताप को उन्नति का विस्तार करते हुए राजा का पुत्र जन्मा—इसका पुत्र भी दूसरे भीष्म के समान हुआ जिसके कि सूर्य पुत्र पृथ्वीराज के देखते-देखते सूर्य वंश को उन्नत किया।'।

'पृथ्वीराज से पूर्व अजमेर के चौहानों में पृथ्वीराज (वीरसजदेव चौथा) बड़ा विद्वान और वीर राजा हुआ, जिसने अजमेर में एक सरस्वती मंदिर स्थापित किया था। उसमें उसने अपना रचा हुआ 'हरकेलि नाटक' तथा अपने राजकवि सोमेश्वर रचित 'ललित विग्रह-राज नाटक' को शिलाओं पर खुदवा कर रखवाया था। वहाँ से मिली हुई एक बहुत बड़ी शिला पर किसी अज्ञात कवि के बनाए हुए चौहानों के इतिहास के किसी काव्य का प्रारम्भिक अंश खुदा है। इसमें भी चौहानों को सूर्य वंशी ही लिखा है।'।

१. गौरौशंकर होराचन्द ओझा—राजपूताने का इतिहास, भाग १, पृ० ७२।

२. काकुत्स्थमिक्ष्वाकुरघू च पृष्ठधत्पुलाम व त्रिप्रवरं रघोः कुलं।

कलावपि प्राप्य सचाहमानतां अरुद्धं तुर्यप्रवरं बभूव तत् ॥ २।७१ ॥

..... जानोः प्रतापोन्नति।

तन्वंगौत्र गुरोनिजेन नृपतेर्जसे सुतो जन्मना ॥ ७।५० ॥

सुतोप्यपरगाङ्गेयो निन्येस्य रवि सनुमा।

उन्नति रविवंशस्य पृथ्वीराजेन पश्यता ॥ ८।१४ ॥

—पृथ्वीराजविजय महाकाव्य।

३. ....देवोः रविः पातुवः ॥ ३३ ॥

राजा हर्ष के शिलालेख में चाहमानों को गृयक का वंशधर लिखा है। शिलालेख से विदित होता है कि दशवीं शताब्दी तक चौहान अपने को सूर्यवंशी ही मानते थे, यथा—

तन्युवतयर्थ मुपागता रघुकुले भू चक्रवर्ती स्वयं ॥'

अर्थात् उसकी मुक्ति हेतु रघुवंशी चक्रवर्ती राजा स्वयं आया।

वि० सं० १४५० के आस-पास ग्वालियर के तोवर राजा वीरम के दरबार में प्रतिष्ठा पाए हुए जैन विद्वान नयचंद सूरि ने 'हम्मीर महाकाव्य' नामक चौहानों के इतिहास ग्रन्थ में भी चौहानों को सूर्य वंशी कहा है।<sup>१</sup> वृंरी के स्वर्गीय महाराज रामसिंह जी बहादुर के दरबारी कवि सूर्यमल्ल मिश्रण ने अपने ग्रन्थ 'वंशभास्कर' में आवू के साथ-साथ संक्षेप में चौहानों की उत्पत्ति का भी उल्लेख किया है।

अनल अन्ववाय हि किते वरनत सौर सानि।

तेज तत्व एकत्व करि, तहि विरोधि तह जानि ॥'

अर्थात् कितने ही लोग अग्नि वंश को सूर्यवंश कह कर वर्णन करते हैं उसमें भी तेज तत्व की एकता के कारण विरोध नहीं समझना चाहिए।

पंडित झावर मल्ल शर्मा ने 'राजस्थानी' पत्रिका में 'चौहानों के अग्नि वंशी कहलाने का आधार' नामक शीर्षक से एक लेख में लिखा है कि 'मुझे भी चौहानों को अन्यतम शाखा भदौरियों के इतिहास की खोज करने के प्रसंग में कुछ विचार करने का अवसर मिला है। मेरी राय में पृथ्वीराज रामो के रचयिता का अपने काव्य ग्रन्थ में चौहानों की उत्पत्ति के सम्बन्ध में अपनी कल्पना से काम लेकर अर्बुदगिरि के यज्ञ की कथा रच डालना सम्भव है और यह भी सम्भव है कि परमारों की उत्पत्ति की कथा ही इसकी कल्पना का आधार हो। मैं भी श्री ओझा जी के उपस्थित किए हुए प्रमाणों के विचार से चौहानों का महर्षि वशिष्ठ से

तत्पात्समालंब (व) नंदड्योनिर भूज्जनस्य रघलतः स्वमार्गो।

वंशः स दैवोदरसो नृपाणा मनुदातैर्नो घुण कीट रंघ्रः ॥३४॥

सुमुत्थितो कद्विनरण्य योनिरूपन्न पुत्राग कंदव (व) ज्ञातः।

आश्चर्यमंतः प्रसरत्कुशोनं वंशोत्थिां श्री फलतः प्रयाति ॥३५॥

आधिव्याधिकुवृत दुर्वातिपरित्यक्त्यप्रजात्र ते।

सप्तदोषभुजो नृपाः सममवन्निक्ष्वःकुरामदयः।..... ॥३६॥

तस्मिन्नयारिविजयेन विराजमानो राजोनुरंजित जनोजनि चाहमान ॥३७॥

१. हिस्ट्री आव मेडिविल हिन्दू इंडिया, भाग २, पृ० १३-१४, ९७।

२. अवातस्मंडल तोक्षमासां पुत्युः पुमनुसात मंडलाप्रः।

तं चानि पिच्याश्च दसोय रजाविधी वधदिप मुञ्चं सुखेन ॥

—हम्मीर महाकाव्य, १-१६।

३. सूर्यमल्ल मिश्रण—वंशनास्कर, प्रथम राशि, दशम मयूख।

कोई संबंध नहीं मानता परन्तु उनका वत्स गोत्री होना केवल टॉड साहब ने ही नहीं। वल्कि शिलालेख के आधार पर ओझा जी ने भी स्वीकार किया है और स्वयं चौहान भी अपने को अग्नि वंशी गोत्री मानते हैं। यह वत्स गोत्र ही बतलाता है कि चौहानों का अग्नि वंश से आदि और अविच्छिन्न सम्बन्ध है। अब इसके कारण पर विचार कीजिए। हिन्दुओं के यहां ८ बड़े गोत्र प्रवर्तक ऋषि हो गये हैं—विश्वामित्र, भृगु, भारद्वाज, गौतम, अत्रि, वशिष्ठ, कश्यप और अगस्त्य। इनमें से भृगु गोत्र की ७ शाखाओं (वर्कत विद्, अष्टिपण, यास्क, मित्रध्रुव, वैन्य और शुनक गोत्र प्रवर निबन्ध कदम्बम भृगु काण्डम—पृष्ठ २३-२४) में से एक वत्स शाखा है। तब वत्स गोत्र के आदि पुरुष महर्षि भृगु बतलाए गए हैं। तब यह देखना चाहिए कि भृगु किस वंश के है। इसके लिए मनुस्मृति का वचन है—

इदमचूर्महात्मानं अनल प्रभाव भृगुम् ।

इसमें भृगु का विशेषण अनल प्रभाव स्पष्ट है। इस सम्बन्ध में केवल मनुस्मृति ही नहीं श्रुति भी साक्षी देती है—

तस्य भद्रेतसः प्रथम देदीप्यते तदसावादित्यो भवन। यद्वीनीय मासीव भृगु।

अर्थात् उसकी शक्ति (रेतस वीर्य) से जो पहला प्रकाश (अग्नि) हुआ, वह सूर्य बन गया और जो दूसरा हुआ उसी का भृगु। इसी प्रभाव से भृगु को अनल प्रभाव कहा गया है। इस प्रकार भृगु अग्नि वंशी हुए और भृगु वंशी हुए वत्स। वत्स गोत्री हैं चौहान। अतएव चौहानों के अग्नि वंशी कहलाने में कोई तात्त्विक आपत्ति दिखलायी नहीं देती।

डॉ० विपिनविहारी त्रिवेदी ने भी उपर्युक्त मत का समर्थन इन शब्दों में किया है—  
‘चन्द, ने चौहानों को अग्नि वंशी बताकर चस्तुतः सत्य का अधिक प्रकाश किया है जबकि (संस्कृत) ‘पृथ्वीराज विजय’ के कर्ता जयानक ने ही केवल नहीं वरन् उसके पूर्ववर्ती (भरत) शिलालेखकार कवियों तथा परवर्ती (संस्कृत) ‘हम्मीरमहाकाव्य’ कर्ता नयचन्द सूरी और (संस्कृत) सुजैनचरित्र महाकाव्य (सर्ग ७, श्लोक ५८-६१) के रचयिता चांद्रशेखर ने उन्हें सूर्यवंशी बतलाकर एक ओर जहाँ अग्नि और सूर्य में तेज रूप के कारण तत्त्वतः समानता का भाव होने से (सूर्य द्वारा चाहमान की उत्पत्ति अग्निशक्ति परिवर्तन सहित प्रस्तुत करने) सत्य से विरत न होने का दावा किया, वहाँ दूसरी ओर उनका भारत के सुप्रसिद्ध ६६८ क. बुल चाले रघुवंशियों से गौरवपूर्ण और महिमामय सम्बन्ध भी अनायास ही स्थापित कर दिया। वास्तव में चौहानों को सूर्यवंशी बनाकर संस्कृत-कवियों की एक पन्थ का काज सिद्ध कर लेने की कल्पना परम सराहनीय है। परन्तु इसके बावजूद लोक में चौहानों की श्रुति आज तक अग्निवंशी होने की ही चली जा रही है और स्वयं यह जाति भी यही बात गवं से स्वीकार करती है। देश्य भाषा की कृति ‘पृथ्वीराज रासो’ में चौहानों का अग्नि कुलीन उल्लेख

१ मनुस्मृति, अध्याय ५, श्लोक १।

२. चौहानों के अग्निवंशी कहलाने का आधार, राजस्थानी, नाग ३, अंक २ पृ० ७८।

अधिक ऐतिहासिक है ।” संस्कृत ग्रन्थों में ऐसा भी उल्लेख प्राप्त होता है कि, वह पुरुष सूर्य मटन से अवतरित होकर यज्ञ कुण्ड से प्रगट हुआ । संभव है विद्वानों ने भ्रमवश उसे सूर्य से उत्पन्न ही मान लिया हो जबकि वास्तव में वह प्रगट अग्नि से ही हुआ । अतः स्पष्ट है कि चौहानों को अग्नि वशी ही मानना अधिक न्याय संगत होगा । वशिष्ट द्वारा आवू शिखर पर किए गए यज्ञ से, परमार, प्रतिहार, चालुक्य, तथा चाहुमान क्षत्रियों की उत्पत्ति के विषय में भविष्य, पुराण” भी मौन नहीं है—

एतस्मिन्नैव काले तु कान्यकुब्जो द्विजोत्तमः ।

अर्बुदं शिखरं प्राप्य ब्रह्म होममयाकरोत् ॥४५॥

वेदमंत्र प्रभावाच्च जाताश्चत्वारक्षत्रियाः ।

प्रमरः सामवेदी च चपदानिर्ग्रजुर्विदः ॥४६॥

त्रिवेदी च तथा शुक्लोऽथर्वा स परिहारकः ।

ऐरावत कुले जातान् गजानां ह्य ते पृथक् ॥४७॥

परमार—पृथ्वीराज रासो में परमारों की उत्पत्ति के विषय में लिखा हुआ है कि ‘अर्बुदगिरि पर अनेक ऋषियों को यज्ञ करते देखकर’ राक्षसों ने नाना प्रकार के उपद्रव करना प्रारम्भ कर दिया । यह देखकर सब मुनिगण वशिष्ट जी के पास गए तथा उनसे राक्षसों के विनाश करने की प्रार्थना की । तब गुरु वशिष्ट ने ध्यान लगाकर हवन किया, जिससे प्रांतहार, चालुक्य तथा प्रमार (परमार) क्रमशः ये तीन वीर पुरुष उत्पन्न हुए, जिन्होंने राक्षसों से युद्ध किया—

तव सुरिष्य वाचिष्ट । कुण्ड रोचन रचि तामह ।

धरिय ध्यान जजि होम । मय्य वेदी सुर सामह ।

१. डॉ० त्रिवेदी, रेवातट समय, भूमिका भाग, पृ० २०५-६ ।

२. “However, the text which has come down to us in manuscript under the title, Bhavishya purana, is certainly not the ancient work which is quoted in the Apastambiya Dharma Sutra. The Bhavishya Purana, which appeared in Bombay in 1897 in the Srivenkata Press, has been unmarked by Th. Aufrecht as a ‘literary fraud.’ The account of the creation which it contains, is borrowed from the law book of Manu, which is also otherwise frequently used. The greater part of the work deals with the brahmanical ceremonies and feasts, the duties of the castes and so on.” A History of Indian Literature. M Winternitz. Vol. I, Cal. Uni. 1927. p. 567.

३. नागरी प्रचारिणी सभा संस्करण, छं० २४४, सं० १ ।

४. वही, छं० २४५-४७, सं० १ ।

५. वही, छं० २४८, सं० १ ।

तब प्रद्यो प्रतिहार । राज तित ठौर सुधारिय ।  
 फुनि प्रद्यो चालुवय । ब्रह्मचारी व्रत धारिय ।  
 पावार प्रद्यो वीर वर । कह्यो रिष्य परमार धन ।  
 त्रय पुरुष जुद्ध कीनो अतुल । यह रष्यस पुहंत तन ॥२५०॥'

कवि जोधराज कृत 'हम्मीर रासो' में पृथ्वीराज रासो के समान ही कथा प्राप्त होती है—सृष्टि के शासन कर्ता क्षत्रियों के समूल उन्मूलन हो जाने से जब परस्पर अन्याय आचरण के कारण प्रजा पीड़ित हो उठी तथा दैत्यों के उपद्रव से ऋषिगणों के यज्ञादि कर्मों में भी विघ्न पड़ने लगा तब ऋषिगण संसार की रक्षा और उसके उचित शासन के निमित्त फिर क्षत्रियों को उत्पन्न करने की अभिलाषा से यज्ञ करना विचार कर अर्बुदगिरि अर्थात् आबू पर्वत पर गए । .....समुचित प्रकार से जिस समय यज्ञ हो रहा था और वेदिका से उत्पन्न हुई अग्नि शिखाएं आकाश को स्पर्श कर रही थीं, उसी समय उस वेदिका में से चालुक्य, प्रमार और परिहार क्षत्रिय क्रम से उत्पन्न हुए । इन्होंने मुनिवरों की आज्ञा पाकर दैत्यों से युद्ध किया, किन्तु उन्हें परास्त करने में समर्थ न हो सके ।'

ऋषि वशिष्ठ वेदिय विमल सामवेद स्वर साधि ।  
 प्रगट कियनु छत्रिय पट्टमि, वेद मंत्र आराधि ॥ ५४ ॥  
 तीन पुरुष उपजे तहां, चालुक प्रथम् पवार ।  
 दूजें तीजें उपजें, क्षत्रि जाति पडिहार ॥ ५५ ॥  
 कियउ युद्ध अतुलित तिनहि, नहि खल जीते भूरि ।  
 तव चतुरानन यज्ञ थल, कियो तुरत वह द्वरि ॥ ५६ ॥'

परमारों के शिलालेखों तथा कवि पद्मगुप्त (परिमल) विरचित 'नवसाह सांक चरित' में परमारों की उत्पत्ति के विषय में स्पष्ट लिखा है—'आबू शिखर पर मुनि वशिष्ठ रहते थे, उनकी गौ ( नंदिनी ) को एक बार ऋषि विश्वामित्र छल से हर कर ले गए । इस पर मुनि वशिष्ठ ने क्रुद्ध होकर मंत्र पढ़ कर अपने अग्निकुण्ड में आहुति दी, जिसके प्रभाव से एक परम तेजस्वी एवं पराक्रमी पुरुष उस कुण्ड से प्रकट हुआ, जो शत्रु को परास्त कर गौ ( नंदिनी ) को लौटा लाया, इस पर प्रसन्न होकर ऋषि ने उसका नाम 'परमार' अर्थात् शत्रु को मारने वाला रक्खा । उसी वीर पुरुष के वंश का नाम 'परमार' हुआ ।'

१. नागरी प्रचारिणी सभा संस्करण, छं० २५०, स० १ ।
२. कवि जोधराज, हम्मीर रासो, संपादक श्यामसुन्दर दास, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, द्वितीय संस्करण १९२९ ।
३. ब्रह्माण्डमण्डपस्तम्भः श्रीमानस्त्यब्दो गिरिः । ... ॥४९॥  
 अतिस्वाधीनवीवारफलमूलसमित्कुशम् ।



परमारों के शिलालेखों में उक्त वंश के मूल पुरुष का नाम धूमराज<sup>१</sup> मिलता है। 'धूम' का अर्थ है, धुआं। धुआ अग्नि से उत्पन्न होता है। अतः मूल पुरुष के नाम से भी स्पष्ट है कि परमार अग्निवंशी हैं।

महामहोपाध्याय पं० गीरीशंकर हीराचन्द ओझा परमारों को अग्निवंशी नहीं मानते हैं। वे परमारों को 'ब्रह्म क्षत्र' कहते हैं। 'मालवे के परमार राजा मुंज ( वावपतिराज, आमोघ वर्मा ) के समय अर्थात् वि० स० १०२८ से १०५४ ( ई० स० ९७१ से ९९७ ) के आसपास होने वाले उसके दरबारी पंडित रलायुध ने 'मंगल सूत्र वृत्ति' में मुंज को 'ब्रह्म क्षत्र' कुल का कहा है। 'ब्रह्म क्षत्र' शब्द का प्रयोग प्राचीन काल में उन राजवंशों के लिए होता रहा है, जिनमें ब्रह्मत्व-क्षत्रत्व दोनों गुण विद्यमान हों या जिनके वंशज क्षत्रिय से ब्राह्मण हुए हों। ..... राजा मुंज के समय तक परमार भी ब्रह्मक्षत्र कहें जाते थे न कि अग्निवंशी'।

ओझा जी के कथन मात्र से ही 'परमारों' को ब्रह्मक्षत्र मान लेना उचित नहीं। उपर्युक्त

मुनिस्तपोवनं चक्रे तत्रैव कुपुरोहितः ॥ ६४ ॥

हृता तस्यैकदा धेनुः काम रूर्गाधिसूनुना ।

कर्मवीर्याजुनेनेव जमदग्नेरनीयत ॥ ६५ ॥

स्थूलाश्रुधारसन्तानस्त्रपि तस्तनवत्कला ।

अमर्षपावकस्याभूद्भर्तृसमिदरूधती ॥ ६६ ॥

अयायव्विदामद्यस्समन्नामाहुति ददौ ।

विकसद्विकटज्वालाजटिले जातवदसि ॥ ६७ ॥

ततः क्षणात् सकोदण्डः किरीट काञ्चनाङ्गदः ।

उज्जगमाग्निनतः कोऽपि सहेमकवचः पुमान् ॥ ६८ ॥

दूरं सन्तमसेनेव विश्वामित्रेण सा हृता ।

तेनानिन्ये मुनेर्येनुदिनश्रीरिव नानुना ॥ ६९ ॥

परमार इति प्रपत् स भुनेननि चार्यवत ॥ ७१ ॥

पद्मगुप्त ( परिमल ) रचित नवसाह सांक चरित, सर्ग १ ।

१. श्री धूमराजः प्रथमं वनूवे भूवासवरतत्र नरेद्रवशे ॥ ३३ ॥

आबू पर के तेजपाल के मंदिर के वि० स० १२८७ का शिलालेख ।

आनीतधेन्वे परनिर्जयेन मुनिः स्वगोत्रं परमार जातिम ।

तस्मै ददावुद्धतभूरिनाग्यं त'धूमराजं च धर्कार नोम्ना ॥

आबू के नीचे के गिरवर गांव के पास वाले पाट नारायण के मंदिर की वि० स० १३४४ की प्रशस्ति की छाप से ।

२. राजपुताने का इतिहास, जिल्द पहली, पृ० ७५-७६, वैदिक मंत्रालय द्वारा प्रकाशित, भजमेर १९३७ ।

प्रमाणों के आधार पर 'परमार' अग्निवंशी ही ठहरते हैं। अतः रासों के विवरण को अप्रामाणिक अथवा अनैतिहासिक मान बैठना एक बड़ा भारी भ्रम होगा। वि० सं० १९७० (ई० सं० १९१३) में पं० हरप्रसाद शास्त्री को जोधपुर में एक वंशावली मिली थी, उसके अनुसार भी 'परमार' अग्निवंशी ही ठहरते हैं। 'क्षत्र कुल वंशावली' नामक काव्य ग्रन्थ में भी परमारों का अग्निवंशी होना ही लिखा है।<sup>१</sup> उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि 'पृथ्वीराज रासो' में परमारों को अग्नि वंशी लिखना अनैतिहासिक नहीं, वरन् उसमें सत्यता के पर्याप्त अंश विद्यमान हैं।

प्रतिहार—'पृथ्वीराज रासो' में प्रतिहारों के उत्पत्ति के विषय में लिखा हुआ है कि 'अर्बुदगिरी पर अनेक ऋषियों को यज्ञ करते देखकर' राक्षसों ने नाना प्रकार के उपद्रव करना प्रारम्भ कर दिया। यह देखकर सब मुनिगण वशिष्ठ जी के पास गए तथा उनसे राक्षसों के विनाश करने की प्रार्थना की। तब गुरु वशिष्ठ ने ध्यान लगाकर हवन किया, जिससे प्रतिहार, चालुक्य तथा प्रमार (परमार) क्रमशः ये तीन वीर पुरुष उत्पन्न हुए जिन्होंने राक्षसों से युद्ध किया—

तब सु रिष्व वचिस्ट । कुण्ड रोचन रचि तामह ।  
वरिय ध्यान जजि होम । मध्य वेदो सुर सामह ।  
तब प्रद्यौ प्रतिहार । राज तिन ठौर सुधारिय ।  
फुनि प्रद्यौ चालुक्य । ब्रह्मचारी व्रत धारिय ।  
पांवार प्रद्यौ चोर वर । कह्यौ रिष्व परमार धन ।  
त्रय पुरुष जुद्ध कीनो अनुल । यह रषस पुहत तन ॥ २५० ॥<sup>२</sup>

कवि जोधराज कृत 'हम्मीर रासो' में भी इसी प्रकार की कथा प्राप्त होती है—'समुचित प्रकार से जिस समय यज्ञ हो रहा था और वेदिका से उत्पन्न हुई अग्नि शिखाएं आकाश को स्पर्श कर रही थीं, उसी समय उस वेदिका में से चालुक्य, प्रमार और परिहार क्षत्रिय क्रम से उत्पन्न हुए। इन्होंने मुनिवरों की आज्ञा पाकर दैत्यों से युद्ध किया, किन्तु उन्हें परास्त करने में वे समर्थ न हो सके'।<sup>३</sup>

1. Preliminary Report on the operation in search of MSS of Bardic Chronicles, 1923, Page 21-22.
२. आजमगढ़ के स्वर्गीय राजा रणजोर सिंह, क्षत्रकुल वंशावली।
३. नागरी प्रचारिणी सभा संस्करण, छं० २४४, सं० १।
४. वही, छं० २४५-४७ सं० १।
५. वही, छं० २४८ सं० १।
६. वही, छं० २५० सं० १।
७. कवि जोधराज, हम्मीर रासो—छं० ५४-५६।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि प्रतिहार अग्निवंशी क्षत्रिय थे किन्तु ओझा जी इन्हें अग्नि वंशी न मानकर सूर्य वंशी ही मानते हैं। अपने मन के समर्थन में वह इस प्रकार लिखते हैं—‘ग्वालियर से वि० सं० ९०० ( ई० सं० ८४३ ) के आसपास की प्रतिहार राजा भोजदेव की एक बड़ी प्रशस्ति मिली है। उसमें प्रतिहार सूर्यवंशी बतलाए गए हैं। इसी प्रकार सुप्रसिद्ध कवि राजशेखर, जिसने वि० सं० की दसवीं शताब्दी में कई नाटक रचे, अपने नाटकों में उक्त भोजदेव के पुत्र महेंद्रपाल को जो उसका शिष्य था, ‘रघुकुल तिलक’ और उसके पुत्र महीपाल को रघुवंश मुक्तामणि लिखता है। शेखावाटी के प्रसिद्ध हर्ष नाथ के मंदिर की चौहान राजा विग्रह राज के समय की वि० सं० १०३० की प्रशस्ति से भी कन्नौज के प्रतिहारों का रघुवंशी होना ज्ञात होता है। इन प्रमाणों से यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रतिहार पहले अपने को अग्नि वंशी नहीं किन्तु सूर्य वंशी (रघुवंशी) मानते थे।’

‘राजस्थान की जातियाँ’ नामक ग्रन्थ में प्रतिहारों के विषय में इस प्रकार का उल्लेख प्राप्त होता है—‘पंडितार अग्निवंशीय हैं। इनकी शक्ति का अनुभव इसी से किया जा सकता है कि किसी समय में काबुल के शासक थे। काबुल छोड़ने पर ये अयोध्या चले गये थे और वहाँ से मारवाड़ में आए। अब इनकी संख्या बहुत अल्प रह गई है।’ श्री रसल महोदय के मतानुसार भी प्रतिहार ‘अग्निवंशी’ थे, वह प्रतिहारों को योद्धाओं की पंक्ति में नहीं मानते, अपितु उन्हें महल के द्वार पर रह कर रक्षा करने वाला मानते हैं। इसी का विगड़ा रूप प्रतिहार है।’

प्रतिहार शब्द के विषय में एक स्थान पर महामहोपाध्याय पं० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा लिखते हैं—‘गुहिल, चौलुक्य (सोलंकी), चाहमान आदि राजवंश अपने मूलपुरुषों के नाम से प्रचलित हुए हैं, परन्तु प्रतिहार नाम वंशकर्ता के नाम से चला हुआ नहीं किन्तु राज्याधिकार के पद से बना हुआ है। राज्य के भिन्न-भिन्न अधिकारियों में एक प्रतिहार भी था, जिसका काम राजा के बैठने के स्थान या रहने के महल के द्वार (ड्योढ़ी) पर रह कर उसकी रक्षा करना था। इस पद के लिए किसी खास जाति या वर्ण का विचार नहीं रहता

१. कोशोत्सव स्मारक संग्रह, १९८५।
२. बजरंगलाल लोहिया, राजस्थान की जातियाँ, पृ० १७, विशाल भारत बुक डिपो, कलकत्ता, मई १९५४।
3. This ( Parihar ) clan was one of the four Agnikulas or fireborn Their founder was the first to issue from the fire fountain but he had not a warrior's mine. The Brahman's placed him as guardian of the gate, and hence his name, Prithi-ha-dwara. The Tribe and caste of the central provinces of India. By. R. V. Russell Assisted by Rai Bahadur Hiralal. Pt. II, Page 457, Macmillan & Co. limited st. Martin's street, London 1916.

था किन्तु राजा के विश्वासपात्र पुरुष ही इस पद पर नियुक्त होते थे । प्राचीन शिलालेखादि में प्रतिहार या महा-प्रतिहार नाम मिलता है और भाषा में उसे पड़िहार कहते हैं ।<sup>१</sup>

उपर्युक्त विवेचन से इतना स्पष्ट हो जाता है कि प्रतिहार अग्निवंशी थे, उनकी उत्पत्ति 'रासो' में बताई हुई रीति से ही हुई थी । अतः स्पष्ट है कि 'प्रतिहार' अग्निवंशी थे । यहाँ पर प्रतिहारों को अग्निवंशी प्रगट करना तथा रासो ग्रन्थ की सत्यता पर ही प्रकाश डालना अभीष्ट था न कि यह देखना कि 'प्रतिहार' शब्द कहाँ से आया ।

चालुक्य—रासो में उल्लिखित ३६ राजवंशों में चालुक्य भी एक प्रमुख राजवंश है । ग्रन्थकार ने इनकी उत्पत्ति भी अग्नि से मानी है । रासो में लिखा है कि अर्बुदगिरि पर अनेक ऋषियों को यज्ञ करते देखकर<sup>२</sup> राक्षसों ने अनेक प्रकार से विघ्न डालना प्रारम्भ कर दिया ।<sup>३</sup> यह देखकर समस्त मुनगण मुनि वशिष्ठ के पास गए तथा उनसे राक्षसों के विनाश करने की प्रार्थना की<sup>४</sup> तब गुरु वशिष्ठ ने ध्यान लगाकर यज्ञ किया जिससे प्रतिहार, चालुक्य तथा प्रभार क्रमशः ये तीन धीरे पुरुष उत्पन्न हुए जिन्होंने राक्षसों से धीरे युद्ध किया ।<sup>५</sup>

कवि जोधराज विरचित 'हम्मीर रासो' में भी इसी प्रकार की कथा का वर्णन प्राप्त होता है ।<sup>६</sup> अर्थात् हम्मीर रासो के मतानुसार चालुक्य अग्नि से उत्पन्न हुए थे अर्थात् अग्नि-वंशी थे । जहाँ एक ओर प्राचीन ग्रन्थों में चालुक्यों को अग्निवंशी होना लिखा है, वहाँ दूसरी ओर ओझा जी उन्हें चन्द्रवंशी बताकर रासो ग्रन्थ की सत्यता में संदेह ही नहीं अपितु उसे निरी भट्ट कल्पना सिद्ध करने का प्रयत्न करते हुए लिखते हैं कि 'चालुक्य ( सोलंकी ) राजा विमलादित्य के प्तें राज्य वर्ष अर्थात् वि० सं० १०७५ ( ई० सं० १०१९ ) के दानपत्र में सोलंकियों को चन्द्रवंशी लिखा है । इसके सिवा उसमें ब्रह्मा से अग्नि, अग्नि से सोम, सोम से लगाकर विचित्र वीर्य तथा उसके पुत्र पांडु राज तक की पूरी नामावली, पांडु के पाँचों पुत्र युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन आदि के नाम और अर्जुन के पुत्र अभिमन्यु से लगाकर विमलादित्य तक की वंशावली भी दी हुई है । इससे स्पष्ट है कि उक्त सवंत में सोलंकी अपने को चन्द्र वंशांतर्गत पांडवों के वंशज मानते थे ।

सोलंकी राजा कुलोत्तुंग चोहदेव ( दूसरे ) के सामंत बुद्धिराज के शक संवत् १०९३ ( वि० सं० ११२८ ) के दान पत्र में कुलोत्तुंग चोहदेव के प्रसिद्ध पूर्वज कुज विष्णु को

- १ राजपूताने का इतिहास, पहली जिल्द, पृ० १६५ ।
- २ नागरी प्रचारिणी सभा संस्करण, छं० २४४ स० १ ।
३. वही, छं० २४५-४७ स० १ ।
४. वही, छं० २४८ स० १ ।
५. वही, छं० २५०, स० १ ।
६. कवि जोधराज, हम्मीर रासो, छं० ५४-५६ ।

चन्द्रवंशी तिलक कहा है। सुप्रसिद्ध जैनाचार्य हेमचन्द्र ने जो गुजरात के सोलंकी राजा जयसिंह ( सिद्धराज वि० सं० ११५०-११९९ ) तथा उसके उत्तराधिकारी कुमार पाल ( वि० सं० ११९९-१२३० ) से सम्मानित हुआ था, अपने द्वयाक्षय महाकाव्य के ९वें सर्ग में गुजरात के सोलंकी राजा भीमदेव के दूत और चेदिदेस के राजा कर्ण के वार्तालाप का सविस्तार वर्णन किया है। उसका सारांश यह है—

‘दूत ने राजा कर्ण से पूछा कि भीम आपसे यह जानना चाहते हैं कि आप अपने मित्र हैं या शत्रु। इसके उत्तर में कर्ण ने कहा कि कभी निर्मूल न होने वाला सोम ( चन्द्र ) वंश विजयी है। इसी वंश में जन्म लेकर पुरुरवा ने पृथ्वी का पालन किया। इन्द्र के अभाव में डरे हुए स्वर्ग का रक्षण करने वाला भूमिवाला मूर्तिमान्, क्षात्र धर्म नष्ट इसी कुल में उत्पन्न हुआ। इसी वंश के राजा भरत ने निरन्तर संग्राम करते और अतीत के मागं पर चलने वाले दैत्यों का संहार कर अतुल यश प्राप्त किया। इसी कुल में जन्म लेकर धर्मराज युधिष्ठिर ने उद्धृत शत्रुओं का नाश किया। जनमेजय तथा अन्य अक्षय यश-वाले तेजस्वी राजा इसी वंश में हुए और इन सब पूर्ववर्ती राजाओं की समानता करने वाला भीम (भीमदेव) इस समय विजयी है। सत्य पुरुषों में परस्पर मैत्री होना स्वाभाविक है, अतएव हमारी मैत्री के विरुद्ध कौन क्या कह सकता है।

ऊपर उद्धृत किए हुए प्रमाणों से निश्चित है कि पृथ्वीराज के समय तथा उससे पूर्व भी सोलंकी अपने को अग्निवंशी नहीं किन्तु चन्द्रवंशी और पांडवों की सत्तान मानते थे।”

ओझा जी को इतने में ही सन्तोष न हुआ वह एक स्थान पर और भी रासो को अनैतिहासिक सिद्ध करने का प्रयत्न करते हैं तथा चालुक्यों को चन्द्रवंशी होना ही प्रमाणित करते हैं—‘इस समय सोलंकी और वघेल ( सोलंकीयों की एक शाखा ) अपने को अग्निवंशी बतलाते हैं और वशिष्ठ ऋषि के द्वारा आवू पर के अग्नि कुण्ड से अपने मूल पुरुष चालुक्य ( चालुक्य, चोलुक्य ) का उत्पन्न होना मानते हैं, परन्तु सोलंकीयों के वि० सं० ६३५ से १६०० ( ई० सं० ५७८ से १५४३ ) तक के अनेक शिलालेखों, दानपत्रों तथा पुस्तकों में कहीं उनके अग्निवंशी होने की कथा का लेश भी पाया नहीं जाता। उनमें उनका चंद्रवंशी होना और पाण्डवों की वंश परम्परा में होना लिखा है। वि० सं० १६०० (ई० सं० १५४३) के आसपास ‘पृथ्वीराज रासो’ बना, जिसके कर्ता ने इतिहास के अज्ञान से इनको भी अग्नि वंशी ठहरा दिया और ये भी अपने प्राचीन इतिहास की अज्ञानता में उसी को ऐतिहासिक ग्रन्थ मानकर अपने को अग्निवंशी कहने लगे।”

सम्भव है ओझा जी के मत में कुछ सत्यता हो। किन्तु जन श्रुतिकी अवहेलना भी तो नहीं की जा सकती है। ‘राजस्थान की जातियाँ’ नामक ग्रन्थ में लिखा है कि ‘सोलंकी

१. कोशोत्सव स्मारक संग्रह, १९८५।

२. राजपूताने का इतिहास, पृ० २३८।

भी अग्निवंशियों में से अन्यतम है। इनका दूसरा नाम चालुक्य है। कर्नल टॉड के अनुसार राठोड़ों के कन्नौज पर अधिकार करने के पूर्व सोलंकी गंगा के तट पर बसे हुए सोरों नामक स्थान के शासक थे।<sup>१</sup>

श्री रसल महोदय के मतानुसार भी सोलंकी अथवा चालुक्य अग्निवंशी ही थे।<sup>२</sup> वि० सं० १९७० ( ई० सं० १९१३ ) में एक वंशावली प० हरप्रसाद शास्त्री को जोधपुर में मिली थी।<sup>३</sup> इस वंशावली के अनुसार भी सोलंकी अर्थात् चालुक्य अग्निवंशी ही ठहरते हैं। आजमगढ़ के स्वर्गीय राजा रणजोर सिंह विरचित 'क्षत्रकुल वंशावली' में भी सोलंकियों को अग्निवंशी माना गया है। इतने प्रमाणों के आधार पर यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि चालुक्य अग्निवंशी ही थे, चन्द्रवंशी नहीं। अतः 'पृथ्वीराज रासो' में चालुक्यों को अग्निवंशीय लिखा होना ऐतिहासिक जान पड़ता है। यहां पर ३६ राजवंशों का विस्तृत उल्लेख करना अभीष्ट नहीं है। पृथ्वीराज रासो में मुख्यतः उपरोक्त चार वंशों को ही अग्निवंशी माना है तथा इन्हीं चार कुलों के सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद भी पर्याप्त है। अतः इन्हीं पर विस्तृत विवरण देकर रासो ग्रन्थ की ऐतिहासिकता पर प्रकाश डालना अभीष्ट था।

१. बजरंगलाल लोहिया, राजस्थान की जातियाँ, पृ० १६।
२. "This clan was one of the Agnikula or fire-born and are hence considered to have probably been Gurjaras or Gujars. Their original name is said to have been chaluka, because they were formed in the plam ( chalu ) of the hand. They were not much known in Rajputana, but were very prominent in the Deccan. Here they were generally called chalukya, though in northern India the name Solankhi is more common," The Tribes and castes of the Central Provinces of India, By. R. V. Russell Assisted by Rai Bahadur Hiralal.. Part II, Macmillan and Co. limited, st. Martin's street, London, 1916.
३. Preliminary Report on the operation in search of MSS of Bardic Chronicles, 1923, page 21-22.

## हिन्दू पात्र : शासक वर्ग

राजा—‘पृथ्वीराज रासो’ के शासक वर्ग का विवेचन करने के पूर्व यदि ‘राजा’ की उत्पत्ति तथा उसके कर्तव्य के विषय में थोड़ा सा उल्लेख कर दिया जाय तो अप्रासंगिक न होगा। समाज को व्यवस्थित रखने के लिए पूर्व-पुरुषों ने एक राजा की व्यवस्था की है। उनके मतानुसार यह व्यक्ति इस लोक में भी प्रसन्न एवं सुखी रहेगा और दूसरे मृत्यु के उपरान्त शांति तथा स्वर्ग का अधिकारी होगा। आज के युग में स्वर्ग की बात पर विश्वास न भी किया जावे किन्तु इतना अवश्य ही स्वीकार करना पड़ेगा कि सामाजिक जीवन में राजा का महत्वपूर्ण स्थान था। हमारे प्राचीन शास्त्रवेत्ताओं ने राजा को देवत्व स्वरूप में प्रतिष्ठित किया है तथा उसका वर्णन करते हुए बताया है कि—प्राचीन ग्रन्थ ऋग्वेद में राजा को ‘इन्द्र वरुण’ आदि अनेक नामों से सम्बोधित किया गया है। ऋग्वेद के अतिरिक्त यजुर्वेद में भी राजा को विभिन्न दैवी-शक्तियाँ, शक्ति एवं बल प्रदान करें इस प्रकार की भी प्रार्थना की गई है—‘हे राजन् ! सविता तुझे आज्ञा प्रसारित करने के लिए, अग्नि तुझे गृहस्थों की रक्षा के लिए तथा सोम तुझे वनस्पतियों की रक्षा के लिए, बृहस्पति तुझे वाणी के लिए तथा वरुण धर्म की रक्षा के लिए बल प्रदान करे।’ इसके अतिरिक्त ‘ऋग्वेद’ के समान ही यजुर्वेद में भी राजा को, इन्द्र तथा वरुण को क्रमशः सम्राट् तथा राजा कह कर संबोधित

- 
१. अहं राजा वरुणां..... । ऋग्वेद, मंत्र २, सू० ४२, मंडल ४।  
 अहमिन्द्रा वरुणः ..... । ऋग्वेद, मंत्र ३, सू० ४२, मंडल ४।  
 राजा वरुणः ..... । ऋग्वेद, मंत्र १३, सू० २४, मंडल १।  
 त्वमग्ने राजा वरुणां धृवस्तत्त्वं । ऋग्वेद, मंत्र ४, सू० १, मंडल २।  
 सो अस्मान् राजा वरुणोमुमोक्तु । ऋग्वेद, मंत्र १२, सू० २४, मंडल १।
  २. सवितात्वा सवतां सुवतामग्निर्गृहपती नाम सोमो वनस्पतिनाम् ।  
 बृहस्पतिपचि इन्द्रो ज्येष्ठाय रुदः पशुम्यो मित्र सत्यां वरुणां धर्मपतीनाम्  
 यजुर्वेद, मंत्र ३९, अ० ९।

किप्रा है अर्थात् सत्त्राट् इन्द्र होता है तथा राजा वरुण ।' इतना ही नहीं अथर्ववेद में भी राजा को मित्रामित्र देवी-देवता का अंश कहा गया है ।' इसी ग्रन्थ में एक स्थान पर राजा को विष्णुपद के नाम से सम्बोधित किया गया है ।' वैदिक ग्रन्थों के अतिरिक्त ब्राह्मण ग्रन्थों में भी इसी प्रकार के उल्लेख प्राप्त होते हैं । इन सभी विवरणों से स्पष्ट है कि राजा में देवी अस्तित्व रहता है । 'तत्तिरिय ब्राह्मण' से एक उदाहरण लिया जा सकता है । कथा का सारांश इस प्रकार है—'प्रजापति ने इन्द्र को देवों का राजा बनाने की इच्छा प्रकट की । इन्द्र ने राजपद पाने के योग्य बनने के लिए प्रजापति से उनके तेज के प्राप्त के निमित्त याचना की, जिसके प्राप्त करने के उपरान्त इन्द्रदेवों का राजा बन गया, यद्यपि वह देवों में सबसे छोटा था ।' वाल्मीकि रामायण में राजा को पूज्य कहा गया है—'राजा देव है, वह इस पृथ्वीतल पर मनुष्य शरीर धारण करके विचरण करता है । इसलिए राजा की हिंसा नहीं करनी चाहिए, उसकी निन्दा नहीं करनी चाहिए, उसका तिरस्कार नहीं करना चाहिए तथा उसके प्रतिकूल नहीं बोलना चाहिए, क्योंकि राजा देव है, वह मनुष्य रूप धारण कर इस भू-मंडल पर विचरण करता है ।' अयोध्याकांड में एक श्लोक में राजा के लिए लिखा है कि 'राजा सत्य है, धर्म है और कुलमानों का कुल है, राजा माता-पिता है, वह मनुष्य का हितैषी है ।' महाभारत के शांतिपर्व में राजा के स्वरूप के विषय में इस प्रकार लिखा गया है—'इसकी उत्पत्ति, यम, कुवेर, वरुण, इन्द्र, अग्नि देवों से हुई है ।' आदि-शास्त्रवेत्ता मनु ने भी राजा की उत्पत्ति इस प्रकार से बताई है—'ईश्वर ने इस समस्त जगत की रक्षा के निमित्त, इन्द्र, वायु यम, सूर्य, अग्नि, वरुण, चन्द्र तथा कुवेर की शाश्वत

१. इन्द्रश्च सत्त्राट् वरुणश्च राजा..... । यजुर्वेद मंत्र ३७, अ० ८ ।
२. इन्द्रस्य मागस्थ, । सोमस्य मागस्थ । वरुणस्य मागस्थ । मित्र वरुणायां मागस्थ । यमस्य मागस्थ । विष्णो मागस्थ । देवस्य सवितुमागस्थ । अथर्ववेद मंत्र ८-१४, सू० ५, का० ११ ।
३. वि.णां : क्रमाउत्ति..... । अथर्ववेद मंत्र २५, सू० ५, का० १० ।
४. तत्तिरीय ब्राह्मण वर्ता-१-२, अनु० आ० १०, अ० २, अष्ट २ ।
५. तान्नहिंस्यान्न चाक्रांश्चक्षेत्रन्नप्रिय वदेत् ।  
देवा मानुष रूपेण चरन्त्येते मही तले । किष्किन्ध्याकाण्ड, श्लोक ४२, स० १८ ।
६. राजा सत्यं च धर्मश्च राजा कुलवतांकुलम् ।  
राजा माता पिता चैव राजा हितकारी नृणाम् ।  
अयोध्याकाण्ड, श्लोक ३४, स० ६७ ।
७. कुर्वते पंच रूपाणि काल युक्तानियः सदा ।  
भवत्याग्निस्तथा दित्यां मृत्युवेश्ववर्णांयमः ॥  
महाभारत, श्लोक ४१, अ० ६८, शांतिपर्व ।



माशार्थों अर्थात् सारभूत अंशों को निकाल कर राजा का निर्माण किया। 'वृहस्पतिस्मृति' में भी राजा की उत्पत्ति की कथा ऐसी ही प्राप्त होती है—'राजा की उत्पत्ति सोम, अग्नि, मूयं, वायु, इन्द्र, कुबेर तथा यम के तेजमय अंशों को संग्रहीत करके हुई है'। आचार्य कौटिल्य अपने 'अर्थशास्त्र' में राजा के विषय में लिखते हैं—'इन्द्र तथा यम दोनों पद एक ही में समाविष्ट हैं तथा राजा का अपमान करने वाले व्यक्ति को ईश्वर का दंड भोगना पड़ता है।' 'विष्णुपुराण' में राजा वेन ने कहा है—'ब्रह्मा, विष्णु, महेश, इन्द्र, वायु, यम, सूर्य, वरुण, पूषा, पृथ्वी, तथा चन्द्र और इसके अतिरिक्त जितने भी देव शाप एवं कृपा करने में समर्थ हैं, वे सभी राजा के शरीर में निवास करते हैं।' परम भागवत कहलाने वाले गुप्त शासकों को भी दैवी नामों से संबोधित किया जाता था। समुद्रगुप्त के शिलालेख में 'अचित्यपुरु' शब्द का प्रयोग हुआ है। जिसका प्रयोग संस्कृत साहित्य में ईश्वर के लिए होता था।

उपर्युक्त विवेचन द्वारा स्पष्ट है कि राजा की उत्पत्ति कैसे हुई। अब 'पृथ्वीराज रासो' में आए हुए शासकवर्ग का वर्णन प्रस्तुत कर उनकी ऐतिहासिकता पर विचार किया जावेगा।

अजयसिंह—कवि चेन्दवरदायी 'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार चौहान वंश में राजा मोहन्त के उपरान्त पचिवी पीढ़ी में राजा अजयसिंह उनके उत्तराधिकारी हुए। कवि ने चौहानों की वंशावली का विवरण प्रस्तुत करते हुए इनके नाम मात्र का उल्लेख किया है। रा० ए० सो०

१. रक्षायं मस्य सर्वस्य राजानाम् सृजत्प्रभुः । इलोक ३, अ० ७ ।  
इन्द्रानिलयमा कणिमनैश्चैव वरुणस्थं च ।  
चन्द्र विते शयोश्चैव मात्रा निहृत्यशास्वतीः । मानवधर्म शास्त्र, इलोक ४, अ० ७ ।
२. सोमाग्न्यर्कानिलेन्द्राणा वित्ताप्यथोयमस्य च । वृहस्पति स्मृति, इलोक ६, का० २ ।  
तेजां मात्र समुद्रस्य राजां मूर्तिहिमिता । वृहस्पतिस्मृति, इलोक ७, का० ३ ।
३. इन्द्रयम स्यान्मेतद्राजानः । अर्थशास्त्र वार्ता १०, अ० १३, अधि० १ ।  
तानवमन्य माना देवी उपि दंडःस्पृशति । अर्थशास्त्र वार्ता ११, अ० १३, अधि० १ ।
४. ब्रह्मा जनार्दनः शम्भुरिन्द्रां वायुर्यमां रविः ।  
हृतभुवरुणांधाता पूषा भूमिनिर्णशकरः ॥  
एते चान्ये च ये देवाः शापनुग्रहकारिणः ।  
नृपस्यंते शरीस्याः सर्वदेव यमो नृपः ॥  
विष्णुपुराण, इलोक २०२१, अ० १३, अंश १ ।
५. अचित्य पुरुष धनद वरुणेन्द्रान्तक समस्य लोक धाम प्रलयहेतु ॥  
—प्रयाग स्तम्भ अभिलेख, समुद्रगुप्त ।
६. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा, छं० २८५ स० १ ।

लंदन की रासो की अप्रकाशित प्रति में भी इनका नाम दिया हुआ है। किन्तु अजयसिंह को नागरी प्रचारिणी सभा से प्रकाशित रासो के अनुसार मोहन्त का पुत्र नहीं लिखा है। इस प्रति के अनुसार इनके पिता का नाम महादेव था।<sup>१</sup> धारणोज की प्रति तथा साहित्य संस्थान, उदयपुर, से प्रकाशित पृथ्वीराज रासो इनके विषय में सर्वथा मौन है। शिलालेख और 'पृथ्वीराजविजय महाकाव्य' में दी हुई वंशावलिओं में एक जयराज नाम के राजा का उल्लेख हुआ है। 'प्रबन्धकोष' तथा सुर्जन चरित में अजयराज नाम मिलता है।<sup>१</sup> सम्भव है यह एक ही व्यक्ति के नाम के तीन रूपान्तर हों। सामग्री अभाव में निश्चित मत प्रस्तुत करना कठिन है। 'हम्मीर महाकाव्य' इनके विषय में सर्वथा मौन है।

**अनंगपाल**—रासोकार के मतानुसार राजा अनंगपाल का जन्म पांडवों के वंश में हुआ था। पांडवों ने एक बार जमुना नदी के किनारे हस्तिनापुर नाम का एक ग्राम बसाया था। कालान्तर में राजा अनंगपाल तूँवर ने भी इसी स्थान पर दिल्ली बसाई तथा वहाँ नर-नारी सुख पूर्वक निवास करने लगे।<sup>१</sup> एक बार राजा अनंगपाल पर कमध्वज ने आक्रमण कर दिया। सूचना प्राप्त होने पर अपनी विशाल सेना लेकर कालिन्दी की उत्तर दिशा में राजा अनंगपाल ने शत्रु का सामना किया। अजमेर पति सोमेश्वर को कमध्वज के आक्रमण की सूचना मिलने पर उसने भी राजा अनंगपाल की सहायतायें दिल्ली की ओर प्रस्थान किया। राजा अनंगपाल तथा सोमेश्वर की सम्मिलित बाहिनी ने कमध्वज की सेना को परास्त कर दिया। विजय के नगाड़े बज उठे। दोनों राजा सुख पूर्वक दिल्ली आ गए। राजा अनंगपाल ने सोमेश्वर की वीरता से प्रसन्न होकर अपनी पुत्री का विवाह उनसे कर दिया। राजा अनंगपाल के दो पुत्रियाँ थीं, एक का नाम सुन्दरी था जिसका विवाह कनध्वज के राजा विजयपाल से चिर मैत्रि के सूत्र में बंधने के लिए कर दिया था तथा दूसरी पुत्री का नाम कमला था जिसका विवाह सोमेश्वर की वीरता से प्रसन्न होकर, उनके साथ कर दिया था। कालान्तर में इन्हीं से महाराज पृथ्वीराज चौहान का जन्म हुआ था—

अनंगपाल पुत्री उष्य । इक दोनी विजपाल ॥

इक दोनी सोमेश को । बीज ब्रजन कलिकाल ॥ ६८१ स० १ ।

एक नाम सुर सुन्दरी । अनिवर कमला नाम ॥

दरसन सुर नर दुल्लही । मनो सु कलिका काम ॥ ६८२ स० १ ।

सोमेशर तोअर धरनि । अनंगपाल पुत्रीय ॥

तिन सु पिथ्य गर्म धरिय । दानव फुल छत्रिय ॥ ६८५ स० १ ।

१. पृथ्वीराज रासो, आदि समय, रा० ए० सो० लंदन, की अप्रकाशित प्रति।

२. देखिए, प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध, परिशिष्ट १।

३. पृथ्वीराज रासो, छं० ५६९-५७०, स० १।

४. वही, छं० ६१७ स० १।

महाराज पृथ्वीराज का जन्म दिल्ली में ही हुआ था। अतः पुत्री के पुत्र उत्पन्ने होने पर राजा अनंगपाल अत्यन्त प्रसन्न हुए तथा नगर में नाना प्रकार के उत्सव मनवाए।<sup>१</sup>

‘दिल्ली किल्ली कथा’ में ग्रन्थकार ने लिखा है कि “एक बार पृथ्वीराज को स्वप्न में देवी ने दर्शन दिया जिसका फल ज्योतिषियों ने यह वतसाया कि पृथ्वीराज दिल्ली का शासक होगा। यह सुनकर पृथ्वीराज की माता कमला ने अपने पुत्र को एक प्राचीन कथा इस प्रकार सुनाई—‘हमारे पूर्व पुरुष राजा कल्हन चन्द्रवन में (जहाँ आज कल दिल्ली बसी है) आखेट के लिए गए थे। उस समय उन्होंने एक शशक के पीछे अपना श्वान छोड़ दिया। श्वान उसकी गंध के द्वारा उसका पता लगाता हुआ उसके पीछे-पीछे भागा। आगे जाकर शशक श्वान का सामना कर बैठे, जिससे बेचारा श्वान डरकर भाग गया। यह अद्भुत दृश्य देखकर सब साथियों तथा राजा कल्हन को अत्यन्त आश्चर्य हुआ। जगज्जाति व्यास ने शीघ्र ही मुहूर्त देखकर उसी स्थान पर शेषनाग को सिद्ध करके अच्छे पत्थर की एक कीली गाड़ दी।’ राजा कल्हन ने अपने स्वजनों सहित उस स्थान पर एक नगर बसाया जिसका नाम ‘कल्हनपुर’ रखवा गया। राजा कल्हन के कई पीढ़ियों के बाद अनंगपाल का जन्म हुआ। जब राजा अनंगपाल ने उपर्युक्त घटना का वृत्तान्त सुना तो उन्हें अत्यन्त आश्चर्य हुआ जिसका समाधान ज्योतिषियों के द्वारा कर दिया गया। एक बार राजा अनंगपाल ने एक गढ़ बनवाने की इच्छा प्रकट की। ज्योतिषियों ने शुभ मुहूर्त देखकर नींव रखने के समय एक लोहे की कील पृथ्वी में गाड़ दी और कहा कि यह कील शेषनाग के मस्तक (फन) पर स्थिर हो गई है, जिसके कारण तोंमर वंश का राज्य कील की भाँति अचल एवं दृढ़ रहेगा। राजा अनंगपाल को पुरोहित की बात पर विश्वास न हुआ तथा उस कील को उखड़वा कर, उनके कथन की सत्यता देखनी चाही। कील के निकलते ही उस स्थान से खून की धार निकली। यह देखकर राजा अनंगपाल अत्यन्त दुखी हुए तथा वह कील पुनः उसी स्थान पर स्थिर करनी चाही किन्तु वह ढीली रह गई इसी से दिल्ली का नाम ‘ढीली’ पड़ा तथा ‘ढीली’ से ‘दिल्ली’ तथा अब ‘दिल्ली’ हो गया है।”

उपर्युक्त आख्यान में कितना सत्य है यह कहना तो बड़ा कठिन है किन्तु इतना अवश्य सत्य है कि अनंगपाल ने दिल्ली को बसाया और दिल्ली में तोवरों का राज्य था। इस बात का साक्षी इतिहास भी है तथा रासी के अन्य संस्करण भी समर्थन करते हैं।

कुछ समयोपरान्त राजा अनंगपाल के दूत ने एक पत्र मंत्री कैमास के हाथों में दिया।<sup>२</sup> पत्र में राजा अनंगपाल ने अपनी बेटी के बेटे पृथ्वीराज को लिखा था कि अब मैं वृद्ध हो

१. पृथ्वीराज रासो, छं० ६८९, समय १।

२. वही, ना० प्र० स० काशी, छं० १५-२५, स० ३।

३. वही, छं० १७-४०, स० ३।

४. दिल्ली दान प्रस्ताव, पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी छं० १ स० १८।

गंधा हूँ । बद्रिकाश्रम तीर्थयात्रा करना चाहता हूँ, मेरा जो कुछ है, सब तुम्हें समर्पण करता हूँ ।' पृथ्वीराज चौहान द्वारा पूछे जाने पर कि नाना जी को वैराग्य क्यों हुआ' दूत ने राजा अनंगपाल का प्रताप वर्णन करके कहा' कि राजा अनंगपाल ने रात्रि में एक स्वप्न देखा कि तोंवर वंश दक्षिण दिशा को जा रहा है । इसी कारण उन्हें वैराग्य उत्पन्न हुआ है ।' प्रातः जागने पर अनंगपाल ने हरि-हरि शब्द का उच्चारण किया ।' स्वप्न का फल ज्योतिषियों से पूछने पर व्यास ने ध्यान करके कहा कि दिल्ली में चौहानों का राज्य होगा । अतः यदि तुम भला चाहो तो तप करके स्वर्ग का मार्ग लो ।' व्यास की वाणी सुनकर राजा अनंगपाल ने मन में विचार किया कि यदि कोई पुत्र होता तो वह भूमि की रक्षा करता । अतः अब तो यही उचित है कि सब भूमि पृथ्वीराज को देकर वनवास करना चाहिए ।' मंत्रियों ने राजा अनंगपाल को बहुत समझाया कि राज्य देना उचित नहीं है ।' किन्तु राजा ने मंत्रियों के कथन पर कान न दिया और पत्र लिखकर मुझे आपके पास अजमेर भेज दिया ।' अन्ततोगत्वा राजा अनंगपाल ने दो दिन अपार उत्सव मना कर, शुभ लग्न में, बड़ी तैयारी और विधि के साथ, पृथ्वीराज का राज्याभिषेक अपने हाथों से कर दिया ।' अनंगपाल ने अपने हाथों से राज-तिलक करके बदरीनाथ की यात्रा की ओर-प्रस्थान किया ।' दिल्ली राज्य पृथ्वीराज को मिलने की सूचना पाकर अजमेरपति सोमेश्वर अत्यन्त प्रसन्न हुए तथा पृथ्वीराज अपने समस्त श्रेष्ठ सामन्तों के साथ दिल्ली में मुख पूर्वक राज्य करने लगे ।' ग्रन्थकार के मतानुसार अनंगपाल ने पृथ्वीराज को दिल्ली राज्य अनन्त सम्बत् ११३८ में दिया था ।"

कुछ समय के उपरान्त अनंगपाल की प्रजा ने बद्रिकाश्रम में जाकर पुकार की, कि पृथ्वीराज से हमें घर से निकाल दिया है तथा आपका भी प्रभाव नहीं मानता । यदि राजा के जीवित रहते हुए प्रजा पराधीन होती तो यह न न्याय है, और न नीति ही । ऐसे राजा की सर्वत्र निन्दा होती है तथा अंत में वह नरक का भागी होता है ।"

प्रजा की आर्त पुकार सुनकर अनंगपाल का तेज ज्वाज्वल्यमान हो उठा तथा दिल्ली

१. दिल्ली दान प्रस्ताव, पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी; छं० २ स० १८ ।

२. वही, छं० १०, स० १८ । ३. वही, छं० १३, स० १८ ।

४. वही, छं० १५, स० १८ । ५. वही, छं० १६, स० १८ ।

६. वही, छं० १९, स० १८ । ७. वही, छं० २१, स० १८ ।

८. वही, छं० ३२, स० १८ । ९. वही, छं० ३३, स० १८ ।

१०. वही, छं० ४०-७५, स० १८ । ११. वही, छं० ९६, स० १८ ।

१२. वही, छं० १०४, स० १८ ।

१३. पृथ्वीराज रासो, माधोभट्टकथा, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ११८-११९; सं० १९ ।

१४. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० २४, स० २६ ।

दूत भेजकर कहलाया कि घन्य, धान्य, द्रव्य, सब ले आवो (पृथ्वीराज की दिल्ली पुनः लौटाने के लिए कहला भेजा) ।<sup>१</sup> किन्तु पृथ्वीराज ने दूत को धिक्कार कर लौटा दिया ।<sup>२</sup> अतः राजा अनंगपाल ने समाचार सुनकर दूत के समझाने पर भी दिल्ली पर आक्रमण कर दिया ।<sup>३</sup> राजा अनंगपाल ने दिल्ली पर आक्रमण कर तो दिया किन्तु उसे प्राप्त करने में असमर्थ रहा ।<sup>४</sup> अपनी सेना को निर्वल देखकर उसने गजनीपति गौरी की सहायता के लिए नीतिराव खत्री को भेजा—

नीतिराव खत्री सुवर, तूँअर निहि परधान ।

गोरी दिसि नृप अप्प दिसि, मदं दियो चहुआन ॥<sup>५</sup>

यद्यपि पृथ्वीराज चौहान ने राजा अनंगपाल को बहुत समझाया किन्तु वह अपनी बात पर डटा रहा । राजा अनंगपाल ने पुनः गोरी की सहायता से दो सहस्र सैनिक लेकर आक्रमण किया ।<sup>६</sup> दोनों दलों ने सम्मिलित होकर पृथ्वीराज पर आक्रमण किया । पृथ्वीराज ने अपने सामन्तों को आज्ञा दी, कि युद्ध में राजा अनंगपाल मारा न जाये तथा शाह को भी जीवित ही बन्दी बना लिया जाय ।<sup>७</sup> अन्त में शाह युद्ध करता हुआ वीर चामण्डराय के हाथों बन्दी बना लिया गया तथा अनंगपाल भी युद्ध में पराजित होकर बन्दी बना लिया गया ।<sup>८</sup> पृथ्वीराज की विजय हुई । सब सामन्तों के साथ दिल्ली लौटने पर पृथ्वीराज ने दरबार किया, उसमें मंत्री कंमास ने आज्ञा दी कि राजा अनंगपाल को पृथ्वीराज के सम्मुख प्रस्तुत किया जावे । अनंगपाल के आने पर पृथ्वीराज ने उनके चरण स्पर्श किए तथा विशेष प्रेम पूर्वक हृदय से सम्मानित कर भक्तिभाव का प्रदर्शन किया—

मुसलमान घर गड्डि, दाग निज सुभर दिवायो ।

लिये जीति प्रथिराज, समह सामंत घर आयो ॥

सना बंठि भर सुभर, कह्यो कंमास राइ गुर ।

अनगेसह लै आउ, चलयो मंत्री सुलेन घर ॥

आन्यो सु राज अनगेस तहँ, प्रथिराज लग्यो सु पय ॥

सनमान प्राण अति प्रीति सौ, भाव भगति राजन करय ॥<sup>९</sup>

१. अनंगपाल समय, पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान, उदयपुर छं० २५, स० २६ :
२. वही, छं० ३१, स० २६ ।      ३. वही, छं० ३४, स० २६ ।
४. वही, छं० ३७, स० २६ ।      ५. वही, छं० ४१, स० २६ ।
६. वही, छं० ५०, स० २६ ।      ७. वही, छं० ६०, स० २६ ।
८. वही, छं० ६३, स० २६ ।
९. वही, छं० ६४ स०, २६ ।

राजा अनंगपाल ने दिल्ली में एक वर्ष एक माह पृथ्वीराज के साथ सुख पूर्वक व्यतीत कर पुनः बद्रीकाश्रम जाने की इच्छा प्रकट की। पृथ्वीराज ने दिल्ली में रहने का ही हट किया किन्तु अनंगपाल न माना तब पृथ्वीराज ने धर्म-कर्म के लिए दस लक्ष का द्रव्य दिया और सौ सेवक, एक रथ, ग्यारह विप्र साथ में लेकर बद्रीकाश्रम उन्हें सकुशल भेज दिया। राजा अनंगपाल ने बद्रीकाश्रम पहुंच कर उग्र तपस्या की—

कहूँ सुत सोमेस, राज अनंगस न मानी ।

षष्ठ साधन तप काज, बद्री दिसि मनछा ठानी ॥

तब पुत्री वर पुत्र, लखत दह द्रव्य सु अप्पी ।

सत अनुचर इक जान, विप्र दस एक समप्पी ।

चल्यो अनंग बद्रीसरन, पहुचायो प्रथिराज नृप ।

तहं जाइ राज-तोवर सुवर, तप राज उग्रह सु-तप ॥'

ऐतिहासिकता—श्री 'अमृतलाल शील, पृथ्वीराज के दिल्ली गोद जाने वाली घटना को असह्य एवं अनैतिहासिक सिद्ध करते हुए लिखते हैं कि—'इससे यह प्रमाणित होता है कि सन् ११६३ ई० से कुछ पहले वीसलदेव ने दिल्ली को जय किया था। इससे यह भी प्रमाणित होता है कि सोमेश्वर के राज्यकाल में दिल्ली में अजमेर का कोई करदाता राज्य करता था अथवा अजमेर राज्य का कोई वेतनभांगी सामन्त वहाँ का दुर्ग रक्षक था। पृथ्वीराज अजमेर के युवराज थे। उनका अपने पिता के अधीन किसी करदाता राजा अथवा उनके नौकर दुर्ग-रक्षक के घर गोद जाना केवल असम्भव ही नहीं, अशुद्धय भी प्रतीत होता है।'

रायबहादुर ओझा उपर्युक्त रासो की घटना को काल्पनिक एवं अनैतिहासिक मानते हुए लिखते हैं कि 'तवंरो ने पुराने इन्द्रप्रस्थ के स्थान में दिल्ली बसाई, यह प्रसिद्धि चली आती है। दिल्ली के बसाने वाले राजा का नाम अनंगपाल प्रसिद्ध है। फिरिश्ता हि० स० ३०७ ( वि० सं० १७६-७७ ) में तंवर वंश के राजा वादित्य ( या वादपिता ? का नाम अशुद्ध है ) का कस्बा इन्द्रप्रस्थ बसाना उसका दिल्ली ( दिल्ली ) नाम से प्रसिद्ध होना तथा उस राजा के पीछे आठ तंवर राजाओं का होना लिखता है। उसने अंतिम राजा का नाम शालिवान ( शालीवाहन ) बतलाया है। तंवरों के पीछे वहाँ चौहानों का राज्य होना तथा उस वंश के मानकदेव, देवराज, रावलदेव, जाहरदेव, सहरदेव और पिथोरा ( पृथ्वीराज ) का वहाँ क्रमशः राज्य करना भी फिरिश्ता ने लिखा है, परन्तु फिरिश्ता का लिखा हुआ हिन्दुओं का पुराना इतिहास जैसा कल्पित है वैसा ही यह कथन भी कल्पित ही है, क्योंकि

१. अनंगपाल समय, पृथ्वीराज रासो, स.हित्य संस्थान उदयपुर, छ० ८१, स० २६।

२. चन्दवरदाई का पृथ्वीराज रासो, सरारवती, म.ग. २७, संख्या ५, जून, १९२६ ई० पृष्ठ ५५६।

तंत्रों ने दिल्ली, चौहान आना के पुत्र विग्रह राज ( वीसलदेव चौथा ) ने वि० सं० १२०७ ( ई० सं० ११५० ) के लगभग ली और तब से ही दिल्ली का राज्य अजमेर के राज्य का नुवा बना ।<sup>१</sup> विग्रह राज के पीछे ऊपर लिखे हुए राजा नहीं, किन्तु अमर गंगेय ( अपर गंगेय, अमर गंगू ), पृथ्वीराज दूसरा ( पृथ्वीभट ), सोमेश्वर और पृथ्वीराज ( तीसरा ) क्रमशः अजमेर के राज्य के स्वामी हुए ।<sup>२</sup> अबुलफजल दिल्ली के बसाए जाने का सम्बन्ध ६२९ मानता है<sup>३</sup> यह भी विश्वास के योग्य नहीं है । यह प्रसिद्धि चली आती है कि तंत्र अनंगपाल ने दिल्ली को बसाया । उसी ने वहाँ की विष्णुपद नाम की पहाड़ी पर प्रसिद्ध लोहे की लाट का जिसको कीली भी कहते हैं और जो वर्तमान दिल्ली से ९ मील दूर मिहरीली गाँव के पास कुतुबमीनार के निकट खड़ी है, उठाकर वहाँ खड़ी करवाई थी । उक्त लाट पर का प्रसिद्ध लेख राजा चन्द ( चन्द्रगुप्त दूसरा ) का है, जिसने उस लाट को उक्त पहाड़ी पर विष्णु के ध्वज रूप में स्थापित किया था । उस पर पिछले समय के छोटे-छोटे और भी लेख खुदे हैं जिनमें से एक 'संवत् दिल्ली ११०९ अनंगपाल वही' है । उसके अनुसार उक्त लेख के खुदाए जाने के समय अनंगपाल को उक्त सम्बन्ध में दिल्ली बसाना माना जाता था । कुतुबुद्दीन ऐबक की मसजिद के पास एक तालाब की पाल पर अनंगपाल के बनाए हुए एक मंदिर के स्तम्भ अब तक खड़े हैं, जिनमें से एक पर अनंगपाल का नाम भी खुदा है । पृथ्वीराज रासो के कर्ता ने अनंगपाल की पुत्री कमला का विवाह अजमेर के चौहान सोमेश्वर के साथ होना और उसी से पृथ्वीराज का जन्म तथा उसका अपने नाना अनंगपाल का राज्य पाना आदि जो लिखा है, वह सारी कथा कल्पित है । पृथ्वीराज की माता दिल्ली के अनंगपाल की पुत्री कमला नहीं, किन्तु चेदि देश के राजा की पुत्री कपूर देवी थी ।<sup>४</sup>

डॉ० माताप्रसाद गुप्त भी, पृथ्वीराज को दिल्ली दान स्वरूप प्राप्त होने की घटना को अप्रामाणिक एवं अनतिहासिक मानते हुए लिखते हैं कि—'दिल्ली वीसलदेव ( विग्रह राज ) के द्वारा ही जो कि आनल्लदेव ( अणोरज ) का पुत्र था—विजित हो चुकी थी, यह सोमेश्वर के सं० १२२६ के विजोलियाँ के शिलालेख से दिया हुआ है । सं० १२२० का वीसलदेव ( विग्रहराज ) का दिल्ली ( सिवालिक ) स्तम्भ पर का अभिलेख भी इस बात का प्रमाण है कि वह सं० १२२० के पूर्व उसके अधिकार में आ चुकी थी । हाँसी प्रदेश पर उसके पूर्वजों का शासन था, वह तोमरों के शासन में नहीं थी ।'<sup>५</sup>

१. नागरी प्रचारिणी पत्रिका, भाग १, पृ० ४०५ और टिप्पणी ४३ ।
२. वही, भाग १, पृ० ३९३ ।
३. वही, भाग १, पृ० ३६९-४०० ।
४. राजपूताने का इतिहास, जिल्द १, पृ० २६५-६७ वैदिक मंत्रालय, अजमेर, द्वितीय संस्करण, १९३७ ।
५. डॉ० माताप्रसाद गुप्त, पृथ्वीराज रासो की ऐतिहासिकता और रचना तथ्य; राष्ट्रकवि मंथिलीशरण गुप्त अनित्यन्दन ग्रन्थ; पृ० ९५३-५४; २ अक्टूबर, १९५९ ।

जहाँ एक ओर डॉ० गुप्त दिल्लीदान कथा को अप्रामाणिक मानते हैं वहीं उन्होंने यह भी स्वीकार किया है कि दिल्ली पर चौहानों के पूर्व तोमरों का राज्य था—'चाहूमानों के पूर्व अवश्य दिल्ली पर तोमरों का शासन था। सं० १३३७ का गयामुद्दीन बलबन का बाहेर (जिला रोहतक) पालम बावली का एक शिला लेख है, जिसमें कहा गया है कि हरियाना देश पर पहले तोमरों का शासन था, तब चाहूवानों का और उनके बाद शक ( तुर्क ) राजाओं का हुआ, जो गहाबुद्दीन से प्रारम्भ होता है। सं० ११८९ में 'पार्श्व चरित्र' की रचना करते हुए उसके रचयिता श्री घर ने अनंगपाल ( तृतीय ) तोमर के राज्य-वर्धन का वर्णन किया है इसलिए जिस अनंगपाल तोमर के सम्बन्ध में रासो में उपर्युक्त कल्पना की गई है उसका समय सं० ११८९ के लगभग पड़ता है'।<sup>१</sup>

डॉ० दशरथ शर्मा 'ललित विग्रह राज' नाटक के आधार पर कल्पना करते हैं कि दिल्ली के अंतिम तोमर शासक ने अपना राज्य वीसलदेव ( चतुर्थ ) को अपनी पुत्री के दहेज में दिया था, यही कथा सम्भव है रासोकार ने भ्रमवश उनके छोटे भाई सोमेश्वर के साथ जोड़ दी है।<sup>२</sup> तथा एक अन्य स्थान पर लिखते हैं कि 'सोमेश्वर की स्त्री को अनंगपाल की पुत्री अवश्य बताया गया है। परन्तु सम्भव है कि वे पृथ्वीराज की विमाता हो। दिल्ली के वीसलदेव के अधीन होने पर भी तोमर राजाओं का वहाँ रहना संभव है'।<sup>३</sup>

कविराव मोहन सिंह राजा अनंगपाल को पृथ्वीराज का समकालीन तथा पृथ्वीराज रासो की घटना को सत्य प्रमाणित करते हुए लिखते हैं कि 'अब यह देखना है कि वि० सं० १२१३ में लेकर १२२९ तक दिल्ली पर अनंगपाल नामक तोंवर शासक था कि नहीं ? अनंगपाल के नाम दिल्ली के कई स्तम्भों पर उपलब्ध हैं, लेकिन उनमें सवत् नहीं है। केवल कुतुबुद्दीन ऐबक की मसजिद के अहाते में जो लोहे का स्तम्भ पड़ा हुआ है, उसी पर उसके

१. डॉ० माताप्रसाद गुप्त, पृथ्वीराज रासो की ऐतिहासिकता और रचना तिथि; राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त अभिनन्दन ग्रन्थ, पृ० ९५४।
२. "But is it not possible that Delhi might have been actually given in Dowry by the last Tomar ruler of the place to Visaldeva, the half brother of Someshvar, from whom the story might have been transferred to Someshvar by some last redactor of Raso? We learn from the Lalit Vighraharaja natak that Visaldeva IV had actually determined to march towards Indraprastha, the ruler of which had a daughter who had fallen in love with Visaldeva unfortunately the drama as we have it now is not complete." (The age and the History of the Prathviraj Raso, the Indian Historical Quarterly, Vol. XVI. December 1940),
३. पृथ्वीराज रासो की एक प्राचीन प्रति और उसकी प्रामाणिकता, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, कार्तिक सं० १९९६ वि, पृ० २७५-८२।



विषय में सम्भवतः का उल्लेख इस प्रकार है 'संवत् दिल्ली' लिखने के पश्चात् अंक लिखे हैं। उसमें यह सिद्ध होता है कि 'दिल्ली के संवत् ११०९ में इसे (दिल्ली को नए सिरे से या जीर्णोद्धार के रूप में) बसाया।' उसमें बसाने के स्थान का नाम नहीं आया, परन्तु जहाँ यह लेख लगा है वह स्थान ही अपने बसने की पृष्टि स्वयं कर देता है। यह दिल्ली वाला सम्भवतः कौन सा था इस पर विचार किए जाने से निश्चित है कि वही दिल्ली वाला रासो में लिखा अनन्द संवत् ही है, जिसमें स्वर्गीय पांड्या मोहनलाल जी के मतानुसार ९१ वर्ष विक्रमी सम्भवतः से जो कमी है वे जोड़ देने से वि० सं० १२०० में अनंगपाल का दिल्ली पर होना सिद्ध होता है।

जिनपाल रचित खरतरगच्छ पदावली का अनुसरण करते हुए—अगर चंद नाहटा, डा० दशरथ शर्मा आदि विद्वान भी वि० सं० १२२३ के लगभग मदनपाल नामक राजा का नाम दिल्ली के शासक रूप में होना लिखते हैं। मदनपाल अनंगपाल का पर्यायवाची है। अस्तु इससे भी अनंगपाल का समय चहुवान विग्रह (चतुर्थ) सोमेश्वर और पृथ्वीराज से आ मिलता है।

अतः स्मरणीय महाराणा प्रताप के उत्तराधिकारी अमर ने अपने मित्र रहीम को जो पत्र लिखे उनसे भी निश्चय है कि तैवर और राठौर वंश के मुख्य स्थान दिल्ली और कन्नौज का एक ही समय (२२ वर्ष के अन्तर्गत ही) में नाश हुआ।

अस्तु चाहुवानों से पूर्व दिल्ली का शासक तैवर ही था और वह या अनंगपाल तैवर ही।" अतः स्पष्ट है कि राजा अनंगपाल एक ऐतिहासिक व्यक्ति था।

अरिमत—'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार राजा वीरदंड के उपरान्त चौहान वंश परम्परा की १४वीं पीढ़ी में राजा अरिमत हुए।" इतनी सूचना के अतिरिक्त सम्पूर्ण 'रासो' इनके विषय में कुछ भी विवरण प्रस्तुत नहीं करता। रा० ए० सी० लंदन की 'रासो' की प्रति में इनका नाम तो मिलना है किन्तु अन्तर इतना है कि यह वीरसिंह के उत्तराधिकारी थे, न कि वीरदंड के। राजा वीरदंड का नामोल्लेख इस प्रति में नहीं हुआ है। धारणोज की प्रति एवं साहित्य संस्थान उदयपुर से प्रकाशित 'पृथ्वीराज रासो' की प्रति इनके विषय में सर्वथा मौन है।

पंडित सदाशिव 'अरिमत' शब्द की राजा माणिक्यराय का विशेषण मानते हुए लिखते हैं कि—'श्री ओझा जी ने 'अरिमत' इस विशेषण पद से एक नामान्तर की कल्पना कर जिस

१. पृथ्वीराज रासो की प्रामाणिकता पर पुनर्विचार, पृष्ठ ४१-४३, राजस्थानी भारती भाग १, अंक २-३ पुष्पांक जुलाई, अवटूर सन् १९४६।
२. पृथ्वीराज रासो, ना० प्र० सं० काशी, छं० २८६, स० १।
३. रासो की हस्तलिखित एवं अप्रकाशित प्रति, पृ० १०।

शैली का प्रदर्शन किया है, वह प्राच्य विचारदों को आश्चर्य में डाल देने वाली है। 'रासो' में लिखा है—

अरिमंत सकल कलि करन चूर ।  
माणिक्यराय चहुवानसूर ॥'

अस्थूलनंद—'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार चौहान वंश वृक्ष में २४वीं पीढ़ी में राजा नागहस्त के उपरान्त उनका पुत्र अस्थूलनंद हुआ।<sup>१</sup> कवि ने ग्रन्थ में इनका विशेष विवरण प्रस्तुत नहीं किया है। रा० ए० सो० लंदन की 'रासो' की प्रति उपर्युक्त कथन का समर्थन करती है।<sup>२</sup> किन्तु 'रासो' की अन्य प्रतियां यथा धारणोज की प्रति, बीकानेर की एक लक्ष अक्षर वाली प्रति तथा साहित्य संस्थान उदयपुर से प्रकाशित प्रति, प्राचीन शिला लेख एवं संस्कृत के ग्रन्थ जिनमें चौहानों की वंशावलि या दी हुई हैं इनके नाम का समर्थन नहीं करते हैं।<sup>३</sup>

आनन्ददेव—'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार चौहान वंश परम्परा में ४०वीं पीढ़ी में राजा जयसिंह के उपरान्त उनका एक मात्र पुत्र आनन्ददेव राजगद्दी का उत्तराधिकारी हुआ। १०० वर्षों तक सुख-शांति से राज्य करने के उपरान्त इन्होंने अपना राज्य अपने पुत्र सोमेश्वर को सौंप दिया—

तहां तप्ति तेज आनन्द मेव । बराह रूप दिध्यो सुदेव ॥  
घरनी बिहार आयास साद । मंड्यो सुराज पुहकर प्रसाद ॥  
सो बरस राज तप अंत कीन । सिर छत्र सोम पुत्रह सुवीन ॥'

रा० ए० सो० लंदन की रासो की प्रति,<sup>४</sup> धारणोज की प्रति तथा बीकानेर की एकलक्ष अक्षर वाली प्रति उपर्युक्त कथन का समर्थन करती है, किन्तु साहित्य संस्थान, उदयपुर, से प्रकाशित 'पृथ्वीराज रासो' इनका कोई संकेत प्रस्तुत नहीं करता है। शिला लेख एवं संस्कृत के प्राचीन ग्रन्थ जिनमें चौहानों की वंशावली का उल्लेख है, आनन्द देव के विषय में संवत्था मौन है।<sup>५</sup> पंडित सदाशिव दीक्षित, विश्व राज, आनन्द देव तथा बीसल देव, आदि नामों में

१. पं० सदाशिव दीक्षित, रासो-समीक्षा, पृ० ११४।
२. पृथ्वीराज रासो, ना० प्र० स० काशी, छं० २८९, स० १।
३. रासो की हस्त लिखित एवं अप्रकाशित प्रति, पृ० १०।
४. देखिए, प्रस्तुत शोध प्रबन्ध, परिशिष्ट भाग।
५. पृथ्वीराज रासो, ना० प्र० स० काशी, छं० ६१२, स० १।
६. रासो की एक हस्त लिखित एवं अप्रकाशित प्रति, पृ० १३।
७. धारणोज का अप्रकाशित प्रति, आदि समय।

कोई अंतर नहीं मानते हैं वरन् उनका कथन है कि यह सब एक व्यक्ति आनन्ददेव के ही नाम हैं—

‘इसके तीन नाम हैं—विग्रहराज, आनन्ददेव और वीसलदेव । शिलालेख और पृथ्वीराज विजय में विग्रहराज, रासो के आनन्ददेव तथा प्रबंध कोप, हम्मीर महाकाव्य और सुर्जन चरित में वीसलदेव । इस प्रकार इसके नाम त्रितय की सत्ता ऐतिहासिक विद्वानों से तिरोहित नहीं है ।

अनेक प्राचीन पुस्तकों में ‘आनन्ददेव’ के स्थान पर ‘आनन्दमेव’ मिलता है जो कि सर्वथा अशुद्ध है, क्योंकि ‘मेव’ पद का कोई अर्थ नहीं होता । लेखक प्रमाद से देव के स्थान पर मेव हो जाना अधिक सम्भावित है । सामंतदेव, वीसलदेव, सारंगदेव आदि के समान आनन्ददेव ही समुचित प्रतीत होता है ।’

आनन्दराजः—‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार चौहानों के वंश वृक्ष की २५ वीं पीढ़ी में राजा अस्थूलनद चौहान का पुत्र आनन्दराज हुआ जिसने अस्थूलनद के उपरान्त राज्यभार ग्रहण कर चौहानों की वंशावली को आगे बढ़ाया ।’ ग्रन्थकार ने इसके नाम मात्र का उल्लेख किया है । रा० ए० सो० लदन की रासो की प्रति उपर्युक्त कथन की पुष्टि करती है, किन्तु रासो के अन्य संस्करण, जैसे धारणोज की प्रति, बीकानेर की एक लक्ष अक्षर वाली, प्रति एवं साहित्य संस्थान उदयपुर से प्रकाशित प्रति इनके विषय में सर्वथा मौन है । शिलालेख एवं प्राचीन संस्कृत के ग्रन्थ भी इसके नाम का समर्थन नहीं करते ।’ पंडित सदाशिव दीक्षित शिलालेखों के विग्रहराज एवं प्रबंधकोप के विजयराज को ही आनन्दराज मानते हुए लिखते हैं कि ‘प्रशस्ति, पृथ्वीराज विजय तथा हम्मीर-महाकाव्य में इसका नाम विग्रहराज बतलाया गया है और शिलालेख में विग्रह, परन्तु प्रबंधकोप तथा रासो में इनका स्मरण विजयराज तथा आनन्दराज इन नामों से किया गया है ।’” संभव है पंडित जी को नाम के अंत का ‘राज’ शब्द देखकर ही, एक ही व्यक्ति के नाम होने का भ्रम हो गया है । प्रामाणिक प्रमाणों के अभाव में पंडित जी का मत ग्राह्य नहीं है ।

आनलराज अथवा आना—‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार चौहान वंश परम्परा में ३८वीं पीढ़ी में राजा सारंगदेव के आनलराज अथवा आना नामक पुत्र ने जन्म लिया । इनकी माता

१. पं० सदाशिव दीक्षित—रासो समीक्षा; पृ० १२३ ।
२. पृथ्वीराज रासो, ना० प्र० स० काशी छं० २८९, स० १ ।
३. रासो की हस्त लिखित एवं अप्रकाशित प्रति, पृ० १० ।
४. देखिए; प्रस्तुत शोध प्रबन्ध, परिशिष्ट भाग ।
५. पं० सदाशिव दीक्षित—रासो समीक्षा पृ० ११७ ।

की नीम गवरी था। राजा सारंगदेव की पत्नी गवरी रणथम्भ चली गई थी, वही पर राज-कुमार आनलराज ने जन्म ग्रहण किया।<sup>१</sup> अनलराज ने बड़े होने पर एक दिन अपनी माता से प्रश्न किया कि मेरा जन्म किस वंश में हुआ है—

घोर पुत्र मातुल सुमति । गवरि सपन्नौ जाइ ॥

को किहि वंसहि अपज्जौ । तू मुझ जंपहि माइ ॥<sup>२</sup>

माता गवरी, पुत्र के इस प्रश्न को सुनकर, दुःखी होकर बोली कि हे पुत्र ! यदि इस प्रश्न को न पूछो तभी अच्छा है, क्योंकि उसके स्मरण मात्र से भय तथा, कष्ट उत्पन्न हो जाती है।<sup>३</sup> आनलराज के अत्यन्त हठ करने पर गवरी ने वीसलदेव की समस्त कथा कह सुनाई तथा अपने पति सारंगदेव की मृत्यु का रहस्य भी समझा दिया। आनलदेव ने अपने पिता की मृत्यु का कारण जानकर वीसलदेव अथवा दूँडा दानव को मारने का प्रण किया—

मात सुनौ तपसिन वचन । अरु दिय असिस पवारि ।

अवदि जाय अजमेर गढ़ । अरि को आऊँ मारि ॥<sup>४</sup>

आना के प्रण को सुनकर उसकी माता गवरी ने बहुत समझाया कि कुमंत्र मत ग्रहण करो। दूँडा दानव, जो इतना भीषण है, वह तो मनुष्यों को दूँड-दूँड कर भक्षण करता है और तुम स्वयं ही उसकी सेवा करने के लिए आग्रह कर रहे हो।<sup>५</sup> किन्तु आना ने माता की एक न सुनी एवं पुनः वीसलदेव के पास जाने का आग्रह किया। आना ने अजमेर के भीषण जंगलों में जाकर अपनी बुद्धि की निर्भयता के कारण राक्षस दूँडा को प्रसन्न कर लिया।<sup>६</sup> परिणामस्वरूप दानव राजा आना ( अर्णोराज ) को अजमेर का राज्य देकर आकाश मार्ग से दिल्ली की ओर उड़ गया।<sup>७</sup> राजा आना ने दानव से अजमेर राज्य पुनः प्राप्त कर लिया तथा लौट कर समस्त कथा अपनी माता से कह सुनाई। राजा आना ने अजमेर को पुनः बसा कर सुख पूर्वक ७१ वर्ष तक राज्य किया।

अनल आनि मातह मिल्यौ । कहि सब वत सुनाइ ॥

लोग महाजन संग लै । भूमि बसाई जाई ॥ छं० ६०४ ॥

आना नरिंद अजमेर बास । संमरीय कोन सौबन्न रास ॥

नियनाम कह्या आना नरिंद । अरि धरनि वीर मंघौ सुवंद ॥ छं० ६०५ ॥

१. पृथ्वीराज रासो; ना० प्र० सं० काशी, छं० ३०८-३१०, सं० १।

२. वही, छं० ३१९, सं० १।

३. वही, छं० ३२०, सं० १।

४. वही, छं० ५१८, सं० १।

५. वही, छं० ५२२, सं० १।

६. वही, छं० ५३२-५१, सं० १।

७. वही, छं० ५५२-३, सं० १।

प्रामान ग्राम तोरन उत्तंग । वन वहिद कट्टि निधि-निधि पुरंग ॥  
 पसु पयि सद श्रुत मंडलेन । जल न्हान दान बह्यन सु देन ॥ छं० ६०६ ।  
 हारम्म रम्य फिरि मंडि लोइ । दालिद्र दीन दीसै न कोई ॥  
 चौघट्टि सत्त वरष प्रमान । आना नरिद तपि चहुंवान ॥ छं० ६०७ ।'

रा० ए० सो० लंदन की रासो की प्रति उपर्युक्त मत का समर्थन करती है । धारणोज की प्रति एवं वीकानेर की एक लक्ष अक्षर वाली प्रति में भी अनलराज का नाम चौहान वंश परम्परा में प्राप्त होता है । किन्तु साहित्य संस्थान उदयपुर से प्रकाशित 'रासो' इनके विषय में सर्वथा मौन है । पंडित सदाशिव दीक्षित ने लिखा है कि—'शिलालेख तथा पृथ्वीराज विजय में इसका नाम अर्णोराज और रासो, प्रबंधकोष, हम्मीर महाकाव्य तथा सूरजचरित में इसका नाम अनलराज बतलाया गया है । अनलराज और अनलदेव एक ही नाम के दो रूप हैं ।'

इतिहासवेत्ता अर्णोराज अथवा अनलराज को पृथ्वीराज (प्रथम) का पुत्र मानते हैं । डॉ० दशरथ शर्मा ने सारंगदेव को पृथ्वीराज होने का अनुमान भी लगाया है । 'रासो' के अनुसार अर्णोराज अथवा अनलराज ने अजमेर को बसाया था । इतिहासवेत्ता भी इस कथन का समर्थन करते हैं । डॉ० एच० सी० राय ने अपनी पुस्तक 'Dynestic History of Northern India' में अजमेर बसाने वाली बात का समर्थन किया है ।'

१. पृथ्वीराज रासो; ना० प्र० स काशी, छं० ६०४-६०७, स० ५ ।
२. पं० सदाशिव दीक्षित, रासो समीक्षा, पृ० १२३ ।
3. Prithviraja I was succeeded by his son Ajayaraja alias Sulhana According to the Prathviraja-Vijaya, he defeated the Matangas ( Meccohas ) and also sulhana the king of Malva The last statement is confirmed by the Bijolia Inscription, which states that Ajayaraja captured in battle Sulhana, the commander-in-chief of the army tied him to the back of his camel and brought him to Ajmer. As there was no prince ruling in Malva during this period who bore the name Sulhana, he must be a general of one of the Pramara kings possibly Yosovarman ( C 1134-43 A. D. ) There were not the only victories of Ajayaraja. The Bijolia inscription states that he killed three kings viz-Caciga, Sindhula, and Yosoraja, while another stone inscription found in the Adhaidinka jhonpra, Ajmer ( now in the Rajputana Museum ) says that he conquered the country up to Ujjain. Beside there conquests the most important achievement of his reign was the foundation of the city of Ajayameru now known as Ajmer."

अतः स्पष्ट है कि राजा अनलराज अथवा अर्णोराज अथवा आना एक ऐतिहासिक पात्र है तथा इन्होंने अजमेर नगर को बसाया था । 'रासो' मूल रूप से एक काव्य ग्रन्थ है, इतिहास नहीं । अतः यत्र-तत्र कल्पना का योग होना स्वाभाविक ही है ।

उद्धारहार—'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार चौहान वंश की ९वीं पीढ़ी में उद्धारहार नाम का राजा हुआ ।<sup>१</sup> यह राजा विन्दसार के उपरान्त उनकी गद्दी का उत्तराधिकारी हुआ था । सम्पूर्ण रासो में इनके नाम के अतिरिक्त कोई सूचना प्राप्त नहीं होती है । रा० ए० सो० लंदन की रासो की प्रति के अनुसार भी उद्धारहार नामक राजा विन्दसार के उपरान्त ही गद्दी पर बैठा ।<sup>२</sup> धारणोज की प्रति एवं साहित्य संस्थान उदयपुर से प्रकाशित रासो, शिलालेख एवं संस्कृत के प्राचीन ग्रन्थ भी इनके विषय में सर्वथा मौन हैं ।<sup>३</sup>

उद्धारहार को पंडित सदाशिव दीक्षित विन्दुसार का विशेषण मानते हुए लिखते हैं कि— 'उद्धारहार, अशोक और शंकाविडार इन तीनों नामों के दर्शन पाना रासो की अर्थानभिज्ञता का पूर्ण परिचायक है । रासो अवलोकन करने पर इनकी विशेषणता में किसी प्रकार का सन्देह नहीं रह जाता—

सुअ विन्दसार उद्धारहार ।

आसोकश्रीय संकाविडार' ।<sup>४</sup>

किस्नराज अथवा कृष्णराज—'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार चौहानों की वंशावली की ३१ वीं पीढ़ी में राजा चंदराय चौहान के उपरान्त उनका एकमात्र पुत्र किस्नराज अथवा कृष्णराज उनका उत्तराधिकारी हुआ ।<sup>५</sup> रा० ए० सो० लंदन की रासो की प्रति उपर्युक्त कथन का समर्थन करती है ।<sup>६</sup> किन्तु धारणोज की प्रति, बीकानेर की एक लक्ष अक्षर वाली प्रति तथा साहित्य संस्थान, उदयपुर से प्रकाशित पृथ्वीराज रासो, एवं शिलालेख आदि इनके विषय में कुछ उल्लेखनीय विवरण प्रस्तुत नहीं करते हैं ।<sup>७</sup>

पंडित सदाशिव दीक्षित ने इनके विषय में एक स्थान पर लिखा है कि 'इसके नाम

१. पृथ्वीराज रासो, ना० प्र० स०, काशी, छ० २८५, स० १ ।

२. रासो की अप्रकाशित प्रति, पृ० १० ।

३. देखिए, प्रस्तुत शोध प्रबन्ध परिशिष्ट भाग ।

४. पं० सदाशिव दीक्षित, रासो-समीक्षा, पृ० ११३ ।

५. पृथ्वीराज रासो ना० प्र० स० काशी, छ० २९०, स० १ ।

६. रासो की हस्तलिखित एवं अप्रकाशित प्रति, पृ० १० ।

७. देखिए, प्रस्तुत शोध प्रबन्ध परिशिष्ट भाग ।

नितानेय तथा पृथ्वीराज विजय में 'वियंराय', प्रबंध कोष में 'विजयराय', हम्मीरमहाकाव्य में 'राय', गुर्जनवरित में 'रायनाय' तथा 'रासो' में कृष्ण राज वतलाते हैं ।" पता नहीं पंडित जी ने यह कैसे अनुमान लगा लिया कि यह सब एक ही व्यक्ति के नाम है । प्रमाणों के अभाव में पंडित जी का मत ग्राह्य नहीं हो सकता ।

चतुरबाहुमाण, चाहुवान, चौहान—ऋषि वशिष्ठ ने आवू पर्वत पर अपने यज्ञ को निर्विघ्न समाप्त करने के लिए वीर पुरुष चाहुमान को हवनकुण्ड से मंत्रबल के आधार पर उत्पन्न किया । इस वीर पुरुष की चार भुजाएँ होने के कारण चाहुवान कहा गया—

अनल कुण्ड किय अनल । सज्जि उपगार सार सुर ॥  
कमलासन आसनह । मंडि जग्योपवीत जुरि ॥  
चतुरानन स्तुति सह । मंत्र उच्चार सार किय ॥  
मुकरि कमडल वारि । जुजित आह्वान थान दिय ॥  
जा जमि पानि थव अहुति जजि । मजि सु दुष्ट आह्वान करि ॥  
उपज्यो अनल चहुवान तव । चव सु बाहु असि बाहु धरि ॥ छं० २५५ ।  
भुज प्रचंड चव च्यार मुष । रत्त व्रक्ष तन तुंग ।  
अनल कुंड उपज्यो अनल । चाहुवान चतुरग ॥ छं० २५६ ॥<sup>१</sup>

इन्हीं महापुरुष से चौहान वंश की उत्पत्ति हुई । इन्हीं की वंश परम्परा में कालान्तर में हिन्दुओं के अन्तिम शासक दिल्ली, अजमेर के अधिपति महाराज पृथ्वीराज चौहान (तृतीय) ने जन्म लिया ।

तिन रक्षा किन्ही सु दुज । तिहि सुवंस प्रथिराज ।  
सो सिरपत पर बादनह । किय रासो जु विराज ॥ छं० २८१ ॥<sup>२</sup>

चाहुवान की उपर्युक्त उत्पत्ति कथा के विषय में इतिहासवेत्ता एक मत नहीं है । प्रायः सब 'रासो' की उपर्युक्त कथा को काल्पनिक ही मानते हैं । राजा विश्वहराज चौहान के समय की वि० सं० १०२० की हर्षनाथ के मंदिर की प्रशस्ति में चौहानों की वंशावली का उल्लेख हुआ है, किन्तु उसमें भी चौहान वंश के आदि पुरुष का नाम चाहुवान नहीं मिलता है ।<sup>३</sup> राजा सोमेश्वर चौहान के समय के वि० सं० १२२६ के विजालियाँ के शिला लेख में चौहान वंश के आदि पुरुष का नाम 'सामंत' दिया है, चाहुवान नहीं ।<sup>४</sup> वि० सं० १५ वीं

१. पं० सदाशिव दीक्षित रासो समीक्षा, पृ० ११८ ।

२. पृथ्वीराज रासो. ना० प्र० सं० काशी, छं० २५५-५६, सं० १ ।

३. यही, छं० २८१, सं० १ ।

४. देखिए, प्रस्तुत शोध प्रबंध, परिशिष्ट भाग ।

शताब्दी के आसपास लिखे गए प्रबंधकोष के अन्त में दी हुई चौहानों की वंशावली के आधार पर चौहान वंश के आदि पुरुष का नाम 'वासुदेव' था ।<sup>१</sup> वि० सं० १६३५ के आसपास बने हुए 'सुर्जनचरित' काव्य में प्रथम पुरुष का नाम भी 'वासुदेव' ही मिलता है,<sup>२</sup> किन्तु इतना सब होते हुए भी 'पृथ्वीराज विजय' महाकाव्य, हम्मीरकाव्य तथा रासो के समस्त संस्करणों में आदि पुरुष का नाम 'चाहुवान' ही दिया हुआ है ।<sup>३</sup>

उपर्युक्त जिलालेखों एवं प्राचीन ग्रन्थों के आधार पर यह निर्णय करना कि चौहानों के आदि पुरुष का नाम 'चाहुवान' था, अत्यन्त कठिन है । कुछ इतिहासवेत्ता चौहानों को अग्नि-वंशी मानते हैं, किन्तु चौहान अग्निवंशी ही हैं । अधिकतर प्रमाण इसी पक्ष में हैं कि चौहान वंश के आदि पुरुष का नाम चाहुवान था । डॉ० टीकमसिंह तोमर चाहुवान का अस्तित्व स्वीकार करते हुए अपने ग्रन्थ 'वीर काव्य' में लिखते हैं—'चाहुमान की उत्पत्ति सूर्यवंश में मानकर उन्हें चौहान वंश का प्रवर्तक बतलाया गया है । इसके जन्म के सम्बन्ध में जांधराज का मत निराधार है । चाहुमान को एकदम काल्पनिक व्यक्ति नहीं माना जा सकता । पर्याप्त सामग्री के अभाव में इनका अधिक विवरण देना दुष्कर है' ।<sup>४</sup> डॉ० दशरथ शर्मा एक स्थान पर रासो की प्रामाणिकता दर्शाते हुए लिखते हैं कि "प्रायः सभी ही प्रथम चौहान को ब्रह्मा के यज्ञ से ही उत्पन्न मानते हैं । सुर्जनचरित के सप्तम सर्ग में लिखा है कि ब्रह्मा ने पुष्कर में एक यज्ञ किया । विघ्न की आशंका से उन्होंने सूर्य की तरफ देखा और उससे प्रथम चौहान की उत्पत्ति हुई । अतः ब्रह्मा का यज्ञ ही प्रथम चौहान की उत्पत्ति का कारण था । हम्मीर महाकाव्य की कथा भी इससे विशेष भिन्न नहीं है । उसमें लिखा है कि ब्रह्मा यज्ञ के लिए भूमि ढूँढते हुए जब पुष्कर पहुँचे तो उनके हाथ का कमल वहाँ गिर पड़ा । इसलिए उसी स्थान को शुभ मानकर ब्रह्मा ने वहाँ यज्ञ प्रारम्भ किया । फिर राक्षसों द्वारा विघ्न की आशंका उत्पन्न होने पर उन्होंने सूर्य का स्मरण किया । उससे एक अत्यन्त तेजस्वी पुरुष उतरा । यह प्रथम चाहुमान था । इस प्रकार हम्मीर महाकाव्य भी ब्रह्मा के यज्ञ को ही प्रथम चाहुमान की उत्पत्ति का कारण बताता है । पृथ्वीराज विजय महाकाव्य भी पुष्कर की रक्षा के लिए ही चाहुमान की उत्पत्ति करवाता है और इस काव्य के अनुसार भी त्रिपुष्कर में केवल जल से परिपूर्ण ब्रह्मा के तीन यज्ञ कुण्ड थे । यदि हम्मीर रासो की प्रति प्रचलित अग्नि वंश की उत्पत्ति कथा देती या कम से कम यही कहती कि चौहानों की उत्पत्ति वशिष्ठ ने अग्नि कुण्ड से या अर्बुद पर्वत पर हुई तो हमें उसे अनैतिहासिक बतलाने का पूर्ण अधिकार था । परन्तु ब्रह्मा के यज्ञ से चौहानों की उत्पत्ति बतलाने पर ही यदि उसे अनैतिहासिक ठहराया जाय तो यह दोष चौहान वंश के प्रामाणिक से प्रामाणिक जिलालेखों और काव्यों पर

१. देखिए प्रस्तुत शोध प्रबंध, परिशिष्ट भाग ।

२. डॉ० टीकमसिंह तोमर, वीरकाव्य, पृ० ३५२ ।



भी आरंभित किया जा सकता है ।<sup>१</sup> रासो के प्रायः समस्त संस्करण उपर्युक्त मतका समर्थन करने हैं । यह मानना ही पड़ता है कि चौहानों के आदि पुरुष का नाम चाहवान था तथा उसी के नाम के आधार पर उस वंश का नाम चौहान हुआ तथा यही उस वंश का आदि पुरुष था, और फिर वर्तमान काल में समस्त चौहान अपने को अग्निवंशी मानते भी हैं ।

चदराय-‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार चौहानों की वंशावली की ३०वीं पीढ़ी में राजा जोगमूर अथवा योगमूर चौहान के उपरान्त उनका एक मात्र पुत्र चंदराय उनका उत्तराधिकारी हुआ, जिसने यश का अर्जन करके अपयश को दूर किया ।<sup>२</sup> रा० ए० सो० लंदन की रासो की प्रति उपर्युक्त मत का समर्थन करती है ।<sup>३</sup> किन्तु धारणोज की प्रति, वीकानेर की एक लक्ष अक्षर वाली प्रति, साहित्य संस्थान उदयपुर से प्रकाशित ‘पृथ्वीराज रासो’ की प्रति, शिलालेख एवं संस्कृत के प्राचीन ग्रन्थ इनके विषय में सर्वथा मौन है ।

पंडित सदाशिव दीक्षित चंदराय शब्द को राजा विबुध सिंह का विशेषण मात्र मानते हैं । सम्भव है, उनके कथन किसी सीमा तक सच हो । ‘श्री ओक्षा आदि विद्वानों ने रासो के आधार पर ‘योगमूर’ और ‘चंदराय’ इन दो और नामों की कल्पना की है, परन्तु तात्त्विक दृष्टि से विवेचन करने के अनन्तर ये दोनों विशेषण प्रतीत होते हैं, नाम नहीं । रासोकार का कथन है कि—

सुख विबुध सिंघ सय जोगसूर ।

जस चन्दराइ वर अजस दूर ॥<sup>४</sup>

चन्द्रगुप्त—‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार चौहान वंश परम्परा की १८वीं पीढ़ी में राजा गंग्राम सिंह के उपरान्त उसका पुत्र चन्द्रगुप्त, उनका उत्तराधिकारी हुआ । कवि के अनुसार यह चन्द्रमा के समान सुन्दर था ।<sup>५</sup> रा० ए० सो० लंदन की रासो की प्रति उपर्युक्त कथन का समर्थन करती है ।<sup>६</sup>

धारणोज की प्रति तथा साहित्य संस्थान उदयपुर से प्रकाशित रासो इनके विषय में मौन है । हर्षनाथ मंदिर की प्रशस्ति तथा पृथ्वीराज विजय में चन्द्रराज, विजोलियाँ शिलालेख

१. डॉ० दशरथ शर्मा, पृथ्वीराज रासो की कथाओं का अनेतिहासिक आधार, पृ० ३-४, राजधानी-नाग ३, अंक ३, जनवरी १९४०, कलकत्ता ।
२. पृथ्वीराज रासो, ना० प्र० स० काशी, छं० २९०, स० १ ।
३. रासो की हस्तलिखित एवं अप्रकाशित प्रति, पृ० १० ।
४. पं० सदाशिव दीक्षित, रासो-समीक्षा, पृ० ११८ ।
५. पृथ्वीराज रासो, ना० प्र० स० काशी, छं० २८७, स० १ ।
६. रासो की हस्त लिखित एवं अप्रकाशित प्रति, पृ० १० ।

में शशिनूप, सुर्जन चरित में चन्द आदि नाम मिलते हैं। संभव है यह एक ही व्यक्ति के नाम हों। प्रबंध कोष तथा हम्मीर महाकाव्य का मौन वास्तव में आश्चर्य का विषय है।'

चन्देलराज परमहिंदेव-१२वीं शताब्दी के उत्तरी भारत की प्रबल शक्तियों में से एक महत्वपूर्ण सत्ता महोबा एव कार्लिजर के आधिपति परमाल राज की थी। महोबा का चन्देल वंश ९वीं शताब्दी से लेकर ११ वीं शताब्दी तक अत्यंत सम्पन्न रहा। चन्देल वंश के अति प्रसिद्ध राजा धर्म राज के बनारस से प्राप्त लेख से ज्ञात होता है कि इस वंश के आदि पुरुष नन्तुक ने सन् २३१ में जैजाकमुक्ति (बुन्देलखंड) से परिहारों को निकाल कर अपना स्वतंत्र राज्य स्थापित किया था।'

परमहिंदेव के सिंहासनारूढ़ होते ही चन्देलों तथा दिल्ली के चौहानों के घोर सग्राम छिड़ गए तथा सन् ११८२ में पृथ्वीराज चौहान ने उन्हें पूर्णतया परास्त कर दिया तथा उसके राज्यान्तर्गत सुदूरस्थ मदनपुर तक खदेड़ दिया।'

'पृथ्वीराज रासो' के महोबा समय में चौहान तथा परमहिंदेव के सघर्ष का कारण राजा परमाल की अनीति था।' पृथ्वीराज के कुछ घायल सैनिक दिल्ली जाते समय मार्ग भूल कर महोबा आ पहुँचे, जिन्हें परमाल ने मरवा डाला। इसी का प्रतिशोध लेने के लिए पृथ्वीराज चौहान ने महोबा पर आक्रमण किया था। किन्तु यह विवरण पक्षपात पूर्ण प्रतीत होता है। वास्तव में इस युद्ध का मूल कारण पृथ्वीराज की विजयाकांक्षा ही थी। इस सग्राम के द्वारा भारतवर्ष की स्थिति राष्ट्रीय संकट में पड़ गई। जैसा कि चि० वि० वर्ध का कथन है 'परमहिंदेव की शक्ति पृथ्वीराज के आक्रमण से बहुत क्षत-विज्ञप्त हो गई। इसे एक ऐसी भूल समझनी चाहिए जो राष्ट्रीय विनाश का कारण बनी क्योंकि चन्देल तत्कालीन भारत के अग्रणी क्षत्रिय शासकों में से एक थे।'

'आल्हा' के अनुसार भी पृथ्वीराज का महोबा पर आक्रमण राज्य विस्तार ही मानून होता है। 'आल्हा' में लिखा है कि माहिल से सूचना पाकर कि आल्हा-ऊदल कर्नाज में है; पृथ्वीराज चौहान ने राज्य विस्तार की कामना से महोबा की ओर कूच कर दिया। प्रथम सग्राम पड़ोज नदी के तट पर लगभग सन् ११८२ के अक्टूबर में सिरसागढ़ की भूमि पर वीर मलखान की अध्यक्षता में हुआ।' पराक्रमी वीर मलखान वीर गति को प्राप्त हुआ तथा पृथ्वीराज ने उसका किला गिरवा दिया।

१. देखिए, प्रस्तुत शोध प्रबन्ध, परिशिष्ट भाग।
२. इन्डि० एन्टी, भाग १, पृ० १३९।
३. डॉ० ईश्वरी प्रसाद, मध्य कालीन हिन्दू भारत, पृ० २०-२१, प्रयाग, १९५२।
४. हिस्ट्री आफ मेडिवल हिन्दू इन्डिया, जि० ३, पृ० १८३।
५. आर्कोलाजिकल रिपोर्ट, जि० ९, पृ० १८८ तथा इन्डियन ऐंटीक्वेरी, पृ० १४५, १९०८।

‘अहमन् रासो’ के अनुसार युद्ध काल में मलखान ने महोबा से सहायता मंगवाई थी, किन्तु माहिल परिहार के कहने पर राजा परमाल ने इस ओर कुछ ध्यान न दिया । द्वितीय यात्रा पृथ्वीराज ने कीर्तिसागर पर अपना डेरा डाला, तब मल्हना के परामर्श से परमाल ने अल्हा-ऊदन को बुलाने और जयचंद से सहायता लेने के लिए कवि जागनिक को कन्नौज भेजा । उनके आने पर युद्ध हुआ । चन्देलों के प्रायः सभी योद्धा वीरगति को प्राप्त हुए । राजा परमाल का पुत्र अल्हा भी इसी संग्राम में वीरगति को प्राप्त हुआ । महोबा पर चौहानों की विजय पताका फहराने लगी । इस विजय की ऐतिहासिकता मदनपुर की बारादरी में पृथ्वीराज के आदेश ने उत्कीर्ण सन् ११८२-३ के दो शिलालेखों से भी प्रमाणित होती है ।<sup>१</sup> बुन्देली आल्हा के अनुसार यह युद्ध उरई में हुआ था ।<sup>२</sup> ज्ञात होता है कि परमहिंदेव ने पराजय होने के कुछ ही समय उपरान्त अपनी शक्ति पुनः संगठित कर महोबा पर अधिकार कर लिया होगा, क्योंकि महोबा के किले की दीवार पर उसकी आज्ञा से उत्कीर्ण ४ जून सन् ११८५ ई० का एक अभिलेख प्राप्त हुआ है<sup>३</sup> तथा ८ अक्टूबर सन् १२०१ ई० तक उसने प्रायः अपने सभी पश्चिमी प्रान्तों पर पुनः अधिकार पा लिया था । इस बात की पुष्टि कालिजर के नीलकण्ठ मंदिर में एक पाषाण पर उत्कीर्ण निम्न लेख से हो जाती है—‘नृप परमहि ने अपने शत्रुओं को जीतकर अपने सहज विश्वास से मुरारि की इस स्तुति का प्रणयन किया ।’

‘पृथ्वीराज रासो’ के महोबा समय में परमहिंदेव की मृत्यु के विषय में कुछ भी संकेत नहीं प्राप्त होता है । आल्हा के अनुसार परमाल ने पराजय के दुःख से दुःखित होकर अपने प्राण त्याग दिए थे । ‘परमाल रासो’ के अनुसार पराजय के बाद वह गजाघर के मंदिर में गया तथा चौहानों को शाप देकर अपना शरीर त्याग दिया ।<sup>४</sup> किन्तु यह दोनों विवरण विश्वास योग्य नहीं हैं । फरिश्ता के अनुसार सन् १२०२ ई० में कुतुबुद्दीन ऐबक ने कालिजर की ओर कूच किया और वहाँ के राजा को पराजित कर किले में घेरा डाल दिया । राजा ने कुछ शर्तों पर उससे संधि कर ली, परन्तु जब वह उपहारों का प्रबंध कर रहा था, तभी उसके मंत्री ने उसका वध कर दिया ।<sup>५</sup> वास्तव में फरिश्ता का विवरण पक्षपात पूर्ण है । तत्कालिक

१. श्री चाहमानवंश्ये पृथ्वीराजय भुजा । परमदि नरेन्द्रय,  
देजोपमुदयास्यते । ओं अण्णैराजस्य पौत्रेण श्री  
सोमेश्वरसनुना । जेजाकभुषितदेशोपं पृथ्वीराजेन लूनितः ॥

सं० १२३९ । आ० सं० रि०, जि० १०, पृ० ९८ ।

२. लिगुष्टिक सर्वे आफ इंडिया, जि० ९, भाग १, पृ० ५५३ ।
३. इण्डियन एन्टोक्वेरी, जि० १९, पृ० १७९ ।
४. इण्डियन एन्टोक्वेरी, जि० २५, पृ० २०६ तथा आ० सं० रि०, जि० २१, पृ० ३८ ।
५. परमाल रासो, छं० ६३-५, पृ० ५३८ ।
६. क्रिज, फरिश्ता, पृ० १९७ ।

इतिहासवेत्ता हसन-निजामी ने स्पष्ट लिखा है कि कालिजर का राय अभिशत परमार, संधि की एक भी शर्त का पालन किए बिना ही स्वाभाविक रूप से मृत्यु को प्राप्त हुआ।<sup>१</sup> फारसी इतिहासकार के इस विवरण के विरोध में ओरछा गजेटियर में लिखा है कि यह झूठा मृत्यु का समाचार जानबूझ कर उड़ाया गया था तथा वास्तव में परमार सं० १२७० वि० तक जीवित रहा था। किन्तु इस विरोधी मत का पुष्ट प्रमाण न मिलने के कारण हसन निजामी का विवरण ही अधिक ग्राह्य प्रतीत होता है।

जोगसूर—‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार चौहान वंशावली की २९वीं पीढ़ी में राजा विबुध सिंह के उपरान्त उनका एक मात्र पुत्र जोगसूर उनका उत्तराधिकारी हुआ।<sup>२</sup> रासोकार अन्य विवरण के विषय में मौन है। रा० ए० सो० लंदन की रासो की प्रति उपर्युक्त मत का समर्थन करती है।<sup>३</sup> किन्तु धारणोज की प्रति, वीकानेर की एक लक्ष अक्षर वाली प्रति तथा साहित्य संस्थान, उदयपुर से प्रकाशित रासो की प्रति राजा जोगसूर के विषय में कोई भी सूचना प्रस्तुत नहीं करती है। शिलालेख एवं संस्कृत के ग्रंथ भी इनका समर्थन नहीं करते।<sup>४</sup>

पंडित सदाशिव दीक्षित ‘जोगसूर’ शब्द को विबुध सिंह का विशेषण मात्र मानते हुए लिखते हैं कि “श्री ओझा आदि विद्वानों ने रासो के आधार पर ‘जोगसूर’ और ‘चन्दगाय’ इन दो और नामों की कल्पना की है, परन्तु तात्त्विक दृष्टि से विवेचन करने के अनन्तर ये दोनों विशेषण प्रतीत होते हैं, नाम नहीं। रासोकार का कथन है कि—

सुअ विबुध सिध सम जोग सूर।

जस चंदराई बर अजस दूर॥<sup>५</sup>

संभव है पंडित जी का कथन सत्य हो। कवि राव मोहन सिंह की धारणा है कि चौहानों की वंशावली में बहुत से नाम भ्रमवर्ण दे दिए गये हैं, वास्तव में वे राजाओं के नाम न होकर विशेषण हैं।<sup>६</sup>

जयचन्द गाहड़वाल—‘पृथ्वीराज रासो’ में जैसा कि नाम से स्पष्ट है पृथ्वीराज के साहसिक कार्यों का उल्लेख हुआ है। अन्य सम्बन्धित राजाओं अथवा पात्रों के विषय में कवि ने निर्देश मात्र कर दिया है। फिर भी संपूर्ण रासो ग्रंथ के आधार पर हम यहाँ राजा जयचंद तथा उसके वंशजों के विषय में प्रकाश डालने का प्रयत्न करेंगे। वंशीजपति ने एक

१. इलियट एण्ड डाउसन्स, हिस्ट्री आफ इण्डिया, जि० २, पृ० २२८-९।

२. पृथ्वीराज रासो, छं० २९०, स० १।

३. रासो की हस्त लिखित एवं अप्रकाशित प्रति, पृ० १०५।

४. देखिए, प्रस्तुत शोध प्रबंध, परिशिष्ट।

५. पं० सदाशिव दीक्षित, रासो समीक्षा, पृ० ११८।

६. पृथ्वीराज रासो की प्रमाणिकता पर पुनर्विचार-फुटनोट, पृ० ३७।

राजस्थान-भारती, भाग-१, अंक २-३ गुप्तांक जुलाई, अक्टूबर, सन् १९४८।

बाद राजसूय यज्ञ के अनुष्ठान का विचार किया किन्तु उनके मन्त्रि सुमन्त ने विरोध किया ।  
उन्होंने यज्ञ को अनुचित एवं असामयिक बताकर राजा की समझाते का प्रयत्न किया किन्तु  
राजा न माना । इसी समय उपस्थित चारणों एवं भाटों द्वारा पंगराज ने अपना वंश परिचय  
जानने की जिज्ञासा की तथा इसी वंश परिचय से राजाकार ने भूत कालीन यज्ञ कर्ताओं को  
राजा के वंशज बना दिए ।

तुम वंश नयी कमधञ्ज सूर, कीनी मुराज राजस भूर ।  
तव वंस भयो वाहन नरिद, अंतरिष्प रय्य चलि श्रग कंद ।  
तुम वस नयो पूरुर सूर, थ च्यारि चक्रनिहि जीति सूर ।  
सत सिंधु सूर जिहि रय्य चील्ह, तुम वस नयो नृप राजनील ।  
तुम वस नयो नलराइ अंद, नपद्ध हार ही धन्या वध ।  
पट चक्र नयो कमधञ्ज आदि, किनी नरिद जिहि वसन बाद ।  
जीभूत धन्यो विहि चक्रसीत, संसार किति कीनी जगीस ।  
को कहै पंग सी दुष्ट आय, मडै मुजग्य निहचैत राय ।  
वारुन भूमि ह्यगय अनग, परपंत पुत्र राजसू जग ।  
सोधिग पुरान बलिवंस वीर, भूगोल लिपित दिप्पित सहोर ।  
छिति छत्र बंध राजन समान, जितोति सकल ह्य गय प्रमान ।  
पुच्छै संमंत परधान तव्य, अव करहु जग्य त्रिय चल कव्व ॥'

उपयुक्त छन्द के अनुसार कमधञ्ज वंश के आदि पुरुष कमधञ्ज सूर थे जिन्होंने राजसूय  
यज्ञ कर सूर विरद की धारण किया तथा उसके बाद से यह सूरपद सभी कमधञ्ज राजाओं  
के नाम के साथ जुड़ने लगा । इनके उपरान्त वाहन नरिद नामक राजा हुआ जिसका रथ  
अनरिधगामी होकर स्वर्ग तक पहुंचा था । इनके पश्चात् हुए पुरुरसूर (सम्भवतः पीराणिक  
राजा पुरुरवा) जिन्होंने चक्रवर्तीपद प्राप्त किया । इनके बाद राजा सत सिंधुसूर हुए, नीलराज  
तथा राजा नन आदि जिनकी कीर्ति चतुर्दिक प्रसारित हुई । छःही लोको में विख्यात चक्रवर्ती  
इसी वंश में उत्पन्न हुए जिनमें से एक जीभूत वाहन भी थे ।

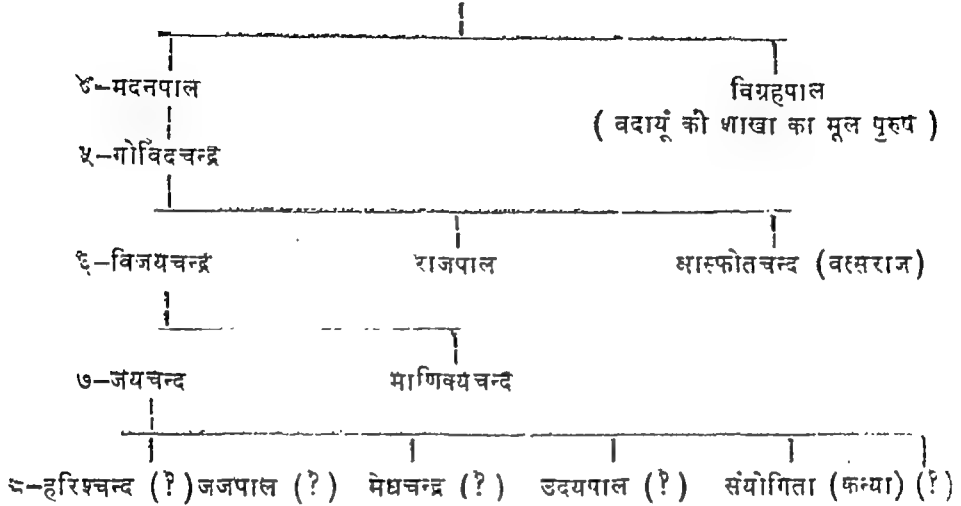
स्पष्ट है कि चारणों ने सभी नाम पीराणिक कथाओं से लेकर राजा जयचन्द के वंशज  
मिना दिए हैं । इतिहास को देखने पर इनमें से एक भी नाम मेल नहीं खाता है । अतः  
स्पष्ट है कि उपयुक्त सभी नाम काल्पनिक हैं । ग्रन्थकार ने 'सूर' शब्द को लेकर ही राजा  
जयचन्द को सूर्यवंशी बताया है जबकि ऐतिहासिक विवरण उसे गाहड़वाल वंशी बताते हैं ।

## ऐतिहासिक गाहड़वाल वंश

१-यशोविग्रह

२-महीचन्द्र

३-चन्द्रदेव



अतः उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि कन्नौजपति राजा जयचन्द मूर्यवंशी नहीं अपितु गाहड़वाल वंशी था ।

पिता—'रासो के अनुसार राजा जयचन्द के पिता का नाम विजयपाल था ( इतिहास में इसका नाम विजयचन्द्र मिलता है ) जिसने कन्नौज पर सं० ११५६-११७० ई० तक शासन किया । रासो के मतानुसार राजा विजयपाल का विवाह दिल्ली नरेश अनंगपाल की पुत्री सुरसुन्दरी से हुआ था—

अनंगपाल पुत्री उभय । इक दीनी विजयपाल ।

इक दीनी सोमेस को । बीज वपन कलि काल । ६८१ ।

एक नाम सुर सुन्दरी । अनिवर कमला नाम ।

वरसन सुर तर दुलही । मनो सुकलिका काम । ६८२ ।

अतः उपर्युक्त विवेचन के अनुसार स्पष्ट है कि राजा जयचन्द के पिता का नाम विजयपाल अथवा विजयचन्द्र था ।

माता—'पृथ्वीराज रासो' में स्पष्ट रूप से राजा जयचन्द की माता का नाम नहीं मिलता है । ग्रन्थकार के मतानुसार दिल्ली पति अनंगपाल की बड़ी पुत्री सुरसुन्दरी का विवाह

विदग्धदान ने अवश्य हुआ था किन्तु यह स्पष्ट नहीं होता कि राजा जयचन्द्र उसी के गर्भ से उत्पन्न हुआ था। पृथ्वीराज के जन्म का वर्णन करते हुए ग्रन्थकार ने एक बड़ा महत्वपूर्ण उल्लेख किया है। सीमेश्वर के पुत्र जन्म का समाचार कन्नौज पहुँचने पर रासोकार ने निम्ना है कि जयचन्द्र की माता ने अपनी बहन के पुत्र उत्पन्न होने के उपलक्ष में नाना उपहार भेजे थे।<sup>१</sup>

उपयुक्त विवरण में प्रत्यक्ष नाम न होने पर भी परोक्ष रूप से यह सिद्ध हो जाता है कि रासो के अनुसार राजा जयचन्द्र की माता का नाम 'मुरसुन्दरी' था। रासो के अन्य समस्त संस्करण भी 'सुरसुन्दरी' नाम का समर्थन करते हैं।

विवाह—कवि चन्द वरदायी ने राजा जयचन्द्र का विवाह दक्षिण के राजा मुकुन्ददेव की कन्या ( जिसका नामोल्लेख नहीं किया है ) के साथ होने का उल्लेख किया है। यही राजा जयचन्द्र की पटरानी थी। 'रासो' में परिणय कथा का वर्णन इस प्रकार मिलता है—  
कान्यकुब्जेश्वर महाराज विजयपाल ने अपने दो योग्यमंत्री मतिराम तथा चित्तविद्या और नमस्त चतुरगिनी सेना को एकत्र कर दक्षिण विजय हेतु प्रस्थान किया। मरुभूमि को छोड़कर क्रम से पूर्व दिशा से लेकर सम्पूर्ण दक्षिण की यात्रा की। उस समय पूर्वी सागरतट पर चन्द्र-वंशी राजा मुकुन्द देव राज्य करता था जिसकी राजधानी कटक थी। यह राजा बड़ा पराक्रमी तथा बौद्ध था, इसके यहाँ तीस लाख अश्वारोही, एक लाख गजरोही, दस लाख पदल की वैतनिक सेना थी। राजा मुकुन्द देव ने सात कोस आगे बढ़कर राजा विजयपाल का स्वागत किया तथा नाना प्रकार का सत्कार कर अपार धनराशि, दास-दासियों सहित अपनी पुत्री विजयपाल को अर्पण कर दी। विजयपाल ने उस कुमारी का विवाह जयचन्द्र से कर दिया। कन्नौज लौटने पर पुत्र तथा बधू मुख पूर्वक अपना समय व्यतीत करने लगे तथा सोलह वष की आयु होने पर इसी रानी से मुकुमार कुमारी संयोगिता का जन्म हुआ।<sup>२</sup>

जयचन्द्र विरचित 'रम्भा मंजरी' में जयचन्द्र की सात रानियों का उल्लेख मिलता है। तथा राजा जयचन्द्र अपना भूपति नाम साधक करने के हेतु पुनः किम्भीर वंशी देवराज की पोत्री तथा लाट नरेश मदनवर्मा की पुत्री से विवाह करने के लिए लालाइत दिखाई देता है।<sup>३</sup> 'रम्भा मंजरी' की नायिका 'रम्भा' का सम्बन्ध हंस नामक व्यक्ति से पूर्व ही स्थिर हो चुका था किन्तु विदूषक तथा नारायण दास के सतत प्रयत्नों के फलस्वरूप उसका शास्त्रों के अनुसार परिणय संबंध कन्नौजपति राजा जयचन्द्र से हो गया। अन्य रानियों सहित वह भी महल में

१. कनकज जंचन्द मात , नयी सन्नरि वहनी सुत ।

तिन पयंत दूज पठिय , थार जर चोर थपिय युत ॥ छं० ४५, स० १, उदयपुर संस्करण ।

२. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा, पृ० ५२५५-१२५७, स० ४५ ।

३. श्री आदिनाथ नेमिनाथ उवाच्याय, नयचन्द और उनका ग्रन्थ रम्भा मंजरी-प्रेमी अभि-  
नन्दन ग्रन्थ, पृ० ४११ ।

भेज दी गई। इसी 'नाटिका' के अनुसार राजा जयचन्द की एक रानी और थी जिसका नाम राजमती था जो नाटिका की नायिका रम्भा का विशेष ध्यान रखती थी। जयचन्द की पूर्व सात रानियों में एक पटरानी थी जिसकी अनुमति से ही राजा जयचन्द रम्भा के पास बामोद-प्रमोद के लिए जा सकता था।

अज्ञात कवि विरचित एक प्राचीन प्रबंध में निम्नलिखित वर्णन प्राप्त होता है—  
 “कान्यकुब्जे देशे वाराणसी पुत्री नव योजन विस्तीर्णाद्वादसः योजनायाम् । तत्र श्री विजयचंद्रा-  
 गजो राष्ट्रकूटीयो जेत्रयन्यो राज्य करोति । तस्य कर्पूर देवी परमप्रीतिमात्रम् अयनगर  
 चास्तव्य (स्य) कत्यापि शालापतेः पुत्री सुहागदेवी पुरी प्रत्यासन्ने ग्राम परिणता अस्ति ।”  
 इसी प्रबंध में आगे लिखा है—“सप्तमे दिने राज पाट्यां नृपेण व्रजता गृह द्वारे वनदेवीव दृष्टा ।  
 सानुरागो धवल गृह गत्वाशालापति माह्वय पुत्रीय याच । तेनदत्त अर्थात् विजय चन्द का  
 पुत्र 'राष्ट्रकूट जयचन्द कान्यकुब्जदेश के वाराणसी का राजा था कर्पूरदेवी नाम की कोई  
 रानी उसकी परम प्रति पात्र थी तथा एक शालापति की दुहिता सुहागदेवी पर मुग्ध हो उससे  
 परिणय कर लिया था ।

‘प्रबंध चिन्तामणि’ में लिखा है कि—‘काशी का राजा जयचन्द जो एक साम्राज्य का  
 अधीश्वर ‘प्राज्य साम्राज्य लक्ष्मी पालनम्’ था पंगु कहलाता था । इसने एक शालापति की  
 पुत्री सुहवा से विवाह किया था ।” कविराज शेखर ने अपने ‘प्रबंधकोश’ में श्री हर्ष प्रबंध में  
 गोविन्दचन्द के पौत्र जयचन्द के विषय में उल्लेख किया है कि वह बनारस का आधिपति था  
 तथा उसने सुहवादेवी नामक किसी तरुण एवं सुन्दर विधवा से परिणय किया था जो कि  
 पहले पहल राजा कुमारपाल के अणदिल पट्टन के निवासी शालापति की पत्नी थी ।

तत्कालीन सामन्तयुग में बहुविवाह की सामान्य प्रथा प्रचलित थी । अतः यदि राजा  
 के यहाँ भी अनेक रानियाँ हों, तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है ।

‘रासो’ के मतानुसार राजा जयचन्द के एक और रानी थी जिसका नाम जुन्हाई था ।  
 रासोसार में लिखा है—‘राजा जयचंद के उस स्वर्ण रचित रत्न जटित सुविस्तीर्ण रनिवास  
 में काम की कला सदृश अनेक नव यौवनाएं थी, जो सब चित्रिनी तथा पद्मिनी जाति की  
 एक से एक सुन्दर एवं मनोहर थी परन्तु राजा का जुन्हाई पर विशेष प्रेम था ।”

ग्रन्थकार ने रानी जुन्हाई का वर्णन इस प्रकार प्रस्तुत किया है—“इस संसार का अंधकार

१. जिन विजयमुनि—पुरातन प्रबन्ध संग्रह, पृ० ८८-९०, सिन्धी ग्रन्थ माला-२, कलकत्ता-  
 १९३६ ।
२. मेरुगुं—प्रबन्ध चिन्तामणि, शांति निकेतन (१९३५) पृ० ११३-११४ ।
३. श्री हर्ष प्रबन्ध—प्रबन्ध कोष, शांति निकेतन (१९३५) पृ० ५४-५८ ।
४. नागरी प्रचारिणी सभा काशी, रासोसार, पृ० १८७ ।



विनिष्ट करने वाले श्री सूर्य भगवान की किरण से उत्पन्न एक कन्या कैलाश शिखर पर एक ठोके वृक्ष की डाल पर पड़े हुए झूले में झूल रही थी, जिसे देखकर पंगराज अपना मन यो घेठा तथा उस पर मोहित हो गया। राजा ने उसकी प्राप्ति हेतु एक पैर पर छड़े होकर तपस्या करना प्रारम्भ की। इस साधना से प्रसन्न होकर ऋषि वशिष्ठ ने सूर्य देव से प्रार्थना कर, वह कन्या राजा को दिला दी। वही कन्या इस समय रानी जुन्हाई के नाम से प्रसिद्ध है।<sup>१</sup>

ग्रन्थकार के मतानुसार रानी जुन्हाई ही राजा जयचन्द की पटरानी थी। रानी जुन्हाई के विषय में अत्यन्त विस्तार से लिखा जावेगा। यहाँ इतना विवरण ही पर्याप्त है।

राजा जयचन्द अपने युग का एक महान शासक था। उसके दरबार में बड़े-बड़े कलावंत रहा करते थे। उसकी नगरी कन्नौज भी इन्द्रपुरी के समान थी। ग्रन्थकार ने राजा जयचन्द की नगरी का वर्णन करते हुए लिखा है कि नित्य-प्रति प्रातः काल पंगराज के नगाड़े बजा करते थे जिससे ऐसा प्रतीत होता था मानो वादल गरज रहे हों।<sup>१</sup> मार्ग पर चारों ओर विस्तृत पाँच योजन तक राजा का उद्यान था, जिसमें नारंगियाँ, पुष्प तथा अनार विकसित हो रहे थे। लताएं झूम रही थी, जूही, जंमीरी, सेव आदि फलों से परिपूरित था।<sup>२</sup> नगर में प्रवेश करते ही छूत शालाएं मिली।<sup>३</sup> भिन्न-भिन्न व्यवसाय वाले नाना प्रकार के स्त्री-पुरुष मिलने लगे, स्थान-स्थान पर वीणा आदि वाद्य बज रहे थे। वैश्या नृत्य कर रही थी।<sup>४</sup> बाजार में रत्न, मोती, माणिक्य के हार, सोना, वस्त्र आदि नाना प्रकार की वस्तुएं विक रही रही थीं।<sup>५</sup> बजाज सुन्दर वस्त्र बेच रहे थे, जरी का काम हो रहा था। दसों दिशाओं से हाथी-घोड़े आ-जा रहे थे। सामने ही राजा जयचन्द के महल थे, जहाँ हाथी-घोड़े तथा भाँति-भाँति के पशु दृष्टि गोचर हो रहे थे, नगाड़े तथा अन्य विविध प्रकार के वाद्य निनादित हो रहे थे। तथा मनुष्यों की अच्छी खासी भीड़-भाड़ थी।<sup>६</sup> जयचन्द के अस्सी लाख की विशाल बाहिनी थी जो उसकी आज्ञा पलनायें सदैव तत्पर रहती थी।<sup>७</sup>

स्पष्ट है जिस राजा का नगर इतना सुन्दर होगा उसका दरबार भी सुंदर होना ही चाहिए। उसके यहाँ अवश्य ही नाना प्रकार के योद्धाओं से दरबार भरा रहता होगा। कवि

१. पृथ्वीराज रासो, ना० प्र० स० काशी, छं० ४०३, स० ६१।

२. यही, छं० ४०९-२२, स० ६१।

३. यही, छं० ४२४, स० ६१।

४. यही, छं० ४२५-३४, स० ६१।

५. यही, छं० ४३५-४५, स० ६१।

६. यही, छं० ४४९, स० ६१।

७. यही, छं० ४५२, स० ६१।

चन्द ने राजा जयचन्द गाहड़वाल की बैठक का वर्णन करते हुए उसके योद्धाओं का नाम तथा याम का विवरण इस प्रकार प्रस्तुत किया है ।<sup>१</sup>

१. रयसलराव	कमधुज	जयचन्द का चचेरा भाई ।
२. वीरचन्द	कमधुज	रयसल का सगा भाई ।
३. मानराय	यादव	—
४. गुजरान वीर	—	—
५. कास नरिंद	सूर्यवंशी	—
६. नृसिंहराय	बघेला	—
७. कंठियाराय	—	—
८. प्रताप सिंह	—	—
९. रामरेनराय	कठेर	करनाटक का सूवेदार ।
१०. सारंगराय	भट्टी	—
११. मुकुन्दराय	मोरी (प्रमार)	—
१२. वीरमराय	—	दूसरा नाम नरपाल वीर ।
१३. महादेव	—	तलवार के युद्ध में दक्ष ।
१४. हरसिंहराय	—	—
१५. पूरनराय	सोलकी	—
१६. गोइन्दराय	प्रमार	—
१७. प्रतापराय	हम्मीर	पहाड़ी युद्ध में निपुण ।
१८. सन्तुलाल	—	पटना का राजा ।
१९. साखुला राय	—	मल्लयुद्ध में अद्वितीय ।
२०. सरवन्तराय	—	—
२१. वीरभद्र	बघेला	—
२२. राजा कृष्णराय	—	—
२३. मुकुन्दराय	—	—
२४. जैसिंह सूर	—	बेड़ा (बाएं हाथ से हथियार चलाने वाला) ।
२५. रनवीर राय	राठौर	—
२६. चन्द्रसेन	प्रमार	—
२७. भीमदेव	—	साजानवाहू
२८. नरसिंह सूर	सोलंकी	—

२९.	रुद्रसिंह	कठेर	—
३०.	श्रीरामसेन	—	विजित राजाओं का नेता ।
३१.	साखुलादेव	—	—
३२.	राय रामचन्द्र राव	—	गनिग
३३.	हम्मीर सेन	—	—
३४.	सारंग सूर	जाट	समस्त चतुरंगनी सेना का सेनापति ।
३५.	जयसिंह	राठौर	—
३६.	भीमराय	प्रमार	—
३७.	अर्जुनराय	निम्न कुलोत्पन्न	—
३८.	असोकराय	—	—
३९.	वीरभद्र	चन्देल	—
४०.	सहदेव	—	—
४१.	केहरीब्रह्म	सोलंकी	—
४२.	हरिचन्द्र	चौहान	—
४३.	हरसिंह राय	—	पासवानों का प्रधान ।
४४.	निगुरतखाँ	मुसलमान	—
४५.	ममरेजखाँ	मुसलमान	—
४६.	मीर महवलखाँ	मुसलमान	—
४७.	आरास खाँ	मुसलमान	फारोजखाँ का भाई ।
४८.	कम्मोदखाँ	मुसलमान	—
४९. )	अल्लीखाँ	मुसलमान	दोनों भाई ।
५०. )			
५१.	महमूदखाँ	मुसलमान	—
५२.	अब्दुल्ला खाँ	मुसलमान	जयचन्द के चौरवरदार ।
५३.	मुलेमान खाँ	मुसलमान	
५४.	हरवीर राय	—	मंत्री के वाएं हाथ खड़ा होने वाला ।
५५.	मुकुंद	( सिवरा )	गायक
५६.	श्री कंठ	कवि	राजा के सिंहासन के सामने खड़े रहने वाले ।
५७.	कमल भट्ट	राजपुरोहित	

रासोकार ने एक स्थान पर जयचन्द की अस्सी लाख सेना का विवरण दिया है ।  
 राजा जयचन्द के अधिक सेना होने के कारण ही उसे पंगराजा की उपाधि दी गई है । रासो

में अनेक स्थानों पर 'पहुपंग' शब्द राजा जयचन्द के लिए प्रयुक्त हुआ है।<sup>१</sup> टांड ने अपने 'राजस्थान' में 'दुल पंगुल' नाम की उत्पत्ति इस प्रकार की है—“कन्नौज राज के किले की चहार दीवारी तीस मील से भी अधिक थी और राज्य की असंख्य सेना के कारण राजा का विशेषण दुल पंगुल हो गया। दुल पंगुल से तात्पर्य है कि राजा लंगड़ा है या सेना की अधिकता के कारण वह नहीं चल सकता। चन्द वरदायी के अनुसार अगली सेना युद्ध क्षेत्र में पहुंच जाती थी तब भी पिछली सेना को आगे बढ़ने का स्थान न मिलता था और वह खड़ी ही रह जाती थी।” नयचन्द सूरि की 'रम्भामंजरी' में भी जयचन्द के लिए 'पंगु' शब्द का प्रयोग हुआ है—“सैन्यातिथ्यात् पंगु विरुद्ध धारक।” प्रबंध चिन्तामणी के अनुसार भी राजा जयचन्द के एक विशाल वाहिनी होने का संकेत प्राप्त होता है। 'सूरज प्रकाश' नामक ग्रन्थ के अनुसार पंगराज की सेना में ८०,००० सुसज्जित सैनिक, ३०,००० जिरह-वस्त्र वाले घोड़े, ३,००,००० पैदल सैनिक, २,००,००० घनुर्धर तथा फरशाधरी सैनिक और सैनिकों सहित असंख्य हाथी थे।<sup>२</sup>

अतः स्पष्ट है कान्यकुब्जेश्वर राजा जयचन्द तत्कालीन राजाओं में अपार शक्तिशाली तथा वैभव सम्पन्न था।

राजा जयचन्द के प्रतिद्वन्दी—पृथ्वीराज रासो को आदि से अन्त तक अध्ययन करने पर राजा जयचन्द के तीन प्रमुख प्रतिद्वन्दी हमारे समक्ष आते हैं—

१—दिल्ली-अजमेर पति पृथ्वीराज चौहान।

२—रावल समरसिंह, तथा

३—गजनीपति शहाबुद्दीन गोरी।

(१) पृथ्वीराज चौहान—पृथ्वीराज रासो के अनुसार पृथ्वीराज चौहान पंग राज की कन्या का अपहरण कर्ता, सम्राट जयचन्द का प्रधान एवं प्रबल प्रतिद्वन्दी था। उत्तरी भारत के प्रायः समस्त राजाओं ने कन्नौजपति की आधीनता स्वीकार कर ली थी, किन्तु पराक्रमी

१. एक ताप पहुपंग को, अरु खनोक जु थान।

चामंडराय वचन सुनि, चढ़ि चढ़्यों चहुआन ॥ छं० १२, स० २७।

तब पहुपंग नरिद। कुसल जानी न गरिठो ॥ छं० ४, स० २६।

तब पहुपंग नरिद प्रति। दूत सु उत्तर जप्पु ॥ छं० ६, स० २६ आदि।

2. Annals and Antiquities of Rajasthan. Vol. II. Page 7.

३. रम्भामंजरी, सूत्रिका, पृ० ४ तथा प्रथम अंक, पृ० ६।

४. मुनिराज जिन विजय, प्रबंध चिन्तामणि छं०, २१०, पृ० ११३।

5. Annals and Antiquities of Rajasthan, Vol. II, Page 136.

पृथ्वीराज ने जयचन्द जैसे चक्रवर्ती सम्राट के भी छक्के छुटा दिए थे। पृथ्वीराज, जयचन्द की मौमी का लड़का था फिर भी द्वेष एवं वैमनस्यता के कारण दोनों ही एक दूसरे के घोर शत्रु थे।

रामो का नायक पृथ्वीराज चौहान (तृतीय) है, जो अपने युग के समस्त शासकों में पराक्रमी समझा जाता था। पृथ्वीराज तथा जयचन्द के सम्बन्ध आदि से ही कटुता पूर्ण हो गए थे। संभवतः कटुता का कारण नाना अनंगपाल का पक्षपातपूर्ण व्यवहार ही रहा हो। वैरभाव का यह बीज राजा अनंगपाल द्वारा बोया गया तथा पृथ्वीराज ने अपने कृत्यों द्वारा उसे सिंचित कर पल्लवित और पुष्पित किया। जिसकी विशाल छाया स्वरूपी वैमनस्यता की आग में उत्तरी भारत की ये दोनों प्रबल शक्तियाँ भस्मीभूत हो गईं तथा अन्त में बाह्य आक्रमणकारियों के हाथ में भारत चला गया। समय-समय पर रासोकार राजा जयचन्द तथा पृथ्वीराज की शत्रुता का संकेत देता चलता है। 'धनकथा' समय में गड़े धन को निकालने के समय मंत्री कैमास रावल समरसिंह को बुलाने की मन्त्रणा देता है। पुनः उसने पृथ्वीराज चौहान के प्रबल-शत्रुओं का अतक प्रदर्शित किया जो संभवतः ईर्ष्याविश इस शुभकार्य के विघ्न डालने का प्रयत्न करते।

कल्लवज राव जंचन्द देव, नर असी लप्प मेष्ठ तिन करत सेव ।

गज्जन नरेस साहाव साह, दस लप्प मेष्ठ सेवंत ताह ॥'

'शशिवृता' समय में यह वैमनस्य का बीज और भी दृढ़ हो जाता है। राजकुमारी शशिवृता अपने पिता यादव की इच्छा के विरुद्ध अपहरण हेतु संकेत स्थल निश्चित करती है। कवि चन्द ने उसी अवसर पर स्पष्ट रूप से लिखा है—

पुष्प वर अहृआन वर कमघज्ज विपन्नो ।

सवर जोर संग्राम, निवर अगम्यो न जाइय ॥'

पृथ्वीराज ने संकेत स्थल पर पहुंच कर राजकुमारी का अपहरण किया। इसी अवसर पर पंगराज की सेना से भी घोर युद्ध हुआ। परिस्थिति से पराजित हो पंगराज देवास से कन्नौज लौट तो अवश्य आया किन्तु उसके हृदय में वैमनस्य की ज्वाला और भी भभक उठी।

पृथ्वीराज तथा जयचन्द के बीच वैमनस्यता का भाव बढ़ता ही रहा। समय-समय पर दोनों एक दूसरे को कष्ट पहुंचाने का उपक्रम करते रहते थे। रेवातट समय में पृथ्वीराज ने सूझा हेतु प्रस्थान किया जिसमें अनेक उद्देश्यों के साथ एक उद्देश्य 'एक ताप पट्टपंग' की भी था।

१. पृथ्वीराज रामो, छं० १३, न० २४।

२. वही, छं० २४१, न० २५।

‘पीपा युद्ध’ के अन्तर्गत हम जयचन्द को पृथ्वीराज के विरुद्ध गजनीपति शाह गोरी की सहायता करते हुए पाते हैं। इधर पृथ्वीराज राजकुमारी हंसावती से विवाह हेतु उज्जैन की ओर प्रस्थान करते हैं उधर गोरी जयचन्द की सहायता लेकर बीच में ही मार्ग अवरोध कर युद्ध हेतु आ खड़ा होता है।

घल्यो राज सब सेन सजि दिसि उज्जैननिय रंग।

आइ साहि जगह जुरन लय सहायक पंग॥’

‘वरुण कथा’ में राजा सोमेश्वर पोडश दान देते हैं जिसकी सूचना पाकर कान्यकुब्जेश्वर कहता है—

मंत्रिन सरिस महीन्द्र कमधज्ज इन्द्र कुपियं कालं।

जम्बूद्वीप महीपन को मो सरिसं मडव सारह॥

छिति क्षत्री जे छत्रपति ते यो हुकुम हुजूर।

मिदिट सकं फुरमान को, मारि मिलाऊं धूर।’

क्रोधोन्मत्त हो राजा जयचन्द ने अपनी शक्ति का बखान किया तथा अजमेरपति सोमेश्वर के पोडशदान की ईर्ष्या से जलकर स्वयं ने राजसूय यज्ञ करने का विचार चित्त में दृढ़ किया तथा सभा मंडप से उठ खड़ा हुआ। पृथ्वीराज चौहान को भी यज्ञ हेतु आमंत्रित किया किन्तु उसे द्वारपाल का कार्य सौंपा गया, दूत द्वारा पृथ्वीराज की अस्वीकृति पाकर उसकी स्वर्ण प्रतिमा द्वारपाल के स्थान पर प्रतिष्ठित करवाई गई। स्वाभाविक था कि इस अपमान से पृथ्वीराज चौहान और भी अधिक क्रोधित हो उठता। अतः चौहान ने यज्ञ-विध्वंस करने का दृढ़ निश्चय कर कनौजपति राजा जयचन्द की सीमा का अतिक्रमण कर, उसके भाई बालुकाराय को सूर्य लोक भेजकर, यज्ञ विध्वंस कर दिया तथा स्वयं दिल्ली लौट आया।

अपनी अभिलाषा पर इस प्रकार कुठाराघात होते देखकर पंगराज आपे से बाहर हो गया। अपने समस्त प्रतिद्वन्दियों को समूल नष्ट करके पुनः यज्ञ करने की, उसने प्रतिज्ञा की। किन्तु पट्टराणी के समझाने पर तथा उपयुक्त समय पाकर उसने अपनी पुत्री संयोगिता के स्वयंवर का आयोजन किया। संयोगिता ने अन्य उपस्थित राजाओं की अवहेलना कर पृथ्वीराज की स्वर्ण प्रतिमा को ही वरमाला डाल कर अपना पति घोषित किया। कन्या के इस हृत्पथ से कुपित हो राजा जयचन्द ने उसे गगातट स्थित महलों में एकान्तवास का दण्ड दिया।

तब झुकि पंग नरिंद ने, तट गगा विष नेह।

कं कुड्ढवि जल भंजि परं, कं नैन निरर्ष देह। ४५।

१. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० १२८, स० ३१।

२. वही, छं० ६९-७०, स० ३४।

३. वही छं० ७१, स० ३४।

पैटस दान समान करि दोने दुजवर पंग ।

घन अनव चहुआन के रयि सुरीतट गंग ।<sup>१</sup> ५५ ।

राजमूय यज्ञ विध्वंस का प्रतिशोध लेने की कामना से पंगराज ने दिल्ली पर आक्रमण किया किन्तु पृथ्वीराज को दिल्ली में न पाकर पुनः लौट आया । पंगराज ने पुनः यज्ञ पूर्ण करने की अभिलाषा की । अतः उसने अपने मंत्री को दिल्ली भेजकर पृथ्वीराज से नाना अनंगपान के राज्य का आधा भाग पंचनद प्रदेश मांगा ।<sup>१</sup> पृथ्वीराज द्वारा राज्य न देने पर पंगराज ने दिल्ली पर आक्रमण कर दिया, जिसमें पंगराज पूर्णरूपेण परास्त हुआ ।

उस प्रकार की घटनाओं से दोनों का परस्पर वैमनस्य और भी दृढ़ होता गया । एक दिन पृथ्वीराज ने अपने बालसखा कवि चंद से कन्नौजपति का वैभव देखने की अभिलाषा प्रकट की तथा दूसरे उन्हें मयोगिता द्वारा स्वर्णमूर्ति को वरमाला पहनाने की सूचना भी प्राप्त हो चुकी थी । अतः पृथ्वीराज चौहान ने अपने समस्त सामंतों को साथ लेकर छद्म भेष बनाकर कवि चंद के साथ कन्नौज की ओर प्रस्थान किया । दरबार में पंगराज द्वारा पृथ्वीराज के विषय में पूछे जाने पर कवि चन्द ने छद्म वेश धारी पृथ्वीराज की ओर संकेत किया जिसमें समस्त दरबारी तथा पंगराज का संदेह पुष्ट हो गया । दोनों विपक्षी एक दूसरे की निरीक्षण की दृष्टि से देखने लगे ।

देपि थवाहत थिर नयन , करि कनवज्ज नरिंद ।

नयन नयन अंकुर परिय इक यह होई ममद । छं० ६५६ ।

दिष्टि नयनरा पंग , पंग चुआन महामर ॥

अंकुरि नयन विसाल , झाल झारंत रंच उर ॥

दूव कयार कंठोर , पलन आकज्ज वारत तमि ।

वर वायनी समग , मत मांतग रोस जमि ॥<sup>१</sup> छं० ६५७ ।

पंगराज को शंका अवश्य हुई किन्तु वह दृढ़ निश्चय नहीं कर पाया कि पृथ्वीराज खवास के छद्म वेष में आवेगा अतः अपनी शंका का मन ही मन समाधान करके कवि चन्द से पृथ्वीराज का अपने से न मिलने का कारण पूछा—

‘सोमेस पुत्रं तुम हित करि , क्यों मुसझहि नाही मिलत ॥’ छं० ६६१ ।

निर्ममक कवि ने उत्तर में इसके लिए जयचन्द को ही उत्तरदायी बताया । बात पर बात बढ़ती गई—

१. पृथ्वीराज रासो, ना० प्र० स० काशी, छं० ५४-५५, स० ५० ।

२. यही, छं० ८७ स० ५५ ।

३. यही, छं० ६५६-५७, स० ६१ ।

४. यही, छं० ६६१, स० ६१ ।

मंत मंतो लहु मंत कहि, नीते नीति बढ़त ।

जिम जिम संसर सो दुरै, तिम तिम मदन चढत । छं० ६६० ।

पंगराज को पृथ्वीराज की उपस्थिति पर सन्देह तो हो ही गया था, अतः उसने करनाटी वेश्या को दरबार में बुलाकर अपना सन्देह निवारण करना चाहा । करनाटी वेश्या ने पृथ्वीराज को देखते ही धूँघट निकाल लिया, किन्तु कवि चन्द का संकेत पाकर पुनः अवगुण्टन हटा लिया । वेश्या करनाटी के इस कृत्य से पंगराज की संदेह की जड़ और भी अधिक दृढ़ हो गई । नगर रक्षक रावन को भट्ट चन्द के सत्कार का भार सौंपा गया । मंत्री मुमन्त कवि की विदाई लेकर कवि के निवास स्थान पर गया । वहाँ से लौटने पर मंत्री ने भी कवि चन्द के पानघर पर सन्देह करते हुए पृथ्वीराज का होना, पंगराज से कहा । पंगराज का सन्देह और भी अधिक पुष्ट हो गया । इसी बीच गुप्तचरों ने आकर सूचना दी जिससे शंका ने प्रमाण का रूप धारण कर लिया । अपने प्रबल शत्रु पृथ्वीराज को अपने नगर में तथा इतने निकट पाकर पंगराज के आनन्द का परावार न रहा—

श्रवन सुनिग कमधज्ज, पंग फुल्लयो वरमांस ।

प्रात फुल्लि सतपत्र, सक्ष कामोद प्रकास ॥ छं० ६७८ ।

पंगराज कवि की विदाई के बहाने स्वयं चतुरांगिनी सेना लेकर उससे मिलने के लिए अग्रसर हुए ।

सतर्क पंगराज ने नगर को चारों ओर से घेरने की आज्ञा पहले ही दे दी थी । कवि चंद के छद्म वेशधारी पानघर पृथ्वीराज ने पूर्वं वर का स्मरण कर बायें हाथ से ताम्बूल दिया, मानों कोई वस्तु दान दे रहे हों । पंगराज ने भी इस प्रकार पान लेना स्वीकार नहीं किया—

करै न कर पृथ्वीराज नर, धरै न कर जैचन्द ।

उसय नयन अंकुरि परग, ज्यो जुगमत्त गयंद ॥ छं० ९१८ ।

पंगराज पृथ्वीराज के इस प्रकार के व्यवहार को देखकर व्यग्र हो उठा । परिस्थिति को देखकर चतुर कवि चंद ने पंगराज से पान ग्रहण करने का पुनः आग्रह किया । शिष्टाचार-वश पंगराज ने ताम्बूल ग्रहण कर लिया किन्तु कलह प्रिय पृथ्वीराज ने विपक्षी को एक बार पुनः हाथ दबाकर चुनौती दी—

‘पानि पान करिके दियो, कमधज्जहु पृथिराज ।

चल्यो रक्त कर पल्लवनि, ग्रह्यो कुल्लिंगन वाज ॥ छं० ९३२ ।

१. पृथ्वीराज रासो, छं० ६६०, स० ६१ ।

२. वही, छं० ८७५, स० ६१ ।

३. वही, छं० ६७८, स० ६१ ।

४. वही, छं० ९१८, स० ६१ ।



फर चंपे नृप तात फार, सारंग दिद् सुपंग ।

पानि प्रथोपति दिधियौ, श्रोत चत्पौ नप संग ॥ छं ९३४ ।

पंगराज ने इस प्रकार का व्यवहार देखकर तुरन्त ही पृथ्वीराज को पकड़ने की आज्ञा दे दी । रणभरी निनादित हो उठी । पंगराज के सैनिक पृथ्वीराज को पकड़ने का प्रयत्न करने लगे । उधर पृथ्वीराज के सामन्त भी अपने स्वामी के सम्मान की रक्षा हेतु अपने प्राणों को हथेली पर रखकर पंगराज की सेना से जा भिड़े । कहने की आवश्यकता नहीं इस युद्ध में पंगराज की घुरी तरह पराजय हुई । पृथ्वीराज पंगराज को परास्त कर तथा सयोगिता का अपहरण कर दिल्ली पहुँचने में सफल हुआ ।

इतिहासकार सयोगिता अपहरण की घटना के विषय में मौन हैं । किन्तु जगनिक कवि विरचिन 'आल्हा' इस युद्ध का इस प्रकार वर्णन करता है—'दोनों ओर के वीर बड़े उत्साह से युद्ध में सम्मिलित हुए । नृसिंह फूँके गये, तलवारें म्यान से निकल कर चका-चौंध करने लगीं । दोनों सेनाओं के बीच को घमासान युद्ध हुआ कि शत्रु तथा मित्र का विवेक जाता रहा । दिन भर मारकाट होती रही । योद्धाओं ने रक्त बहाने से हाथ तब तक न खींचा जब तक मिर पर तारागण न जगमगाने लगे । जयचन्द ने आज्ञा दी कि राजकुमारी की पालकी रणभूमि में लाकर रख दी जावे तथा घोषणा की कि जिसे विजय श्री प्राप्त हो वही डोला उठा ले जाय । उसका उद्देश्य यह था कि पृथ्वीराज स्वयं मैदान में आ जाये और मैं उसे मार डालूँ और चौहानों को ललकार कर कहा पालकी यहाँ रख दो तथा ठंडे-ठंडे गूह मांग ग्रहण करो । उधर राठौर भी चिल्लाए जिन योद्धाओं में पालकी दिल्ली ले जाने का गर्व हो जरा सम्मुख तो आवे । प्रत्येक वीर ने दो-दो तलवारें अपने हाथों में सम्भाल ली तथा वीर मृत्यु को एक मनोरंजक खेल समझकर युद्ध में जुट गए । चौहानों का पल्ला भारी था तथा पालकी पाँच कोस दिल्ली की ओर अग्रसर हो चुकी थी ।

कन्नोजियों ने भी पिट न छोड़ा । रात दिन बराबर लड़ते रहे । पालकी कभी दिल्ली की ओर अग्रसर होती तो कभी कन्नोज वाले अपनी ओर खींचते थे । किन्तु डोला दिल्ली की ओर ही क्रमशः अग्रसर होता गया । दोनों के घाट पर गंगा पार जाते समय एक बार फिर घमासान युद्ध हुआ । दोनों ओर के चुने हुए वीर आमने-सामने आकर अपनी-अपनी रणकुशलता का परिचय देने लगे । किन्तु बाजी चौहानों के हाथ ही रही तथा कन्नोज की सेना दिन प्रतिदिन घटती ही गई । दिल्ली के फाटक के सामने फिर अन्तिम युद्ध हुआ । उसमें राठौर सेना के सच्चे-सूने सैनिक भी काम आ गये । आनन्द एवं उत्साह में चंदवरदायी तथा पृथ्वीराज ने स्वयं डोला उठा लिया तथा अत्यन्त हर्षित हो नगर प्रवेश किया । कविचंद ने अग्रसर को संबोधित कर कहा 'यदि आपके सब सैनिक काम आ गए तो पृथ्वीराज की भी

प्रही दशा है अतः अब युद्ध व्यर्थ है। शांति से घर की ओर प्रस्थान करिये।” शोक और पश्चाताप में डूबा हुआ पंगराज वन्नोज लौट आया। घायल पड़े हुए वीरों की मृश्रूपा करने के उपरान्त दिल्ली भेज दिया। साथ ही अपने पुरोहित श्रीकंठ को अपार धन राशि दहेज स्वरूप देकर दिल्ली भेजा किन्तु फिर भी हार्दिक द्वेष समाप्त न हो सका। इसके अतिरिक्त डॉ० दशरथ शर्मा संयोगिता अपहरण की घटना को पूर्णतयः ऐतिहासिक मानते हुए लिखते हैं कि “पृथ्वीराज विजय में पृथ्वीराज के तिलोत्तमा के चित्र पर मुग्ध होने और तदनंतर उसके विरह से व्यथित होने की जो कथा है, वह किसी ऐसी राजकुमारी से होने वाले विवाह की भूमिका मात्र है, जिसको उसके लेखक ने तिलोत्तमा का अवतार बताया होगा, वह राजकुमारी गंगातटवर्ती किसी स्थान की थी यह उसके अंतिम प्राप्त सर्ग के ७०वें त्रुटिल श्लोक के ‘नाक नदी तट स्थितः’ से प्रकट है, इसलिए उसमें रासो की संयोगी अथवा सुर्जन चरित की कान्तिमती का चरित्र और पृथ्वीराज से उसके विवाह की कथा आई हो, तो आश्चर्य न होगा। भलतः प्राप्त साक्ष्यों से रासो की पृथ्वीराज और जयचन्द के संघर्ष की कथा का कोई विरोध नहीं दिखाई पड़ता है।”

चित्रांगी रावलसमरसिंह—मेवाड़ाधिपति चित्रांगी रावल समरसिंह दिल्ली-अजमेर के अंतिम शासक पृथ्वीराज चौहान के बहनोई थे। ग्रन्थकार ने रावल की पृथ्वीराज के घोर पक्षपाती के रूप में चित्रित किया है। कान्यकुब्जेश्वर राजा जयचन्द के प्रमुख प्रतिद्वन्द्वियों में से रावल भी एक थे—पंगराज ने अपने राजसूय यज्ञ को सफलता पूर्वक समाप्त करने के उद्देश्य से रावल समरसिंह को अपनी ओर मिलाने की चेष्टा की। पंगराज यह भली-भाँति जानते थे कि दिल्लीपति चौहान तथा चित्तौड़पति रावल से सम्मिलित रूप से सामना करना नितान्त असम्भव है। अतः पंगराज ने अपने मंत्री सुमत को भेजकर मंत्री का संदेश भेजा, साथ ही यह भी लालच दिया कि वह और रावल मिलकर चौहान को परास्त करेंगे तथा इस विजय के उपलक्ष में पजाव का आधा भूभाग प्राप्त होगा। मंत्री सुमत ने चित्तौड़ पहुँच कर रावल के समक्ष पंगराज का सन्देश निवेदन कर दिया। मंत्री की बात का समर्थन तो गया एक तरफ, उल्टे रावल ने यज्ञ को अनुचित बताते हुए उसे बहुत बुरी तरह से धिक्कारा—

नाम सुमंत्री तिन घरयो , रे अमंत परधान ।

हीनत भये भयो न जग , जग्य बेर वलिदान ॥ छं० ३६ ।

मिलिस समर उच्चरि चौहान , जग्य करन पहुँपंग निधान ।

जेता द्वापर करयो जुदेव , फलिपुग पंग जग्य करिसेव ॥ छं० ३७ ।

१ आल्हा खण्ड, पृ० ३९-५६ ।

२. डॉ० माताप्रसाद गुप्त, पृथ्वीराज रासो की ऐतिहासिकता और रचना त्रिपि राष्ट्रीय मैथिलीशरण गुप्त अभिनन्दन ग्रन्थ, पृ० ९५७. २ अक्टूबर १९५९ ।

३. पृथ्वीराज रासो, ना० प्र० स० काशी, छं० ३६-३७, स० ५५ ।

रावल समरसिंह ने और भी नाना प्रकार की बातें करके पंगराज के प्रस्ताव को ठुंकरा दिया। कन्नोज पहुंच कर मंत्री मुर्मंत ने सब बातें पंगराज को विस्तार से बता दीं। रावल समरसिंह, पृथ्वीराज का समर्थक होने के कारण एक तो पंगराज की आंखों में यो ही खटकता था, दूसरे अपनी योजना को असफल होते देखकर वह क्रोधोन्मत्त हो उठा। अतः अपने दल-बल सहित पंगराज ने चित्तौड़ की ओर प्रस्थान कर दिया—

चित्त चिति चित चित्रंग देस , चढ़ि चत्थी स गुरि पंगुर नरेश ।

दिति संकि दिसा दस कंपि यान , कलमलिय सेस गय संकियान ॥ छं० २ ।'

पंगराज के आक्रमण की सूचना पाकर रावल समरसिंह भी उसका सामना करने आ उपस्थित हुआ ।'

युद्ध में रावल के सैनिकों ने अपार पराक्रम प्रदर्शन करके पंगराज की सेना के छवके टूटा दिए। पंगराज को अपने प्रबल शत्रु का सामना करने के लिए गज को छोड़कर अश्व-रोहण करना पड़ा—

दल अगो, अगो अनी , हल मलियो दल पंग ।

यो जम्भी सुम्भै सुमुअ , तिहुपुर मंडन . जंग ॥ छं० ६८ ।'

कहने की आवश्यकता नहीं कि कान्यकुब्जेश्वर महाराज जयचन्द की इस युद्ध में भी पराजय हुई। पराजित होकर पंगराज कन्नोज लौट गया किन्तु इस पराजय के परिणाम स्वरूप पृथ्वीराज चौहान में वैमनस्यता की नींव और भी दृढ़ हो गई।

महाबुद्दीन गोरी—दिल्ली-अजमेर के शासक पृथ्वीराज चौहान तथा चित्तौड़ाधिपति रावल समरसिंह के अतिरिक्त पंगराज का एक और प्रबल शत्रु गोरी भी था। इतिहासकार गजनेश्वर ने मिलकर पृथ्वीराज को पराजित करने का आरोप भी लगाते हैं। 'रासो' में भी उक्त मत का समर्थन प्राप्त होता है। 'पीपा युद्ध' में राजकुमारी हंसावती के विवाह हेतु जाने हुए पृथ्वीराज का मार्ग गजनीपति गोरी ने अवरुद्ध कर लिया था, उस समय पंगराज भी भी विशाल सेना का सहयोग देने का उत्तम कवि ने किया है—

चत्थी राज सब सेन सजि विसि उज्जैनिय रग ।

आई साहि जगह जूरन लय सहायक पंग ॥ छं० १२८ ।'

१. पृथ्वीराज रासो, भा० प्रा० स० काशी, छं० २, स० ५६ ।

२. यही, छं० ५, स० ५६ ।

३. यही, छं० ६८, स० ६५ ।

४. यही, छं० १२८, स० ३१ ।

पंगराज का गोरी की सहायता देने का मुख्य उद्देश्य यह जान पड़ता है कि वह अपने प्रबल शत्रु का विनाश देखना चाहता था । अतः इसी भावना से प्रेरित होकर वह बार-बार गोरी की सहायता करता था । रासोकार ने पंगराज तथा शाह गोरी की मैत्री का भी संकेत किया है—“जिन गज्जने सूर साहाब साही, निते मोक्ल्यो सेध निसुरति माही ॥” यदि इसे मित्रता स्वीकार कर भी लिया जावे तो वस्तुतः यह एकांगी ही रही होगी ।

‘रासो’ में यत्र-तत्र पंगराज को पृथ्वीराज चौहान के विरुद्ध गोरी को उकसाते हुए प्रदर्शित किया गया है । ग्रन्थकार ने बालुकाराय सोलंकी तथा गोरी द्वारा दिल्ली पर सम्मिलित आक्रमण का उत्तरदायी जयचन्द को ही ठहराया—

बाबुवका हिन्दू कमर्थ, और सुगोरी साहि ।

समभेद जयचन्द किय, पति दिल्ली समवाहि ॥’ छं० १ ।

‘सामंत पंग युद्ध समय, में भी कान्यकुब्जेश्वर जयचन्द ने पृथ्वीराज को बंदी बनाने के उपक्रम में गजनीपति गोरी को भी प्रोत्साहित किया था—

सुविधि कोन सज्जिय समन, गहन याइ चहुआन ।

तो सुरपुर मज नही, इह आधार विरान ॥’ छं० १०९ ।

उपर्युक्त छंदों को पढ़कर विद्वानों-को जयचन्द पर आक्षेप करने का अवसर मिल जाता है, किन्तु वास्तविकता कुछ और थी । वस्तुतः पंगराज अपने प्रबल शत्रु पृथ्वीराज को परास्त देखना चाहता था यही कारण था कि कभी-कभी गोरी तथा जयचंद का साथ हो जाता था । वस्तुतः एक दूसरे को मित्र मानना भ्रम ही होगा ।

अंतिम युद्ध में दिल्लीपति पृथ्वीराज को परास्त कर लेने के उपरान्त गोरी ने कन्नौज की ओर दृष्टिपात किया । कन्नौजपति पंगराज को पूर्णतया परास्त कर काशी तक के विशाल भू-भाग पर अपना आधिपत्य स्थापित किया । जयचंद को अन्तिम संग्राम अपने प्रबल प्रतिद्वन्दी गोरी से करना पड़ा था । कन्नौज पर गोरी के आक्रमण का कारण प्रस्तुत करते हुए श्री सत्यकेतु ने स्पष्ट किया है—“शाहाबुद्दीन गोरी केवल गजनी के राज्य सिंहासन से ही संतुष्ट नहीं हुआ, उसने पहले उत्तरी-पश्चिमी भारत से तुर्कों के शासन का अंत कर दिया, फिर पंजाब से आगे बढ़ कर दिल्ली और कन्नौज के चौहान तथा गाहड़वाल राजाओं के साथ युद्ध किया । अनेक युद्धों में परास्त होकर भी अन्ततः वह दिल्ली तथा शाकम्भरी के चौहान राजा पृथ्वीराज (तृतीय) को परास्त करने में समर्थ हुआ ( ११९२ ई० ) और दो ही साल

१. पृथ्वीराज रासो, छं० १, स० ४१ ।

२. वही, छं० १०९, स० ५५ ।

बाद गान्धर्वान राजा जयचन्द्र को हराकर कन्नौज के राज्य पर उसने अपना अधिकार कर लिया ।”

अतः उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि गोरी ने कन्नौज पर आक्रमण अपने साम्राज्य को विजाल बनाने के लिए ही किया था । यह गोरी का सौभाग्य ही था कि उस समय भारत में आपसी फूट के कारण उसे सम्मिलित शक्तियों का सामना न करना पड़ा तथा उसके विजाल साम्राज्य बनाने का स्वप्न पूर्ण हुआ । गोरी के आक्रमण से कन्नौज आक्रान्त हो उठा । गजनीपति शाह गोरी तथा कन्नौज की विजाल सेना के मध्य हुए इस घोर प्रलयकारी संग्राम में पंगराज युद्ध करना हुआ वीरगति को प्राप्त हुआ—

इन्द्र पद्मधर लिंग , रयन सध्या असुरावन ।  
दिसि कनवज्ज अखंत , सुग्या जैचन्द पराइन ॥  
सयन सनम्मुय आय , जुद्ध भारत भर मच्यो ।  
जित्यो तिनय साहय परत घर सिर वर नच्यो ॥  
नर्मम न पान भावी विगति , असिल लथ जिसे अमुर ।  
जैचन्द कमध सग्रह सहस, हनिय लिंगि गय धारधुर ॥ छं० २१९ ।”

इस प्रकार पंगराज अपने प्रवन एवं क्रूर प्रतिद्वन्दी शाह गोरी से पराजित होकर परामाव को प्राप्त हुआ ।

गोरी के कन्नौज आक्रमण के विषय में समस्त इतिहासकार एक मत हैं । श्री के० एम० मुंशी ने भी इस युद्ध का वर्णन करते हुए गोरी की जीत का समर्थन किया है ।” स्टेनली लेनपूल

१. सत्यकेतु विद्यालंकार—भा० स० इतिहास, पृ० ४१६ ।
२. पृथ्वीराज रासो, छं० २१५-१७, स० ६८ ।
३. वही, छं० २१९, स० ६८ ।
४. Within a year of the fate-ful battle of Taraori, Ghuri with lightning speed marched against Jay Chandra who fell fighting on the field of Chandwar. Ghuri proceeded with total destructiveness. Men were massacred. Towns were rooted. Smiling Madhyadesa was a charred ruin. The conquerors then proceeded to the Capital of Jay Chandra. India looked on terror-struck. Varanasi, the intellectual and spiritual centre of India, from where for centuries had flown inspiration and knowledge, fell in to the hands of the foreign invader. A thousand temples were laid low. Mosques rose in their places. Jayachandra's son Harichandra, a boy of eighteen retired to a distant place and kept up his independence. K. M. Muushi, The Glory that was Gurjaradesa (The Imperial Gurjaras) Pt. III, page 206, Bhartaya Vydy Bhawan Bombay. 1st edition, 1944.

ने गोरी के विशाल साम्राज्य स्थापना की प्रशंसा बड़े मुक्तकंठ से की है—“महान सुल्तान की मृत्यु के उपरान्त गोरवंश का साम्राज्य पहाड़ी सामन्तत्व में परिवर्तित हो गया परन्तु जो राज्य भारत में उसने जीता था उसे इस्लाम ने खोया नहीं। दूसरे राजाओं ने उसे संगठित किया और गोरी के समय से लेकर सन् १८५७ की भारतीय क्रान्ति तक सदैव मुसलमान राजा दिल्ली के सिंहासन पर आरुढ़ रहा।”

अवसान—शाह गोरी का आक्रमण सुनकर कान्यकुब्जेश्वर भी अपना अगणित सैन्यबल लेकर, जिसमें लगभग सौ हाथी तथा एक करोड़ से भी अधिक संख्या में मनुष्य रहे होंगे विदेशी आक्रमण का सामना करने के लिए आगे बढ़ा। पृथ्वीराज रासो के मतानुसार यह युद्ध सात दिनों तक चलता रहा। जिसमें पंगराज की पराजय हुई तथा क्षोभ के कारण उसने जल समाधि ले ली। ‘रासो’ के उक्त कथन का ‘रासमाला’ ने भी समर्थन किया है। मुसलमान इतिहासकार फरिश्ता के मतानुसार युद्ध के अन्तर्गत ‘घनारस का राय’ जो कि एक हाथी पर अत्यन्त ऊँचे हौदे पर बैठा था, कुतुबुद्दीन के हाथों छूटे हुए एक बाण से संघातक आघात पाकर घरांशायी हुआ। उसका मुण्ड भाले की नोक पर उठा लिया गया तथा घड़ उपेक्षा से धूल में फेंक दिया गया।

उपर्युक्त मतों में ‘रासो’ का विवरण ही अधिक उचित प्रतीत होता है। पंगराज एक स्वाभिमानी व्यक्ति था। संभव है, अपने आत्म सम्मान की रक्षा करता हुआ, युद्ध भूमि में अपार पराक्रम प्रदर्शित करने के उपरान्त गंगा की पावन लहरों में उसने समाधि ले ली हो। वास्तव में रासो का वर्णन पंगराज का स्वाभिमान देखते हुए उचित ही है।

जयसिंह—‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार चौहान वंश परम्परा में ३९वीं पीढ़ी में राजा आनन्द राज चौहान के उपरान्त उनका एक मात्र उत्तराधिकारी जयसिंह गद्दी पर बैठा। इन्होंने १०८ वर्ष तक अजमेर पर आनन्द पूर्वक राज्य किया तथा उसके उपरान्त अपने पुत्र आनन्ददेव को राज्यभार सौंप दिया। रा० ए० सो० लंदन की रासो की प्रति, धारणोज की प्रति तथा बीकानेर की एक लक्ष अक्षर वाली प्रति, उपर्युक्त कथन का समर्थन करती है। साहित्य-संस्थान उदयपुर से प्रकाशित ‘पृथ्वीराज रासो’ जयसिंह के विषय में मोन है।

१. श्री नेत्र पाण्डे, भारत का बृहत् इतिहास—भाग २, पृ० ७२।

२. इलियट, हिस्ट्री आव इंडिया, जि० २, पृ० २५।

३. वही, पृ० २५१, ब्रिज फिरिस्ता, जि० १, पृ० १७८।

४. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, जि० ६।

५. फेरिस्त-रासमाला, भाग १, पृ० २२३।

६. ब्रिज-फिरिस्ता, पृ० १९२।

७. पृथ्वीराज रासो, ना० प्र० स० काशी, छं० ६०८-६११, स० १।

जिनानेव एवं संस्कृत ग्रन्थ जिनमें चौहानों की वंशावली दी हुई है, इनके विषय में सर्वथा मौन है।<sup>१</sup>

पं० सदाशिव दीक्षित प्रबन्धकोष, हम्मीर महाकाव्य, तथा मुर्जन चरित के जगदेव को ही जयसिंह मानते हैं। उन्होंने लिखा है कि 'इनका नाम रासो में 'जयसिंह' और प्रबन्धकोष, हम्मीर महाकाव्य तथा मुर्जन चरित में 'जगदेव' उल्लिखित है। शिलालेख तथा पृथ्वीराज विजय में इसका संकेत नहीं मिलता।<sup>२</sup> पता नहीं पड़ित जी ने ऐसी विलम्ब कल्पना कैसे कर ली। कल्पना पर आधारित होने के कारण पड़ित जी का मत ग्राह्य नहीं हो सकता।

धर्मसार अथवा धर्मसार—'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार चौहान वंशावली की २७वीं पीढ़ी में राजा लोहर्धार अथवा लोहसार चौहान के उपरान्त धर्मसार राज्य गद्दी पर बैठे कवि ने इनका विस्तृत विवरण प्रस्तुत नहीं किया है। रा० ए० सो० लंदन की रासो की प्रति उपर्युक्त कथन का समर्थन करती है।<sup>३</sup> किन्तु धारणोज की प्रति, दीकानेर की एक लक्ष बक्षर वाली प्रति तथा साहित्य संस्थान उदयपुर से प्रकाशित रासो इनके विषय में पूर्णतः मौन है। शिलालेख एवं संस्कृत के ग्रन्थ जिनमें चौहानों की वंशावली का उल्लेख हुआ है, उनमें भी धर्मसार का नाम नहीं मिलता है।<sup>४</sup>

पंडित सदाशिव दीक्षित जी धर्मसार के विषय में लिखते हैं—इसका नाम शिलालेख में गुट्ट, प्रबन्धकोष में गुट्टराज तथा मुर्जन चरित में गुट्टदेव मिलता है। परन्तु इसका स्मरण पृथ्वीराजविजय में, हम्मीर महाकाव्य में तथा रासो में क्रमशः गोविंदराज, गंगदेव, तथा धर्मसार, इन भिन्न-भिन्न नामों से किया गया है।<sup>५</sup> पंडित जी का मत पुष्ट प्रमाणों के अभाव में नवीया अग्राह्य है।

धर्माधिराज—'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार चौहान वंश परम्परा में ३५ वीं पीढ़ी में राजा प्रयवराइ अथवा प्रयवराम के उपरान्त धर्माधिराज उनका उत्तराधिकारी हुआ, जिसने छहों प्रकार के योगों को भली भाँति भोगा।<sup>६</sup> रासोकार ने इनका विशेष विवरण प्रस्तुत नहीं किया है। रा० ए० सो० लंदन की रासो की प्रति उपर्युक्त कथन का समर्थन करती है।<sup>७</sup>

१. देखिए, प्रस्तुत शोध प्रबन्ध, परिशिष्ट १।
२. पं० सदाशिव दीक्षित, रासो समीक्षा, पृ० १२३।
३. पृथ्वीराज रासो, ना० प्र० स० काशी, छं० २८९, स० १।
४. रासो की हस्त लिखित एवं अप्रकाशित प्रति, पृ० १०।
५. देखिए, प्रस्तुत शोध प्रबन्ध, परिशिष्ट १।
६. पं० सदाशिव दीक्षित, रासो समीक्षा, पृ० ११७-११८।
७. पृथ्वीराज रासो ना० प्र० स० काशी, छं० २९२, स० १।
८. रासो की हस्तलिखित एवं अप्रकाशित प्रति, पृ० १०।

किन्तु धारणोज की प्रति तथा साहित्य संस्थान उदयपुर से प्रकाशित रासो इनके विषय में सर्वथा मौन हैं। वीकानेर की एक लक्ष अक्षर वाली प्रति में इनका नाम मिलता है, किन्तु यह सूचना प्राप्त नहीं होती कि यह प्रथमराई के उत्तराधिकारी थे। मानिक्यराव चौहान के वंश में ही कवि ने धर्माधिराज का नाम दे दिया है।<sup>१</sup>

डॉ० दशरथ शर्मा धर्माधिराज को उपाधिमात्र मानते हैं तथा उनका कथन है कि संभवतः यह चामुण्डराय हो। उन्होंने लिखा है—‘माणिक्यराय का नाम प्रायः सभी ही दयातों और कुछ पुराने शिलालेखों में प्राप्त है उसका वंशधर धर्माधिराज संभवतः राजा चामुण्डराज हो। उसने नरवरा में भगवान विष्णु का मंदिर बनवाया था (पृथ्वीराजविजय महाकाव्य, सर्ग ५, श्लोक ६८)। अतः अत्यंत धर्मिष्ठ होने के कारण ही उसे धर्माधिराज पदवी मिली होगी।’<sup>२</sup> डॉ० शर्मा जी का मत भी संभावना पर अधिक आधारित है। अतः निश्चित रूप से मानने में संकोच ही रह जाता है।

नागहस्त—‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार चौहान वंश वृक्ष की २३वीं पीढ़ी में राजा संप्रतिराय के उपरान्त उनका पुत्र राज्यगद्दी का उत्तराधिकारी हुआ।<sup>३</sup> ग्रन्थकार ने वंशवृक्ष के अन्तर्गत ही इनका उल्लेख किया है, वैसे समस्त ग्रन्थ इनके विषय में मौन है। रा० ए० सो० लंदन की रासो की प्रति उपर्युक्त कथन का समर्थन करती है।<sup>४</sup> धारणोज की प्रति, वीकानेर की एक लक्ष अक्षर वाली प्रति तथा साहित्य संस्थान उदयपुर से प्रकाशित रासो इनके विषय में मौन हैं। शिलालेख एवं प्राचीन संस्कृत ग्रन्थ भी इनके अस्तित्व में सदह करते हैं।<sup>५</sup>

पंडित सदाशिव दीक्षित इनका नाम नागराज मानते हैं तथा प्रशस्ति आदि के सिहराज नामक राजा में आरोपित करते हैं—‘इसे प्रशस्ति आदि में सिहराव कहा गया है, परन्तु रासो में नागराज। रासो के आधार पर इसका नाम ‘नागहस्त’ लिखना अर्थानभिज्ञता है क्योंकि रासो में लिखा है—

‘सुख नागहस्थ सम नागराज।’ मुर्जनचरित में इसका अनुल्लेख आश्चर्यजनक है।<sup>६</sup> पंडित जी का नागहस्थ के स्थान पर नागराज नाम तो किसी प्रकार ग्राह्य हो भी सकता है किन्तु

१. पृथ्वीराज रासो की कथाओं का ऐतिहासिक आधार, राजस्थानी भाग ३, अंक ३, जनवरी १९४०, पृ० २।
२. दही पृ० ४।
३. पृथ्वीराज रासो, भा० प्र० स० काशी, छं० २८९, स० १।
४. ‘रासो’ की हस्तलिखित एवं अप्रकाशित प्रति, पृ० १०।
५. देखिए, प्रस्तुत शोध प्रबन्ध. परिशिष्ट।
६. पं० सदाशिव दीक्षित, रासो समीक्षा, पृ० ११६।



मिहिराज में आरंभ करने वाली बात समझ में नहीं आती । यह कैसे कहा जा सकता है कि यह दोनों व्यक्ति एक ही हैं अथवा एक ही व्यक्ति के दोनों नाम हैं । वास्तव में पर्याप्त सामग्री न होने के कारण ही विद्वानों ने ऐसी अटकलें लगायी है ।

प्रतापसिंह—'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार चौहान वंश की १९वीं पीढ़ी में राजा चन्द्रगुप्त चौहान के उपरान्त उनका पुत्र प्रतापसिंह उनका उत्तराधिकारी हुआ ।<sup>१</sup> रा० ए० सो० नंदन की प्रति उपर्युक्त कथन का समर्थन करती है ।<sup>२</sup> धारणोज तथा साहित्य संस्थान उदयपुर से प्रकाशित 'पृथ्वीराज रासो' इनके विषय में मौन है । शिलालेख एवं संस्कृत ग्रन्थ भी इनका कुछ विवरण प्रस्तुत नहीं करते हैं ।

पंडित सदाशिव दीक्षित चन्द्रगुप्त एवं प्रताप सिंह को एक ही व्यक्ति मानते हुए लिखते हैं कि—'इनके नाम प्रगति और पृथ्वीराजविजय में चन्द्रराज, शिलालेख में शशिनृप, सुर्जन चरित में चन्द और रासो में प्रतापसिंह बतलाये गए हैं, परन्तु रासोकार को इसका नाम चन्द्र भी परिज्ञात है । वह कहता है कि—

सुअ चन्द्रगुप्त सम चन्द रूप ।

परतापसिंह आरन्नरूप ॥

यह बात समझ में नहीं आती कि श्री ओझा जी ने 'चन्द्रगुप्त' इस एक और नाम की कल्पना किस आधार पर की है । प्रयधकोप और हम्मीर महाकाव्य में इस चन्द्रराज का अनुल्लेख कुछ कम महत्वशाली नहीं है ।<sup>३</sup> सामग्री अभाव के कारण पंडित जी का मत ग्राह्य नहीं है । संभावनाओं पर निर्णय देना भूल होगी ।

प्रयवराई—'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार चौहान वंश परम्परा में ३४ वीं पीढ़ी में राजा बालनराय चौहान के उपरान्त उनका एक मात्र उत्तराधिकारी प्रयवराय हुआ, जिसने अपनी राज्य की सीमा की वृद्धि की ।<sup>४</sup> कवि ने इनका विशेष परिचय नहीं दिया है । रा० ए० सो० नंदन की रासो की प्रति से भी उपर्युक्त कथन की पुष्टि होती है किन्तु इस प्रति में प्रयवराई के स्थान पर 'प्रमराई' लिखा है । प्रयवराई का प्रमराई होना लिपिकारों की असावधानी का ही परिचायक है ।<sup>५</sup> किन्तु रासो की अन्य समस्त प्रतियों में इनके विषय में एक शब्द भी प्राप्त नहीं होता । शिलालेख एवं संस्कृत ग्रन्थ जिनमें चौहानों की वंशावली का उल्लेख हुआ

१. पृथ्वीराज रासो, ना० प्र० स० काशी, छ० २८७, सं० १ ।

२. रासो की हस्तलिखित एवं अप्रकाशित प्रति, पृ० १० ।

३. पं० सदाशिव दीक्षित, रासो समीक्षा, पृ० ११५ ।

४. पृथ्वीराज रासो, ना० प्र० स० काशी, छ० २९१, सं० १ ।

५. रासो की हस्तलिखित एवं अप्रकाशित प्रति, पृ० १० ।

है, वह सब प्रथवराई के विषय में मौन है ।<sup>१</sup> प्रथवराई के सम्बन्ध में उपर्युक्त समस्त ग्रन्थों का मौन, इनके अस्तित्व में संदेह पैदा कर देता है । अन्य प्रमाणों के अभाव में इनके विषय में कुछ भी निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता है ।

पृथ्वीराज चौहान—दिल्ली अजमेर का अंतिम हिन्दू शासक महाराज पृथ्वीराज चौहान वंशी थे । 'पृथ्वीराज रासो' को आद्योपान्त पढ़ने से स्पष्ट हो जाता है कि पृथ्वीराज का जन्म चौहान वंशी ढुंढा दानव की ज्योति से हुआ था । ग्रन्थकार लिखता है ।

‘ढुंढ रूप दानव उत्तंग, वीलि आना नरिंद दिय ।  
अस्ति सकल सामंत तेज प्रथिराज चीर विय ।  
वल, विक्रम अति सूर जीह कवि चन्द प्रमान ।  
एक ठाम उप्प । एक थल मरन निधान ।  
संजाल काल दिल्ली रही, चौसठ्ठा टोडर समनि ।  
दैवत्त पद् देवान गति, दैव गति जोगा सधनि ।’ छ० ५५७ ।

उपर्युक्त छन्द से स्पष्ट है कि महाराज पृथ्वीराज का जन्म ढुंढा दानव की ज्योति से हुआ था । ग्रन्थकार कवि चन्द वरदायी तथा पृथ्वीराज को समवयस्क होने का प्रमाण निम्नलिखित छंद से स्पष्ट होता है—

दानव कुल छत्रीय नाम ढुंढा रणस वर ।  
तिहि सु जोत प्रथिराज सूर सामंत अस्ति भर ।  
जीह जोति कविचन्द रूप सजोगि भोगि भ्रम ।  
इक्क दीह ऊपन्न इक्क दीहै समाय क्रम ।  
जथ्थ कथ्थ होई निर्भये, जोग भोग राजन लहिय ।  
वज्रग बाहु अरि दलमलन, तासु किति चंदह कहिय ।’ छ० ६९२ ।

दानव कुल में ढुंढा नाम का एक श्रेष्ठ राक्षस हुआ, उसकी ज्योति से महाराज पृथ्वीराज ने जन्म लिया, हड्डियों से शूर सामंत उत्पन्न हुए, जिह्वा की ज्योति से कवि चन्द का जन्म हुआ, रूप से संयोगिता हुई, यह सब एक ही दिन उत्पन्न हुए तथा एक ही दिन विनिष्ट हो गए, इसी प्रकार से उनकी कथा है । राजा को योग तथा भोग दोनों ही प्राप्त हुए, मनु दल का दलन करने वाले ब्रजवाहु चौहान नरेश की कीर्ति कवि चन्द ने वर्णन की । अन्य कई स्थानों पर भी कवि ने अपना जन्म तथा पृथ्वीराज का जन्म एक साथ ही होना लिखा है तथा साथ ही दोनों ने शरीर भी त्याग किया ।

१. देखिए, प्रस्तुत शोध प्रबन्ध, परिशिष्ट ।

२. पृथ्वीराज रासो नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छ० ५५७, स० ६७ ।

३. वही छ० ६९२, स० १ ।

ज्यों नयी जनम कवि चन्द की, नयी जनम सामन्त सब ।

इक भान जनम मरतह सु इक, चलहि कित ससि लगि रव ।' छं० ७६० ।

अर्थात् जिस प्रकार कवि चन्द तथा अन्य सामान्तों का जन्म हुआ तथा एक ही स्थान पर जन्म और एक ही स्थान पर मरण का वर्णन करूँगा । जब तक सूर्य-चन्द विद्यमान है तब तक उनकी कीर्ति घनी रहेगी । अंतिम युद्ध में कवि चन्द को वीरभद्र द्वारा पृथ्वीराज की पराजय तथा मुलतान गोरी द्वारा उनके बन्दी बनाए जाने की सूचना मिली जिससे वह अत्यन्त दुःखी हुआ । अपनी अपार वेदना को प्रकट करते हुए कवि ने लिखा है—हे श्रेष्ठ वीर, माया-मोह के अपार उदधि में डूबा हुआ, एक साधारण मनुष्य, मैं तत्त्व क्या समझूँ । मैं तथा राजा पृथ्वीराज एक ही साथ उत्पन्न हुए थे, एक स्थान पर निवास किया और सदैव साथ ही साथ रहे हैं, हम दोनों स्नेह पाण में तो बंधे ही थे, किन्तु राजा पृथ्वीराज का मुझ पर अपार प्रेम था । समस्त सामन्त भी स्नेह बंधन में बंधे थे, बालस्नेह ने हृदय में घर कर लिया है, हे वीरभद्र ! संसार में स्नेह ही आनन्द का देने वाला है, फिर हृदय से इस किस प्रकार विनग किया जावे—

कहै तास कवि चन्द अहो वीराधि दोर सुनि ।

हम मनुष्य मय मोह उदधि बुड्डै सुतत तुनि ।

हमहि राज इक वास सय्य उतपन्न संग सदि ।

नेह बंध बंधियँ करिय अति प्रीति राज रिदि ।

सामन्त सकल अति प्रेम तर, बाल नेह उर धुर कियो ।

बलिनद्र नेह संसार सुप, किम सुनेह छडै जियो ।' छं० १७०२ ।

एक स्थान पर रासोकार ने पृथ्वीराज के जन्म सम्बत् के सम्बन्ध में इस प्रकार लिखा है—

एकादस सं पच दह, विक्रम साक आनन्द ।

तिहि रिपु जय पुर, हरन की भय प्रियिराज नरिद ।' छं० ६९४ ।

उपर्युक्त छन्द से अनुसार महाराज पृथ्वीराज का जन्म अनन्द विक्रम सम्बत् १११५ में हुआ ( १० मोहनलाल विष्णुलाल पांड्या के अनुसार १११५+९१=१२०६ विक्रम संवत् मिला हुआ ) । किन्तु महामहोपाध्याय, गोरीनंकर हीराचन्द ओझा ने तो आनन्द सम्बत् को एक 'भद्रायन सम्बत्' का नाम दिया है । सम्बत्तों के विषय में एक स्थान पर लिखा है—'रासो में दिए हुए सभी सम्बत् अशुद्ध है । कर्नेल टाड ने रासों के आधार पर चौहानों का इतिहास

१. पृथ्वीराज रासो, नगरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ७६०, सं० १ ।

२. वही, १७०२, सं० ६६ ।

३. वही, छं० ६९४, सं० १ ।

लिखते समय सम्बतों की जाँच कर उन्हें अशुद्ध बताया और लिखा कि आश्वयंजनक भूल के कारण सब चौहान जातियाँ अपने इतिहासों में १०० वर्ष पहले के सम्बत् लिखती है। रासों को प्राचीन सिद्ध करने की खींचतान के प० मोहनलाल विष्णुलाल पांड्या ने टॉड का बताया हुआ १०० वर्ष का अन्तर देख कर एक नए 'भटायत' सम्बत् की कल्पना कर वि० सं० १९४४ में 'रासों की प्रथम संरक्षा' नामक 'पुस्तिका लिखी, परन्तु इस कल्पना से भी रासों के सम्बतों की अशुद्धि दूर न हुई। इससे पृथ्वीराज के जन्म संवत् १११५ में ४३ साल जोड़कर उसकी मृत्यु ११५८ भटायत सम्बत अर्थात् वि० सं० १२५८ में माननी पड़नी थी, परन्तु वि० सं० १२४९ में अन्य ऐतिहासिक प्रमाणों से उसकी मृत्यु सिद्ध थी। इस वास्ते इन ९ वर्षों की कमी पूरी करने के लिए उन्होंने पृथ्वीराज के जन्म सम्बत् सम्बन्धी दोहे में 'अनन्द' शब्द को देखकर आनन्द सवन की कल्पना की है और उक्त शब्द का अर्थ 'अनन्द' अर्थात् सौ रहित किया। फिर इसे सौ रहित सौ अर्थात् ९१ वर्ष का अन्तर बताकर उन्होंने उक्त नवीन सवन की कल्पना की और कहा कि पृथ्वीराज रासों में दिए हुए सब सम्बतों में ९१ जोड़ देने से वे शुद्ध विक्रम सम्बत हो जाते हैं।" पृथ्वीराज का जन्म सम्बत् बड़ा विवादग्रस्त विषय है। बाह्यसाक्षों के आधार पर इस विषय में निराशा ही हाथ लगती है। वि० सं० १२२७ विजयोलियाँ के शिलालेख, १२वीं शताब्दी का 'पृथ्वीराज-विजय महाकाव्य' १४वीं शताब्दी का 'प्रबन्धकोष', १५ वीं शताब्दी का हम्मीर महाकाव्य तथा १६ वीं शताब्दी का मुर्जनचरित भी इस विषय में मौन हैं। 'पृथ्वीराज विजय' महाकाव्य में कवि जयानक ने पृथ्वीराज का जन्म ज्येष्ठ मास द्वादशी को होने का उल्लेख किया है, सम्बत् का उल्लेख वहाँ भी नहीं है।

'बलभद्र विलास' नामक ग्रन्थ के अनुसार पृथ्वीराज का जन्म सम्बत ११३२ माघ शुक्ल त्रयोदशी, शुक्रवार की दोपहर को दिन के समय पुष्य नक्षत्र अभिजित मुहूर्त में, सब लोगों के

१. ओक्षा, कोशोत्सव स्मारक संग्रह-पृथ्वीराज रासों का निर्माण काल।

२. ज्येष्ठत्वं चरितार्थतामश्र नयद्रानान्तरापेक्षया।

ज्येष्ठस्य प्रथमपरंतपत्तया शेषमस्य मीमांसा स्थितोम्।

द्वादश्यास्तिथि मुख्यतामुपदिशन्मानोः प्रतापोन्नतिम्।

तन्वनगोत्रगुरोर्निजेन नृपतेर्जने सुतो जन्मना ॥ सर्ग ७ पृ० २४९।

३. अथ स माघ मासे तु त्रयोदश्यां सिते भ्रगौ।

पुष्ये द्वित्रिंशच्चन्द्रेऽन्दे मध्यन्हेऽभिजितक्षणे ॥ १ ॥

मुदिते लोक सन्ताने तदा पुत्रमजीजनत।

ये वदन्ति नराः सर्वे धार्तराष्ट्रावतारकम् ॥ २ ॥

आजानुवाहुः शशिपूर्णभास्यः पद्मायताक्षी मदनेक रूपः।

धीरप्रहृता क्षितिभारहर्ता वंशावतसो नरदेहतजः ॥ ३ ॥ बलन्द विलास।

प्रसन्न मान में नमना के हुआ, जिसको सब मनुष्य दुर्योधन का अवतार कहते हैं। वह बालक चम्पू भूजा वाला, चन्द्रमा के समान मुख कान्ति वाला, कमल सदृश नेत्रों वाला, कामदेव के समान रस वाला, बोरहन्ता भूमि के भार को हटाने वाला, चौहान वंश में भूषण नरदेही हुआ।

यदि वि० सं० ११३२ को पृथ्वीराज का जन्म सम्वत् मान लिया जावे तो उसकी सम्पूर्ण आयु ११७ वर्ष की ठहरती है, क्योंकि उसकी मृत्यु वि० सं० १२४९-५७ ( ई० सं० ११९२) वर्ष विदित है। अतः 'बलभद्र विलास' के सम्वत् को भी प्रमाणिक नहीं मान सकते।

'रासो' में दिए हुए पृथ्वीराज चौहान के जन्म सम्वत् को अप्रामाणिक मानते हुए डॉ० माताप्रसाद गुप्त लिखते हैं कि—'पृथ्वीराज के जीवन काल के जो अन्य अभिलेख मिले हैं, वे भी सं० १२३६ तथा सं० १२४५ के बीच के हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि पृथ्वीराज के प्रौढ़ जीवन में सत्रधिन समस्त तिथियाँ विक्रमीय तेरहवीं शती की है, किन्तु ऊपर हमने देखा है कि रासो में दो हुई समस्त तिथियाँ विक्रमीय बारहवीं शती की है। इसलिए यह प्रकट है कि रासो की तिथियाँ नितान्त कल्पित हैं। रासो की तिथियों को शुद्ध प्रमाणित करने के लिए विक्रमीय सम्वत् में ९१ वर्ष पिछड़े हुए अनन्द नामक सम्वत् की कल्पना की गई है, किन्तु कल्पना में भी अन्तर का समाधान नहीं होता।'

उपर्युक्त विवेचन से पृथ्वीराज के जन्म सम्वत् पर प्रकाश नहीं पड़ता वरन् विषय और भी उलझ जाता है। किन्तु विवश होकर यहाँ इतने से ही सन्तोष करना पड़ता है कि 'रासो' के अनुसार कवि चन्द तथा पृथ्वीराज का जन्म साथ ही साथ हुआ था। प्रमाणों के अभाव में जन्म सम्वत् पर निर्णय देना असंभव है। अब भी इस विषय पर पर्याप्त अनुसंधान की आवश्यकता है।

जन्म सम्वत् विवादास्पत होने पर भी एक स्थान पर कविराव मोहनसिंह ने 'रासो' के सम्वत् को ही प्रमाणिक मानते हुए लिखा है—'पृथ्वीराज के जन्म सम्वत् पर अन्य लेखक केवल अनुमान ही लगाते रहे हैं। उसके जन्म सम्वत् का उल्लेख केवल पृथ्वीराज रासो में ही सं० सं० ११५५ ( वि० सं० १२०५-६ ) हुआ है, जिसकी पुष्टि 'पृथ्वीराजविजय' और हर्षोदय महाकाव्य के लेख में ही हो जाती है। 'पृथ्वीराज विजय' में लिखा है कि पृथ्वीराज को दुर्वासा को मुनकर सब राजकन्याएँ अनुराग प्रकट करने लगीं और पूर्व जन्म में वियोग करने के कारण घबराई हुई सीता ने अपने समान गुण वाली अनेक स्त्रियों के बहाने अनेक सब धारण करके पृथ्वीराज का अनिगन कर सन्तोष पाया ( पृथ्वीराज को वर्ण करके सन्तुष्ट हुई )। इसके बाद लिखता है कि 'नृपपश्चात् गजनी के स्वामी गौरी का आधिपत्य खोजने,

से भारतीय राज मंडली ही को चन्द्रमंडल मान इसकी शोभा को विनष्ट करने के हेतु वह राहु बनना चाहा, उसने पृथ्वीराज के पास दूत भेजा—दूत की बात सुनकर पृथ्वीराज ने भृकुटि चढ़ाई—तब मंत्री ( कैमास ) ने कहा—अभी क्रोध करने का अवसर नहीं है। 'तिलोत्तमा' के पीछे सुन्द-उपसुन्द नष्ट हुए वैसे ही शत्रु ( गौरी और गुजरात ) स्वतः ( एक दूसरे से लड़कर ) नष्ट हो जायेंगे। मंत्री ऐसा कह ही रहा था, इतने में गुर्जर मंडल से एक आदमी आया उसने निवेदन किया कि गुर्जरों ने गोरियों का पराभाव ( पराजय ) कर दिया है। 'इस घटना को संस्कृत लेखक वि० सं० १२३२ और मुसलमान लेखक १२३५ में हुई मानते हैं। तथा स्थगिय गौरीशंकर ओझा ने मूलराज के शासन का अंत और भीम ( द्वितीय ) के शासन का प्रारंभ ( वि० सं० १२३५ ) के निकट माना है। अतः इस युद्ध से पूर्व ही पृथ्वीराज युवा हो चुका और कितनी ही राजकन्याओं से विवाह कर चुका था। उसका छोटा भाई हरिराज भी इन घटना से पूर्व ही 'पृथ्वीराज विजय' के लेखानुसार कवच धारण करने ( युद्ध में जाने ) योग्य ( युवा ) हो पाया था।

'हम्मीर महाकाव्य' में लिखा है 'जब पृथ्वीराज सब शस्त्र-शास्त्र विद्या में कुशल हो गया, तब सोमेश्वर उसे राज्य सौंप स्वयं योगाभ्यास में लग गया। पृथ्वीराज न्याय पूर्वक प्रजा पालन करता और शत्रु को भयभीत रखता था। उसी समय शहाबुद्दीन ( गौरी ) इस पृथ्वी ( भारत ) को अधीन करने का परिश्रम करने लगा, उसने कई क्षत्रियों का नाश करके मुलतान में अपनी राजधानी स्थापित की। तब पश्चिम प्रान्त के राजाओं ने आकर अपने अगुए गोविन्दराज के पुत्र चन्द्रराज के द्वारा पृथ्वीराज से निवेदन किया। तिस पर पृथ्वीराज ने शहाबुद्दीन पर चढ़ाई करके उसे बन्दी बनाया, जिससे स्पष्ट हो जाता है कि सोमेश्वर की जीविनावस्था में ( वि० १२३२-३६ से पूर्व ) ही पृथ्वीराज सर्व शस्त्र-शास्त्र विद्या में पारंगत और राज्य कार्य में कुशल हो गया था। उसके पिता ने उसे अपनी उपस्थिति में ही राजा बना दिया और आप ( शास्त्र नियमानुसार वानप्रस्थावस्था ५० वर्ष से आरम्भ होती है, उसको प्राप्त कर ) योगाभ्यास में लग गया। उससे बाद मुलतान पर शहाबुद्दीन ने राज्य स्थापित ( वि० सं० १२३२ में ) किया, तब उधर के राजाओं ने पृथ्वीराज से पुकार की और पृथ्वीराज ने चढ़ाई कर शहाबुद्दीन को पकड़ा। अतः वि० सं० १२३२ से पूर्व ही पृथ्वीराज शस्त्र-शास्त्र विद्या एवं नीति कुशल और शत्रु को दवाने योग्य ( तरुण ) अवस्था प्राप्त कर चुका था।

महोबा के राजा परमर्द्धी ( परिमाल ) पर भी पृथ्वीराज ने वि० सं० १२३९ से पूर्व ही विजय प्राप्त की थी, जिसका लेख मदनपुर नामक ग्राम के एक मंदिर के स्तम्भ पर वि० सं० १२३९ में लगाया गया।

यदि पृथ्वीराज का जन्म आक्षेपकर्तियों के अनुसार वि० सं० १२२२ के आस-पास माना जाय तो वि० सं० १२३२ के निकट उसकी आयु लगभग १० वर्ष की दहली है। जबकि इस समय तक उसके कई विवाह होना, शहाबुद्दीन को कैद करना, सोमेश्वर का

मोनाम्बाम के लिए प्रस्थान करना, एवं परमर्ही पर पृथ्वीराज का विजय पाना आदि घटनाएं घट चुकी थीं। ऐसी स्थिति में एक दस वर्षीय बालक के लिए उपर्युक्त कामों को कर लेना हास्यास्पद सा लगता है। अतः रामो के उल्लिखित अनन्द सम्मत १११५ ( वि० सं० १२०५-६ ) ही उनका जन्मकाल बिना किसी हिचकिचाहट के स्वीकार कर लिया जाय तो अनुपपन्न न होगा ।”

कवि राव मोहनसिंह के कथन में सत्यता का पर्याप्त अंश होते हुए भी निश्चित रूप से पृथ्वीराज का जन्म सन् ११५५ मान लेना उचित नहीं है।

माता-पिता—नम्पूर्ण ‘पृथ्वीराज रासो’ पृथ्वीराज के चरित्र से परिपूर्ण है, जैसा कि ग्रन्थ के नाम से ही स्पष्ट है। रासोकार के मतानुसार पृथ्वीराज की माता का नाम कमला, जो दिल्लीवाँ अनंगपाल की पुत्री थी, तथा पिता का नाम सोमेश्वर था।

अनंगपाल पुत्री उनय , इक दन्नी विजपाल ।

इक दन्नी सोमेश को , बीज बवन कलिकाल ॥ छं० ६८१ ।

एक नाम सुर सुन्दरी अनिवर कमला नाम ।

दरसन सुर नर दुल्लही , मानो सुकलिका काम ॥ छं० ६८२ ।

सोमेशुर तोमर धरणि , अनगपाल पुत्रीय ।

तिहि गर्भह पृथिराजु धरि , दानव कुल क्षत्रिय । छं० ६८५ ।

अर्थात् सोमेश्वर की रानी तवरानी अनंगपाल की पुत्री के अपने गर्भ से उस कुल ( नाट्टवान वंश में ) उत्पन्न दानव ( दुष्ट ) को पृथ्वीराज के रूप में धारण किया। अतः स्पष्ट है कि पृथ्वीराज की माता का नाम कमला तथा पिता का नाम सोमेश्वर था। ‘रासो’ के प्रायः सभी संस्करण उक्त मत का समर्थन करते हैं।

बाल्यकाल—बालक पृथ्वीराज का जन्म हुआ। राज महल में अपार हर्ष फैल गया। राजा सोमेश्वर पुत्र रत्न प्राप्त कर आत्म विभोर हो उठे। सोमेश्वर द्वारा योग्य तथा अनुभवी ज्योतिषियों को बुलाकर पृथ्वीराज के भविष्य के विषय में पूछने पर, ज्योतिषियों ने बताया कि—‘इस तबजात श्रेष्ठ राजकुमार की जन्म पत्रिका में जन्म लग्न फलों के अनुसार यह ४३ वर्ष का होने तक दृष्टप्रस्थ ( दिल्ली ) तथा पंच सरिताओं युक्त पंजाब की पृथ्वी को भोगेगा। हे सोमेश्वर ! आपकी ज्योति को धारण किए हुए यह श्रेष्ठ संभरी दिल्ली भोक्ता, गजनेश्वर की बंजन में ले-लेकर मुक्त करेगा तथा इस तरह अपने जन्म को सायंक करेगा।’ बालक

१. कविराव मोहनसिंह, पृथ्वीराज रासो, प्रथम नाग, सन्पादकीय—पृ० ९-१० प्रकाशक-साहित्य सम्भान, राजस्थान विश्वविद्यापीठ, उदयपुर, प्रथम संस्करण, संवत् २०११।

२. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी मन्त्रा काशी, छं० ६८१-८५, सं० १।

३. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान, उदयपुर, आदि कथा, छं० ५८, सं० १।

पृथ्वीराज का भविष्य सुन, राजा सोमेश्वर को हर्ष भी हुआ और विषाद भी। हर्ष इस कारण कि पृथ्वीराज विशाल भू-भाग का स्वामी होगा तथा विषाद इस कारण कि उसके कारण उनके ( सोमेश्वर ) समुराल वालों का अनिष्ट होगा। अन्त में ज्योतिषी ने भविष्यवाणी की कि मेरी बात पर विश्वास करो बालक पृथ्वीराज का उत्पन्न होना वास्तव में सब प्रकार से श्रेष्ठ है।<sup>१</sup>

बालक पृथ्वीराज का लालन-पालन महलों में सुख पूर्वक होने लगा। किसी प्रकार की चिन्ता एवं अभाव न होने के कारण बालक दिन दूना और रात चौगुना बढ़ने लगा। कवि चन्द्रवरदायी ने एक छन्द में बालक का रूप वर्णन तथा उसके शारीरिक विकास को देखकर इस प्रकार लिखा है—

“अन्य बालक जितने एक वर्ष में बढ़ते हैं उतना ही पृथ्वीराज एक मास में बढ़ने लगे। जब वह एक वर्ष, एक मास, एक पक्ष, एक दिन, एक घड़ी तथा एक पल के हुए तो शुभ मुहूर्त में बाहर लाए गए। उनके गले में मणियों की माला पड़ी हुई थी, जिसमें सिंह के नाखून शोभा पा रहे थे।<sup>२</sup> बालक पृथ्वीराज अपने परिवार को आनन्द देने वाले तथा शत्रुओं को त्रास देने वाले थे। पृथ्वीराज दत्तीस लक्षणों तथा बहत्तर कलाओं से युक्त थे। पृथ्वीराज अपने हाथ में गुलेल लेकर क्रीड़ा करते तो ऐसा प्रतीत होता, मानो साक्षात् कामदेव ही अवतरित हुआ हो, अन्तर केवल इतना था कि उनके हाथों में पुष्पवाण के स्थान पर गुलेल थी।

शिक्षा—बालक पृथ्वीराज अपनी वात्स्यावस्था में ही गुरु राम पुरोहित के पास विद्याध्ययन के लिए भेजा गया बालक अपनी प्रखर बुद्धि के कारण शीघ्र ही चौदह विद्याओं में निपुण हो गया तथा पट्टी पर सुन्दर लिपि लिखना भी सीख लिया। अल्पकाल में ही बालक पृथ्वीराज ७२ कलाओं का ज्ञाता हो गया तथा ८४ कलाओं ( विज्ञानों ) में भी विशेष योग्यता प्राप्त कर ली। कवि ने इनकी बहुज्ञता पर इस प्रकार प्रकाश डाला है— बालक पृथ्वीराज शीघ्र ही समस्त विद्याओं में पारंगत हो गए। विद्या, वंशविचार, सत्य, विनय, पवित्रता, साम्यभाव, सम्मान, श्रेष्ठ स्थान, सुख का भाव, विजय, सौजन्य, सौभाग्य, पूर्णरूप, लावण्य प्रेमी, चित्रकला, सदाचार, सगीत और मिलन, इन्हीं सब श्रेष्ठ लक्षणों से उसने अपनी कलाओं का विस्तार किया।<sup>३</sup> बालक पृथ्वीराज में गंभीर गुणों का अभाव न था। वीर पृथ्वीराज गो तथा ब्राह्मण की रक्षा करने वाला और नाना प्रकार के दान देने वाला था। इतना ही नहीं सत्ताईस प्रकार के शास्त्रों के पठन में व शब्दादि के उच्चारण

१. पृथ्वीराज रासो, छं० ५३, स० १।

२. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, आदि कथा; छं० ५६ स० १।

३. वही, छं० ६०-६३, स० १।



में भी वह निपुण था ।<sup>१</sup> ग्रन्थकार ने एक प्रस्थान पर सूचित किया है कि पृथ्वीराज चौहान को सम्भूत, प्राकृत, अपभ्रंश, पिशाचिका, मागधी और सूरसैनी आदि छः तत्कालीन भाषाओं का पूर्ण ज्ञान था—

संस्कृत, प्राकृतं चैव , अपभ्रंश पिशाचिका ।

मागधी सूरसैनी च, षट् भाषाश्चैव ज्ञायते । ६५ ।<sup>२</sup>

इतना ही नहीं, वह विनयी गुरुजनों का सम्मान करने वाला, सर्वज्ञ और सबका पालन करता था । उसके शरीर पर श्रेष्ठ ३२ लक्षण शोभा पाते थे । पृथ्वीराज पठन-पाठन में ही निपुण न था अपितु वह सब कलाओं का मरमज अस्त्र-शस्त्र चलाने तथा शत्रुओं का नाश करने में भी उतना ही निपुण था, जितना अन्य कलाओं में—पृथ्वीराज शत्रुरूपी वृक्षों को काटने के लिए कुठार तथा अपने कुल रूपी कमल को विकसित करने के लिए प्रखर किरणों वाला भास्कर के समान था । वह षष्ठ दर्शनों का प्रेमी, सेवा करने वाला तथा कामनियों के लिए साक्षात् काम मूर्ति तथा ब्राह्मणों का पालन करने वाला था ।<sup>३</sup>

संक्षेप में पृथ्वीराज चौहान सर्व कला निपुण था, उसकी योग्यता देखकर तत्कालीन राजाओं ने उसकी आधीनता स्वीकार कर ली थी । वह पृथ्वीपतियों का स्वामी था, उसे छत्तीस कुत्त के क्षत्रियों ने अपना सिरमौर मान लिया था । सम्पूर्ण रूप से बत्तीस लक्षण उसमें विद्यमान थे ।

प्रिथ्विराज पति प्रिथ्विपति , सिर मनि कुली छत्तीस ।

नय सिध पर मित लस तजै , ते गुन बरनि बत्तीस ॥ ६९ ।<sup>४</sup>

उपर्युक्त विवेचन की पुष्टि इतने से ही हो जाती है कि उसके सहायक एक तो छह सामन्त थे—

तिहि सहाइ मूर ति सुनट , सत सामन्त छ सूर ।

तिहि मु किति प्रगटह करण , कह्यो चन्द कवि सूर ॥ ७० ।<sup>५</sup>

कवि की उपर्युक्त वर्णन देगकर तथा पृथ्वीराज की प्रतिभा एवं शासन व्यवस्था देखते

१. पृथ्वीराज रामो. साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० ६४, स० १ ।

२. वही, छं० ६५ स० १ ।

३. वही, छं० ६६-६७ स० १ ।

४. वही, छं० ६९, स० १ ।

५. वही, छं० ७०, स० १ ।

हुए यह मानने के लिए विवश होना पड़ता है कि महाराज पृथ्वीराज अवश्य ही विद्या प्रेमी तथा अनेक कलाओं का ज्ञाता था ।

पृथ्वीराज के विवाह—‘पृथ्वीराज रासो’ विवाह सम्यो ६५ में पृथ्वीराज के चौदह विवाह होने की सूचना प्राप्त होती है—

प्रथम परनि परिहारि । राइ नाहर की जाइय ।  
जा पाछं इच्छनीय । सलख की सुता वताइय ।  
जा पाछं दाहिमी । राय डाहर की कन्या ॥  
राय कुंअरि अति रीत । सुता हंमीर सु मन्या ।  
राम साह की नंदिनी । बड़गुज्जरि बानी वरनि ।  
ता पाछं पद्मावती । जावनी जोरी परनि । १ ॥  
रायधन की कुंअरि । दुति जमुगीरी सुकहियं ।  
कछवाही पज्जूनि । भ्रात बलिभद्र सुलहियं ।  
जा पछं पुंढीरि । चन्द नंदनी सु गायव ॥  
ससि वरना सुन्दरी । अवर हंसावती पामव ।  
देवासी सोलंकनी । सारंग की पुत्री प्रगट ॥  
पंगानी संजोगता । इतें राज महिला सुपट । २ ॥

कवि ने पृथ्वीराज रासो के अगामी छन्दों में पृथ्वीराज के विवाह, उनकी किस अवस्था में हुए थे, इस पर प्रकाश डाला है—ग्यारह वर्ष की आयु में महाराज पृथ्वीराज ने नाहर राय प्रतिहार को युद्ध में यमपुर ( स्वर्ग ) पहुँचा कर उसकी कन्या ले ‘पृहकर’ ( पुष्कर ) में विवाह किया, बारह वर्ष की आयु में आवू दुर्ग को घराशायी करने वाले भीमदेव चालुक्य को परास्त करके राजा सलख की दुहिता तथा आवू राज्य की राजकुमारी इच्छिनी से विवाह किया, तेरहवें वर्ष में सामन्त चामण्डराय ने अपनी बहन का परिणय महाराज पृथ्वीराज के साथ स्वयं ही बड़े उत्साह के साथ कर दिया, चौदहवें वर्ष में हाहलीराय हम्मीर ने अपनी कन्या का तिलक भेजकर उसके साथ व्याह दी तथा अपने को बड़भागी समझा । पंद्रहवें वर्ष की आयु में पृथ्वीराज ने अत्यन्त गंभीर गड़गूजरी के साथ परिणय किया तथा इसी वर्ष अत्यन्त हित मानते हुए उन्होंने रामसिंह की पुत्री से भी विवाह कर लिया, सोलह वर्ष की अवस्था में पूर्व दिशा के समुद्र शिखरगढ़ के शासक राजा यादव की आत्मजा पद्मावती ने परिणय किया । सत्रह वर्ष की आयु में गिरदेव पर गर्जन करके रामधन की पुत्री का अपहरण कर गन्धर्व विवाह किया, अठारहवें वर्ष में वीरभद्र कछवाह की बहन पज्जूनी का पाणिग्रहण किया, उन्नीस वर्ष की आयु में चन्दपुंढीर की आत्मजा चन्दवदनी पुंढीरनी से विवाह किया, बीस वर्ष की आयु में ( देवगिरी की ) शशिवृता को अपहरण कर ले आए, इक्कीसवें वर्ष

में नंभर के राजा ने हंसावती से परिणय किया, बाइसवें वर्ष पृथ्वीराज ने वीर योद्धा सारंग की पुत्री का पाणिग्रहण किया तथा छत्तीस वर्ष एवं दो मास की आयु में वे अपने चौसठ वीर सामन्तों की बलि देकर पचास हजार शत्रु सेना को मृत्यु के घाट उतार कर पंग (जयचंद) की पुत्री राठौरनी को ले आए ।

छत्तीस वरस पटमास लीय । पंगानि सुता ल्याये सुसोय ।

रठौरि ल्याय चौसठि मराय । पंचास लाख अरि दल खपाय । १२ ।

पृथ्वीराज रासो के समय ३२ तथा ३३ में पृथ्वीराज का उज्जैन के राजा भीमप्रमार की पुत्री इन्द्रावती से विवाह का उल्लेख बड़े विस्तृत रूप में मिलता है, किन्तु विवाह सम्यो ६५ में उपयुक्त विवाह का उल्लेख तक नहीं किया गया है ।

‘पृथ्वीराज रासो’ में पृथ्वीराज के कुल १५ विवाहों का उल्लेख मिलता है । रासोकार ने सब विवाहों का पृथक् रूप से एक-एक सर्ग में वर्णन नहीं किया है, अनेक विवाहों का तो केवल उल्लेखमात्र, ‘विवाह सम्यो ६५’ में कर दिया गया है, जिससे उन विवाहों के प्रामाणिक होने में कुछ-कुछ सन्देह सा होने लगता है, किन्तु यह कहना कि पृथ्वीराज के अनेक विवाह नहीं हुए होंगे, भी उचित प्रतीत नहीं होता है । पृथ्वीराज के युग में बहु-विवाह प्रथा थी, बड़े-बड़े सामन्तों के घरों में अनेकानेक रानियाँ हुआ करती थीं । ऐसी स्थिति में यदि पृथ्वीराज चौहान (तृतीय) के महल में पन्द्रह रानियाँ रही हों तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है । डा० विपिनबिहारी त्रिवेदी भी उपयुक्त विषय पर प्रकाश डालते हुए लिखते हैं—“राज पुरुषों के बहु-विवाहों के पीछे जहां कुमारी के प्रति आकर्षण और शौर्य प्रदर्शन का एक निमित्त आदि रहे होंगे वहाँ येनकेन प्रकारण विवाह सम्बन्ध से अन्य शासकों की मैत्री का चिर बन्धन और उस पर आधारित सहायता प्राप्ति का अभीष्ट भी प्रेरक रहना सम्भव है । बहु-विवाह वाले उस युग में अपूर्व शूरमा पृथ्वीराज के अनेक विवाह न हुए हों यह किंचित आश्चर्यजनक है ।”

अभी तक ऐसा कोई भी मिलालेख प्रकाश में नहीं आया, जिसके आधार पर पृथ्वीराज के विवाहों की उचित जाँच-पड़ताल की जा सके । अनेकानेक विरोधी प्रमाण मिलने के कारण इतिहासकारों को रासो वर्णित पृथ्वीराज के विवाहों में से एक भी सत्य एवं प्रामाणिक नहीं प्रतीत होता है । विवाहों की ऐतिहासिकता पर अन्यत्र विचार किया गया है ।

१. पृथ्वीराज रासो, ना० प्र० स० काशी, छं० ३-११ स० ६५ ।

२. यही, छं० १२, स० ६५ ।

३. डा० विपिनबिहारी त्रिवेदी, रेवातट समय, पृ० २१६-१७, हिन्दी विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ सन् १९५३ ।

## विवाह-सारणी

क्रम	रानियों का नाम	पिताओं के नाम	स्थानों के नाम	पृथ्वीराज की आयु	आनन्द संवत् स्वयं प्रस्तुए क्रिए हुए	रासों के अन्य संस्करणों में स्थिति
१-	इच्छिनी	नाहराय पट्टिहार	पुष्कर	११	११२६	मध्यम तथा बृहद संस्करण ।
२-	दाहिमी	सलप	आवू	१२	११२७	"
३-	—	चामडराय (भाई)	आवू	१३	११२८	वृहद संस्करण ।
४-	बडगुजरी	हाडुनीराय	—	१४	११२९	"
५-	—	—	—	१५	११३०	"
६-	पद्मावती	रामसिंह	—	१५	११३०	"
७-	—	यादवराज	समुद्र मिश्ररगढ	१६	११३१	"
८-	—	रामधन	गिरदेव	१७	११३२	"
९-	पञ्जनी	बलभद्र कछवाहा (भाई)	—	१८	११३३	"
१०-	पुंडीरनी	चंदपुडीर	—	१९	११३४	"
११-	मगिवृता	—	देवगिरी	२०	११३५	मध्यम तथा बृहद संस्करण ।
१२-	इन्द्रावती	भीम प्रभार	उज्जैन	रासों वर्णन के अनुसार इन्द्रा- वती का विवाह हंसावती से पूर्व होता है । अतः पृथ्वी- राज की आयु २०-२१ के बीच रही होगी		
१३-	हंसावती	—	संभर (रणयंभीर)	२१	११३५-३६	वृहद संस्करण ।
१४-	देवासी, देयात की या देव सद्गुण	गारंग	—	२१	११३६	मध्यम एवं बृहद संस्करण ।
१५-	संगोगिता	जयचन्द	कन्नोज	३६ वर्ष ६ माह	११३७ ११३९-४२	वृहद संस्करण संयुक्त, लघु, मध्यम एवं बृहद संस्करण ।

## पृथ्वीराज का ऐश्वर्य—

‘रासो’ के अनुसार पृथ्वीराज चौहान अपने समय का एक महान् शासक था, उन्हें छत्तीस कुल के छत्रियों ने अपना सिरमौर मान लिया था। उनमें छत्तीसों श्रेष्ठ लक्षण विद्यमान थे।<sup>१</sup> पृथ्वीराज का यश चारों दिशाओं में फैला हुआ था। समस्त क्षत्रीय वंश उनकी आधीनता में आ गए थे। पृथ्वीराज का राज-दरवार सदैव योग्य कलाकारों से भरा रहता था। उनकी आधीनता में उस युग के प्रसिद्ध योद्धा एवं सूरमा रहा करते थे, जिनकी संख्या रासोकार ने १०६ बताई है।<sup>२</sup> पृथ्वीराज चौहान दिल्ली का आधिपति था। जहाँ कवि ने उसकी महानता एवं मूर्खीरता का विवरण दिया है, वहीं वह उसकी राजधानी की सुन्दरता का वर्णन करना भी नहीं भूला है। निगम बोध स्थित राज उद्यान<sup>३</sup> में लगे वृक्षों, फलों तथा फूलों की विस्तृत सूची देने के उपरान्त कवि ने दिल्ली का विवरण प्रस्तुत किया है—इन्द्रपुरी सदृश्य चौहान पृथ्वीराज की दिल्ली में श्रवाल तथा नगाड़े बजते रहते हैं। राजा के समक्ष पहुँचने के लिए दस पोरियां पार करनी पड़ती थीं और फिर सात खडोवाला राजप्रसाद था। दिल्ली नगर की हाट में अनेक प्रकार के माणिक्य-मोती खरीदे जा सकते थे—

घुरि भुम्भिय नररंध निसान धुरं, धुर है प्रथिराज कि इद्रपुर।  
 प्रयमं दिलियं किलियं कहनं, ग्रह पौरि प्रसाद धना सतवं । २३।  
 घन रूप अनेक अनेक भती, जिन यधिय बंधन छत्रपती।  
 जिन अद्य चढ़ं घरि अद्य लपं, बल श्रीप्रभु मंत्र अनेक भयं । २४।  
 दह पौरि सु सोनत पिथ्य वरं, नरनाह निसंकित दाम नरं।  
 नर हट्ट सु लपनयं मरयं, घरि वस्त अमोल नयं नरयं ॥ २५।  
 तिहि श्रीच महल्ल सतप्पनमं, लपि कोटि धजो सु कवी गनयं।  
 नर सागर तारंग युद्ध परे, परि राति सुरायन वाहु परे । २६।

+ + + +

पचि लल्लिय नीलिय मानकयं, रतनं जतनं मनि तेज कयं।  
 सुन दिल्लिय हट्ट सु नर मझं, करि दंत मिलंत गिरंत सझं ॥ ३०।<sup>४</sup>

उक्त विवरण से पृथ्वीराज चौहान की ऐश्वर्यता का पर्याप्त बोध हो जाता है। सम्भव

१. पृथ्वीराज रासो; साहित्य संस्थान उदयपुर; छं० ६९, स० १।

२. तिहि सहाय नूर ति सुनट, सत सामंत छ सूर।

तिहि सु गिति प्रगट्ट करण, कह्यो चन्द कवि सूर ॥—पृथ्वीराज रासो, छं० ७०, स० १।

३. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी मना काशी, छं० ५-११, स० ५९।

४. यही, छं० २३-३०, स० ५९।

है कुछ विद्वानों को यह वर्णन भट्ट-भगंत प्रतीत हो । सं० १२४० वि० में विरचित 'गर्वावली' से पृथ्वीराज की महानता पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है । 'गर्वावली' की प्रामाणिकता में किसी प्रकार का संदेह नहीं किया जा सकता । श्री जिनपति सूरि के शिष्य श्री जिनपालोपाध्याय रचित 'खरतरगच्छ गवावली' के आधारपर श्री अगरचंद नाहटा और श्री भवरलाल नाहटा ने 'पृथ्वीराज की राज-सभा में जैनाचार्यों के शास्त्रार्थ नामक निबन्ध में लिखा है कि—'अतुल बलशाली महाराज पृथ्वीराज का कहाँ तक वर्णन करें जिन्होंने अपने सैन्य बल से तमाम दिशाओं की जीत लिया है, अतएव: जय लक्ष्मी ने आकर इनकी भुजाओं को अपना घर बना लिया है । जब सर्व प्रथम नवोढ़ा बधू घर में आती है तब गृहद्वार में स्थिति किया जाता है, वैसे ही इनकी भुजाओं में जयलक्ष्मी के प्रवेश के समय रण भूमि में महानक राजा के हाथियों ने तीखे भालों की मार से फटे हुए अपने कुंभस्थल से निकलते हुए गज मुदाओं से स्वस्ति किया ।' एक स्थान पर सूरि जी ने पृथ्वीराज की राजसभा का वर्णन निम्न शब्दों से किया है ।

“राजा पृथ्वीराज का सभा मंडप कैसा है ? चमकती हुई सुन्दर मणियों से इसकी भीत और गगन बनाए गए हैं । उन्हीं मणियों की रुचिर रचना से रचित फश से निकलने वाली किरणों से इसके चारों ओर दिशाएं जगमगा रही हैं । जिनकी सुगंध के लोभ से आगत भ्रमरों के गुंजारव से सारे ही सभा भवन का मध्य भाग भर गया है, ऐसे फूलों के गुच्छे सभा मंडप के प्रांगण में बिखरे हुए हैं । इस सभा में नीले रंग का रेशमी शामियाना तना हुआ है । हवा से हिलती हुई उसके चारों तरफ की चंचल युक्त मालाएं ऐसी प्रतीत होती हैं, मानों किसी जलाशय के चारों ओर निर्मल जल धारा टपकती हो । जिसमें कामदेव की राजधानी के उपयुक्त सुन्दरी वेश्याएं विद्यमान हैं, उनके सुन्दर कटाक्षों से कामीजनों का हृदय क्षुब्ध हो रहा है । वेश्याओं के धारण किए हुए अनेक वर्ण वाले रत्न जटित आभूषणों से विस्फुटित रंग-विरंगी किरणों के समूह से निरालंक ही आकाश में चित्रकारी सी हो रही है । सभा-भवन में किसी स्थान पर आम की मंजरी खाने से मस्त हुए कांयल के कलरव के समान संगीत कला में निपुण कलावंत लोगों से सुन्दर गायन किया जा रहा है । कहीं पर सदाचार सम्पन्न सुन्दर बच्चों की रचना चातुरी प्रसिद्ध नीति शास्त्र को विचारने में विचक्षण, भण्डिमंडल आचार-अनाचार का विवेचन कर रहा है । इसी सभा में किसी स्थान पर उलूक प्रतिवादियों को परास्त करने में समर्थ उत्तमोत्तम समस्त विद्याएं जिनकी जिह्वा पर नृत्य कर रही है, ऐसे विद्वद्वृंद विद्यमान है । यहां पर उद्धत कंधरा वाले अनेक मागध राजाओं की धीरता-गंभीरता और उदारता का व्याख्यान कर रहे हैं । चन्द्रमा के समान खेत दश द्वारा धवल की हुई पृथ्वी को सांगने वाले अनेक छोटे-बड़े सामन्त राजा आ आकर जिनसे

प्रवेशकर रहे है। जिसमें राजा नानावर्ण की मणियों के जड़ाव से बनाए हुए इन्द्र धनुषाकार सिंहासन पर बैठे हुए हैं। जिसने अपने बाहुबल से समस्त शत्रु समुदाय को छिन्न-भिन्न कर दिया है। जैसे राजा पृथ्वीराज के चरण कमलों में अनेक राजा लोग किरीट मुकुटाच्छादित मस्तक को झुकाते हैं। जैसे बगीचा पुष्पाग और श्रीफल के बगीचों से शोभित होता है वैसे ही यह सभा भवन हस्ति तुल्य पुष्टकाय पुरुषों तथा लक्ष्मी के वैभव से शोभित है। जिस प्रकार महाकाव्य काव्य-व्याख्या करने योग्य वर्णों से पूर्ण तथा हास्य, शृंगार, करुण आदि रसों से युक्त रहता है—उसी तरह यह सभा भवन ब्राह्मण, क्षत्रिय आदि वर्णों से युक्त है तथा अभिजाता को व्यजित करने वाला है। जैसे सरोवर की शोभा राजहंस और कमलों से होती है वैसे ही आपकी सभा भवन की शोभा राजा और पद्मजा ( लक्ष्मी ) से है। इन्द्र की नगरी अमरावती में कोई भी मिथ्याभाषी नहीं है तथा सदैव उसमें देवताओं की भीड़ बनी रहती है, वैसे ही इस भवन में सब सत्यवक्ता है और इस में विद्वानों की सदैव भीड़ लगी रहती है। आकाश में जिस प्रकार मंगल और शुक्र नाम के ग्रह शोभावृद्धि करते हैं, वैसे ही आपकी सभा में गायनादि मांगलिक कार्य तथा कवि लोग शोभा बढ़ाने में हेतु हैं। कान्ता के मुख की शोभा अच्छे-अच्छे आलंकारों से है तथैव इस सभा मंडप की शोभा भी गुन्दर सजावट से है। विविध प्रकार के चित्रों से यह चित्रित है।” अपने लेख को अंत में समाप्त करते हुए सूरि जी महाराज इस प्रकार लिखते हैं—“महाराज पृथ्वीराज के ऐसे सभा मंडप को देखकर किस पुरुष का चित्त आश्चर्यमग्न नहीं होता।”

अन्त में शास्त्रार्थ में सूरि जी की विजय हुई। अति प्रसन्न होकर महाराज पृथ्वीराज चौहान ने कहा—“वाह। महाराज ! आप जीत गए हैं, हम आपकी विजय की मुक्त कंठ से प्रशंसा करते हैं। मैंने अपने धर्म और न्याय के प्रभाव से हजारों स्थानों पर प्रभुता प्राप्त की है। ७०,००० ( सत्तर हजार ) घोड़ों पर मेरा आधिपत्य है, मैं समझता हूं कि कोई भी प्रतिपक्षी मेरे समान दर्जे को अभी तक प्राप्त नहीं कर सका है। परन्तु इसी देश में मैं आपकी अपने समान श्रेणि का मानता हूं, क्योंकि आपने भी समस्त देशों के धर्माचार्यों को जीत कर उन पर प्रभुता प्राप्त की है। आचार्य महोदय अब तक हमें ऐसा मालूम नहीं था कि आप इस प्रकार के रत्न हैं। इसलिए जान या अज्ञान में मुझ से अनुचित व्यवहार हुआ हो तो आप हमें क्षमा करें।”

चौहान पृथ्वीराज एक महान शासक था, उसकी सभा में वागीश्वर, जनादेन गौड़ और विद्यापति प्रभृति प्रकांड विद्वान राजपूतित थे और शास्त्रार्थ के समय मंडलेश्वर कैमास भी उपस्थित था। महाराज पृथ्वीराज ने स्वयं अपने मुख से अपनी सेना में ७०,००० ( सत्तर हजार )

१. अमरचन्द्र नाहटा और भंवरलाल नाहटा, पृथ्वीराज की राजसभा में जनाचार्यों के शास्त्रार्थ, हिन्दुस्तानी पत्रिका, पृ० ८३-८४।

२. वही, पृ० ११-१२।

घोड़ों का होना कहा है, यह बात विशेष महत्व की है। इतना ही नहीं अपितु यहाँ तक कहा है कि इतना ऊँचा पद किसी को भी प्राप्त नहीं है। इस वाक्य से पृथ्वीराज के वैभव तथा चक्रवर्तित्व का स्पष्ट परिचय प्राप्त होता है।

पृथ्वीराज की उदारता—‘पृथ्वीराज रासो’ में सर्व-प्रथम पृथ्वीराज की उदारता का परिचय ‘आखेटक वीर वरदान’ समय से मिलता है। चंद ने एक ऋषि की कृपा से परशु पराक्रमी बावन वीरों को वश में करने वाला मंत्र सिद्ध करके, उन गणों का प्रत्यक्ष पोषण दिखाने तथा पृथ्वीराज की आज्ञानुसार उक्त मंत्र सब सामन्तों को सिखाने पर, महाराज पृथ्वीराज द्वारा कवि चन्द वरदायी को उदारता पूर्वक बीस गाँव तथा एक सुसज्जित अश्व देने का उल्लेख मिलता है—

बीस ग्राम कवि चन्द प्रति करो कुवर वगसीस ।

एक वाजि साजति सजहि दियो सुसम्भरि ईस ॥ १७८ ॥’

ग्रन्थकार ने यहाँ पर बीस गाँवों के नामों का उल्लेख नहीं किया है, अतः उनके नाम रासो में खोजना असंभव ही है।

पृथ्वीराज की उदारता के दर्शन एक बार पुनः ‘भूमि स्वप्न कथा’ में होते हैं। लंगरी-राय ने पृथ्वीराज को बचा कर स्वयं अपनी तलवार द्वारा वन में शेर का शिकार कर वीरता का प्रदर्शन किया। उस समय की पृथ्वीराज की उदारता देखते ही बनती है—

भौ प्रसन्न प्रथिराज वोल् बुल्लयो सु लंगरिय ।

इत्तो देऊं प्रचन्द, पंच जो मद्धि मोह जिय ।

अद्धा राज सु अद्ध, पाट अद्धा तंबूल ।

अद्धा वेस सुदेस, करों आदर संमूल ।

बोलंत वैन पृथ्वीराज सुनि, जीव लज्जि नीची नजरि ।

लगाइ कंठ ठुकि पिठ्ठ कर भली मलों सब सय्य करि ॥ १८ ॥’

अर्थात्-सिंह को मारने पर पृथ्वीराज ने प्रसन्न हो लंगरीराय से कहा यदि मेरे शरीर में पाँचों तत्व विद्यमान रहे तो इतना ऊँचा सम्मान दूँगा, अर्थात् मेरा आधा राजसी ठाट, आधा सिंहासन, मेरे खाने में से आधा ताम्बूल, अच्छे देश में से आधा देश देकर सब तरह से आदर करूँगा। इस प्रकार पृथ्वीराज का कथन सुन कर उस वीर ने विरोचित ढंग से वन में लज्जा का अनुभव कर दृष्टि नीची कर ली। पृथ्वीराज ने उसकी (लंगरीराय) की पीठ ठोक कर कंठ से लगा लिया तथा अन्य समस्त साथियों ने उसकी प्रशंसा की।

१. पृथ्वीराज रासो, ना० प्र० स० काशी, छं० १७८, स० ६।

२. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान, उदयपुर, छं० १८, भूमि स्वप्न कथा समय।



पृथ्वीराज चौहान की उदारता के दर्शन तो उस समय होते हैं जब वह अपने प्रवल शत्रु गजनीपति शाहजाहाबुद्दीन गोरी को युद्ध में अनेक बार परास्त कर उदारता तथा सम्मानपूर्वक मुक्त कर देते हैं। पृथ्वीराज चौहान की उदारता की यह चरम सीमा है। इसी उदारता के परिणाम स्वरूप ही हिन्दुओं के अन्तिम शासक पृथ्वीराज चौहान को अपने प्राणों की आहुति देनी पड़ी। ग्रन्थकार ने गोरी को बन्दी बनाने तथा पुनः उसे उदारता पूर्वक मुक्त करने के वर्णन अनेक स्थानों पर किया है। 'माघोभाट कथा' में गोरी वीर चामण्डराय के हाथों बन्दी बनाया गया। 'हर्म्मैन कथा' में पुनः वीर चामण्डराय ने शहाबुद्दीन गोरी को बन्दी बनाया तथा उदारता की साक्षात् मूर्ति महाराज पृथ्वीराज चौहान ने कुछ दण्ड लेकर उसे मुक्त कर दिया। 'पद्मावती समय' में महाराज पृथ्वीराज राजकुमारी पद्मावती का अपहरण करते जब समुद्र तट पर पहुँच रहे थे, तब मार्ग में गोरी ने आ घेरा, इस बार महाराज पृथ्वीराज ने स्वयं ही गोरी को अपनी कमान उसके गले में डालकर पकड़ लिया तथा दिल्ली ले गए। दिल्ली पहुँचने पर अपने विवाह के उपलक्ष्य में कुछ दण्ड लेकर गोरी को पुनः मुक्त कर दिया। 'सलय युद्ध' समय में गोरी फिर बन्दी बनाकर मुक्त कर दिया गया। 'घन कथा' समय में चित्तौड़पति रावल समरसिंह ने शहाबुद्दीन गोरी को बन्दी बनाया किन्तु महाराज पृथ्वीराज ने अपनी उदारता का परिचय देते हुए और कुछ दण्ड लेकर पुनः मुक्त कर दिया। 'रेवातट समय' में वीर गुज्जर ने गजनीपति गोरी को बन्दी बनाया। 'अनंगपाल समय' में गोरी को वीर चामण्डराय ने बन्दी बनाया तथा महाराज पृथ्वीराज ने मुक्त कर दिया। 'घघर की लड़ाई' में चाचा कान्हू के द्वारा गोरी पकड़ा गया तथा पुनः मुक्त कर दिया गया। 'पीपा युद्ध समय' में वीर पीपा ने अपनी रण कुशलता का परिचय देते हुए गोरी को बन्दी बना लिया। 'कैमास युद्ध समय' में पृथ्वीराज के मुख्य मंत्री कैमास ने शहाबुद्दीन गोरी को महाराज पृथ्वीराज की आधीनता स्वीकार करने के लिए विवश कर दिया। 'पहाड़राय समय' में स्वयं पहाड़राय ने शहाबुद्दीन गोरी को पकड़ कर बन्दी बनाया तथा पृथ्वीराज ने पुनः दण्ड लेकर मुक्त कर दिया। 'पंजून पातशाह युद्ध' समय में वीर

१. पृथ्वीराज रासो, साहित्य सस्यान उदयपुर, छं० ५८, माघोभाट कथा समय।

२. यही, छं० ७२ हर्म्मैन कथा समय।

३. यही, छं० ३८, पद्मवती समय।

४. यही, छं० ७६ सलययुद्ध समय।

५. यही, छं० ९४, घनकथा समय।

६. यही, छं० ७२, रेवातट समय।

७. यही, छं० ७०-७१ अनंगपाल समय।

८. यही, छं० २४ घघर की लड़ाई समय।

९. यही, छं० ३९, पीपा युद्ध समय।

१०. यही, छं० ५९, कैमास युद्ध समय।

११. यही, छं० ४९, पहाड़राय समय।

पञ्जन के पुत्र मलयसिंह ने गोरी को बन्दी बनाया तथा महाराज पृथ्वीराज चौहान ने उसे मुक्त कर पुनः अपनी महानता एवं उदारता का परिचय प्रस्तुत किया ।<sup>१</sup> 'दुर्गा केदार समय' में पहाड़राय ने गोरी को पकड़ कर बन्दी बनाया तथा वीर पृथ्वीराज ने गोरी को मुक्त कर दण्ड स्वरूप प्राप्त अपार सम्पत्ति पहाड़राय को पुरस्कार स्वरूप दे दी ।<sup>२</sup> महाराज पृथ्वीराज ने प्रत्येक बार गोरी को थोड़ा-बहुत दण्ड लेकर मुक्त कर दिया, यह उनकी अखण्ड उदारता का परिचायक है । सम्भव है कवि ने अतिशयोक्ति पूर्ण वर्णन किया हो, पर इस प्रकार के वर्णन से इतना तो अवश्य स्पष्ट हो जाता है कि पृथ्वीराज उदार प्रकृति का था ।

इतना ही नहीं, एक-दो स्थानों पर 'रासो' ग्रन्थ पृथ्वीराज की उदारता के और भी उदाहरण प्रस्तुत करता है,—'पृथा' विवाह ऐसा ही स्थल है । रासोकार ने पृथा विवाह के समय अनेक प्रकार के दानों का उल्लेख किया है, भाँवर के समय पृथ्वीराज चौहान ने रावल समरसिंह को जिस प्रकार मुक्त हस्त होकर दान दिया वह देखते ही बनता है, देखिए—

एक फिरत भाँवरी, साहि मेवात गाँम दिय ।  
 दुलिय फिरत भाँवरी, दुरद-दान-एक-अगरिय ।  
 त्रितिय फिरत भाँवरी, दयी संभरि उदक्क कर ।  
 चौथी भाँवरि फिरत, द्रव्य दीनों अनन्त वर ॥  
 चाहुवान चतुर चावहिसा, हिन्दवान वर भान विधि ।  
 गुन रूप सहज लच्छी सुवर, सहित धोर बंधी जु सिधि ॥ ३३ ॥<sup>३</sup>

उक्त छन्द में कवि ने, मेवात के ६० गाँव दिए जाने का उल्लेख किया है किन्तु उन गाँवों के नामों के बारे में रासोकार संवंधा मोन है । अतः केवल ६० की संख्या के आधार पर यह ज्ञात करना कि वह गाँव कौन से हैं, नितास्त असम्भव है । यहाँ इतने से ही सन्तोष करना पड़ता है कि पृथ्वीराज ने ६० गाँव दान में दिए होंगे तथा यहाँ पर गाँवों की ऐतिहासिकता न देख कर केवल पृथ्वीराज की उदारता पर प्रकाश डालना ही अभीष्ट है । ग्रन्थकार ने लिखा है कि चतुर्थ भाँवर में साम्भर प्रदेशदान में दे दिया । सम्भर प्रदेश दान देना सम्भवतः अतिशयोक्ति पूर्ण वर्णन ही मानना चाहिए क्योंकि यदि पृथ्वीराज सम्भर प्रदेश रावल समरसिंह को दान दे देते तो कवि, पृथ्वीराज के लिए 'संभर नरेश' शब्द का प्रयोग न करता जो कि कवि ने स्थान-स्थान पर पृथ्वीराज के लिए किया है । अतः स्पष्ट है, कि पृथ्वीराज ने सम्भर प्रदेश दान नहीं दिया था ।

'धन कथा' समय में महाराज पृथ्वीराज की उदारता चरम सीमा पर पहुँची हुई

१. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान, उदयपुर छं० ३०, पंजनपात शाह समय ।
२. वही, छं० १०७, दुर्गा केदार समय ।
३. वही, छं० ३३, पृथा विवाह समय ।

दृष्टिगोन होती है। पृथ्वीराज की दान शीलता तथा उदारता का निशान तीन स्थानों पर प्राप्त होना है।

(१) वन में घन निकालने पर पृथ्वीराज ने उस घन का वितरण कर दिया। (२) शाह को रावन समरसिंह की सहायता से पकड़ कर मुक्त कर दिया। (३) शाह से दण्ड म्यम्य पाए हुए अश्वों को सामन्तों में बांट दिया तथा अपने लिए केवल यश ही रखा। अन्यकार ने उपर्युक्त घटनाओं का वर्णन क्रमशः इस प्रकार किया है—

(१) वंदि दियो पृथिराज , नाग विज्री सह श्रववर ।  
 एक भाग कैमास , तीय अप्पे नर सिध नर ॥  
 पंच भाग चांवड़ , नाग अठ्ठी वर कन्हं ।  
 द्वादस भाग नरिद , दियो परिगह सव थनं ॥  
 प्रथिराज दिष्ट आये नहीं , चिकट कुंभ ज्यों जल अभिद ।  
 लग्गी न नोर पत्रह कमल , मिदं न मति छीवें उछिद ॥ १०० ॥  
 एक भाग दिय विप्रकर , करं राज सुख कंद ।  
 धन लम्बिनय प्रथिराज धन , कथी कथ्य कविचन्द । १०१ ।<sup>१</sup>

(२) वजि नरयंद जय पत्त , वीय वज्जा धन वज्जं ।  
 ताइय घर गज राज राज , दरवारणि गज्जं ॥  
 चामर छत्र रखत , तखत लिन्तो सुलितानी ।  
 उत्तर बड़ उत्तगं गयो , मुलतानह पानी ॥  
 छन्ड्यो छत्र सुलितान सिर राज-छत्र सिर मण्ड्यो ।  
 वाजंत नह निस्सतान धन , बधि साहि दंडि छंड्यो ॥ ९५ ॥<sup>२</sup>

और भी—

(३) दंड सुवर पतिसाह , दीय हय वंदि राजवर ।  
 बीस सुनर हय कन्ह , बीस हय उंचह निड्डुर ॥  
 बीस दूअ रघुवत्त , बीस उम्भय दाहिम्मं ।  
 अतत्ताइ अल्हन पहाड़ , बीस हय जेत गुरंम ॥  
 औरह सु सकल नर बीस अध , वंदि वंदि दिय सवर नर ।  
 ररत्तन सु गल्ह राजंद गुर , जस रक्ख्यो निज वर सुकर ॥ १०८ ॥<sup>३</sup>

१. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान, उदयपुर, छ० १००-१०१; धनकथा समय ।

२. वही छ० ९५, धनकथा समय ।

३. वही छ० १०८, धनकथा समय ।

संभव है कवि ने अपने आश्रयदाता की कीर्ति एवं उदारता का वर्णन अनिग्रयोक्ति पूर्ण किया हो। किन्तु यह अवश्य स्वीकार करना पड़ेगा कि पृथ्वीराज बड़ा उदार एवं महान शासक था। ऐसा 'रासो' के आधार पर ही नहीं वरन् उसकी उदारता का परिचय देने वाले अनेक संस्कृत ग्रन्थ भी हैं।

सं० १२४० में रचित 'खरतरगच्छ गर्वावली' में भी पृथ्वीराज की उदारता पर पर्याप्त प्रकाश डाला गया है। 'पृथ्वीराज की राजसभा में जैनाचार्यों के शास्त्रार्थ' नामक निबन्ध में श्री अगरचन्द नाहटा तथा श्री भंवरलाल नाहटा ने इस प्रकार लिखा है—“सूरि महाराज की सर्व तन्त्रों में स्वतंत्र, प्रतिमा देखकर ऐसा कोन मनुष्य था जिसके हृदय कमल पर आश्चर्य लक्ष्मी विराजमान न हुई हो? अति प्रसन्न होकर महाराज ने कहा—“वाह। महाराज! आप जीत गए हैं। हम आपके विजय की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा करते हैं। मैंने अपने धर्म और न्याय के प्रभाव से हजारों स्थानों पर प्रभुता प्राप्त की है। सत्तर हजार ढोड़ों पर मेरा आधिपत्य है, मैं समझता हूँ कि कोई भी प्रतिपक्षी मेरे समान दर्जे को अभी तक प्राप्त नहीं कर सका है। परन्तु इसी देश में मैं आपको अपने समान श्रेणी का मानता हूँ, क्योंकि आपने भी समस्त देशों के धर्माचार्यों को जीत कर उन पर प्रभुता प्राप्त की है। आचार्य महोदय! अब तक ऐसा मालूम नहीं था कि आप इस प्रकार के रत्न हैं। इसलिए जान या अनजान में मुझ से अनुचित व्यवहार हुआ तो हमें क्षमा करें। इस प्रकार कहते हुए, नरपति ने आचार्य श्री के समक्ष क्षमा याचनार्थ दोनों हाथ जोड़े।”

“महाराज पृथ्वीराज सूरि जी को विजयोपलक्ष में कुछ मांगने को कहते हैं किन्तु सूरि जी कुछ भी ग्रहण करने में अपनी असमर्थता प्रकट करते हैं। अन्त में सेठ रामदेव जी कहते हैं ‘कृपानाथ। आप गुरु महाराज को विजय पत्र भेंट करने की कृपा करें।

राजा—आज तो समय अधिक हो गया है दो दिन पश्चात् में कार्यवश अजमेर आऊँगा तब अवश्य ही सूरि जी को जयपत्र भेंट कर दूँगा।

‘दो दिन के पश्चात् अपनी प्रतिज्ञा को पूरी करने के लिए महाराज पृथ्वीराज सैन्य अपने अजमेर के महलों में आए। वहाँ से हाथी के हीदे पर जयपत्र रख कर नगर के मध्य-मध्य होते हुए पौषघशाला पधारे और सूरि जी के हाथ में जयपत्र समर्पण किया।”

उपर्युक्त घटना पृथ्वीराज की महानता एवं दानशीलता की घोषणामुक्त कण्ठ से करती है। महाराज पृथ्वीराज केवल उदार ही नहीं वरन् वह किसी विद्वान का उचित सत्कार करना भी भली-भाँति जानते थे। सूरि जी के निवास स्थान पर ही जाकर जयपत्र देना तो पृथ्वीराज की उदारता में चार-चाँद लगा देता है।

१. अगरचन्द नाहटा तथा भंवरलाल नाहटा, पृथ्वीराज की राजसभा से जैनाचार्यों के शास्त्रार्थ, हिन्दुस्तानी पत्रिका, पृ० ९१-९२।

२. वही, पृ० ९६-९७।

गणिका—‘पृथ्वीराज रासो’ में जहाँ एक ओर पृथ्वीराज चौहान के १५ विवाहों का वर्णन प्राप्त होता है वहीं दूसरी ओर यह भी लिखा है कि महाराज पृथ्वीराज चौहान ने करनाटक देश पर आक्रमण कर तथा संघि रूप में करनाटी नामक एक वेश्या को प्राप्त किया। महाराज उस वेश्या को अपने साथ दिल्ली ले आए कवि ने लिखा है—

ले आयी नाइक सय , करनाटी प्रियिराज ।

जयन्तत्र एकठ नये , सर्व साज सम्माज ॥ ४ ॥<sup>१</sup>

महाराज पृथ्वीराज करनाटी के रूप गुण तथा लक्षणों पर रीझ गए तथा उसे रक्षिता के रूप में रानी डच्छनी प्रमाग्नी के अन्तःपुर के बाहर के द्वार पर रहने के लिए व्यवस्था कर दी तथा उसके भवन पर रक्षा के लिए दिन रात बहुत सी दासियाँ रख दी गईं।

काम कला तुट्टे नृपति सुग्रिह पवारी द्वार ।

तिन अवास दासी सघन , अहनि स रहि रखवार ॥ ११ ॥<sup>२</sup>

यहाँ पर पृथ्वीराज चौहान के महलों में १५ रानियों के अतिरिक्त एक वेश्या की सूचना मात्र देना अभीष्ट है। गणिका करनाटी के विषय में अन्यत्र विवरण प्रस्तुत किया गया है।

पृथ्वीराज के सामन्त—भारतवर्ष के अन्तिम हिन्दू शासक महाराज पृथ्वीराज (तृतीय) का नाम ऐसा कौन व्यक्ति है, जिसने न सुना हो। भारतीय इतिहासकार ही नहीं अपितु विदेशी इतिहासवेत्ता भी पृथ्वीराज की वीरता के संबंध में बहुत कुछ लिख गए हैं। उनके समकालीन एवं दरबारी कवि चन्द ने भी पृथ्वीराज का शौर्य वर्णन अत्यधिक किया है। पृथ्वीराज की वीरता एवं उदारता का चित्रण हम यहाँ-वहाँ करते ही रहे हैं। अतः स्वाभाविक है, कि ऐसे वीर शासक की आधीनता में अनेक सामन्त भी रहते हों। यही कारण है कि कवि चन्द ने ‘पृथ्वीराज रासो’ में पृथ्वीराज के आधीनस्थ सामन्तों की सख्या कहीं पर १०० तथा कहीं पर १०६ बताई है।

तिहि सहाई सूर ति सुमट , सत सामन्त छ-सूर ।

तिहि सु किति प्रगटह करण, कह्यो चन्द कवि सूर ॥ ७० ॥<sup>३</sup>

महाराज पृथ्वीराज, कवि चन्द ने कर्नाज जान का दूढ़ निश्चय प्रगट करते हैं। अतः मगन ११९१ चैत वदी ३ रविवार के दिन ग्याग्ह साँ घुड़सवार साथ लेकर महाराज पृथ्वीराज ने कर्नाज की ओर प्रस्थान किया—

ग्यारह से एकानवे । चैत तीज रविवार ।

वनवज देषन करणे । चन्योसु समरिवार ॥ छं० १०२ ॥<sup>४</sup>

१. पृथ्वीराज रासो, साहित्य सन्धान उदयपुर, छं० ४, करनाटी पात्र समय ।

२. यहाँ, छं० ११, करनाटी समय ।

३. यहाँ, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ७०, स० १ ।

४. यहाँ, छं० १०२, स० ६१ ।

महाराज पृथ्वीराज अपने साथ में एक लाख सिपाहियों को पराजित करने में समय ग्यारह सौ वीर योद्धाओं को लिए हुए थे । उनका शरीर पुष्ट था राजपूत सैनिक ऐसे हृष्ट-पुष्ट थे कि उनके हृदय पर बख का प्रहार भी विफल हो जाता था । युद्ध में एक रुद्र वेग धारण कर शत्रुओं को तृण के समान भस्म करने के लिए साक्षात् अग्नि के समान थे । महाभारत युग से आज तक उनके समक्ष कोई योद्धा पैदा नहीं हुआ । सम्भरी नाथ पृथ्वीराज भी बस एक ही थे । उनकी वीरता की बातें देश भर में कानों-कान हो रही थी । गजनीपति को बाँध-बाँध कर छोड़ देने तथा कैमास जैसे मंत्री का वध कर देने ने तो उनके आत्मक को और भी बढ़ा-चढ़ा दिया था । ऐसा योद्धा वीर महाराज पृथ्वीराज चाहवान ग्यारह सौ सवार और सामन्त तथा ६ निज सूरमाओं तथा कवि चन्द को साथ लेकर राज महल से चल पड़ा और नगर ने बाहर यमुना के किनारे जा ठहरा ।<sup>१</sup>

आगे चल कर कवि ने उन सौ सामन्तों का परिचय दिया है जो पृथ्वीराज के साथ थे । यहाँ पर उन सामन्तों का नाम मात्र का उल्लेख किया जावेगा । अलग-अलग पात्र के विषय में अन्य स्थानों पर पूर्ण विवरण देने का प्रयत्न किया जावेगा । सामन्तों के नाम इस प्रकार है—(१) कन्हू, (२) गोइन्दराय, (३) सेनचन्द, (४) लगरीराय, (५) देवराज, (६) जाजराय, (७) रणधीर प्रमार, ( ८ ) जैत प्रमार, ( ९ ) आम राव, ( १० ) प्रसगराय खीची, ( ११ ) पञ्जूनराय, ( १२ ) बलिभद्रराय, ( १३ ) पालहन राय, ( १४ ) निड्डुरराय, ( १५ ) रामराय, ( १६ ) गम्भीरसिंह, ( १७ ) नरसिंह, ( १८ ) जंघारभीम, ( १९ ) अतातार्द, ( २० ) उद्दिगपगार, ( २१ ) चन्दसेन ( २२ ) वीरसिंह, ( २३ ) हरसिंह, ( २४ ) सारंगराय, ( २५ ) विझराज, ( २६ ) नागरराय, ( २७ ) दाहरराय, ( २८ ) रामरेन, ( २९ ) रूपराय अथवा, सूवराय ( ३० ) मोहाराय, ( ३१ ) कनकराय, ( ३२ ) कनकराय ( ३३ ) माल चन्देल ( ३४ ) मानराय, ( ३५ ) सामला सूर, ( ३६ ) वसिंह राय, ( ३७ ) देवराज, ( ३८ ) मंडलीराव, ( ३९ ) घनूराव, ( ४० ) पहारराय, ( ४१ ) जुल्हराय, ( ४२ ) खेता खगार, ( ४३ ) वीरमराय, ( ४४ ) रूपराय, ( ४५ ) सारंगराय, ( ४६ ) भोजराज, ( ४७ ) साखुंला वीर, ( ४८ ) सामलेसिंह, ( ४९ ) विक्रमराय ( ५० ) सहल्लराय, ( ५१ ) ठंडरीराय ( ५२ ) सारंगराय, ( ५३ ) जयसिंह ( ५४ ) वारूराय, ( ५५ ) भीमराय, ( ५६ ) पीपाराय, ( ५७ ) देवराज, ( ५८ ) अचलेसराय ( ५९ ) कचराराय, ( ६० ) नाहरराय, ( ६१ ) महनसिंह, ( ६२ ) भीमसिंह, ( ६३ ) लखनराय, ( ६४ ) पूरवराय, ( ६५ ) तेलज्जराय, ( ६६ ) अचलेस भट्टी, ( ६७ ) चन्द्रसेन, ( ६८ ) सन्नार्मसिंह, ( ६९ ), विजैराय वघेला, ( ७० ) मोहित्त, ( ७१ ) लखनराय ( ७२ ) रंघरीराय, ( ७३ ) जैसिंह कमधुज्ज, ( ७४ ) पंजपराय ( ७५ ) भार्गवाय, ( ७६ ) जागरराय, ( ७७ ) टाकचाटा, ( ७८ ) रावतराय, ( ७९ ) हरीदेव, ( ८० )

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, छं० १०३-५, स० ६१ ।

राजराज, (८१) अहर्द्वाराय, (८२) हाह्वलीराय, (८३) पुहकरराय, (८४) कन्हाराज, (८५) जंगलीराय, (८६) पंचाडत राय, (८७) रणवीरराव (८८) छगन, (८९) देवतीराय ।'

उपर्युक्त सामन्तों की सूची देखने से पता लगता है कि इनमें १७ सामन्त कम है जबकि रामोकार कवि चन्द ने सामन्तों की संख्या १०६ तक बतलाई है । सम्भव है रासोकार ने जिन ६ निज सामन्तों का वर्णन किया है, उन्हें इस सूची में न रखा हो और उनके नाम छोड़ दिए हों फिर भी उपर्युक्त सूची के अनुसार ११ सामन्तों का अंतर पड़ता है जबकि कवि चन्द ने १०० सामन्तों का तो स्पष्ट होना लिखा है ।

वास्तव में पृथ्वीराज अपने युग का महान शासक था । इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि उसकी आधीनता में १०६ सामन्त रहते थे, यह बात दूसरी है कि सामग्री के अभाव में हम उनके नाम न जान सकें । वैसे एक स्थान पर स्वयं ही महाराज पृथ्वीराज ने अपने आपको ७०,००० ( सत्तर हजार ) घुड़सवारों का स्वामी होना कहा है—'मैंने अपने धर्म और न्याय के प्रभाव में हजारों स्थानों पर प्रभुता प्राप्त की है । सत्तर हजार घोड़ों पर मेरा आधिपत्य है, मैं समझता हूँ कि कोई भी प्रतिपक्षी मेरे समान दर्जे को अभी तक प्राप्त नहीं कर सका है ।'" अतः स्पष्ट है कि पृथ्वीराज चौहान के पीछे उनके आधीनस्त सामन्तों की संख्या निश्चय ही अधिक होगी ।

मिहिरासतारोहण—जिम समय महाराज पृथ्वीराज को अपने पिता सोमेश्वर की मृत्यु की सूचना मिली तो उसने अपने पिता के पिंड के लिए पोडस ( सोलह ) दान देने का निश्चय किया । उस मनचाले राजा ने राजाओं की ही भाँति समस्त कल्याणकारी कार्य किए । वह बारह दिन तक भूमि पर तथा तृण पट्टी पर ही सोया । भोगविलास को उपेक्षा की दृष्टि से देखते हुए केवल एक समय ही भोजन ग्रहण किया । समस्त दान महाराज पृथ्वीराज ने अपने ही हाथों से दिया तथा इतना दान दिया कि अन्य कोई व्यक्ति अपने सम्पूर्ण जीवन में भी नहीं दे सकता था—

मुनी बत्त पृथ्वीराज , भुम्मि सेना अधिकारी ।  
तात काज तिन प्यड़ , दान खोडस विच्चारो ।  
नह मह सद्धयो , राज गति खव्व प्रकार ।  
हाददा दिन पृथ्वीराज भुमि राज्य सथारं ।  
विनु भोग भोज इयक टंक करि , सु हय दान दिय देचवर ।  
दयन्तीन कोई देह न को , इतो दान जनमत नर ॥ ४५ ॥'

१. पृथ्वीराज रामो. नगरी प्रचारिणी सभा, छ० १०९-३३, स० ६१ ।

२. पृथ्वीराज की राजसभा में जनाचार्यों के शास्त्रार्थ-अगरचन्द नाहटा तथा भवरलाल नाहटा हिन्दुस्तानी, पृ० ९१-९२ ।

३. पृथ्वीराज रामो. साहित्य सन्धान उदयपुर, छ० ४५, सोमवध समय ।

महाराज सोमेश्वर का निधन हो जाने पर उनका एक मात्र पुत्र पृथ्वीराज उनकी राजगद्दी का अधिकारी हुआ। अनेकानेक उत्सव मनाए गये। महाराज पृथ्वीराज की सर्व प्रथम नरनाह चाचा कन्ह ने अपने हाथ से तिलक किया तत्पश्चात् विड्डुरराय ने तिलक किया। उस समय विप्रगण स्वस्ति वचन कर रहे थे। इसके उपरान्त समस्त सामन्तो ने बारी-बारी से महाराज पृथ्वीराज को तिलक किया तथा अपना स्वामी स्वीकार किया।

प्रथम तिलक सिर कन्ह करि, पुनि निड्डर रट्ठोर।

इन अगह सुभ सेंति करि, पच्छे सब भर और ॥ ५० ॥'

महाराज पृथ्वीराज सिंहासनरूढ़ हुए। उस समय ऐसा प्रतीत हो रहा था मानों पृथ्वी-राज के चन्द्रमा स्वरूपी भाल के अद्भाग में कन्ह का कमल रूपी कर सुशोभित हो रहा है। पृथ्वीराज के ऊपर श्वेत चमर डुलाया जा रहा था। वह ऐसा प्रतीत होता था मानों सूर्य पर समस्त दिशाओं से चन्द्र अपनी किरणें फँक रहे हों। पृथ्वीराज पृथ्वी पर प्रखर तेज को धारण कर तपने लगा। मुलतान को पकड़ने तथा बार-बार छोड़ने में उसने वीर रस रूपी अपार धन संचय किया।

कियो तिलकु सिर कंह, पाट प्रथिराज विराजहि.

मनहु इंद अवंग, हत्य इन्दीवर राजहि।

चमर सेत सोभंत, दुरहि चावाहसि सीत।

मनुहुं मानं पर धरिय, किरणि ससि की प्रतिदीप्तं।

अवनीय थंडु लगौ तपन, ध्रुवह तेज घर उद्धरण।

सुरतान गहन मोखन करण, बहुवीरा रस तंचि धन ॥ ५१ ॥'

ग्रन्थकार ने पृथ्वीराज के राज्याभिषेक के विषय में तो अवश्य लिखा, पर उसके समय का उल्लेख नहीं किया है। अतः सन्-सम्बत् जानने के लिए हमें शिलालेखों तथा इतिहास की शरण लेना आवश्यक हो जाता है। म० म० गोरीशंकर हीराचन्द बीजा एक स्थान पर रासो में वर्णित सोमेश्वर की मृत्यु की घटना को अस्त्य सिद्ध करते हुए लिखते हैं— 'यह सारी कथा ( रासो का वर्णन ) भी असत्य है, क्योंकि न तो सोमेश्वर भीमदेव के हाथ से मारा गया और न भीमदेव पृथ्वीराज के हाथ से। सोमेश्वर के समय के कई शिलालेख मिले हैं, जिनमें से पहला वि० सं० १२२६ फाल्गुन वदी ३ का विजोलिया का प्रसिद्ध लेख है और अंतिम वि० सं० १२३४ भाद्र पद सुदी ४ का है। पृथ्वीराज का सबसे पहला लेख वि० सं० १२३६ आपाढ़ वदी १२ का है। वि० सं० १२३६ के प्रारम्भ में सोमेश्वर का देहान्त और पृथ्वीराज की गद्दी नशीनी मानी जा सकती है, जैसा कि प्रव्रधकोप के अन्त की

१. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० ४५, सोमवध समय।

२. वही, छं० ५१, सोमवध समय।



वंशावली से ज्ञात होता है। भीमदेव वि० सं० १२३५ में गद्दी पर विल्कुल वाल्यावस्था में चैत्रा क्र० ६३ वर्ष अर्थात् वि० सं० १२९८ तक वह जीवित रहा। इतनी वाल्यावस्था में वह सोमेश्वर को नहीं मार सकता और न पृथ्वीराज ने उसका बदला लेने के लिए उस पर चढ़ाई कर उसे मारा था। गुजरात के ऐतिहासिक संस्कृत ग्रन्थों में भी कही इस बात का उल्लेख नहीं है। राजपूताना म्युजियम में भीमदेव का वि० सं० १२६५ का एक शिलालेख विद्यमान है। आबू पर देनवाड़ा गांव के प्रसिद्ध तेजपाल के जैन मंदिर की वि० सं० १२८७ की प्रगति के लिखने के समय भी भीमदेव विद्यमान था। डॉ० बूलर ने वि० सं० १२९६ मार्ग-शीर्ष वशी १४ का भीमदेव का दान पत्र प्रकाशित किया है। इससे निश्चित है कि भीमदेव पृथ्वीराज की मृत्यु से अनुमान पचास वर्ष पीछे भी विद्यमान था।”

उपर्युक्त कथन में कितना सत्य है, यह दूसरी बात है। किन्तु यह तो स्पष्टतः ओझा जी भी मानते हैं कि वि० सं० १२३६ में सोमेश्वर का देहान्त हो गया था तथा पृथ्वीराज को राजगद्दी प्राप्त हो गई थी किन्तु तत्कालीन खोजों के आधार पर हम यह कह सकते हैं कि ओझा जी का मत ठीक नहीं है। सब इतिहासकार एक मत होकर पृथ्वीराज का राज्यकाल वि० सं० १२३६ से ही मानते हैं किन्तु श्री यू० सी० भट्टाचार्य ने हाल ही में एक बारला का शिलालेख योज कर यह सिद्ध कर दिया है कि महाराज पृथ्वीराज का राज्यकाल वि० सं० १२३४ से आरम्भ हो गया था अर्थात् वि० सं० १२३४ में पृथ्वीराज को अपने पिता की गद्दी उत्तराधिकार रूप में प्राप्त हो गई थी। बारला का शिलालेख वि० सं० १२३४ का है।”

अतः उक्त विवेचन से इतना तो स्पष्ट हो ही जाता है कि महाराज पृथ्वीराज को राज्य सिद्धामन उत्तराधिकार के रूप में वि० सं० १२३४ में प्राप्त हो गया था।

पुद्ग—११वीं तथा १२वीं शताब्दी से निरन्तर उत्तर भारत पर मलेच्छों के आक्रमण हो रहे थे। इनका वेग पश्चिमी भारत को भी सहन करना पड़ा, जो उस समय भारतीय

१. श्री ओझाजी, पृथ्वीराज रासो का निर्माण काल कीशोत्सव स्मारक संग्रह।
२. “The Barla inscription can thus be taken as the earliest known record of the time of Prithviraja III whose reign stated some time after ‘Friday of the bright fortnight of Bhadra Samvat 1234 and surely before the fourth day of the bright half of the month of Chaitra Samvat 1234. The date of Prithviraja’s succession in to the Chahaman throne is thus pushed back to more then two years and should be rightly looked for within the period of about seven months begnining from the date of the Anvalda inscription, i. e. Somvat 1234 Bhadra Sudi 4 Sukradine [संवत् १२३४ भाद्र सुदि ४ शुक्र दिन]।’ New light on the Chahaman History-By U. C. Bhattacharya, curator, Rajputana Museum. Ajmer.

सम्यक्ता का केन्द्र बना हुआ था। दिल्ली, कन्नौज, अन्हलवाड़ा तथा अजमेर जैसी प्रसिद्ध राजधानियाँ इसी क्षेत्र में अवस्थित थीं। सम्राट हर्षवर्धन की मृत्यु के उपरान्त केन्द्रीय राज्य-शक्ति छिन्न-भिन्न हो गई थी। शक्ति छोटे-छोटे खण्ड राज्यों में विभाजित हो गई थी। इन राज्यों में परस्पर युद्ध होते रहते थे। इधर पारस्परिक युद्ध तथा उधर निरन्तर मुसलमानों के आक्रमणों ने देश में एक प्रकार से अराजकता फैला दी थी। राजनीतिक संघर्ष के इस युग में सामाजिक परिस्थिति भी अत्यन्त शोचनीय हो गई थी। गृह-कलह ने छोटे-छोटे जीवों की भावना उत्पन्न कर दी थी, जिसका प्रदर्शन पारस्परिक अकारण युद्ध तथा स्वयंस्वयं में किया जाता था। साधारण जनता तो तत्कालीन नृपतियों को आत्मार्पण करती गई और अपरिणामदर्शी नृपतियों ने घर में ही बैर तथा फूट के बीज बोए जिनका कटु फल देश तथा जाति की चिन्माल तक भोगना पड़ा। एक स्थान पर श्री स्मिथ ने भी लिखा है—'यह छोटे-छोटे राज्य शिशुओं की भाँति छोटी-छोटी बातों पर झगड़ना खूब जानते थे।'

'पृथ्वीराज रासो' के महाराज पृथ्वीराज का जीवन युद्ध अथवा शिविर का जीवन है। पृथ्वीराज का समस्त जीवन युद्धों में ही व्यतीत हुआ। राजपूतों का आत्म सम्मान, वंश परम्परा, कीर्ति तथा धर्म के नाम पर युद्ध करना जीवन का एक प्रमुख अंग था। महाराज पृथ्वीराज भी शुद्ध क्षत्रि कुल में उत्पन्न हुए थे। अतः उनमें क्षत्रियता के संपूर्ण गुण होना स्वाभाविक ही था। 'पृथ्वीराज रासो' ग्रन्थ को अद्योपान्त अध्ययन के उपरान्त यह स्पष्ट हो जाता है कि लगभग सभी समयों (अध्यायों) में युद्ध की भेरी बजती है। पृथ्वीराज ने अपनी ११ वर्ष की अल्प आयु में अपने पिता के सम्मान की रक्षा हेतु इष्ट का स्मरण कर खड्ग धारण कर मांडोवर के राजा नाहरराय को परास्त किया था। दिल्ली-अजमेर के अन्तिम हिन्दू शासक सम्राट पृथ्वीराज ने अपने ४३ वर्ष के छोटे से जीवन में छोटे-मोटे ४५ युद्धों के प्रतिदान किए। बहुतांश में वह स्वयं थे और अनेक युद्धों में उसके सामन्त गण।

रासो के युद्धों को हम संक्षेप में इस प्रकार विभाजित कर सकते हैं—

- ( १ ) चौहान पृथ्वीराज तथा गजनीपति शाह शहाबुद्दीन गौरी।
- ( २ ) चौहान पृथ्वीराज तथा कान्यकुब्जेश्वर जयचन्द।
- ( ३ ) चौहान पृथ्वीराज तथा गुर्जेश्वर भीमदेव।
- ( ४ ) चौहान पृथ्वीराज तथा मेवाती मुंगल।
- ( ५ ) अन्य।

डॉ० शम्भूनाथ सिंह ने एक स्थान पर रासो के युद्धों के विषय में लिखा है कि 'रासो' की पढ़ने पर इतिहास के ये सभी भाव सत्य आँखों के सामने मूर्त हो जाते हैं। उसके युद्धों में अधिकांश व्यसन युद्ध ही हैं। पृथ्वीराज विवाह के लिए या यों भी अकारण किसी दर आक्रमण कर देता था। उस पर भी किसी बात का बदला लेने के लिए आक्रमण होते थे।

महाबुद्धीन के आक्रमणों का तांता कभी टूटता ही नहीं था और आश्चर्य यह कि वह बार-बार पकड़ कर छोड़ दिया जाता था । ..... इस प्रकार रासो में युद्ध आवश्यकता ही नहीं मामलों-गजाओं के ध्वजन के रूप में भी वर्णित हुए हैं । उसमें इतने युद्धों का वर्णन हुआ है कि सबको एक साथ स्मरण भी नहीं रखा जा सकता ।"

यही पर पृथ्वीराज द्वारा लड़े गए युद्धों का उल्लेख मात्र करना अभीष्ट था । अन्य स्थानों पर उनके विषय में स्वतंत्र रूप से विस्तार के साथ विचार किया जावेगा । उपर्युक्त विवेचन से इतना अवश्य स्पष्ट हो जाता है कि पृथ्वीराज चौहान की सम्पूर्ण आयु युद्ध करते हुए ही व्यतीत हुई ।

मृत्यु—रासो समय ६६ 'लड़ाईरो प्रस्ताव' में कवि ने उल्लेख किया है कि जब महाराज पृथ्वीराज ने महाबुद्धीन गोरी के आक्रमण की सूचना प्राप्त की तो चन्द वरदायी को काँगड़ा दुर्ग के हाट्टनी हमीर को मना लाने तथा सहायतार्थ बुला लाने के लिए भेजा । कवि चन्द ने हमीर को अनेक प्रकार से समझाने का प्रयत्न किया । अन्त में दोनों ( हमीर तथा चन्द ) जालन्ध—देवी के मंदिर में गए तथा देवी की स्तुति की । धूर्त हमीर ने कवि चन्द को तो मंदिर में बंद कर दिया तथा स्वयं गोरी की सहायतार्थ चल पड़ा । उस युद्ध में पृथ्वीराज की पराजय हुई । पृथ्वीराज को पकड़ कर गोरी गजनी ले गया तथा वीरभद्र ने युद्ध का अन्त देगकर कवि चन्द के सम्मुख उपस्थित होकर उपरोक्त घटना कह सुनाई । इस शोकमय घटना को सुनकर कवि मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा । वीरभद्र ने कवि की मूर्छा दूर की तथा उसे प्रबोधा । इस बार कवि कहने लगा कि मैं राजा के बाल स्नेह तथा सामन्तों का प्रेम बार-बार भ्रमण आने के कारण इतना अधिक व्याकुल हो रहा हूं । वीरभद्र ने चन्द को अनेक प्रकार से समझाया तथा कहा, हे कवि चन्द ! अब तुम अपने दुःख का परित्याग करो तथा अपने महाराज पृथ्वीराज के उद्धार का कोई उपाय सोचो । यह शरीर तो नाशवान है, शोक न करके अपने कर्तव्य का पालन करो ।

समय ६७ में कवि चन्द महाराज पृथ्वीराज के उद्धार के लिए प्रयत्न करता हुआ दृष्टिगोचर होता है । कवि वीरभद्र से कहता है कि, हे वीर ! मंदिर के वज्र सदृश्य कपाट तो बन्द है, मैं कैसे निकलूं ।' यह सुनते ही घनघोर शब्द के साथ द्वार खुल गए तथा कवि चन्द मुक्त हो गया । कवि मुक्त होकर दिल्ली की ओर चल दिया । दिल्ली की दुर्दशा देखकर उसे अत्यन्त दुःख हुआ, नगर निवासी महाराज के वियोग में सौ-सौ आँसू रो रहे थे । कवि ने राजा के उद्धार का दृढ़ निश्चय कर योग धारण कर लिया । योगी वेप में अपनी धुन में मस्त, कवि चन्द श्रुधा-पिपासा की ओर ध्यान न करके गजनी की ओर चल पड़ा, मार्ग के अनेकानेक कष्टों को देखकर वह बलान्त हो उठा तब उसने देवी की बन्दना की, देवी ने उसे दर्शन

देकर सहायता करने का वचन दिया। मार्ग के अनेकानेक कष्टों की सहन करता हुआ, कवि अन्तः गजनी पहुँचा तथा शाहबुद्दीन के दरबार के द्वारपाल के सामने जा खड़ा हुआ। द्वारपाल कवि को पहचान गया। कवि भी अपने गुप्त भेष का भंडाफोड़ होता देखकर वहाँ से चला आया। एक दिन तीसरे पहर में शाहबुद्दीन गोरी हृदय खेलने के लिए अपने साजवाज से निकला। कवि ने शाह को देखकर जोर से विरदावलि पढ़कर हाथ उठा कर आर्शीवाद दिया। शाह का ध्यान उस ओर आकृष्ट हुआ तथा परिचय जानने के लिए उसे पास बुला लिया। उसे ठहराने का भार हृन्शी पीरोज खाँ को सौंपा गया। कवि का भीम खत्री के यहाँ रहने के लिए स्थान दिया गया, वहाँ उसने अपनी देवी का इवन पूजन कर देवी का प्रमद कर मन वांछित वर प्राप्त किया कि सुलतान शाह गोरी पृथ्वीराज तथा तुम (कविचन्द) एक साथ ही मृत्यु को प्राप्त होगे। दूसरे दिन प्रातःकाल दरबार में सुलतान ने कवि को बुलाने की इच्छा प्रगट करते हुए, हुजव खाँ को उसे दरबार में उपस्थित करने की आज्ञा दी। शाह की आज्ञा सुनकर तातार खाँ ने ऐसा करने के लिए मना किया तथा शाह को अनेक प्रकार से समझाया किन्तु शाह ने उसकी एक न सुनी और कवि को दरबार में बुला लिया गया। नीतिज्ञ चन्द ने शाह गोरी को अपनी कुशल वार्ता से मोहित कर लिया तथा कहा कि पृथ्वीराज ने मुझे सात लोहे के तवे वेधनों का अपना कौशल दिखाने का वचन दिया था, शाह यह सुन कर कहने लगा तुम्हारा नरेश तो अब नेत्रहीन और क्षीण वाणी वाला हो गया है। अब उसमें वह पौरुष कहाँ कि यह सब कृत्य कर सके। चन्द ने कहा कि यदि आज्ञा हो तो मैं अपने राजा से एक बार पूछ तो लूँ। शाह इस बात पर सहमत हो गया तथा कवि को पृथ्वीराज से मिलने की आज्ञा दे दी किन्तु गोरी ने अपने सैनिकों को आदेश दिया कि कवि चन्द तथा बन्दी पृथ्वीराज, दोनों को दस-दस हाथ की दूरी पर रखवा जावे। चन्द ने राजा पृथ्वीराज को आर्शीवाद दिया, परन्तु उन्होंने उसे सिर झुकाया तब कवि ने उसकी विरदावलि पढ़ी जिसे सुनकर राजा ने उसे अनेक प्रकार से धिक्कारा। दुःख की अधिकता के कारण कवि के नेत्रों में पानी आ गया तथा गला भर आया किन्तु राजा ने उसे नमन न किया, तब चन्द इस प्रकार कहने लगा, कि सम्भरिष्वनी मुझे जो आपने वचन दिया था, उसे पूरा कीजिए, राजा ने कहा कि अब मुझमें उसे पूर्ण करने की शक्ति नहीं है तब कवि ने कहा कि मैं शाह से बुलवाऊँगा आप वचन दीजिए राजा ने इस बात पर शंका प्रकट की परन्तु चन्द ने उन्हें प्रवोधते हुए वचन ले लिया। इसके उपरान्त हुजव खाँ कवि को लेकर वापिस आ गया। वह पृथ्वीराज तथा चन्द के शब्दों का मर्म न समझ सका। कवि ने शाह से आकर कहा कि यदि आप आज्ञा देना स्वीकार करें तो राजा पृथ्वीराज अपने वचन का पूर्ण करना स्वीकार करते हैं। तातारखाँ ने चन्द को डपटा कि क्या निरर्थक बात करता है। चन्द ने फिर कहा कि यदि शाह गोरी वचन दे तो प्रत्यक्ष तमाशा देख लो, इतना सुनकर गोरी आज्ञा देने के लिए सहमत हो गया तथा लोहे के घड़ियाल सजाये जाने लगे, यह बौत्तुक देखने के लिए गजनी के सब नागरिकों की अपार भीड़ एकत्र होने लगी। तातार खाँ ने कहा कि हे शाह आज ज़ुमेरात का दिन है तथा मैंने रात्रि में अशुभ स्वप्न देखा है। अतः आज

यह कृत्य न होने दीजिए किन्तु शाह न माना और कहा कि मैं अपने दिए हुए वचन से नहीं पनट सकता । यह मुनकर तातार खां खीज कर दरबार से उठकर चला गया । गोरी कवि चन्द ने बोना कि मैं क्रमान (आजा) दूंगा, तुम राजा का कौशल दिखाओ । यह मुनकर चन्द पृथ्वीराज को लेकर रंगभूमि में आ गया । उस दिन सम्बत, मास, पक्ष तथा घड़ी इस प्रकार थे—

संवत् अष्टावन माघ मास, अनसित्त पण्य दसमी सुनास ।

दिन घटिय अंत पल आदि जात, तारक मूल त्रिव तिथ्य पास ॥ ४६१ ॥

हृजाव गो ने पृथ्वीराज को रंगभूमि में कई कमाने दी, जो वीर पृथ्वीराज के खींचते ही टूट गई, तब मोरघाह की कमान दी गई, बिलन्दी खां ने उसका कमान खींचना देखकर कहा कि यदि घड़ियाल फोड़ दिए तो शाह प्रसन्न होकर बहुत कुछ देगा । चन्द ने अवसर देखकर शाह ने प्रार्थना की कि शाह गोरी पृथ्वीराज को उसकी स्वयं की कमान दिलवाई जावे, शाह की आज्ञा से हृजाव खां ने ऐसा ही किया । उस समय तातार खां ने शाह को यह खेल देखने के लिए फिर एक बार मना किया, किन्तु शाह ने उसकी बात पर ध्यान न दिया । अपना धनुष पाकर पृथ्वीराज प्रसन्न हो गए, निसुरत्त खां ने उसके हाथ में तरकस भी दे दिया । राजा ने बाण का संधान किया, तब चन्द ने ज्ञातोपदेश करते हुए उन्हें दृढ़ता दी तथा नाना प्रकार से उत्कर्ष देकर समझाया कि हे सम्भरि नरेण, सात को वेधने की अपेक्षा एक का वेधन कीजिए तथा एक ही बाण से अपना पराक्रम दिखाएं । वस इतना करने मात्र से आपकी कीर्ति युग-युगों तक चलती रहेगी । कवि के गूढ़ संकेत पाकर पृथ्वीराज ने शाह गोरी के समक्ष अपना मूढ़ कर लिया—

गिरनारा लगि गीड़, देस जीता जंगल थल ।

लंका गढ़ जित्तयो, समद जित्ती उर सलियल ।

हयिनावर जित्तयो, सीम कंधारा बंधिय ।

मयुरापुर जित्तयो, एक मुप धार न सधिय ।

प्रियराज-मुनवि संनरिधनी, सुहिर्नही मम जानि सुप ।

इमि जर्पे चन्द वरदिया, सजि जालंधर देस मुप ॥ छं० ५२५ ॥

महाराज पृथ्वीराज सावधान होकर खड़े हो गए, कवि ने डमरू बजाकर शाह से आज्ञा देने की प्रार्थना की तथा महाराज पृथ्वीराज की विरुद्धावलि पढ़नी आरम्भ की । शाह के मूढ़ ने प्रदत्त परमान निकलते ही पृथ्वीराज ने अपना बाण संधाना, दूसरे पर उसे लक्ष पर अक्षय करके दृढ़ करते हुए प्रत्यंघ्रा को कान तक खींच लिया, तीसरा परमान प्राप्त होते ही राजा का शब्दवेधी बाण मुलतान के दांत, जीभ, तालू तोड़ता हुआ सिर के टुकड़े-टुकड़े करके पार हो गया तथा उसका घट नीचे गिर पड़ा—

१. पृथ्वीराज रामो, ना० प्र० स० फासो, छं० ४६१, स० ६७ ।

२. घरी, छं० ५२५, स० ६७ ।

भयौ एक फुरमान, वान जोगिनिपुर संधी ।  
सोइ सखद अरु वान, अग्र अविवल करि दधी ।  
भयौ वियौ फुरमान, तानि रप्यौ श्रवणतरि ।  
तिथी भयौ अन भयौ, परवौ पति साहि धरतरि ।

लं दसन रसन तालू सघन, सीस फट्टि दह दिसि गवन ।

सुरतान पर्यौ पां पुष्करै, भयौ चन्द राजन मरन ॥ ५४९ ॥<sup>१</sup>

शाह के धराशायी होते ही कवि चन्द ने महाराज पृथ्वीराज को योगवल द्वारा प्राण त्यागने की प्रार्थना की परन्तु उन्होंने ऐसा कर सकने में असमर्थता प्रकट की, इसी समय गोरी के दरबार में इन दोनों को, मारने के लिए चारों ओर से मलेच्छ दौड़ पड़े । तत्काल ही कवि चन्द ने अपनी जटाओं में छिपी हुई छुरी निकाल कर अपना सिर अलग कर लिया और छुरी महाराज पृथ्वीराज की ओर बढ़ा दी जिससे उन्होंने भी अपना प्राणान्त कर लिया—

कहे पान तत्तार, भट्ट करि टूक रज्ज सम ।

मैं द्विग देषत कहि भट्ट, दुष्ट देखिय काल भ्रम ।

धरी साहि अब गौरि, विन सहाव चन लगि ।

चन्द राज वर घेरि, लोह छुट्टे न अग लगि ।

छुरिका कविद जट मक्ष्म थी, कट्टि भट्ट कटि सीस अप ।

ता पछै चन्द वरदाय नै, दइय राज वर हयथ नृप ॥ छं० ५५४ ॥

भूत वृत्त मन वृत्तयो, भवछित पढ़ि कविचन्द ।

गयो श्रग्य जीवत करि, तजिय सुवर ग्रह दइ ॥ छं० ५५५ ॥

मरन चन्द वरदाइ, राज पुनि सुनिग सहि हनि ।

पुहुपजलि असमान, सीस छोड़ी सु देवतनि ।

मेच्छ अवद्धित धरनि, धरनि सब तीय सोह सिग ।

तिनहि तिनह संजोति, जोति जोतिह तपतिग ।

रासो असम नव रस सरस, चन्द छंद किय अमिय सम ।

शृंगार वीर करुना विमछ, भय अद्भुत हसंत सम ॥ ५५६ ॥<sup>२</sup>

इस प्रकार वीर शिरोमणि पृथ्वीराज ने अपने प्रवल शत्रु शाह गोरी से कवि चन्द चरदायी की सहायता से बदला ले लिया तथा बाद में अपने भी प्राण उत्सर्ग कर दिए, उनकी कीर्ति निःसंदेह सूर्य और चन्द्र के साथ-साथ चलती रहेगी । भारत भूमि पृथ्वीराज जैसे

१. पृथ्वीराज रासो, नां० प्र० स० काशी, छं० ५४९, स० ६७ ।

२. वही, छं० ५५४-५६, स० ६७ ।

रासो के कवि श्री सीतारामजी रासो । रासो के अन्य संस्करण भी उपर्युक्त कथन का सत्यन  
बतलाते हैं ।

दानक कुल छात्रोय नाम , हुंदा रूपस बर ।  
निद्रि मु जोत प्रविराज मुर सांमत अस्ति भर ।  
जोत जोति लचिन्द , रूप संजोगि भोगि धम ।  
इना दोह जपन , इक दोहे समाय धम ।  
नम्य कय्य होई निमये , जोग भोग राजन लहिय ।  
दर्याग बगु अरि दल मलन , तानु किति चंदह कहिय ॥ छं० ९२ ।<sup>१</sup>

प्रसिद्ध इतिहासग्रन्थ आधा जी पृथ्वीराज और शाहबुद्दीन की मृत्यु को अर्नैतिहासिक  
दृष्टि के अन्तर्गत विवक्षित है कि—यह (रासो की कथा) सम्पूर्ण कथन भी ऐतिहासिक दृष्टि से  
सही नहीं है, क्योंकि जहाबुद्दीन की मृत्यु पृथ्वीराज के हाथ से वि० सं० १२४९ में नहीं  
हुई किन्तु वि० सं० १२६३ ई. में मुदि ३ की गवखरों के हाथ से हुई थी । जब गवखरों को  
समाप्त कर खाशेर ने गजनी जा रहा था, उस समय धमेक के पास नदी के किनारे वाग में  
समाप्त पड़ा हुआ, वह मारा गया । पृथ्वीराज के पीछे भी उसका पुत्र गोविन्दराज दिल्ली  
की ओर जा नहीं, किन्तु अजमेर की गद्दी पर बैठा था, न कि रैणसी ।<sup>२</sup>

रासो में वर्णित पृथ्वीराज की मृत्यु तथा इतिहासकारों द्वारा बताई पृथ्वीराज की  
मृत्यु के विषय में पर्याप्त भेद है । पृथ्वीराज की मृत्यु के विषय में सी० वी० वैद्य लिखते हैं—  
‘पृथ्वीराज का अपना जीवन अन्त करने का रासो वर्णित वृत्तान्त उसकी अर्नैतिहा-  
सिक प्रकृति की परम सीमा है । यह प्रतिशोध की प्रचलित गाथा है और एक कहानी है  
जो इराक के दक्षिणी नदी पर नागरों द्वारा मुहम्मद गोरी की हत्या का सत्य विवरण विस्मृत  
जाय तो परम सत्य की सीमा । पृथ्वीराज का मृत्यु, पानीपत में जनकीजी मिथिया और  
आदिलशाह की मृत्यु गद्दर अभी तक रहस्य गभित बनी हुई है । ताज और तबकात के  
विषय में भिन्नभिन्न मत हैं । दूसरे ग्रन्थ में इनका मात्र उल्लेख है कि ‘पृथ्वीरा अपने हाथी से  
दुख, एक गीत पर बैठ सरपट भागा, परन्तु सरमुती के निकट पकड़ा गया और नरक भेज  
दिया गया । ताज ( पृ० १५५ ) में लिखा है कि ‘अजमेर’ का राय बंदी बना लिया  
गया, परन्तु उसे जीवित दात दिया गया । अजमेर पहुंचकर ( जहां उसे ले जाया गया था )  
उसका पक्षपात करता पकड़ा गया । बिना कि संकेत लक्षित है ) इस लिए उसके शिरो-  
काटन की आज्ञा दी गई और एक समर्थक ने उस कमीने बंदी का शिर उसके शरीर में  
अन्त कर दिया । ऐसे समर्थकों के दृष्टि निर्णय करना कठिन है कि पृथ्वीराज की मृत्यु किस

१. पृथ्वीराज रासो भा० प्र० म० काशी छं० ९२, स० १ ।

२. श्री जीता जी पृथ्वीराज रासो का निर्माण काल, कोशोनस्य स्मारक संग्रह ।

प्रकार हुई, परन्तु हम यह विश्वास करना चाहेंगे कि पृथ्वीराज सरस्वती पर बन्दी हुए और तुरन्त ही उन्हें मार डाला गया जैसा कि तबकात में लिखा है।' फारसी इतिहासकारों के मत को पुष्ट करने वाले डॉ० ए० बी० एम० हवीबुल्ला अपनी पुस्तक 'दि फाउंडेशन ऑफ मुस्लिम रूल इन इंडिया' में लिखते हैं—“फरिश्ता के अनुसार अफगान, लिखजी और खुरासानी नायकों की अवहेलना के कारण युद्ध में पराजित होना पड़ा था और गजनी पहुंच कर उसने उसकी तीव्र निंदा की दूसरे वर्ष वह एक लाख बीस हजार सवारों के साथ लौटा और एक बार फिर तराई के मैदान में अपने प्रतिद्वन्दी चौहान से भिड़ा। सम्भवतः अपनी तैयारियां पूरी करने के लिए तथा शत्रु को असावधान रखने के लिए ही उसने किवामुलमुल्क को लाहौर से पृथ्वीराज के पास अपनी आधीनता स्वीकार कराने के लिए भेजा। आज्ञा के अनुसार ललकार और उपेक्षा गर्भित उत्तर आया। अन्ततः जब युद्ध का मोर्चा छिड़ा तब पृथ्वीराज की सेना में अति विश्वासनीय सूत्र से ( फरिश्ता, भाग १, पृ० ५८ ) तीन लाख मनुष्य थे। मुईजुद्दीन ने अपनी सेना के पांच भाग किए जिनमें से चार ने शत्रु को चारों ओर से युद्ध में संलग्न कर लिया। दिन ढलने पर रोक रखे गये पांचवें भाग ने थके हुए शत्रु पर आक्रमण किया और इस युक्ति द्वारा संघर्ष का निर्णय कर डाला। खाँदिराय (गोविन्दराय) जिसने पिछले वर्ष के युद्ध में मुईजुद्दीन को आहत किया था, मारा गया और निकल भागने के प्रयत्न में पृथ्वीराज को सरसुती के निकट बन्दी बना लिया गया ( मिनहाज, पृ० १२० ) हसन निजामी के अनुसार उसे अजमेर ले जाया गया जहाँ कुछ समय के उपरान्त विश्वासघात का अपराधी पाकर उसे मृत्यु दण्ड दिया गया ( ताजुल-मबासिर, पत्र ४४ व ) मिनहाज का कथन है कि उसे तुरन्त मार डाला गया था। चन्द बरदायी को निराधार कहानी कि पृथ्वीराज ने किस प्रकार नेत्र विहीन करके गजनी के बन्दीगृह में रखे जाने पर भी उसकी सहायता से अपनी मृत्यु से पूर्व मुईजुद्दीन का वध कर डाला—देखिए पृथ्वीराज रासो भाग ६ तथा राज दर्शिनी पत्र ४९ अ। उसके कुछ सिक्कों पर संस्कृत के अतिरिक्त 'हम्मीर' मन्त्र उत्कीर्ण मिलता है जो इस बात का प्रदर्शक है कि उसने मुईजुद्दीन की आधीनता स्वीकार कर ली थी ( टामस क्रानिकल्स, पृ० १२, नं० १५ )।”

तालउल मबासिर के लेखक द्वारा प्रथम पृथ्वीराज को प्राणदान देकर उसके पश्चात् विद्रोही मान कर मस्तक विछिन्न कराने का उल्लेख स्पष्टतः यवन अत्याचारों की छिपाने का प्रयास जान पड़ता है। पृथ्वीराज के युद्ध में मारे जाने का प्रमाण अधिक विश्वासनीय है।

‘तबकात’ का रचयिता भी युद्ध से भागते पिथौरा को कत्ल करने का विवरण पक्षपातपूर्ण देता है। पृथ्वीराज जैसा पराक्रमी वीर रण प्रांगण में पीठ दिखाकर प्राण रक्षा का प्रयास करे, असंगत सा प्रतीत होता है। ‘तारीख फरिश्ता’ का प्रणेता जिसने ‘तबकात’ की

१. हिस्ट्री ऑफ मेडिअल हिन्दू इंडिया, भाग ३, अध्याय २०, पृ० ३८५, सन् १९२६।
२. डॉ० ए० बी० एम० हवीबुल्ला, दि फाउंडेशन ऑफ मुस्लिम रूल इन इंडिया, पृ० ५८-५९, सितम्बर, १९४५।



आज में अन्य की रचना की, हिजरी सन् ५८२, वि० सं० १२४३ में शाह की बुरी तरह शर होना स्वीकार करता है। शाह के पकड़े जाने के विवरण को गुप्त रखकर वह पृथ्वीराज के नामान्न मन्टेराव ( गोविन्दराव ) द्वारा विशेष घायल हो, एक खिलजी प्यादे द्वारा घोंड़े पर उठाकर ले जायना लिखा है। पृथ्वीराज की सेना बाहुत्य के साथ वह उसमें १५० राजाओं की उपस्थिति को भी स्वीकार करता है। रासोकार ने भी पृथ्वीराज के सामन्तों की मर्यादा १०६ लिखी है। शाह गोरी द्वारा घोखा भी दिया गया था कि अपने भाई से आज्ञा प्राप्त कर सधि कर सकता हूँ, अतः राजपूत सेना असावधान रही। प्रातः काल होते ही पवन की मेला ने आगे तथा पीछे दोनों ओर से भयंकर आक्रमण किया, जिससे दिल्ली का शाहिक मन्टेराव ( गोविन्दराव ) तथा अन्य कितने ही राजा मारे गए तथा राय पिथौरा सरस्वती की सीमा में पकड़ा जा कर मुलतान की आज्ञा से कदल कर दिया गया।

स्पष्टतः देखा जा सकता है कि सभी मुसलमान तवारीखकारों का विवरण पक्षपातपूर्ण है। एक दो स्थानों पर गोरी की पराजय को अवश्य ही दबी जवान में स्वीकार किया गया है तथा वीर पृथ्वीराज को घायल अवस्था में बन्दी बनाने के कृतघ्न कार्य को भी वह नहीं छिपा सके हैं। पृथ्वीराज के पराक्रम तथा उसकी विशाल बाहनी का भी उन्होंने उल्लेख किया है किन्तु पृथ्वीराज की वीरता को अधिक महत्व न देकर यवनों का ही अधिक गुणगान किया गया है।

‘हम्मीर महाकाव्य’ के लेखक ने अन्तिम युद्ध का विवरण इस प्रकार प्रस्तुत किया है ‘मुसलमानों ने पृथ्वीराज के अश्वशाला के अधिकारी को अपनी ओर मिलाकर युद्धार्थ नूतक घोड़े को तैयार कराया। युद्ध छिड़ने पर रणवाद्य बजते ही वह नृत्य करने लगा जिससे पृथ्वीराज तब पर आक्रमण करने में असमर्थ हो, पकड़ा जाकर मारा गया।’ यह विवरण भी अधिक तर्क मंगत प्रतीत नहीं होता है क्योंकि तत्कालीन युद्धों में अश्व एवं अस्त्र ही योद्धाओं के साथी होते थे। ऐसी स्थिति में नूतक घोड़ों को न पहचान पाना बड़ा अजीब सा लगता है। युद्ध भी हो ‘हम्मीर महाकाव्य’ का कथन भी प्रामाणिक नहीं माना जा सकता है।

पृथ्वीराज चौहान की मृत्यु का प्रसंग अत्यन्त विवादग्रस्त होने के कारण निश्चितता निर्धारित करना बड़ा ही कठिन मान्य होता है, फिर भी हम तो यही कहना चाहेंगे कि पृथ्वीराज मन्वेदी के तट पर बन्दी बना लिया गया तथा तुरन्त ही मार डाला गया, जैसा ‘शिवदान’ में लिखा है।

साधनराइ—‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार चौहान वंश परम्परा में ३३ वीं पीढ़ी में राजा हरिहरराय चौहान के उत्तरागत उनका पुत्र बालमनराइ उनका उत्तराधिकारी हुआ।<sup>१</sup> यदि ने इनका विशेष विवरण प्रस्तुत नहीं किया है। रा० ए० सो० लंदन की रासो की

प्रति भी उपर्युक्त कथन का समर्थन करती है। किन्तु नाम में थोड़ा सा अन्तर है। इस प्रति में वालन्नराई के स्थान पर 'वालणमराई' लिखा है। सम्भव है लिपिकारों की असावधानी के कारण ऐसा हो गया हो। वैसे तात्त्विक दृष्टि से दोनों नामों में कोई विशेष अन्तर नहीं है। रासो की अन्य प्रतियाँ जैसे धारणोज की प्रति, बीकानेर की एक लक्ष अधर वाली प्रति, तथा साहित्य संस्थान, उदयपुर वाली रासो की प्रति इनके विषय में कोई सूचना प्रस्तुत नहीं करती हैं। शिलालेख एवं संस्कृत-ग्रन्थ जिनमें चौहानों की वंशावलि दी हुई है, इनके विषय में सर्वथा मौन है।

पंडित सदाशिव दीक्षित के अनुसार इनका नाम चालुन्नरायण या तथा वह इन्हें वीर चामुण्डराय को एक ही व्यक्ति मानते हुए लिखते हैं कि—'उपलब्ध सभी काव्यों में इसका नाम चामुण्ड अथवा चामुण्डराज कहा गया है। रासो में उल्लिखित चालुन्नराय भी चामुण्डराज का ही रूपान्तर है। अवन्ती भूपाल भोज के द्वारा वीरराय के वध किये जाने पर चामुण्डराज ने शासन सूत्र को अपने हाथ में ले लिया था।'

पता नहीं पंडित जी ने 'चालुन्नराय' किस प्रति में लिखा हुआ देख लिया। दीक्षित जी का मत निश्चित ही कल्पना पर आधारित होने के कारण ग्राह्य नहीं है। इनकी ऐतिहासिकता संदिग्ध है।

विन्दसूर अथवा विन्दसार—'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार चौहानों की वंशपरम्परा में ८वीं पीढ़ी में राजा विन्दसार हुए।<sup>१</sup> वीरसिंह के उपरान्त यही राजगद्दी के उत्तराधिकारी हुए। रासोकार ने इनका इससे अधिक विवरण प्रस्तुत नहीं किया है। रा० ए० सो० लन्दन की प्रति के अनुसार भी राजा विन्दसार, राजा वीरसिंह के उपरान्त ही गद्दी पर बैठे थे।<sup>२</sup> किन्तु धारणोज की प्रति तथा साहित्य संस्थान उदयपुर से प्रकाशित रासो इनके विषय में सर्वथा मौन है। शिलालेख, पृथ्वीराजविजय महाकाव्य तथा प्रबंध कोष में विन्दसूर के स्थान पर विग्रहराज नाम मिलता है।<sup>३</sup> संभव है विग्रहराज तथा रासो को विन्दसार एक ही व्यक्ति हो। किन्तु सामग्री अभाव के कारण निश्चित मत व्यक्त करना असंभव है।

विबुधसिंह—'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार चौहान वंशावली की २५ वी पीढ़ी में

१. रासो की हस्तलिखित एवं अप्रकाशित प्रति, पृ० १०।
२. देखिए, प्रस्तुत शोध प्रबन्ध, परिशिष्ट भाग।
३. पं० सदाशिव दीक्षित, रासो समीक्षा, पृ० ११९।
४. पृथ्वीराज रासो, ना० प्र० स० काशी, छं० २८५, स० १।
५. रासो की हस्तलिखित एवं अप्रकाशित प्रति, पृ० १०।
६. देखिए, प्रस्तुत शोध प्रबन्ध, परिशिष्ट भाग।

राजा छर्मनार के उपरान्त विबुधसिंह चौहान उत्पन्न हुआ ।<sup>१</sup> रासोकार इनके विषय में केवल उपर्युक्त विवरण देने के अनिरित्त पूर्णतया मौन है । रा० ए० सो० लंदन की रासो की प्रति उपर्युक्त कथन का समर्थन करती है ।<sup>२</sup> किन्तु धारणोज की प्रति, बीकानेर की एक लक्ष अक्षर वाली प्रति तथा साहित्य संस्थान, उदयपुर से प्रकाशित रासो की प्रति में इनका नामोल्लेख नहीं हुआ है । इतना ही नहीं, जिलालेखादि एवं संस्कृत के विभिन्न ग्रन्थ भी इनके विषय में मौन है ।

पंडित सदाशिव दीक्षित एक स्थान पर इनके विषय में लिखते हैं—“इसका नाम शिला-नेम में ‘वाक्पति’ तथा पृथ्वीराज विजय में ‘वाक्पतिराज’ बतलाया गया है, प्रबंधकोप में इसका नाम वापल देव है । हम्मीर महाकाव्य तथा सुर्जन-चरित में इसका नाम क्रमशः बल्लभराज तथा बल्लभ कहा गया है, और रासो में इसका स्मरण विबुधसिंह, इस नाम से किया गया है । अतः चाहमान वंश में नामों की अनेकता में भी एक विशेषता है ।” पंडित जी अनेकता में एक रूपता देखने के अभ्यस्त मान्य होते हैं । पता नहीं वह ऐसी निराधार कल्पना कैसे कर लेते हैं ।

वीरसिंह—‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार चौहान वंश में राजा रामसिंह के उपरान्त मातवी पीढ़ी में राजा वीरसिंह हुए ।<sup>३</sup> वंशवृक्ष का उल्लेख करते हुए कवि ने नाम मात्र का संकेत प्रस्तुत किया है । रा० ए० सो० लंदन की प्रति के अनुसार वीरसिंह अजयसिंह के उपरान्त ही गद्दी पर बैठे थे । इस प्रति में रामसिंह नामक किसी भी राजा का उल्लेख नहीं किया गया है ।<sup>४</sup> साहित्य संस्थान उदयपुर से प्रकाशित रासो एवं धारणोज की रासो की न्युतम प्रति इनके विषय में सर्वथा मौन है ।

एक स्थान पर पंडित सदाशिव दीक्षित वीरसिंह को अजयसिंह का विशेषण मात्र मानते हुए इनके अस्तित्व में संदेह करते हुए लिखते हैं—“श्री ओझा अपने नक्शे में रामसिंह और वीरसिंह इन दो ओर नामों का रासो की तालिका में समावेश करते हैं, परन्तु—

सुअ अजयसिंघ सिंघह नुराय ।

नर वीरसिंह संग्राम ताय ॥

इस अध्यायी में राय और योगमित्र के पूर्व मुन, मुन्न आदि पदों के प्रयोग न होने ने

१. पृथ्वीराज रासो, ना० प्र० म० काशी, छं० २१०, स० १ ।

२. रासो की हस्तलिखित एवं अप्रकाशित प्रति, पृ० १० ।

३. पं० सदाशिव दीक्षित, रासो समीक्षा, पृ० ११८ ।

४. पृथ्वीराज रासो, ना० प्र० म० काशी, छं० २८५, स० १ ।

५. रासो की हस्तलिखित एवं अप्रकाशित प्रति, पृ० १० ।

इनकी पृथक् सत्ता न तो तर्क की कसौटी पर सिद्ध होती है और न शिना नेत्र आदि की भित्ति पर ही। ये पद अजय सिंह के विशेषण हैं।”

**भोलाराय (भीमदेव) चालुक्य**—गुर्जरेश्वर भीमदेव की सेना में अनेक गढ़पति रहा करते थे। सिन्ध तक के जहाजी वेड़े पर उसका अधिकार था तथा धारावाहक तक उसकी सैनिक छावनियां फैली हुई थीं। अमरसिंह शेवड़ा नामक साधु उसकी सेवा में रहता था। वह मंत्रों द्वारा स्त्री-पुरुष तथा देवादि को वश में करना जानता था। उसने ब्राह्मणों के अनेक बार भक्तक मुद्रा दिए थे तथा उन्हें देशनिष्कासित कर दिया था। आवू के परमार जैतसी के एक पुत्र सलख राज तथा एक पुत्री इच्छनी कुमारी थी। भीमदेव ने सुन्दरी इच्छनीकुमारी से विवाह की इच्छा प्रकट की। भोलाराय बिना सत्य-असत्य का विवेक कर राजकुमारी इच्छनी के रूप की बातें सुना करता था। यह रोग उसका इतना भीषण हो गया कि राजकुमारी इच्छनी स्वप्न में भी दिखाई देने लगी। अन्ततत्त्वा इच्छनी की आकांक्षा से उसने अपने मंत्री अमरसिंह को आवूराज के पास भेज ही दिया, किन्तु राजकुमारी की मगाई पहले ही चौहान पृथ्वीराज के साथ तय हो चुकी थी। भोलाराय के प्रतिनिधि को ज्ञात होने पर, उसने कहा ‘हे पर्वत पति ! भोलावीर इच्छनी को भूल नहीं सकता, वह तुममें कन्या की माँग करता है। यदि उसकी माँग को ठुकरा कर राजकुमारी इच्छनी का विवाह चौहान में कर दोगे तो निश्चय ही वह तुम्हें आवू से बाहर निकाल देगा। उसके लिए परमारों में युद्ध करना उतना ही सरल है जितना वीर अर्जुन के लिए किसी तुच्छ से युद्ध करना या -’ सलख ने भीमदेव के प्रतिनिधि की बातें शांति पूर्वक सुनी तथा पाँच दिन तक बहुत आदर-सत्कार करके अपने यहाँ रखा। अन्त में मंत्रियों से मंत्रणा कर उसने उत्तर दिया—‘यदि भोला भीम मेरे राज्य की कामना करता तो निश्चय ही मैं उसे स्वेच्छा से दे देता, किन्तु उसने जैन धर्म अपना लिया है, इसी प्रकार के पाखण्ड से उसने इतनी भूमि प्राप्त की है, किन्तु उत्तर दिशा के शत्रु की शक्ति का भान नहीं है। ‘जैतसी ने भी कहा—‘मरुभूमि में तो लाख योद्धा निवास करते हैं, आवू के अंतर्गत १८ राज्य हैं तथा सम्भरपति चौहान सहायतार्थ मेरे साथ है और यदि इन्होंने भी मेरी रक्षा न की तो गोवर्धनधारी श्रीकृष्ण मेरी रक्षा करेंगे।’ उपर्युक्त उत्तर देकर भीमदेव के प्रधान को विदा किया गया।

दूत को विदा करने के उपरान्त आवू पति ने मंत्रणा करके पृथ्वीराज से सहायता माँगने का निश्चय किया तथा एक पत्र में सम्भर पति को लिखा—‘सलख राज की भगिनी तथा जैत की पुत्री को गुर्जरेश्वर भोलाभीम माँगता है और न देने पर आवू को उड़ा देने की धमकी देता है। क्या सिंह का भाग्य गोदड़ के हाथों में आ गया। वह मेरे राज्य सीमा में दिन व दिन लूट करता है मेरी प्रजा दिन पर दिन गरीब होती जा रही है।’ पृथ्वीराज ने परमार का स्वागत किया तथा सलख के साथ ही सहायतार्थ चल दिया। भोलाभीम

उपबृंहित सूचना पाकर अत्यन्त क्रोधित हुआ तथा मंत्रणा करके रण दुन्दुभि वजा दी। चानों दिगाओं में सेनाएँ एकत्र होने लगी। गिरनार का राजा लोहाण कटारी, वीरदेव बाघेला, राय परमार, वीरम का राजा रणिङ्ग जाला, सोढ़ा शाङ्गदेव तथा गंग दाभी आदि सभी दूर वीर उपस्थित हुए। भोलाराय ने अपने मंत्री सहित आवू को चारों ओर से घेर लिया। कई दिनों तक भयंकर युद्ध चलता रहा। अन्ततोगत्वा परमारों की पराजय हुई तथा आवूगढ़ चालुक्यों के हाथ आ गया। भीम जय ध्वजा फहराता हुआ आवू दुर्ग पर चढ़ गया।

इसी बीच शाहू गोरी ने जो ऐसे अवसर की ताक में रहता था रणवाद्य वजा दिए। मंत्रियों के लाय समझने पर भी भोलाराय ने शाहू गोरी को आमन्त्रित कर बुलवाया, किन्तु शाहू ने इससे मिल कर युद्ध न किया। भीमदेव तथा शाहू गोरी दोनों ही ने पृथ्वीराज पर आक्रमण कर दिया। पृथ्वीराज चौहान की सेना दोनों दलों के मध्य ढोल की भाँति पिटने लगी। चौहान ने देवी की आराधना की। रात्रि के समय चौहानों ने चालुक्यों पर आक्रमण कर दिया। यद्यपि चालुक्यों की सेना लोह दुर्ग की भाँति खड़ी थी फिर भी चौहानों की विजय हुई। रात्रि के अन्धकार में ऐसी गड़बड़ी मची कि भीम के योद्धा आपस में ही एक दूसरे को मारने लगे। यद्यपि राजा ने भी युद्ध में भाग लिया तथा अपना बल भी गँवाया, किन्तु फिर भी विवश होकर उसे पीछे हटना पड़ा।

भीमदेव को परास्त करने के उपरान्त चौहान पृथ्वीराज ने थोड़ी सी सेना भीम की गति-विधि पर दृष्टि रखने के लिए छोड़ कर एक विशाल वाहिनी लेकर शाहू गोरी पर आक्रमण कर, उसे भी परास्त किया।'

भीमदेव के काका सारंग देव के सात पुत्र, भीमदेव से कहा सुनी हो जाने के कारण दिल्लीपति पृथ्वीराज चौहान के दरबार में रहने लगे थे। एक बार दरबार में महाभारत का प्रसंग चल रहा था जिसमें प्रतापसिंह चालुक्य का हाथ मूर्छों पर जा पड़ा। चाचा कन्ह ने क्रुपित होकर उसके दो टुकड़े कर दिए। भीमदेव को अपने चचेरे भाइयों की मृत्यु की सूचना पाकर अपार क्रोध हुआ तथा उसके हृदय में बदला लेने की भावना प्रज्वलित हो उठी। इसी बीच पृथ्वीराज को दिल्ली राज सोप कर अनंगपाल बद्रीकाश्रम चले गये जिससे भीम को और भी बुरा लगा।

गुरंगेश्वर भीमदेव चालुक्य के हृदय में मांभरपति सोमेश्वर सदैव झूल की भाँति झुभता रहता था तथा पृथ्वीराज अंगरे के समान जलन पैदा करता था। उसने-अपने मंत्रियों से मन्त्रणा कर चतुरंगिणी सेना तैयार की। वह कहने लगा 'अब मैं शत्रु को कुचल कर मार शानूना तथा समस्त पृथ्वी पर एक छत्र राज्य करूँगा।'

जिस भाँति छोटे-छोटे अनेक झोते आ-आकर नदी में मिलते हैं उसी प्रकार भिन्न-

भिन्न राज्यों की सेनाएं एकत्र होने लगीं। एक विशाल सेना को लेकर भीमदेव ने सोमेश्वर की सीमा का अतिक्रमण किया। वेचारी प्रजा भयभीत होकर भाग गई तथा भीमदेव ने लूट मचा दी। अपनी प्रजा की आर्तवाणी सुन कर सोमेश्वर घोंड़े पर भीष्ट चढ़कर इसी प्रकार तैयार हो गया जिस प्रकार कोई सती अपने पति के साथ जाने के लिए तैयार होती है। सोमेश्वर पृथ्वीराज को दिल्ली में ही छोड़ कर अन्य सामन्तों को साथ लेकर भीमदेव का सामना करने चल दिया।

सोमेश्वर चौहान तथा भीमदेव के मध्य भयंकर युद्ध हुआ। पृथ्वी भय से कांप उठी। लाश पर लाश पड़ने लगी, खून की सरिताएं बह चली। स्वयं सोमेश्वर ने आगे बढ़ कर गुजरातपति का सामना किया। दोनों ही देश रक्षक राजा थे, छत्रपति थे, कवच धारण किए हुए थे, दोनों ही हिन्दू धर्म की मर्यादा रूप थे तथा दोनों ही सच्चे राजपूत थे। उस समय रण क्षेत्र ऐसा दिखाई पड़ रहा था मानों वर्षा ऋतु की घनघोर अंधकार तथा तूफानी रात्रि में पर्वतों पर दावानल जल रहा हो। सच्चा योद्धा सोमेश्वर चौहान रणक्षेत्र में वीरता दिखाता हुआ खण्ड-खण्ड होकर गिर पड़ा। सोमेश्वर सोम (चन्द्र) लोक को चला गया तथा चालुक्यों ने अपना हाथ रोक लिया। समस्त पृथ्वी भोलाराय की जय-जय कार से गूँज उठी।”

पृथ्वीराज ने युद्ध परिणाम सुना तो शोक समुद्र में डूब गया। पृथ्वीराज ने बची हुई मेना वापिस बुला ली तथा अपने पिता के लिए पौडश पिण्ड दान किया। पृथ्वीराज ने बारह दिन तक कुशशय्या पर शयन किया, एक बार भोजन किया तथा स्त्रियों के संसर्ग को छोड़ दिया। ब्राह्मणों को दान दिया गया। सोने से सींग तथा खुरी मंड़ी हुई आठ हजार श्रेष्ठ गाएँ ब्राह्मणों को दान में दी।

पिता की क्रिया कर्म करने के उपरान्त पृथ्वीराज ने भीम से बदला लेने का पूर्ण निश्चय किया तथा पगड़ी न बाँधने की प्रतिज्ञा की। उसने बार-बार कहा 'भीम चालुक्य को मार कर मैं उसकी अंतर्द्वियों में से अपने पिता को निकालूँगा। धिक्कार है उस पुत्र को जो अपने पिता का बदला न ले।' यह कहते हुए राजा पृथ्वीराज की आँखें लाल हो गईं। पृथ्वीराज ने एक विशाल सेना तैयार कर प्रथम राज्याभिषेक का कार्य सम्पन्न कर पुनः भीमदेव से युद्ध करना निश्चय किया।

पृथ्वीराज के हृदय को भीम निरन्तर सलता रहता था, शत्रु के प्राण लिए बिना उसकी प्रबल कोपाग्नि शान्त नहीं हो सकती थी। अतः उसने मंत्रियों से मंत्रणा कर तथा शुभ मूर्तें दिखाकर रण-वाद्य बजवा दिए। पृथ्वीराज ने निश्चय घड़ी में प्रस्थान कर उपयुक्त स्थान पर

१. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान, उदयपुर, छं० १७-४० सोमवध समय।

२. वही, छं० ४५-४६ सोमवध, समय।

उपने जिविर गाढ़ दिया । भीमदेव के गुप्तचरों ने जाकर खबर दी कि चौहान चौसठ हजार मैनिक लेकर युद्ध हेतु गुजरात की ओर अग्रसर हो रहा है ।

समाचार सुन कर भीम क्रुपित हो उठा । उसके जंग-प्रत्यंग शौर्य से फड़कने लगे तथा बाँयें नान हो गईं । उसने तुरन्त मंत्रियों को बुलाकर सेनाएं तैयार करने का आदेश दिया । रात की बात में सब सेनाएं एकत्र होने लगीं ।

सांभरपति के गुप्तचर ने जाकर सूचना दी कि 'समुद्र के समान गर्जन करती हुई चालुक्य सेना तैयार हो रही है, उसमें एक लाख योद्धा तथा एक हजार हाथी हैं । यह सुनकर पृथ्वीराज ने कहा 'यदि युद्ध में भीम मेरे समक्ष आया तो जिस प्रकार ग्रीष्म ऋतु में पवन की महापता ने अग्नि विजाल वनों को भस्म कर देती है उसी प्रकार मैं इन सबों को नष्ट कर दूँगा ।' दूसरे दिन पृथ्वीराज की सेना अपार उत्साह के साथ प्रागे बढ़ी । वीर पृथ्वीराज ने गुर्जर नरेण को भड़काने के लिए चन्दवरदाई को भेजा—

अहो चन्द चन्दह मरन , दिन दिन सल्लं दुष्प ।  
कही जाइ चालुक सम , मगं वरं समुष्प ॥ छं० ९८ ।  
ले चल्ली नृप भीम की , चंगी दोय रसाल ।  
एक नुरगी पष्परी , इक कंचुकी भुजाल ॥ छं० ९९ ।'

चौहान ने कहा कि हे चन्द, मुझे पिता की मृत्यु की वेदना दिन प्रति दिन कष्ट दायक मिट्ट हो रही है, अतः तुम चालुक्य भोलाभीम को सूचित करो कि मैं तुरन्त शत्रुता का बदला लेना चाहता हूँ । तुम उसके पास दो चंगी ले जाओ । एक लाल पगड़ी तथा दूसरी लाल रंग की चोली । इनका ही नहीं पृथ्वीराज ने निम्नांकित संदेश और भी भेज दिया—

मन माने मोई गहो , करिय चित्त इकतार ।  
इह ससार सुपन्न , अपन सुसुख इक वारं ॥  
चन्द हृष्य कहि पठय , भीम सम समरि वारं ।  
तात बर संग्रहन , वचन तत्ते उच्चार ॥  
गज नाट मुनर घट भजि तुअ , सरित चलाऊं रधिर की ।  
धार मिचि सोमेस कहूं , तपति वुझाऊं उअर की ॥ छं० १०० ।'

और भी—

नामाइन मयदान , दरधि घन अमृत धार ।  
बालमिकि पौदुष , सोचि लख रघुपति रार ॥  
अरजून मयन समेत , आनि बरवर पताल मनि ।  
वेद रघास नारथ्य , सकल क्षोहनि दीपक बनि ।

१. पृथ्वीराज रामो. ना० प्र० म० काशी, छं० ९८-९९, स० ४४ ।

२. दाँयाँ छं० १००, म० १८ ।

चाहुआन कहाइय चन्द कर , पिता बैर कज हह वयन ।

चालुक भीम उन सम सुनहु , तुमहु जिवावन अव कवन ॥ छं० १०१ ।'

पृथ्वीराज ने चन्द को एक लाल चोली तथा एक लाल पगड़ी तो उपर्युक्त कठोर मदेश के साथ देकर भेजी ही किन्तु कवि चन्द अपनी ओर से एक जाल, नसैनी, कुदाल, दीपक तथा हाथी का अंकुश भी साथ लेकर गुजरात की राजधानी में पहुँचा । चन्द की ऐसी विचित्र दशा देख, तत्काल ही देखने वालों की भीड़ लग गई । चन्द ने भोला के पास पहुँच कर घोषणा की कि 'सांभरपति आ पहुँचा है । चन्द की ऐसी विचित्र दशा देखकर भालाराय ने पूछा कि हे भाट ! तुम्हारी लाई हुई इन विचित्र वस्तुओं का क्या अर्थ है—

चल्यो चन्द गुज्जरह , गरं जारी जंजारह ।

नीसरनी कुदाल , दीप अंकुस आधारह ॥

कस्तन सूल संग्रह , गयो चालुक दरवारह ।

इह अचंम जन देपि , मिल्यो पेपन संसारह ।

भेद्यो सु भीम मोरा सुमर , कहिय वत्त संनरि वयन ।

हो मट्ट चट्ट बोलहु कयन , कहा इहै डंवर सयन ॥ छं० १०२ ।'

कवि चन्द ने उत्तर दिया—'पृथ्वीराज की आज्ञा है कि यदि तुम पानी में जाकर छुपोगे तो इस जाल से पकड़ लिए जाओगे, यदि आकाश में उड़ोगे तो यह नसैनी बन्दी बनाने के लिए प्रस्तुत है । यदि पाताल में जाकर छिपोगे तो इस कुदाल से खोद कर पकड़ लिए जाओगे, अन्धकार में छिपोगे तो दीपक के प्रकाश से खोज कर बन्दी बना लिए जाओगे, यह अंकुश तुम्हें वन में करने के लिए है तथा इस त्रिसूल से तुम्हारा वध कर दिया जावेगा ।

एन जाल संग्रहो , जाम जल भीतर पड़ेयो ।

इन नीसरनी ग्रहो , जाम आकासह चढ़्यो ॥

इन कुदाल पनो , जाम पायाल पनठ्यो ।

इन दीपक संग्रहो , जाम अंधारं नठ्यो ॥

इन अंकुस असि वसि करी , इन त्रिसूल हनि हनि सिरों ।

जगमगी जोति जग उप्पर , तो डर प्रथम नरिदरं ॥ छं० १०३ ।'

चन्द के वचन सुनकर भालाराय भभक उठा, उसने भी ऐसा ही उत्तर दिया—'मुझे जो धमकी देता है, उसका मैं वध कर डालता हूँ । मेरा नाम भीम है, मैं भयंकर युद्ध करने वाला हूँ । इतना बड़-बड़ के बातें मत कर जो कुछ पूर्व हो चुका है उसका भी स्मरण कर ले ।'

१. पृथ्वीराज रासो, ना० प्र० स० काशी, छं० १०१, स० ४४ ।

२. वही, छं० १०२, स० ४४ ।

३. वही, छं० १०३, स० ४४ ।



जाल ज्वाल करि भस्म , करस नीसरनी कटौ ।

धन भंजी कुहाल , दीप कर पवन झपटौ ।

अंकुस अंकुर मोड़ि , तिनह असूल संकोड़ों ।

हनन कहै ता हनों , जोति जग मच्छर मोड़ों ।

हों नीम नीम कन्दल करों , मो डर डंक अचंभ नर ।

सम घरइ प्रब धरिलज्ज अब , बित्तक पुत्र परचित्ति पर ॥ छं० १०४ ।'

चन्द ने पुनः उत्तर दिया—यदि दैव योग से कभी कोई चूहा विलार को पराजित कर ले, गिद्ध पवित्र राज हंस के शिर पर नाच ले, युद्ध में मृग सिंह का सामना करले, मेढ़क सर्प को निगल जाय तो इसे विधाता के विधान की विचित्रता ही समझना उचित है—ऐसी बातों की पुनरावृत्ति होगी, सोचना मूर्खता है। क्या पर्वतों पर छाए हुए भीषण वन को भस्म करने वाली दावाग्नि की बराबरी एक छोटा सा दीपक कर सकता है ? अर्थात् नहीं ।

रे उंदर विडाल , कोई करन मिर मच्छी ।

रे गिद्दिन सिर हंस , दैव जोगह सिर नच्छी ।

रे मृग वध संग्राम , लरं वर अप्पन आयी ।

रे थप्पह सो समर , करं मंडुक जस पायी ।

आंचन बह्य गति वह नहीं , बार बार तुहि सिधिये ।

प्रज्जरं झार तरवर गिरह , का दीपक लं दिधिये ॥ छं० १०५ ।'

तर्क बढ़ता देख कर भीम ने उत्तर दिया—'माटो के पुत्र तो केवल वाणी युद्ध जानते हैं। यदि सोमेश्वर की मृत्यु का बदला चाहते हो तो अपने घर का धन बांधवों को बाँट दो, जाकर पृथ्वीराज से कहना कि इस प्रकार की डींगों से बच्चे ही भयभीत हो सकते हैं, यदि उसमें कुछ बल हो तो मेना सजाकर युद्ध भूमि में निर्भयता से आवे ।'

बैन बाद सौ करं , होई मट्टह को जायो ।

भारि रारि सो करं , जे न रस प्य न पायो ।

हय्य वय्य सो निरं , घरह धन बंधव बट्टे ।

इह सोमेशर बेर , लेहु अप्पन सिर सट्टे ।

तुम कहो जाई संगरि बपन , इन डिमन डिमर उरं ।

संच्यो दरक हक्कं चरत , सज्ज फटक्कं निक्करं ॥ छं० १०६ ।'

१. पृथ्वीराज रासा, ना० प्र० स० काशी, छं० १०४, स० ४४ ।

२. वही, छं० १०५, स० ४४ ।

३. वही, छं० १०६, स० ४४ ।

कवि चन्द ऐसा उत्तर पाकर क्षुब्ध हो गया तथा उसके नेत्र लाल हो गए । वह तुरन्त पृथ्वीराज के पास लौट आया—

चन्द मंद मन आतुरह , उठ्यौ रत्न करि नैन ।

फिरि पहुच्यौ नृप पिथ्य पै , कहै चरक्का वैन ॥ छं० १०७ ।'

भोलाराय भीम, चन्द की बातों से उत्तेजित हो ही चुका था अतः उसने अपने भाट जगदेव को चन्द के पास अपने भेजे हुए सन्देश का उत्तर लाने के लिए भेजा । जगदेव ने चन्द से कहा कि तुम दीपक, जाल, कुदाल साथ लेकर विचित्र रूप धारण करके गुर्जरेश्वर को छेड़ने गए थे, यदि कैमास, चामण्डराय अथवा सम्भरी नरेश गए होते तो मालूम पड़ जाता, तुमको तो उसने दूत समझ कर छोड़ दिया—

कहु मिसरे छेड़्यौ , राउ गुज्जरी नरंसर ।

दीबी जाल कुदाल , कहमि वह सह आइंबर ॥

कह मिसरं कैमास , जास पुच्छंत विचप्यन ।

चामंड रा कहां गयो , बहृत राया वर दप्यन ॥

कह मिसरं कहु बिप्पनौ , जगदेव सची वविय ।

वमन हय या दिद्ध घर , कह मिसरे संभरि धनिय ॥ छं० १०९ ।'

चंद ने कहा कि बातें बनाने वाले गुर्जरेश्वर ने अभी तक अनेक खेल किए हैं, इस बार उसे पूरा आनन्द मिल जावेगा संभर नरेश अन्य राजाओं की भांति नहीं है जिनको उसने रण में पराजित कर लिया । विच्छू का मंत्र बिना जाने सर्प के बिल में हाथ दिया है अर्थात् अब तो उसे अपने किया का फल भोगना ही पड़ेगा—

बार बार बोल्यौ , सरस बत्ताड़िया गुज्जर ।

अब विगति लमिम है , मिरच चन्बै ज्यों गज्जर ॥

तू अनि राव मजाय , जिके रन अगम जिता ।

इन संभरि वै राव , कोड़ि सै सहस विघत्ता ॥

भेदयौ नहीं गुरु अप्वरी , कविय वयन संम्हो सरं ।

कर नहीं मंत्र बीछिय तनौ , घत्ते हय सप्पा हरं ॥ छं० ११० ।'

कवि चन्द की बातें सुन कर जगदेव प्रत्यावर्तित हो गया तथा भोलाराय भीम से बोला कि चौहान पृथ्वीराज हाथी, घोड़े तथा योद्धाओं की चतुरंगिणी सेना सजा कर युद्ध हेतु आ रहा है—

१. पृथ्वीराज रासो ना० प्र० स० काशी, छं० १०७, स० ४४ ।

२. वही, छं० १०९, स० ४४ ।

३. वही, छं० ११०, स० ४४ ।

मुनि मु वेन जगदेव फिरि , कहि भोरा नीमंग ।

आयो नृप चहुआन सजि , हय गय मर चतुरंग ॥ छं० १११ ।<sup>१</sup>

यह मुनिकर भोलाराय भीम भी अपनी विशाल बाहनी लेकर रण क्षेत्र में आ गया तथा युद्धारम्भ हो गया ।<sup>२</sup> अन्ततोगत्वा दोनों दलों में भयंकर युद्ध हुआ जिसमें भीमदेव सम्भर नरेश पृथ्वीराज के हाथों वीरगति को प्राप्त हुआ ।

प्रसिद्ध इतिहासकार म० म० रायबहादुर गीरीशंकर हीराचन्द ओझा ने भीमवध के विषय में इस प्रकार लिखा है—'रासो का कर्त्ता लिखता है—'गुजरात के राजा भीम के हाथ ने पृथ्वीराज का पिता सोमेश्वर मारा गया । अपने पिता का वर लेने के लिए पृथ्वीराज ने गुजरात पर चढ़ाई कर भीमदेव को मारा और उसके पुत्र कचराराय को अपनी ओर से गद्दी पर बैठा कर गुजरात के कुछ परगने अपने राज्य में मिला लिए ।'<sup>३</sup>

यह सारी कथा असत्य है, क्योंकि न तो सोमेश्वर भीमदेव के हाथ से मारा गया और न भीम पृथ्वीराज के हाथ से । सोमेश्वर के समय के कई शिलालेख मिले हैं, जिनमें से पहला वि० सं० १२२६ फाल्गुन वदी ३ का विजोलिया का प्रसिद्ध लेख है<sup>४</sup> और अंतिम वि० सं० १२३४ भाद्र पद मुदी ४ का है ।<sup>५</sup> पृथ्वीराज का सबसे पहला लेख वि० सं० १२३६ भाद्र पद वदी १२ का है ।<sup>६</sup> वि० सं० १२३६ के प्रारम्भ में सोमेश्वर का देहान्त और पृथ्वीराज की गद्दी नशीनी मानी जा सकती है, जैसा कि प्रबंधकोप के अन्त की वंशावली से ज्ञात होता है ।<sup>७</sup> भीमदेव वि० सं० १२३५ में गद्दी पर बिल्कुल बाल्यावस्था में बैठा और फिर ६३ वर्ष अर्थात् वि० सं० १२९८ तक वह जीवित रहा ।<sup>८</sup> इतनी बाल्यावस्था में वह सोमेश्वर को नहीं मार सकता और न पृथ्वीराज ने उसका बदला लेने के लिये उस पर चढ़ाई कर उसे मारा था । गुजरात के ऐतिहासिक संस्कृत ग्रन्थों में कहीं इस बात का उल्लेख नहीं है । राजतुलाना म्यूजियम में भी भीमदेव का वि० सं० १२६५ का एक शिलालेख विद्यमान है ।<sup>९</sup> आजू पर देतवाड़ा गाँव में प्रसिद्ध तेजपाल के जैन मंदिर की वि० सं० १२८७ की प्रशस्ति

१. पृथ्वीराज रासो ना० प्र० सं० काशी, छं० १११, सं० ४४ ।

२. वही, छं० १२४-२५, सं० ४४ ।

३. पृथ्वीराज रासो, भीमवध, चौवालीसवां समय, रासोसार पृ० १५९, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी ।

४. गमेल, रायल एशियाटिक सोसाइटी, बंगाल, जिल्द ५५, भाग १, सन् १८८६ ई० पृ० ४०-५६ ।

५. भावलदा गाँव का लेख बिन्दोरिया हाल, उदयपुर में सुरक्षित ।

६. मौंझारी गाँव का लेख बिन्दोरिया हाल, उदयपुर में सुरक्षित ।

७. प्रबंध-विस्तारमणि, पृ० ५१ ।

८. प्रबंध-विस्तारमणि, पृ० २४९ ।

९. इटियन ऐट्रिब्यूरी, जिल्द ११, पृ० २२१-२२२ ।

के लिखने के समय भी भीमदेव विद्यमान था ।' डॉ० वूलर ने वि० सं० १२९६ मार्ग शीर्ष वदी १४ का भीमदेव का दान पत्र प्रकाशित किया है ।' इससे निश्चित है कि भीमदेव पृथ्वीराज की मृत्यु से अनुमानतः पचास वर्ष पीछे भी विद्यमान था ।"

श्री गोपाल नारायण बहुरा 'रासमाला' ग्रन्थ के अनुवाद की टिप्पणी में भीमवध के विषय में लिखते हैं कि—'वास्तव में भीमदेव की मृत्यु इस युद्ध में नहीं हुई थी, न पृथ्वीराज रासो में ही ऐसा लिखा है । रासो में इस प्रकरण को 'भीमवध' नाम से लिखा गया है जिसको सम्भवतः भीम वध समझ लिया गया है । इस युद्ध का निर्णायक पक्ष नीचे दिया जाता है जिसका तात्पर्य यह है कि चालुक्य घायल हुआ और पकड़ा गया ।

सिलह मद्धि लग धार , वीय उययी ससि सोभं ।  
कं नव वधु नखछित्त , काम कामिनि रस लोभं ॥  
मर्म वीर कत्तरी , दिसा दुति तिलक पुच्च वर ।  
कं कूंची स्पगार , सुभग भामिनि स्पंध्या कर ॥  
सोभंति चन्द की कला नभ , कल कलक सुभंनं तन ।  
दुदंयौ छेत सामंत नृप , वुज्जि राज तामस मन ॥ ७० ॥

चालुक्य के 'सिलह' अर्थात् कवच पर लगी हुई खड्गधार अथवा तलवार की चोट ऐसी शोभित होती थी मानों द्वितीया का चन्द्रमा ही उदित हुआ है अथवा वह नववधू के नखछित के समान है । जो कामी और कामिनियों को रस लुब्ध कर देता है अथवा वीर की कत्ती ( कत्तरी ) का मर्म ( रहस्य अर्थात् धार है ) या पूर्व दिशा ( के माल ) का द्युतिमान तिलक है अथवा सुन्दरी सन्ध्या यामिनी के हाथ में श्रंगार ( पिटारी ) की कुन्जी है । परन्तु, चन्द्रमा की कला तो नभ में शोभित होती है—यह कलक ( रूपा चोट ) शरीर पर शोभा नहीं पाती । ( ऐसे आघातयुक्त ) नृप को सामन्तों ने रण क्षेत्र में दूढ़ निकाला जिससे राजा के मन का तामस अर्थात् क्रोध बुझ गया अथवा शान्त हो गया ।"

श्री गोपालनारायण बहुरा ने उपर्युक्त छन्द साहित्य संस्‍पान में प्रकाशित पृथ्वीराज रासो से लिया है । श्री मोहनसिंह ने भी लिखा है कि—'भीमवध' में पृथ्वीराज ने पिता की मृत्यु का बदला लेने के लिए भीम को बन्धन में ले लेने की प्रतिज्ञा की । ज्योतिषी द्वारा मुहूर्त

१. एपीग्रफिया इंडिका, जिल्द ८, पृ० २१९ ।
२. इंडियन ऐंटीक्वेरी, जिल्द ६, पृ० २०६-२०८ ।
३. म० म० रायबहादुर गौरीशंकर हीराचन्द्र ओझा, पृथ्वीराज रासो का निर्माणकाल, कोशीत्सव स्मारक संग्रह, पृ० ४५-४६ वि० सं० १९८५ ।
४. फार्बस, रासमाला अनुवादक-गोपालनारायण बहुरा, टिप्पणी पृ० २६३-२६४, मंगल प्रकाशन जयपुर, सन् १९५८ ।

देखकर भी इस बात की पुष्टि की गई। कवि चन्द ने कहा कि इस समय पृथ्वीराज और चित्तोदरेश्वर रावल समर सिंह विक्रम दोनों ही शक्तिशाली हैं और भारत की डांवाडोल अवस्था के समय भारत का भार इन्हीं के कंधों पर है। तत्पश्चात् पृथ्वीराज ने गुर्जर प्रदेश पर चढ़ाई की। दोनों सेनाओं में सावरमती के तट पर भयानक युद्ध हुआ। युद्ध के अन्त में भोलाभीम पृथ्वीराज की दया का पात्र बना ( बन्धन में लेकर छोड़ दिया गया ) ।”

रामो के अनुसार पृथ्वीराज तथा भीमदेव के मध्य हुए युद्ध को डॉ० दशरथ शर्मा प्रामाणिक एवं ऐतिहासिक मानते हुए लिखते हैं कि—“भीम चालुक्य और पृथ्वीराज के परस्पर कलह की बात भी अकाट्य है, पृथ्वीराज विजय महाकाव्य के वर्णन से ही सिद्ध है कि पृथ्वीराज के मंत्री कदम्बवांसादि चोलुकों को अपना शत्रु समझते थे।” पार्थपराक्रम व्यायोग से यह सिद्ध है कि पृथ्वीराज ने भीम चोलुक्य के मातहत आवू के राजा धारावर्ष पर आक्रमण किया था।” इसलिए आवू के लिए या आवू के निकट दोनों राजाओं में युद्ध होना सिद्ध है। रासो में सलख परमार का नाम मिलता है। बहुत संभव है कि वह राजा विक्रमसिंह का पुत्र हो। जिसे सं० १२०२ के लगभग कुमार पाल ने आवू की गद्दी से उतार दिया था।” चोलुक्य विरोधी चौहान संभवतः उसे अब भी आवू का सच्चा अधिकारी समझते थे। आवू का तत्कालीन राजा धारावर्ष चोलुक्यों के मातहत था, और उसे गद्दी से उतार कर सलख अर्थात् विक्रमसिंह के पुत्र या किसी निकट सम्बन्धी को यदि पृथ्वीराज ने आवू की गद्दी पर बैठाने का प्रयत्न किया हो, तो कोई आश्चर्य नहीं। धारावर्ष और पृथ्वीराज के युद्ध का प्रभाव तो प्राप्य ही है। परन्तु वह युद्ध किस कारण से हुआ—यदि यह हम मालूम करना चाहें तो सम्भवतः रासो की कथा हमारी कुछ सहायक हो। नागौर के निकट चोलुक्यों के विरुद्ध, युद्ध का कोई स्पष्ट प्रमाण नहीं मिलता। परन्तु विकानेर रियासत के चरलू नामक एक ग्राम में कुछ जिलालेख मिले हैं, जिनमें लिखा है, कि आहड़ और अम्बराक नामक दो चौहान सरदार संवत् १२४१ में नागपुर अर्थात् नागौर की लड़ाई में मारे गये। यह सम्भव है यह युद्ध पृथ्वीराज और भीम चोलुक्य के बीच में ही हुआ हो। जिनपाल उपाध्याय<sup>१</sup> रचित छरतरगच्छ पट्टावली में भी पृथ्वीराज और भीमदेव चोलुक्य के युद्ध का स्पष्ट निर्देश है। संवत् १२४४ में भीम चोलुक्य के सेनापति जगदेव प्रतिहार ने मालवा पर आक्रमण किया था उसी समय सपादलक्ष अर्थात् अजमेर राज्य का एक संघ तीर्थ यात्रा के

१. पृथ्वीराज रासो-तृतीय नाग-साहित्य संस्थान उदयपुर, संपादकीय पृ०, ४।
२. पृथ्वीराज विजय महाकाव्य, एकादश सर्ग।
३. गायकवाट ओरियण्टल सिरज में प्रकाशित इस नाटक की प्रस्तावना।
४. जिन मण्डन गणि, कुमारपाल प्रबंध, दयाश्रम महाकाव्य और सं० १२०२ का धारावर्ष का लेख।
५. उपाध्याय ने सं० १२६२ में पट्टयानक नामक युक्ति की रचना की।

लिए गुजरात पहुँचा। धार्मिक विद्वेष के कारण तद्देशीय एक दण्डनायक ने उसे तूटना चाहा और जगद्देव की अनुमति चाही। सेनापति ने इस बात की स्पष्ट शब्दों में यह कहते हुए मनाही की कि अभी मैं बड़ी मुश्किल से पृथ्वीराज से संधि कर पाया हूँ। यदि तुमने सपादलक्ष के संध से छेड़छाड़ की तो तुम्हें गधे के पेट से सी दिया जायगा। भीम और पृथ्वीराज के बीच युद्ध का इससे अधिक स्पष्ट और क्या प्रमाण मिल सकता है।”

उपर्युक्त विवेचन से इतना स्पष्ट हो जाता है कि पृथ्वीराज तथा भीम चौलुक्य के मध्य संग्राम अवश्य हुआ था। यदि यह भी मान लिया जावे कि पृथ्वीराज ने भोलाभीम चौलुक्य को बन्धन में लेकर मुक्त कर दिया था तो भी भोलाराय तथा सोमेश्वर के मध्य हुआ संग्राम विवादास्पद ही बना रहता है, किन्तु इतना स्पष्ट प्रमाणित है कि भोलाराय भीमदेव चौलुक्य पृथ्वीराज के समकालीन था तथा बाद तक जीवित रहा। डॉ० माताप्रसाद गुप्त भी उक्त विचार का समर्थन करते हुए लिखते हैं—‘भीमदेव चौलुक्य के समय का प्रथम प्राप्त अभिलेख सं० १२३५ का किराडू का है, और अन्तिम प्राप्त अभिलेख सं० १२८७ का है। इसलिए यह स्पष्ट है कि वह पृथ्वीराज ( सं० १२३६-१९४९ ) का समकालीन था। दोनों में वैमनस्य के प्रमाण भी मिलते हैं। पृथ्वीराज विजय में पृथ्वीराज के चौलुक्य को शत्रु समझने का उल्लेख हुआ है जिनपाल उपाध्याय ( सं० १२६२ ) द्वारा रचित ‘खरतरगच्छ पट्टावली’ में पृथ्वीराज और भीम चौलुक्य के सेनापति जगद्देव प्रतिहार के बीच कठिनाई से हो पायी एक संधि का उल्लेख हुआ है। डॉ० दशरथ शर्मा ने चरनू (बीकानेर) के मिले हुए शिला लेखों का उल्लेख किया है, जिनसे आहुड़ और अम्बराक नामक दो चहुवान सामंतों का सं० १२४१ के नागपुर ( नागौर ) के किसी युद्ध में मारे जाने का उल्लेख है। इसलिए दोनों में कोई युद्ध हुआ हो, तो असंभव नहीं है।”

शहाबुद्दीन गोरी ने दिल्ली तथा कन्नौज के राजाओं को पराजित कर गुजरात की ओर ध्यान दिया। रासमाला कार ने लिखा है कि “सन् ११९४ ई० में कुतुबुद्दीन ने फौज लेकर गुजरात प्रान्त की राजधानी नेहरवाला ( अणहिलवाड़ा ) पर चढ़ाई की और वहाँ पर भीमदेव को हरा कर अपने स्वामी की दुर्दशा का पूरा-पूरा बदला लिया। वह कुछ दिनों तक घनी नगरों को लूटता रहा परन्तु गजनी से वापस लौटने की आज्ञा आने पर उसको अचानक दिल्ली चला जाना पड़ा।

दूसरी जगह वही मुसलमान इतिहासकार लिखता है कि जब कुतुबुद्दीन ने अणहिलवाड़ा

१. डॉ० दशरथ शर्मा, पृथ्वीराज रासो की कथाओं का ऐतिहासिक आधार—राजस्थानी भाग ३, अंक ३, जनवरी, १९४० कलकत्ता।
२. डॉ० माताप्रसाद गुप्त, पृथ्वीराज रासो की ऐतिहासिकता और रचना तिथि, पृ० ९६९, राष्द्र कवि मैथिलीशरण गुप्त अभिनन्दन ग्रन्थ, १९५९।

के बाहर जाकर डेरा डाला तो भीमदेव का सेनापति जीवणराय उसको देख कर भाग गया। फिर जब, उसका पीछा किया गया तो सामने होकर युद्ध किया परन्तु वह मारा गया और उसकी फौज भाग गई। इस पराजय का समाचार सुनते ही भीमदेव भी अपनी राजधानी छोड़ कर भाग गया।

कुतुबुद्दीन की जीत अवश्य हुई, परन्तु गुजरात पर उसका स्थाई रूप से अधिकार न हो सका और हार होने तथा राजधानी से भगा दिये जाने पर भी भीमदेव की शक्ति में कमी न आई, वही ग्रन्थकार लिखता है कि "दो वर्ष बाद (सन ११६९ ई० में) कुतुबुद्दीन को समाचार मिला कि नागौर और नेहरवाला के राजा तथा अन्य हिन्दू राजाओं ने मेर लोगों के साथ मिलकर मुसलमानों से अजमेर छीन लेने का विचार किया है। इस समय उसका लष्कर इधर-उधर के प्रान्तों में बिखरा हुआ था इसलिये जो कुछ थोड़े बहुत विश्वासपात्र सिपाही थे उन्हीं को लेकर यथा शक्ति नेहरवाला की सेना की बढ़ती को रोकने के लिये रवाना हुआ परन्तु उसकी हार हुई। लड़ाई में वह कितनी ही बार छोड़े पर से गिर पड़ा और उसके छह घातक घाव लगे, परन्तु बाद में उसके सिपाही उसको बरबस पालकी में डालकर रणक्षेत्र से अजमेर ले गये।" भीमदेव चालुक्य सन् १२१५ ई० में मर गया और वहीं मूलराज चालुक्य के वंश का अन्त हो गया।

रासमाला के अनुवादक श्री गोपाल नारायण बहुरा भोलाराय भीम की मृत्यु १२१५ ई० नहीं मानते हैं, वे लिखते हैं कि 'यह सही नहीं है क्योंकि १२४० ई० का उसका ताम्रपत्र मिलता है। भीमदेव के विषय में आगे लिखते हैं कि—"ऐसा जान पड़ता है कि भीमदेव (द्वितीय) पर बहुत-सी आपत्तियाँ आ पड़ी थी इसलिये वह निर्वल हो गया था। कीर्ति कोमुदी में आगे चलकर लिखा है कि "वलवान मन्त्रियों और माण्डलिक राजाओं के होते हुये भी उसने चालराज के राज्य को क्षीण हो जाने दिया।"

मुक्त संकीर्तन में लिखा है—"निरन्तर दान देते रहने से जिसकी लक्ष्मी क्षीण हो गई, बहुत ही शुभ क्रान्ति वाली जिसकी कीर्ति है, जिसने अपने बल से भूमंडल को वश में कर लिया है, ऐसा मण्येश्वर भीम भूपति चिरकाल से बढ़ती हुई चिन्ता के कारण व्यथित चित्त हो गया।

पौष शुद्ध ३ सोमवार संवत् १२८० का ताम्रपत्र, डॉ० बूलर ने अपनी चालुक्य लेखा-वली के पृ० ५८ से ६८ में दिया है, उसमें लिखा है—श्रीमदणहिलपुर राजधानी अधिष्ठित-

१. फार्बस, रासमाला, अनु० गोपालनारायण बहुरा, पृ० २६९, 'मंगल प्रकाशन जयपुर, सन् १९५८।

२. वही, पृ० २७१।

अभिनवसिद्धराज श्रीमञ्जयन्तसिहदेव' इससे ज्ञात होता है कि इस जयन्तसिंह ने भीमदेव (द्वितीय) का राज्य दबा लिया था परन्तु इसके बाद में सम्वत् १२८३, १२८८, १२९५ और १२९६ के लेख भीमदेव के ही मिलते हैं। इससे यही जान पड़ता है कि भीमदेव ने फिर अपने राज्य पर अधिकार प्राप्त कर लिया था।

चैत्र सुदी ६ सम्वत् १२९८ के लेख से विदित होता है कि भीमदेव (द्वितीय) के बाद त्रिभुवन पाल देव राजा हुआ।" अतः उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि भीमदेव चालुक्य सम्वत् १२९८ तक जीवित रहा।

श्री के० एम० मुंशी जी के मतानुसार भीमदेव चालुक्य की वंशावली इस प्रकार थी—

#### चालुक्य वंश

१-मूलराज	सन् ९४२-९९६
२-चामुण्डराय	सन् ९९६-१०१०
३-वल्लभराज	सन् १०१०-१०१०
४-दुर्लभराज	सन् १०१०-१०२२
५-भीमदेव (प्रथम)	सन् १०२२-१०६४
६-कर्णदेव (प्रथम)	सन् १०६४-१०९६
७-जयसिंह ( सिद्धराज )	सन् १०९६-११४४
८-कुमारपाल	सन् ११४४-११७३
९-अजयपाल	सन् ११७३-११७६
१०-मूलराज (द्वितीया)	सन् ११७६-११७८
११-भीमदेव (द्वितीया)	सन् ११७८-

डॉ० वासुदेवशरण<sup>१</sup> अग्रवाल भी भोलाराय भीम का समय सम्वत् १२३५ से १२९८ मानते हैं जैसा कि उपर्युक्त कथन से स्पष्ट है—चालुक्यवंश की वंशावली उन्होंने इस प्रकार दी है—

१-मूलराज (पत्नी माधवी)	विक्रम संवत् ९९८-१०५३
२-चामुण्डराज	विक्रम संवत् १०५३-१०६६
३-वल्लभराज (छहमास शासन किया)	विक्रम संवत् १०६६-
४-दुर्लभराज	विक्रम संवत् १०६६-१०८०

१. फावेंस 'रासमाला' अनुवादक—गोपाल नारायण बहुरा, टिप्पणी पृ० २७१-७२ मंगल प्रकाशन जयपुर, १९५८।
२. The Glory that was Gurjaradesa Pt. III Bhartiya Vidya Bhavan Bombay, 1st edition 1944.
३. फावेंस 'रासमाला' हिन्दी अनुवाद, सूमिका, पृ० ७, मंगल प्रकाशन जयपुर, सन् १९५८।



५-भीमदेव प्रथम (पत्नी उदयमती)	विक्रम संवत् १०८०-११२२
६-कण संनंकी (पत्नी मयणल देवी)	विक्रम संवत् ११२२-११५०
७-जयमिह सिद्धराज	विक्रम संवत् ११५०-१२००
८-कुमारपाल (पत्नी भूपालदेवी)	विक्रम संवत् १२००-१२२९
९-अजयपाल (पत्नी नायकी देवी)	विक्रम संवत् १२२९-१२३२
१०-मूनराज द्वितीय	विक्रम संवत् १२३२-१२३५
११-भीमदेव द्वितीय (पत्नी सुमलादेवी) (भोलाभीम)	विक्रम संवत् १२३५-१२९८
१२-प्रभुवनपालदेव	विक्रम संवत् १२९८-१३०२

उपर्युक्त दोनों विद्वानों के मतानुसार भी भीमदेव (द्वितीय) का समय संवत् १२३५-१२९८ ठहर्ता है। अतः नागरी प्रचारिणी सभा से प्रकाशित 'पृथ्वीराज रासो' में दी हुई भोलाय भीमदेव की मृत्यु का विवरण पूर्णतया अतिहासिक सिद्ध होता है।

महदेव अथवा महादेव—पृथ्वीराज रासो के अनुसार चौहान वंशकी तृतीय पीढ़ी में राजा रामनरदेव के उपरान्त महदेव अथवा महादेव नामक राजा राजगढ़ी का उत्तराधिकारी हुआ।<sup>१</sup> रासोकार ने इनके नाम मात्र का उल्लेख किया है। रा० ए० सो० लन्दन की प्रति में भी महदेव नामक राजा का विवरण प्राप्त होता है। किन्तु उदयपुर से प्रकाशित तथा धारणोज की रासो की प्रति में इनका उल्लेख प्राप्त नहीं होता है किन्तु एक स्थान पर पंडित सदाशिव दीक्षित नरदेव में विशेषण का आभास पाकर संस्कृत के ग्रन्थों के आधार पर नरदेव को ही महादेव मानते हुये लिखते हैं—“प्रबंधकोष, हम्मौर महाकाव्य और सुर्जन चरित में इस व्यक्ति को नरदेव कहा गया है और रासो में इसको महादेव। वस्तुतः नरदेव की अपेक्षा महादेव अधिक उपयुक्त प्रतीत होता है, क्योंकि नरदेव तो विशेषण-सा आभासित होता है।”<sup>२</sup>

१० मदानिव का मत कल्पना पर आधारित होने के कारण ग्राह्य नहीं है।

महासिंह—‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार चौहान वंश परम्परा की १६वीं पीढ़ी में राजा मानिकगंग चौहान के उपरान्त महासिंह नाम का राजा उनका उत्तराधिकारी हुआ।<sup>३</sup> सम्पूर्ण रासो में वंशवृक्ष के अन्तर्गत ही इनका उल्लेख हुआ है। सम्पूर्ण रासो इनके विषय में मौन है। रा० ए० सो० लन्दन की रासो की प्रति उपर्युक्त मत का समर्थन करती है।<sup>४</sup>

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० २८४, स० १।

२. पं० सदाशिव दीक्षित, रासो समीक्षा पृ० ११२।

३. पृथ्वीराज रासो, ना० प्र० स० काशी, छं० २८७, स० १।

४. रासो की हस्तलिखित एवं अप्रकाशित प्रति, पृ० १०।

घाणोज की प्रति, वीकानेर की एक लक्ष अक्षर वाली प्रति' तथा साहित्य संस्थान उदयपुर से प्रकाशित रासो इनके विषय में मौन है। शिलालेख एवं संस्कृत ग्रन्थों में इनका नाम प्राप्त नहीं होता।<sup>१</sup>

पंडित सदाशिव दीक्षित रासो के महर्षिह को शिलालेखों तथा अन्य संस्कृत ग्रन्थों का 'गूवक' ही मानते हैं। उन्होंने लिखा है—'हर्ष मन्दिर की प्रशस्ति का प्रारम्भ गूवक ने होता है। शिलालेख में भी इसका नाम गूवक ही दिया है। पृथ्वीराज विजय में गोविन्दराज, मुर्जन चरित में गुर्जर और रासो में महर्षिह इन भिन्न-भिन्न नामों से इसका स्मरण किया गया है। प्रबंधकोष और हस्मीर महाकाव्य इसके विषय में मौन हैं।' पता नहीं पंडित जी ने इन सब नामों को एक ही व्यक्ति का नाम कैसे मान लिया। कुछ भी हो सामग्री अभाव के कारण इन्हें ऐतिहासिक व्यक्ति मानने में सन्देह ही रह जाता है। जब तक अन्य कोई तर्क पूर्ण प्रमाण सामने नहीं आता, तब तक इनके विषय में कुछ निश्चित धारणा बनाना भ्रम फैलाना ही है।

मानिक्यराय—पृथ्वीराज रासो' के अनुसार चौहान वंश की १३वीं पीढ़ी में राजा अरिमत के उपरान्त राजा मानिक्यराय हुये जो चौहान वंश में अत्यन्त शूरमा थे।<sup>२</sup> वंशावली के नामों की गणना करने पर वीर मानिक्यराय १५वीं पीढ़ी में आते हैं। सम्भव है बीच के दो नाम वास्तव में नाम न होकर विशेषण हों। हो सकता है रासो-सम्पादकों ने भ्रम वग विशेषणों को भी नाम मान लिया हो। ग्रन्थकार ने पृथ्वीराज रासो के 'आदि समय' में वंशावली का विवरण प्रस्तुत करते हुये इनका नाम मात्र का उल्लेख किया है किन्तु 'रासो समय ५७' के अन्तर्गत कवि चन्द ने लिखा है कि 'एक बार सेमरा देव से वीर मानिक्यराय को वरदान प्राप्त हुआ था कि यदि वह अश्वारूढ़ होकर जितनी भूमि की परिक्रमा कर डालेगा, उतनी भूमि चाँदी की हो जावेगी—

चढ़ी पवंग पहुँचि परिहँ जितवक ।

अनपूट रजत ह्वै है तितवक ॥ छं० २१२।<sup>३</sup>

किन्तु साथ ही पीछे देखने का निषेध भी किया गया था। वीरवर मानिक्यराय बारह कोष तक तो बिना पीछे मुड़े हुये चले गये किन्तु देववशात् इसके उपरान्त इन्होंने पीछे घूम-

१. डॉ० दशरथ शर्मा, पृथ्वीराज रासो की कथाओं का ऐतिहासिक आधार, पृ० २, राजस्थानी भाग ३, अंक ३, १९४०, कलकत्ता।
२. देखिए, प्रस्तुत शोध प्रबन्ध परिशिष्ट भाग।
३. पं० सदाशिव दीक्षित, रासो-समीक्षा, पृ० ११४।
४. पृथ्वीराज रासो, ना० प्र० स० काशी, छं० २८६, स० १।
५. वही, छं० २१२, स० ५७।

कर देग लिया । वीर मानिक्यराय का पोछे घूमकर देखना था कि सब भूमि चाँदी के स्थान पर ऊसर या नमक ही गई—

द्वादसह कोष उत्तर क्रमन्त ।

भवतत्य कोन मेटे निमन्त ॥

मन आनि भ्रन्ति फिरि देखि पच्छ ।

ह्वै गयो लवन गरि सर प्रत्यच्छ ॥ छं० २१३ ।<sup>१</sup>

‘मुहणोन नैणसी की ख्यात’ में भी खींची वंश की उत्पत्ति कथा का विवरण मानिक्य-राय के उपर्युक्त कथा से समान प्रस्तुत किया गया है—‘एक बार आसराव अपने पुत्र माणकराव से प्रसन्न हुआ और कहा कि तू प्रभात से सन्ध्या तक जितनी पृथ्वी में फिर आवें वह भूमि तुझको दे दी जावेगी । तब माणकराव दिन निकलते ही चला और सन्ध्या तक बराबर फिरता रहा । वह सांभर का चढ़ा इतनी जगत गया नागौर, पट्टी के ८४ गाँव और मारी महाण जहाँ इसने गढ़ बांधने का विचार किया । सन्ध्या होते जापल की तरफ निकला, वहाँ गवारे (बैल लादने वाली एक जाति) ठहरे हुये थे, उन्होंने भोजन की मनुहार की, यह भी दिन भर फिरता-फिरता भूखा हो गया था, कहा कोई पका-पकाया अन्न हो तो लाओ । उस वक्त उनके छिचड़ी तैयार थी वह कटोरे में ले आये । माणकराव ने ऊँट की सवारी पर चढ़े-चढ़े ही वह चावल-भूंग की छिचड़ी खाई और सन्ध्या होते पिता के पास पहुँचा । पिता ने पूछा कितनी धरती में फिर आया ? उसने सब हकीकत कह सुनाई । फिर पूछा कि कहीं गढ़ की बैठ भी निश्चय की है ? कहा महाणा के पास गढ़ बांधने का विचार है । पिता बोला दिन भर में कुछ खाया भी ? उत्तर दिया कि गवारों के यहाँ छिचड़ी खाई है । पिता ने कहा तूने छिचड़ी खाई इसलिये तेरी सन्तान खींची कहलावेगी और जो धरती उसने देखी थी वह उसको दे दी और महाणा व जायता में गढ़ बधवा कर दोनों जगह राजस्थान रखने की आज्ञा दी । माणकराव ने वैसा ही किया ।<sup>२</sup>

‘रासो’ तथा ‘ख्यात’ की उपर्युक्त कथाओं में कितनी समानता है यह कहने की बात नहीं है ।

‘रासो’ के प्रायः समस्त संस्करण वीर मानिक्यराय के अस्तित्व को मानते हैं । रा० ए० मो० लन्दन की रासो की प्रति के अनुसार भी वीर मानिक्यराय आरम्भ के पुत्र थे ।<sup>३</sup> धारणोज की प्रति में भी मानिक्यराय नाम का उल्लेख मिलता है ।<sup>४</sup> बीकानेर की एक लाख अक्षर

१. पूर्वाराज रासो, भा० प्र० स० काशी, छं० २१३, स० ५७ ।

२. रामनारायण झगड़, मुहणोन नैणसी की ख्यात, पृ० १८४-८५, प्रथम भाग, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, सं० १९८२ ।

३. रासो की हस्तलिखित एवं अप्रकाशित प्रति, पृ० १० ।

४. धारणोज की प्रति, आदि पर्व ।

वाली 'पृथ्वीराज रासो' की प्रति के अनुसार बीर मानिक्यराव, चौहान वंश का आदि पुरुष था—

‘ब्रह्मा न जग्य अपन भूर । मानिकराई चहुआन भूर ॥’

डॉ० दशरथ शर्मा धारणोज की रासो की प्रति को प्रामाणिक सिद्ध करते हुये मानिक्यराव के विषय में लिखते हैं—“मानिक्यराव का नाम प्रायः सभी ही व्यक्तियों और कुछ पुराने शिलालेखों में प्राप्त है उसका वंशधर धर्माधिराज सम्भवतः राजा चामुण्डराज ही ।”

इसके अतिरिक्त साहित्य संस्थान उदयपुर से प्रकाशित पृथ्वीराज रासो भी इन्हें, चौहान वंश का आदि पुरुष मानता है तथा इनके दस पुत्र होने का उल्लेख भी करता है—

चहुआना रे वसं, बीर मानिक्य पुत्र दस ।

शिलालेख एवं संस्कृत के ग्रन्थों में इनके नाम का उल्लेख प्राप्त नहीं होता है, किन्तु पंडित सदाशिव दीक्षित शिलालेखों एवं संस्कृत ग्रन्थों के विभिन्न नामों को मानिक्यराव के नाम ही मानते हुये लिखते हैं—“इनका नाम शिला लेख में दुर्लभ और पृथ्वीराजविजय और प्रवध कोष में दुर्लभराज कहा गया है । हम्मीर महाकाव्य में इनका नाम जयराज बतलाया गया है और रासो में मानिक्यराव । सुर्जन चरित में इनके अनुल्लेख का कारण उसके कर्त्ता को ही विदित होगा ।” पता नहीं पंडित जी ने यह सब कैसे सोच लिया । मानिक्यराव चौहान के विषय में इतिहास संबंधी मोन है किन्तु ‘रासो’ के प्रायः सभी संस्करण इनके व्यक्तित्व का समर्थन करते हैं ।

मोहन्त—पृथ्वीराज रासो के अनुसार चौहान वंश को चौथी पीढ़ी में राजा महादेव अथवा महादेव के उपरान्त मोहन्त गद्दी पर बैठे ।\* कवि ने इनका विशेष विवरण प्रस्तुत नहीं किया है । रा० ए० सो० लन्दन वाली रासो की प्रति में इनके नाम का उल्लेख नहीं प्राप्त होता है । साथ ही साहित्य संस्थान उदयपुर से प्रकाशित रासो तथा धारणोज की प्रति इनके विषय में सर्वथा मौन है । पंडित सदाशिव दीक्षित ‘मोहन्त’ को नाम न मान कर ‘महादेव’ का विशेषण ही बतलाते हैं—“रासो में महादेव का एक विशेषण ‘मोहन्त’ कहा गया है, अर्थ का बोध न होने के कारण सम्पादकों ने उससे एक पृथक नाम की उत्पत्ति कर ली है ।”

१. डॉ० दशरथ शर्मा, पृथ्वीराज रासो की कथाओं का ऐतिहासिक आधार. पृ० ४, राजस्थानी, भाग ३. अंक ३, जनवरी, १९४० कलकत्ता ।
२. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान, उदयपुर, छ० ७९, स० १ ।
३. पं० सदाशिव दीक्षित, रासो समीक्षा, पृ० ११४ ।
४. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी. छं० २८४, स० १ ।
५. पं० सदाशिव दीक्षित, रासो समीक्षा, पृ० ११२ ।

नम्भव है दीक्षित जी का मत सत्य हो, किन्तु शिलालेखों तथा संस्कृत के ग्रन्थों में इनका संकेत भी प्राप्त नहीं होता है ।<sup>१</sup>

मोहसिंह—‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार चौहानों की २०वीं पीढ़ी में राजा प्रतापसिंह चौहान के उपरान्त उनका पुत्र मोहसिंह उनका उत्तराधिकारी हुआ । इनका रूप अत्यन्त मोहक था तथा युद्ध भूमि में साक्षात् ‘प्रेत’ के समान था ।<sup>२</sup> ग्रन्थकार ने इनका विशिष्ट परिचय प्रस्तुत नहीं किया है । रा० ए० सो० लंदन की रासो की प्रति उपर्युक्त कथन का समर्थन करती है ।<sup>३</sup> धारणोज की प्रति तथा साहित्य संस्थान उदयपुर से प्रकाशित ‘रासो’ इनके विषय में सर्वथा मौन है । शिलालेख एवं संस्कृत ग्रन्थों में भी इनका नाम देखने को नहीं मिलता है ।<sup>४</sup> किन्तु पंडित सदाशिव दीक्षित जी इन्हें संस्कृत ग्रन्थों में दी हुई वंशावली का ‘गूवक’ मानते हैं । किस आधार पर उन्होंने अपना मत व्यक्त किया है यह स्पष्ट नहीं करते—“इनका नाम प्रशस्ति, शिलालेख, पृथ्वीराज विजय और हम्मीर महाकाव्य में ‘गूवक’ मुजंत चरित में ब्रज तथा रासो में ‘मोहसिंह’ बतलाया गया है । प्रबंध कोष में इसका अनुल्लेख है ।”<sup>५</sup> दीक्षित जी का मत अनुमानपर आधारित होने के कारण मोहसिंह का अस्तित्व संदेहास्पद ही बना रहता है ।

रामसिंह—‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार चौहान वंश में राजा अजयसिंह के उपरान्त छठवीं पीढ़ी में राजा रामसिंह उनके उत्तराधिकारी हुये ।<sup>६</sup> कवि ने इनके नाम का उल्लेख चौहानों की वंशावली का विवरण प्रस्तुत करते समय किया है । रासो के अन्य किसी भी प्रति में रामसिंह का नाम नहीं मिलता है ।<sup>७</sup>

पं० सदाशिव दीक्षित रामसिंह एवं वीरसिंह नामों को नाम ही नहीं मानते वरन् अजयसिंह के विशेषण मात्र मानते हैं । “श्री ओझा अपने नवशे में रामसिंह और वीरसिंह इन दो और नामों का रासो की तालिका में समावेश करते हैं—परन्तु

मुअ अजयसिंह सिंघ सुराय ।

नर वीर सिंघ सग्राम ताय ॥

१. देगिए प्रस्तुत शोध प्रबन्ध, परिशिष्ट भाग ।
२. पृथ्वीराज रासो, ना० प्र० स० काशी, छ० २८८, स० १ ।
३. रासो की हस्तलिखित एवं अप्रकाशित प्रति, पृ० १० ।
४. देगिए. प्रस्तुत शोध प्रबन्ध, परिशिष्ट भाग ।
५. पं० सदाशिव दीक्षित, रासो समीक्षा पृ० ११५ ।
६. पृथ्वीराज रासो, ना० प्र० स० काशी, छ० २८५, स० १ ।
७. (१) रा० ए० सो० लंदन की रासो की प्रति ।  
(२) साहित्य संस्थान उदयपुर से प्रकाशित रासो की प्रति ।  
(३) धारणोज की अप्रकाशित रासो की प्रति ।

इस अर्धाली में राय और वीरसिंह के पूर्व सुत, सुवन आदि पदों के प्रयोग न होने से इनकी पृथक् सत्ता न तो तर्क की कसौटी पर सिद्ध होती है और न शिलालेख आदि की भित्ति पर ही। ये पद अजयसिंह के विशेषण है।<sup>१</sup>

रामसिंह के विषय में शिलालेख एवं समस्त संस्कृत ग्रन्थ मौन है। अतः ऐसी विषम परिस्थिति में इनके विषय में कुछ निश्चित मत देना असंभव है। असंभव नहीं यदि यह कोई कवि-काल्पनित नाम हो।

रैनसी अथवा रैनसिंह—पृथ्वीराज रासो के मतानुसार दिल्ली अजमेर में अन्तिम हिंदू शासक पृथ्वीराज चौहान का एक मात्र पुत्र राजकुमार रैनसी था। 'विवाह समय ६५' के अन्तर्गत पढ़ते हैं कि महाराज पृथ्वीराज का १३ वर्ष की अवस्था में दाहिमा से विवाह हुआ था।<sup>२</sup> इस विवाह का सम्पूर्ण रासो में अन्यत्र कहीं भी उल्लेख नहीं हुआ है। सम्भवतः इसी रानी के गर्भ से राजकुमार रैनसी का जन्म हुआ था क्योंकि 'कैमास वध प्रस्ताव ५७' के अन्तर्गत पढ़ते हैं कि भानजे रयनकुमार तथा मामा चामंडराय दाहिम में परस्पर अत्यन्त प्रीति थी—

दिल्ली वं चहुआम । तपे अति तेज पग्न वर ॥  
चपि देश सब सोम । गंजि अरि मिलय धनुद्धर ॥  
रयन कुमार अति तेज । रोहि हम पिठ विसम ॥  
साथ राव चमण्ड । करै कलि किति अनम ॥  
मेवास वास गर्ज द्रुगम । नेह नेह बड्ड अनत ॥  
मातुलह नेह भानेज पर । मागनेय मातुल सुरत ॥ छं १।<sup>३</sup>

तथा उनकी परस्पर प्रीति देखकर चंदपुंडीर ने पृथ्वीराज के कान भरे थे।

'बड़ी लड़ाई को प्रस्ताव ६६' के अन्तर्गत सूचना प्राप्त होती है कि गजनिपति शाह शाहबुद्दीन गोरी का प्रवल आक्रमण सुनकर तथा स्वयं के पक्ष को निर्वल समझकर महाराज पृथ्वीराज चौहान ने अपने पुत्र का राज्याभिषेक कर दिया था—

करिय सुचित भर सब्ब । राज दिन्नेव द्रव्य भर ।  
भंगि मदन अगार । गज्जधर पट्ट भद्र सर ॥  
रयनकुमार आभासि । दीन माला मुत्ताहल ॥  
असी बंधि निज पानि । बंदि कीनो कोलाहल ॥

१. पं० सदाशिव दोक्षित, रासो समीक्षा, पृ ११२-११३।

२. पृथ्वीराज रासो, ना० प्र० स० काशी छं० २, स० ६५।

३. वही, छं० १, स० ५७।

प्राणीति राज्ञः कुन्त्या निजः । पश्य चंप सा तिसु क्रिय ।

लोनिजिध धरि पट्टमान पट्ट । जन्म राज मन्नेव इय ॥ छं ६०८ ।<sup>१</sup>

राजनिधिर की सूचना के उपरान्त 'राजा रघुनमो नाम प्रस्ताव ६८' के अन्तर्गत पढ़ते हैं। कुन्त्या राज को राज की योगी दास बन्दी करके उन्हें राजनी ले जाने का समाचार पाकर जल हुए राजनी के रघुनमो (रैनमो) की राजगद्दी पर बिठाया—

राजदेव प्रोहित । आय आमासि उचारं ॥

दिग्गी धर निजिरिध । होइ निधार अपारं ॥

मवं सूर सामत । रैन राजन आचार ॥

रिधि एह मन सत्य । रीति राजन व्यवहारं ॥

मृग दिवस सवन मिषामनह । धरि मूढा गादी सरिय ॥

पददयो निजक गामत निजि । मेघाडनर सिर धरिय ॥ छं ७ ।<sup>२</sup>

राजा रैनमो ने शाह योगी तथा पृथ्वीराज चौहान की मृत्यु की सूचना प्राप्त कर, अपनी मर्दान सामान्य मरदों की बुलाकर, जाह मेना से बदना लेने का निश्चय किया और विपक्षी दास की मदद कर माहोर पर अपना अधिकार कर लिया—

पञ्चाय यान सब साहि मडि ।

उट्टण मरुल रघनस पटि ॥

बिय चंप साहि दिजिय मरान ।

अच्छे जु सूर तपि चहुआन ॥ ५१ ॥

माहोर लोह छडिय मुधार्ई ।

ग्रिह मंदि अश्य जनु पिट्टराई ॥

अहुआन सयर दिन दिन प्रकार ॥

योगी नरिद दर गई पुकार ॥ छं ५२ ।<sup>३</sup>

उपरोक्त सूचना राजनी पहुँचने पर जाह ने कुटकर खां नामक सामन्त को प्रतिनिधि नियुक्त कर, पारसवर्ष पर आक्रमण करने का आदेश दिया। शाही सेना ने निरन्तर आगे बढ़ा हुआ दिग्गी दुर्ग का घेरा डाल दिया। मान माह दो दिन तक निरन्तर किला घेरने के उपरान्त तब ही न मुरद लडा कर किले की दीवार उड़ा दी। परिणाम स्वरूप युद्ध अनि-  
वार्य हो गया तथा दोनों ओर से तनवारें बज उठीं।<sup>४</sup> अंत में रैनमो अपने अपूर्व पौरुष का

१. पृथ्वीराज रासो, ना० प्र० म० काशी, छं ६०८, म० ६६ ।

२. रासो, छं ७, म० ६८ ।

३. रासो, छं ५१-५२, म० ६८ ।

४. रासो, छं ५२-५३ म० ६८ ।

परिचय देते हुए समर भूमि में कूद पड़े तथा फीरोजखां की मार कर अपार साहस एवं वीरता का परिचय देते हुए स्वयं भी वीरगति को प्राप्त हुए ।<sup>१</sup>

महामहोपाध्याय डॉ० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा रैनसी को ऐतिहासिक व्यक्ति नहीं मानते हैं। उन्होंने एक स्थान पर लिखा है कि 'पृथ्वीराज रासो में लिखा है कि १३ वर्ष की अवस्था में पृथ्वीराज ने दाहिमा चामण्ड की बहन से विवाह किया, जिससे रैनसी का जन्म हुआ।' यह कथन भी निराधार कल्पित है क्योंकि पृथ्वीराज का पुत्र रैनसी नहीं, किन्तु गोविंद राज था, जो कि पृथ्वीराज के मारे जाने के समय बालक था। फारसी तवारीखों में उसका नाम 'गोला या गोदा' पड़ा जाता है, जो फारसी वर्णमाला की अपूर्णता के कारण गोविंदराज का बिगड़ा हुआ रूप ही है। हम्मीर महाकाव्य में भी गोविन्दराज नाम मिलता है।<sup>२</sup> सुलतान शहाबुद्दीन ने अपनी आधीनता में उसे अजमेर की गद्दी पर बिठाया, परन्तु उसके सुलतान की आधीनता में रहने के कारण पृथ्वीराज के छोटे भाई हरिराज ने उसे अजमेर से निकाल दिया, जिससे वह रणथम्भौर में जा रहा। हरिराज का नाम पृथ्वीराज रासो में नहीं दिया, परन्तु पृथ्वीराज विजय, प्रबंध कोप के अंत की वशावली और हम्मीर महाकाव्य में दिया है।<sup>३</sup> और फारसी तवारीखों में ही राज या हेमराज मिलता है।<sup>४</sup> जो उसी के नाम का बिगड़ा हुआ रूप है।<sup>५</sup> किन्तु सुर्जन चरित महाकाव्य में हरिराज के स्थान पर मानिक्यराज मिलता है। वस्तुतः रैनसी के सम्बन्ध में अभी पर्याप्त अनुसंधान की आवश्यकता है।

लोहधीर अथवा लोहसार—पृथ्वीराज रासो के अनुसार चौहान वंशावली की २६वीं पीढ़ी में राजा आनन्दराज चौहान के उपरान्त लोहधीर हुए तथा इन्होंने ही उत्तराधिकार

१. पृथ्वीराज रासो, ना० प्र० स० काशी, छं० १७३-२१३, स० ६८।

२. पृथ्वीराज रासो, विवाह समय (६५ वां समय), रासोसार, पृ० ३८२।

३. तत्रास्ति पृथ्वीराजस्य प्राक्पित्रा तो निरासितः।

पुत्रो गोविंदराजाख्यः स्वसामर्थ्यात्तत्त्वन्वः ॥ २४ ॥

हम्मीर महाकाव्य, सर्ग ४।

४. जर्नल ऑफ रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, पृ० २७०-७१, ई० सं० १९१३।

५. इलियट, हिस्ट्री ऑफ इंडिया, जिल्ड २, पृ० २१९।

६. म० म० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा, पृथ्वीराज रासो का निर्माण काल, पोरोत्सव स्मारक संग्रह, पृ० ४८-४९।

नोट—'रासो' के प्रायः सभी संस्करण इस मत की पुष्टि करते हैं कि रैनसी पृथ्वीराज का पुत्र था। (१) पृथ्वीराज रासो साहित्य संस्थान, उदयपुर, छं० ४, पृथ्वीराज रासो के मध्यम संस्करण की हस्तलिखित प्रति, छं० ४ कमास वष समय २९।



राम में राजगद्दी प्राप्त की ।<sup>१</sup> रामोच्चार ने इनका नाम मात्र का विवरण प्रस्तुत किया है । रा० पृ० १० सौ० सदन की रामो की प्रति में उपर्युक्त कथन का समर्थन हो जाता है ।<sup>२</sup> किन्तु रामो के अन्य संस्करण जैसे धारणोज की प्रति, बीकानेर की एक लक्ष अठार वाली प्रति, तथा गान्धिव संस्थान उदयपुर में प्रकाशित पृथ्वीराज रासो उपर्युक्त कथन का समर्थन नहीं करना है । शिलालेख एवं संस्कृत के ग्रन्थों में भी इनके विषय में विवरण प्राप्त नहीं होता है ।<sup>३</sup>

पठित मुद्राणिव का कथन है कि लोहघोर का शिलालेखों तथा संस्कृत ग्रन्थों में दुर्लभ भवदा दुर्लभराज के नाम से सम्बोधित किया गया है—“इसका नाम प्रशस्ति तथा शिलालेख में दुर्लभ और पृथ्वीराज विजय में तथा प्रवन्ध कोप में दुर्लभराज कहा गया है, परन्तु रासो में इनका उल्लेख लोहमार—टस नाम से किया गया है । यह विग्रहराज (आनन्दराज) का अनुज था । हम्मीर महाकाव्य एवं मुर्जन चरित में इसका उल्लेख नहीं है ।”<sup>४</sup> प्रमाणों के अभाव में इस प्रकार के तर्कहीन विचार ग्राह्य नहीं हो सकते हैं ।

विजयपाल—गाहड़वाल वंश का चक्रवर्ती सम्राट विजयपाल इतिहासकारों के अनुसार विजयचन्द्र ई० सं० ११५६-११७७ के लगभग कन्नौज का आधिपति था । रासो के अनुसार राजा जयचन्द्र का पिता यही था । हरिश्चन्द्र के दान पत्र में जयचन्द्र के पिता सम्राट विजयपाल को एक शक्तिशाली नरेश लिखा गया है ।

भजन विजय चन्द्रो नाम तस्यान्नेरन्द्र ।

सुरपति इय नूभूत पक्ष विन्देद दक्षः ॥<sup>५</sup>

राजा विजयपाल का द्वितीय नाम मल्लदेव भी था ।<sup>६</sup> इतिहास प्रसिद्ध पराक्रमी राजा विजयपाल का चित्रण रासोकार ने भी बड़ा उत्कृष्ट रूप से किया है । समस्त उत्तरी भारत को अधिपति करने वाला यही पराक्रमी योद्धा विजयपाल ही था ।<sup>७</sup> अपने समस्त राज्यकाल में राजा विजयपाल को अत्यन्त शक्ति, विग्रहराज बीसलदेव का सामना करने के फलस्वरूप

१. पृथ्वीराज रासो, ना० प्र० स० काशी, छं० २८९, स० १ ।

२. रामो की हस्तलिखित एवं अप्रकाशित प्रति, पृ० १० ।

३. देविए, प्रस्तुत शोध प्रवन्ध, परिशिष्ट भाग ।

४. पं० मुद्राणिव दक्षिण, रासो समीक्षा, पृ० ११७ ।

५. राकुर गोपाल सिंह बदनर, जयमल वंश प्रकाश, टिप्पणी १, पृ० ४१ ।

६. रत्ना मंडरी नाटक, नूनिता तथा पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, जिल्द १, समय १ ।

७. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, समय १ ।

उठानी पड़ी जिससे गाहड़वाल वंश के हाथ से साम्राज्य का पश्चिमी भाग का महत्वपूर्ण प्रदेश दिल्ली निकल गया जिस पर कालान्तर में चौहानों का प्रभुत्व स्थापित हुआ ।<sup>१</sup>

ग्रन्थकार के मतानुसार एक बार राजा विजयपाल ने दिग्विजय की कामना से दिल्ली-पति अनंगपाल तोवर पर आक्रमण किया—

दिल्ली वै अनंग, राज राजगं अभंग ।  
ता उपपर कमध्वज्ज सेन सज्जी चतुरंग ॥  
अग आतस आभूत, पुटिठ वधं गजपत्तं ।  
ता पुट्ठं विजयपाल, समर सज्जै रन मत्तं ॥  
अजर्नज भोज नीसान दल, मनुवसंत रज्जिय विपिन ।  
करि कूय कूप उपपरधरा, वध अंतर सपन ॥ ६१७ ।<sup>१</sup>

राजा अनंगपाल ने कमध्वज्ज के आक्रमण की सूचना पाकर अपनी विशाल वाहिनी एकत्र कर कालिन्दी की उत्तर दिशा में मुकाम किया । इसी बीच अजमेर पति राजा सोमेश्वर अनंगपाल की सहायतार्थ दिल्ली की ओर अपनी विशाल चतुरंगिनी सेना लेकर अग्रसर हुआ । सोमेश्वर चौहान तथा तोवर अनंगपाल की सम्मिलित सेना ने राजा विजयपाल की सेना को दबा दिया जिससे विवश हो राजा विजयपाल को हटना पड़ा—

जित्ति भत्ति भारय्य भौ, गौ फिरि ग्रह कमधज्ज ।  
उप्परि अजमेर पेहु डोला पंच सुरज्ज ॥

विजयपाल एवं सोमेश्वर की सहायता के प्रति कृतज्ञता प्रदर्शन हेतु दिल्लीपति राजा अनंगपाल तोवर ने अपनी एक पुत्री कमला का विवाह सोमेश्वर से कर दिया तथा दूसरी कन्या सुरसुन्दरी का कान्यकुब्जेश्वर राजा विजयपाल के साथ चिर मैत्री के फलस्वरूप विवाह कर दिया—

अनंगपाल पुत्री उनय । इक दीनी विजयपाल ।  
एक दीनी सोमेश की । बीज बवन कलिकाल ॥ छं० ६८१ ।  
एक नाम सुर सुन्दरी । अनिवर कमला नाम ।  
दरसन सुर नर दुल्लही । मनो सु कलिका काम ॥ छं० ६८२ ।<sup>१</sup>

रासो में ही विजयपाल की एक अन्य रानी का भी उल्लेख मिलता है जो राजा जयचन्द के विमाता पुत्र वीरमराय की जननी थी । इसका नाम सैरन्धी था ।

१. डॉ० रमाशंकर त्रिपाठी, हिस्ट्री आव कन्नौज, पृ० ३८७ ।
२. पृथ्वीराज रासो, ना० प्र० स० काशी, छं० ६१७, स० १ ।
३. वही, छं० ६८१-८२, स० १ ।

‘यंघोरा जय चन्द्रा विजयपाल सपुत्रह ।  
संरंघो बर जनम नाम थोरम रायतह ॥’<sup>१</sup>

इसके विपरीत इतिहासकार राजा विजयपाल की रानी का नाम चन्द्रसेखा मानते हैं तथा तोवर यंघो राजा अनंगपाल से उसके किसी सम्बन्ध को स्वीकार नहीं करते हैं ।<sup>२</sup>

प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता डॉ० ओला विजयपाल तथा जयचन्द आदि नामों को छोड़कर विजयपाल की विवाहादि ‘रामो’ वर्णित घटनाओं को कल्पित मानते हुये लिखते हैं कि—  
“नन्त निघना है कि कन्नौज के राजा विजयपाल ने, जिसने दिल्ली के अनंगपाल की पुत्री मुन्दरी से विवाह किया था, विजय यात्रा करते हुये सतुघ्न तक का सारा प्रदेश जीत लिया । बहन से राजा बघीन हो गये, परन्तु पृथ्वीराज ने उसकी अधीनता स्वीकार न की । विजयपाल ने मुन्दरी से उत्पन्न पुत्र जयचन्द ने भी जब राजसूय यज्ञ के लिये सब राजाओं को निमंत्रित किया, तब भी पृथ्वीराज न आया ।”<sup>३</sup>

इस सम्पूर्ण कथन में विजयपाल के पुत्र जयचन्द के उसके पीछे गद्दी पर बैठने और पृथ्वीराज तथा जयचन्द की समकालीनता के सिवा एक भी बात सत्य नहीं है । सोमेश्वर के समय अनंगपाल दिल्ली की गद्दी पर था ही नहीं और न उसकी पुत्रियों का विजयपाल और सोमेश्वर में विवाह हुआ था । कमला की सोमेश्वर के साथ विवाह की कथा के समान मुन्दरी के विजयपाल के साथ विवाह की कथा भी कल्पित ही है । विजयपाल के दिग्विजय की कथा भी निर्मूल है ।<sup>४</sup>

इतिहासकारों के मतानुसार राजा विजयचन्द अथवा विजयपाल वैष्णव मतावलम्बी था तथा उसने अनेक विष्णु मन्दिर बनवाये थे ।<sup>५</sup> डॉ० रमाशंकर त्रिपाठी तथा अनेक दानपत्रों के विवरणों के अनुसार वह परम महेश्वर था ।<sup>६</sup> वृद्धावस्था होने पर अपने जीवन काल में ही उसने अपना राज्य अपने परम प्रतापी पुत्र जयचन्द को सौंप दिया था ।<sup>७</sup>

पृथ्वीराज रामो का उपर्युक्त वर्णन भले ही कुछ कल्पना प्रभूत हो किन्तु उसके वर्णन से इतना स्पष्ट अवश्य हो जाना है कि राजा विजयपाल एक पराक्रमी शासक था जिसे इतिहासकार भी स्वीकार करते हैं । विद्वानों को यह भी दृष्टि में रखना चाहिये कि रामो एक काव्य ग्रन्थ है, इतिहास नहीं । अतः उसमें कल्पना का योग होना स्वाभाविक ही है ।

१. पृथ्वीराज रामो, माहिष मर्द्यान उदयपुर, छं० ६१, स० ५८, जिल्द ४, पृ० ८०२ ।

२. डॉ० रमाशंकर त्रिपाठी हिंदी आव कन्नौज, पृ० २९६ ।

३. पृथ्वीराज रामो का निर्माण काल, कोशोत्सव स्मारक संग्रह, पृ० ४८ ।

४. जयदीनसिंह गहलोत मारवाड़ का इतिहास, पृ० ८६ ।

५. डॉ० रमाशंकर त्रिपाठी, हिंदी आव कन्नौज पृ० ३८७, जिल्द ४, पृ० ११८ ।

६. धीमेन्द्र पाण्डेय, भारत का पहल इतिहास, पृ० ४११ ।

**वीरदण्ड**—‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार राजा वीरसिंह के उपरान्त वीरराज की वंशावली में १३वीं पीढ़ी में राजा वीरदण्ड हुये ।<sup>१</sup> रासोकार केवल नाम का उल्लेख करता है, विस्तृत विवेचन कहीं भी प्राप्त नहीं होता । रा० पं० मो० सन्देश की रासो की प्रति, धारणोज की प्रति तथा साहित्य संस्थान उदयपुर ने प्रकाशित रासो इनके विषय में सर्वथा मौन है । रासो का कोई भी अन्य संस्करण वीरदण्ड नामक राजा का समर्थन नहीं करता है ।

पंडित सदाशिव दीक्षित ‘वीरदण्ड’ की वीरसिंह का विजेय मान मानते हैं ।<sup>२</sup> रासो के अन्य संस्करणों में इनका उल्लेख न होना सन्देह का विषय है । इसी प्रकार के कवि-राव मोहनसिंह ने भी अनेक नामों की विजेय माना है ।<sup>३</sup> ऐसी विषम स्थिति में इनके विषय में अधिक कुछ लिखना भ्रम का प्रतिपादन मात्र होगा ।

**वीरसिंह**—‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार राजा वीरसिंह के उपरान्त वीरराज वंशावली १२वीं पीढ़ी में राजा वीरसिंह हुये ।<sup>४</sup> ग्रन्थकार ने इनका नाम मात्र वंशावली में प्रस्तुत किया है । समस्त ग्रंथ इनके विषय में मौन है । रा० ए० सो० सन्देश की रासो की प्रति उपलब्ध कथन का समर्थन करती है ।<sup>५</sup> किन्तु धारणोज की रासो की प्रति तथा साहित्य संस्थान उदयपुर से प्रकाशित पृथ्वीराज रासो इनके विषय में सर्वथा मौन है । शिवारिन्द एवं प्रणीत संस्कृत ग्रन्थों में भी इस नाम का अस्तित्व प्राप्त नहीं होता है ।<sup>६</sup>

पंडित सदाशिव पना नहीं किस आधार पर गोपेन्द्र, गोविन्दराज, जयपाल वगैरे नामों को वीरसिंह के ही नाम मानते हैं और लिखते हैं कि—“इनका नाम शिवारिन्द के गोपेन्द्र, पृथ्वीराज विजय में गोपेन्द्रराज, प्रबन्धकोष में गोविन्दराज, रश्मीर सारसाग में जयपाल चक्री और रासो में वीरसिंह बतलाया गया है । यद्यपि उपलब्ध सभी ग्रन्थों में इनके नाम में वैषम्य पाया जाता है, तथापि इनके नामों की अनेकता में दोष का परिमार्जन हो जाता है और किसी की भी प्रामाणिकता में सन्देह का अवसर नहीं रहता ।”<sup>७</sup> पंडित श्री को भले ही सन्देह न रहा हो किन्तु पुष्ट प्रमाणों के अभाव में यह बतलाना उचित है कि यह सब नाम एक ही व्यक्ति के हैं । अतः वीरसिंह राजा की विद्या का विद्वत् बने हुये हैं ।

१. पृथ्वीराज रासो, ना० प्र० स० काशी, छं० २८६, स० १ ।
२. पं० सदाशिव दीक्षित, रासो समीक्षा, पृ० ११० ।
३. कविराव मोहनसिंह, पृथ्वीराज रासो की प्रामाणिकता पर पुनर्विचार, पृष्ठनोट, पृ० १७, राजस्थान भारती, भाग १, अंक २-३ गुन्नांक जुलाई-अक्टूबर ।
४. पृथ्वीराज रासो, ना० प्र० स० काशी, छं० २८६, स० १ ।
५. रासो की हस्तलिखित एवं अप्रकाशित प्रति, पृ० १० ।
६. देखिए, प्रस्तुत शोध प्रबन्ध, परिशिष्ट भाग ।
७. पं० सदाशिव दीक्षित, रासो समीक्षा, पृ० ११३-१४ ।

वीसलदेव—पृथ्वीराज रासो' के अनुसार चौहान वंश परम्परा की ३६वीं पीढ़ी में राजा धर्माधिराज चौहान के उपरान्त वीसलदेव उनका उत्तराधिकारी हुआ। प्रारम्भ में कवि ने वीसलदेव का मधिवन परिचय कुछ छन्दों में वर्णित कर दिया है<sup>१</sup> किन्तु उनका विस्तृत वर्णन आना (अर्धराज) कि मां उनके जन्म कथा से लेकर दानव होने तक की कथा अपने पुत्र के आग्रह करने पर इस प्रकार कहती है—“ऋषियों ने आवू पर्वत पर यज्ञ किया तथा उन्हीं से कालान्तर में राज्य प्राप्त हुआ। पर्याप्त समय के उपरान्त उसी कुल में महाराज धर्माधिराज ने जन्म ग्रहण किया तथा उन्हीं राजा के घर में कालान्तर से वीसलदेव नामक बालक ने जन्म ग्रहण किया—

पुत्त मुनहु इह वत्त पुरानो । कहतं होइ गद गद वानी ॥  
अनल कुंड आवू रिपि कीनों । राज उपाइ राजसिर दीनों ॥ छं० ३३७ ।  
ताके कुल तं उप्पन्नी । महाराज धर्माधि ॥  
ताके वीसलदेव नृप । सब राज आराधि ॥ छं० ३३८ ॥<sup>१</sup>

राजा वीसलदेव के बड़े होने पर उन्हें उत्तराधिकार के रूप में अपने पिता धर्माधिराज चौहान की राजगद्दी आनन्द सं० ८३१ शुक्रवार वैशाख मास में प्राप्त हुई। राज्यमहोत्सव में छत्तीसों वंश के छत्रिय उपस्थित थे। अजमेर नगरी में उत्सव इस प्रकार मनाया गया मानों इन्द्रपुरी में उत्सव मनाया गया हो।<sup>२</sup> राजा वीसलदेव ने अपने अन्तिम समय में पट्टन पर आक्रमण करके उसे अपने आधीन बना लिया तथा वहाँ पर छत्र धारण किया।<sup>३</sup> राजा वीसलदेव के घर एक पुत्र ने जन्म लिया, जिसका नाम सारंगदेव था। राजा वीसलदेव स्वभाव से आनंद प्रिय था। एक बार मृगया के अन्तर्गत एक अत्यन्त रमणीक स्थान देखकर, अपने समस्त मंत्रियों को एकत्र कर, उस स्थान पर एक सुन्दर सरोवर बनवाले की आज्ञा प्रदान की—

तयदेखि नरिन्द अनूप ठाम । निर्झर गिरिन्द बन अस्मिराम ॥  
मुल्लाय लिए मन्त्री प्रधान । सर रची इहां पट्टकर समान ॥ छं० ३६४ ॥<sup>४</sup>

यह सरोवर आज भी अजमेर के निकट विद्यमान है। रासो के सम्पादक त्रय ने टिप्पणी में इस सरोवर के विषय में इस प्रकार लिखा है। “यह वीसल का तालाब अब तक अजमेर के पास विद्यमान है। उसके किनारे पर जहाँगीर बादशाह ने एक महल बनाया था जिसमें

१. पृथ्वीराज रासो, ना० प्र० स० काशी, छं० २९२-३०५ स० १।
२. वही, छं० ३३७-३३८, स० १।
३. वही, छं० ३३९, स० १।
४. वही, छं० ३४०, स० १।
५. वही, छं० ३६४, स० १।

उसने ईंग्लिस्तान के बादशाह जेम्स पहिले के एलची से मुनाकात की थी। इन टिप्पणों की हमने इस तालाब के किनारे पर खड़े होकर लिखा है। यदि कोई पुरातत्त्ववेत्ता इन मरदान की वर्तमानदशा अपनी आंख से देखे तो उसको बड़ा मोक और आश्चर्य होगा कि छोटे-से सरकार के राज्य में ऐसे प्राचीन स्थलों का जीर्णोद्धार राजकोष के द्रव्य से होता है वस्तु-रेलवाले अपनी रेल इस पर दोड़ा-दोड़ाकर उसको नष्ट-भ्रष्ट किये डामते हैं कि वीर दह तोते वह समूल नष्ट हो जायगा।”

राजा वीसलदेव के एक विशाल हरम था किन्तु राजा सर्वश्रेष्ठ पतिव्रत जानि की पटु-रानी से अधिक प्रेम करता था जिसमें अन्य रानियाँ सपत्नीकडाह के कारण राजा वीसलदेव से द्विष रह जा करनी थीं—

सुरंगधाम अभिराम . तहां बिभ्राम राजकिप ॥  
राग रग नाटक , विनोद सुष महल बोल लिय ॥  
पटरागिनि पांवार , रुपरना गुन जुब्बन ॥  
प्रमदा प्राण समान , नहीं बिसरत इबक दिन ॥  
रति भोग सुरति तिन सौ सदा । क्यहु आन न दिच्छ प्रिय ॥  
विशि सौति सकल एकत्र भय । पुरुषातन तिन दथ किय ॥ छं ३७० ।

सपत्नीकडाह के कारण एक दिन सब रानियों ने मिलकर एक दूती को बुलाकर राजा वीसलदेव का पुरुषत्व नष्ट करवा दिया—

मंगाइ अग्नि तब कियो होम । पर स्वान मांस प्रति घास घोम ।  
उच्चरयी मंत्र आराधि इष्ट । तत काक नयो कान तं नष्ट ॥  
दस दिसा लगि इह करीविद्रि । गत नो पुरुषातन रहि न सिद्रि ।  
हं द्रव्य कह्यौ माता सिधाव । इह सहर छंडि अनि सहरजाव ॥ छं ३७७-७८ ।

राजा वीसलदेव का पुरुषत्व भग हो जाने पर उन्हें अपार विलेप हुआ नया दलालों का पालन करते हुये उन्होंने गोकर्णेश्वर महादेव की यात्रा करने के निम्ने मुजरात की और

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी प्रथम समय, टिप्पणी पृ० ३७ ।

२. वही, छं ३७०, स० १ ।

३. वही, छं ३७७-७८, स० १ ।

४. गोकर्णेश्वर महादेव की उत्पत्ति कथा स्कन्ध पुराण में मिलती है—

चमत्कारपुरोत्पत्तिः श्रुतात्यन्तो महायते ।

तत्क्षेत्रत्य प्रमाणं यत्तद्वर्मांक प्रकीर्तय ॥ १ ॥

यानि तत्र च पुण्यानि तीर्थान्याय तनानि च ।

सहितानि प्रभावेन नानि सर्वाणि कीर्तय ॥ २ ॥

प्रदान किया । राजा ने महादेव की निरन्तर आराधना करके अपना पुरुषत्व पुनः प्राप्त कर लिया—

पट्टर रात पाछली राज आये डेरा मधि ।  
बढ़ी फ़ाम कामना नई पुरुषातन की सिधि ॥  
प्रात काल करि न्हान धेन विप्रन की दीनी ।  
पचा अन्नित धूप दीप सिव मेवा कीनी ॥  
तिहि चार हुकुम देवल करन पुर वसाइ बीसल घरह ।  
मंगाइ हस्ति असवार हुई फिरयो राजघर आतुरह ॥

राजा बीसतदेव की महादेव की आराधना के फलस्वरूप पुरुषत्व तो प्राप्त हो गया किन्तु उसकी कामगति अत्यन्त प्रबल हो उठी । काम के मद में उसे उचित-अनुचित का भी ज्ञान न रह गया—

काम लुब्ध बोलि सब कामिनि । चार जाग गई जागत जामिनी ।  
सब नारिन की सोच उपग्री । ऐसी कहा संभुवर दिग्री ॥  
सात दिवस एकसी काम कामना सु बढिदय ।  
प्रोढ़ मुगध वय शिद्ध सब भरहरि यिम गदिदय ॥  
परघरनी लँ बोलि घरी नह बिलंब लगाव ।  
जो बिलंब करि रहै ताहि हनिवे की आव ।  
भै नीत काम बिसराम बिन नाम सुनत ओढ़िक परै ।  
अजमेर नयर बीसल निर्पति प्रमदा देपत प्रज्जरै ॥

और भी—

जित जाइ इह मान काम कामना सु बढिदय ।  
अवर ताहि उपरह धयन मूरय पर चढिदय ॥

पंचकोश प्रमाणेन क्षेत्रं ब्राह्मण सत्तना ।  
आयामध्यास तश्चैव चमत्कारपुरोद्भूय ॥ ३ ॥  
प्राच्यां सस्यां गमाशीर्षं पश्चिमेन हरे पदं ।  
दक्षिणोत्तरयोश्चैव गोकर्णेश्वर संज्ञिक ॥ ४ ॥  
हाटकेश्वर राज्ञ तू पूर्वमासी द्विजोत्तमाः ।  
तत्क्षेत्रं प्रयितं लोके सयंपातकनाशनं ॥ ५ ॥  
एतः प्रभृति विप्रेभ्यो दत्तं तेन महात्मना ।  
चमत्कारेण सत्यपानं नाम्ना ख्यातिं ततो गतं ॥ ६ ॥

अध्याय २६, स्कन्ध पुराण ।

तिन दिप्यत चर वस्त मगि आप्पन मुण अण्हि ।

अवला संग उल्लास काहु की फानि न रण्हि ॥

दुज पत्रि बंस सूद्रह वरन, तज न किह तवकत नयन ।

वीसल नरिद इहनय अकलि ल्ह न कहुं नित दिन चयन ॥

नागरिकों के निवेदन करने पर राजा वीसलदेव ने अपने मन को अत्यन्त दुःखाने के निमित्त से अपने प्रधानमंत्री करिपाल को बुलाकर आज्ञा दी कि समस्त छन सम्पत्ति लेकर वीसल सरोवर पर डेरा करो तथा स्वयं ने अपने सब दृष्ट-मित्रों को वीसल नानाच पर एकत्र करके गुजरातपति बाकुलराय पर आक्रमण कर दिया । गुजरात नरेश बाकुलराय भी वीसलदेव का सामना करने के लिये अग्रसर हुआ । वीसलदेव ने अपनी सेना को पत्रव्याप्त से तथा बाकुलराय ने अहिष्णूह में अपनी सेना को युद्ध हेतु खड़ा किया ।

युद्ध का अन्त संधि में हुआ । राजा वीसलदेव उस स्थान पर महल तथा नगर बनाने का आदेश देकर पुनः अजमेर लौट आया । इसी बीच एक दूत ने वीसलदेव को समानार दिया कि यहाँ पर एक अत्यन्त सुन्दर वनिक पुत्री है । राजा वीसलदेव ने वीसलपुर में सन् १८७ में प्रवेश किया । पुष्कर नगर में वह वनिक पुत्री उग्र तपस्या कर रही थी । राजा वीसलदेव उसे देखते ही मुग्ध हो गया । उस वनिक पुत्री ने नाना प्रकार से प्रार्थना की किन्तु कामाग्ध वीसल ने उसकी एक न मुनी और उसका सतीत्व नष्ट कर दिया । वनिक पुत्री ने राजा के कुकृत्य से दुःखी एवं क्रोधित होकर शपथ दिया कि तू जानव हींवर नर भक्षण करने वाला हो—

पुत्री वनिक सराप दीय भर पुहकर नर लोड ।

असुर होइ वीसल नरपति नर पल चारो सोइ ॥ छं० ४९१ ।

तपस्वनी गौरी के शपथ से राजा वीसलदेव की बुद्धि में चाञ्चल्यता आ गई । इसी बीच एक दिन उनके जूते में बैठे हुये सर्प के काटने से उनकी मृत्यु हो गई—

देधि राज फरि क्रोध वान की दण्ड परिप कर ।

वेधि पनग फन जियफ परयो घर तरफत बेसिर ॥

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ४१८-४१. स० १ ।

२. वही, छं० ४४९, स० १ ।

३. वही, छं० ४६४-६८, स० १ ।

४. वही, छं० ४७१, स० १ ।

५. वही, छं० ४७२, स० १ ।

६. वही, छं० ४९१, स० १ ।

७. वही, छं० ५०७, स० १ ।



छुटि तिहि बेर मंतग पेल देयन की धायी ।  
 एक मोजरी मद्धि पनग फन आनि लुकायो ॥  
 फिर राय आय हेंवर चट्थी पहरत मौजे पग डस्यो ।  
 भवितव्य बात आघात गति इतनी कहि राजन हस्यो ॥ छं० ५०९ ।<sup>१</sup>

लाख उपाय किये गये किन्तु फिर भी वीसल न बच सका, इसी बीच रथी के मध्य से विष-ज्वालाएं उगलता हुआ एक दानव निकला जिसने मनुष्यों का भक्षण करना आरम्भ कर दिया—

राज मरन उप्पनो सव्य जन सोच उपन्नो ।  
 पटरागिनि पावार निकसि तव ही सत दिन्नो ॥  
 तिन मुप इय उच्चर्यो होइ जादवनि सपुत्तय ।  
 मो असीस इह फुर्यो तुम्म भोगवहु धरत्तिय ॥  
 जिन रथो मद्धि ऊठे असुर धर्ये ज्वाल तिन मुप विषम ।  
 नर भयम जहां लसकर सहर मिले मनिप ते ते भयम ॥ छं० ५११ ।<sup>१</sup>

जब सारंगदेव ने वीसलदेव की असुरत्व की बात सुनी तो उसने युद्ध की तैयारी की किन्तु दुर्भाग्यवश सारंगदेव अपने दानव पिता के समक्ष न ठहर सका और वीरगति को प्राप्त हुआ—

एकादसयी दिवस प्रात दानव पुर आयी ।  
 सफल संन लं सस्य उट्टि लरिवे को धायी ॥  
 वे बाहैं तरवारि इहै मुप पकरि सु कट्टे ।  
 ज्यों बेली द्रुम सघन देपि मरकट फल चुट्टे ॥  
 किय पिता पुत जुद्ध सम असम गिर सी जनु सारंग गिरयो ।  
 मन जानि असुर नर घुसि रहे सब दुहां दुद्धंत फिरयो ॥ छं० ५१२ ।<sup>१</sup>

दानव वीसल देव बूढ़-बूढ़कर मनुष्यों को भक्षण करने लगा । अतः इसका नाम इसी कारण से ढूढ़ा पड़ा । कवि ने लिखा है कि—

ढूँढि ढूँढि लाये नरन, तातें ढूँढा नाम ।  
 देख पुरी अजमेर पुर, रमन करी वे राम ॥ छं० ५१७ ।<sup>१</sup>

१. पूर्वराज रासी, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ५०९, स० १ ।
२. यही, छं० ५११, स० १ ।
३. यही, छं० ५१२, स० १ ।
४. यही, छं० ५१७, स० १ ।

दानव ढूँढा का आतंक चारों ओर फैल गया था। भय के कारण लोगों ने बड़े-बड़े नगर खाली कर दिया। दानव जिस वन में रहता था उसमें किसी जीव का प्रवेश भय के कारण न होता था, समस्त दिशायें शून्य हो चुकी थी। उसकी घोर हिंसात्मकता के समस्त मनुष्य और अन्य समस्त जीवों की क्या चर्चा सिंह उद्भय विकारात् जन्म भी पनादन कर चुके थे—

सौ दानव अजमेर घन, रह्यो दोह घन अन्त ।

मुन्न दिसानन जीव की, चिर बावर जग मन्त ॥ छं० ५२६ ।

तहँ सिंह न अग्न न पंखि वनं, दिसि सून नई दरि जीय वनं ।

नह मातह मंत अमंत किये, पिय की घरनी रह तत लियं ॥ छं० ५२७ ।

तहँ ठाय नयानक सोच तयं, तहँ ठाय फलाफल सोधि वयं ।

तिह ठाय नयं नर नारि नरं, तिह ठाय न पयिय पंच वनं ॥ छं० ५२८ ।

तिहँ ठायें गजवर बाजि ननं, तिहँ ठाय न सिद्धय साधनं ।

तिहँ ठाय न दारिद्र द्रव्य गनं, हिम मात न तात न मोह मनं ॥ छं० ५२९ ।

ग्रन्थकार के अनुसार यह दानव सौ हाथ ऊँचा था, हाथ में विश्वास पद्म लिये रहता था तथा मुँह से निरन्तर अग्नि ज्वालाएँ फँका करता था—

अगह नान प्रमान, पंच सँ हृष्य उनं कह ।

छह ऊँचो उनमान, त्रिनय लट्ठिछनह विषेवह ।

हृथ्य खड्ग विकराल, मुष्य ज्वालयन सट्ट ॥ छं० ५३० ।

राजा आना ने दानव की सेवा करने का निश्चय किया किन्तु उसकी माया ने उसे बहुत समझाया कि कुमंत्र मत ग्रहण करो। ढूँढा दानव जो इतना भीषण है, यह तो मनुष्यों को ढूँढ़-ढूँढ़ कर भक्षण करता है और तूम उसकी सेवा करने के लिये आग्रह करते हो—

पुत्र अमंत जु सिप्यो, सिप्यो उरह रहंत ।

ढूँढो नर दुई नपन, तू सेवनह कहंत ॥ छं० ५३२ ।

आना ने अपने पिता सारंगदेव चौहान की मृत्यु का बदला लेने की भावना से तथा दानव की अपनी सेवा भाव से प्रसन्न करने का निश्चय किया तथा अजमेर के वनों में जाकर अपनी बुद्धि से निर्भयता पूर्वक उस दानव को प्रसन्न कर लिया। परिपालरदहन दानव दूता,

१. पृथ्वीराज रासो, ना० प्र० स० काशी, छं० ५२६-५२९, स० १ ।

२. वही, छं० ५८०, स० १ ।

३. वही, छं० ५२२, स० १ ।

४. वही, छं० ५३२-५९, स० १ ।

राजा अना को अजमेर का राज्य देकर आकाश मार्ग में उड़ गया ।<sup>१</sup> आकाश मार्ग में उड़ता हुआ वह दानव नेत्रि तथा हारीफ मुनियों की प्रेरणा से निगमबोध में तीन सौ अस्सी वर्ष तक कठोर तप में संलग्न हुआ ।<sup>२</sup> निगमबोध में उस उग्र तपस्वी दानव की अपार महिमा हुई तथा वह सिद्ध महात्मा हो गया । दिल्लीपति अनंगपाल की पुत्री की सेवा से प्रसन्न होकर उसने उसको वीर प्रसविनी होने का वरदान दिया ।<sup>३</sup> वर देकर ढूँडा दानव काशी की ओर उड़ गया ।<sup>४</sup> काशी में उसने अपने अंगों को काट-काटकर हवन कर दिया ।<sup>५</sup> उसी के विभिन्न अंगों से पृथ्वीराज (नृनीय), संयोगिता तथा अन्य सामन्तों ने जन्म ग्रहण किया—

दिय वीसल वरदान, कुष्य उपजं माहानर ।  
घोर रस उत्तान, जुद्ध मडं न कोई नर ॥  
योर जोति अवतार, मट्ट जिह्वा तन भारिय ।  
नयन जोति संजोगि, पत्ति कुछ पति संघारिय ॥  
दिये सु नयन पुहकर प्रसिध, दियो पाप इन ध्रुव करि ।  
उपजं नारि अति हृष तिन, तेन लिन जाय सुघर ॥ छं० ५८२ ।  
वर दिग्री दुटा नरिद, जाय फासी तट सिद्धी ।  
अत लियो अवतार, मट्ट रसना रस पिद्धी ॥  
सोमेसर परिगह, प्रबन्ध सित उपने पिति नर ।  
हुये वीर अजमेर, किये उपने अपर घर ॥  
सोमेसर वीर गुत पिथ्य हुए, ठौर ठौर ऊपजि बलिय ।

विधि विधि विनान अवलोकि गति, अवर सूर आये मिलिय ॥ छं० ५८३ ।<sup>६</sup>  
इस प्रकार अपने पापों का प्रायश्चित्त कर अपनी आत्मा का उद्धार करके उसने पुनः इस पृथ्वी पर जन्म ग्रहण किया तथा कवि चन्द वरदायी ने उसका छंदों में वृत्तान्त वर्णन किया—

इम आतम उद्धार करि, जनम लियो भुंज आय ।  
सो यत्तांत कवि चन्द कहि, वरयो कवित बनाय ॥ छं० ५८८ ।<sup>७</sup>

दानव ढूँडा की कथा का अन्त यहीं नहीं होता है । 'पृथ्वीराज रासो समय २२' के

१. पृथ्वीराज रासो, ना० प्र० स० काशी, छं० ५५२-५३, स० १ ।

२. यही, छं० ५५४-६८, स० १ ।

३. यही, छं० ५६९-७४, स० १ ।

४. यही, छं० ५७५, स० १ ।

५. यही, छं० ५७६, स० १ ।

६. यही, छं० ५८२-८३, स० १ ।

७. यही, छं० ५८८, स० १ ।

अन्तर्गत हम फिर ढूँढा की कथा का वर्णन पढ़ते हैं। इतना ही नहीं उसके माप ही कवि ने उसकी वहन ढुँढिका का भी विवरण प्रस्तुत किया है। कथा इस प्रकार है। होन्नी के पर्व को देखकर महाराज पृथ्वीराज ने कवि चन्द बरदायी से पूछा कि होन्नी का पर्व क्यों मनाया जाता है—इस पर कवि ने उत्तर दिया “चीहान कुल में ढुँढा नाम का दानव था, उसकी छोटी वहन का नाम ढुँढिका था, जिसके यौवन काल में ही नुशों को मारता हो गयी थी।” ढुँढा बनारस गया तथा वहाँ पर वर्षों से निरन्तर तपस्या कर रहा है, यह सुनकर ढुँढिका भी भाई की सहायताार्थ पहुंची।” ढुँढा दानव ने अपने शरीर को अग्नि में भस्म कर दिया, जिसने पृथ्वीराज चीहान तथा अन्य सूरमा उत्पन्न हुये।” किन्तु ढुँढिका वहाँ भी वर्ष तक बंटी रही, केवल वायु का सेवन करते हुये उसने तपस्या की, उसी का वृत्तान्त सुनी।” उसकी तपन और तपस्या से प्रसन्न होकर पार्वती ने उससे वर माँगने के लिये कहा।” ढुँढिका ने कहा कि मुझे यह वरदान दीजिये कि मैं बालक, युवा एवं वृद्ध सबको भक्षण कर सकूँ।” यह सुनकर पार्वती जी स्तम्भित रह गयीं तथा उन्होंने शिवजी ने जाकर कहा कि ऐसा उपाय बताइये कि ढुँढिका को वर तो मिल जाय परन्तु वह मनुष्य भक्षण न कर सके।” भगवान् साधुजी ने कहा कि उससे कह दो कि जो बिल्व तृण तथा व्याकुल करने वाली वानों में जमुनी की भाँति अनन्त प्रकार के शब्द करे उन्हें छोड़कर सबका अन्न कर सकती है।” इस भगवान् शिव ने पवन को आज्ञा दी कि पृथ्वी पर यह समाचार फैला दो कि लोग काल्पुन मान में तीन दिन तक विचित्र रंग-ढंग कर लें, गदहों पर चढ़-चढ़कर हँमें, सिर पर मूष रख, समूह बनाकर गलियों में भ्रमण करें तथा हो-हो शब्द का उच्चारण करके शोर मचायें।” ढुँढिका राक्षसी ने आकर देखा कि लोग पागलों की भाँति गदहों पर चढ़े हुये हो-हो गदर कर रहे हैं, दमनीय बात कर रहे हैं, सिन्धूराग बजाते हुये ‘नवला’ गीत गा रहे हैं। हो-हो करके हाँहा करने हुये वे विपरीत आचरण कर रहे हैं घर-घर में आग जला रखी है, वे धून और राख उड़ा रहे हैं तथा नाचते गाते हुये परस्पर काँध दिखाते हैं। काल्पुन मान में वायु ने इस प्रकार का भाव पैदा कर दिया, लाज तो चली गयी किन्तु बिप्ल भी टल गया।” इस प्रकार जहाँ

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ५, स० २२।

२. वही, छं० ६, स० २२।

३. वही, छं० ७, स० २२।

४. वही, छं० ८, स० २२।

५. वही, छं० ९, स० २२।

६. वही, छं० १०, स० २२।

७. वही, छं० ११, स० २२।

८. वही, छं० १३, स० २२।

९. वही, छं० १४-१५, स० २२।

१०. वही, छं० १६-२०, स० २२।

दृष्टं विनस्ति दूरं दृष्टं । सबके दृश्य का द्वन्द्व नष्ट हो गया, चैत्र का महीना आया तथा घर-घर में आनन्द छा गया ।<sup>१</sup> जाड़ा बीतने तथा वसंत आगमन पर लोग होलिका पर्व की पूजा तथा दुष्टिका राक्षसी की स्तुति गान करते हैं—

गतेन पार समये, वसंते च समागमे ।

होलिका प्रव्व पूज्यन्ते, दुंढा देवी नमोस्तुते ॥ छ० २२ ।<sup>२</sup>

इसी प्रकार की कथा का विवरण भविष्य पुराण में भी देखने को मिलता है । पृथ्वीराज के समान ही, इसमें दुधिष्ठिर ने श्रीकृष्ण भगवान से होलिकोत्सव के विषय में जानने की जिज्ञासा प्रकट की । कृष्ण भगवान ने उत्तर दिया कि कृतयुग में महाराज रघु ने पुरवासियों द्वारा बालकों को नाना प्रकार के कष्ट देने वाली ढोढी राक्षसी के उपद्रव सुनकर गुरु वशिष्ठ ने उसके बारे में पूछा था जिसके उत्तर में उन्होंने ढुढी की कथा कही थी ।<sup>३</sup>

काशी के विश्वनाथ पंचागम् के होलिका दाह प्रकरण के अन्तर्गत भी दुंढा राक्षसी का उल्लेख हुआ है ।<sup>४</sup>

कहने की आवश्यकता नहीं कि दुष्टिका की कथा का विवरण किसी क्षेपककर्ता की कृपा का फल है । सम्भवतः क्षेपककर्ता को दुष्टिका की कथा विदित रही होगी, उसी ने दुंढा दानव के नाम सादृश्य पर दुष्टिका को उसकी कथा में जोड़ दिया तथा दुष्टिका को उसकी बहन लिख दिया है । वीसलदेव के कोई बहन थी, ऐसा उल्लेख रासोकार ने कहीं नहीं किया है । वीसलदेव का उन्मुखतः विवरण प्रायः रासो की सभी संस्करणों में कम या अधिक मात्रा में प्राप्त हो जाता है । दुष्टिका की कथा केवल बृहत् रूपान्तर में ही देखने को मिलती है ।

पंडित सदाशिव दीक्षित वीसलदेव को प्रामाणिक सिद्ध करने की चेष्टा करते हुये लिखते हैं—पृथ्वीराज विजय के अतिरिक्त समुपलब्ध सभी आधारों से इसका नाम वीसल प्रतीत होता है, विग्रहराज नहीं । केवल जयानक ही इसे विग्रहराज (तृतीय) इस नाम से संबोधित करते हैं । ऐतिहासिक दृष्टिकोण से वीसल उपाख्यान अध्ययन करने के अनन्तर अनेक समीक्षकों का अनुमान है कि कदाचित् इसका नाम विग्रहराज रहा हो, परन्तु अपने दुराचर्यों के कारण इसने वीसलदेव इस नाम से ख्याति पाई हो । प्रयोग शूद्र, अत्याचारी शायक, धर्म नाशक, घरती घमक आदि के लिये किया जाता है ।, [वृषं धर्मं लाति गृहलाति इति वृषलः, अदवा वृषं धर्मं तुनाति छिनत्ति इति वृषलः ।]<sup>५</sup>

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छ० २१, स० २२ ।

२. वही, छ० २२, स० २२ ।

३. भविष्य पुराण, १३-३०. प्र० १३३ ।

४. विश्वनाथ पंचागम्, होलिका दाह प्रकरण, १ ।

५. पं० सदाशिव दीक्षित, रासो समीक्षा, पृ० ११९-१२० ।

डॉ० दशरथ शर्मा भी वीसल को कामान्ध एवं मदान्ध देखकर उसको विग्रहराज मानने हुये लिखते हैं कि—“उसका (धर्माधिराज) का पुत्र विग्रहराज तृतीय वासन्ध मे कामी एवं मदान्ध था । सम्बत् १३४० से पूर्व रचित चौहानों की वंशावली में भी उसे इसी मन्त्र बताया गया है ।” प्रबन्धकोप के अन्त में दी हुई वंशावली के आधार पर भी महात्म्य वीसलदेव के विषय में लिखते हैं कि—‘इस विग्रहराज तृतीय ने मालवाधीन उद्योगियों की समुन्नति की साधना के लिये अपने पूर्व वैर को विसार कर सारंग नामक अपना छात्र दे डाला था, जिसकी समुपलब्धि से उसने (मालवाधीन ने) गुजरात पर विजय पाई थी— इसका उल्लेख पृथ्वीराज विजय के पंचम सर्ग में स्पष्ट रूप से पाया जाता है—

मालवेनोदयादित्येनास्मादेवाप्यतोन्नतिः ।

मन्दाकिनीहृदादेव लेने पूरणमस्मिता ॥७६॥

सारङ्गस्य तरङ्ग स ददौ यस्मिं मनीषमम् ।

नह्यु च्यं श्रवसं क्षीरसिन्धोरन्यः प्रयच्छति ॥७७॥

जिगाय गुजर कर्ण तमश्च प्राप्त मालयः ।

सन्धानूसः सूर्यरथ करोति द्योमलघनम् ॥

वीसलदेव के इस कृत्य से किसी गूढाभिसन्धि का, किसी दुर्भावना का और रामोकार के शब्दों में इसकी कामुकता का परिचय मिलता है ।

जग दुष्प वीर वीसल नरिद, बहु पाप रत्न दरघान अंध ।

कामंध अंध सुज्यो न काल, हक अहक जोरि गिरि इबरमात ।

घनमदन सदन नरि सव्य जन्म, तिहि परत उडिड प्रिया फदनम् ।

पृथ्वीराज विजयकार ने विग्रहराज तृतीय को भोगीन्द्र—इस विशेषण से विभूषित कर उसकी कामुकता की अभिव्यक्ति जिस विशेषण से प्रदत्त की है वह विवेचनीय है—

‘तस्य विग्रहराजेन भोगीन्द्रेणानुजन्मना ।’

रासोकार के ‘कामान्ध’ इस पद से जिस चरित का आभास मिलता है, भोगीन्द्र पद के वैसे ही अभिव्यंजना होती है । ‘वीसलदेव’ उपाख्यान कामान्ध और भोगीन्द्र इन दोनों में पूर्णतया परिपुष्ट हो जाता है ।”

अन्यत्र पंडित जी ने—वीसलदेव का ही नाम विग्रहराज होने के तर्क में इन प्रवाद लिखे हैं—“प्रबन्ध चिन्तामणि में लिखा है कि एक बार अजमेर कासक का एक लामास भी हुमायूँ पाल भूपाल की सभा में पहुँचा । राजा ने उससे पूछा कि ‘आपके हमारी हुमायूँ के लिये ?’

१. डॉ० दशरथ शर्मा, पृथ्वीराज रासो की कथाओं का ऐतिहासिक अध्ययन, पृ० ४, राजस्थानी, भाग ३, अंक ३ जनवरी, १९४०, कलकत्ता ।
२. पं० सदाशिव दीक्षित, रासो समीक्षा, पृ० १२०-१२१ ।

दम पर उसने उत्तर दिया कि 'विश्व के ग्रहण करने के कारण जिसका नाम विश्वल (वीसल) पड़ गया हो, उसके विजय में संदेह करना व्यर्थ है।' इस पर राजा के कपर्दी मंत्री ने कहा कि 'तुम भूल करते हो, गमनायक श्रव्य अथवा श्रल धातु से इसकी निष्पत्ति हुई है। अतः पक्षी के समान फुदकने वाले पुरुष का नाम विश्वल (वीसल) है।' इस प्रकार अपने नाम में दोष देखकर राजा ने पटितों की सम्मति से अपना नाम विग्रहराज रखा। दूसरे वर्ष जब श्री कुमारपाल के सम्मुख यह नाम बतलाया गया तो कपर्दी मंत्री ने फिर कहा कि 'विग्रहराज का पद की निष्पत्ति दो पदों से हुई है विग्र और हराज, जिससे इसका अर्थ होता है जिसने हर (गद्ग) और अज (नारायण) को नासिकारहित कर डाला हो।' इस पर राजा ने अपना नाम कवि बान्धव रखा।"

जहाँ एक ओर पंडित सदाशिव, दीक्षित डॉ० दशरथ शर्मा आदि वीसलदेव की प्रमाणिक व्यक्ति सिद्ध करने में भगीरथ प्रयत्न कर रहे हैं, वहाँ दूसरी ओर रायवहादुर गौरीशंकर हीराचन्द आंझा जैसे व्यक्ति वीसलदेव की पूर्णरूपेण अनेतिहासिक तथा उससे सम्बन्धित समस्त घटनाओं की काल्पनिक मानते हैं। उन्होंने एक स्थान पर लिखा है कि "पृथ्वीराज रासो में वीसलदेव की गद्दी नगीनी का संवत् ८२१ दिया है और लिखा है कि उसने शत्रुओं से अजमेर लिया और उसके बलाने पर वीसल सरोवर (वीसलिया नाम का तालाब, अजमेर में) पर अन्य राजा तो आ गये, परन्तु गुजरात के चालुक्य राजा बालुकाराय के न आने के कारण वीसलदेव ने उसकी राजधानी पाटन पर चढ़ाई की। बालुकाराय के मंत्रियों ने उससे मिलकर संधि कर ली।

यह सम्पूर्ण कथन भी निराधार है। अजमेर बसने के बाद वीसलदेव नाम का एक ही चौहान राजा (सोमेश्वर का बड़ा भाई) हुआ, जिसने अपने नाम से वीसलसर तालाब बनवाया और उसके समय के जिलालख वि० १२१०, १२११ और १२२० के मिले हैं (संवत् १२१० मार्ग शुदी ५ आदित्य दिने श्रवण नक्षत्रे मकरस्थे चन्द्रे हर्षणयोगे बालवकरणे हर केलि-नाटक समाप्त ॥ मंगल महाश्रीः ॥ कृतिरियं महाराजाधिराज परमेश्वर श्री विग्रहराज-देवस्य..... (जिलाओं पर खुदा हुआ हरकेलि नाटक, राजापूताना म्यूजियम, अजमेर में सुरक्षित)।

(ऊं ॥ संवत् १२९१ श्रीः (श्री) परमपासु (शु) वताचायेन ( ण ) विश्वेश्वर (प्र) जेन श्री वीसलदेव राज्ये श्री सिद्धेश्वर प्रासादे मण्डपं (भूषित)। (लोहारी के मंदिर का लेख, अप्रकाशित)।

(ऊं ॥ संवत्, १०२० वैशाख शुक्ति १५ शांकम्भरी भूपति श्री मदनल देवात्मज श्री मन्दीमनदेवस्य ॥ (ट्रिवियन ऐट्रिब्यूगी जिल्द १९ पृ० २१८)।

जिनमे वि० सं० ८२१ अर्थात् पंड्या जी के जनक संवत् के अनुसार वि० सं० ९३१ में

उसका राज्याभिषेक होना किसी प्रकार नहीं माना जा सकता । इसी पाँदवा जी के माने तब से संवत् तक पाटन में सोलंकीयों का अधिकार भी नहीं हुआ था । उस समय तो प्रेमनाथ चावड़ा गुजरात का राजा था । वि० सं० १०१७ में सोलंकी मूलराज ने अपने माना मामल-सिंह को मारकर पाटन का राज्य लिया और चावड़ा वंश की समाप्ति की । बाबुराज नाम का सोलंकी राजा गुजरात में कोई हुआ नहीं ।

विग्रहराज (वीसलदेव) नाम के चार चौहान राजा हुये, जिनमें से तीन तो अजमेर वसने से पूर्व हुये थे । दूसरे विग्रहराज ने, जिसके समय की वि० सं० १०३० की हर्नाथ मन्दिर की प्रशस्ति है, मूलराज सोलंकी पर जिसने १०१७ से १०५२ तक राज्य किया था (राजपूताने का इतिहास, जिल्द १, पृ० २१४-१५) भाकंभरी (सांभर) में चढ़ाई की थी । इस चढ़ाई का वर्णन पृथ्वीराज विजय, हम्मिर महाकाव्य और प्रबन्ध चिन्तामणि में मिलता है, परन्तु पृथ्वीराज रासो के कर्ता को तो केवल एक वीसलदेव का ज्ञान था जिसने बीसलदेव बनाया था । वह मूलतः चतुर्थ वीसलदेव था । वीसलदेव (दूसरे) की सोलंकी राजा मूलराज पर चढ़ाई करने की परम्परागत स्मृति से रासो के कर्ता ने चौथे वीसलदेव की गुजरात पर चढ़ाई लिख दी और वहाँ के राजा का ठीक नाम ज्ञात न होने से उसका नाम बाबुराज रख दिया ।”

रासो के ‘वीसलदेव’ में सत्यता का अंश कितना भी हो किन्तु यह निर्विवाद बात है कि वीसलदेव ऐतिहासिक पात्र है । वास्तविकता यह है कि वर्तमान रासो में बहुत अधिक घोर होने के कारण मूल कथा का अस्तित्व विलीन प्रायः हो गया है । सम्भवतः मूल रासो में इस प्रकार की बहुत-सी अनर्गल बातें न रही होंगी । जब तक रासो के समस्त मर्यादों को लेकर उनका वैज्ञानिक रूप से सम्पादन प्रस्तुत नहीं किया जाता तब तक रासो विवाद का विषय ही बना रहेगा । कोई भी विद्वान अटकल भिड़ाने के अतिरिक्त कर ही क्या सकता है ।

वरसिंह—‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार राजा संकाविट्टार के उपरान्त चौहान राजासो में ११वीं पीढ़ी में राजा वरसिंह हुये ।” रासोकार ने केवल इनके नाम का ही उल्लेख किया है । रा० ए० सो० लन्दन की रासो की प्रति भी उपर्युक्त कथन की पुष्टि करती है ।” पारसीय की प्रति तथा साहित्य संस्थान उदयपुर से प्रकाशित रासो इनके विषय में मौन है । शिलालेख एवं संस्कृत ग्रन्थों में दिये हुये ‘चन्द’ नाम की ही पंक्ति सदाशिव दीक्षित वरसिंह मानते हैं— उन्होंने लिखा है कि—“शिलालेख में ये श्री चन्द इस संकेत से सम्बोधित किये गये हैं और

१. म० म० गौरीशंकर हीराचन्द ओसा; पृथ्वीराज रासो का निर्माण काल, पृ० ४९-५३, कोशोत्सव स्मारक संग्रह, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, सं० १९८५ ।
२. पृथ्वीराज रासो, ना० प्र० सो० काशी, छ० २८६, सं० १ ।
३. रासो की हस्तलिखित एवं अप्रकाशित प्रति, पृ० १० ।



पृथ्वीराजविजय, प्रवन्धकोष और हम्मीर महाकाव्य में चन्द्रराव इस नाम से । सुर्जनचरित में इनका नामान्तर सामन्तसिंह दिया गया है और रासो में वैरसिंह ।”

पता नहीं पड़ित जी ने यह सब कल्पना किस आधार पर कर ली । सामग्री अभाव के कारण वैरसिंह की प्रामाणिकता एवं ऐतिहासिकता के विषय में कुछ भी लिखना अत्यन्त कठिन है ।

संकाविडार—‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार राजा उद्धारहार के उपरान्त चौहान वंशावली में १०वीं पीढ़ी में राजा संकाविडार हुये ।<sup>१</sup> ग्रन्थकार ने इनका नाम वंशावली में गिना दिया है, इनका अतिरिक्त कुछ भी विवरण प्राप्त नहीं होता । रा० ए० सो० लन्दन की प्रति उपयुक्त कथन की पुष्टि करती है ।<sup>२</sup> धारणाज की प्रति तथा साहित्य संस्थान उदयपुर से प्रकाशित पृथ्वीराज रासा इनके विषय में कुछ भी उल्लेख नहीं करता । शिलालेख एवं समस्त प्राचीन संस्कृत के ग्रन्थ भी इनके विषय में मौन है ।<sup>३</sup> संकाविडार की पंडित सदाशिव दीक्षित राजा विन्दसार का विशेषण मात्र मानते हैं ।<sup>४</sup>

ऐसी स्थिति तथा सामग्री अभाव में कुछ भी विश्वासपूर्वक कहना कठिन है । अतः इन्हें ऐसी ही स्थिति में छोड़कर, विश्वास होकर रातोप करना पड़ता है ।

संग्रामसिंह—‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार चौहान वंश परम्परा की १७वीं पीढ़ी में राजा महसिंह के उपरान्त राजा संग्रामसिंह चौहान उनके उत्तराधिकारी हुये ।<sup>५</sup> कवि ने इनका नाम वंश-श्रृंखला का उल्लेख करते हुये ही किया है, अन्य स्थानों पर कवि सर्वथा मौन है । रा० ए० सो० लन्दन की प्रति के अनुसार संग्रामसिंह महसिंह का पुत्र था तथा इनके उपरान्त राजगद्दी पर बैठा । संक्षेप में उपयुक्त कथन की पुष्टि रासो की उक्त प्रति से हो जाती है ।<sup>६</sup> धारणाज की प्रति तथा साहित्य संस्थान उदयपुर से प्रकाशित ‘रासो’ इनके विषय में मौन है ।

पं० सदाशिव दीक्षित इन्हें काल्पनिक व्यक्ति मानते हैं । इनके विषय में उन्होंने लिखा है कि “श्री ओझा जी ने अपनी तालिका में एक ओर ‘संग्राम’ नाम की कल्पना की है जो कि रासो के परिजीवन करने पर अनर्गल प्रतीत होता है । रासो में लिखा है—

१. पं० सदाशिव दीक्षित, रासो समीक्षा, पृ० ११३ ।
२. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० २८५, सं० १ ।
३. रासो की हस्तलिखित एवं अप्रकाशित प्रति, पृ० १० ।
४. देखिए, प्रस्तुत शोध प्रवन्ध, परिशिष्ट नाम ।
५. पं० सदाशिव दीक्षित, रासो समीक्षा, पृ० ११३ ।
६. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० २८७, सं० १ ।
७. रासो की हस्तलिखित एवं अप्रकाशित प्रति पृ० १० ।

जुघ इष्ट सुवन ता सहस मय्य ।

महिंसिध सिध संग्राम पय्य ॥”

संग्रामसिंह की पुष्टि शिलालेखों एवं संस्कृत के प्राचीन ग्रन्थों में भी नहीं होती । सम्भव है यह अनैतिहासिक व्यक्ति हो तथा भाटों की कल्पना का फल हो ।

सम्प्रतिराय—‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार चौहान वंश परम्परा में २२वीं पीढ़ी में राजा सेनराय अथवा सेनराज के उपरान्त उनका पुत्र सम्प्रतिराय राज्य का उत्तराधिकारी हुआ ।<sup>१</sup> कवि ने इनके विषय में अन्य कोई उल्लेखनीय घटना का विवरण प्रस्तुत नहीं किया है । रा० ए० सो० लन्दन की रासो की प्रति उपयुक्त कथन की पुष्टि करती है ।<sup>२</sup> पारसीज की प्रति, बीकानेर की एकलक्ष अक्षर वाली प्रति एवं साहित्य संस्थान लखनऊ ने प्रकाशित रासो में इनका उल्लेख नहीं हुआ है । शिलालेख एवं संस्कृत ग्रन्थ भी इनके विषय में कोई सूचना प्रस्तुत नहीं करते हैं ।<sup>३</sup>

पंडित सदाशिव एक स्थान पर इनके विषय में लिखते हैं कि—“इनका नाम प्राचीन में वाक्पतिराज, शिलालेख में ‘वप्पयराज’ पृथ्वीराज विजय में ‘वाक्पति’ प्रबन्ध शोध में ‘वत्सराज’ हम्मीर महाकाव्य में ‘वप्रराज’ सुर्जन चरित में ‘विश्वपति’ तथा रासो में ‘सम्प्रतिराज’ कहा गया है । इसने तन्त्रपाल का पराभव कर सांभर से विष्णोचल तक अपना अधिकार जमा लिया था । वि० ८५७ से १०५७ के बीच समुत्पन्न सम्पूर्ण चाहमान राजाओं में यह श्रेष्ठ माना जाता है । परन्तु यह आश्चर्य की बात है कि इतने प्रसिद्ध राजा का नाम भी प्रत्येक ग्रन्थकार ने भिन्न-भिन्न रूप से दिया है । कुछ लोगों ने रासो में उल्लिखित माणिक्यराय से इसके एकीकरण का प्रयास किया है, परन्तु प्रमाणाभाव से इस मन की उपादेयता निस्सार प्रतीत होती है । पांच पीढ़ी पूर्व समुत्पन्न माणिक्यराय से सम्प्रतिराज का एकीकरण असम्भवित है । जो हो, इसमें सन्देह नहीं कि वाक्पति के कनिष्ठ पुत्र लक्ष्मण ने वि० १००० में नाडूल में इसी कुल की एक स्वतन्त्र शाखा स्थापित की । सिरौही राज्य के वर्तमान राजा अपने को इसी शाखा के वंशज मानते हैं ।”<sup>४</sup>

पता नहीं पंडित जी ने वाक्पतिराज, वप्पयराज, वाक्पति, वत्सराज, वप्रराज, विश्वपति आदि नामों के साथ सम्प्रतिराय का एकीकरण कैसे कर लिया । कल्पना पर आधारित होने

१. पं० सदाशिव दीक्षित, रासो समीक्षा, पृ० ११४ ।
२. देखिए, प्रस्तुत शोध प्रबन्ध, परिशिष्ट नाम ।
३. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा फारसी, छं० २८८, पृ० ५ ।
४. रासो की हस्तलिखित एवं अप्रकाशित प्रति, पृ० १० ।
५. देखिए, प्रस्तुत शोध प्रबन्ध, परिशिष्ट नाम ।
६. पं० सदाशिव दीक्षित, रासो समीक्षा, पृ० ११५-१६ ।

के कारण उनका मत अधिक ग्राह्य नहीं है। सामग्री अभाव के कारण इस विषय में निश्चित मत प्रस्तुत करना अत्यन्त कठिन है।

**सामन्तदेव**—कवि चन्द्र वर्दायी के मतानुसार चाहुवान जी के उपरान्त उनके वंश में सामन्तदेव नाम का राजा हुआ।<sup>१</sup> कवि ने वंशावली का उल्लेख करते हुये इनका नाम मात्र का विवरण प्रस्तुत किया है। रा० ए० सो० लन्दन वाली रासो की प्रति में भी इनके नाम का समर्थन किया है, किन्तु साहित्य संस्थान उदयपुर से प्रकाशित 'रासो' में तथा धारणोज की प्रति में इनका उल्लेख प्राप्त नहीं होता है। किन्तु शिलालेख, पृथ्वीराज विजय महाकाव्य तथा प्रबन्धकोप में इनका नाम रासो के समान ही मिलता है। अन्तर केवक इतना है कि पृथ्वीराज विजय में इनका नाम सामन्त राय है तथा रासो में इनका नाम सामन्तदेव। विजोलियाँ के शिलालेख में लिखा है कि—

विप्र श्रीवत्सगोत्रेऽमृदहिच्छत्रपुरे पुरा।

सामन्तोऽनन्तसामन्तपूर्णतल्लो नृपस्ततः ॥ १२ ॥

पं० सदाशिव दीक्षित ने एक स्थान पर उपयुक्त श्लोक का अर्थ स्पष्ट करते हुये तथा सामन्तदेव का अस्तित्व स्वीकार करते हुये इस प्रकार लिखा है—'इस साधारण श्लोक के अर्थ करने में अनेक पुरातत्त्ववेत्ताओं ने अपनी प्रतिभा का अपव्यय किया है। कोई विप्र को विप्र मानकर सामन्त को ब्राह्मण सिद्ध करने का भगीरथ प्रयास करता है, और कोई पूर्णतल्ल को विशेषण मानकर उसे सामन्त का सुत सिद्ध करने का द्रविड़ प्राणायाम करता है। वस्तुतः इस श्लोक का सीधा-सादा अर्थ यह है कि 'पूर्व काल में श्री वत्स नामक ब्राह्मण के गोत्र में अनन्त सामन्तों से परिवृत्त सामन्त नामक एक राजा अहिच्छत्र पुरी में हुआ था।' अनेक बातों पर विचार करने से यह प्रतीत होता है कि मुसलमानों के आक्रमण का प्रतिकार करने और आर्य संस्कृति की रक्षा करने में बाप्पारावल के समान ही तत्कालिक सामन्त के उत्कर्ष की कथाएँ किससे अपरिचित है। रासोकार ने 'अरिन्ह मंत जितो जुरेव' से इसका संकेत कर दिया है। इसका शासन काल वि० ८०७-८३५ के लगभग बतलाया जाता है। ऐसे इतिहास प्रसिद्ध व्यक्ति का उल्लेख न करके हम्मीर महाकाव्य तथा सुजैन चरित के प्रणेताओं ने अपनी इतिहासानभिज्ञता प्रकट कर दी है।"<sup>२</sup>

**सारंगदेव**—पृथ्वीराज रासो के अनुसार चौहान वंश परम्परा में ३७वीं पीढ़ी में राजा बीमलदेव चौहान के एक मात्र पुत्र सारंगदेव पैदा हुआ। राजकुमार सारंगदेव का जन्म राजा बीमलदेव की परम प्रिया पटरानी परिहारनी के गर्भ से हुआ था किन्तु दुर्भाग्यवश इन्हें माँ

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० २८४, स० १।

२. पं० सदाशिव दीक्षित, रासो समीक्षा, पृ० १११; मोतीलाल बनारसीदास, संस्कृत पुस्तकालय पो० बा० नं० ७५, नेपाली एवम्पदा, वाराणसी।

का प्यार न मिल सका । इनका लालन-पालन एक वणिक स्त्री ने किया । उस वणिक स्त्री के एक गौरी नाम की कन्या थी । राजकुमार सारंगदेव तथा गौरी एक स्थान पर रहे तथा एक ही स्थान पर बड़े हुये थे । सारंगदेव ने वर्ष तक कन्या गौरी के साथ रहे किन्तु उनके उपरान्त राजा वीसलदेव ने उस कन्या का विवाह कर दिया । विवाहोपरान्त एक बार गौरी का पति वन में गया, जहाँ पर उसकी हत्या एक मिह ने कर दी—

पद रागिनि परिहार, ग्रन्थ सारंग उपन्नी ।

पुत्र होत भइ मृत्य, बाल दानिका को दिन्नी ॥

ता दानिक नंदिनिय, नाम गौरी सारंग सन ।

इषक थान पय पान, इषक सिज्या इषक आसन ॥

नव वरस लगि कन्या रही, ध्याह राज वीसल कियो ।

विवाह हुये वर वन गयो, तहां सिध घर बिनसयो ॥ छं० ३४७ ।

राजकुमार सारंगदेव अपने बहनोई (घा-बाहन के पति) की मर द्वारा तथा मुसल विरक्ति से भर उठे तथा बौद्ध-धर्म ग्रहण कर अस्पृश-शस्त्रों का परित्याग कर दिया । जब यह सूचना राजा वीसलदेव (विग्रहराज) ने सुनी तो अत्यन्त दुःखी हुये—

अति दुचित्त भयो सारंगदेव । नित प्रति करं अरहत सेव ॥

बुध धम्म लियो बंध न तेग । सुनि श्रवण राज मन नो उदेग ॥ ३४८ ।

राजा वीसल देव ने राजकुमार को बुलाकर सम्मान दिया तथा पूछा कि तुमने यह धर्म क्यों ग्रहण कर लिया । तुम अपने मन की शर्म को छोड़ कर दत्तात्री, बड़ा वणिज पुत्र के लिए ही तुमने यह धर्म ग्रहण किया है । बौद्ध धर्म का ज्ञान, नष्ट ज्ञान है, इसे ग्रहण करने से भी दोष होता है । यह पुरुषत्व का घण्टन करने वाला तथा नीति को हानि पहुंचाने वाला है । तुमने राजवंश में जन्म लिया है, तुम राजाओं के साथ दुर्गम बनो में मृगया का आनन्द लो । बौद्ध धर्म के ग्रन्थों की शिक्षा का परित्याग कर दो तथा रामायण और महा-भारत को श्रवण करो, तथा चारों प्रकार के राज कार्यों को करो—

बुल्लाइ कुंअर सनमान कीन । किहि राज तुम्ह यह धम्म लीन ॥

तुम छंडि सरम हम कहौ बत । दानिक पुत्र हन तं दुचित्त ॥ छं० ३४९ ।

इह नष्ट ग्यान सुनियं न कान । पुरुषात्तन भजं किति हान ॥

तुम राजवंश राजनह संग । मृगया सर सेली दन दुरग ॥ छं० ३५१ ।

परमोष तजो बोधक पुरान । रामाइन मुन नारय निरान ।

अभिमान दान रिन सरन धम्म । चार्यो प्रकार मुनि राजधम्म ॥ छं० ३५२ ।

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ३४७, स० १ ।

२. वही, छं० ३४८, स० १ ।

३. वही, छं० ३५०-३५२, स० १ ।

राजा बीसलदेव ने उपर्युक्त उपदेश देकर राजकुमार सारंगदेव का चित्त बौद्ध धर्म की ओर से फिराकर तत्काल दान आदि देकर उसे अस्थ-शस्त्र धारण करने को दिए तथा राज-धर्म का अनुसरण करने के लिए साम्भर प्रदेश का शासक नियुक्त करके भेज दिया—

परमोध मानि राजन कुमार । तत्काल मंगि बंधे हथ्यार ।

भय प्रसन्न राज कीन्ती पसाव । संनरि रजधानी करहु जाव ॥ छं० ३५३ ॥<sup>१</sup>

कालान्तर में राजा बीसलदेव, वणिक पुत्री गौरी के शापवश दानव होकर अजमेर के वनों में विचरण करते हुए मनुष्यों का भक्षण करने लगे । राजा सारंगदेव ने जब अपने पिता की ऐसी अवस्था का वर्णन सुना तो उन्होंने अपनी रानी को रणयम्भ भेज कर स्वयं पिता से युद्ध करने का निश्चय किया—

सुनिय वात तो तात तव । हों पठई रिन थन ।

मंचि बढि तिन तेग बल । जुद्ध जुरन आरम्भ ॥ छं० ५१२ ॥<sup>२</sup>

राजा सारंगदेव चौहान ने एक सहस्र श्रेष्ठ योद्धाओं को अपने साथ लेकर अजमेर दुर्ग को घेर लिया—

एक सहस्र नरि सय्यकरि । सबल सकर दिय फेरि ।

दे निसान चहुवान चढ़ि । पहुंचिय गढ़ अजमेर ॥ छं० ५१४ ॥<sup>३</sup>

राजा सारंगदेव तीन दिन तक दानव (बीसलदेव) दुंडा की प्रतीक्षा करता रहा, किन्तु साक्षात्कार न हो सका । अजमेर की अस्त-व्यस्त दशा देखकर राजा सारंगदेव की अत्यन्त कष्ट हुआ तथा उनकी आँखों में आँसू आ गये । अन्त में उन्होंने अजमेर को पुनः बसाने का निर्णय किया—

अति उद्यान सबयान । मये मढ़ धाम नयानक ॥

दिष्ट देखि सारंग । देव चिते तव वानिक ॥

ताकं कुल उपनीय । तपनि हम को कुच पोयी ।

तात पुकारे नीर । नरे ननन्ह घन रोयी ॥

दिन तीन रहत हुआ फोट मधि । असुर नयन दिख्यो नहिय ।

तव सुचित नए सारंगदे । पुरी बसाओ इह कहिय ॥ छं० ५१५ ॥<sup>४</sup>

१. पुर्यारज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, छं० ३५३, स० १ ।

२. यही, छं० ५१२, स० १ ।

३. यही, छं० ५१४, स० १ ।

४. यही, छं० ५१५, स० १ ।

इधर सारंगदेव ने नगरी को पुनः बसाने का संकल्प किया, उधर एकादशी के दिन प्रातःकाल ही दानव दुंढा (वीसलदेव) ने नगरी में प्रवेश किया। राजा सारंगदेव ही समय सेना दानव को मारने के लिये अग्रसर हुई। इधर योद्धागण तलवार का प्रहार कर रहे थे, उधर वह दानव उन्हें अपने मुँह द्वारा समाप्त कर रहा था। जिस प्रकार ने कोई बन्दर बाटिका को उजाड़ कर देता है, उसी प्रकार देखते ही देखते दानव दुंढा ने नगरी को तबाह नहस कर दिया। अन्त में पिता-पुत्र का विकट संग्राम हुआ जिसमें सारंगदेव पराजित हो प्राप्त हुआ—

एक दसमी दिवस। प्रातः दानव पुर आयी।

सकल सेन लं सस्त्र। उटिठ लरिवें को धायी॥

वे बाहै तरवारि। इहै मुष पफरि सु फट्टै।

ज्यों वेली द्रुम सघम। देखि मरफट फल चट्टै॥

किय पिता पुत्त जुध सम असम। गिर सों जनु सारंग गियो।

मन जानि असुर नर धुत्ति रहै। सब दुंढा दुंढत फियो॥ छं० ५१६।<sup>१</sup>

रा० ए० सो० लन्दन की रासो की प्रति उपर्युक्त कथन का कुछ अंशों में समर्थन करती है।<sup>१</sup> किन्तु धारणोज की प्रति तथा साहित्य संस्थान उदयपुर में प्रकाशित पृथ्वीराज रासो में इनका नामोल्लेख तक नहीं हुआ है। वीकानेर की एकलक्ष अधर वाली प्रति में सारंगदेव को वीसल का पुत्र होना लिखा है। इसी प्रति के आधार पर डॉ० दमरप तर्मा ने लिखा है कि सारंग उसके (विग्रहराज अथवा वीसलदेव) पुत्र पृथ्वीराज का नाम हो सकता है।<sup>२</sup> शिलालेख एवं संस्कृत के प्राचीन ग्रन्थ जिसमें चौहानों की वंशावली दी हुई है इनके विषय में मौन हैं।<sup>३</sup>

पंडित सदाशिव दीक्षित ने एक स्थान पर लिखा है कि—“इनके तीन नाम हैं—अजय देव, आल्हणदेव और बल्हण। अजयदेव, अजयराज और अजय की एकनामता उतनी ही गुप्त है जितनी आल्हणदेव तथा आल्हणराज की एक रूपता। अजय तथा सारंगदेव एक ही व्यक्ति हैं—इसका प्रतिपादन रासो के आधार पर अति नुगमता से स्पष्टतया किया जा सकता है। सुर्जन चरित में इसका नाम बल्हण है।”<sup>४</sup> पता नहीं पंडित जी ने अजय तथा सारंगदेव

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ५१६, स० १।

२. रासो की हस्तलिखित एवं अप्रकाशित प्रति, पृ० ११।

३. पृथ्वीराज रासो की कथाओं का ऐतिहासिक आधार, पृ० ४, राजस्थानी, भाग ३, जनवरी १९४०, कलकत्ता।

४. देखिए, प्रस्तुत शोध प्रबन्ध, परिशिष्ट नाम।

५. पं० सदाशिव दीक्षित, रासो समीक्षा, पृ० १२३।

की एक ही व्यक्ति कैसे मान लिया है। पंडित जी का मत अधिक स्पष्ट न होने के कारण ग्राह्य नहीं हो सकता।

सम्भव है टी० दशरथ शर्मा के कथनानुसार सारंगदेव, वीसलदेव अथवा विग्रहराज के पुत्र पृथ्वीराज का नाम रहा हो। सम्भव है मूल रासो में इस प्रकार की गलती न हो। जब तक रासो का वैज्ञानिक रूप से सम्पादन कर कोई संस्करण सामने नहीं आता तब तक सारंगदेव सन्देह का ही विषय बने रहेंगे। पृथ्वीराज रासो के सारंगदेव पर अब भी प्रश्न-वाचक चिन्ह लगा हुआ है।

सेनराय अथवा सेनराज—‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार चौहान वंश परम्परा में २१वीं पीढ़ी में राजा मोहसिंह चौहान के उपरान्त उनका पुत्र सेनराय अथवा सेनराज उनका उत्तराधिकारी होकर गद्दी पर बैठा।<sup>१</sup> कवि ने इनका विस्तृत विवरण ग्रन्थ में प्रस्तुत नहीं किया है। रा० ए० सो० लन्दन की प्रति उपर्युक्त कथन का समर्थन करती है।<sup>२</sup> धारणोज एवं साहित्य संस्थान उदयपुर से प्रकाशित रासो की प्रतियाँ इनके विषय में मौन हैं। शिलालेख एवं संस्कृत ग्रन्थों के अनुसार भी सेनराय अथवा सेनराज नाम का शासक चौहान वंश में नहीं हुआ।<sup>३</sup> किन्तु पंडित सदाशिव ‘चन्दन’ नामक शासक में सेनराय का आभास पाकर इस प्रकार लिखते हैं—“इनके नाम प्रशस्ति और शिलालेखों में ‘चन्दन’ पृथ्वीराज विजय में चन्दनराज हम्मीर महाकाव्य में चन्दन तथा रासो में ‘सेनराज’ लिखे गये हैं। प्रबन्धकोप तथा मूर्जन चरित में उसके अनुत्लेख का कारण अवगत नहीं।”<sup>४</sup> पता नहीं पंडित जी यह सब अटकल किस प्रकार लगा लेते हैं। स्पष्ट एवं पुष्ट प्रमाणों के अभाव में पंडित जी का मत ग्राह्य प्रतीत नहीं होता है। चौहानों के विषय में कोई प्रामाणिक ग्रन्थ न होने के कारण ही विद्वानों को ऐसी निराधार कल्पना करने का अवसर मिल गया है। सेनराज के विषय में कुछ भी निश्चित रूप से लिखना कठिन है।

सोमेश्वर—रासो के अनुसार अजमेरपति आनन्दमेव का पुत्र सोमेश्वर उनके उपरान्त अजमेर की राजगद्दी पर बैठा।<sup>५</sup> सोमेश्वर की वीरता एवं पराक्रम का वर्णन कवि चन्द ने इस प्रकार किया है—

जिह सोमेशर सूर। सूर जित पुरसानी।

जिहि सोमेशर सूर। चढिधि गुज्जर घर मानी॥

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० २८८, स० १।

२. रासो की हस्तलिखित एवं अप्रकाशित प्रति, पृ० १०।

३. देखिए. प्रस्तुत शोध प्रबन्ध, परिशिष्ट भाग।

४. पं० मदाशिव दीक्षित, रासो समीक्षा, पृ० ११५।

५. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ६१३, स० १।

जिहि सोमेसर सूर । लियो नाहर परिहारिय ।  
कल उप्पम कवि चन्द । चन्द राहा जिम मारिय ॥  
वर वीर धीर धारह पनी । संनरि धरिनि भंजदौ ।  
इक दौरि गौर राजौर यह । पां बट गुजर गंजघी ॥ छं० ६१६ ।<sup>१</sup>

एक बार दिल्लीपति अनंगपाल पर कन्नौज के राजा विजयपाल ने आक्रमण किया ।<sup>१</sup> राजा अनंगपाल ने भी आई हुई विपत्ति का सामना करने के लिये जमुना नदी के उत्तर में मुकाम किया ।<sup>१</sup> जब अजमेरपति ने राजा अनंगपाल पर आक्रमण की बात सुनी तो वह तुरन्त ही एक विशाल सेना लेकर उनकी सहायतायें दिल्ली की ओर चल पड़ा—

मन्नेव सूर नर भैंत धाम । पुम्मेर नद नीतान ताम ।  
चढ़ि चल्या सेन सजि चहुवान । उप्पटे जानि सत सिधुपान ॥ छं० ६२१ ।  
आगे सु सोम दिल्ली सहाय । अगेव विप्य हर कंठ लाय ।  
अगेव मनी लम्बी फुनिद । अगेव सरद निसि उमि चंद ॥ छं० ६२२ ।<sup>१</sup>

राजा अनंगपाल ने राजा सोमेश्वर की सहायता से विजयपाल से घोर संग्राम किया । राजा सोमेश्वर ने इस संग्राम में अपने अपार पराक्रम एवं शौर्य का परिचय दिया तथा विजयपाल कमधुज को युद्ध में परास्त कर दिया । विजयपाल कमधुज को परास्त करके राजा सोमेश्वर अजमेर की ओर प्रत्यावृत्ति हुये ।

जिति भति नारय्य नी । गौ फिरि यह कमधुज ॥  
उप्पादे अजमेर पहुंच । टोला पंच सरज ॥ छं० ६६९ ।<sup>१</sup>

राजा अनंगपाल ने सोमेश्वर की वीरता से प्रसन्न होकर अपनी एक पुत्री कमला का विवाह उनके साथ बड़े धूमधाम से कर दिया ।<sup>१</sup> कालान्तर में इसी रानी के गर्भ में विजयपाल के अन्तिम शासक दिल्लीपति पृथ्वीराज चौहान ने जन्म ग्रहण किया—

सोमेसर तौंअर धरनि, अनंगपाल पुत्रोप ।  
हिन सु पिच्य गर्भ धरिय, दानव गुल छत्रोप ॥ छं० ६८५ ।<sup>१</sup>

१. पृथ्वीराज रासो, नगरी प्रचारिणी सभा, छं० ६१६, स० १ ।
२. वही, छं० ६१७, स० १ ।
३. वही, छं० ६१८, स० १ ।
४. वही, छं० ६२१-६२२, स० १ ।
५. वही, छं० ६६९, स० १ ।
६. वही, छं० ६८१-६८२, स० १ ।
७. वही, छं० ६८५, स० १ ।



पुत्र जन्म के उत्पत्ति में राजा सोमेश्वर ने नाना प्रकार के उत्सव मनाये तथा अनेक प्रदान के दान किये—

मुनि सोमेश्वर वधाइ दिय, हैं गे चौर गुराव ।

अति उछाह अनन्द नरि, नरप मुल चढिदय आव ॥ छं० ६९१ ।<sup>१</sup>

सोमेश्वर जिव उपासक थे । वह प्रातः नित्य सोने का तुलादान दिया करते थे ।<sup>१</sup> मण्डो-  
वर का नरेश नाहरराय राजा अनंगपाल के अधीन था । एक बार दिल्ली आने पर, वहाँ  
पृथ्वीराज को देखकर उन्होंने अपनी कन्या का विवाह करने का वचन दिया था । पृथ्वी-  
राज की ११ वर्ष की आयु होने पर अजमेरपति सोमेश्वर ने नाहरराय के पास दूत भेजकर  
अपने पुत्र का विवाह करने का सन्देश भेजा किन्तु नाहरराय ने अपना वचन तोड़कर विवाह  
करने में इन्कार कर दिया तथा पत्र द्वारा सूचित कर दिया कि तुम्हारा कुल हमारे अनुकूल न  
होने के कारण ही यह सम्बन्ध स्वीकार नहीं ।<sup>२</sup> सोमेश्वर इस अपमान को सहन न कर सके ।  
दोनों दलों में संग्राम असम्भावी हो गया । युद्ध में महाराज सोमेश्वर की विजय हुई । सेना  
द्वारा लूट का घन सोमेश्वर ने समस्त सैनिकों को बाँट दिया ।<sup>३</sup>

सोमेश्वर ने अपनी राज्य सीमा की अभिवृद्धि की कामना करते हुये एक बार मेवात-  
पति मुंगल (मुद्गल) को एक पत्र द्वारा सूचित किया कि या तो तुम हमारी आधीनता  
स्वीकार कर, हमें कर दिया करो अथवा देश छोड़कर समुद्र पार चले जाओ ।<sup>४</sup> राजा मुंगल ने  
भी वीरोचित उत्तर देकर राजा सोमेश्वर को चुनौती स्वीकार कर ली । अतः दोनों दलों में  
युद्ध होना आवश्यक हो गया । एक दिन सोमेश्वर ने अपने समस्त सामन्तों को एकत्र  
कर शुभ मुहूर्त देखकर मेवातपति मुंगल पर आक्रमण कर दिया ।<sup>५</sup> जिसमें सोमेश्वर की  
ही विजय हुई ।

एक बार महाराज पृथ्वीराज चौहान के चाचा कन्ह ने भोलाराय भीमदेव के चचेरे  
भाइयों को मार डाला ।<sup>६</sup> इस कारण भोला भीमदेव चालुक्य के हृदय में सोमेश्वर से दंभ  
सुभता रहता था तथा दिल्लीपति पृथ्वीराज चौहान अगारे के समान जलन पैदा करता था ।  
भीमदेव चालुक्य ने अपने मन्त्रियों को बुलाया तथा एक विशाल चतुरंगिणी सेना तैयार की ।  
उमने अपने मन्त्रियों से कहा "अब मैं शत्रुओं को कुचल डालूंगा तथा समस्त पृथ्वी पर एकछत्र

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ६९१, स० १ ।

२. वही, छं० १-४, स० ७ ।

३. वही, छं० २८-२९, स० ७ ।

४. वही, छं० १, स० ८ ।

५. वही छं० ३, स० ८ ।

६. वही, छं० ४, स० ८ ।

७. पृथ्वीराज रासो, माहित्य संस्थान उदयपुर, कन्ह पट्टी समय ।

राज्य करूँगा ।” इसी भावना से प्रेरित होकर भीमाराज भीमदेव चातुर्वर्ध ने सोमेश्वर की राज्यसीमा पर आक्रमण कर दिया । ज्योंही सोमेश्वर की सीमा में चातुर्वर्धराज की सेना ने प्रवेश किया त्योंही वहाँ के नगर निवासी घर-घर छोड़कर भाग निकले तथा सेना में युद्ध मचा दी । अपनी प्रजा की पुकार सुनकर सोमेश्वर भी पीछे पर पढ़कर दर्सा प्रसार नहीं तैयार हो गया जिस प्रकार सती अपने पति के साथ जाने को तैयार हो जाती है । दोनों दली में घोर संग्राम हुआ । राजा सोमेश्वर ने स्वयं युद्ध में भाग लिया तथा मारकाट मचा दी । अन्तिम समय में महाराज सोमेश्वर युद्धस्थल में मरना निश्चय कर, महाभारत के योद्धाओं के समान भिड़ गया, जिसमें अनेक हाथी-घोड़े तथा कितने ही मैत्रिक धरागायी हूँ । पर रत्न-रंजित होकर समरभूमि में शस्त्र चलाने लगा । उसने हठ्ठार कर तथा घूमकर मनु मनु काट दिया । योद्धाओं के प्राण पथेरु उड़-उड़कर सूर्यमण्डल में मिलने लगे । वीर-बादल घट-खण्ड हो रुधिर में सन गये । कितने ही रुष्ट युद्धस्थल में गड़े हुए प्रसन्न दिखाई पड़े—

हय गय नर नर परिष, निरिय नारत्य समाने ।  
सोमेश्वर चित्तयो, मरण निश्च रण घाने ॥  
रत्न रंग सह अंग, जंग सारह उम्मार ।  
हकि मार धकि सार, सुमि मुकि सुह सुसार ॥  
कल हंत अंक अनभूत हय, उटहि हंस हसहि मिलहि ।  
तन तुटि रुधिर पल हड्ड सनि, कियक कमण उठि रण विलहि ॥ छं० ३७ ।

राजा सोमेश्वर ने अपने ही समान श्रेष्ठ एक सहस्र घुड़ सवारों की युद्ध-धेनु में ब्रह्मर किया, उनमें से पचास वीर महाभारत के योद्धाओं के समान थे । उनमें से ३९ योद्धा वीरगति को प्राप्त हो गये । राजा सोमेश्वर युद्ध क्षेत्र में घिर गये । गिद्ध-सिद्ध बैतागादि ने उनकी प्रेमपूर्वक मन में आराधना की । उसने अद्भुत शक्ति से मुक्ति का साधन किया । उसका प्राण सूर्य में जा मिला । राजा सोमेश्वर ने चन्द्र मण्डल में जाकर गति प्राप्त की । उसका पंच भौतिक शरीर पंचतत्व में मिल गया—

वाज नखिल सोमेश, सहस घर इयक प्रमाने ।  
तिन मज्झह पंचास, वीर नारत मर जाने ॥  
तीन तीस लट्ट पर, परये सोमेश्वर रेत ।  
गिद्ध सिद्ध ययताल, इनहि पूजयो मन रेत ॥  
सडोस मुक्ति अद्भुत जुगति, हंसु हंकि हंसहि नित्यज ।  
सोमेश करी सोमेश गति, पंचतत्त पंचह नित्यज ॥ छं० ३८ ।

- 
१. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, सोमदश तमप ।
  २. वही, छं० ३७, स० ३५ ।
  ३. वही, छं० २८, स० ३५ ।

रामों के अनुभार सोमेश्वर, चालुक्य राज भोलाराय भीमदेव के हाथों पंचतत्व को प्राप्त हुआ ।

रामों के अतिरिक्त भी अन्य समस्त ग्रन्थ इस बात की घोषणा करते हैं कि सोमेश्वर पृथ्वीराज (तृतीय) का पिता था । इतिहासकार भी इस विषय में एक मत है । सम्भव है रामों की सोमेश्वर सम्बन्धी समस्त घटनाएँ इतिहास से मेल न खाती हों, फिर भी सोमेश्वर की ऐतिहासिक व्यक्ति मानने में किसी प्रकार का सन्देह नहीं है । डॉ० गीरीशंकर हीराचन्द ओझा सोमेश्वर तथा मेवातपति मुंगल के युद्ध को अतिहासिक मानते हुये लिखते हैं कि— "रामों में निरा है कि सोमेश्वर ने मेवात के मुंगल राजा (मुद्गल राय) से अन्य राजाओं के नमान कर माँगा । उसके इन्कार करने पर सोमेश्वर ने चढ़ाई कर दी । पृथ्वीराज भी कुछ समय बाद अजमेर से चला और रातोंरात मुंगल सेना पर उसने आक्रमण कर दिया । युद्ध में मुंगल पराजित हुये । मुंगल राजा का ज्येष्ठ पुत्र वाजिद खाँ मारा गया और वह स्वयं कैद हुआ ।

यह कथा भी कल्पित है । सोमेश्वर के समय में मेवात प्रदेश अजमेर के राज्य के अन्तर्गत था । वहाँ कोई स्वतन्त्र राजा नहीं था और मुगलों का तो क्या, अन्य मुसलमानों तक का उस प्रदेश पर अधिकार नहीं था । सोमेश्वर की जीवित अवस्था में पृथ्वीराज इतना बड़ा न था कि युद्ध में जा सकता ।"

ओझा जी के उपर्युक्त मत के विरुद्ध कविराव मोहनसिंह पृथ्वीराज तथा मुंगल नरेश के युद्ध का ऐतिहासिक मानते हुये लिखते हैं कि "मेवाती मुगल क्षत्रिय था, सोमेश्वर तथा पृथ्वीराज के साथ इसके युद्ध होते रहे । बाद में महामन्त्री कैमास के दो बहिर्ने थी, उनमें से एक मुंगल की तथा दूसरी पृथ्वीराज की व्याह दी गई । इस प्रकार सम्भव है उस दक्ष मन्त्री कैमास ने आपसी विद्रोह की समाप्ति की ।" कविराव मोहनसिंह ने मुंगल तथा कैमास की बहन की विवाह की बात रामों के आधार पर ही की है ।

डॉ० गीरीशंकर हीराचन्द ओझा एक स्थान पर सोमेश्वर की मृत्यु के विषय में सन्देह करते हुये लिखते हैं कि "रामों का कर्ता लिखता है गुजरात के राजा भीम से हाथ से पृथ्वीराज का पिता सोमेश्वर मारा गया । अपने पिता का वर लेने के लिये पृथ्वीराज ने गुजरात पर चढ़ाई कर भीमदेव को मारा और उसके पुत्र कचराराय को अपनी ओर से गद्दी पर बिठाकर गुजरात के कुछ परगने अपने राज्य में मिला लिये ।

१. म० म० गीरीशंकर हीराचन्द ओझा, पृथ्वीराज रामों का निर्माण काल, पृ० ५७, कोशोत्सव स्मारक मण्ड, ।
२. पृथ्वीराज रामों, प्रथम भाग, सम्पादकीय पृ० १२, साहित्य संस्थान उदयपुर, स० २०१२ ।
३. पृथ्वीराज रामों, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० १०, स० १६ ।

यह सारी कथा भी असत्य है, क्योंकि न तो सोमेश्वर भीम के हाथ में मारा गया और न भीम पृथ्वीराज के हाथ से। सोमेश्वर के समय के कई मिलानेय मिले हैं, जिनमें से सबसे वि० सं० १२२६ फाल्गुन वदी ३ का विजोलिया का प्रसिद्ध लेख है और ललितम दि० सं० १२३४ भाद्र पद सुदी ४ का है। पृथ्वीराज का सबसे पहला लेख वि० सं० १२३६ ज्येष्ठ वदी १२ का है। वि० सं० १२३६ के प्रारम्भ में सोमेश्वर का देहान्त और पृथ्वीराज की गद्दी नशीनी मानी जा सकती है, जैसा कि प्रवन्धकोप के अन्त की संभावना में कहा गया है। भीमदेव वि० सं० १२३५ में गद्दी पर बिल्कुल बाल्यावस्था में बैठा और ६३ वर्ष बाद वि० सं० १२६८ तक वह जीवित रहा। इतनी बाल्यावस्था में वह सोमेश्वर की मार नहीं सकता और न पृथ्वीराज ने उसका बदला लेने के लिये उस पर चढ़ाई कर उसे मारा था। गुजरात के ऐतिहासिक संस्कृत ग्रन्थों में भी कहीं इस बात का उल्लेख नहीं है। राजपूताना म्युजियम में भीमदेव का वि० सं० १२६५ का एक मिलानेय विद्यमान है। जाटू पर देवदानी गाँव के प्रसिद्ध तेजपाल के जैन मन्दिर का वि० सं० १२८७ की प्रशस्ति के विद्यमान में मन्दिर भी भीमदेव विद्यमान था। डॉ० बूलर ने वि० सं० १२९६ मागं शीर्ष वदी १४ का भीमदेव का दानपत्र प्रकाशित किया है। इससे निश्चित है कि भीमदेव पृथ्वीराज की मृत्यु के अनुमानतः पचास वर्ष पीछे भी विद्यमान था।”

सम्भव है सोमेश्वर से सम्बन्धित कुछ घटनाओं में कलना का योग हो, फिर भी यह निर्विवाद सत्य है कि यह ऐतिहासिक पात्र है जिसकी सत्ता में इतिहासवेत्ताओं की भी मन्दिर नहीं है। डॉ० गोरीशंकर हीराचन्द ओसा, पृथ्वीराज विजय महाकाव्य के आधार पर लिखते हैं कि “पृथ्वीराज (द्वितीय) के पीछे मन्त्रियों ने सोमेश्वर की राजसिंहासन पर बिठाया, जिसने तब तक सारा समय विदेश में बिताया था और अपने नाना जयसिंह से मित्रा पार्य थी। सोमेश्वर ने चेदि (ज्वालापुर जिला) की राजधानी त्रिवरा में जाकर पेरिसाल की कन्या कर्पूरदेवी से विवाह किया, जिससे उक्त काव्य के चरित्र नामक पृथ्वीराज और रजि-राज उत्पन्न हुये। अजमेर की गद्दी पर बैठने के थोड़े ही समय पीछे सोमेश्वर का देहान्त हो गया, और अपने पुत्र पृथ्वीराज की नाबालिगी में अपने मन्त्री कादम्पास (कादम्बर) की सहायता से कर्पूर देवी राज-काज चलाने लगी।”

अतः अब सोमेश्वर की ऐतिहासिकता में किसी प्रकार के गद्दे की स्थान नहीं रहता है।

हरिहरराय—‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार चौहानी की ३२वीं पीढ़ी में राजा हर्षराज चौहान के उपरान्त उनका एक मात्र पुत्र हरिहरराय उनका उत्तराधिकारी हुआ जो मृत्यु के पूर्व बुद्धि वाले प्रसिद्ध थे। कवि ने इनका विशेष परिचय नहीं दिया है। राजा १०० वर्ष

१. डॉ० गोरीशंकर हीराचन्द्र ओसा पृथ्वीराज रासो का निर्माण शाक, पृ० ४४-४६ दोहो-  
त्त्व स्मारक संग्रह,।
२. यही, पृ० ४६।
३. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छ० २९०. स० १।

तन्दन की रासो की प्रति उपर्युक्त कथन का समर्थन करती है ।<sup>१</sup> किन्तु धारणोज की प्रति, बोकानेर की एकलक्ष अक्षर वाली प्रति, साहित्य संस्थान उदयपुर से प्रकाशित रासो की प्रति इनके विषय में कोई उल्लेख प्रस्तुत नहीं करती है । शिलालेख एवं संस्कृत के ग्रन्थ भी उक्त नाम के किसी व्यक्ति की पुष्टि नहीं करते हैं ।<sup>२</sup>

पंडित सदाशिव दीक्षित इन्हें काल्पनिक एवं निराधार बताते हैं । उन्होंने लिखा है कि—  
“कनेक विद्वानों ने इसके अनन्तर रासो में ‘हरिहरराय’ इस एक और नाम के दर्शन किये हैं, परन्तु रासो के परिशीलन करने पर उनका मत भ्रमात्मक प्रतीत हुये बिना नहीं रह सकता, क्योंकि रासो में लिखा है—

सुअ क्रिस्न राज जस क्रिस्न चित ।

हरिहरइ राइ नट विवुध मंत ॥’

प्रमाणों के अभाव में हरिहरराय को ऐतिहासिक अथवा प्रामाणिक मानना अत्यन्त कठिन है ।

१. रासो की हस्तलिखित एवं अप्रकाशित प्रति, पृ० १० ।

२. देखिए, प्रस्तुत शोध ग्रन्थ, परिशिष्ट भाग ।

३. पं० सदाशिव दीक्षित, रासो समीक्षा, पृ० ११८ ।

## हिन्दू पात्र : सामन्त वर्ग

पृथ्वीराज रासो मूलतः भारत वर्ष के अन्तिम हिन्दू शासक महाराज पृथ्वीराज चौहान ( तृतीय ) का जीवन चरित्र है। यही कारण है कि कवि ने महाराज पृथ्वीराज चौहान के विस्तृत वर्णन के साथ ही साथ उनके सहयोगी शूर-वीर सामन्तों का भी विस्तृत वर्णन किया है। इतना ही नहीं, कवि ने पृथ्वीराज चौहान के तत्कालीन महान प्रतिद्वन्द्वी मुजफ्फर भीमदेव चालुक्य, कान्यकुब्जेश्वर जयचंद गाहड़वाल तथा गजनाथिपति माह माहादुरीन गोरी का चित्रण भी पृथ्वीराज चौहान की महानता प्रदर्शन करने के लिए ही किया है। 'रासो' युद्ध प्रधान काव्य है तथा इसी कारण उस समय की आदर्श वीरता का इसमें चित्रण रचा गया है। पृथ्वीराज चौहान के जीवन चरित्र लिखते समय उनके सहयोगी सामन्तों का वर्णन करना भी आवश्यक हो गया था। यही कारण है कि कवि ने पृथ्वीराज चौहान के सामन्तों का चरित्र-चित्रण जन्म से मृत्यु पर्यन्त नहीं किया है। किन्तु प्रसंगानुसार धात धर्म तथा स्वाभि धर्म पर मर मिटने वाले सामन्तों का रासो के अनुसार परिचय प्राप्त कर लेना अनुचित न होगा।

अचलेस चौहान—'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार यह पृथ्वीराज चौहान का प्रतिद्वन्द्व सामन्त था। संयोगिता अपहरण सम्बन्धी संग्राम में वीर बल्लहनकुमार की मृत्यु के पश्चात् पृथ्वीराज चौहान ने अचलेस चौहान को युद्ध-भूमि में अपहरण होने का आदेश दिया—

१. "राज्य की आय के आधार पर राजा के कई नेद किए गए हैं। जिन राजा के राज्य से प्रति वर्ष प्रजा को पीड़ित किए बिना एक लाख बर्ष ( एक प्रहार या तिरका ) संचित होता है, उसे सामन्त कहते हैं।"

डॉ० राजबली पाण्डेय, हिन्दी साहित्य का ग्रन्थ इतिहास, प्रथम भाग, पृ० ७९-८२, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, प्रथम संस्करण, सं० २०१४ दि०।

तव जंपं प्रविराज । सुनो अचलेस संनरिय ।  
 इह सु सूर आचरन । नहीं सामंत संनरिय ।  
 मेन मूर धरि कध । राह संधित गयो धन ।  
 इह अचम आचरन । देव दानव दंतानन ॥  
 मुनि दानव परहरि पर । अपर जुद्ध संधि पंगुर दलह ।  
 सक ही सामि संकट परे । सकल किति कितो चलह ॥ छं० २३०२।'

पृथ्वीराज के वचन सुनकर अचलेस चौहान ने अपना मस्तक नवा कर युद्ध क्षेत्र का मार्ग ग्रहण किया । वीर अचलेस ने अपने पराक्रम तथा रण-कुशलता से अनेक शत्रुओं का सफाया कर दिया तथा स्वयं ने भी अपूर्व संग्राम करते हुए स्वामि धर्म हेतु स्वर्ग लोक की राह ली—

करि विपंज अचलेस । सु छल चहुआन जग गहि ।  
 अरि दल बल सहर्षी । पूरि धर नरित रुधिर दहि ।  
 मच्छति हैवर तिरहि । कच्छ गज कुंभ विराजहि ॥  
 उअर हंत उड़ि चलहि । हस मुख कमलहि राजहि ।  
 चवसटिठ सद् जं जं करहि । छत्रपति परि संचरिय ।  
 वोहिथ्य वीर बाहर तनै । दिल्लीपति चडि उत्तरिय ॥ छं० २३१२ ।  
 सुनत घाव विद्ध्यो सधन । दह्यो अचल चहुआन ।  
 नयो मोह कमघच्च दल । परे पच से यान ॥ छं० २३१३ ।'

अमरसिंह सेवड़ा—अमरसिंह सेवड़ा, गुर्जरेश्वर भीमदेव चालुक्य का प्रधान मंत्री था । मंत्री सेवड़ा तत्र-मंत्र शास्त्र में अत्यन्त निपुण था । इसने जायसी के पद्यावत<sup>१</sup> के राघव-चरित की भाँति अपनी सिद्धि के बल पर अमावस के दिन चन्द्रमा दिखा दिया था तथा दण्डस्वरूप योग्य ब्राह्मणों के सिर मुट्ठा दिए थे, इतना ही नहीं यह अत्यन्त पराक्रमी भी था, इसने दक्षिण तथा पश्चिम के अनेक देशों को विजित किया था ।

जिन अमरसिंह सेवरा , चन्द भावस उगाइय ।  
 जिन अमरसिंह सेवरा , विप्र सब सोस मुडाइय ।

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० २३०२, स० ६१ ।
२. वही, छं० २३१२-१३, स० ६१ ।
३. वही, छं० ८, स० १२ ।
४. राघव पूजि जाग्रिनी, दुइज देखाएसि सांझ ।  
 येद पंच नहि चलहि, ते नूलाहि वन मांझ ॥ ३८, २ ॥ जायसी, पद्मावत ।

कहर फूर पापंठ, चंठ चारन मिलि दत्त ।  
 दुज दो पंजर हेम, देहि उत्तर धन हित ।  
 नर नाग देव छंदा चलै, आकर्ष आदंत णर ।  
 विहरम्म देस दप्पिन दिसा, सब जित्ती पच्छिम मुण्डर ॥ छं० ९ ।

तथा—

पट उमय फोस उद्योत हुन । विप्रतीस मूटिय सकन ॥  
 चित्त मंत ध्रंम आध्रंम घर । नुवर मंत्र विज्जं सकन ॥ छं० २१४ ।

गुर्जेश्वर भोलाराय भीमदेव चालुक्य ( द्वितीय ) का सन्देश लाटूरति मल्लराज के पास ले जाने वाला प्रधान सम्भवतः यही था, स्पष्ट नाम के अभाव में निश्चित रूप में कहा तो कठिन है, किन्तु इच्छनी का विवाह भोलाराय भीमदेव के साथ कराने में यह प्रयत्न में असफल रहा ।

जैन मंत्री अमरसिंह, मोहन, वशीकरण, तंत्र-मंत्र आदि में अत्यन्त निपुण था । मल्लराज पृथ्वीराज ( तृतीय ) ने अपने कुशल मंत्री कैमास को नागौर में चालुक्य भोलाभीम से होने वाले युद्ध का भार सौंपा । मंत्री ने राजा भीमदेव ( द्वितीय ) को मंत्रणा दी कि तुम ही साथ पृथ्वीराज तथा गोरी दोनों पर आक्रमण करना चाहिए । उद्यम नागौर में कैमास अपनी मोर्चा बंदी कर रहा था, इधर अमरसिंह उसे मंत्र बल से बंदी बनाने के लिए नाग-प्रकार के तांत्रिक अनुष्ठान में दत्तचित्त लगा हुआ था । मंत्री कैमास नागौर से अलग हो कर भीमदेव चालुक्य की सेना पर आक्रमण करना ही चाहता था कि तबने में ही छद्मनिर्-सेवरा का भेजा हुआ भाट बड़े साजवाज से नागौर आ पहुँचा । उसने कैमास से मिल कर अमरसिंह की दी हुई एक बहुमूल्य मोतियों की माला नजर की तथा सन्धिपत्र प्राप्त किया । उस पत्र में शिष्टाचार पूर्ण शब्द लिखे थे, उसके बाद बहुत कुछ बढ़ाई लिखकर एक मुद्रा स्त्री का चित्र लिखा हुआ था और लिखा था कि तुम इस स्त्री को लेकर तान्त्रिक स्त्री । अमरसिंह के मंत्र बल से वशीभूत होकर वह चित्र पर ऐसा मोहित हो गया कि उस समय से कैमास, जैन मंत्री की इच्छा के विरुद्ध कोई भी कार्य करने में समर्थ न रह गया । कैमास, अमरसिंह द्वारा भेजी हुई अत्यन्त रूपवती साले खयाली में ऐसा मुग्ध हुआ कि करने पराभि-धर्म को भी भूल बैठा । पृथ्वीराज के नाम को भी भूल गया तथा भीमदेव की आज्ञा का निपटवशवर्ती बन गया, तथा समस्त नागौर प्रदेश पर भोलाराय भीमदेव ( द्वितीय ) की दुहाई भिर गई ।<sup>१</sup>

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ९ तथा २१४, पं० १२ ।

२. वही, छं० २३६-३७, पं० १२ ।

३. वही, छं० २६६-६७, पं० १२ ।



कवि चन्द बरदाई ने उपर्युक्त घटना की सूचना स्वप्न में पाकर नागौर की ओर प्रस्थान किया तथा वहाँ पहुँच कर प्रत्यक्ष भी देखा । ' चन्द ने भैरों तथा देवी का अनुष्ठान कर' जैन की माया को पराजित करने का वरदान माँगा—

आई तू उमया असंड तनया दाता दुरी नासिनी ।  
संतुष्टा सुर नाग किनर गना दैत्यानि सन्नासिनी ॥  
यस्या चारु चंतति चारु कमल संतुष्टयं साधुनं ।  
जैन यद्धंस यद्धयाह चरन जं जं सुजिव्हासन ॥ छं० २८२ ।'

यह समाचार पाकर अमरसिंह सेवरा ने चन्द का मंत्र नष्ट करने के लिए मंत्र प्रयोग किया तथा घट स्थापित किया ।<sup>१</sup> अमरसिंह के मंत्र बल के प्रभाव से एक क्षण के लिए चन्द भी भ्रम में पड़ गया किन्तु शीघ्र ही सम्मेलन कर अनुष्ठान करने लगा तथा योगिनियों को जागृत करने का मंत्र प्रारम्भ किया । अमरसिंह ने अनेकानेक पाखण्ड किए किन्तु कवि चन्द ने अपने मंत्र बल से उसे परास्त कर दिया तथा मंत्री कैमास का उद्धार किया—

घर पापंड न पुज्यधी , किये अमर घन तंत ।  
को जित्ते कविचन्द सों , द्रुगा सहाइक मंत ॥ छं० ३०२ ।  
जो पापंड बहुत अम्यासे , चन्द मीन विष ज्यों ग्रहि ग्रासे ।  
छिनक एक धिया गुन सघी , वर पापड मंडि कवि बंधी ॥ छं० ३०३ ।  
यद्धा जैन मुजैन लगि , जीत चद चारित्त ।  
मामों नट्ट मुमन्त किय , मरन जियन करि हित्त ॥ छं० ३०४ ।  
तुटिट लये पापंड सब , छुटि मत्री कैमास ।  
हर हरंत आयास लगि , चन्द न घंडे पास ॥ छं० ३०५ ।'

उपर्युक्त विवेचन से इतना स्पष्ट हो जाता है कि मंत्री अमर सिंह सेवरा जैन मता-वलम्बी था । ब्राह्मण धर्मावलम्बी कवि चन्द ने जैनों के सेवरा पंथ पर बड़े ही व्यंगात्मक ढंग से लिखा है—'ठारिकापुरी में गोमती में स्नान करके जो अपने को शुद्ध नहीं करते, वे पुनः जन्म लेने पर सेवरा होते हैं, उनके केश लुच्छन किए जाते हैं, वह न मुंह धोते हैं, न विदेक पूर्वक अपने वस्त्रों को साफ करते हैं, अश्रु प्रभाव पर अनेक उपवास करते हैं, देवताओं के दर्शन नहीं करते, गंगा, गया आदि कर्म में विश्वास नहीं करते, इस मार्ग पर भ्रमण करने वाले व्यक्ति की न जाने कैसी गति होती होगी—

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी छं० २७२-७६, स० १२ ।
२. वही, छं० २७३-८१, स० १२ ।
३. वही, छं० २८२, स० १२ ।
४. वही, छं० २८७-२८८, स० १२ ।
५. वही, ३०२-३०५, स० १२ ।

नद्र भेष नह हृए । जाइ गोमति न ग्रायं ।  
 तर्ज न धम सेवरा । होई करि केस सुचायं ।  
 मुप पावन हुन करै । घस्य धोयं न चिदेकं ।  
 आसूं अर्प परंत । करत उपवास अनेकं ॥  
 परसप्र देव मानं नहों । गंगा गया न धाद प्रम ।  
 कवि चन्द कहत इन कहा गति । कहि मारण लग्य मुध्रम ॥ छं० ४९ ।

द्वारिकापुरी से प्रत्यावर्तित होते हुए कवि चन्द भीमदेव ( द्वितीय ) काबुल की राजधानी पट्टनपुर आया । गुर्जरेश्वर भोनाराय भीमदेव ने चन्द तथा अपने जैन मंत्री अमरसिंह सेवरा से शास्त्रार्थ कराया, जिसमें कवि चन्द की विजय हुई तथा अमरसिंह सेवरा परास्त हो गया—

तव पुच्छिय नीमंग, तुम घरवान सु दिदिय ।  
 वाद वहि देयंग, मुपन पिप्पिय मन सिदिय ॥  
 चंद देव फिय तेच, तिन सु अमरा युत्ताइय ।  
 थूल रथय आरुढ, चन्द असमान चलाइय ॥  
 तरवर सुपंत घंठो तिनह, फिरि न पाद कीनों पतिय ।  
 नट्टी जु सपी उपजी अनल, गुरस घंचि नची फलिय ॥ छं० ८१ ।

तीता वे जीता चदानं, परि पिप्पिय रप्पिय रंनानं ।  
 मुप दुल्लं जं जं चहुआनं, नाटिका करि नचं निपान ॥ छं० ८२ ।

हल हलंत तंव हल हलियं, वंदि भ्रत हं गं पति चलियं ।  
 चद मंत्र पट्टन चल चलियं, मनो अय ताराइन तुलिय ॥ छं० ८३ ।

अमरसिंह वास्तव में जैन धर्मावलम्बी था । सेवरा चन्द का प्रयोग जैन के लिए किया गया है । दिल्लीपति वादशाह अकबर के शाही फरमान में जैन मुनि हर्गविजय सूरी को सेवड़ा कहा गया है—“.....इससे योगान्यास करने वालों में हीरविजय सूरी सेवड़ा और उनके धर्म के मानने वालों की जिन्होंने हमारे दरबार में हाजिर होने की इच्छा पाई है और जो हमारे दरबार के सच्चे हितेच्छु हैं—योगान्यास की सच्चाई, दृढ़ और ईश्वर की शक्ति पर नजर रख कर हुक्म हुआ कि उस शहर ( उस तरफ ) के रहने वालों में से कोई भी उनको हरकत ( कष्ट ) न पहुंचावे और इनके मंदिरों तथा उपासनों में भी कोई न उत्तरे....” ( सूर्येश्वर और सम्राट अकबर पू० ३७६, परिशिष्ट ( क ) पृष्ठान २८९ )

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ४९, स० ४२ ।

२. वही, छं० ८१-८३, स० ४२ ।

अनुवाद) ।<sup>१</sup> ज्येष्ठाम्बर जैन साधुओं के लिए संस्कृत में 'श्वेतपट' शब्द है। इसी का अपभ्रंश भाषा में सेवड़ा रूप होता है, वही रूप विशेष बिगड़ कर सेवड़ा हुआ है। 'सेवड़ा' शब्द का प्रयोग दो तरह से होता है—जैनों के लिए और जैन साधुओं के लिए। अब भी मुसलमान आदि कई लोग प्रायः जैन साधुओं को सेवड़ा कहते हैं (विद्या विजय) ।<sup>२</sup>

डॉ० विपिनविहारी त्रिवेदी एक स्थान पर तात्कालिक जैन धर्म पर प्रकाश डालते हुए लिखते हैं कि—'१२वीं शताब्दी में अर्थात् चंद्र के समय उत्तरी भारत में राजपूताना और गुजरात में जैनों के अनेक धर्म प्रवर्तक प्रवल केन्द्र स्थापित हो चुके थे तथा जैसा कि गुजरात के इतिहास में देखते हैं वहाँ जैनाचार्यों का प्राबल्य था, गुर्जर नरेश जैन न होकर भी इन आचार्यों को सब प्रकार से सहायता दिया करते थे तथा अधिकांश जनता जैन धर्म ग्रहण कर चुकी थी। ऐसी परिस्थिति में आए दिन प्राचीन समय के स्थापित ब्राह्मण धर्म के आचार्यों तथा जैनाचार्यों में धार्मिक मुठभेड़ होना स्वाभाविक था। इन वाक् युद्धों में येन-केन प्रकारेण अपने पक्ष को ऊँचा सिद्ध करना, विपक्षी को पराजित करना तथा उसके विफल होने पर दण्ड स्वरूप उसके सिर मुंडन आदि के विधान होने के हम तत्कालीन साहित्य में अनेक प्रमाण पाते हैं।'<sup>३</sup>

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि गुर्जरेश्वर भीमदेव चालुक्य के समय में जैन धर्म का बोल बाला था। सम्भव है भीमदेव का मंत्री अमरसिंह 'सेवरा' ही रहा हो। अमरसिंह सेवरा के विषय में इतिहास सर्वथा मौन है। किन्तु पृथ्वीराज रासो के प्रायः समस्त संस्करण अमरसिंह सेवड़ा का विवरण प्रस्तुत करते हैं। तात्कालिक स्थिति पर दृष्टिपात करते हुए असम्भव नहीं है यदि कोई अमरसिंह नाम का व्यक्ति रहा हो। अन्य ऐतिहासिक सामग्री के अभाव में निश्चय पूर्वक मत प्रकट करना अत्यन्त कठिन है।

अल्हणकुमार—अल्हण कुमार पृथ्वीराज चौहान ( तृतीय ) के १०६ अथवा १०० प्रसिद्ध सामन्तों में से एक था। इनका विशेष विवरण 'कनकवज्र समय ६१' के अंतर्गत प्राप्त होता है। जब पृथ्वीराज संयोगिता का अपहरण करके ले आये तो संयोगिता युद्ध से भयभीत हो उठी। उसे शंकातुर देख कर वीर अल्हण कुमार ने उसे समझाते हुए कहा—

तब घोल अल्हण कुमार। खव्व ब्रह्मांड घोर वर।

जिहि मिलत चर सुमर। हीहि तन मत्त घोर सर ॥

१. डॉ० विपिनविहारी त्रिवेदी, चन्द्र वरदाई और उनका काव्य, पृ० ४८, हिन्दुस्तानी एकेडमी, उत्तर प्रदेश, इलाहाबाद-१९५२।

२. वही, पृ० ४८।

३. वही, पृ० ४७।

मिलै सरित सब गंग । होइ गंगा सब अगा ॥  
 भग्न सब परपंच । मिलै ब्रह्मा ब्रह्म ह भगना ॥  
 ऐसे सुधीर सामंत सो । डोल बोळ बोलै बदन ॥  
 जने न वस घर बंध की । पट्टचाबे दिल्ली मुपन ॥ ८० १३०० ॥

और भी—

फुनि जंप्यो अल्हन कुमार । मुनि नृन्दरी मूर बन ।  
 घर अगनित अंजुली । पंग सो से समद दल ॥  
 सार मेघ बुट्टतं । धीर टट्टी चिट्ठोरं ॥  
 वर वम्पति संयोगि । बंधि दल नीत न जोरं ॥  
 उप्पारि सस्त्र गी बदनह । निरूप रधि बरजी जेम दल ॥  
 कमधज्ज हद बुद्धं प्र पुनि । मुमन संव जानै सखन ॥ ८० १३०१ ॥

जयचन्द तथा पृथ्वीराज के मध्य विकट संग्राम छिड़ने पर तथा लगाना जय चौहान की मृत्यु के उपरान्त वीर अल्हनकुमार युद्ध क्षेत्र की ओर अग्रसर हुआ । पराक्रमा का प्रदर्शन कर तथा जाप करके उस अदभुत पराक्रमी वीर ने अपने हाथ में अपना गिर काटा जिस पृथ्वीराज के पास उसे छोड़ कर उसका धड़ अपने बायें हाथ में बटार निकार युद्ध में भिन्न अग्रसर हुआ तथा पंगदल को अपनी भीषण मार-काट से विचलित कर दिया—

मह नाइ चित चितीत आल । जंप्यो सु मय देखी करान ॥  
 आश्रम देवि किय निज्ज धाम । कट्टयों तीस निज हृदय ताम ॥ ८० १३०२ ॥  
 मुक्कयो तीस निज अग राज । हुंकार देवि किय निज्ज नाम ॥  
 धायो सु धरह बिन तीस धार । सप्रह्यो चाह दाय बटार ॥ ८० १३०३ ॥  
 उच्छयो पंग वर दच्छपानि । संमुहो धीर पायो परानि ॥  
 कीतिग सख देपतं सूर । बिप्यो न दिट्ठ पारन कर ॥ ८० १३०४ ॥  
 सांसी पयट्ठं सां सेन पंग । बज्जे करर पज्जत जग ॥  
 कीतिग सूर देपतं देव । मारह हद रत हंत एव ॥ ८० १३०५ ॥  
 धर परं धार तुट्ठं सु थार । हल हले पंग मेना मुत्तार ॥  
 दण्डनिय राय धीरया नाथ । गज चट्टयो जुद्ध सण्णह समाय ॥ ८० १३०६ ॥

इस प्रकार इस पराक्रमी योद्धा का रुंड अपार पराक्रम दिखा कर मात्र ही मर्यादा वीर अल्हन कुमार पंचतत्व को प्राप्त हुआ—

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, ८० १३००, पं० ६९ ।
२. वही, ८० १३०४, पं० ६१ ।
३. वही, ८० २२८६-२२९१, पं० ६१ ।

सिर तूटै रंघ्यो गंघद । कट्यो कट्टारी ।  
 तहां मुमरिय महमाइ । देवि दीनो हुंकारी ॥  
 अमिय सद् आमास । लयो अच्छरिय उछंगह ॥  
 तहां मु भइ परतपिय । अरित अरि कहत कहंगह ॥  
 अल्हन कुमार बिभ्रम सुन्यो । रन कि विमानह मनु मन्यो ॥  
 तिहि दरसि तिलोचन गंगधर । तिम संकर सिर धर धुन्यो ॥ छं० २२९७ ।'

डॉ० माताप्रसाद गुप्त वीर अल्हन कुमार चौहान की ऐतिहासिकता पर विचार करते हुए निघते हैं कि—“कहा गया है कि यह पृथ्वीराज का एक सामन्त था, जो शहाबुद्दीन के विरुद्ध उसके और पृथ्वीराज के एक युद्ध में लड़ा था, यह पहले भीम का भट था, यह पृथ्वी-राज के साथ कभीज गया था और वहां पर युद्ध करता हुआ मारा गया । सं० १२०९ का किराडू का एक जिला लेख है, जिसमें नाडोल के चाहमान महाराजा आल्हण देव की चौलुयय कुमारपाल का सामन्त कहा गया है । इसके समय के नाडोल के दो ताम्रपत्र सं० १२१८ के भी प्राप्त हुए हैं । और सं० १२२० का वामनेरा का एक ताम्रपत्र इसके पुत्र कल्हण की प्राप्त हुआ है, जिसमें उसने अपने को महाराज कहा है । इसलिए आल्हण का देहान्त सं० १२१८ तथा १२२० के बीच हो चुका था । यदि ‘रासो’ का अल्हण यही आल्हण है, तो वह भीम और पृथ्वीराज के राज्याभिषेक (सं० १२३५ और १२३६) के पूर्व ही दिवंगत हो चुका था ।

मदनपुर का एक जिला लेख सं० १२३५ का महाराजा पुत्र आल्हण देव का अवश्य प्राप्त है, जो विकीर का शासक था । ‘रासो’ का अल्हण भी ‘कुमार’ है इसलिए दोनों एक प्रतीत होते हैं । किन्तु यह आल्हणदेव भीम का सामन्त किसी भी समय हो सकता था, इसमें संदेह है, क्योंकि विकीर वर्तमान मध्य प्रदेश में है ।”

ऐतिहासिक तथ्य कुछ भी हो, किन्तु इतना निर्विवाद सत्य है कि यह निश्चय ही अद्वितीय पराक्रमी योद्धा था । इस युग का इतिहास अन्धकारमय होने के कारण निश्चित मत प्रवृत्त करना सम्भव नहीं है ।

आरज्जसिंह—पृथ्वीराज रासो के अनुसार आरज्जसिंह ने ‘बड़ी लड़ाई प्रस्ताव समय ६६’ के अन्तर्गत महाराज पृथ्वीराज चौहान के पक्ष से शाह शहाबुद्दीन गोरी की सेना से युद्ध किया था । इनका विस्तृत विवरण प्रायः प्राप्त नहीं होता है । पराक्रमी आरज्जसिंह ने विकट युद्ध करके शाही सेना में कांहराम मचा दिया, किन्तु दुर्भाग्यवश एक मुसलमान सरदार ने पीछे से

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचान्गिणी सभा काशी, छं० २२९७, स० ६१ ।
२. डॉ० माताप्रसाद गुप्त; पृथ्वीराज रासो की ऐतिहासिकता और रचना-तिथि, राष्ट्रकवि मैपिलीशरण गुप्त, अनिरुद्धन ग्रन्थ, पृ० १५४, अक्टूबर १९५९ ।

आकर ऐसा घातक प्रहार किया जिसने आरज्जमिह नर्मद न मर गया और मणि को प्राप्त हुआ—

विष्णो साह संमीप साक्ष्य धान । चर्प जन्म आयी नवी जन्मदान ॥  
तमे आय पुट्टी हुए अस्ति ताम् । वर सोस तुट्टयो किरयो इति दास ॥ १३१ ॥  
सनमुष्य साहाय संमीप मन्त्रे । विना सोस पायी परे पान उम्मे ॥  
हयै पड झांक हय कथ तुट्टयो । हयै जूत साहाय ताम्रवि तुट्टयो ॥ १३२ ॥

गिर्यो भूमि आरज्ज सारज्ज सूर । कुसम मुनवे गिर देय हुन ॥ १३३ ॥

आल्हा-ऊदल—पृथ्वीराज रासो के 'महोव' समय के अनुसार आल्हा तथा उदल दोनों चन्देल राजा परमादिदेव के सामन्त थे । इसकी पुष्टि आशान काथ विरचित 'परमान रासो' तथा जगनिक विरचित 'आल्हा छंड' से भी हो जानी है । आल्हा छण्ड की भूमिका में आल्हा तथा ऊदल का जीवन वृत्तान्त वर्णित है, उसी के अनुसार यहाँ पर जनमः प्रसूतः— इसका राज की स्त्री देवकुंवरि के गर्भ से आल्हा का जन्म हुआ । महाराज परिमान और रासो मल्हना ने बड़ा उत्सव किया । दस्तराज और बच्छराज दोनों भाइयों ने बड़ा आनन्द मनाया । राजा परिमाल ने ज्योतिषियों को बुलाया, बालक के लक्षण पूछे तब दाँतों ने कहा कि यह बालक सिंह लग्न में उत्पन्न हुआ, सब राजाओं पर सिंह ममान परजेगा, इसका नाम आल्हा जगत में प्रसिद्ध होगा । इसका नाम युगो तक प्रसिद्ध होगा और इसके नाम के साथ राजाओं का नाम वीरता के साथ बखाना जायगा, यह सुनकर राजा परमान बहुत प्रसन्न हुए और ज्योतिषियों को अनेक रत्न देके विदा किया । आल्हा जब माँ की गोद में बड़े हुए तो बदला लेकर महोव आए तब वहाँ से पंच भट्टा हाथी, घोड़ा परीहा नामे भी आल्हा की सवारी में हाथी और परीहा घोड़ा भी रहा । आल्हा का विवाह मैनागढ़ के राजा मैनापी की कन्या मुनमा (मुलक्षणा) से हुआ था । मुनमा का दूसरा नाम मन्त्रा था । आल्हा एक युद्धों में विजय पाते रहे कहीं हार न हुई, वेना के सती होने पर मुट्ट के मन्त्राजी के आल्हा ने भगवती की दी हुई छड्ग को म्यान से निकाला, उन छड्ग के उद्योग से जहाँ तक उसकी आभा पड़ी वहाँ तक के सब वीर सिर हीन हो गये । केवल पृथ्वीराज और कट कटि वृक्ष की ओट में शेष रहे, उसी समय में श्री गोरखनाथ जी आ गये और आल्हा का हाथ पकड़ लिया फिर बोले कि ऐसा मत करो । इस छड्ग को दण्ड करो । इस प्रकार गोरखनाथ जी ने पृथ्वीराज के पास जाकर बहुत समझाय-बुझाय दिल्ली की भेज दिया और आल्हा को साथ लिए तप करने के अर्थ वन की चले गये । आल्हा ने ऐसी जी की बहुत समझाया कष्टे अमरत्व वरदान पाया था । आल्हा मुघिठिर जी के अवतार हैं जो पाँचों के सहेले रहे और प्रतापी तथा सत्यवादी थे" ।<sup>१</sup>

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १३५७-१३१९, पृ० १६ ।

२. छेमराज श्री कृष्ण दास, आल्हा छण्ड, पृ० ५८-५९. श्री केशदेवरा स्टीम प्रेस मुर्दा ।

आल्हा का जीवन वृत्त संक्षेप में 'आल्हा छण्ड' के आधार पर दिया गया है। ऊदल का जीवन वृत्त भी आल्हा छण्ड के आधार पर इस प्रकार है—

"दस्तराज की रानी देवकुंवरि के गर्भ से भीमसेन जी ने आकर जन्म लिया। राजा परिमाल ने पुत्र जन्म सुन कर आनन्द माना। परन्तु देवकुंवर ने अपने पति के शोक में उस पुत्र का होना अच्छा नहीं समझा, अपनी बाँदी को तुरन्त दे दिया और कहा कि इस पुत्र को ले जाकर कहीं फेंक दे। विधवा होने पर मेरे यह पुत्र हुआ, इस कारण मैं इस पुत्र को नहीं चाहती। बाँदी ने बहुत कूठ कहा—सुना परन्तु देवकुंवर ने यही कहा कि इस पुत्र को मेरे मामने से ले जा। तब बाँदी ने उस पुत्र को ले जाकर मल्हना को दिया और सब हाल कहा, मल्हना ने उस पुत्र को ले लिया और पालन करने लगी। राजा परिमाल ने ज्योतिषियों को बुलाकर उस बालक के लक्षण पूछे तब पंडितों ने कहा कि यह पुत्र बड़ा बलवान होगा, रण-क्षेत्र में किसी से नहीं डरेगा। इसका नाम ऊदल प्रसिद्ध होगा। यह अपने आल्हा भाई के नाम के साथ प्रसिद्ध होगा, इसके नाम को जगत में लोग बड़ी वीरता के साथ लेंगे। और इसका यज्ञ गावेंगे। यह सुनकर परिमाल बहुत प्रसन्न हुए, मल्हना रानी ने अपने पुत्र ब्रह्मा के साथ-साथ ऊदल की भी पालना की, एक सिहिनी नाम वाली महिषी थी उसका दूध पिला कर ऊदल को पाला, जब ऊदल बारह वर्ष के हुए तब अस्थ धारण कर वन में शिकार खेलने को जाने लगे और बाललीला करके सबको सुख देने लगे। एक दिन देवी की पूजा करते-करते अपना सिर काट कर देवी जी को चढ़ाने की इच्छा से खांडा लिया उस समय देवी जी की आभा बोली हे पुत्र ! ऐसा मत करो, हम तुझसे प्रसन्न हैं, तू संसार में महाबली प्रसिद्ध होगा और रण में जा कर तू किसी से नहीं डरेगा। तेरी मृत्यु ब्राह्मण के हाथ से होगी यह सुन ऊदल प्रसन्न हुए ब्राह्मण के हाथ से अपनी मृत्यु जान कर सन्तोष किया।

ऊदनस्य कृतं कर्म क एवं मानवेण च ॥

रणे कुपद्वितीयो यः शूरसामन्तघातिनम् ॥ १७ ॥

अर्थात् शूर सामन्तों के मारने वाले ऊदल के लिए कर्मों का कौन ऐसा दूसरा मनुष्य है जो कर सके।" १

'रामो' के अनुसार वीर आल्हा तथा ऊदल दोनों ही महोबापति परमाल के सामन्त थे। माहिन की ईर्ष्यापूर्ण नृगलियों के परिणाम स्वरूप स्वामिभक्त होने पर भी चन्देल राज ने उन्हें महोबा ने निर्वासित कर दिया था। अन्यायपूर्ण इस अपमान से क्षुब्ध हो कर उन्होंने पद्मोजयति राजा जयचन्द का आश्रय ग्रहण किया, जहाँ उन्हें पर्याप्त सम्मान प्राप्त हुआ—

आल्हा गयी कनकज्ज छाड़ि परिमाल, वास यह।

नौपति की जानीर बाघ उज्जार जारि घर ॥

करि आदर जे छन्द दिखव, चहुँ देस मुनारिय ।  
 घोरे पांच मंगाय, दोय हृदिय हित कारिय ॥  
 मोतिन माल उंतग अति, हीरा पटुंची मढारिय ।  
 दस-राज सुतन अरयो अधिक मिलि माय मंगल मरिय ॥ छं० १४७ ॥

आल्हा तथा ऊदल दोनों पराक्रमी सहोदर पंगराज जयचन्द के आग्रह में जाते लगे । इसी बीच दिल्लीपति चौहान पृथ्वीराज ने महोबा पर प्रयत्न आक्रमण किया । जयचन्द विरचित प्रसिद्ध 'आल्हा खण्ड' तथा 'रासो' के 'महोबा समय' दोनों में महोबा पर पृथ्वीराज द्वारा आक्रमण करने के भिन्न-भिन्न कारण दिए हुए हैं । महोबा युद्ध के अनुमान कुछ का कारण इस प्रकार है—'समुद्रशिखर गढ़ की मुन्दरी पक्षमायती का अपहरण कर आलाउद्दीन होते समय चौहान पृथ्वीराज को शाहबुद्दीन गोरी ने का घेरा । घोर युद्ध के पश्चात् पृथ्वीराज ने उसे बन्दी बना लिया तथा आठ महम्मद घोड़े तथा इस्मय्य सेबर उसे पुनः मुक्त कर दिया । पृथ्वीराज चौहान सकुशल दिल्ली पहुँच गये, किन्तु मेना के कुछ पायल योद्धा मार्ग भूल कर भटकते हुए महोबा जा पहुँचे । सन्ध्या का समय था, प्रलय काल के साथ वर्षा हो रही थी, जिससे घायल और भी व्याकुल हो गये । समीप ही राजा परमाल का उद्यान था, उसमें घायल योद्धा अपनी रक्षा के निमित्त जाने लगे, बाग के रक्षक ने रोक दिया । इस पर एक घायल योद्धा ने उसका तिर काट डाला । माली की स्त्री ने जाकर मरणा राजा से कहा, रानी ने राजा को सुनाया, राजा ने कुछ मेना भेजकर घायलों की निजालने का आदेश दिया किन्तु घायल योद्धाओं ने लड़कर उस सेना के समस्त कुम्हनों को मार डिया । तब राजा परमाल ने क्रोधित होकर अपने स्वामि भक्त सामन्त ऊदल को हुला कर घायल वीरों को बन्दी बना कर मार डालने का आदेश दिया । ऊदल ने आहत सैनिकों पर प्रहार करने एवं बन्दी बनाने का प्रतिवाद करते हुए निवेदन किया—

कहै तब उद्दिल वैन प्रसिद्ध सुनौ नृप ए रजपूत धरल ।  
 नहीं ब्रह्म राजन को ध्रम ताक, करी इनकी अय भूल सु माण ॥ छं० १४८ ॥

ऊदल का उत्तर सुनकर माहिल ने दस्तराज के पुत्रों के विरुद्ध राजा परमाल को यह कह कर भड़काया कि ऊदल कायर तथा दुष्ट भीरु है, इस कारण पृथ्वीराज के हत्यारों को मारना नहीं चाहता । कान के कच्चे राजा परमाल ने क्रोधाग्नि में डूबने को अपने आदेश को शीघ्र ही कार्यरूप में परिणित करने का, पुनः आदेश दिया । आलाउद्दीन एवं दिल्लीपति ने राजा की आज्ञा शिरोधार्य करते हुए एक बार पुनः आहत सैनिकों के जीवन दात के विरुद्ध अनुनय की—

- 
१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १४७, स० ६९ ।
  २. वही, छं० ३४, स० ६९ ।



तब उदित उच्चरिण सुनहु परिमाल अरज इक ।  
 घाटल कह अवद्ध, कहिय परमात व्यास बक ॥  
 होइ योय चहुआन, रोस सामन्त समारिय ।  
 अनुल तेज प्रथिराज, करों बिनती हितकारिय ।  
 घन्देल राइ मानहु अरज अरय सरै सोइ कीजिये ।  
 रजपूत दूत हनिये नहीं, जीव दान नृप दीजिये ॥ छं० ३६ ।'

मुसम्मति की किसी प्रकार सुनवाई न होने पर, विवश हो वीर ऊदल ने पृथ्वीराज चौहान के आहत सैनिकों को युद्ध में परास्त कर, मार डाला । इस दुःखद घटना के उपरान्त ही माहित की दुष्टता एवं चुगली की आदत के कारण आल्हा-ऊदल को महोबा छोड़ने पर विवश होना पड़ा । यही युद्ध परिमाल के विनाश का कारण भी सिद्ध हुआ ।

'महोबा समय' के अनुसार परिमाल तथा पृथ्वीराज की शत्रुता का मूल कारण आहत सैनिकों का वध है । किन्तु 'आल्हा खण्ड' के अनुसार शत्रुता का कारण आल्हा के घोड़ों तथा हाथियों का पृथ्वीराज चौहान द्वारा मारा जाना तथा राजा परिमाल के अत्याधिक अनुरोध करने पर भी आल्हा का स्वामिमान रक्षा हेतु अपने प्रसिद्ध घोड़ों एवं हाथियों को पृथ्वीराज को न देना ही महोबा पर आक्रमण का मूल कारण है ।

कारण कुछ भी रहा हो, पृथ्वीराज चौहान द्वारा महोबा पर आक्रमण की पुष्टि दोनों ग्रन्थ करते हैं । आहतों के वध की सूचना प्राप्त होने पर दिल्लीपति चौहान ने महोबा को जा घेरा । पृथ्वीराज चौहान का आक्रमण होने पर परमाल को महोबा बचाने की चिन्ता हुई । किन्तु आल्हा तथा ऊदल जैसे पराक्रमी एवं स्वामिभक्त सामन्तों की अनुपस्थिति और भी गहन चिन्ता का विषय बन गयी । गहन चिन्ता की स्थिति में परिमाल की रानी मल्हनादे ने आल्हा तथा ऊदल को कप्रीज से पुनः बुलाने की अमूल्य सभ्यता दी । साथ ही दिल्लीपति चौहान पृथ्वीराज को दो मास तक युद्ध स्थगित करने के लिए भी अनुनय का परामर्श दिया । रानी मल्हनादे के परामर्शानुसार राजा परिमाल ने कप्रीजपति राजा जयचन्द गाहड़वाल को आल्हा-ऊदल भेजने के लिए प्रार्थना पत्र लिख भेजा—

राजा जगनक कनधज पट्यो जहां बनाकर रुठ सु बढ्यो ।

आल्हा आए जुमा विचारो जो पीयल क्षत्री धूम छारो ॥ छं० १४२ ।'

मरणान्त वरमल दिल्लीपति पृथ्वीराज चौहान ने महोबापति राजा परिमाल की अनुनय को मान लिया तथा युद्ध को दो माह की अवधि तक स्थगित कर दिया ।

जागतिक भट्ट द्वारा अपने आमंत्रण की वार्ता जान कर स्वामिमानी आल्हा-ऊदल ने महोबा जाने में इन्कार कर दिया तथा भट्ट को परिमाल के दुर्व्यवहार पर बहुत कुछ खरी-

१. पृथ्वीराज रामो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ३६, स० ६९ ।

२. यही, छं० १४२, स० ६९ ।

खोटी सुनाई । किन्तु अपनी वीरांगना माता द्वारा-उसी माना द्वारा जिन्होंने लगभग सौ राजा हेतु महोवा त्यागने का आदेश दिया था—अपने पुत्रों को स्वदेन रक्षा एवं स्वार्थ के लिये विरक्त होते देख कर स्वयं को हतभाग्य कह कर विनाश करने पर तत्काल ही दोनों भाई महोवा की सहायतार्थ सन्नद्ध हो उठे । शीघ्र ही महोवा प्रयाण हेतु रण मञ्चा तैयार कर दोनों भाई पंगराज की सभा में आज्ञा लेने जा उपस्थित हुए—

चलन महोवे कीन मत देवल सीप उपाय ।

अरज करन जयचन्द सो चले नु दोनों नाय ॥ छं० १९४ ।

दोनों भ्रताओं की रण-सज्जा देख कर आश्चर्य चकित हो पंगराज राजा जयचन्द द्वारा आकारण विरोचित वाने का कारण पूछने पर निर्भीक बनाकर सरदारों ने निम्नलिखित उत्तर दिया—

इम कही बनाफर जाइफर, तेन सु जगनक आइपय ।

प्रियराज महोवे जुद्ध कहु, हम परिमाल बुलाइय ॥ छं० १९५ ।

अर्थात्—पृथ्वीराज चौहान ने महोवा पर आक्रमण कर दिया है, तथा राजा परिमाल ने जगनीक भट्ट को भेज कर सहायतार्थ बुलवाया है । अतः महोवा जाने का सुधार बाधक नहीं है ।

यकायक इस प्रकार दोनों भाइयों को महोवा जाने की तत्पर देख कर बालमुकुन्ददेव राजा जयचन्द ने महोवा जाने का प्रतिरोध किया तथा क्रोधित होकर बोला—

नयन रस्त करि बुल्लय मानिय, मरिखे फाज महोवे खनिय ।

अचचल गढ्ढ हमारी पायो, चन्देलन दिग लगगहु लायो ॥ छं० १९७ ।

सगरी नाव जाय बंध किज्जिय, आल्हा उदिल उतरत नहि दिखय ।

छावनि करी हमारे पास, छाड़ो अब महुए की आस ॥ छं० १९८ ।

बनाफर वीरों ने अपने मार्ग को इस प्रकार अवरोध होता देखकर क्रोध में उन्मत्त होकर स्वाभिमानी आल्हा ने पंगराज जयचन्द को निर्भीक उत्तर दिया—

तब आल्हन रस कीन नैनहु, सुनि जयचन्द नृपति के बैनहु ।

कनवज लूटि अहिद सब दरिहो, पीछे जुद्ध महोवे करिहो ॥ छं० १९९ ।

वैमनस्यता के ऐसे उग्र समय में ही जगनीक भट्ट द्वारा बालमुकुन्ददेव राजा जयचन्द को महोवापति परिमाल द्वारा प्रेषित पत्र प्राप्त हो गया, जिसे पढ़ कर पंगराज ने स्वयं ही

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १९४, स० ६९ ।

२. वही, छं० १९६, स० ६९ ।

३. वही, छं० १९७-१९८, स० ६९ ।

४. वही, छं० १९९, स० ६९ ।

आल्हा-ऊदल की महारं अपनी सेना सहित परमाल की सहायतार्थ शीघ्र जाने की अनुमति दे दी—

बचि अरज जयचन्द नृप बोलि दिया न जरूर ।

बिदा करो सेना सजो आल्हा संग गरूर ॥ छं० २०२ ।'

वीर आल्हा को विशेष रूप से सम्मानित कर तथा शिरोपाव प्रदान कर अपने भ्रातृज मागनसिंह सहित, कान्यकुब्जेश्वर राजा जयचन्द ने महोवा प्रस्थान करने की आज्ञा प्रदान कर दी ।

जयचन्द के आश्रय में रह कर इन वनाफर वीरों ने गांजर, संवागढ़, विजहट, कुड़हर तथा बंगा आदि युद्धों में अपार पराक्रम एवं शौर्य का प्रदर्शन किया था और महोवा आ कर दिल्लीपति चौहान की सेना से जुझ पड़े । 'महोवा समय' के इसी युद्ध में वीर ऊदल अपार पराक्रम एवं वीरता से युद्ध करता हुआ पराभव को प्राप्त हुआ तथा आल्हा अपने भयंकर पराक्रम तथा तंत्र-मंत्र प्रयोगों द्वारा चमत्कारिक युद्ध कौशल दिखाने के उपरान्त, अन्त में अपने गुरु गोरगनाथ के आदेशानुसार रण से विमुख होकर जंगल में तप हेतु चला गया ।

आल्हा-ऊदल के व्यक्तित्व ऐतिहासिक दृष्टि से अत्यन्त विवास्पद है । जनरल कनिंघम के मतानुसार जब पंगराज राजा जयचन्द ने अश्वमेध यज्ञ किया था, तब आल्हा-ऊदल ने भी महाराज पृथ्वीराज चौहान से युद्ध किया था ।' किन्तु उक्त कथन ऐतिहासिक तुला पर पूर्ण नहीं उतरता । यह सम्भावना व्यक्त अवश्य की जा सकती है कि जयचन्द के यज्ञोत्सव में राजा परिमान के साथ आल्हा-ऊदल अवश्य गए होंगे, किन्तु जब संयोगिता द्वारा पृथ्वीराज चौहान का वरण हो गया होगा, तब सभी राजा-महाराजा अपने-अपने स्थान को लौट गये होंगे । आल्हा-ऊदल भी महोवा परमाल के साथ आ गये होंगे । उनका पृथ्वीराज से युद्ध करना ऐतिहासिक एवं प्रमाणिक नहीं जान पड़ता । एक अन्य स्थान पर श्री केशवचन्द्र मिश्र ने लिखा है कि जब भारतवर्ष पर तुकों ने आक्रमण किया, तब राजा सोमेश्वर ने अन्य राजाओं से महापता ली, तो चन्देल सेना के साथ आल्हा-ऊदल ने भी इस युद्ध में भाग लिया था ।' किन्तु ऐतिहासिक प्रमाणों के अभाव में निश्चित मत देना अत्यन्त कठिन है ।

यद्यपि आल्हा-ऊदल का नाम किसी भी शिला लेख में प्राप्त नहीं होता है, फिर भी इनके सम्बन्ध में इतनी प्रबल जनश्रुति होने के कारण, इन्हें काल्पनिक भी नहीं माना जा सकता । ऐतिहासिक ग्रन्थ इन दोनों वीरों के सम्बन्ध में भले ही चुप हो, पर महोवा समय, परमाल रामो, आल्हा गण्ड, तथा आल्हा-राइछो जैसे प्रसिद्ध काव्य ग्रन्थों एवं महोवा, नैनागढ़ तथा रित्रागरी आदि स्थानों में मुरशित प्रबल जनश्रुतियों में ये सदा अमर रहेंगे ।

१. पृथ्वीराज रामो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० २०२, स० ६९ ।

२. जनरल कनिंघम—आर्कोलाजिकल सर्वे रिपोर्ट, जिल्द-१, पृ० १८३, १८६२-३ ।

३. श्री वेणयचन्द्र मिश्र—चन्देलो का राजस्थ काल, पृ० १३१ ।

कचराराय—गुजरेश्वर भीमाराय भीमदेव चातुर्वर्ग के हाथ ने मथाराज पृथ्वीराज के पिता सोमेश्वर की मृत्यु हो गई थी । अपने पिता का वंदन करने के लिए मथाराज पृथ्वीराज ने गुजरात प्रान्त पर आक्रमण कर भीमदेव को मारा तथा उसके पुत्र कचराराय की अस्त्री कीर से गद्दी पर बिठा कर गुजरात के कुछ परगने अपने राज्य में मिला लिए ।<sup>१</sup>

‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार वीर कचराराय भीमाराय भीमदेव चातुर्वर्ग का पुत्र था तथा गुजरेश्वर की मृत्यु के उपरांत पृथ्वीराज द्वारा इसे गुजरात का नामन प्राप्त हुआ था । उसी समय से कचराराय पृथ्वीराज की अधीनता में रहता था तथा उनके प्रसिद्ध सामन्तों में इसकी भी गणना होती थी । संयोगिता अरहरण सम्बन्धी युद्ध में वीर कचराराय ने पृथ्वीराज की ओर से भाग लिया था । पृथ्वीराज के दल ने महादुराय भीमर की मृत्यु के उपरांत वीर कचराराय युद्ध क्षेत्र की ओर अग्रसर हुआ तथा विपक्षी दल के महादेवराय से उत्तराष्ट्र युद्ध करके वीरगति को प्राप्त हुआ—

कचराराय चातुर्वर्ग वीर । आचंत देवि दल गज्जि वीर ।  
सिरनाइ राज प्रथिराज ताम । चल कलिय चदन उरर्यक हाम ॥२४०७॥  
इक बार पहिल लग्गे सुपाय । जितए मुनर तित पगराई ॥  
संजोगि नेग दिय कंठ माल । पहिराइ कट चरजी भूआल ॥२४०८॥  
गज्जियो भीम जिम सुअन भीम । पेपेय जूह मनुहरि करीम ॥  
कस्तियो तंग चरजी स नेत । संकल्पि सीस प्रथिराज हेत ॥२४०९॥

०

०

०

धाइयो ताम महदेव तम्म । चातुर्वर्ग हयो संगी उरम्म ।  
दुअ लगि वीर मिलि विषय पाव । आवद्ध तुष्टि हज वीर ताव ॥२४१०॥  
सगं सु वय्य समय सारप । दुअ अठ्ठ दरप दुअ धम्म नूप ।  
लगं सु कंठ अति उठ्ठि ताम । दुअ गुज्जि नूप दुअ तामि वाम ॥२४११॥  
दुअ चले मुक्ति मारग सग । विम्मान जानि तिचि विविचि गग ॥  
अच्छरिय उंच रुंधे सु नेव । जय जय चरंत नंदि हुदूम देव ॥२४१२॥

इस प्रकार वीर कचराराय अपार पराक्रम दिखा कर स्वामि धर्म हेतु अपने प्राणों का उत्सर्ग करके स्वर्ग लोक को गया—

संग राय नानेज । राय कचरा अरि अचर ॥  
गरुड प्रेम स्वामित्त । सार संसृट् रन अचर ॥

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, भीम दण्ड, पन्ना ४४ ।

२. बही, छं० २४०७-२४०९ तथा २४१७-२४१९, पृ० ६१ ।

पट्टन तिर अरु पट्ट । गंग घट्टह घन नप्पयी ॥

जं जं जं जपि सद् । नद् मिभुअनपति नप्पयो ।

पप्परत्त पलिय वज्जिय विहर । उग्र राय रठ्ठीर धर ॥

चालुक चल्त सून स्वरगमन । यह्य अरघ दोनी सुधर ॥ छं० २४३१ ।'

प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता डा० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा के अनुसार पृथ्वीराज द्वारा भोलाराय भीमदेव चालुक्य को मारना तथा उसके पुत्र कचराराय को गुजरात राज्य देने वाली कथा 'रासो' में काल्पनिक है । उन्होंने अपने प्रबल एवं तथ्य पूर्ण तर्कों द्वारा अपने मत का समर्थन इस प्रकार किया है—“वह सारी कथा असत्य है, क्योंकि न तो सोमेश्वर भीमदेव के हाथ से मारा गया और न भीमदेव पृथ्वीराज के हाथ से । सोमेश्वर के समय के कई शिलालेख मिले हैं, जिनमें से पहला वि० सं० १२२६ फाल्गुन वदी ३ का विजोलियां का प्रसिद्ध लेख है (दि जर्नल आव ऐशियाटिक सोसाइटी आफ बंगाल, जिल्द ५५, भाग १ ई० सं० १८८६, पृ० ४०-४६) और अंतिम वि० सं० १२३४ भाद्र पद सुदी ४ का है (आंवलदा गांव का लेख (अप्रकाशित) यह लेख उदयपुर के विकटोरिया हाल में सुरक्षित है) । पृथ्वीराज का सबसे पहला लेख वि० सं० १२३६ आपाढ़ वदी १२ का है (लोहारी गांव का लेख, विकटोरिया हाल उदयपुर में सुरक्षित) । वि० सं० १२३६ के प्रारम्भ में सोमेश्वर का देहान्त और पृथ्वीराज की गद्दी नशीनी मानी जा सकती है, जैसा कि प्रबध कोप के अन्त की बंशावली से ज्ञात होता है (प्रबंध चिन्ता मणि, पृ० ५४) । भीमदेव वि० सं० १२३५ में गद्दी पर बिलकुल बाल्यावस्था में बैठा और ६३ वर्ष अर्थात् वि० सं० १२९८ तक वह जीवित रहा (प्रबंध चिन्तामणि पृ० २४९) । इतनी बाल्यावस्था में वह सोमेश्वर को नहीं मार सकता और न पृथ्वीराज ने उसका बदला लेने के लिए उस पर चढ़ाई कर उसे मारा था । गुजरात के ऐतिहासिक संस्कृत ग्रन्थों में भी कहीं इस बात का उल्लेख नहीं है । राजपूताना म्युजियम में भीमदेव का वि० सं० १२६५ का एक शिलालेख विद्यमान है (इन्डियन ऐंटीक्वेरी, जिल्द ११, पृ० २२१-२२२) । आवू पर बेलवाड़ा गांव के प्रसिद्ध तेजपाल के जैन मंदिर की वि० सं० १२८७ की प्रशस्ति के लेख के समय भी भीम देव विद्यमान था (एषीयैफिया इन्डिका, जिल्द ८, पृ० २१९) । डॉ० ब्रूलर ने वि० सं० १२९६ मार्गशीर्ष वदी १४ का भीमदेव का दानपत्र प्रकाशित किया है (इन्डियन ऐंटीक्वेरी, जिल्द ६, पृ० २०६-२०८) । इससे निश्चित है कि भीमदेव पृथ्वीराज की मृत्यु से अनुमानतः पचास वर्ष पीछे भी विद्यमान था” ।'

अतः ओझा जी के उपर्युक्त कथन से यह भी स्पष्ट हो जाता है कि कचराराय वाली

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० २४३१, स० ६१ ।
२. म० म० रायबहादुर गौरीशंकर हीराचन्द ओझा, पृथ्वीराज रासो का निर्माण काल, कोजोत्तव स्मारक संग्रह, पृ० ४५-४६, वि० सं० १९८५ ।

घटना भी ऐतिहासिक नहीं है क्योंकि जब पृथ्वीराज ने भीमदेव चानुन्द को मारा ही नहीं तो फिर कचराराय को गुजरात की गद्दी कैसे दी जा सकती है। कनककराय के विषय में कोई भी निष्पत्तिक मत देना अत्यन्त कठिन है। सामग्री के अभाव में कचराराय का ऐतिहासिक संदेहास्पद ही अधिक जान पड़ता है।

कनकराय बडगुज्जर :—पृथ्वीराज रासो के अनुसार कनकराय बडगुज्जर पृथ्वीराज चौहान का सामन्त था, जिसकी गणना उनके श्रेष्ठ १०६ छद्मवा १०० सामन्तों में की गयी थी। संयोगिता अपहरण सम्बन्धी युद्ध में जब पृथ्वीराज का श्रेष्ठ सामन्त नरसिंह वीरगति को प्राप्त हो गया तब पराक्रमी कनकराय बडगुज्जर ने विपक्षी दल का सामन्त किया। कनकराय बडगुज्जर स्वामि पृथ्वीराज को मस्तक नवा कर युद्ध क्षेत्र की ओर अग्रसर हो गया—

भौ आयस प्रथिराज । कनक नाथो बडगुज्जर ।  
हम तुम दुस्सह मिलन । स्वामि दुज्जं म अण घर ॥  
हो रवि मंडल मेदि । जीय लगि सत्त न पड़ो ।  
पंड पंड करि रुंड । मूड हर हार गु मंडो ।  
इन वंस भगि जानं न को । हो पति कंप अनुत्तमयो ।  
इम जंपे चन्द बरहिदा । कोस पट्ट चहुभान गो । छं २१६४ ।

विपक्षी दल से वीरमराय कमधज्ज कनकराय बडगुज्जर का सामना करने के लिए अग्रसर हुआ। भीषण युद्ध के परिणाम स्वरूप दोनों ही वीर अपूर्व कीर्तिमान बनाते हुए वीर गति को प्राप्त हुए—

कर वाम चंपौ निज सीस अपं । परे वग्न पायो संनरिन्म धर ।  
करी दाहि ढंढोरि माझी कनक । दुरे कोई दारं पनवके सपवति । छं २१६५ ॥

१. कर्नल टाड ने बडगुज्जरों के विषय में लिखा है कि “बडगुज्जर पूर्ववर्षी हैं तथा गुहिलों की छोड़कर केवल यही एक वंश ऐसा है, जो अपने ही रामचन्द्र के चढ़े चढ़े पद से निकलना बतलाता है। बडगुज्जर लोगों के चढ़े-चढ़े शासक दुर्गुंड (बडगुज्जर) से थे और माचोड़ी (अलवर के राजाओं का मूल स्थान) के राज्य में (राजगढ़) का पहाड़ी किला उनकी राजधानी थी। राजगढ़ और अलवर की समस्त अभिलेखा में है। जब बडगुज्जरों की कछवाहों ने उनके निवास स्थानों से निष्काट दिया तो इन पदों के एक दल ने गंगा किनारे जाकर शरण ली तथा वहाँ पर नया निवास स्थान अलवर बना बसाया।” टाड, राजस्थान, जिल्द १, पृ० १४०-४१।

नोट—गुहिलोत वंशी राजा अपने को रामचन्द्र के चढ़े पुत्र तद के पद में गृहीत मानते हैं। कर्नल टाड ने यह सम्भवतः भ्रम इस निमित्त दिया है।

२. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं २१६४, पं १६।

बरी अच्छरा बिद साचीनि मन्ने । दुर्घो कन्नकू धार सो धाई धन्ने ॥

सयं पंच सारद्ध चीरम्न सय्ये । परे पेत पदे कन्नकू सु हय्ये ॥छं० २१७७ ॥'

कन्ह (कर्नाटक नरेश)—पृथ्वीराज रासो के रचयिता के मतानुसार कर्नाटक नरेश कन्ह किल्हण पंगराज का आधीनस्त नरेश था । इतिहास में इस नाम के किसी भी शासक का अस्तित्व प्राप्त नहीं होता है । रासोकार के अनुसार अपनी दिग्विजय में कन्नौजपति राजा जयचन्द ने सुदूर दक्षिण तक के प्रदेशों को आधीकृत किया था, फलस्वरूप कर्नाट-पति कन्ह किल्हण भी पंगराज की आधीनता स्वीकार करता था । संयोगिता अपहरण के समय पंगराज तथा चौहान पृथ्वीराज के मध्य होने वाले विकट संग्राम में कर्नाटक नरेश ने कान्यकुब्जेश्वर के पक्ष से अपार युद्ध किया था—

चदे किल्हनं कन्ह कर्नाट राजी ।

उठी बंफ मुच्छं ससी बीस लाजी ॥

नवमी के युद्ध में घोर संग्राम करता हुआ वीर कर्नाटक नरेश कन्ह किल्हण वीर गति को प्राप्त हुआ ।

रासो का उक्त वर्णन इतिहास से मेल नहीं खाता है । कर्नाटक प्रदेश पर कन्ह किल्हण नाम के कोई भी राजा राज्य नहीं करता था । “कर्नाटक में लगभग दूसरी शताब्दी ई० से गंगवंश के शासक राज्य कर रहे थे । लगभग ८१९ ई० में राज मल्ल गंगों का राजा था, जिसने अपने प्रदेश को राष्ट्रकूटों के प्रभाव से सर्वथा मुक्त कर लिया था । सन् १००४ ई० में तंजौर के चेलों ने गंग शासकों से राज्य छीन लिया, परन्तु गंग वंश का पूर्णतया अन्त नहीं हुआ । गंग वंश की कलिग शाखा ने १६ वीं शदी के मध्य तक शासन किया । चोलों ने सन् १००४ ई० में तलकाड पर अपना अधिकार स्थापित किया” “इनका राज्य ‘चोल मण्डलम्’ कहलाता था जिसके अन्तर्गत आधुनिक तंजौर तथा त्रिचनापल्ली के जिले तथा पट्टकोट्ट के राज्य का भी कुछ भाग आ जाता था ।”

“चालुक्यों के साथ चोलराजाओं का संघर्ष ११ वीं शदी से ही प्रारम्भ हो गया था । चालुक्यराज सोमेश्वर के समय में यह संघर्ष चरम सीमा को पहुँचा, किन्तु अन्ततोगत्वा संधि के रूप में परिणित हुआ । अन्तिम चोल शासक अधिराजेंद्र की हत्या के उपरान्त सन्तान हीन होने के कारण उत्तराधिकार का प्रश्न उठने पर चालुक्य राजकुमार कुलोत्तुंग चोल—राज्य का

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० २१७६-७७, स० ६१ ।

२. श्री नेत्र वाण्डेय—भारत का बृहत् इतिहास, पृ० ४४५ ।

३. वही, पृ० ४५३ ।

शासक हुआ। १२ वीं शताब्दी का समय सर्वप्रथम चीना। १३ वीं शती के चीन राजा का अधिकांश भाग होयसल वंश के हाथ में आ गया था"।<sup>१</sup>

इतिहास के उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट हो जाता है कि रासो दत्तिल कन्नड़ का अतिहासिक एवं कल्पना माय है। अतः स्पष्ट रूप से एवं विश्वास के साथ कहा जा सकता है कि कर्नाटक नरेश कन्हू किल्हण एक कवि कल्पना प्रसून पाय है, जिसका इतिहास के लिये कोई भी अस्तित्व नहीं है।

कन्हू चौहान—‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार कन्हू चौहान अजमेरवासी सोमेश्वर के छोटे भाई तथा पृथ्वीराज चौहान के चाचा थे।<sup>२</sup> कन्हू की प्रतिज्ञा थी कि उनके समस्त छोटे की व्यक्ति मूर्खों पर ताव नहीं दे सकता था। यदि कोई अमानवता ऐसा करता भी तो उसे उनकी कोप-भाजन बनता था। एक बार गुर्जरेश्वर भीमाराय भीमेश्वर चालुक्य ने अपने माया चचेरे भाइयों को हाथी मारने के अराध में गुजरात से निकाल दिया था।<sup>३</sup> पृथ्वीराज को यह ज्ञात होने पर उन्होंने सातों भाइयों को अपने दरबार में बुला कर आग्रह देकर सम्मानित किया तथा अनेक ग्रामादि दिए।<sup>४</sup> एक दिन कुंवर प्रतापसिंह पृथ्वीराज की राखण करने आया तथा चाचा कन्हू के सामने बैठ कर अपनी मूर्खों पर ताव देने लगा। चाचा कन्हू को यह देखकर एकदम क्रोध उमड़ आया तथा उन्होंने तुरन्त ही गले दरबार में उसका नाम उस से अलग कर दिया।<sup>५</sup> परिणाम स्वरूप अन्य छः भाई भी गुद करने हुए कन्हू चौहान के हाथों पराभव को प्राप्त हुए। चाचा कन्हू की इस विग्रह में विजय हुई—

परि नूनि पावार। उररि भंजन कियार हुअ।

तव लगि कन्हू तमकि। आइ पहुँची अत कनुअ।

फुकिरि रोस अति तमति। घाई सिर जाई रग्यो उन।

मनहुँ सक्ति बल देंन। अग जुनु हन्या अजा मुत॥

तिन हनत सिभु पुन हनिय सिर। राजप्रेह मपि समर हुअ।

हल हलकि मच्चि कोलाहलह। हाय-हाय दरबार हुअ॥७०३॥<sup>६</sup>

१. जयचन्द—भारतीय इतिहास की रूपरेखा, पृ० ५६।

२. सोमेश्वर के छोटे भाई अर्थात् पृथ्वीराज के चाचा [रासो पद्यों १, लघोतिहास नेम समय—[Asiatic Journal. Vol. XXV, Page 254.]

३. पृथ्वीराज रासो, कन्हू पट्टी समय, साहित्य संस्करण उत्प्रेषण, छं० ९, पृ० ११।

४. वही, छं० ११, पृ० ११।

५. वही, छं० १३, पृ० ११।

६. वही, छं० २५, पृ० ११, तथा पृथ्वीराज रासो नामकी प्रकाशितो सभा काशी, पृ० ५३, पृ० ५।



चानुवन-भाइयों के वध की सूचना पाकर राजा पृथ्वीराज अत्यन्त आकुल हुए । अजमेर में हड़तान हो गई तथा सात दिनों तक दरबार में चाचा कन्ह के न जाने पर संभरेश स्वयं ही नन कर उनके घर गये तथा चाचा कन्ह को सम्बोधित करते हुए कहा कि अपने घर आये दूजों के साथ आपने ऐसा व्यवहार किया, यह दोष आपको लग गया तथा इस बुराई से संसार में अपमान होगा—

आएति विपे अप्पन सुधर । सो रावर ऐसी करिय ।

इह दोस अप्प लगायो सरी । वत्त वितरिय जग बुरिय ॥ छ० ९०।<sup>१</sup>

पृथ्वीराज ने दरबार की निन्दा मिटाने हेतु तथा शरणागत की हत्या के प्रायश्चित्त स्वरूप 'चप वध पट्ट रंतन' का प्रस्ताव करके उनकी आंखों पर पाव लाख मूल्य की एक पट्टी बंधवा दी । यह पट्टी हमेशा कन्ह के नेत्रों पर बधी रहती थी केवल युद्ध के अवसर पर अववा रनवास में ही पट्टी खोली जाती थी—

सो पट्टी निस दिन रहे, छोरि दई द्वं ठाम ।

कं तिज्या वामा रमत, कं छुट्टत संग्राम ॥ छ० ४७।<sup>१</sup>

चाचा कन्ह पृथ्वीराज चौहान के साथ हमेशा रहे तथा उसके ऊपर छाया की भांति मट्टाकर रक्षा करते रहे । नरनाह कन्ह अत्यन्त पराक्रमी योद्धा थे । इनके पराक्रम के विषय में रासोकार ने लिखा है—

परिय संक्ष जग मंझ । हरिय कंकन रंकन घन ।

भरिय पत्र जुनिनीय । करिय सिव सीस माल घन ॥

भुरिय न भ्रित चालुक । धरिय रस रोस कन्ह हिय ।

पर चलिय दरवार । सोह गज घट्टि उहट्टिय ॥ छ० ७९।<sup>१</sup>

अन्त में चाचा कन्ह का रौद्र रूप 'कनवज्य समय ६९' में दिखाई देता है । पृथ्वीराज ने जयचन्द की पुत्री संयोगिता का अपहरण कर लिया । फलस्वरूप युद्ध के नगाड़े निनादित हो उठे । छगन के युद्ध में मारे जाने के उपरान्त वीर पराक्रमी नरनाह कन्ह की आंखों से पट्टी हटा दी गई तथा पट्टी हटते ही उन्होंने भीषण मार-काट मचा दी—

पट्टे पल छुट्टत । कन्ह धाराहर वज्जयी ।

जनुकि मेघ मरलिय । चीर बिज्जुलि गहि गज्यो ॥

हय गय नर तुट्टंत । विरह तुट्टिय तारायन ।

तुट्टिय पोहनि पंग । राय क्षोनिय मारायन ॥

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छ० ९०, स० ५ ।

२. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छ० ४७, स० १९ ।

३. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छ० ७९, स० ५ ।

हल हलिय नाग नागिनि पुरत । नागिन सिर दुद्यों सहित ।

आवहि न संग सिंगार मन । मननि सोन मुखों सु घर ॥ छं० २२३२ ।

परिणाम स्वरूप पृथ्वीराज चौहान सयोगिता की नेकर दिल्ली की ओर दम कील अग्रसर हो गया—

दहं कोहसा स्वामि आराम छट्टी । पछे पंग रा सेन आपन उट्टी ॥ छं० २२३३ ।

भीषण युद्ध के परिणाम स्वरूप नरनाह कन्ह चौहान का सिर छट्टे में लटका हो गया किन्तु फिर भी उनके धड़ ने तीन घड़ी तक विकट युद्ध किया तथा तीन हजार सैनिकों का काट डाला—

लरत सीस तुद्यों सु हर । घर उद्यों करि मार ।

घरी तीन लों सीस बिन । फट्टे तीस हजार ॥ छं० २२४३ ।

बिन सीस इसी तरवारि बह । निघट्टे जन सावन पास महे ।

घर सीस निरांस हूंअत इसे । मुन राजनु राह संपत जिने ॥ छं० २२४४ ।

इस घड़ की रण क्रीड़ा निरन्तर रूप से तब तक चलती रही जब तक कन्ह चौहान टुकड़े होकर छिन्न-भिन्न न हो गया—

इहि विधि सु कन्ह रिन केलि किन्न ।

परि अंग अंग होइ छिन्न-भिन्न ॥ छं० २२७१ ।

कन्ह की इस संसार में अपार सुकृति फैली तथा उन्होंने पंगराज की सेवा के पुर कार सत्तर हजार सैनिकों को काट कर मोक्ष पद प्राप्त किया—

एक लप्प सित्तर सहस । कट्टि किये भरि बर ।

दोय दीन भव्य सु इम । घनि घनि नृप्य सु कन्ह ॥ छं० २२८२ ।

कान्ह कमधज्ज—रासो के अनुसार कान्यकुब्जेश्वर के मंत्री मुमग की मृत्यु के उपरान्त कान्ह कमधज्ज को ही उक्त गौरवशाली पद सौंपा गया था । 'कान्यकुब्ज मन्धर ११' के पूर्व 'सामन्त पंग युद्ध समय ५५' के अन्तर्गत सर्वप्रथम कान्ह के जीवन एवं पराक्रम का परिचय प्राप्त होता है ।

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० २२३२, स० ६१ ।

२. वही, छं० २२३७, स० ६१ ।

३. वही, छं० २२५३-२२५४, स० ६१ ।

४. वही, छं० २२७१, स० ६१ ।

५. वही, छं० २२८२ स० ६१ ।

६. वही, छं० १४३६, स० ६१ ।

किरिय कान्ह जनु कान्ह गिरि, निरन नूप भर पंग ।

जनु दव लग्गी चिय वनह, भर छ पंगिय जंग ॥ छं० १४२ ॥

उपर्युक्त युद्ध में पंगराज की पराजय के अवसर पर कान्ह कमधज्ज बुरी तरह से घायल हुआ था । उसी स्थान पर वीर कान्ह को कान्यकुब्जेश्वर जयचन्द का भ्रातृज्य होने का कवि ने संकेत दिया है—

कान्ह क्त्तोज उठाय लिय, हय नप्यो वर अग ।

पंग दूढि भारय्य भर, सह मिट्यो जुरि द्रग ॥ छं० १०८ ॥

आहत भ्रातृज कान्ह को उठा कर पंगराज जयचन्द कन्नोज की ओर प्रात्यावर्तित हुये थे ।

‘आल्हा खूँट’ के अन्तर्गत भी कान्ह कमधज्ज को चौहान पृथ्वीराज ने ‘भारीशूर कन्नोजी राय’ कह कर सम्बोधित किया है । ‘कन्नवज समय ६१’ के अंतर्गत दिल्लीपति पृथ्वीराज चौहान पद के प्रसिद्ध सामन्त सलख प्रमार, कनकराय, रघुवंशी, लप्पन बघेला, पहाड़राय भाटिया तथा पंचाइन चौहान आदि को युद्धाग्रसर होते देखकर, इस पराक्रमी योद्धा कान्ह कमधज्ज ने स्वयं मंग्राम करने की इच्छा प्रकट की थी । किन्तु कान्यकुब्जेश्वर जयचन्द द्वारा तत्काल मंत्री पद पर नियुक्त किये जाने के कारण युद्ध में सक्रिय भाग लेने से रोक दिया गया—

बज्जे सुनवि पंगसुर रूप, चक्रित चित नूपाल सू कूप ।

पुवकारे वर उन निप अगं, अरि गो भंजि पान सुर भंज ॥

अगो सुपग बज्जोर वीर, फुरमान अपि अरि गहन नीर ।

बंधि तिलह कन्ह उम्भ करुर, मनुवार छुटि नह वत्तिसूर ॥ छं० १४३६ ॥

संयोगिता अपहरण सम्बन्धी दिल्लीपति पृथ्वीराज तथा कन्नोजपति जयचन्द के मध्य होने वाले घोर संग्राम में नवमी के युद्ध में अन्य रावतों के साथ वीर कान्ह कमधज्ज भी वीरगति को प्राप्त हुआ । ‘नूप कन्हराव मरहट्ट वी’ तथा पंग सेना ने पराजित हो कन्नोज दिशा को पलायन किया ।

काशी नरेश-पृथ्वीराज रासो में कवि चन्द ने गाहड़वाल राजा जयचन्द के सहयोगियों में काशी नरेश का भी उल्लेख किया है । ग्रन्थकार ने इस नरेश का नामोल्लेख कहीं भी नहीं किया है, एक स्थान पर ‘कासह नरिंद रविवंश धीर’ कह कर धियवान काशी नरेश को सूदवंशी होने का संकेत माय प्रस्तुत किया है । महाराज जयचन्द गाहड़वाल के पूर्वजों के

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १४२, स० ५५ ।

२. वही, छं० १०८, स० ५५ ।

३. वही, छं० १४३६, स० ६१ ।

अधिकार में वाराणसी प्रारम्भ से ही थी। अतः तत्कालीन सामन्तिक प्रथा की दृष्टि से समझे हुए, ऐसा अनुमान करने को बल मिलता है कि वह कान्यकुब्जोपर जयचन्द की सैन्य के काशी राज्य का प्रबंधकर्ता कोई रघुवंशी क्षत्रिय रहा होगा। काशी नरेश कप्रीकर्ण नाग जयचन्द के प्रवल सहयोगी के रूप में 'कन्नयज्ज खट' में पृथ्वीराज चौहान के विरुद्ध पराक्रम के पक्ष से युद्ध करता हुआ दृष्टिगोचर होता है—

कासिराज सज्जयो मुवल, फुनि क्षया दिय पंग ।

गाजे भीर अनोर रनि, घाजे विषम सु जंग ॥२०३३॥<sup>१</sup>

कविचन्द ने काशी नरेश के सैन्य दल का विस्तृत विवरण प्रस्तुत किया है। स्पष्ट है कि काशी नरेश संयोगिता अपहरण सम्बन्धी पृथ्वीराज चौहान तथा पराक्रम के माला होने वाले संग्राम में पंग की सहायतायें उपस्थित था—

कासिराज दल विषम, नद्धि जानुत्तार विट्टिटिय ।

निरिनि हार जुध धार, अद्ध अद्धह लिय दगिय ॥२०३८॥<sup>२</sup>

काशी नरेश का सामना विपक्षी दल चौहान पृथ्वीराज के नाममात्र आता तभी नहीं हुआ। दोनों ही अपार पराक्रम का प्रदर्शन करते हुए वीरगति का प्राप्ति हुए—

हाडाराय हलकि उत्त, कासि राजह कर घर पस ।

जोगिनिपुर सामत, बहत कनयज्ज वीर रग ॥

विषी वीर आठुरिय, पत्तिय दत द्वार आवध ।

नामि वीर निज्जुरि, करिय बहरि पुत्त रावध ॥

उडि हंस नसंह मुहर फुहरति सा दत्तिय फुहर ।

जगयौ नाग तव नागपुर, होम दुर्ग धामक घर ॥२०४२॥<sup>३</sup>

काशी नरेश का अपूर्व रण कौशल देख कर वीर पृथ्वीराज चौहान के सम्मान को रों एक बार यह सन्देह होने लगा, कि वह दिल्ली सल्तनत पहुंच भी सकेने क्षमता नहीं।

कुम्भा जी—'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार कुम्भा जी चित्तौड़गढ़ राज्य समर्पित था जेष्ठ पुत्र था। रावल समरसिंह द्वारा छोटे पुत्र रतनसिंह को राजकर्ता का उत्तराधिकारी बनाने के परिणाम स्वरूप यह रूठ कर दक्षिण की पला गया तथा वहाँ हुसैनखान बख्तखान का मुसाहिब होकर बीदरनगर का जागीरदार बन गया—

समर तिप निज पट्ट । पत्तिय रावत रत्तन ॥

दोहिती सोमेत । खनप नरि कुम एम्मे ॥

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा, श्रावरी, छं० २०१३, पृ० ६१।

२. वही, छं० २०३८, पृ० ६१।

३. वही, छं० २०४२, पृ० ६१।

दरिपन दिसि संक्रमिय । निलि यह बसीपति साहं ।

द्विदुर नयर दिय पटें । रहिय अनुचरि तिहि ठाहं ॥

बीराधि यीर बज्जाय पग । हनिय बन्न तन करि उत्तन ॥

इह सुपन रयनि लहि चन्द कहि । चलि पुमान गढ़क ॥ छं० ६ ।<sup>१</sup>

किन्तु 'रासो' के उपर्युक्त कथन की असत्य एवं अप्रामाणिक सिद्ध करते हुए रायबहादुर गोरीशंकर हाराचन्द ओझा ने लिखा है कि "शहाबुद्दीन के साथ की पृथ्वीराज की लड़ाई तक न तो समरसिंह का जन्म हुआ था और न दक्षिण में मुसलमानों का प्रवेश हुआ था । मुसलमानों का प्रथम प्रवेश दक्षिण में अलाउद्दीन खिलजी के समय वि० सं० १३५९ में हुआ । बहमनी सुलतान अलाउद्दीन हसन ने दिल्ली के सुलतान से विद्रोह कर बहमनी राज्य की स्थापना की थी । इस वंश का दसवां सुलतान अहमदशाह बली ई० सं० १४३० (वि० सं० १४८७) में बीदर बसा कर गुलबर्ग से अपनी राजधानी वहां ले आया । अतएव ऊपर लिखा हुआ कुम्भा का वृत्तान्त वि० सं० १४८७ से पीछे लिखा जा सकता है, जिससे पूर्व बीदर का पूर्वक राज्य भी स्थापित नहीं हुआ था ।"<sup>२</sup> अतः इस प्रकार कुम्भा जी की ऐतिहासिकता संदिग्ध हो जाती है ।

कुमोदमनि—'पृथ्वीराज रासो' के मतानुसार कुमाऊगढ़ के अधिपति का नाम कुमोदमनि था ।

सवालथ्य उत्तर सयल, कमऊगढ़ दूरग ।

राजत राज कुमोदमनि, हय गय द्विन्व अभंग ॥ छं० २६ ।<sup>३</sup>

समुद्रशिखर गढ़ के राजा विजयपाल ने अपना पुरोहित भेज कर अपनी एक मात्र पुत्री पद्मावती का सम्बन्ध राजा कुमोदमनि से पक्का कर दिया ।<sup>४</sup> राजा कुमोदमनि यथा समय अपने इष्ट-मित्रों सहित बारात लेकर समुद्रशिखर गढ़ पहुंचा<sup>५</sup> किन्तु दिल्ली-अजमेर का अन्तिम हिंदू शासक पृथ्वीराज चौहान पद्मावती का अपहरण करके दिल्ली ले गया । राजा कुमोदमनि ने पृथ्वीराज का जम कर सामना किया किन्तु परास्त हो, विवश होकर कुमाऊगढ़ छोड़ना पड़ा ।<sup>६</sup> कवि ने कुमोदमनि का उल्लेख फिर समस्त पृथ्वीराज रासो में कहीं भी नहीं

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ६, स० ६६ ।

२. रायबहादुर ओझा, पृथ्वीराज रासो का निर्माणकाल, फोडोत्सव स्मारक संग्रह, पृ० ५९ ।

३. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० २६, स० २० ।

४. वही, छं० २०, स० २० ।

५. वही, छं० २८-३१, स० २० ।

६. वही, छं० ४२-५१, स० २० ।

किया है। 'रासो' के अन्य समस्त संस्करण उनके विषय में मौन हैं। इतिहास भी इन नाम के किसी राजा का समर्थन नहीं करता है।

कूरम्भराय—पृथ्वीराज 'रासो' के अनुसार कूरम्भराय पृथ्वीराज के प्रसिद्ध मामाजी में से एक था। कूरम्भराय पल्लव राज का भाई था। 'देवानन्द समय ६७' के वीर कूरम्भ शहाबुद्दीन गोरी के सामन्त खुरासान खां के साथ युद्ध करता हुआ विपदा देता है। रासोकार ने लिखा है कि—तुर्जनों को सालन जाने पल्लव के लघु कूरम्भ ने तार लगाई। खुरासान खां ने उसका सामना किया तथा अपनी सम्पत्ति समस्त खुरासान छोड़कर उसका टोप टूट कर बिखर गया तथा कवच से तिर टूट गया। गटे हुए तिर से शरीर-मांस की छवि उच्चरित होती रही तथा कटा हुआ घड़ ताल पर गूँथ करता रहा। यह भीषण युद्ध देखकर रुद्र ने भयंकर अट्टहास किया तथा नन्दी हाय-हाय करने लगा। रुद्र कहते हैं कि शैल पुत्री यह नया महाभारत देख कर चकित रह गई—

दुज्जन सल कूरम्भ । वंघ पल्लव हयकारिय ।

सम्हो पां पुरसांन । तेग लम्बो उप्पारिय ॥

टोप टुट्टि चर करिय । सीस पर तुट्टि कमणं ।

मार मार उच्चार । तार तं नच्च कमणं ॥

तहं देवि रुद्र रुद्रह हस्यो । हय-हय-हय नंदो कर्तो ।

कवि चन्द सयल पुत्री चकित । पिपि घोर नारय नचो ॥ ८०१०३१ ॥

उपर्युक्त छन्द क्षेपक प्रतीत होता है, क्योंकि वीर कूरम्भराय देवानन्द समय में पृथ्वीराज तथा शहाबुद्दीन गोरी के मध्य होने वाले संग्राम में मृत्यु को प्राप्त नहीं हुआ था, क्योंकि संयोगिता अपहरण सम्बन्धी युद्ध में कूरम्भ नामक कोई भी पुत्र युद्ध करते हुए नहीं है। पृथ्वीराज रासो 'कन्नवज समय ६९' का कूरम्भ भी पल्लव राज का भाई है। ऐसी स्थिति में दोनों को अलग नहीं माना जा सकता है। 'कन्नवज समय ६९' में कन्नपुष्पीर खां को बौद्धाजी के घराशाही होने पर वीर कूरम्भ ने युद्ध क्षेत्र में बढ़कर विपक्षियों का सामना किया, पृथ्वी-भूमि में पंगदल के सामन्त बाघराज से उसका सामना हुआ, विजयानन्द समय में भी बौद्धा युद्ध करते हुए वीर गति को प्राप्त हुए—

परत राह पुंडीर । गहिय कूरम्भ पन जानी ।

बाघ राह बच्छेल । उहित अतिवर परि लाहो ॥

निर्भ निर्भं निर्म्मरिय । तेग सारिय टेट्टर पर ।

मनुह वेद दुजहीन । पिट्टि सल्लरि जग्गे ह्म ॥

गल बांद लज्जि गट्ठी पिसुन । भीत नेट महा विच्छुरिय ।

उर चंपि दोइ कट्टारि कर । मुगति मग लम्बी घरिय ॥ छं० १४८९ ।'

स्पष्ट है धीर कूरम्भ रेवा नदी के तट पर पृथ्वीराज तथा मोहम्मद गोरी के मध्य होने वाले संग्राम में नुरासान खाँ के हाथों नहीं मारा गया था वरन् 'कनवज्ज समय' के अन्तर्गत बाघराय बघेल से युद्ध करता हुआ मोक्ष-मार्ग को प्राप्त हुआ ।

केहरि कण्ठीर—कवि चन्द वरदायी वर्णित पंगराज के दरवार के अदृश्य वर्णन में केहरि कण्ठीर का भी नाम उल्लेख हुआ है—“केहरी सहा चालुक्क खीर” ॥' जयचन्द गाहड़-वाल का यह सामन्त महान् योद्धा था । 'कनवज्ज समय ६१' के अंतर्गत संयोगिता अपहरण सम्बन्धी पृथ्वीराज चौहान तथा पंगराज के मध्य धीर संग्राम में पंगराज की दुविधामय स्थिति देखकर पंगराज के मंत्री सुमंत ने जयचन्द को केहरि कण्ठीर को युद्धादेश देने का परामर्श दिया था—

केहरि कण्ठीर पठौ सुनरूप इन समान छित्री न छित्ति ।

अड्डी सुघरो विवम्भार घन, रावन रिन सिव ईय पत्ति ॥ १४२४ ।'

केहरि कण्ठीर अत्यन्त विवेकशील था, सेनाध्यक्ष रावन के समान वह भी जानता था कि चौहान पृथ्वीराज को पकड़ने में सभी पंगदल का नाश होगा किन्तु फिर भी वह रण प्रहारों को वीरता से सहन करने को प्रस्तुत रहा—

भंजौ जुवीर चहुआनल, इह दुवह सम्हों मिरं ।

भारथ्य वीर मंटन सहै, अरी जीत कायर मुरं ॥ छं० १४२६ ।'

सामन्त केहरि कण्ठीर स्वामि की आज्ञा शिरोधार्य कर युद्ध हेतु रण प्रांगण की ओर अग्रसर हुआ—

केहरि कण्ठ सुगत भी, करि जुहार नृप भार ।

हस्ति काल जय जाल ले, चलि अगं कुटवार ॥ छं० १९१७ ।'

रणक्षेत्र में केहरि कण्ठीर का सामना दिल्लीपति चौहान पृथ्वीराज से हुआ । दोनों में धीर संग्राम हुआ तथा इस चतुर सामन्त ने उचित अवसर पाकर अपनी कमान चौहान के गले में डाल दी—

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १४८९, स० ६१ ।

२. वही, छं० ५४२, स० ६१ ।

३. वही, छं० १४२४, स० ६१ ।

४. वही, छं० १४२६, स० ६१ ।

५. वही, छं० १९१७, स० ६१ ।

केहरि रा कण्ठीर स्वामि निगिति गर धनिय ।  
 वरन पास निय चंद कोक पाल्ल पति मत्तिय ॥  
 हंसि हलकिक हथ्यारि पंग पुत्तिय जानन बन ।  
 तात अग्य सवरिय, राज राजत दानी धन ॥  
 चहुआन रख्य सय्य चढ़िय, नपि वष्य कमप्रज्ज घर ।  
 अब देपि वाल लालन नुपर, नुवन हाल पिच्चो मुट्टर ॥ छं० १९१८ ।

वह समय दूर नहीं था जब पृथ्वीराज चौहान के साथ कोई भीरु युद्ध हुआ हो। किन्तु चौहान के घोड़े पर बँठी हुई वीरांगना सयोगिता ने ठीक समय पर कमान की प्रत्यञ्चा काट कर पृथ्वीराज की प्राण रक्षा की तथा पृथ्वीराज ने जबदुर तावर घोर केरान कण्ठीर पर असि-प्रहार किया—

गुन कट्टिय रमनी सुवर उसनह पंग कुआरि ।  
 असि वर सर प्रयिराज हनि, मूर ह्य्य नर पारि ॥ छं० १९१९ ।

पृथ्वीराज चौहान तथा केहरि कण्ठीर के मध्य घोर असि संघाम हुआ जिसमें पराक्रमी केहरि कण्ठीर ने अपूर्व शौर्य का प्रदर्शन किया—

जु क्रमे वर केहरि चंगल चंकि प्रहे गर पांव उरत उतारि  
 घरे सम जंगल पुच्छ सरोह सनपत मंडल उडल मोह ॥ छं० १९२० ।

दिल्लीपति चौहान के साथ इस घोर संग्राम में कप्रोटपति जयचमराजराज का दूत पराक्रमी तथा सहयोगी सामन्त पचतत्व का प्राप्त हुआ तथा साथ ही नगरी गजियाह का युद्धावसान भी हो गया ।

कैमास दाहिम\*—‘पृथ्वीराज रासो’ के मतानुसार कैमास पृथ्वीराज की पत्नी का प्रदान

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १९१८, पृ० ६१ ।

२. वही, छं० १९१९, पृ० ६१ ।

३. वही, छं० १९२१, पृ० ६१ ।

४. ‘दाहिमा जोधपुर राज्य के गोठ और बांगलोड गाँवों के बीच दक्षिणी भाग का बहुत प्राचीन प्रसिद्ध मन्दिर है । इस मन्दिर के आस-पान का प्रदेश प्राचीन काल में दक्षिणी [दाहिम] क्षेत्र कहलाता था । उस क्षेत्र से निकले हुए ब्राह्मण, राजपूत, जाट आदि दाहिमे ब्राह्मण, दाहिमे राजपूत, दाहिमे जाट कहलाये, जैसा कि धोमाल (धोमाली) नगर के नाम से श्रीमाली ब्राह्मण, धोमाली नवाजन, धोमाली महिप आदि । दाहिमे राजपूतों का प्राचीन काल में कोई बड़ा राज्य नहीं था, वे पालकरी की हत्या में ही रहे । राजपूताने में इस देश का अत्यन्त छोटी प्रजासत्ता का गणराज्य नहीं था । चौहान पृथ्वीराज के मंत्री कैमास (बन्धुधाम) का दाहिमा होने का मत है । यह



मंत्री था। कैमास, दाहिमराज का पुत्र था, इसकी बहन दाहिमी से पृथ्वीराज का विवाह हुआ था।

सब प्रथम कैमास को 'मेवाती मुंगल समय' के अन्तर्गत युद्ध करते हुए कवि ने दिखाया है। कैमास ने बिपक्षी दल के पठान बाजिद खां से घोर युद्ध किया था जिसमें बाजिद खां, मृत्यु को प्राप्त हुआ। 'द्विमेन कया समय' के अन्तर्गत कैमास, पृथ्वीराज चौहान को हुसेन को शरण देने के पक्ष में राय देता दिखाई देता है। भोलाराय भीमदेव चालुक्य से युद्ध होने पर पृथ्वीराज चौहान की ओर से कैमास ने सेनापतित्व ग्रहण कर भीमदेव पर आक्रमण किया किन्तु उसके मंत्री अमरसिंह सेंवरा ने अपने मंत्र-बल तथा लाले नामक छत्राणी के रूपजाल में फंसा कर उसे परास्त कर नागौर में भीमदेव की विजय पताका फहरा दी। कवि चन्द वर-दार्य ने नागौर आकर सेंवरा की मंत्र-विद्या को भंग कर दिया तथा नागौर शहर से भोलाराय की सेना को मार भगाया। इस प्रकार शत्रु को परास्त कर जब कवि चन्द कैमास के पास गया तो कैमास ने लज्जित होकर अपना सिर झुका लिया। वह कवि चन्द के सामने भी न देखा सका। कवि चन्द ने उसकी ऐसी स्थिति देख कर आश्वासन देकर कहा कि, हे बुद्धिमान कैमास ! इसमें तुम्हारा दोष नहीं है, मंत्र-तंत्र से देवता भी बसीभूत हो जाते हैं, तब मनुष्य की गणना ही क्या ? ऐसे समझा कर उसने कैमास को संतोष दिया तथा भोलाराय पर आक्रमण करने को उत्साहित किया। कवि चन्द ने कहा कि वीर कैमास अब तुम भीमदेव को परास्त करके ही अपना मुख उज्ज्वल करो। उधर दिल्ली में जब कैमास के मंत्र-वश में होने का समाचार पहुंचा तो सब राज में खलबली पड़ गई। कन्ह, चामुंडराय, चण्ड पुण्डरी आदि सब सामन्त पृथ्वीराज की अजमेर में छोड़ कर नागौर की ओर सहायतायें चल पड़े। वीर कैमास ने इन समस्त वीरों के आने से उत्साहित होकर युद्ध के लिए प्रस्थान किया। सप्तमी की रात को भीमदेव ने कैमास पर आक्रमण किया। दोनों ओर से लोहा झरने लगा। तीर तुबक, तलवार, कटार बर्छी, बांक, बिछुए आदि की छचा-छच मार होने लगी। बड़े-बड़े मतवाले हाथी, सामन्तों की तेज तलवार से दो-दो टूक हो-होकर नदी की कगारों के समान

तो उनकी कोई जागीर भी नहीं है।'

—रायबहादुर गौरीशंकर हीराचन्द ओझा,

राजपूताने का इतिहास, जिल्द पहली, पृ० २७०, वैदिक ग्रंथालय, अजमेर, द्वितीय संस्करण।

१. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० १०, स० १६।
२. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ३५, स० ८।
३. वही, छं० ३६, स० ८।
४. वही, छं० १३, स० ९।
५. वही छं० ३०८-९, स० १२।
६. वही, छं० ३११, स० १२।
७. वही, छं० ३२१, स० १२।

गिरते थे। इस युद्ध में बाजीबां जो कि भीमदेव का एक प्रसिद्ध परदार था, राजा का योद्धाओं सहित वीरगति को प्राप्त हुआ।<sup>१</sup>

युद्ध में कैमास की विजय हुई। भीमदेव के नेरह हजार सैनिक मार कर मरवा करके तीन हजार सैनिकों की आहुति देकर परम पराक्रमी कैमास ने भोजपुर भीम को पराजित कर दिया।

अन्त में इस पराक्रमी वीर तथा पृथ्वीराज के परम विधवायी मंत्री का वध भी इसी में हाथों हुआ। 'रासो' ने लिखा है—एक बार पृथ्वीराज अपने सामन्तो महिष दत्त के तिराज खेलने गये हुए थे। वर्षा ऋतु थी। कैमास तथा महाराज पृथ्वीराज की परम प्रिय दासी करनाटी एक दूसरे पर आसक्त थे। अतः पृथ्वीराज की अनुपस्थिति में नाभ उठा कर करनाटी दासी ने कैमास को अपनी दासी द्वारा अपने महल में बुलाया। प्रेम भरा सदेव पाकर कैमास अपने को न रोक सका, अतः दासी के साथ स्त्री-भेष धारण करके करनाटी के महल की ओर चल दिया—

सुनि दासी करनाटी वच । निज संचारि सय मुद ।  
मति घटी असनी सरति । कालनिता द्रत निद ॥ छं० ४४ ।  
सहचरि वर नो कल्लि कैं । तर्फें यट्ट संमाण ।  
सम समद्धि सज्जें रह्यौ । करि करि हिये पिलास ॥ छं० ४५ ।  
निति नद्व कद्व फहल । आपेटक प्रपिराज ।  
दाहिम्नो दहि काम रत । काल रंनो कैं काज ॥ छं० ४६ ।  
दासिय हय्य सु हय्य दिय । प्रिय अवैंर आछारि ।  
दासिय अंतर अप्प हुआ । दरन स पिप्प्यो सारि ॥ छं० ४७ ।

किन्तु दुर्भाग्यवश सीढ़ी चढ़ते हुए पृथ्वीराज की रानी इच्छिनी ने कैमास की देख लिया तथा उसके सुग्गे ने कहा कि देखो आज काग मुक्ता पाने चला है—

सुक चरिप्र दासिय परपि । फहि इच्छिनि सजोई ।  
काग जाइ मुत्तिय चरै । हरति हंस का होई ॥ छं० ४८ ।

अतः रानी इच्छिनी ने अपनी दासी द्वारा उपर्युक्त समाचार लिखकर पृथ्वीराज के राजमहल में भेज दिया। राजा पद्म प्राप्त होते ही, अत्यन्त क्रुपित हो, रानी इच्छिनी के महल में आ गया—

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ३२४-३६, स० १२ ।
२. वही, छं० ४४-४७, स० ४७ ।
३. वही, छं० ६०, स० ४७ ।

अयो नृप इच्छिनि महल । राज रीस चित मानि ।

अग्नि दसस कैमास कै । वीर वरन्निप पानि ॥ छं० ७७ ।'

पृथ्वीराज के महल में जाने पर रानी इच्छिनी ने पृथ्वीराज को, कैमास तथा करनाटी को चित्रली के प्रकाश में दिखा दिया । महाराज पृथ्वीराज दोनों को एक साथ देख कर अपने को गमाल न सके तथा उन्होंने अपने प्रिय मंत्री कैमास पर विजली के प्रकाश में अपना बाण सघान किया—

निसि अद्धी सुज्ञं नही । वर कैमासय काज ।

तदित करिग अगुलि धरम । वान भरिग प्रथिराज ॥ छं० ८७ ।'

इनने में ही महाराज पृथ्वीराज चौहान के बाण ने कैमास मंत्री का हृदय विदीर्ण कर दिया, जिससे उसके प्राण पखेरू उड़ गये—

वान लग कैमास उर । सो ओपम कवि पाइ ।

मनो हृदय कैमास कै । हृदये बुझसिय लाइ ॥ छं० ८९ ।'

मंत्री कैमास के मर जाने पर करनाटी तो भाग निकली किन्तु महाराज पृथ्वीराज ने कैमास को वहीं पर गड़वा खुदवा कर गाड़ दिया—

पनि गड़यो कैमास तंह । दासी सम करि भग ।

पच तत सरसे सुपं । प्राप्त प्रगट्ट रग ॥ छं० १०० ।'

कवि ने कैमास मंत्री की प्रसंगा इस प्रकार की है—

जिन कैमास सुमत्रि । पोवि पट्ट घन कढ्यो ।

जिन कैमास सुमत्रि । राज चहुआन सु चढ्यो ॥

जिन कैमास सुमत्रि । पारि परिहार मुरस्थल ।

जिन कैमास सुमत्रि । मेछ वढ्यो बल सव्वल ।

विहु ओर जोर चहुआन नृप । तुरक हिन्द फरपन डरह ।

बाराह वय्य बाराह बिच । सु बस्ति बास जंगल धरह ॥ छं० ९७ ।'

कैमास वध कथा असत्य प्रतीत नहीं होती है । कैमास का स्त्री के प्रति मोह 'भोलाराम समय' से ही स्पष्ट हो जाता है । ऐसी स्थिति में यदि कैमास करनाटी दासी में अनुरक्त हो तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है ।

१. पृथ्वीराज रासो नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ७७, स० ५७ ।

२. वही, छं० ८७, स० ५७ ।

३. वही, छं० ८९, स० ५७ ।

४. वही, छं० १००, स० ५७ ।

५. वही, छं० ९७, स० ५७ ।

कैमास के अस्तित्व को मानते हुए डॉ० दशरथ शर्मा ने एक स्थान पर लिखा है कि—  
 'कैमास वध की कथा भी प्रमाण रहित प्रतीत नहीं होती। पृथ्वीराज विजय नामावली व  
 कदम्बवास अर्थात् कैमास को पृथ्वीराज का प्रधान मंत्री बतलाया गया। मोर्चेपट्टी की कथा  
 के बाद उसी ने अजमेर राज्य का मुखवन्ध किया था। लिखनाथ कदम्बवास की  
 खरतरगच्छ पट्टावली में भी मण्डलेश्वर कदमास का उल्लेख है। उक्त पत्रपत्रों और भी जिन  
 पति सूरि का शास्त्रार्थ हुआ तब पृथ्वीराज की अनुपस्थिति में वही सम्भाषण किया गया था।  
 इसलिए इतना तो स्पष्ट ही है कि कैमास को अजमेर राज्य में बहुत जैसा पद प्राप्त हुआ  
 था। अब रहा उसके वध का प्रश्न। सो भी अब प्रायः हल हो चुका है। कदम्बवास की कथा  
 पूर्व मुनिराज श्री जिनविजय जी ने पुरातन प्रबन्ध संग्रह नामक एक प्रयोग प्रकाशित किया  
 है। इसके सबसे पुराने आदर्श का सम्बत १५२८ है। परन्तु अन्य कारणों से जिनविजय जी  
 का अनुमान है कि पृथ्वीराज प्रबन्ध सम्भवतः सं० १२९० के आस-पास लिखा गया था।  
 यद्यपि मैं इस विचार से सर्वथा सहमत नहीं हूँ (प्रबन्ध में पृथ्वीराज के भाई का नाम लखो-  
 राज मिलना उसकी अत्यन्त प्राचीनता की संदिग्ध बनाना है) तथापि इतना तो हम में हम  
 निश्चित है कि उसमें दिए अपभ्रंश अवतरणों की भाषा जैनियों की छन्द आदि संज्ञा की भाषा  
 से कई सौ वर्ष पुरानी है। ये अवतरण निम्नलिखित हैं—

इयकु धाण पहुवीस जु पई कंइवास ह मुखनी ।  
 उर नितरि खडह छिउ घोर कसरतरि चुषरुड ॥  
 बीऊं करि संघीऊं भमद सुमेसर नन्दन ।  
 एहु सु गडि दाहिमओ राणइ सुछइ संहरि बन् ॥  
 फुड छडि न जाइ इहु सुद्धिउ बारह पल्लउ तत मुख ॥  
 न जाणऊं चन्द बलहिउ कि न विछूहइ इह पार ॥  
 अगहुम गहि दाहिमओ रिपुराम रावण ॥  
 कूड मंत्रमम ठवओ एहु जं वृष मिलि लगन ॥  
 सह नामां तिवलयऊं जइ तिवलयिउं यगन ॥  
 जंपइ चन्दबलहिहु मग्ग परमसरर मुखर ॥  
 पहु पहुविराम सहनरि परनी सडडाइ मगरिनि ।  
 कंइवास विभास विसट्ट विलु मच्छिपि इहो मरिति ॥

इसी भाँति डॉ० माताप्रसाद गुप्त भी कैमास के अस्तित्व में विश्वास करते हुए लिखते हैं  
 कि 'जयानक के पृथ्वीराज विजय में भी मंत्री कदम्बवास का उल्लेख है और उसी का पद  
 है कि उसी के संरक्षण में पृथ्वीराज बानक से युवा हुआ था। पृथ्वीराज विजय की भाषा डॉ०

१. डॉ० दशरथ शर्मा, पृथ्वीराज रासो की कथाओं का ऐतिहासिक अध्ययन, राजस्थानी  
 अंक ३, भाग ३, जनवरी १९४०।

इसके कुछ भी अनंतर उद्धृत है इसलिए कंदववास का और अधिक वृत्त उसमें नहीं मिलता है। जिनपान उपाध्याय (सं० १२६२) द्वारा लिखित 'चरतरगच्छ पट्टावली' में मंडलेश्वर कैमास का उल्लेख है और कहा गया है कि जैनाचार्यों के शास्त्रार्थ में पृथ्वीराज के विश्राम-काल में मध्यस्थता का कार्य इसी ने किया था। इससे ज्ञात होता है कि यह विद्वान् या और धार्मिक विचारों में उदार भी था। कैमास दाहिमा के पृथ्वीराज के प्रधान होने और पृथ्वी-राज के द्वारा उसका वध किए जाने की एक कथा 'पुरातन प्रबन्ध संग्रह' में संकलित 'पृथ्वीराज प्रबन्ध' में आई है, यद्यपि उसमें वध का कारण राजनैतिक बताया गया है। इस जैन प्रबन्ध का रचना काल अनुमान में चौदहवीं शती विक्रमीय का उत्तरार्द्ध होना चाहिए। इसलिए कैमास (कंदववास) का पृथ्वीराज का प्रधान अमात्य होना, उसका बुद्धिमान और विद्वान् होना प्रमाणित है। किसी कारण पृथ्वीराज ने उसका वध किया यह भी विश्वासनीय प्रतीत होता है।"

'पुरातन प्रबन्ध संग्रह' के दोनों छन्द 'पृथ्वीराज रासो' में भी प्राप्त हो जाते हैं। कैमास वध कथा भी प्रायः 'रासो' के समस्त संस्करणों में किसी न किसी रूप में विद्यमान है। इससे कैमास-वध आख्यान की सत्यता एवं प्राचीनता में किसी प्रकार का सन्देह नहीं रहता। 'मुहूर्णोत्त नैणसी की ट्यात' में भी इसी प्रकार की कथा का उल्लेख प्राप्त होता है— 'राजा पृथ्वीराज चौहान की रानी सुहवदे जोइयाणी अपने पति से रुठ कर पिता के घर आन बैठी, उसके पिता ने खाटू (गांव) की पहाड़ी पर पुत्री के लिए एक महल बनवा दिया। वह इतना ऊँचा था कि उसमें जलता हुआ दीपक अजमेर से नजर आता था। जोइयाणी की आशनाई गुंदलराव से हो गई। गुंदल ने अपने गांव से उस महल तक एक सुरंग (गुप्त मार्ग) खुदवाई, जिससे होकर वह जोइयाणी के महल में आया-जाया करता था। एक बार पृथ्वीराज की दूसरी राणी अजयदेवी दाहिमाणी ने उस दीपक को देख कर अनुमान बांधा कि वहाँ अवश्य कोई मर्द आता-जाता होगा और उसने यह बात पति को कही, तब अपनी चौकी के घोड़े पर सवार होकर पृथ्वीराज अचानक सुहवदे के महल की द्योढ़ी पर जा पहुँचा और घोड़े से उतर पड़ा। द्वारपाल ने राणी के पास खबर पहुँचाई इतने में तो 'पृथ्वीराज' भी महल में पहुँच गया। गुंदलराव तो तत्काल सुरंग के मार्ग से चलता बना परन्तु उसके पांव का जोड़ा वहीं रह गया। प्रभात को जब पृथ्वीराज ने वह जोड़ा देखा तो सुहवदे से पूछा कि यह किसका है और यहाँ कौन मर्द आता है। थोड़ी देर तक तो वह टाल-मटोल का उत्तर देती रही परन्तु जब देखा कि सच कहे बिना चलेगा नहीं तो स्पष्ट कह दिया कि यहाँ गुंदलराव सींवी आता है। यह सुनकर पृथ्वीराज पीछा अजमेर को लौट आया और दूसरे

---

१. डॉ० माताप्रसाद गुप्त, पृथ्वीराज रासो की ऐतिहासिकता और रचना तिथि, राष्ट्रकवि अमिलीशरण अग्निनन्दन ग्रन्थ, पृ० ९५५, सन् १९५९।

ही दिन दाहिम चामण्डराय को फीज देकर जमान की तरफ सीकियो दर दिवा (दिवा) । उपर्युक्त कथा में भी गुईंदराय खीचीं पृथ्वीराज का सामन्त है । जयः इससे प्रमाणित होता है, कि जन परम्परा से यह बात प्रचलित थी कि पृथ्वीराज चौहान की किसी रातों रातों परासी का अनुचित सम्बन्ध, उसके किसी सामन्त से था तथा उसने उसे या तो मार दिया था अथवा मार डालने का प्रयत्न किया था ।

लेमकरन खंगार, वीरसिंह तथा जरासिंह—'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार सप्तम तीनों आठूपति सलपराज के सामन्त थे जो भीमाराय भीमदेव चातुर्वर्ग से कुछ रातों रातों वीरगति को प्राप्त हुए थे ।<sup>१</sup> इतना ही नहीं नाय में आठूपति सलपराज की इसी वृद्ध में पराभव को प्राप्त हुए । रासो के लघु तथा लघुतम रूपान्तर इनके विषय में मौन है ।<sup>२</sup> हालांकि में इनका अस्तित्व प्राप्त नहीं होता है ।

गोविन्दराय गहलीत—'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार यह पृथ्वीराज चौहान (पूर्वीक) का सामन्त था तथा इसकी गणना उनके प्रसिद्ध एवं श्रेष्ठ सामन्तों में होती थी । गोविन्दराय गहलीत को सम्पूर्ण रासों में कई नामों से सम्बोधित किया गया है—गोविन्दराय, गोविन्दराय गोविन्दराज । यह गुहिलीत वंश का धत्री था, अतएव गुहिलीत राजवंशी उपाधि 'आठुट्ट' भी इसको प्राप्त थी ।<sup>३</sup> पृथ्वीराज चौहान ने गोविन्दराय गहलीत की जय राजासो के बाद अपनी बहिन पृथावाई के विवाह में रावल समरसिंह को भी दहेज में दिया था ।<sup>४</sup> परमपरी गोविन्दराय गहलीत ने दो बार शाह शहाबुद्दीन गोरी को बन्दी बनाया था ।<sup>५</sup> 'दिलालत सम्वत् २७' में गोविन्दराय गहलीत को मृत्यु का वर्णन इस प्रकार से प्राप्त होता है—'जब दिवाली खां तलवार रोक कर खड़ा हुआ तब यवन सेना समुद्र की भाँति गर्जना करने लगी । एसी तथा घोड़ों की विशाल लहरों के समान आते देखकर गरुड़ गोइंद ने अपने को वृद्ध में बदल होने के लिए तैयार किया । अगम्य एवं अलग जलधार के समान वीर नामने साधे तथा अत्यधिक दलबल से आहुट्टि को लज्जित कर प्रवाहित कर दिया अर्थात् उसे मार डाला । यद्यपि उसका पृथ्वी का राज्य चला गया किन्तु फिर भी वह राजा होने में तैयार रहा । उसके वदन में धूलि नहीं लगी, वह रज-रज हो गया । सम्यराजो ने उसे मोह में ले लिया तथा देवताओं के विमान पर चढ़कर वह (स्वर्गतोक) चला गया ।'<sup>६</sup>

१. श्री रामनारायण डूंगड़, मुहंनोत जेणसी की रयात, प्रथम भाग, पृ० १८४-८६, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, स० १९८२ ।
२. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, पृ० १०७, स० १३ ।
३. "गोइंद राजा आहुटठपति"
४. "द्वितीय राज गोइंद दिव्य तीस हृषी महा तेज साज" । पृ० १०८, स० २१ ।
५. गोविन्दराय गहलीत नेस । जिन होय कर मरजन गहेन । पृ० १३८, स० २१ । तथा पृ० १३८, स० ६१ ।

लग्न हटविक जुटविक, जमन सेन समुंद गजि ।  
 हय गय वर हिल्लोर, गरुअ गोइंद दिपि सजि ॥  
 अगम अठेल अनग, नीर असि मीर समाहिय ।  
 अति दल बल आहुटि, पच्छ लज्जी परवाहिय ॥  
 रज तज्ज मुषिक न रह्यो, रज न लगी रज रज मयो ।  
 उच्छंगन अच्छर सों लयो, देव विमानन चढ़ि गयो ॥छं० १००॥'

गोविन्दराय की मृत्यु का वर्णन उपरोक्त कवित्त में स्पष्ट रूप से हुआ है किन्तु ऐसा जान पड़ता है कि यह प्रसिद्ध गोविन्दराय गहलीत न था वरन् उसका कोई भाई अथवा समन्वन्धी रहा होगा, क्योंकि प्रसिद्ध गोविन्दराय हमें 'कनवज्ज समय ६१' में पुनः पंगराज से युद्ध करता हुआ दृष्टिगोचर होता है । यह भी असंभव नहीं कि उपरोक्त छन्द कोपक हो । गोविन्दराय गहलीत संयोगिता अपहरण के अवसर पर महाराज पृथ्वीराज चौहान के साथ था ।<sup>१</sup> चन्द वरदायी ने इसकी अपार प्रशंसा की है ।<sup>२</sup> अन्त में संयोगिता अपहरण के अवसर पर होने वाले संग्राम में गोविन्दराय, लोहाना आजानवाहु के मृत्यु के उपरान्त युद्ध भूमि की ओर अग्रसर हुआ तथा विपक्षी दल के अनेक सामन्तों का संहार करके वीरगति को प्राप्त हुआ—

उठे हथिक करि क्षारि कोपेज डांक ।  
 हये चचार मीरं दुवाहंड डालं ॥  
 उरं लगि जंवूर आरास वानं ।  
 पर्यो राय गोयंद दिल्ली भुजान ॥छं० १४७२॥'

महाकवि चन्द ने गहलीत की वीरता का वर्णन इस प्रकार किया है—

पहर एक अतिवर सुनर । आरिसि बुद्धी सार ।  
 जिने कीन गोयंद सिर । जे पंग तुटिय धार ॥ छं० १४७३ ॥  
 तव गरज्यो गहलीत । पति पाहार धार चढ़ि ।  
 यदवानल असि तेज । पंग पारस समुह चढ़ि ॥  
 अरि अकुक्ष सिप्यवं । मस्त्र बज्जी तन छिल्ले ॥  
 अकं मरन समूह । मस्त्र वर सस्त्रन छिल्ले ॥

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १००, स० २७ ।
२. मतो गरज गोयंद कहि । वर दिल्ली मुर पान ।  
 हय्य वीर विरसाइ चलि । घर लग्गे मुरतान ॥स० ६१॥
३. गुह राय गोयंद वदे मु इंद । मुतं मडलीकं सबे सेन चंद ॥ छं० १११, स० ६१ ।
४. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १८७२, स० ६१-४ ।

आवृत पाप तन शस्त्ररिय । मन अस्त्रारि गिन तन दन्ति ।

गोयंदराय आहुदठ पति । भुगति मग्न मुनिप्य दन्ति ॥ छं० १४०१ ॥

वह पृथ्वीराज चौहान के वहनोंई समरसिंह गुहिलोंत का निरुद्ध सन्तुष्टी दत्ता राजा । इलियट महोदय ने लिखा है कि "उसने पृथ्वीराज की दहिन में विद्या लिखा है" इलियट महोदय ने समरसिंह गुहिलोंत तथा गोविन्द गुहिलोंत नामों की नमस्तर में भ्रम कर डी है । इसी से भ्रमवश उन्होंने ऐसा लिख दिया है ।

डॉ० माताप्रसाद गुप्त गोविन्दराय गहलोत की ऐतिहासिकता पर विचार करते हुए लिखते हैं कि—'कहा गया है कि यह पृथ्वीराज का एक प्रमुख सामन्त था, जो भीमचौहान युद्ध में पृथ्वीराज की ओर से लड़ा था । यह पृथ्वीराज के माय कप्रील के जयचन्द-पृथ्वीराज के युद्ध में तथा बाद में शहाबुद्दीन-पृथ्वीराज के अन्तिम युद्ध में भी था, जो अन्तिम युद्ध रक्षक था । 'तवकात-ए-नासिरी' के अनुसार दिल्ली का गोविन्दराय शहाबुद्दीन-पृथ्वीराज के अन्तिम युद्ध में पृथ्वीराज की ओर से लड़ा था । 'गांगल' नाम के कई प्रदेश में, 'जुगल' प्रांत, दिल्ली का ही एक प्रांत था । सपादनल प्रदेश का भी एक अन्य नाम 'जगल' था । पृथ्वीराज इन दोनों प्रदेशों का शासक था, किन्तु 'रासो' में यह गोविन्दराय स्पष्ट बताया है, 'जगल हवास कालिंदी कूल' इसलिए यह स्पष्ट है कि वह 'जुगल' का ही शासक था । फलतः 'तवकात-ए-नासिरी' से रासो के कथन का समर्थन होता है ।" गोविन्दराय गहलोत की पुष्टि तवकात-ए-नासिरी से हो जाती है ।" यद्यपि अन्य ऐतिहासिक ग्रन्थ गोविन्दराय गहलोत के विषय में मौन है, फिर भी इसकी ऐतिहासिकता में अधिक संदेह नहीं किया जा सकता ।

चण्डपुण्डरी—'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार चण्डपुण्डरी, पृथ्वीराज का खोद नाम था । चण्डपुण्डरी देवातट समय में पृथ्वीराज चौहान द्वारा नियुक्त लाहौर का शासक कहा गया है ।<sup>१</sup>

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १४७३-७४, पृ० ८१ ।
२. Elliot, Races of N. W. Provinces of India, Vol. I, Page. 50.
३. डॉ० माताप्रसाद गुप्त, पृथ्वीराज रासो की ऐतिहासिकता और रचना विधि, राजपूत हि मंथिलीशरण गुप्त अनिनन्दन ग्रन्थ, पृ० ९४४, अक्षरपर १९२९ ।
४. इलियट और टाडसन, मिनहाजुस्तिाराज, तवकात-ए-नासिरी, भाग २, पृ० २६१-२७४ ।
५. 'रासो के देवातट सम्पों में चण्डपुण्डरी की पृथ्वीराज द्वारा नियुक्त लाहौर का शासक कहा गया है । लाहौर नगर और दुर्ग पर फारसी इतिहासकार, मुस्लिम अधिकांश इस्तेमाल हैं । अन्य विद्वत्त सूत्रों के अभाव में हम दो सम्भावनाएं मान्य कर सकते हैं कि या तो लाहौर नगर और दुर्ग पर कुछ समय के लिए इस्लाम का अधिकार हो गया था या इस सम्पों में वर्णित लाहौर से नगर का अर्थ गयेर 'लाहौर' एवं लाहौर के



लाहौर के मानक चण्डपुण्डरी ने महाराज पृथ्वीराज को एक पत्र लिख कर दूत द्वारा भेजा, उसमें उसने लिखा था कि 'खां ततार मारुफ खां ने शाह गोरी के हाथ से पान ग्रहण किया है। चौहानों को उखाड़ फेंकने के लिए वायु में बाजे बज रहे हैं। हे राजन ! गोरी के सेनापति तानार मारुफ खां ने ढोल बजा कर सारी तैयारी कर ली है तथा उसकी चतुरगिणी सेना हम लोगों पर आक्रमण करने के लिए प्रस्तुत है। भयंकर आक्रमण करने की इच्छा से यानों ने अपने घोंटों पर जीने कस ली है।'

पां ततार मारुफ पां, लिये पान कर साहि ।

धर चहुआंती उपरै, बज्जा बज्जन वाई ॥ छं० १४।

श्रोतं नूपय गोरिय वर नरं, बज्जाइ सज्जाइने ।

सा सेना चतुरग बंधि उल्लं, ततार मारुफय ॥

तुज्जी सारस उप्परा बसरसी, पल्लानयं पानयं ।

एकं जीव सहाव साहि न नयं, बीयं स्तय सेनय ॥ छं० १५।'

महाराज पृथ्वीराज ने चण्डपुण्डरी द्वारा प्रेषित पत्र को प्रमाण मान कर अपने श्रेष्ठ सामन्तों से परामर्श किया, जिससे हिन्दू सेना में तैयारी होने लगी ।' इसी समय एक अन्य दूत ने आकर सूचना दी कि गोरी ने चिनाव नदी पार कर ली है तथा वीर चण्डपुण्डरी गोरी का सामना करने के लिए नदी के किनारे पहुंच गया है ।' जहाँ पर गोरी के सेना नायको ने चिनाव नदी पार की, वहीं पुण्डरी वरछी गाड़े हुआ डटा हुआ था । शाहबुद्दीन गोरी ने हाथियों की सेना तैयार की है तथा तदुपरान्त समस्त सैनिक आपस में धक्का-मुक्की करते हुए अग्रसर हुए । दोनों दलों ने अपने-अपने धर्म का नाम लिया तथा टेढ़ी तलवारें खींच ली ।'

चण्डपुण्डरी और गोरी के इस विषम युद्ध में पुण्डरी के पांच बान्धवों के मरने पर उसने सामना करना छोड़ दिया तथा तभी गोरी चिनाव नदी पार कर सका ।' दूत द्वारा

होना; आधुनिक काल में जिस प्रकार लाहौर नगर और उस प्रदेश का थोड़ा भाग पाकिस्तान में है तथा उक्त प्रदेश का अधिक भाग हिन्दुस्तान में कुछ ऐसी परिस्थित उस समय भी रही होगी ।' डॉ० विपिनचिहारी त्रिवेदी, रेवातट समय, परिशिष्ट भाग, पृ० १६५ ।

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, छं० १४-१५, स० २७ ।

२. मंत्री कूह दल हिन्दु के कसे सनाह सनाह ।

वर चिराक दस सहस्र नइ. बजि निमान अरि दाइ ॥ छं० ३९, स० २७ ।

३. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ४७-५१, स० २७ ।

४. उत्तरि साहि विन्हाय, पाय पुंडीर लुगिय पर ।

उप्पार्यो वर चन्द, पंच दंघव सुपय्य घर ॥ छं० ५२, स० २७ ।

पृथ्वीराज ने चण्डपुण्डरी तथा गोगी के युद्ध का उपर्युक्त समाचार रासो नागरी देना को कूच करने की आज्ञा दे दी। पृथ्वीराज की महारथता मिलने पर चण्डपुण्डरी ने नागरी की सेना पर पुनः वार करने प्रारंभ किये, जिन्होंने गोगी की सेना का बहुत ही बुरा खड़ी हुई—

छट्ठ अद्ध वरघटिय, चट्ठी मध्यांन नान निर ।  
मूर कंध वर कट्टि, मिले काहर गुरग वर ॥  
धरी अद्ध वर अद्ध, लोह सौ लोह जू मरके ।  
मन अर्ग अरि मिले, चित्त में एक पररते ॥  
पुण्डरी नीर भजर निरन, लरन तिररछो मगयो ।  
नव वधू जेम मंका मुवर, उदो जानि जिमि मगयो ॥ छं ७२ ॥

इसके अतिरिक्त वीर चण्डपुण्डरी पृथ्वीराज की ओर से कम्पोज के युद्ध में भी प्रयत्न दिखाई देता है। कम्पोज में महाराज जयचन्द की अस्सी नागरी सेना पृथ्वीराज की सेना समस्त सामन्तों को घेरे हुए युद्ध कर रही थी। इसी बीच मन्मथदेव तथा मन्मथिनी का संयोग विवाह सम्पन्न हो गया। पृथ्वीराज न संयोगिता में अपने साथ चलने का निर्णय लेकर संयोगिता ने अपने पिता पगराज के बल तथा पराक्रम का दिव्यार कर अपने मन में कष्ट का अनुभव किया। उसकी ऐसी स्थिति देखकर अन्य सामन्तों ने साथ ही चण्डपुण्डरी ने उत्साह एवं गर्व पूर्ण वाक्यों में प्रबोधा। चण्डपुण्डरी ने संयोगिता को काश्मिराज दिया कि जब तक हमारे साथ निद्वूरराय जैसे सामन्त हैं, तब-तब तुम चलने में संयोगिता करना चाहिए—

कहै चंद पुंडरी । मूर नहि मूर परधर ॥  
चात लर्ग नन सत्प्र । भजे लाभग मंत्र वर ॥  
पग पान युद्धंत । तत्र नज्जन ज्वाग पर ॥  
प्रथी जेम बल अवन । संग चतुरंगी निद्वूर ॥  
निमपेक निकष पर दल की । दोरि जुगो चतुरे सुपन ॥  
असि प्रान नान सौमन्त यौ । निप गुहरि नन तिति मन्मथ ॥  
तव कहि चन्द पुण्डरी । मतो मुनि मन्त्र मन्मथ ॥  
लप्य एक लखिय । एक भंरति मन्त्र दल ॥  
बल अननित असि जुड । पंग जोरन तिन मेव ॥  
दाया नल सामत । तत्र माहन दल देव ॥

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं ७२, पं २३।

२. वही, छं १२७६-८०, पं ६१।

३. वही, छं १२८१-८७, पं ६१।

ढेंडोरि ढोल गजदंत कटि । कवल पीर कन्ह हति वर ।

नय्ये सुंवाजि गम नीम दुति । पग सेन प्रथिराज भर ॥ छं० १३१२।

घोडाओं के ऐसे उत्साह एवं साहस पूर्ण वाक्यों को सुन कर संयोगिता चलने के लिए तैयार हो गई तथा पृथ्वीराज ने उसे अपने घोड़े पर बैठा लिया ।<sup>१</sup> पृथ्वीराज की ओर से इस मशरूम में नरसिंह के मारे जानें के उपरांत वीर चण्डपुण्डरी ने विपक्षी दल के कर्मोंद का सामना किया तथा अनार साहस एवं पराक्रम का प्रदर्शन करके स्वामि-धर्म हेतु वीरगति को प्राप्त हुआ—

धीर भीर कामोद । आय जघ पुंडिर उप्पर ।

विहय नेज उम्मारि । चाहि निज्झाहि चंद उर ॥

सेल-सेल समुहिय । हड्ड भजिय हिय चपिय ।

मुधर द्वार निज्झार । चाहि असुराइन कपिय ॥

पुंडीर राइ आसर समन । सूत जिम नंचिय समर ।

दल पति पंग पुंडीर परि । जय जय सुर सद्दे अमर ॥ छं० १४८७।

चामण्डराय दाहिम—‘पृथ्वीराज रासो’ के मतानुसार चामण्डराय दाहिम दाहिमराज का छोटा पुत्र तथा चण्डपुण्डरी एवं कैमास का भाई था ।<sup>१</sup> देवागिरि सम्म्यो के अनुसार पृथ्वीराज चौहान ने देवगिरी के राजा की पुत्री शशिवृता का अपहरण कर उससे विवाह किया । इसके फलस्वरूप पृथ्वीराज के सेनापति चामण्डराय की अध्यक्षता में देवगिरी के राजा ने जयचंद गहड़वाल की सयुक्त वाहनी से युद्ध किया । युद्ध में चामण्डराय की विजय हुई ।<sup>२</sup> चामण्डराय पृथ्वीराज चौहान का सेनापति था । रासो के ‘विवाह सम्म्यो ६५’ में वर्णित है कि तेरह वष की अवस्था में दिल्लीपति पृथ्वीराज चौहान ने सेनापति चामण्डराय की बहिन से विवाह किया था । इस विवाह का विस्तृत अथवा संक्षिप्त विवरण अन्य किसी समय (अध्याय) में नहीं है ।<sup>३</sup> चामण्डराय की बहिन दाहिमी के गर्भ से ही पृथ्वीराज के पुत्र रयनसो ने जन्म ग्रहण किया था । ‘कैमास वध नाम प्रस्ताव ५७’ में लिखा है कि भानज रयनकुमार तथा मामा चामण्डराय में परस्पर अत्यन्त प्रीति थी—

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १२९८ तथा १३१२, स० ६१ ।

२. यही, छं० १३१५-२२, स० ६१ ।

३. यही, छं० १४८७, स० ६१ ।

४. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० १०, स० १६ ।

५. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, देवगिरी सम्म्यो २६ ।

६. ज्ञा पाछे दाहिमी । राय डाहूर की कन्या ॥ छं० १, स० ६५ ।

दिल्ली वै चहुआन । तपे अति तेज पग्न वर ।  
 चंपि देस बस सीम । गजि अरि निलय धनुदर ॥  
 रयन कुमार अति तेज । रोहि हय पिट्ट विसम ।  
 साथ राव चामड । करे कलि किति असम ॥  
 मेवास वास गजे द्रुगम । नेह नेह चढे अनत ।  
 मातुलह नेह मानेज पर । नागनेय मातुल गुरस ॥ ८० ॥ १ ।

और उनकी इस प्रगाढ़ प्रीति को लक्ष करके चण्डपुंडरी ने पृथ्वीराज चौहान के चामण्डराय के विरुद्ध कान भरे ।<sup>१</sup> एक दिन महाराज पृथ्वीराज का हाथी अपने स्थान से झुट गया तथा सारे शहर में उत्पात मचा दिया । शांति स्थापित करने के उद्देश्य ने वीर चामण्डराय ने उस हाथी को मार गिराया ।<sup>२</sup> पृथ्वीराज एक तो चामण्डराय के विरुद्ध कान भरने के फलस्वरूप पहले से क्रुद्ध थे, दूसरे उनके प्रिय हाथी की हत्या के विषय में गुन कर उनके प्रीति का पारावार न रहा तथा उन्होंने क्रुध होकर सेनापति चामण्डराय को बन्दी बनाने की, कठोर आज्ञा प्रदान की ।<sup>३</sup> सेनापति चामण्डराय ने अपने को निर्दोष मानते हुए भी स्वामी की आज्ञा से वेड़ियाँ धारण कर लीं ।<sup>४</sup>

'वेड़ी लड़ाई से प्रस्ताव ६६' के अन्तर्गत पढ़ते हैं, कि राजत समर्थित ने समझाने पर पृथ्वीराज चौहान, चामण्डराय को मुक्त करने के लिए राजी हो गया तथा चामण्डराय को वेड़ी उतारने के लिए स्वयं उसके घर गया ।<sup>५</sup> कवि चरद ने नाना प्रकार ने समझाने के फलस्वरूप चामण्डराय वेड़ियाँ उतारने के लिए तैयार हुआ तथा कवि द्वारा 'पारत घेरो लोन, गले तोष नृप आन की' आदि शब्द द्वारा उसे सावधान कर दिया । चामण्डराय के द्वारा

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा फाटी, छं० १, स० ५७ ।

२. वही, छं० २, स० ५७ ।

३. वही, छं० २४-२५, स० ५७ ।

४. वही, छं० २७, स० ५७ ।

५. बंदि लई चामंड ने । बेरी सम्हो हृष्य ।

साम धम्म जुग रत्तयो । जीरन जग सु कम्प ॥ छं० ३२ ।

यो घल्ली चामंड पय । ज्यो मद मत्त गयंद ।

लाज राज अकुंसन मिटि । पनि दाहिम्म मरिद ॥ छं० ३३ ।

यो अग्या प्रपिराज की । मयो दाहिम इद ॥

ज्यो सुनि मंघह गारखी । भागत खान पुनिद ॥ छं० ३४, स० ५७ ।

६. इस सुरतान अवाज सुनि, विष राजन फह आय ।

है आनन्द बघादयो । हँ घर चामंड राइ ॥ छं० ३७८, स० ६६ ।

होने से सर्वत्र उत्सव मनाये गये । पृथ्वीराज ने इस शुभ अवसर पर अपनी तनवार, सिरोपाय तथा अनेक अन्य उनाम देकर उमें सम्मानित किया—

छोरि तेग नृप अपकर । अप्पी अयषति सूर ।  
ले चामण्ड मु वधि द्विड़ । तू घर रणन नूर ॥ छं० ४०१ ।  
डेड़ हजार तुरग वर । हसती तेरह तीन ।  
मुत्तिय माल सुरंग दस । रोजन अप्पि नवीन ॥ छं० ४०५ ।  
चीर पटभर फेरि सिर । वज्जा वज्जन बाग ।  
वर वरदाह वरदिया । बोल समंगल लग ॥ छं० ४०६ ।

‘अन्तिम युद्ध प्रस्ताव’ के अन्तर्गत गजनीपति शाह शाहाबुद्दीन गोरी द्वारा दिल्ली पर आक्रमण करने पर वीर चामण्डराय ने पृथ्वीराज की ओर से यवन सेना का सामना करके विपक्षियों के हतके छुटा दिये । विषम मारकाट करने के उपरान्त गोरी की ओर से मियां मनसूर सहिल्ला नामक यवन सरदार मेनापति चामण्डराय का सामना करने के लिए अग्रसर हुआ । वीर चामण्डराय तथा मनसूर सहिल्ला का द्वन्द्व-युद्ध हुआ जिसमें दोनों ही योद्धा वीरगति को प्राप्त हुए—

च्यारि सहस असवार । मद्धि चामंड दहिम्मी ।  
चौदह ने मफरद । मियां मनसूर सहिल्ली ॥  
हूह हवक बिलकार । सीस तुटहि घर घावहि ।  
खानदित अपछरा । आज इच्छावर पावहि ॥  
चावड राइ दाहर तनय । हर हारावलि सट्ठयो ।  
मफरद पान पीरोज चुअ । तेज बत मिस्तिहि गयो ॥ छं० १२३३ ।

वीर चामण्डराय की आल्हा के भूमिकाकार ने ‘चौड़ा ब्राह्मण’ लिखा है । “इन्द्र दत्त ब्राह्मण बकरना में रहता था, उस गुणी ब्राह्मण के दो पुत्र थे (१) सूर्यमणि (२) चामुण्ड दोनों देवी जी के उपासक थे, पांच वर्ष की पूजा से प्रसन्न हो देवी जी ने आकाशवाणी द्वारा कहा कि ब्राह्मणों, अब तुम दोनों से हम प्रसन्न हैं, इच्छानुसार वरदान मांगो । यह सुनकर सूर्यमणि ने यह वर मांगा कि हे भगवती ! हमको राजधन और यश से परिपूर्ण करो, देवी ने कहा एवमस्तु । चामुण्ड ने कहा, हे भगवती ! मैं कुछ दिन और पूजन करके वर मांगूंगा, यह कह बड़े प्रेम से देवी जी का पूजन करने लगा, सूर्यमणि को व्याघ्रवंशी महाराज रोवा नरेण ने बुलाकर आदर पूर्वक बहुत सा धन दे अपना पुरोहित नियत कर राज्य के उत्तम अधिकार दिया, दो वर्ष के उपरान्त देवी ने चामुण्ड से कहा कि हे विप्र ! अब वर मांगो, तब चामुण्ड ने कहा हे भगवति, रण में विजय, युद्ध के कुशलता और अमरत्व प्रदान कीजिए तब देवी जी ने कहा कि तुम युद्ध में कुशल होगे, अपने से समान वालों के साथ युद्ध करके विजयी और योद्धाओं में श्रेष्ठ होगे परन्तु अमरत्व संसार में दुर्लभ है । रण में सब णट्ट तुम्हारे

१. पृथ्वीराज रासो नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ४०१-४०६, स० ६६ ।

२. वही, छं० १२३३, स० ६६ ।

हाथ से मारे जायेंगे परन्तु तुम्हारी मृत्यु देवराज के पुत्र (आत्मा) के हाथ से होगी। यह कह कर देवी जी अन्तर्ध्यान हो गई। चामुंड वीर अपने घर लाया।'

'आत्मा' के उक्त कथन की पुष्टि 'वलभद्र विलास' नामक छन्द में भी हो जाती है। 'वलभद्र विलास' के अनुसार चामण्डराय जाति का ब्राह्मण तथा दिल्लीवासी पृथ्वीराज चौहान का सेना नायक था।'

पृथ्वीराज रासो, आल्हा खण्ड तथा वलभद्र विलास में वर्णित चामण्डराय जाति का विवेचन में पर्याप्त भेद है। 'रासो' के अनुसार चामण्डराय दाहिमा वंशी क्षत्रिय था। १२५६ ई. है, चामण्डराय नाम का कोई अन्य ब्राह्मण भी पृथ्वीराज चौहान के राज्य दरबार में नहीं था, जिसका वर्णन आल्हा खण्ड तथा वलभद्र विलास में प्राप्त होता है। चामण्ड के रासो का चामण्डराय दाहिमा वंशी क्षत्री ही था। रायल ऐतिहासिक सोसाइटी काटन में प्रकाशित रासो के मध्ययम संस्करण के अनुसार भी चामण्डराय दाहिमा वंशी क्षत्री था।'

छगनराय—पृथ्वीराज रासो' के अनुसार वीर छगनराय नरमल पादा कण्ठ पर चढ़ाया था तथा पराक्रमी योद्धा होने के कारण इसकी गणना महाराज पृथ्वीराज चौहान के प्रसिद्ध सामन्तों में होती थी। संयोगिता अपहरण सम्बन्धी युद्ध में वीर छगनराय भी मार के गए। वीर 'बखरेत' के मारे जाने के उपरान्त पराक्रमी छगनराय ने परम पद का साधना किया तथा इसी युद्ध में वीरगति को प्राप्त हुआ—'वीर छगन का घोड़ा पट जाने पर वह घंटों हीरक युद्ध करने लगा, पैर कट जाने पर उसने हाथों से मृदा नैना को घस कर दिया, हाथ पट जाने पर उसका सिर भिड़ पड़ा तथा सिर कट जाने पर उसने धूल से तबन्धन टाकर मारी जब-तक कि वह छिन्न-भिन्न नहीं हो गया। देवता मनुष्य तथा नाग उसका ध्वजवाहक बन गये।

१. पं० नारायणप्रसाद सीताराम, आल्हा की भूमिका, पृ० २४-२६, श्री हेल्थेन्स एशियेटिक प्रेस, मुंबई।

२. सर्वेषां त्वमरीणां च रणे मृत्युमपिष्यति।

देशराजात्मन् प्राप्य नवान्गन्ता यमक्षयम्।४।

ततो नृपस्तत्कुशलं विदित्वा पृतादर तं निजमुन्मत्तमादे।

ददौ नियातं कतिचिद्वितानि विचारयंस्तद्गुणकर्मशीलम्।५।

निरीक्ष्य विचारणभूजयत्स तया समालभ्य परं मोक्षयाः।

सम्मंथ्य सर्वैः प्रददौ विलोभय राजन्सत स्मै निज भूमि नाम्।६।

अथ प्रजानामपि पस्त्यस्तं गमाहूय तयं वचसा समूचे।

मया द्विजोऽयं नवदापि पत्ये प्रवृत्तः तीर्थः सगमाननीयः।७।

—पल्लव विलास, पृ० ४४२।

३. पृथ्वीराज रासो, रा० ए० सो० लन्दन, हस्तलिखित एवं प्रकाशित प्रतियाँ संस्कृत संस्थान, काठमांडू, समय २९।

के ।" उस प्रकार उस वीर ने स्वर्णिम धर्म हेतु अनेक पराक्रम दिखा कर अपना शरीर बलि-  
दान कर बलि दिया तथा उसमें मोक्ष पद को प्राप्त किया । इनके विषय में इतिहास  
मंडिका मौल है ।

जंघारा मौल—पूर्वोक्त रासों के अनुसार जंघारा मौल पूर्वोक्त चौहान का प्रसिद्ध  
नामन था । जंघारा मौल महाबाहू पूर्वोक्त के सहयोगी के रूप में दिखाई देता है । 'रेवातट  
समय २३' में जब बाहू महाबुद्धि गोरी ने पूर्वोक्त पर आक्रमण किया तब वीर जंघारा  
मौल का कुछ एवं पराक्रम देखने ही बनता है—'जंघार, योगियों में योगीश के सम्मान दिखाई  
दिया । उसके हाथ में कुन्नी हुई कटार थी, एक हाथ में फरसा, पीठ पर लोका दिगुल तथा  
बाधम्बर पहने हुए था । सर पर बटाएँ बाँधे, बाग तथा मिर्गी बाँध लिये तथा शरीर पर  
ममूत लगाये हुए, वह सामंत शिव की माँति लगता था । उसने मंत्रों द्वारा विषम नद में  
मगने वाली बाधु लेता ही । वह स्वर्ग लोक में मृत्यु होने पर अपनी अर्थात् योगियों की  
वक्ति में देखा जा सकता है, उसके मस्तक पर अमरसद प्रधान करने वाला अमृत में पुष्प

१. हथ कटुत नू नयो । मये नूयन पलद्यों ।

पथ कटुत कर कथ्यो । इरहि तव मेन समिद्यों ।

कर कटुत तिरनिर्यो । तिरह सनसुप होप पुद्यों ।

तिर पुदुत घर कथ्यो । धगह तिलतिल होप तुद्यों ॥

घर तुहि तुहि कति नन्द कहि । सैन-सैन विध्यो सरन ।

सुर नग्न नाग अन्तुति करहि । कति बलि बलि छगन भरन ॥ छं० २२१४, स० ६१।

करि छगन छयो सुनहु । त्रियो नू हूर विमान ।

विन झूझत निरनं नयो । जड़ी कोन नहुआन ॥ छं० २२१६, स० ६१ ।

—चन्दवरदायी, पूर्वोक्त रासों, नागरी प्रचारिणी सभा काशी ।

२. जंघारा—यह दक्खिण के दक्षिण पूर्व के तुअर बंशी राजपूतों की एक बड़ी और लड़ाकू  
जाति है । नूर और तरई अंधारे इसकी दो शाखाएँ हैं । बप्पूयान की अध्यक्षता में ये  
इस देश में छाकर बसे थे । बप्पूयान की बीरता और बहादुरी के नायक से नीपन मोर्चा  
लेने पर उनकी अनेक कठिनाईं सुनी जाती हैं । एक समय कोइल (अलोर) के  
समीप ये बड़े शक्तिशाली थे और उनकी चार निम्न चौराहियाँ थीं। पुरंदरों के साथ इनके  
बराबर के सम्बन्ध होते हैं । ये अपनी लड़ाकियाँ चौहानों और बहगुजरों को देते हैं तथा  
नाल, जैन और मुहिनीतों की लड़ाकियाँ पाते हैं । Elliot, Races of North-west  
Provinces of India, Vol. I, Page 141 तथा डॉ० विपिनचिहारी मिश्री, रेवातट  
समय, पृ० १०३ ।

चन्द्रमा शोभायमान है । राम तथा रावण के संग्राम के उपरान्त ऐसा युद्ध संसार में नहीं हुआ था ।

‘रेवातट समय’ के अन्तर्गत ही लिखा है कि “एक पहर दिन चढ़ने पर वीर जंधारा युद्ध भूमि में कूदा किन्तु भीर से युद्ध करके, वह जलते हुए बाण सदृश्य पृथ्वी पर गिर पड़ा अर्थात् मृत्यु को प्राप्त हुआ—

जाम एक दिन चढ़त वर, जंधारी झुकि वीर ।

तीर जेम तत्तो पर्यो, घर अण्णारे भीर ॥ छं० ११२ ।

उपर्युक्त छंद से स्पष्ट हो जाता है कि जंधारा भीम इस संग्राम में मारा गया था, किन्तु हम उसे पुनः संयोगिता अपहरण सम्बन्धी संग्राम में युद्ध करते हुए पाते हैं । इससे ऐसा प्रतीत होता है कि जंधारा भीम उक्त युद्ध में वीरगति को प्राप्त नहीं हुआ होगा, वरन् धुरी तरह घायल हो गया होगा ।

वीर जंधारा भीम पृथ्वीराज के साथ कन्नौज गया था तथा संयोगिता को दिल्ली लाते समय अपार पराक्रम दिखा कर वीरगति को प्राप्त हुआ था—

घरिय च्यार रवि रत्त । पंग बल बल आहुद्यों ।

तब जंधारी भीम । ध्रमं स्वामित तन तुद्यों ॥

सगर गौर सिर भीर । रेह रण्विय अजमेरिय ।

उड़त हंस आकास । दिठु घन अच्छरि घेरिय ॥

जंधार सूर अवधूत मन । असि विभूति अंगह घसिय ।

पुच्छ्यो मुजान त्रिभुवन सकल । को सु लोक लोकं वसिय ॥ छं० २४५४ ।

इतिहास एवं सिलालेखों से वीर जंधारा भीम की पुष्टि नहीं होती है । अतः इनकी ऐतिहासिकता संदिग्ध ही कही जावेगी ।

जसवन्तसिंह—‘पृथ्वीराज रासो’ के ‘लोहाना आजानबाहु समय ४’ के अन्तर्गत जसवन्त-

१. जंधारी जोगी जुगिद, कद्यों कट्टारी ।

फरस पानि तुंगी त्रिसूल, पध्दर अधिकारी ॥

जटत बांन सिंगी विभूत, हर बर हर सारी ।

सबर सद् बह्यो, विषम दग्गं घन क्षारी ॥

आसन सदिठ निज पत्ति में, लिय सिर चन्द अन्नित अमर ।

मडलीक रांस रावत मिरत, न मौ वीर इत्तो समर ॥ छं० ११३, स० २७।

—पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी ।

२. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ११२, स० २७ ।

३. वही, छं० २४५४, स० ६१ ।



साली तथा चमकदार लाल लकड़ामें बने हुए अर्चन-परायण विधा कर अपना शरीर चित्त-  
विरत कर कलक विधा करके जहाँ से सोना चर गो प्राप्त किया। इनके विषय में उल्लेख  
महोदय में है।

जयारा भीम—पृथ्वीराज रासो के अनुसार जयारा भीम पृथ्वीराज भीमान का प्रसिद्ध  
नामक था। जयारा भीम अथवा पृथ्वीराज के मन्त्रालो के रूप में विद्यार्थी होता है। 'देवाय  
समक २३' के अन्त में 'पृथ्वीराज रासो' में पृथ्वीराज पर आक्रमण किया तब भीम जयारा  
भीम का हस्त धारण कर देखा ही बनता है—'जयार, कोटियों में कोटियों के समान विद्यार्थी  
विद्य। उनसे जय में भूयो हुई कथार की, एक हाथ में पारसा, पीठ पर ऊँचा विष्णु तथा  
बाणधर धारण हुए थे। सर पर जटाएं बांधी, बाण तथा मिनी बाजा लिए तथा शरीर पर  
अमृत लपकें हुए, यह माया दिव की भाँति लपका था। उसने मंत्रों द्वारा विषम मद में  
भरने वाली पातु पैसा की। वह स्वयं लोक में मृत्यु होने पर अपनी अर्धाङ्ग योद्धियों की  
पक्ष में देखा था मरता है, उनसे मरक पर अमरत्व प्रदान करने वाला अमृत से गुना

१. दृष्ट वदत नू मयो । भये भूषण पतद्वी ।

पद वदत पद मयो । वरहि मय तेन मनिद्वी ।

वर वदत मिर निरयो । मिर मनुष्य होय दुद्वी ।

मिर वदत पद मयो । पदह तिलकित होय दुद्वी ॥

पद वदत वदत वरि मय वरि । रोम-रोम विध्यो सरन ।

मुर मय मय अनुनि करहि । कलि बलि बलि छानन मदन ॥ छं० २२१४, स० ६१।

वरि मय मय मयो मयह । मयो मू हूर विमान ।

मिर मय मय मयो । मयो कोम मयमान ॥ छं० २२१६, स० ६१।

—पदवरदायी, पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी ।

२. जयारा—यह दक्षिण पूर्व के तुलना वंशी राजपूतों की एक बड़ी और लड़ाकू  
जाति है। मुर और तरह अधारे इसकी दो जातियाँ हैं। पद्मपाम की अध्यक्षता में ये  
इस देश में आकर बसे थे। पद्मपाम की वीरता और यशस्वी के नायक से सीधे सीधे  
पैले पर इनकी अनेक कहानियाँ सुनी जाती हैं। एक समय कोहल (अलीगढ़) के  
समीर के बड़े अतिथियों से और इनकी भार निम्न सीरातियाँ थी। पृथ्वीराज के साथ इनके  
बागवत के सम्बन्ध होते हैं। वे अपनी लड़कियों छोड़ना और बड़गुजरी की बेटे हैं तथा  
नाम, रोम और पृथ्वीराज की लड़कियाँ पाते हैं। Elliot, Races of North-west  
Provinces of India, Vol. I, Page 141 तथा डॉ० विदितविहारी त्रिवेदी, देवाय  
समक पृ० १०३।

चन्द्रमा शोभायमान है । राम तथा रावण के संग्राम के उपरान्त ऐसा युद्ध संसार में नहीं हुआ था ।'

'रेवातट समय' के अन्तर्गत ही लिखा है कि "एक पहर दिन चढ़ने पर वीर जंधारा युद्ध भूमि में कूदा किन्तु मीर से युद्ध करके, वह जलते हुए बाण सदृश्य पृथ्वी पर गिर पड़ा अर्थात् मृत्यु को प्राप्त हुआ—

जाम एक दिन चढ़त वर, जंधारौ क्षुकि वीर ।

तीर जेम तत्तौ पर्यौ, घर अण्पारे मीर ॥ छं० ११२ ।'

उपर्युक्त छंद से स्पष्ट हो जाता है कि जंधारा भीम इस संग्राम में मारा गया था, किन्तु हम उसे पुनः संयोगिता अपहरण सम्बन्धी संग्राम में युद्ध करते हुए पाते हैं । इससे ऐसा प्रतीत होता है कि जंधारा भीम उक्त युद्ध में वीरगति को प्राप्त नहीं हुआ होगा, वरन् बुरी तरह घायल हो गया होगा ।

वीर जंधारा भीम पृथ्वीराज के साथ कन्नौज गया था तथा संयोगिता को दिल्ली लाते समय अपार पराक्रम दिखा कर वीरगति को प्राप्त हुआ था—

घरिय च्यार रवि रत्त । पंग दल बल आहूद्यौ ।

तब जंधारौ भीम । ध्रमं स्वामित तन तुद्यौ ॥

सगर गौर सिर मीर । रेह रणिय अजमेरिय ।

उड़त हंस आकास । दिट्ट घन अच्छरि घेरिय ॥

जंधार सूर अवधूत मन । असि विभूति अंगह घसिय ।

पुच्छ्यो सुजान त्रिभुवन सकल । को सु लोक लोकं बसिय ॥ छं० २४५४ ।'

इतिहास एवं सिलालेखों से वीर जंधारा भीम की पुष्टि नहीं होती है । अतः इनकी ऐतिहासिकता संदिग्ध ही कही जावेगी ।

जसवन्तसिंह—'पृथ्वीराज रासो' के 'लोहाना आजानवाहु समय ४' के अन्तर्गत जसवन्त-

१. जंधारौ जोगी जुगिद, कद्द्यौ कट्टारौ ।

फरस पानि तुंगी त्रिसूल, पण्णर अधिकारौ ॥

जट्ट बांन सिंगी विभूत, हर वर हर सारौ ।

सबर सद् बह्यौ, विषम दग्गं घन क्षारौ ॥

आसन सदिट्ठ निज पत्ति में, लिय सिर चन्द अम्रित अमर ।

मडलीक रांस रावत मिरत, न भौ वीर इत्तौ । समर ॥ छं० ११३, स० २७ ।

—पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी ।

२. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ११२, स० २७ ।

३. वही, छं० २४५४, स० ६१ ।



इच्छिनी था जिसका विवाह दिल्ली-अजमेर के अंतिम शासक महाराज पृथ्वीराज चौहान के साथ हुआ था । 'महाराज पृथ्वीराज ने राजकुमारी इच्छिनी से बारह वर्ष की अवस्था में विवाह किया था तथा यह उनकी दूसरी रानी थी । 'जैत प्रमार ने पृथ्वीराज का सदा साथ दिया था । 'रेवातट समय २७' में हम पढ़ते हैं कि जैतराय प्रमार ने सेनापतित्व का उत्तरदायित्व पूर्ण पद का भार ग्रहण किया था—' मुख्यछत्र अपने सिर पर धारण करके जैत सेना नायक बना तथा उसने अपनी सेना को चन्द्र व्यूह में खड़ा किया । वहाँ सब राजा महाराजा एकत्र हुए । एक ओर हुसैन खाँ तथा दूसरी ओर पुंडीर था तथा बीच में वीर पराक्रमी योद्धा रघुवंशी राम था । साँखला का योद्धा तथा सारंग देव गोरी के समुख खड़े थे । वे दोनों सिरों पर बहुत सी छोटी तथा बड़ी तोपें लिए हुए क्रोधित खड़े हुए थे ।"

छत्र मुजीक सु अग्नि, जैत दीनो सिर छत्र ।

चन्द्रव्यूह अङ्कुरिय राजु, हुआ तहाँ इकत्रं ॥

एक अग्र हुस्सैन वीर अग्रह पुण्डरी ।

मद्धि भाग रघुवंस, राम उप्मौ वर वीर ॥

साँखली सूर सारंग दे, उररि पाँन गोरीय मुप ।

हय नारि जोर जवूर घन, दुहुँ बाँह उपमेति रूप ॥ छं० ७१ ।"

संयोगिता अपहरण सम्बन्धी संग्राम में जैतराय प्रमार पृथ्वीराज के साथ था तथा युद्ध करता हुआ आहत हुआ था । 'बड़ी लड़ाई' सम्प्रां ६६' के अन्तर्गत लिखा है कि जैत प्रमार पृथ्वीराज की ओर से युद्ध करता हुआ वीरगति को प्राप्त हुआ था—

पर्यो जैत पाँवार । छत्र नीचै छिति पूरिय ।

ढाहे मोर ससंद । पंति पण्पलि परि नूरिय ॥

सहस बीस इक वल्ल । सकल आसुर परि सथरि ।

हड्ड मस कटुबसु । शोन गूवह तय्यं करि ॥

किलकंत जुथ्य जोगिन नचौ । रची रय्य अच्छरि वरी ।

डहकंत डक्क सूर वीर हर । रजिय गनन जंबुक ररी ॥ छं० १२३४।"

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, रासो सम्प्रां २४ ।

२. वरयं वरस का सलष सोय । दिन्नी सु आय इच्छनी लोय ।

आबू सु तोरि चालुषक राजि । किछौ सु व्याह परिमाव मंजि ॥ छं० ४, स० ६५ ।

३. भारत में सर्व प्रथम तोपों का प्रयोग बाबर ने किया था । सम्भवतः 'हयनारि गोर जंबूर घन' पंक्ति प्रक्षिप्त है । प्रायः सम्पूर्ण रासो इसी प्रकार के प्रक्षिप्त अंशों से परिपूर्ण है ।

४. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ७१, स० २७ ।

५. वही, समय ६१ ।

६. वही, छं० १२२४, स० ६६ ।

जैत प्रमार की मृत्यु पर पृथ्वीराज को अत्यन्त दुःख हुआ तथा उनके व्यथित हृदय से उसके लिए निम्न उद्गार निकल पड़े—

पर्यौ राव जैतह सु रन । पति अबू घन घाय ।  
 सूर राय सोमेस सुत । करिय अप्प सिर छाय ॥ छं० १२४५ ।  
 हम दिय छत्र जुछांह को । तुम लिय छत्र मरन ।  
 हम दुजोधन जोधमय । तुम कलि करन करन ॥  
 तुम कलि करन करन । हंकि उठि सिघ-सिघ पर ।  
 क्षर उझारि झंझोरि । तोरि गहि दति दत घरा ।  
 गौ वच्छा प्रति मोह । दोह लगौ सुदाह कह ।  
 कहै राज प्रथिराज । छत्र हम दियो छांह कह ॥ छं० १२४६ ।<sup>१</sup>

जैतराय प्रमार 'प्रमारवंशी' राजदूत था । प्रमार के स्थान पर पवार, परमार, पवार, पुजार आदि शब्द भी 'रासो' में प्राप्न होते हैं । अग्नि वंशी चार कुलों में एक प्रमार भी है ।<sup>१</sup> यह (प्रमार जाति) अग्नि कुलों में सबसे अधिक शक्तिशाली मानी जाती थी तथा ८५ शाखाओं में विभक्त थी ।<sup>१</sup>

महामहोपाध्याय पं० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा जैतराय प्रमार को काल्पनिक पात्र मानते हैं तथा 'रासो' की घटना को अनैतिहासिक सिद्ध करते हुए लिखते हैं कि—“पृथ्वीराज रासो में लिखा है कि बारह वर्ष की अवस्था में पृथ्वीराज ने आवू के परमार राजा सलष की पुत्री और जैत की बहिन इच्छिनी से विवाह किया । यह कथा भी ऐतिहासिक नहीं है । आवू पर सलष या जयत नाम का परमार राजा कभी हुआ ही नहीं । आवू पर की वि० सं० १२८७ की वस्तुपाल के मन्दिर की प्रशस्ति में आवू के परमारों की उस समय तक की वंशावली दी है । उसमें वहाँ के परमार राजा यशोधवल का पुत्र धारावर्ष होना लिखा है । यशोधवल का वि० सं० १२०२ का शिलालेख राजपूताना म्यूजियम (अजमेर) में विद्यमान है । उसके पुत्र धारावर्ष के १४ शिलालेखों और एक ताँत्रपत्र मिला है, जिनमें से वि० सं० १२२० ज्येष्ठ सुदी १५, के चार मूल लेख राजपूताना म्यूजियम में सुरक्षित हैं, जिनसे निश्चित है कि पृथ्वीराज की गद्दी नशीनी के पूर्व से लगभग उसकी मृत्यु के बहुत पीछे तक

१. पृथ्वीराज रासो; नागरी प्रचारणी समा काशी, छं० १२४५-१२४६, स० ६६ ।
२. वही, रासो सम्पु १ ।
३. टाड, राजस्थान, भाग १, पृ० ९०-९१ । तथा Sherring, Hindu Tribes and castes, Vol. I, Page. 143-49.

आवू का राजा धारावर्ष था, न कि सलख या जैत ।” अमृतलाल शील<sup>१</sup> ने भी ओझा जी की भाँति अपने विचार व्यक्त किये हैं ।

जोवन राय—पृथ्वीराज रासो के मतानुसार यह महाराज पृथ्वीराज चौहान (तृतीय) का सामन्त एवं पराक्रमी योद्धा था । महाराज पृथ्वीराज चौहान की आज्ञा होने पर यह मण्डलेश्वर नाहरराय को युद्ध भूमि में खोजने के लिए अप्रसर हुआ किन्तु बहुत खोज के उपरान्त भी नाहर को न पा सका ।<sup>२</sup> जोवनराय नामक पात्र होने की पुष्टि रासो के अप्रकाशित मध्यम संस्करण से हो जाती है । उसमें भी नाहरराय से युद्ध होने पर जोवनराय नामक सामन्त युद्ध करता हुआ दिखाई देता है ।<sup>३</sup>

तिरहुत नरेश—रासोकार कवि चन्द वरदायी ने पंगराज जयचन्द का आधिपत्य तिरहुत प्रदेश पर बताया है, जो इतिहास के विवरण से मेल खाता है, किन्तु अधिकार स्थापना का विवरण पूर्णतया भिन्न है । कवि चन्द के मतानुसार कन्नौजपति विजयपाल (विजयचन्द) के समय में जब गाहड़वालों ने सम्पूर्ण देश पर दिग्विजय की तभी जयचन्द को तिरहुत पर भी अधिकार प्राप्त हुआ था, किन्तु इतिहासकारों के मतानुसार नान्यदेव ने गोविन्दचन्द के समय में नाम मात्र की आधीनता स्वीकार की थी, विजयचन्द के समय में उसके वंशजों ने वास्तविक आधीनता स्वीकार कर ली थी । इतिहास के अनुसार नान्यदेव का एक पुत्र कन्नौजपति राजा जयचन्द की सेवा में था । रासोकार के मतानुसार पंगराज जयचन्द ने तिरहुत प्रदेश को अधिकृत कर अपना यश प्रसार किया था ।<sup>४</sup> संभव है कवि ने कन्नौजेश्वर के यशोगान करते समय ऐतिहासिक तथ्य की अपेक्षा की हो तो कोई आश्चर्य की बात नहीं । उसने तिरहुत नरेश का नाम मल्लदेव<sup>५</sup> से केहरिकण्ठ कर दिया है,<sup>६</sup> जो कान्यकुब्जेश्वर के प्रमुख सहयोगियों

१. म० म० गौरीशंकर हरीचन्द ओझा, पृथ्वीराज रासो का निर्माण काल, कोशोत्सव स्मारक संग्रह, पृ० ४७-४८ तथा राजपूताने का इतिहास, जिल्द पहली, पृ० १९९; वेदिक मंत्रालय अजमेर, द्वितीय संस्करण, १९३७ ।
  २. अमृतलाल शील, सम्राट पृथ्वीराज चौहान की रानी पद्मावती, मरु नारती, भाग १, अंक १, सितम्बर, १९५२ ई० ।
  ३. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छ० ७०-७१, स० ७ ।
  ४. पृथ्वीराज रासो के मध्यम संस्करण की हस्तलिखित प्रति, छ० २२, स० ४, पृ० २५, रा० ए० सो० लन्दन ।
  ५. 'जस जपिय सण्य सो चन्द चंड' जिन थपिय जाय तिरहुत पिंड ।'
  ६. जयचन्द विद्यालंकार, विहार एक ऐतिहासिक दिग्दर्शन, पृ० १८९ ।
  ७. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, जिल्द ४, स० ६१ ।
- नोट—मल्लदेव नाम रासोकार के अनुसार राजा विजयपाल का उग्रनाम भी था ।  
—पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, जिल्द १, स० १ ।

में से था। संयोगिता अपहरण के समय होने वाले संग्राम में कान्यकुब्जेश्वर ने चौहान पृथ्वी-राज की सेना की दृढ़ता देख कर अपनी विशाल चतुरंगिनी को आठ भागों में विभाजित किया, जिनमें से एक भाग का नेतृत्व तिरहुत नरेश को सौंपा गया था। कन्दर्पकुमार के आगे चलने वाला और कोई नहीं, यही तिरहुत का अधीश्वर था।<sup>१</sup> उपर्युक्त विवेचन के अतिरिक्त तिरहुत नरेश के विषय में ग्रन्थकार ने कुछ नहीं लिखा है।

हर्ष के उपरान्त ७४३ ई० तक बिहार प्रान्त पर वंगाल के पाल वंशी राजाओं का आधिपत्य रहा। चन्देलों से मिथिला का राजा जो घंग के बाद स्वतंत्र हो चुका था, उदाला के बाद कलचुरियों ने छीना। रामायण की एक हस्तलिखित नेपाली प्रति के अनुसार वि० सं० १०७६ (१०१९ ई०) में तीरमुक्ति (तिरहुत) में एक सोमवंशी गौड़ महाराजाधिराज गंगेय-देव शासन कर रहा था, जिसका कलचुरी राजा गंगेयदेव (१०१५-४१ ई०) होना अनुमान किया जाता है।

पाल राज्य की विपत्ति के समय वंगाल तथा बिहार के अनेक सामन्त स्वतंत्र हो गये थे। उसी समय विजयसेन या विजयराज ने कुछ काल बाद वंगाल में सेन वंश की स्थापना की। रामपाल के बाद विजयसेन ने शीघ्र ही वंगाल से पाल राज्य समाप्त कर दिया तथा रामपाल के उत्तराधिकारी कुमारपाल तथा मदनपाल को पराजित कर गौड़ छीन लिया। तिरहुत में उसी समय नान्यदेव नामक एक अन्य कर्णठ सरदार स्थापित हो गया। विजयसेन ने गौड़ छीनने के उपरान्त नान्यदेव को भी कैद कर उसे अपनी आधीनता स्वीकार करने को बाध्य किया।

लगभग सन् १०९० ई० में चन्द्रदेव गाहड़वाल ने कन्नौज में नया राज्य स्थापित किया उसने कलचुरियों के उत्तराधिकारी यश, कर्ण से (१०७३, ११२५ ई०) बनारस छीन लिया। नान्यदेव ने भी गाहड़वालों का अवलम्ब पाकर सैन्य का जुआ उतार फेंका (१०९६-९७) उत्तर में नेपाल में इस समय ठकुरी वंश की समाप्ति होकर अराजकता फैली हुई थी। नान्यदेव ने नेपाल पर चढ़ाई कर उसे जीत लिया और स्वतंत्र रूप से तिरहुत की गद्दी पर बैठा (१८ जुलाई १०९७ ई०)।<sup>१</sup> वंगाल के सेनों ने अपनी रक्षा करने के लिए, नान्यदेव, गाहड़वाल से चिर मैत्री सम्बन्ध बनाए रहा। तिरहुत में कर्णठ वंशी राजा नान्यदेव का ५२ वर्ष राज्य करने के उपरान्त लगभग सन् १०५० ई० में देहान्त हुआ।<sup>१</sup>

नान्यदेव की मृत्यु के उपरान्त, उसका पुत्र गंगदेव मिथिला का राजा हुआ जो कन्नौज-

१. "ता अगै तिरहुत नरिद"—पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १७२२, स० ६१।
२. जयचन्द विद्यालंकार-बिहार एक ऐतिहासिक दिग्दर्शन, पृ० १८६।
३. वही, पृ० १८९।

पति विजयचन्द (रासो का विजयपाल) का समकालीन था। नान्यदेव का एक दूसरा पुत्र भल्लदेव कन्नौज में विजयचन्द के पुत्र जयचन्द की सेवा में था।<sup>१</sup>

अतः उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि तिरहुत प्रदेश कन्नौजपति जयचन्द के आधीन था। रासो में भी कुछ इसी प्रकार का संकेत प्राप्त होता है।

देवराज वग्गरी अथवा वग्गरीराव— 'पृथ्वीराजरासो' के अनुसार देवराज वग्गरी हिन्दुओं के अन्तिम शासक दिल्ली-अजमेर पति महाराज पृथ्वीराज चौहान का सामन्त था। अनुमान है, कि कवि ने देवराज वग्गरी तथा वग्गरीराव एक ही व्यक्ति के लिए प्रयुक्त किया है। देवराज आजीवन पृथ्वीराज चौहान के साथ रहा तथा संकट पड़ने पर सहायता करता रहा। 'रेवानट समय २७' के अन्तर्गत शाही सेना से संग्राम होने पर भी वग्गरीराव पृथ्वीराज की ओर उपस्थित था।<sup>२</sup> संयोगिता अपहरण सम्बन्धी युद्ध में आहतों में वग्गरी-राव भी था।<sup>३</sup>

अन्त में देखते हैं कि इस परक्रमी योद्धा ने स्वामि धर्म हेतु अपने प्राणों का उत्सर्ग कर दिया। 'बड़ी लड़ाई रो प्रस्ताव समय ६६' के अन्तर्गत कवि ने उल्लेख किया है कि प्रसंगराव खौंची के युद्ध भूमि में गिरते ही वग्गरीराव युद्ध हेतु अग्रसर हुआ तथा इन्होंने अपार बल प्रदर्शन कर पाँच वीरों को पंचतत्व में मिलाकर स्वयं भी स्वामिधर्म की रक्षा करता हुआ वीरगति को प्राप्त हुआ—

पर्यौ झुझिख वग्गरिय । बसन झग्गरिय सुरगिय ।  
सुरहलोक शिवलोक । लोक जारय्य कुरंगिय ॥  
घालपन जोवनह । बड़े बड़पनह बड़ाइय ।  
समर राज प्रथिराज । वाज दस बेर चढ़ाइय ॥  
बिव बिवसु देव जै जै करहि । पुह पंजरि अच्छे घरनि ।  
तजि लोक लोकन सघन । धर्यो देव मडलि तरनि ॥ छं० १२६८।<sup>४</sup>

ध्रमाइन कायस्थ—'पृथ्वीराज रासो' के मतानुसार ध्रमाइन कायस्थ दिल्ली-अजमेर पति महाराज पृथ्वीराज चौहान का एक सभासद था। यह राज्य के समस्त भेद गोरी के गुप्त-चरों को दिया करता था, किन्तु रासोकार ने यह संकेत कहीं भी नहीं किया कि यह गोरी से

१. जयचन्द्र विद्यालंकार, बिहार एक ऐतिहासिक विमर्शन, पृ० १८९।
२. अब वग्गरी जाति का बहुत कम पता चलता है। विशेष विवरण के लिए देखिए—एशियाटिक जर्नल, वाल्यूम २५, पृ० १०४।
३. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० २४, स० २७।
४. वही, रासो सम्यो ६१।
५. वही, छं० १२६८, स० ६६।



कैसे मिल गया था, तथा ऐसा कौन सा लालच विपक्षी ने दिया था जिससे यह ऐसा नीच कर्म करने के लिए प्रेरित हुआ। माघोभाट के दिल्ली आगमन पर धर्माइन ने उसे पृथ्वीराज चौहान के समस्त भेदों से परिचित करा दिया था—

धर्माइन कायथ सुरंग । मिल्यो वर मट्ट प्रमानं ।

जू कछुभेद चहुआन । दियो निहचै सुरतानं ॥छं० १४ ॥

माघोभाट की सूचना पर गोरी को विश्वास न हुआ। अतः उसने धर्माइन कायस्थ के पास दूसरा दूत भेजा। इस बार उसने पृथ्वीराज चौहान के सब मंत्रियों के विषय में सूचना दी तथा अन्य भेद भी कागज पर लिख कर भेज दिए—

विवरि पवरि धूमानं । कही चहुआन सेन वर ।

पण सत्तराजानं । सुवास कीन पिथपुर ॥

पण पंच कैमास । राव चांवड पण चव ।

वसि वित्ते दिन अटठ । पण लोहानं रसे सब ॥

चहुआन कन्ह पय एक हुआ । वसिय वास दिन पच हुआ ।

सांवत अवर आगम इछं । सबन वास चहुआन रय ॥छं० १५ ॥

लवि करि इह वंधी विवरि । राज धूम चहुआन ।

दिय कगर तसु दूत कर । वर कागर धम्मान ॥छं० १६ ॥

इसीप्रकार से रासों के अन्य समयों के अन्तर्गत भी हम धर्माइन कायस्थ को गुप्त सूचनाएं भेजते हुए पाते हैं। रासों के माध्यम-संस्करण में भी धर्माइन का नाम प्राप्त होता है किन्तु रासों के अन्य रूपान्तर इसके विषय में मौन हैं।

धीर पुण्डीर—धीर पुण्डीर, चन्द पुण्डीर का पुत्र था। संयोगिता अपहरण सम्बन्धी संग्राम में चन्द पुण्डीर की मृत्यु के उपरान्त महाराज पृथ्वीराज ने धीर पुण्डीर को चंद पुण्डीर वाली जागीर दे कर उसे सम्मानित किया। 'रासों समय ६१' में धीर पुण्डीर की सूचना मात्र प्राप्त होती है किन्तु 'धीर पुण्डीर नाम प्रस्ताव' के अन्तर्गत कवि चन्द ने धीर पुण्डीर की वीरता का विषद वर्णन किया है। महाराज पृथ्वीराज चौहान को कन्नौज से चले आने पर अपार पछतावा हुआ किन्तु उन्होंने सामन्तों के बल परीक्षण हेतु के लिए बलिभद्र के कहने पर अष्टघातु का जैत खम्भ का निर्माण कराया—

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १४, सं० १९।

२. वही, छं० १५-१६, सं० १९।

३. बोलाय धीर पुण्डीर ताम । सन मानि पित्र दीने सु ग्राम ।

जिन जिन सु पित्त रिन परेषेत । तेय तेय थफि सामंत हेत ॥ छं० २५०२, सं० ६१।

एक समे प्रथिराज । वत्त जंपिय भर सारनि ।  
 अष्ट घात करि पेम । सिंगि कदहं बल पारन ॥  
 तिहि समान नहि वीर । विजय दसमी इह किज्जं ।  
 अप्प-अप्प बल तोकि । इण्ठनिय जप्प जपिज्जं ॥  
 सुनि सूर सजल आनंद मन । पुनित महल राजन उठ्यो ।  
 सुनि घरि जाइ जालंध दर । प्रसन करन कारन हठ्यो ॥ छं० ११, १

चंद पुण्डरी के पुत्र धीर पुण्डरी ने जैत खम्भ को भेदने के लिए जालन्धरी देवी की उपासना करके अपार शक्ति प्राप्त की तथा समय आने पर उसने ही जैत खम्भ को भेद करके अपार शक्ति का परिचय दिया—

हो रावत मंडली । फोरि मच्छर मन मढहु ।  
 सो तुरग तन पिस्यो । संग वाहिर गहि कदढहु ॥  
 बस कुली छत्रीस । करहु बल जावल भावं ॥  
 संगि न टारी टैर । जंतु पिन अढ डुलावै ॥  
 अपै तुरग चहुआन तव । विहसि धीर पुण्डरी लिय ॥  
 उप्परिय जैत पंभय सहित । तव पसाव प्रथिराज किये ॥ छं० ३९, १

महाराज पृथ्वीराज ने उसका अपार साहस एवं बल प्रदर्शन देख कर, प्रसन्न हो, उसे सिरोपाव तथा जागीर देकर सम्मानित किया ।<sup>१</sup> इसी अवसर पर धीर पुण्डरी ने गजनीपति शाह शहाबुद्दीन गौरी को पकड़ कर बन्दी बनाने का संकल्प किया । एक माह पांच दिन में यह समाचार उड़ता हुआ शहाबुद्दीन के कान तक पहुंचा । परिणाम स्वरूप उसने धीर पुण्डरी को बन्दी बनाने के लिए गवखरों को नियुक्त किया । जालन्धरी देवी के पूजन हेतु जाते समय छद्म वेषधारी योगियों ने धीर पुण्डरी को घेर लिया तथा बन्दी बना कर गौरी के सम्मुख प्रस्तुत किया ।<sup>२</sup> धीर का बल, धैर्य एवं साहस की परीक्षा लेने के लिए सुलतान ने एक वृक्ष उखाड़ने के लिए कहा, जिसे धीर पुण्डरी ने एक पल में उखाड़ दिया—

साहिबदी सुरतान । कहत पुंडीर धीर सुनि ।  
 घात पेम में संग । फोरि तैंसो बल करि फुनि ॥  
 मुह अगै बरेखत । पान इहि वषत हथिय ।  
 सो नषो ऊपारि । जोर दिष्य सब सथिय ॥

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ११, स० ६४ ।
२. वही, छं० ३९, स० ६४ ।
३. वही, छं० ४०, स० ६४ ।
४. वही, छं० ७९, स० ६४ ।

हनुमान लंक जिम चन्द सुत । बड़ि गुमान हिमगिरि सिखर ।

धक धूनि वथ्य भरि हथ्य गहि । जर समेत पेजर उपरि ॥ छ० १४५ ।

अपार बल देख कर सुलतान गोरी बाह-बाह कर उठा तथा उसे कुछ मांगने के लिए कहा । इस पर पराक्रमी तथा दृढ़ प्रतिज्ञ धीर पुण्डरी ने पुनः कहा कि मुझे किसी बात की भूख नहीं है, केवल तुझे पकड़ना चाहता हूँ—

असपति सेन दल गंजि हौ । धीर नाम ता दिन लहौ ।

वासन पसाव तादिन लहौ । जबहि साहि जीवत गहौ ॥ छ० १४६ ।

धीर पुण्डरी के ऐसे निर्भय वचन सुन कर शाह अत्यन्त प्रसन्न हुआ तथा उसे मुक्त कर अपना स्वयं का घोड़ा एवं शिरोपाव देकर सम्मानित किया ।<sup>१</sup> धीर पुण्डरी के तुरन्त जाने के उपरान्त ही गोरी ने पृथ्वीराज पर आक्रमण कर दिया । वचन के पक्के धीर पुण्डरी ने इस संग्राम में अपार साहस एवं बल प्रदर्शन करके शाह गोरी को बन्दी बना लिया—

उड़िग रेन गय नंग । साहि संमुह गजि पिल्यौ ।

घनिव धीर पुण्डरी । साहि सनमुष असि मिल्यौ ॥

दसन तुड किय दोन । मुड छंडिय सुडाहल ।

गिरत भूमि सुरतान । पांन कीनौ कोलाहल ॥

झक झोरि तोरि अवक्षरि उजरि । गहि हमेल हम्मीर लिय ।

हय कंध डारि अड्डो असुर । पंज पुंडरी प्रमान किय ॥ छ० ३३५ ।

अंत में धीर पुण्डरी के खवास बंजल की विनती पर और चामण्डराव के झड़काने पर, कि उसे शाह को बन्दी बनाने के कारण अत्यन्त अभिमान हो गया है, पृथ्वीराज ने पुण्डरी वंश के साथ उसे देश निकाला दे दिया । यह समाचार पाकर शाह ने धीर को समादृत करके, दिल्ली नामक स्थान दे दिया ।<sup>२</sup> पृथ्वीराज चौहान ने उसे एक पत्र द्वारा पुनः अपने यहाँ वापिस बुला लिया, मार्ग में घोड़ों के सौदागरों के साथ शाह शहाबुद्दीन गोरी के सैनिकों ने उसका छल पूर्वक वध कर दिया—

तब कालन करि कूर । कह्यौ तुम सरन वयट्टौ ॥

असि लं कालन उढिढ । आय पिन पुढिठ निहट्टौ ॥

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छ० १४५, स० ६४ ।

२. वही, छ० १४६, स० ६४ ।

३. वही, छ० १५१, स० ६४ ।

४. वही, छ० ३३५, स० ६४ ।

५. धीर निवेसन साहि । वयौ दिल्ली पहर तब ।

अरु है ठहा ठाम । कियौ आदर अनंत सब ॥ छ० ४११, स० ६४ ।

कहिं तेग असि झारि । सीस उठ्यो घर तुट्यो ॥  
उवं तेक असमान । सीस गय सूर न पुट्यो ॥  
निझझारि तेक घर ढारि घर । हय कमाल कालन न दुर ॥  
सयदून सहि पट्ठान रन । इह अचिज्ज अण्ये अमर ॥ छं० ४४३ ।'

इस प्रकार यह परम पराक्रमी एवं प्रतापी वीर सामन्त छल पूर्वक मारा गया और परम पद का भागी हुआ । इतिहास में घोर पुण्डरी के विषय में विशेष विवरण प्राप्त नहीं होता है ।

नरपाल (नैपाल नरेश)—'पृथ्वीराज रासो' के मतानुसार कन्नौजपति कान्यकुब्जेश्वर जयचन्द का आतंक सुदूर नैपालप्रदेश तक था । नैपाल नरेश नरपाल वीर<sup>१</sup> पंगराज के सहयोगी राजाओं में से था । सयोगिता अपहरण सम्बन्धी पृथ्वीराज चौहान तथा जयचन्द गाहड़वाल के मध्य होने वाले संग्राम के अंतर्गत नवमी के दिन आहत पंग पक्ष के रावतों में नैपाल नरेश का भी उल्लेख हुआ है । उसी युद्ध में वीर नरपाल अपार पराक्रम प्रदर्शित करता हुआ वीरगति को प्राप्त हुआ ।'

आदि काल में नैपाल का सम्बन्ध तिब्बत एवं चीन के साथ था । भारतवर्ष के साथ नैपाल का सर्व प्रथम सम्बन्ध सम्भवतः सम्राट अशोक के समय तीसरी शती ई० पू० में आरम्भ हुआ । सम्राट अशोक ने नैपाल में कई स्तूप बनवाए थे तथा ललित पट्टन नामक नगर भी स्थापित कराया था । समुद्र गुप्त के समय में नैपाल सीमान्त राज्य था और गुप्त साम्राज्य को कर देता था । हर्ष के शासन काल में आंशुवर्मन नैपाल में राज्य करता था, जिसने ठकुरी वंश की नींव डाली थी तथा कन्नौज और तिब्बत दोनों से घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित किया था । आंशु वर्मन पहले लिच्छवी सम्राट का मंत्री था परन्तु बाद में उसने स्वतंत्र शासन स्थापित कर लिया था । लगभग ६४२ ई० में ४५ वर्ष तक राज्य करने के उपरान्त वह दिवंगत हुआ । उसके उपरान्त २०० वर्षों का इतिहास अन्धकारमय है । ग्यारहवीं शताब्दी से राजाओं की क्रमबद्ध नामावली मिलने लगती है, परन्तु ये राजनीतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण शासक सिद्ध नहीं हुए । १२वीं शती के पूर्वार्द्ध में तिरहुत के कर्णटि वंश के नान्यदेव ने नैपाल पर अपनी राज्यसत्ता स्थापित की ।' किन्तु शीघ्र ही नान्यदेव को

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ४४३, स० ६४ ।
२. नरपाल नाम ऐतिहासिक नहीं है, रासो में ही इसका उल्लेख हुआ है ।
३. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, जिल्द ४, समय ६१ ।
४. श्री नेत्र पाण्डेय, भारत का बृहत् इतिहास, भाग १, पृ० ४१२ । जयचन्द विद्यालंकार, बिहार एक ऐतिहासिक दिग्दर्शन, पृ० १८६ । श्री डी० आर० रेजमी, एशियन्ट एण्ड मीडिवल नैपाल, पृ० १४६ ।

नैपाल की राजसत्ता से हाथ धोना पड़ा तथा ठकुरीवंश के आनन्ददेव ने पुनः शासनाधिकार प्राप्त कर लिया। सन् १३१४ ई० तक यही ठकुरी वंश नैपाल की शासन की बागडोर अपने हाथ में लिए रहा।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट हो जाता है, कि राजा विजयचन्द ( रासो का विजयपाल ) गाहड़वाल के शासन काल में नैपाल उसके अधिकार में आ गया था, क्योंकि नान्यदेव भी गाहड़वाल वंश की आधीनता स्वीकार करता था, किन्तु जयचन्द के समय में नैपाल पर गाहड़वालों की राजसत्ता का होना विवाद का विषय है। संभव है, रासोकार ने कान्यकुब्जेश्वर जयचन्द की महानता एवं गौरव बखान के समय ऐतिहासिक तथ्यों की उपेक्षा की हो, और फिर रासो एक काव्य ग्रन्थ है न की कोई इतिहास ग्रन्थ। ऐसी स्थिति में इस प्रकार की भूल होना स्वाभाविक ही है।

नरसिंह दाहिम—‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार नरसिंह दाहिम पृथ्वीराज चौहान का प्रसिद्ध सामन्त था। समय-समय पर इसने पृथ्वीराज के साथ उनके विपक्षियों से होने वाले संग्रामों में भाग लिया था। चन्द कवि के अनुसार नरसिंह दाहिम नागौर का आधिपति था, तथा इसका जन्म स्थान समियानगढ़ था। ‘रेवातट समय’ में नरसिंह दाहिम ने पृथ्वीराज तथा शहाबुद्दीन गोरी के मध्य होने वाले संग्राम में विकट पराक्रम तथा रण कुशलता का परिचय दिया था—

घोलि घग नरसिघ, धीजिध पल सीसह झारिय ।

तुटि घर घरनि परत, परत संभरि कटारिय ॥

चरन अन्त उरझत, वीर कूरम करारौ ।

तेग थाइ चुकत, झरो झर लोह सेंभारौ ॥

चलि गयो न क्रमन, क्रमन न चलै, डल्यो न डुलत न हथ्यवर ।

तिन परत वीर दाहर तनौ, चामुंडा बज्जी लहर ॥ छ० १०६ ।

‘रासो’ के सम्पादकों ने उपर्युक्त छन्द के आधार पर नरसिंह दाहिम को ‘रेवातट-समय’ के युद्ध में वीरगति को प्राप्त होना लिखा है, उन्होंने लिखा है कि ‘कूरभराय के पुत्र नरसिंह ने खांडा खींच कर ख्वाजा की खोपड़ी पर मार उसे एक ही बार में खपाना चाहा परन्तु उसने गिरते-गिरते नरसिंह के पेट में कटारी भोंक दी जिससे उसके पेट की अंतभेद मज्जा आदि बाहर निकल पड़ी। वह वीर उसकी कुछ भी परवाह न कर करारे बार करता ही रहा।’<sup>१</sup> किन्तु डॉ० विपिनविहारी त्रिवेदी उपर्युक्त छंद के आधार पर युद्ध करने वाले

१. नरसिघ एक नागौर पति । रिनधीर राज लीये जगति । छ० १४५, स० ६१ ।

२. समियान गढ़ नरसिघ राइ । पित मात छोरि आए सु भाइ । छ० ५८७, स० १ ।

३. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छ० १०६, स० २७ ।

४. रासो सार, पृ० १०२ ।

को 'नरसिंह' मान कर उसका संबंधी मानते हुए इस प्रकार अर्थ प्रस्तुत करते हैं—'नरसिंह ( के सम्बन्धी ) ने क्रोध से तलवार खींच ली और खल ( शत्रु ) के सिर पर वार किया जिससे उसका धड़ कट कर पृथ्वी पर गिर पड़ा। परन्तु गिरते-गिरते उसने ( नरसिंह के संबंधी के ) कटार मार दी। ( कटार लगने से इस वीर के ) पैर विकट वीर कूर्म की लोथ की अंतिङ्गियों से उलझ गये। उसने तलवार का सहारा लेना चाहा परन्तु चूक गया और ( स्वयं अपनी तलवार से घायल हो जाने के कारण उसके ) लोहू की धार झर-झर करके वह चली या ( झरीझर ) गिरते-गिरते उसने तलवार से सहारा लेना चाहा परन्तु चूक गया और बुरी तरह घायल हो गया। वह एक पग भी न चल सका, न वह हिला और न उसके श्रेष्ठ हाथ ही हिले। उसको गिरते देखकर दाहर का पराक्रमी पुत्र चामण्ड दुख से परिपूरित हो गया ( या—उसके गिरने पर दाहर का वीर पुत्र चामण्ड युद्ध की लहर में उलझ गया अर्थात् भयंकर युद्ध करने लगा ) ।'

डॉ० विपिनबिहारी त्रिवेदी का अनुमान सत्य प्रतीत होता है क्योंकि 'पृथ्वीराज रासो' समय ६१ में पुनः नरसिंह दाहिम को युद्ध करता हुआ पाते हैं। संयोगिता अपहरण सम्बन्धी संग्राम में वीर लोहाना आजानवाहु तथा गोंयंदराय आदि प्रसिद्ध सामन्तों की मृत्यु के उपरान्त वीर नरसिंह युद्ध भूमि की ओर अग्रसर हुआ। पराक्रमी नरसिंह दाहिम ने इस युद्ध में अपना अपूर्व रण कौशल दिखा कर मृत्यु को वरण किया—

लगी दल सिध करषि सु तीर ।  
चपे चव सिध सु मगिग्य भीर ॥  
पर्यो नरसिध नरन्वर सूर ।  
तुटे सिर आवघ जाय कहर ॥ छं० १४८२ ।'

नरसिंह अत्यन्त पराक्रमी योद्धा था। उसका सिर कट गया किन्तु उसका धड़ बढ़कर युद्ध करता रहा तथा अन्त में मोक्ष पद प्राप्त किया—

दाहिम्मी नरसिध । सिध रण्यो रावत पन ॥  
सिर तुट्ट कर कटिठ । चहिद घायो घर हर घन ।  
मार मार उचरत । राव बज्जे धारा हर ॥  
देव स्तुति करि चार । रंस क्षमरी कहिर वर ।  
संकरह सीस लीन्यो जुकर । दई दरिद्रो ज्यो गहिय ॥  
कवि चन्द निरषि सुम्भं सिरह । जुगति जगति कवियन कहिय ॥ छं० १४८३ ।'

१. डॉ० विपिनबिहारी त्रिवेदी, रेखातट, द्वितीय भाग, पृ० ९५।
२. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १४८२, स० ६१।
३. वही, छं० १४८३, स० ६१।

नाहरराय—इतिहास में महाराज पृथ्वीराज तथा नाहरराय के मध्य किसी प्रकार के युद्ध का उल्लेख नहीं हुआ है। नाहरराय की कथा संक्षेप में इस प्रकार है—“मण्डोवर का राजा नाहरराय दिल्लीश्वर अनंगपाल के आधीन था।<sup>१</sup> एक बार नाहरराय अनंगपाल से भेंट करने के लिए दिल्ली गया तथा वहाँ पर पृथ्वीराज को देखकर प्रसन्न हो अपनी माला पहना दी तथा वचन दिया कि जब यह १६ वर्ष के हो जावेंगे तो मैं अपनी कन्या का विवाह इनसे कर दूँगा।<sup>२</sup> किन्तु सोमेश्वर के दूत भेजने पर नाहरराय ने अपना वचन तोड़ दिया अर्थात् विवाह करने से इन्कार कर दिया तथा पत्रोत्तर में लिख भेजा कि तुम्हारा कुल हमारे कुल के अनुकूल न होने के कारण हमें यह सम्बन्ध स्वीकार नहीं है।<sup>३</sup> कुंवर पृथ्वीराज इस अपमान को सहन न कर सके तथा अपने पिता सोमेश्वर से आज्ञा लेकर नाहरराय पर आक्रमण के लिए प्रस्थान कर दिया।<sup>४</sup> नाहरराय के दूत ने आकर आक्रमण की सूचना दी। नाहरराय ने अपने मन्त्रियों से मन्त्रणा करके कहा कि चौहानों से अब तो विगड़ ही गई है अतः अब तो आगे से बढ़ कर एक बारगी आक्रमण करने से ही अपनी जीत सम्भव हो सकती है।<sup>५</sup> जब नाहरराय ने यह सूचना पाई कि पृथ्वीराज ने नगर प्रवेश कर लिया है, तब उसने पर्वतराय नामक योद्धा को उसका मार्ग अवरोध करने के लिए भेजा।<sup>६</sup> रण प्रांगण में नाहरराय तथा पृथ्वीराज एक दूसरे के सामने आए, घोर युद्ध के फलस्वरूप नाहरराय का घोड़ा मारा गया। इसी बीच नाहरराय के सामन्त रनवीर सिंह ने पृथ्वीराज का सामना किया जिससे नाहरराय बच गए।<sup>७</sup> घोर युद्ध होने के फलस्वरूप नाहरराय चाचा कन्ह के सम्मुख आ गया किन्तु युद्ध भूमि से नाहरराय के पैर उखड़ गए तथा वह रण भूमि छोड़कर भागा, नाहरराय को भागता देखकर वीर पृथ्वीराज चौहान ने उसका पीछा किया। नाहरराय युद्ध में पूर्णतयः परास्त हुआ तथा पट्टनपुर पर पृथ्वीराज का अधिकार हो गया। अन्त में नाहरराय ने अपनी हार स्वीकार कर, अपनी कन्या के विवाह का लग्न ब्राह्मणों को बुला कर पृथ्वीराज के पास भेज दिया।<sup>८</sup> महाराज पृथ्वीराज व्याहृत के लिए गए, नाहरराय ने अपनी कन्या का विवाह उनसे कर दिया तथा उन्हीं की आधीनता स्वीकार कर ली—

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० २५, स० ७।

२. वही, छं० २६, स० ७।

३. वही, छं० २८-२९, स० ७।

४. वही, छं० ५३-५४, स० ७।

५. वही, छं० ६४-६७, स० ७।

६. वही, छं० ७५-७७, स० ७।

७. वही, छं० १०२-१०६, स० ७।

८. वही, छं० १७५, स० ७।

नाहरराइ नर्थंद कहि, का तुम जोगु जगोस ।

और देन तुम जोगु कहा, काम तुम्हें हम सोस ॥ छं० ६९ ।

इस प्रकार देखते हैं, कि पृथ्वीराज चौहान का प्रथम विवाह ११ वष की आयु में नाहरराय की पुत्री से सम्पन्न हुआ । रासोकार ने पुत्री का नामोल्लेख नहीं किया है । पृथ्वी-राज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, के अनुसार नाहरराय युद्ध भूमि छोड़ कर भाग गया था किन्तु साहित्य संस्थान उदयपुर से, प्रकाशित 'रासो' के अनुसार नाहरराय युद्ध भूमि में ही बन्दी बना लिया गया था । निश्चय ही दोनों 'रासो' में थोड़ा अन्तर है फिर भी मूल कथा में किसी प्रकार का व्यवधान नहीं पड़ता है । रासो की उपर्युक्त कथा की पुष्टि रासो के अप्रकाशित मध्यम संस्करण से भी हो जाती है ।

इतिहास पृथ्वीराज तथा नाहरराय के मध्य होने वाले युद्ध के विषय में सर्वथा मौन है । ओझा जी ने एक स्थान पर पृथ्वीराज के विवाह वाली घटना को असत्य सिद्ध करते हुए इस प्रकार लिखा है । 'रासो का कथन है कि पृथ्वीराज का प्रथम विवाह ग्यारह वष की अवस्था में मंडोवर के पडिहार नाहरराय की कन्या से हुआ था । यह कथन भी सत्य नहीं है । मंडोवर का नाहरराय पडिहार पृथ्वीराज से कई सौ वष पूर्व हुआ था, जैसा कि मंडोवर के पडिहारों के वि० सं० ८९४ के शिलालेख से पाया जाता है । वि० सं० १२०० से पूर्व मंडोवर पर से पडिहारों का राज्य अस्त हो गया था और नाडोल के चौहानों ने उस पर अधिकार कर लिया था । पृथ्वीराज के समय के आसपास तो नाडोल के चौहान रायपाल के पुत्र सहजपाल का मंडोवर पर अधिकार था जैसा कि वहीं से मिले हुए उसके शिलालेखों से पाया जाता है ।' किन्तु तत्काल अनुसंधान के आधार पर कविराव मोहनसिंह उपर्युक्त घटना को प्रामाणिक मानते हुए इस प्रकार से तर्क उपस्थित करते हैं—'नाहरराय प्रतिहार जिसका वास्तविक नाम 'मल्ल' 'प्रतिहार या बलराय था और प्राचीन स्थान सूचक रूप में उसे मंडोवर व मंडोवरराय आदि लिखा है, उसका शासन गिरिनार प्रान्त में था और उसके साथ पृथ्वीराज का युद्ध सौराष्ट्र और काठियावाड़ के अन्तर्गत सोजथी और प्रभाप घोट ( सोमनाथ पट्टन ) के निकट हुए थे । बाद में उसी की पुत्री से गिरिनार पर पृथ्वीराज का विवाह हुआ था ।' अतः स्पष्ट है कि रासोकार ने जिस नाहरराय का वर्णन किया है उसी की पुत्री से पृथ्वीराज का विवाह भी हुआ था जैसा कि कविराव मोहनसिंह के कथन से स्पष्ट है ।

निहदुरराय—'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार वीर निहदुरराय महाराज पृथ्वीराज चौहान

१. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० ६९ ।
२. ओझा जी, पृथ्वीराज रासो का निर्माण काल, पृ० ५४, कोशोत्सव स्मारक संग्रह ।
३. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, सम्पादकीय, पृ० १२ ।
४. 'रासोसार' के अनुसार वीर निहदुरराय का विरद कमपञ्जराय था तथा यह कन्नौज-प्रति जयचन्द का भतीजा था । रासोसार, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, पृ० २५४ ।



( तृतीय ) का सामन्त था, जिसकी गणना उनके सौ अथवा एक सौ छः श्रेष्ठ सामन्तों में होती थी। यो तो वीर निहदुरराय महाराज पृथ्वीराज के पीछे उनकी छाया के समान रह कर रक्षा करता रहा किन्तु उसका अलौकिक तथा अपूर्व साहस 'कनकवज्र समय ६१' में देखते बनता है। कन्नौज में पंगराज जयचन्द की अस्सी लाख सेना पृथ्वीराज चौहान तथा उनके श्रेष्ठ सामन्तों को घेर कर भीषण युद्ध कर रही थी इसी बीच पृथ्वीराज तथा संयोगिता के मध्य गर्भव विवाह सम्पन्न हुआ। पृथ्वीराज ने संयोगिता से कहा कि मेरे साथ चलो। संयोगिता ने अपने पिता जयचन्द का पराक्रम एवं असंख्य सेना का विचार करके अपना संकोच प्रदर्शित किया। यह सुनकर अन्य सामान्तों के साथ निहदुरराय ने उत्साह तथा गर्व पूर्ण वाक्यों से प्रबोधा—

तब निहदुर उच्चरिय । सब सामंत राज प्रति ॥  
पंग सेन निरवरहु । सब बोल्यो सु देव श्रित ॥  
मन मथी गोविंद चन्द । होइ न कहि काल ॥  
मन पुच्छिह कहौ जीह । काल घते जिहि जाल ॥  
जो करं डील दिल्ली धनी । तौ जुग्गिनिपुर जल हृथ्य दै ॥  
सत षड जीह जपत करी । पं चलि राज इह लल्ल दै ॥ छं० १३१३ ॥  
मानि मत्तौ सब सेन । गरुअ गोयंद कन्ह कहि ॥  
सुजं अप्प जो चलं । चलं हम हृथ्य रम ग्रहि ॥  
जो अप्पन आभज । सबल बधी अब बधी ॥  
डील न करि सुन्दरि । लीह अलंघ कल सधी ॥  
ढदोरि ढाल पहुपग दल । तन अरत जिमि तौरिय ॥  
पहुंचाय सामि दिल्ली घरा । जम्म जजर तन जोरिय ॥ छं० १३१४ ॥

योद्धाओं के उत्साह-पूर्ण शब्दों को सुन कर संयोगिता चलने के लिए तैयार हो गई तथा पृथ्वीराज चौहान ने उसे अपने घोड़े पर बैठा लिया। ननकराय बड़गुज्जर के युद्ध-भूमि में मृत्यु को प्राप्त होने के उपरान्त महाराज पृथ्वीराज ने निहदुरराय की ओर देखा—

पद्यों षेत बड़गुज्जरह । अप्प पंग देह हविक ॥  
तम्मि सनमुष नेन करि । दिय आग्या मन तविक ॥ छं० २१७९ ॥

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १२७६-८०, स० ६१।
२. वही, छं० १२८१-८७, स० ६१।
३. वही, छं० १३१३-१४, स० ६१।
४. वही, छं० १३१५-२२, स० ६१।
५. वही, छं० २१७९, स० ६१।

विपक्षी दल की ओर से इसका भाई बलभद्र कमधज्ज इसका सामना करने के लिए प्रस्तुत हुआ। सहोदर भ्रातवर स्वरक्त का मोह त्याग कर स्वामिधर्म हेतु जूझ पड़े तथा दोनों में भयंकर युद्ध प्रारम्भ हो गया—

दुअं तोन पहुँ, पछं पगग जुहै । हनै तविक मद् परे अद्ध अद्धं ॥  
 क्षरं अंग अंग, दवं जानि दंगं । गजं सीस पानं परं वीज जानं ॥  
 कमध घपत अरि पंग लिपि । तमकि तमकि वर तेज ।  
 जानिक अगि वन घन चरन । उमडि वाय घन सेज ॥ छं० २१९४-९६ ।<sup>१</sup>

पारस्परिक द्वन्द्व युद्ध के मध्य निदहुदुराय तथा बलभद्र दोनों ही ने एक साथ परलोक गमन किया। अपने ही लघुभ्रात को स्वर्ग भेज तथा उसका स्वयं अनुकरण करके निदहुदुराय ने स्वामि भक्ति धर्मे का अपूर्व आदर्श प्रतिष्ठित किया।<sup>१</sup> पगराज जयचन्द को निदहुदुराय की मृत्यु पर अपार शोक हुआ तथा उसने उसकी लाश पर अपनी कमर से पिछोरा खोलकर ढक दिया—

भुक्षिष पेते निदहुदुर परयो । दिपिष दुहुं दल सथ्य ।  
 कटि पट छोर जे चन्द पहुं । ढंकिय अप्पन ह्य्य ॥

चन्द भी वीर निदहुदुराय का पराक्रम देखकर चुप न रह सका अतः उसने भी उसकी प्रशंसा में निम्नलिखित छन्द लिखा—

अट्ठ कोस अतरिय । पंग सथ्यरिय परिय भर ॥  
 परि निदहुदुर पथ्यरिय । कंस गज राज दंत घर ॥  
 ह्य ह्य है भारथ्य । घवल वंवरह मिरत ह्य ॥  
 ब्रह्म लोक सिव लोक । लोक ससि छंडि लोक धुअ ॥  
 रन धरिय राव आरति अरुन । तरुन अरुन मडल पिलिय ॥  
 अट्ठाह कोस चहुआन पर । बहुरि पंग धारस सिलिय ॥ छं० २२०९ ।<sup>१</sup>

पंचाइन ( चन्देरी नरेश )—‘रासो’ में चन्देरी नरेश ‘पंचाइन’ का प्रथम परिचय ‘हंसावती विवाह नाम प्रस्ताव-३६’ में प्राप्त होता है। रणयम्भोर के राजा भानराय की रूपवती कन्या हंसावती पर कामासक्त होकर शिशुपाल वंशी चन्देरी नरेश पंचाइन, राजकन्या

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० २१९४-९६, स० ६१ ।

२. उमं दिट्टु दिट्टी मिलि वाहु बाहु । नियं उति नाही अरो राह-राहं ॥

प्रियं पीत रतंगत पंगं नरिदं । मिल्यो पगग हसंक यांह वनिदं ॥ छं० २१९८, स० ६१ ।

घन घाय घाय वित्तिय धरिय । करिय आन समंते सह ॥

बैकुंठ वट्टे लट्टी बिहुन । लरन अप्प-अप्पह सु रह ॥ छं० २२०४, स० ६१ ।

३. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० २२०९, स० ६१ ।

से विवाह अथवा राज्य हरण का प्रस्ताव तथा घुड़की देता हुआ दृष्टिगोचर होता है ।<sup>१</sup> काम-लिप्सा के नग्न प्रदर्शन में निहित इस ललकार ने राजा भान के क्षत्रियत्व को जागृत कर दिया तथा उसने पंचाइन को कोरा जवाब दे दिया,<sup>२</sup> जिसके फलस्वरूप चन्देरीपति पंचाइन ने गजनीपति शाह गोरी की सहायता लेकर रणथम्भोर को घेर लिया ।<sup>३</sup> इस विपत्ति में फंसा हुआ देखकर भानराय ने दिल्लीपति चौहान पृथ्वीराज से सहायतार्थ याचना की ।<sup>४</sup> आर्त की पुकार सुनकर पृथ्वीराज चौहान ने भानराय की सहायतार्थ उसके शत्रुओं से भयंकर युद्ध किया जिसमें पराक्रमी चौहान पृथ्वीराज की विजय हुई,<sup>५</sup> तथा चन्देरी नरेश 'पंचाइन' को पराजित होकर लौट जाना पड़ा ।

द्वितीय बार 'कनवज्ज समय ६१' में पंचाइन पंगराज के सहयोगी के रूप में दृष्टिगोचर होता है । कविचन्द के अनुसार कान्यकुब्जेश्वर राजा जयचन्द ने अपनी दिग्विजय के अन्तर्गत कर्ण ढाहल को परास्त कर चन्देरी को प्राप्त किया था ।<sup>६</sup> इसी कर्ण ढाहल के वंशज जैसिह सामन्त ने कान्यकुब्जेश्वर जयचन्द की सेना का नेतृत्व किया था । चन्देरी का तत्कालीन शासक पंचाइन जो राजकुमारी हंसावती को लेकर दिल्लीपति पृथ्वीराज चौहान का घोर विरोधी हो गया था, रासोकार के अनुसार पंगराज का सहयोगी था । संयोगिता अपहरण के सम्बंध में पंगराज तथा पृथ्वीराज के मध्य होने वाले प्रचंड युद्ध में चन्देरीपति पंचाइन ने भी अपनी विशाल सेना लेकर पृथ्वीराज पर आक्रमण कर दिया ।<sup>७</sup> सामन्त दल के जंधार-मीम से चन्देरी नरेश पंचाइन का सघर्ष हुआ, जिसमें चन्देरी नरेश ने घोर वीरता का प्रदर्शन किया—

सिल्हदार पंचइनी करि जुहार षण धार ।

पंग समुद मसक्षहि परिय वजि घुम्मारि ग्रह पार ॥ छं० २४०० ।<sup>८</sup>

चन्देरी नरेश पंचाइन को हंसावती विवाह को लेकर जो निराशा तथा अपमान सहन करना पड़ा था, सम्भव है उसने पृथ्वीराज चौहान के विरुद्ध पंग पक्ष से युद्ध करने की अवश्य ही प्रोत्साहित किया होगा ।

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० २-५, स० ३६ ।

२. वही, छं० ६-७, स० ३६ ।

३. वही, छं० ८-१८, स० ३६ ।

४. वही, छं० १९-२०, स० ३६ ।

५. वही, छं० ४०-८५, स० ३६ ।

६. जिने कर्ण ढाहल बुल वान देख्यो । वही, छं० ५७४, स० ६१ ।

७. "खटे चपलं चंपि चंदेर राई, जिने पुव्ववर रनयंम पाई ।"

—चन्द वरदायी, पृथ्वीराज रासो, तमम ६१ ।

८. वही, छं० २४००, स० ६१ ।

पज्जूनराव कूरम्भ—इनकी गणना 'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार पृथ्वीराज चौहान के श्रष्ट योद्धाओं से होती थी। इनका विरद नरेश्वर था।<sup>१</sup> यह कछवाहा राजपूतों की एक शाखा कूर्म अथवा कूरम्भ वंश का था। अनेक युद्धों में पृथ्वीराज चौहान की सेना के एक भाग का संचालन भी पज्जूनराव कूरम्भ की ही अध्यक्षता में हुआ था। एक बार पृथ्वीराज चौहान रेवा नदी के तट पर आखेट खेलने गए हुए थे, वहीं पर शाह गहावुद्दीन गोरी ने पृथ्वीराज को आ घेरा। ऐसी विपम स्थिति में पज्जूनराव कूरम्भ मंत्रणा देता है कि—“शाह ने अत्यन्त विचार पूर्वक दस गुनी चतुरंगिणी सेना तैयार कर ली है। इस अवसर पर शान्ति नीति ग्रहण करना उचित है। इस समय अपना बल घट गया है। पिछले युद्धों के परिणाम पर भी विचार कर लेना चाहिए। अतः ऐसी विपम स्थिति में स्वयं झगड़ा मोल लेना उचित नहीं है।” किन्तु पृथ्वीराज चौहान के अन्य सामन्त प्रसंगराव तथा देव बगरी को उक्त मत उचित नहीं लगा तथा व्यग्रपूर्ण उक्तियाँ कही।<sup>२</sup> इस पर पज्जूनराव कूरम्भ ने क्रोध से भरा उत्तर दिया कि—“मैंने तातारियों से बचाकर तुम्हें निकाला था, दक्षिण के यादवों पर मैंने आक्रमण किया। चामण्डराय के सहयोग से मैंने जंगलियों को परास्त किया था। वंमन बास से मैंने बड़गुजर को निकाल बाहर किया था।” कूरम्भ के उक्त कथन में उसकी वीरता के तत्व कूट-कूट कर भरे हैं। पज्जूनराव कूरम्भ कैमास-भीम युद्ध में पृथ्वीराज की ओर से लड़ा था।<sup>३</sup> इसी प्रकार अनेक युद्धों में पराक्रम का प्रदर्शन करते हुए अन्त में कन्नौज के पृथ्वीराज-जयचन्द युद्ध में भी पृथ्वीराज चौहान की ओर से लड़ता हुआ वीर गति को प्राप्त हुआ।<sup>४</sup>

पज्जूनराव कूरम्भ के विषय में डॉड महोदय ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ राजस्थान में लिखा है कि—“यह अंवर या जयपुर के कछवाहा राजपूतों की एक शाखा कूर्म या कूरम्भ वंश का था। वीर चौहान ने ख्यातनामा एक सौ आठ सरदार उसके साथ कर दिये थे। अनेक युद्धों में पृथ्वीराज की सेना के एक भाग का संचालन पज्जून की ही अध्यक्षता में हुआ था। भारत के उत्तरी आक्रमणों में दो बार पज्जून अपनी वीरता का परिचय दे चुका था। एक बार उसने शहावुद्दीन को खंवर के दर्रे से पराजित किया और गजनी तक खदेड़ा था। चंदेल राज महोबा की विजय ने पज्जून की वीरता की धाक बँठा दी थी। पृथ्वीराज की एक बहिनी पज्जून को व्याही थी और चौहान नरेश ने उसे महोबा का शासक बना दिया था।

१. नरेश्वर पज्जून राव की पदवी थी, ये पृथ्वीराज चौहान के साने थे—डॉड, राजस्थान, भाग २, पृ० ३५०-३५१।
२. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० २३, स० २७।
३. वही, छं० २४, स० २७।
४. वही, छं० २५, स० २७।
५. वही, समय १२।
६. वही, समय ६१।

कन्नौज के संयोगिता अपहरण वाले युद्ध में चुने हुए चौसठ सरदारों में पञ्जून भी था और लौटते समय पाँच दिन के युद्ध में प्रथम दिन वीर गति को प्राप्त हुआ था। यह धूँधर या डूँडार का अधिपति था।” इसके विपरीत ‘पृथ्वीराज रासो’ समय ६५ में लिखा है कि पृथ्वीराज चौहान ने अठारह वर्ष की आयु में पञ्जूनी से विवाह किया था, जो उनकी तेरह रानियों में से आठवीं थी, डॉ विपिनबिहारी त्रिवेदी पञ्जूनराव कूरभ तथा पृथ्वीराज चौहान के सम्बन्धों को संदिग्ध मानते हुए लिखते हैं कि—“यदि ये दोनों पञ्जून एक ही हैं जैसा कि टॉड और ह्योर्नले दोनों महानुभावों का कहना है तो पृथ्वीराज ने अपनी सागी भानजी से विवाह किया। परन्तु ऐसी प्रथा न होने से शंका उत्पन्न होने लगती है, अस्तु इन दोनों पञ्जूनों से अवश्य भेद होना चाहिए।”

डॉ० माताप्रसाद गुप्त पञ्जूनराव कूरभ की ऐतिहासिकता पर विचार करते हुए लिखते हैं कि—“इसके ( पञ्जूनराव कूरभ ) सम्बन्ध में निश्चित ऐतिहासिक साक्ष्य का अभाव है। अजमेर राज्य की वंशावलियों के अनुसार पञ्जून वज्जदामा से तेरह पीढ़ियों बाद हुआ, वज्जदामा का एक शिला लेख सं० १०३४ का है, यदि प्रत्येक पीढ़ी का औसत काल बीस वर्षों का लिया जावे तो पञ्जून का समय सं० १२९४ के लगभग पड़ना चाहिए, ऐसा ही गौरीशंकर हीराचन्द ओझा का विचार है। इसके विरुद्ध भी हरिचरण सिंह चौहान का कहना है कि उसी वंशावली के अनुसार वज्जदामा से सात पीढ़ी बाद सोठदेव का समय सं० ११२५ है, और वज्जदामा के समय से ९१ वर्ष बाद पड़ता है। इसलिए प्रत्येक पीढ़ी का औसत समय सोठदेव तक १२ वर्ष ही होता है। यदि वाद की पीढ़ियों के लिए १६-१७ वर्ष का औसत माना जावे तो पञ्जून का समय पृथ्वीराज के समय के साथ ही पड़ता है। इन वंशावलियों पर विशेष विश्वास करना बहुत उचित नहीं माना जा सकता है। किन्तु यह स्पष्ट है कि ये ‘रासो’ में दिए हुए पञ्जून के समय का विरोध नहीं करती है। पञ्जून के सम्बन्ध में रासो में कही हुई शेष बातों के सम्बन्ध में कोई अन्य साक्ष्य प्राप्त नहीं है।” पञ्जूनराव कूरभ के विषय से वास्तविकता कुछ भी हो, किन्तु रासो के समस्त पात्रों के

१. टॉड, राजस्थान, भाग २, पृ० २४९, ३५०-३६१। तथा डॉ० विपिनबिहारी त्रिवेदी, रेवातट, पृ० २९।

२. अठारमें बरस चहुआन चाहि। कछवाहा वीर पञ्जून व्याहि॥  
इक मात उदर घनि मरम सौय। बलिमद्र कुंअर जापै संदोय॥

—पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ९, स० ६५।

३. डॉ० विपिनबिहारी त्रिवेदी, रेवातट समय, पृ० २९।

४. डॉ० माताप्रसाद गुप्त, पृथ्वीराज रासो की ऐतिहासिकता और रचना तिथि, राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त अभिनन्दन ग्रन्थ, पृ० ९५८, सन् १९५९।

विषय में एक बात अवश्य कही जा सकती है कि इनमें ऐतिहासिक तत्व हैं अवश्य, पर कवि-कल्पना मिश्रित होने के कारण वास्तविकता का पता लगाना अत्यन्त कठिन कार्य है।

प्रतापसिंह—पृथ्वीराज रासो के 'कन्हपट्टी समय ५' के अन्तर्गत प्रतापसिंह का परिचय प्राप्त होता है। प्रतापसिंह जाति का चालुक्य था तथा इसके पिता का नाम सारंगदेव था। सारंगदेव की मृत्यु के उपरान्त प्रतापसिंह राजगद्दी पर बैठा। राजमद के कारण इसने गुजरात पर भ्रांति-भ्रांति के अत्याचार करना प्रारम्भ किया। परिणाम स्वरूप जनता ने अपने कष्टों की दुहाई गुर्जरेश्वर भीमदेव चालुक्य के समक्ष दी। भोलाराय भीम ने प्रतापसिंह को उचित पाठ पढ़ाने के लिए उस पर आक्रमण कर दिया। प्रतापसिंह भोलाराय भीमदेव चालुक्य का सामना न कर सका तथा अपने ६ भाइयों के साथ भाग कर पृथ्वीराज चौहान के राज्य दरबार में शरण ली। महाराज पृथ्वीराज ने सातों भाइयों को जागीरें तथा सिर्रोपाव देकर अपने आश्रय में रख लिया। एक दिन दुर्भाग्यवश प्रतापसिंह पृथ्वीराज चौहान के राजदरबार में आया तथा चाचा कन्ह के सामने बैठ कर मूर्खों पर ताव देने लगा। चाचा कन्ह इस साधारण सी घटना को चुनौती समझ कर क्रोध से भर उठे तथा भरे दरबार में प्रतापसिंह का गला घड़ से अलग कर दिया। इस बात पर भारी विग्रह छिड़ गया तथा युद्ध में प्रतापसिंह के अन्य ६ भाई भी वीरगति को प्राप्त हुए। चाचा कन्ह इस युद्ध में विजयी हुए—

परि भूमि पावार। उररि मञ्जन किवार दुअ ॥

तव लगि कन्ह तमकि। आइ पहुंचौ अन्त कलुअ ॥

फुकि रोस असि तमसि। घाई सिर जाई रह्यो उत ॥

भनहुं ससि बल दें। अंग जनुहन्या अजा सुत ॥

तिन हनत सिधु घुन हेनिय सिर। राज गेह भधि समर हुआ ॥

हल हलकि कंदि कोलाहलह। हाय हाय दरवार हुआ ॥ ५३ ।

प्रतापसिंह के विषय में इतिहास सर्वथा मौन है साथ ही 'पृथ्वीराज रासो' के वृहद संस्करण के अतिरिक्त अन्य संस्करण में उपर्युक्त कथा प्राप्त नहीं होती है। प्रतापसिंह के अन्य ६ भाइयों का विवरण प्रथक-प्रथक करना पृष्ठ-पेपण मात्र होगा। अतः यहीं पर उनके नामोल्लेख किए जा रहे हैं। प्रतापसिंह के अन्य ६ भाइयों के नाम इस प्रकार थे—(१) अरिसिंह, (२) गोकुलदास, (३) गोविन्द, (४) हरसिंह, (५) भगवान (भट) तथा (६) अरेह मुप)। यह ६ भाई भी चाचा कन्ह से युद्ध करते हुए वीरगति को प्राप्त हुए। इतिहास तथा 'रासो' के अन्य संस्करण इनके विषय में भी मौन है।

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ७-३१, स० ५।

२. वही, छं० ४१, स० ५।

३. वही, छं० ५३, स० ५।

४. वही, छं० ३, स० ५।

पर्वतराय-‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार यह राजा नाहरराय का सामन्त तथा जाति का भीना था। नाहरराय तथा पृथ्वीराज के मध्य युद्ध होने पर इसने नाहरराय की आज्ञा से घाटी में पृथ्वीराज की विशालवाहनी को रोक कर भीषण संग्राम किया था। किन्तु दुर्भाग्यवश युद्ध करता हुआ चाचा कन्ह चौहान के हाथों वीरगति को प्राप्त हुआ।

प्रसंगराय खीची—‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार प्रसंगराय खीची दिल्ली अजमेरपति पृथ्वीराज चौहान का एक सामन्त था। इसने अपने अन्त समय तक पृथ्वीराज का साथ दिया। रेवातट पर शाह गौरी से संग्राम होने के समय यह पृथ्वीराज के साथ उपस्थित था। ‘कनकवज्र समय ६१’ के अन्तर्गत कवि सूचना देता है कि प्रसंगराय खीची कन्नौजपति जयचन्द के साथ युद्ध होने पर आहत हुआ था। इतना ही नहीं इसने अपने प्राणों का उत्सर्ग भी

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छ० ७६-९२, स० ७।
२. मुहणोत जेणसी की ख्यात में भी खीची वंश के लिए बड़ी मनोरंजक कथा का उल्लेख हुआ है। कथा इस प्रकार है—‘एक बार आसराव अपने पुत्र माणकराव से प्रसन्न हुआ और कहा कि तु प्रभात से सन्ध्या समय तक जितनी पृथ्वी में फिर आवे वह भूमि तुझको दे दी जावेगी तब माणकराव दिन निकलते ही चला और सन्ध्या तक बराबर फिरता रहा वह सांभर का चढ़ा, इतनी जगह गया-नागौर पट्टी के ८४ गांव, और सारी भदाण जहाँ इसने गढ़ बांधने का विचार किया। सन्ध्या होते जायल की तरफ निकला, वहाँ गवारे ( बैल लादने वाली एक जाति ) ठहरे हुए थे, उन्होंने भोजन की मनुहार की, यह भी दिन भर फिरता-फिरता भूखा हो गया था, कहा कोई पका पकाया अन्न हो तो लाओ। उस वक्त उनके खिचड़ी तैयार थी वह कटोरी में ले आये। माणकराव ने ऊँट पर चढ़े-चढ़े ही वह चावल-मूँग की खिचड़ी खाई तथा सन्ध्या होते ही पिता के पास पहुँचा। पिता ने पूछा कि कितनी घरती में फिर आया उसने सब हकीकत कह सुनाई। फिर पूछा कि कहीं गढ़ की ठीठ भी निश्चित की है? कहा भदाणा के पास गढ़ बांधने का विचार किया है। पिता बोला दिन भर में कुछ लाया भी? उत्तर दिया कि गंवारों के यहां खिचड़ी खाई है। पिता ने कहा तूने खिचड़ी खाई इसलिए तेरी सन्तान खीची कहलावेगी।
- रामनारायण दूगड़ मुहणोत जेणसी की ख्यात, ( प्रथम भाग ) पृ० १८४-८६, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, स० १९८२।
- अनुवादक महोदय ने खीची वंश की उत्पत्ति पर एक टिप्पणी दी है—  
‘खिचड़ी खाने से खीची प्रसिद्ध होना तो भाटों की कल्पना मात्र ही मालूम देती है, सम्भव है कि या तो इनके मूल पुरुष का नाम खीचीराव हो या पहले खीची नाम के किसी गांव में बसते हों। वही, पृ० १८४ है।
३. पृथ्वीराज रासो, ना० प्र० स० काशी, छ० २४, स० २७।
४. वही, रासो सम्यो ६१।

स्वामिधर्म हेतु किया था । 'बड़ी लड़ाई रो प्रस्ताव समय ६६' के अन्तर्गत सूचना मिलती है कि, वीर प्रसंगराय बीची शाही सेना से भयंकर संग्राम करता हुआ वीरगति को प्राप्त हुआ—

पर्यौ राव परसंग, पग बीची पति पुत्तौ ॥  
चोर मोर गज गाह । भार पारय ज्यों जुत्तौ ॥  
से हथ्ये से हथ्य । गेन गंध्रव किय गानह ॥  
वरन इच्छ घर मिच्छ । द्राह शोनह किय पानह ॥  
संभिरय राव संभरि घरा । सघन धाय समुह लरिय ॥  
जिम जिम मुजुक्षिध घरनि परिय । तिम तिम इन्द्रासन टरिय ॥ छं० १२५८ ।

पल्हन कुमार—पृथ्वीराज चौहान ( तृतीय ) पञ्जूनराय कूरंभ का प्रमुख सामन्त था । संयोगिता अपहरण सम्बन्धी पृथ्वीराज तथा जयचंद के मध्य होने वाले युद्ध में वीर कूरंभ के गिरने पर पराक्रमी पल्हन कुमार युद्ध भूमि की ओर अग्रसर हुआ तथा अपार पराक्रम तथा रण कौशल दिखाता हुआ पंच तत्व को प्राप्त हुआ—

परे मध्य विष्णुहर । पल्ह पञ्जून बंध घर ॥  
रज रज तन किय हटकि । कटक कमधज्ज फोटि भर ॥  
ईस सीस संहर्यो । हथ्य सों हथ्य न मुक्कयो ॥  
सूर मुऔ सुख हुआ । वीर वीरा रस तक्कयो ॥  
भारत अरिन कूरंभ झुकि । ते रवि मंडल भेदियो ॥  
डोल्यो न रथ्य समुष चल्यो । किति कला नह वेदियो ॥ छं० १४९२ ।  
गंग डोलि सति डोलि । डोलि ब्रह्मांड सक डुल ॥  
अठ थात दिगपाल । चाल चंचाल विचक यत्त ॥  
फिरि क्यौ प्रथिराज । सवर पारस पहु पंगिय ॥  
च्यारि च्यारि तरवारि । वीर कूरंभति सज्जिय ॥  
नषिय पहुप्प इक चंदने । एक किति जंपत वयन ॥  
वे हथ्य दरिद्रो द्वय ज्यों । रहे सूर निरपत नयन ॥ छं० १४९३ ।

पहाड़राय तोमर—'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार पहाड़राय तोमर पृथ्वीराज का सामन्त था तथा जिसकी गणना उनके श्रेष्ठ एवं प्रसिद्ध सामन्तों में होती थी । यह तोमर वंशी क्षत्री था । 'पहाड़राय समय' के अन्तर्गत पहाड़राय तोमर के अपार साहस एवं पराक्रम का परिचय

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १२५८, स० ६६ ।
२. वही, छं० ९०-९१, स० ६१ ।
३. वही, छं० १४९२-९३, स० ६१ ।



प्राप्त होता है। शाह शहाबुद्दीन गोरी के दिल्ली पर आक्रमण करने पर पहाड़राय ने ही उसे बंदी बनाया था।<sup>१</sup> इसके अतिरिक्त भी हम पहाड़राय को पृथ्वीराज के प्रवल सहयोगियों के अंतर्गत पाते हैं। संयोगिता अपहरण सम्बन्धी जयचन्द से संग्राम होने पर भी इसने पृथ्वीराज का साथ दिया था। पृथ्वीराज के दल के सलष प्रमार के खेत रहने पर महाराज पृथ्वीराज की आज्ञा पाकर पराक्रमी पहाड़राय युद्ध भूमि की ओर अग्रसर हुआ तथा युद्ध में अपार पराक्रम दिखा कर विपक्षी दल के असोकराय नामक सामन्त की मौत के घाट उतार दिया। असोकराय की मृत्यु के उपरान्त पहाड़राय का सामना करने के लिए सहदेव अग्रसर हुआ। दोनों वीरों ने अपार पराक्रम एवं साहस के साथ युद्ध किया तथा दोनों ही वीर गति को प्राप्त हुए—

तब राई सहदेव देवंग वीर । धरे घाड़्यों संग से हृथ्य धीर ।

ह्यो राई पहार सों कठ मत्री । परे फुटि उड्यो उक्कसी सु अत्री ॥ छं० २३९३ ।

ग्रह्यो सेल संग सहदेवि ताम । चलयो बथ्य हृथ्ये उड्यो हंस धाम ।

ढरे दून कल्ले वरकू अचेत । दुने सूर जूझ्ये उभे स्वामि हेत ॥ छं० २३९४ ।<sup>२</sup>

पावस पुंडीर—‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार पावस पुंडीर पृथ्वीराज चौहान का सामंत था। ‘वड़ी लड़ाई समय ६६’ के अंतर्गत पढ़ते हैं कि कांगड़ा के हाहुलीराय हम्मीर को मना कर अपने पक्ष में लाने के लिए चन्दवरदायी के जाने पर तथा छलपूर्वक चन्द को देवी के मन्दिर में बन्दी बनाकर हम्मीर के शाह गोरी के पक्ष में जाने का समाचार पाकर पृथ्वीराज ने धीर पुंडीर के पुत्र पावस पुंडीर को नमक हराम हम्मीर का सिर काटने की आज्ञा दी—

तब राजा प्रथिराज कहि । सुनि पावस पुंडीर ।

इतजो परिहस सार तुज । काटहि सिर हम्मीर ॥ छं० १०१२ ।<sup>३</sup>

स्वामि भक्त सामन्त पावस पुंडीर ने पृथ्वीराज की आज्ञा मान कर हम्मीर पर आक्रमण कर दिया। हम्मीर की सहायतार्थ अनेक यवन भी आये किन्तु पावस पुंडीर के समक्ष कोई न रुक सका। अन्त में पावस पुंडीर ने हम्मीर का सिर काट लिया तथा महाराज पृथ्वीराज चौहान की सेवा में प्रस्तुत किया—

सोस छेदि लिय सगि कर । मद्धि साह दल मीर ॥

आय सूर सामन्त पें । धनि धनि जंपत धीर ॥ छं० १०३६ ।<sup>४</sup>

अंत में गजनिपति शाह शहाबुद्दीन गोरी से सामना होने पर भी पराक्रमी पावस पुंडीर

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, समय ३७ ।

२. वही, छं० २३९३-२३९४, स० ६१ ।

३. वही, छं० १०१२, स० ६६ ।

४. वही छं० १०३६, स० ६६ ।

न पृथ्वीराज की ओर से गोरी की सेना का सामना किया। गोरी दल के सामंत गाजीखाँ से इसने द्वन्द्व युद्ध किया तथा अपनी कीर्ति को अजर-अमर करता हुआ वीरगति को प्राप्त हुआ—

परत राइ पुंडीर। मीर वज्जे बहुवज्जे ॥

मनहु माद्र पद ऐन। ऐन गेना घन गज्जे ॥

अचल चमू चतुरंग। कृष्णि कुप्यार अपारह ॥

असिनि भरनि तर अतर। षग्ग कर दंड सपोरह ॥

जै जै चवत चव रुष्प चर। वरनि वरनि अन्छिर छरनि ॥

भव भाव भवन हिम ह्य तजि। वसि पावस आवस घरनि ॥ छं० ११६४ ।'

बखरेत—'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार वीर बखरेत पृथ्वीराज चौहान का प्रसिद्ध सामंत था। संयोगिता अपहरण सम्बन्धी युद्ध में जब वीर निददुरराय पराभव को प्राप्त हुआ तथा पंग दल ने महाराज पृथ्वीराज को पकड़ने के लिए चारों ओर से घेर लिया, उस समय वीर बखरेत ने पंगदल का सामना किया तथा विकट युद्ध करता हुआ पंचतत्व को प्राप्त हुआ—

छछट छल रषणह। पवग पट्टन प्रवेस किय ॥

तब लगि ह्य गय मर। भरति चहुआन चपि लिय ॥

बलिय वीर वषरेत। षग्ग षोहनि दल रुक्कयो ॥

तब लगि कहै पटनेस। शारि शसरि शर झुक्कयो ॥

उचित सीस तस अमरह। ससर देषि संपषयो ॥

निददुर निसंक उप्पर पहर। बहुरि पंग पहु उत्तयो ॥ छं० २२११ ।'

बलभद्र कमधज्ज—'रासो' के अनुसार संयोगिता अपहरण सम्बन्धी चौहान पृथ्वीराज तथा पगराज जयचन्द के मध्य होने वाले संग्राम में वीर बलभद्र कमधज्ज ने बड़ी वीरता का प्रदर्शन किया था। अपनी विमाता-जात वीरमराय को रणक्षेत्र में वीरगति को प्राप्त होता देख कर पंगराज ने निददुरराय के अनुज बलभद्र कमधज्ज को शत्रु पर आक्रमण करने की आज्ञा दी।' पृथ्वीराज का प्रसिद्ध सामन्त निददुरराय अपने सहोदर बलभद्र को युद्ध हेतु अग्रसर होता देख स्वरक्त का मोह छोड़, दोनों ही वीर स्वामिधर्म हेतु जूझ पड़े—

डुआं तोन षुट्टै पछे षग्ग जुट्टै हनै तविक मंद पेर अद्ध अद्ध ।

मरै अबं अज दवं जानि दग गज सीस पांन परै बीज जानं ॥ छं० २१९४ ।

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ११६४, स० ६६।

२. वही, छं० २२११, स० ६१।

३. घन सयन अवर पच्छे करै कमिय पंग आदेस लहि।

आवंत देषि बंधव अनुज राव निडर पग मडि रहि ॥ छं० २१८०, स० ६१।

कम्मघ घपत अरि पंग लिषि, तमकि तमकि वर तेज ।

जानिक अगि वन घन, उमडि वाय घन सेज ॥ छं० २१९६ ।<sup>१</sup>

पारस्परिक घोर द्वन्द्व के मध्य घातक आघात लगने के कारण बलभद्र तथा निदुदुराय दोनों सहोदर स्वामिधर्म की रक्षा करते हुए स्वर्ग लोक को गये । अपने ही अनुज को स्वर्ग लोक भेज कर वीर बलभद्र ने स्वामिधर्म का अपूर्व आदर्श प्रतिष्ठित किया—

उभै दिट्ठ दिट्ठी मिले बाहुवांह, निथं उत्ति नाहि अरी राहराहं ।

प्रिय पति रंत गैत पंग नरिद, मिल्यौ षग हसंक वांघ वनिदं ॥ छं० २१९७ ।

घन घाय चाय वित्ति घरिय, करिग आन सामंत सह ।

वैकुण्ठ बट्ट लदी बिहुन, अइन अप्प अप्पह सुरह ॥ छं० २२०४ ।<sup>१</sup>

बलिभद्र तथा उसका भाई—‘पृथ्वीराज रासो’ के मतानुसार वीर बलिभद्र तथा उसका भाई ( जिसका रासोकार ने नाम नहीं दिया है ) दोनों ही पृथ्वीराज चौहान के सामन्त थे तथा संयोगिता अपहरण सम्बन्धी युद्ध में अपार पराक्रम करके वीरगति को प्राप्त हुए । एक प्रहर दिन चढ़ आने पर महाराज पृथ्वीराज की ओर से बलिभद्र का सहोदर युद्ध भूमि की ओर अग्रसर हुआ तथा विपक्षी दल के मीरा मर्दा नामक सामंत से जा भिड़ा—

बजिग पहर इक अहर । हृथ्य थक्क कमान बहि ॥

हैगै नरभर डररि । श्रमिज थक्कए षग सह ॥

बीय अरी चित लरत । कोउ सानै नन थक्क ॥

जोगि नौद उग्यौ प्रमान । कूह चतुरग जटक्क ॥

है नषि वंघ बलिभद्र कों । पज्जूनी अगै समन ॥

उत निक्कर मीर मीरां सरव । तुंडारी सम्हो वयन ॥ छं० २१४३ ।<sup>१</sup>

किन्तु भीषण संग्राम करता हुआ बलिभद्र का भाई मारा गया ।<sup>२</sup> अपने भाई को मरा हुआ देखकर बलिभद्र भी युद्ध भूमि की ओर अग्रसर हुआ तथा दो प्रहर विकट संग्राम करके स्वयं भी अपने भाई का अनुकरण किया—

करि उप्पर वर वीर । बली बलभद्र सु धाइय ।

दल दल मुष मुष पंग । भई द्रप्पन मुष धाइय ॥

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० २१९४-२१९६, सं० ६१ ।

२. वही, छं० २१९२, २२०४, सं० ६१ ।

३. वही, छं० २१४३, सं० ६१ ।

४. वही, छं० २१४४, सं० ६१ ।

है अंठुन दल पंग । वीर अवरस्त हलाइय ॥

समर अमर कोतिग । ईस नारह रिझाइय ॥

क्षक क्षोरि क्षोरि दल मोरि अरि । बिरह चीर उट्ठाय करि ।

सामंत पंच पचह मिलिग । टरि न टरै भर बिप्प हर ॥ छं० २१४५ ।'

बालराय—'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार बालराय नाहराय का सामन्त था । पृथ्वीराज चौहान से विकट संग्राम होने पर बालराय ने भी युद्ध में भाग लिया था तथा अन्त में स्वामि धर्म का पालन करते हुए वीरगति को प्राप्त हुआ ।' बालराय नामक पात्र की पुष्टि रासो के अप्रकाशित एवं हस्तलिखित मध्यम संस्करण से भी हो जाती है । इस संस्करण के अन्तर्गत भी बालराय को युद्ध भूमि में वीर गति प्राप्त होता है ।'

बालुकाराय कमधज्ज—'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार कान्यकुब्जेश्वर जयचन्द के अनुज भंकेसराय का पुत्र बालुकाराय कमधज्ज खोखद नगर का क्षत्रप था ।' पंगराज ने अपने इसी भ्रातृज बालुकाराय को राजसूय यज्ञ के शुभावसर पर नगर रक्षा का भार सौंपा था । दिल्ली-अजमेर के अन्तिम हिन्दू शासक महाराज पृथ्वीराज चौहान ने पंगराज के यज्ञ का निमन्त्रण अस्वीकार कर यज्ञ विध्वंस करने का विचार किया । उसी को कार्यरूप में परिणत करने के हेतु पृथ्वीराज चौहान ने खोखंद नगर पर आक्रमण कर बालुकाराय का वध कर, चन्द के यज्ञ को दूषित करने की योजना बनाई । यज्ञारम्भ की सूचना प्राप्त होने पर पृथ्वीराज चौहान ने खोखंद नगर पर घावा बोल दिया । आक्रमण के फलस्वरूप चतुर्दिक हाहाकार व्याप्त हो गया । बालुकाराय ने जब यह सुना तो क्रुद्ध हो कर कहने लगा—

किहि रुट्ठ्यौ सुव तरनि , कहै नचरी पति संजम ।

अज्ज रज्ज जयचन्द कवन उद्देग करइ दम ॥

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० २१४५, स० ६१ ।

२. वही, छं० ११६, स० ७ ।

३. पृथ्वीराज रासो, मध्यम संस्करण, हस्तलिखित एवं अप्रकाशित प्रति, छं० २९, पृ० २६, स० ४; रा० ए० सो० लदन ।

४. धाह थाह खोखंद, सुनिय बालुकाराइ रव ।

लघु बंधव जयचन्द, राइ मकेस सु संभव ॥

सोइ संमलि कल कूक, ऊक ब्रद्धिय दसदिस दर ।

नह सुनिये श्रुति अवर, नयर सब गज्जि गहम्बर ॥

बालुकाराइ इम उच्चरै, कहौ वत्त कारन सकल ।

मम करौ धाइ थिर होइ करि, कवन तेक बंधी सुवल ॥

—पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० १८, स० ४६ ।

तव धाहुनि उच्चगि, सुनहि भंकेस राइ सुअ ।  
 दिल्लीवं चहुआन तेन उच्चारि जारि भुअ ॥  
 सुनि सद् नद् निस्सान किप, अप्प बोलि सज्जे सुमर ।  
 सज होई चढौ सज्जौ सिल्ह अनी बंधी आषाढ़वर ॥ छं० १७४ ।<sup>१</sup>

दिल्लीपति चौहान पृथ्वीराज का आक्रमण सुनकर वीर बालुकाराय तत्काल ही अपने साथ बत्तीस हजार की संख्या में सुसज्जित होकर नगर को छोड़ जनता की मदद करने के लिए युद्ध हेतु सन्नद्ध हो गया ।<sup>१</sup> यम तुल्य वीर बालुकाराय कम्पोज्ज ने स्वयं सुसज्जित होकर अपनी विशाल सेना को पंक्ति बद्ध किया ।<sup>२</sup> दोनों दलों में घोर संग्राम हुआ जिसमें चौहान के दल के प्रसिद्ध सी सामंत घायल होकर घराशायी हुए तथा केवल छह सामन्त ही कुशल रहे । इस संग्राम में पृथ्वीराज की विजय हुई ।<sup>३</sup> घोर पराक्रम प्रदर्शित करता हुआ वीर बालुकाराय इस संग्राम में पराभव को प्राप्त हुआ । स्वामिधर्म का पालन करते हुए इस वीर ने अपने अमूल्य प्राणों की आहुति दे दी । वास्तव में इसके निधन से पंगराज की बड़ी भारी क्षति हुई । कान्यकुब्जेश्वर जयचन्द गाहड़वाल की यज्ञ अभिलाषा पूर्ण होने के पहले ही विनष्ट कर दी गई । बालुकाराय की मृत्यु के साथ ही साथ चौहान के सैनिकों ने खोखंद नगर को लूट कर उसकी श्री नष्ट कर दी । इस प्रकार चौहान पृथ्वीराज ने कन्नौजपति जयचन्द का यज्ञ विध्वंस कर चक्रवर्तित्व का गौरव प्राप्त करने की उत्कट अभिलाषा को पूर्णरूप से नष्ट कर दिया । अपने पति का निधन सुन कर वीर बालुकाराय की पत्नी उसके शव के साथ सती हो गयी—

हुनिग राउ बालुका, भंजि खोखंद महापुर ।  
 लुट्टि रिद्धि बहु निद्धि, कनक पट कूर नग धुर ॥  
 करत सास उद्दास, छोहि जोरी वर दपत्ति ।  
 फिर्यौ राज चहुवान, पान दक्खं हरि सम्पत्ति ।  
 वज्जत नद् निस्सान रव, धाह प्रकेसे लोटि धर ।  
 भग्गेव जग्ग जयचन्द नृप, थान कयट्ठी कंप्पि पर ॥ छं० २७३ ।<sup>१</sup>

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १७४, स० ४८ ।

२. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० २०, स० ४६ ।

३. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १८२, स० ४८ ।

४. दिल्लीईसय सत्त भ्रत, परेसु कटि रन थान ।

छह सत्तह सामंत कुशल, जय लखी चहुआन ॥

—पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० २५, स० ४६ ।

५. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० २६, स० ४६, तथा नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० २७३, स० ४८ ।

इस प्रकार से वीर बालुकाराय कमधज्ज अपना पराक्रम एवं वीरता का परिचय देकर घोरगति को प्राप्त हुआ। बालुकाराय का कोई ऐतिहासिक अस्तित्व प्राप्त न होने के कारण, कुछ अधिक लिखना सम्भव नहीं है। पृथ्वीराज रासो का अप्रकाशित मध्यमय संस्करण बालुकाराय के वध का समर्थन करता है।<sup>१</sup>

विश्वराज—'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार विश्वराज पृथ्वीराज चौहान के प्रतिद्वन्द्व एवं पराक्रमी सामन्तों में से एक था। यह सारंगराय सोलंकी का भाई था।<sup>२</sup> संयोगिता अपहरण सम्बन्धी संग्राम में जब अचलेस चौहान वीरगति को प्राप्त हुआ तब पृथ्वीराज ने परम पराक्रमी विश्वराज सोलंकी को युद्ध भूमि में अग्रसर होने की आज्ञा दी।<sup>३</sup> वीर विश्वराज अपने स्वामी की आज्ञा शिरोधार्य कर तथा पृथ्वीराज को मस्तक नवा कर विकट संग्राम हेतु युद्ध भूमि की ओर अग्रसर हो गया। इस भीषण संग्राम में विश्वराय ने पंग दल के छह प्रसिद्ध योद्धाओं को भीत के घाट उतार दिया तथा एक सहस्र सिपाहियों को भी स्वर्ग-मार्ग को भेज दिया—

सहस्र एक परिपंग दल । धन धन जं पै धोर ॥

जै जै सुर बद्ध सयन । धनि धनि विश्वा वीर ॥ छं० २३४३।<sup>४</sup>

इतना नर संहार करने के उपरान्त वीर विश्वराय भी पराभव को प्राप्त हुआ। विश्वराय सोलंकी के पृथ्वी पर गिरते ही कवि चन्द वरदायी ने उसकी कीर्ति एवं वीरता के सम्बन्ध में निम्नलिखित दो छन्द प्रस्तुत किये—

परत अवल चहुआन । पच्छ गुज्जर रषि लाज ।

भ्रित भाग सामंत । सार नृप जल तन भाज ॥

रुप रुप रक्षणह । दैन दट्टी वच्छारं ॥

अरि रुकी वसि सार । कीव तन भग प्रहारं ॥

१. पृथ्वीराज रासो, माध्यम संस्करण, ( अप्रकाशित ), रायल ऐशियाटिक सोसाइटी, लन्दन, बालुकाराय समय, ३६।

२. रासो सार, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, पृ० २५४।

३. दल आवत पहु पंग । दिग्धि चहुआन सब सजि ॥

वीश्वराज चालुक्क । वियो आयेस अप्प गजि ॥

अहो धीर चालुक्क । सद्दे अनभग पंग धरि ॥

सन मुख सजि षलजूह । तास भर सु भर अन्त करि ॥

उच्चर्यो ब्रह्म चालुक्क तह । अहो राज प्रथिराज चुनि ॥

पथ्य धरनि धन सूरमर । करों पंग दल दन्ति रिन ॥ छं० २३२४, स० ६१।

४. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० २३४३, स० ६१।

तन तुट्टि सिरह पल चर ग्रस्यौ । बलि बिरीह विराधि जिम ॥  
 इम विटि परि अचछरि परी । ससि पारस रति सरद जिम ॥ छं० २३४४ ।  
 कलिन कल्यौ असियन मिल्यौ । भरहरि नहि भगौ ॥  
 अजसुन लयौ जसवनि भयौ । अमग्न न लग्यौ ॥  
 पहन लयौ वियन गयौ । अप जप नह सुनयौ ॥  
 और न ज्यौ दारि न गयो । गाहत न गह्यौ ॥  
 गयो न चलि मंदिर दिसह । मरन जानि झुझ्यो अनिय ॥  
 विज्ञ दिय दाग तिलकह मिसह । वह वह वह भगल धनिय ॥ छं० २३४५ ।

वेनीदत्त ब्राह्मण—‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार वेनीदत्त ब्राह्मण गजनिपति शाह  
 शाहाबुद्दीन का ब्राह्मण था । महाराज पृथ्वीराज को बंदी बना कर गजनी ले जाने के उपरान्त,  
 उनकी खाने-पीने की समस्या आने पर गोरी ने वेनीदत्त नामक ब्राह्मण को पृथ्वीराज चौहान  
 के लिए खाना बनाने के लिए नियुक्त किया तथा शाह ने वेनीदत्त को पृथ्वीराज को भोजन  
 खिलाने के लिए आज्ञा दी । वेनीदत्त ने पृथ्वीराज चौहान से भोजन करने के लिए आज्ञा  
 किया तथा उन्होंने स्नानादि से निर्वृत्त होकर भोजन करना स्वीकार कर लिया—

तब वेनीदत्त विप्र कहि । सुनि बंधव सुविहान ॥  
 अन्न पसाव राजन करो । आस सांस चहुआन ॥ छं० १६६८ ।  
 तब चिते चितराज । सभु वर बोल समारिय ॥  
 मानि कियो आहार । तिने सब परिकर सारिय ॥  
 दस बंभन रहै पास । त्रिन तर भोम सुधारिय ॥  
 करे पाक विधि विप्र । विविध व्यञ्जन रस कारिय ॥  
 जल उत्तन राज असनान किय । वर रोहिय घौतह वसन ॥  
 करि ध्यान संभु जप निति किय । आहारे अन्नह व्यसन ॥ छं० १६६९ ।

वेनीदत्त नामक कोई ब्राह्मण गोरी के दरवार में अथवा गजनी में था, अब इस बात

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० २३४४-२३४५, स० ६१ ।
२. भी चिहान सुविहान । बोलि हज्जूर हुजावह ॥  
 वेनीदत्त सुविप्र । आय सनमुष सित्तावह ॥  
 दिय आयस साहाव । रहौ तुम राजन पासह ॥  
 सो उपाय तुम करो । मपे जिम अन्न उदासह ॥  
 आए सु उभै राजनप्रति । वेनीदत्त सुविद्धि कहि ॥  
 प्रथिराज अहारो अन्न रस । हम जच्चे तुम पास इह ॥ छं० १६६७, स० ६६ ।
३. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी छं० १६६८-६९, स० ६६ ।

का पता लगाना कठिन ही नहीं वरन् असम्भव है। इतिहास इस विषय में सर्वथा मौन है। संभव है ग्रन्थकार को पृथ्वीराज चौहान के घमं रक्षा हेतु वेनीदत्त ब्राह्मण की कल्पना करने की आवश्यकता हुई हो।

**मकवाना**—गुर्जरेश्वर भोलाराय भीमदेव चालुक्य ( द्वितीय ) का एक योग्य सभासद था। गुर्जरेश्वर पर, जब चौहान पृथ्वीराज ने आक्रमण किया तब उसने वीर मकवाना को पृथ्वीराज चौहान द्वारा आक्रमण करने की सूचना तथा भेंट लेकर गजनी भेजा। वीर मकवाना ने गजनी पहुँच कर शाह गोरी से साक्षात्कार किया तथा भरे दरवार में गुर्जरपति भोलाराय भीमदेव चालुक्य का पत्र पेश कर अपने आने का मूल अभिप्राय कह सुनाया। मकवाना की बात सुनते ही शाहबुद्दीन गोरी का मुख लाल हो गया, मोष्ठ फड़कने लगे। उसने फड़कती हुई भुजाओं से अपना तीर उठा कर कमान पर चढ़ाया तथा प्रतीज्ञा की कि मैं स्वयं ही काफिरों का नाश करूँगा तभी खुरासान में रहूँगा। बादशाह का ऐसा वचन सुनकर तातार खाँ, न्याजी खाँ, पिरोज खाँ, हुस्तम खाँ, उजबक खाँ, निसुरत खाँ आदि सभासदों ने भी हाँ में हाँ मिला दी। बादशाह गोरी ने मकवाना की बात का प्रत्युत्तर दिया कि दान, विद्या तथा सम्पत्ति ये चार वस्तुएँ साझे में नहीं होती। रे मूढ़ दूत यह पृथ्वी वीर भांग्या है, तुच्छ भीमदेव चालुक्य मुझसे क्या शेखीमारता है। मैं उसे भी नष्ट-भ्रष्ट करने में समर्थ हूँ। शाह गोरी की आवेशपूर्ण बातें सुनकर मकवाना ने भी कहा कि भीमदेव चालुक्य भी ऐसा दुर्बल नहीं है, वह भी म्लेच्छों को नीचा दिखा सकता है। गोरी ने पुनः मकवाना की बात का प्रत्युत्तर दिया—पहले पृथ्वीराज को नष्ट कर लूँ, तब भोलाराय भीमदेव की भी खबर लूँगा। ऐसा सुनकर वीर मकवाना सगर्व बोला—हे शाह ! जिस समय भीमदेव चालुक्य दलबल सहित चलता है, तब पृथ्वी डोलने लगती है तथा काल भी भयभीत हो जाता है। वीर चालुक्यराज के समक्ष जालंधर, वग, तिलंग कोकन, कच्छ परोट मरहट्ट आदि कोई भी ठहर नहीं सकते, सब उससे नवते हैं। यह वही प्रतापी भोलाराय भीमदेव चालुक्य है, जिसने बघेलों को परास्त किया, आवूगढ़ को घराशाही किया, तथा यादवों को हराया। उसे जीतना सहज कार्य नहीं, ब्रह्मा ने स्वयं उस अद्वितीय वीर को अपने कर कमलों से बनाया है। वीर मलवाना का ऐसा गर्व युक्त कथन, शाहबुद्दीन गोरी सहन न कर सका तथा वह उसे मारने के लिए उद्यत हो गया, किन्तु योग्य वजीर ने समझाया कि दूत मारा नहीं जाता, ऐसा करने से बड़ा कलंक तथा अपयश होगा। वजीर की मंत्रणा सुनकर शाह

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ११८, स० १२।

२. वही, छं० ११९, स० १२।

३. वही, छं० १२४-२५, स० १२।

४. वही, छं० १२६, स० १२।

५. वही, छं० १३०-३१, स० १२।

६. वही, छं० १३२ तथा १३४, स० १२।



गोरी निस्तब्ध रह गया किन्तु इतने में ही एक अन्य सभासद बोल उठा कि यद्यपि दूत को मारना नीति-विरुद्ध है किन्तु यह दूत भी तो कौसी असभ्य वाणी बोलता है ।' सभासद के अपमान सूचक वचन सुनकर वीर मकवाना से न रहा गया तथा उसने उस सभासद को एक ऐसा हाथ मारा कि उसका सिर घड़ से पृथक् होकर पृथ्वी पर लोटने लगा ।<sup>१</sup> अपने प्रिय सभासद की इस प्रकार मृत्यु देख कर गोरी न रह सका तथा उसने तुरन्त ही वीर मकवाना का हृदय अपने तीक्ष्ण बाण से वेध दिया । वीर मकवाना ने मरते-मरते हैजम तथा हुजाव नामक दो सरदारों को मार गिराया तथा स्वयं भी वीरगति को प्राप्त हुआ—

सुनि साहाब वजीर । बोलि बल की अप्पनां ॥  
 कक्कस करते बर । कमान तानी लगि कानां ॥  
 छल छुट्टी छातीह । हनत सारंग सुषानां ॥  
 मार मार उच्चार । तेग कढढी मकवानां ॥  
 हैजम हुजाव सिर उच्छटी । बीजलि कै अवर अरी ॥  
 क्रमान भजि घुप्परि पला । मही अगि उछटी परी ॥ छं० १४८ ।  
 हैजम धुकि घर पर्यौ । पर्यौ माझी मकवाना ॥  
 रस रसाल लुट्टीय । अबे लगिय सुरताना ॥  
 गयो साहि औसाफ । साध भगिय दुनियाना ॥  
 बुरे बुरी सब कोई । कहत सजय सुनियाना ।  
 करतार हथ्य केती कला । कियो सुलम्म अप्पना ॥  
 प पग देह मट्टी मिलै । दीदे देषि सु सप्पना ॥ छं० १४९ ।<sup>१</sup>

अस्तु इस प्रकार वीर मकवाना अपने स्वामिधर्म एवं आत्म सम्मान की रक्षा करता हुआ वीरगति को प्राप्त हुआ । रासो के प्रत्येक पात्र को ऐतिहासिक मानना नितान्त भ्रम है । वीर मकवाना के चरित्र में ऐतिहासिक तथ्य खोजना ऐसा ही है जैसे बालू को पेर कर तेल निकालने का प्रयत्न करना ॥

मलैसिह—'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार यह पृथ्वीराज चौहान के प्रसिद्ध सामन्त पंजूनराय का पुत्र था । संयोगिता अपहरण सम्बन्धी युद्ध में पृथ्वीराज चौहान के पक्ष से युद्ध करता हुआ वीरगति को प्राप्त हुआ था ।<sup>२</sup> इनकी ऐतिहासिकता संदिग्ध है ।

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १३९, स० १२ ।
२. वही, छं० १४०-४१, स० १२ ।
३. वही, छं० १४८-४९, स० १२ ।
४. तवै देषियं तात पुंत्त चरितं । मनो पिधिय बाह आयास मितं ॥  
 घट्यौ हथ्य वथ्यं दुहथ्यत नण्यौ । मिरयौ हथ्य वथ्य रस वीर घण्यौ ॥ छं० १५०४ ।  
 लगे घाव रुटिठ परे घोर पेतं । उपारयो सुविप्र भयो सो अचेतं ॥  
 पर्यौ यो पजूनं सु पुतं उच्चार्यौ । भयो इत्तने मान अस्तमित चाल्यौ ॥ छं० १५०५, स० ६१,

महादेव राय—‘कनवज्ज समय ६१’ के अन्तर्गत कवि चन्द वरदायी कथित कन्नौजपति पंगराज की राज्यसभा में उपस्थित सामन्तों के नाम तथा ग्रामोल्लेख करते हुए, महादेवराय का वर्णन भी प्रस्तुत किया है। कवि चन्द के अनुसार महादेव राय तलवार चलाने में अत्यन्त निपुण एवं दक्ष था।<sup>१</sup> यहाँ तो कवि ने संकेत मात्र प्रस्तुत किया है, कि वीर महादेव राय असि-युद्ध में निपुण था। योद्धा का वास्तविक परिचय तो रण क्षेत्र में ही मिलता है। संग्रोगिता अपहरण सम्बन्धी पृथ्वीराज चौहान तथा जयचन्द के मध्य होने वाले भीषण संग्राम में इस वीर ने पंगराज से युद्ध हेतु आज्ञा मांगते हुए निवेदन किया—

आइयौ राइ महादेव तब, नाइ सीस बुल्यौ वचन ॥

सग्रहौ राज पृथ्वीराज को, सद्यौ चहु जगिनि सयन ॥ छं० १४०४।<sup>२</sup>

चौहान पृथ्वीराज को बन्दी बनाने की प्रतिज्ञा कर वीर महादेव रौद्र रूप धारण कर विकट युद्ध हेतु अग्रसर हुआ, पृथ्वीराज के सामन्त चालुक्य तथा महादेवराय के मध्य घोर द्वन्द्व युद्ध हुआ।<sup>३</sup> युद्धान्तर्गत पराक्रमी महादेवराय का एक भरपूर हाथ चालुक्य योद्धा का काम तमाम करने के लिए पर्याप्त सिद्ध हुआ। किन्तु मरणोन्मुख चालुक्य योद्धा के अचूक बार ने उसके लिए भी मोक्ष द्वार खोल दिये—

आइयौ ताम महादेव तम्म, चालुकक हयौ संगी उरम्म ।

युअ लगि वीर मिलि विषम घाव आवद्ध तुटि दुअ वीर तांव ॥ छं० २४१६।<sup>४</sup>

दोनों ही पराक्रमी वीर विमानारूढ़ हो स्वर्ग लोक को गये तथा वहाँ पर उनका स्वागत तथा सम्मान समान रूप से अप्सराओं ने किया।

मुंगल-मेवातपति—मेवातपति राजा मुंगल, अजमेरपति राजा सोमेश्वर के आधीनस्थ शासक था।<sup>५</sup> एक दिन अजमेरपति सोमेश्वर ने अपनी राज्यसीमा की वृद्धि हेतु मुंगल नरेश को एक पत्र लिख भेजा कि यदि तू भूमि की कामना करता है, तो हमारी आधीनता स्वीकार कर, हमें कर देना स्वीकार करो, अन्यथा रण की भीषणता से भयभीत होकर अपना राज्य स्वयं त्याग दो।<sup>६</sup> सोमेश्वर के दूत द्वारा जब मुंगल नरेश को उपर्युक्त सूचना प्राप्त हुई तो उसने भी वीरोचित उत्तर देते हुए सोमेश्वर की चुनौती स्वीकार कर ली।<sup>७</sup> अब युद्ध

१. महादेव समह हर सिंघ बंक । मेहा नइंदसद सार कंक ॥ छं० ५३३, स० ६१।

२. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १४०४, स० ६१।

३. वही, छं० २४०६, स० ६१।

४. वही, छं० २४१६, स० ६१।

५. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० १, स० ७।

६. वही, छं० ३, स० ७।

७. वही, छं० ९, स० ७।

अवश्यम्भावी हो गया। जहाँ-तहाँ युद्ध भेरियाँ बजने लगीं। घोड़ों पर जीने कसी जाने लगीं। योद्धागण वीर रस से परिपूर्ण हो गए। दोनों ओर की सेना में भयंकर युद्ध हुआ। योद्धाओं ने अपने-अपने अरमान पूरे किए। वीर पृथ्वीराज ने अपने पिता की अप्रत्यक्ष पुकार पर रात्रि में ही मुंगल सेना पर आक्रमण कर दिया। अतः मंगद नाम के राठौर वीर ने, जो मेवातपति का स्थान रक्षक था, कवच धारण कर स्वामिधर्म का पालन किया। नरनाह चाचा कन्हू ने इसका सामना किया।<sup>१</sup> मुंगल नरेश की सेना का वामपक्षी सेना नायक वाजिन्द खौ था, जिसके समक्ष कैमास आ डठा।<sup>२</sup> सेना के दक्षणी भाग के सेना नायक कछवाहा के सामने पृथ्वीराज का सामन्त रामराय बड़गुज्जर आ गया।<sup>३</sup> अतः वीरों की भारकाट से मुंगल-सैनिक विचलित हो भागने लगे तथा मुंगल नरेश को बन्दी बना कर हाथी पर डाल दिया गया—

मई जीति सोमेश सुब, लिय मुंगल गज मेलि ॥

सोधि खित्त सच दिग्घ लघु, वीर वरणी केलि ॥ ३७।<sup>४</sup>

ग्रन्थकार ने स्पष्ट सूचना नहीं दी कि मुंगल को परास्त कर उसका क्या किया, किन्तु अनुमान लगाया जा सकता है कि, सोमेश्वर ने उसे अपनी आधीनता स्वीकार करा कर मुक्त कर दिया होगा, क्योंकि कवि ने आगे लिखा है कि—कालान्तर में वह फिर स्वतंत्र हो गया तथा उसने दिल्ली की कुछ भूमि पर अपना अधिकार भी कर लिया।<sup>५</sup> सूचना पाकर पृथ्वीराज चौहान ने अपने श्रेष्ठ मंत्रियों से मंत्रणा करके श्रेष्ठ ढग से कूच कर दिया तथा जमुना किनारे ओधट घाट पर अपना शिविर डाल दिया। गुप्तचरों ने मेवातपति मुंगल को पृथ्वीराज के आक्रमण की सूचना दी। सूचना पाकर मुंगल ने अपने मंत्रियों को मंत्रणा हेतु एकत्र किया, तथा युद्ध हेतु तैयारियाँ होने लगीं। वीर पृथ्वीराज ने मुंगल की युद्ध की तैयारियाँ सुन कर कहा—हे सामन्तों ! तुम मुंगल को अपनी समानता का नहीं समझते थे किन्तु वह तो युद्ध हेतु तैयार होकर आ रहा है। इसीलिए कहता हूँ कि—शत्रु, सर्प तथा मुग्धा को निर्बल नहीं समझना चाहिए।<sup>६</sup> पृथ्वीराज के आवाहन पर समस्त सामन्तगण, जिन्हें अपने पराक्रम पर विश्वास था, अपने-अपने अश्वों को छोड़ कर शत्रु सेना में पैदल ही धस गये।<sup>७</sup>

१. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० १८, स० ७।

२. वही, छं० १९, स० ७।

३. वही, छं० २०, स० ७।

४. वही, छं० ३७ स० ७।

५. चित्त मुंगल चित्तयो, राज प्रियराज वीर वर।

मद्धि थानं मेवात, रह्यो चंपे सु दिल्ली घर ॥ छं० ४, स० १५।

६. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० १६, स० १५।

७. वही, छं० २४, स० १५।

सिंह प्रमार, जैत प्रमार, आदि योद्धाओं ने मेवातपति मुंगल के सामन्त कछवाहा को घर दबाया ।<sup>१</sup> वीर सोलंकी सारंग के समक्ष शत्रु चित्र लिखित सा रह गया तथा अप्सराएं विघ्नम में पड़ गई कि वे किसको वरण करें क्योंकि—

असित असित दोई वीर हूँ, ताप ढक वर अंत ॥

ज्यों जानौ तन संगूहौ, वर भारथ्ये कंत ॥ ३० ।<sup>१</sup>

युद्ध का अन्त महाराज पृथ्वीराज की विजय में हुआ । मेवातपति मुंगल पृथ्वीराज के हाथों परास्त हुआ तथा बन्दी बना लिया गया । बलवान मुंगल नरेश की बंदी बनाकर, पृथ्वीराज विजय प्राप्त कर अपने स्थान की प्रत्यावर्तित हुआ । देश के अगणित शत्रु उसका पराक्रम देख कर यशगान करने लगे । किसी भी शत्रु का चहुवान नरेश से रणक्षेत्र में सामना करने का साहस न हुआ । अतः युद्ध में यश का सेहरा बाँध कर शत्रु को पराजित कर पृथ्वीराज घर आया तथा रानी इच्छनी के रूप सरोवर का हस वन क्रीडा करने लगा ।

प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता म० म० ओझा सोमेश्वर तथा मुंगल के मध्य होने वाले युद्ध को ऐतिहासिक न मानते हुए लिखते हैं—‘रासो में लिखा है कि सोमेश्वर ने मेवात के मुंगल राजा ( मुग्दल राय ) से अन्य राजाओं के समान कर मांगा । उसके इन्कार करने पर सोमेश्वर ने उस पर चढ़ाई कर दी । पृथ्वीराज भी कुछ समय बाद अजमेर से चला और रातोंरात मुंगल सेना पर उसने आक्रमण कर दिया । युद्ध में मुंगल पराजित हुआ । मुंगल राजा का जेष्ठ पुत्र वाजिद खां मारा गया और वह स्वयं कैद हुआ ।

यह कथा कल्पित है । सोमेश्वर के समय में तो मेवात प्रदेश अजमेर राज्य के अन्तर्गत था । वहाँ कोई स्वतंत्र राजा नहीं था और मुगलों का तो क्या, अन्य मुसलमानों तक का उस प्रदेश पर अधिकार नहीं था । सोमेश्वर की, जीवित अवस्था में पृथ्वीराज इतना बड़ा न था कि युद्ध में जा सकता ।<sup>२</sup> ओझा जी के विशुद्ध कविराव मोहनसिंह पृथ्वीराज तथा मुंगल नरेश के युद्धों को ऐतिहासिक मानते हुए लिखते हैं कि—‘मेवाती मुंगल क्षत्रिय था । सोमेश्वर तथा पृथ्वीराज के साथ इसके युद्ध होते रहे । बाद में महामंत्री कैमास के दो बहिनें थी, उनमें से एक मुंगल को तथा दूसरी पृथ्वीराज को व्याह दी गई । इस प्रकार सम्भव है उस दक्ष मंत्री कैमास ने आपसी विद्रोह की समाप्ति की’ ।<sup>३</sup>

कविराव मोहनसिंह ने मुंगल तथा कैमास की बहिन की विवाह की बात ‘रासो’ के आधार पर ही की है—रासो में स्पष्ट लिखा है—

१. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० २५, स० १५ ।

२. वही, छं० ३०, स० १५ ।

३. ओझा, पृथ्वीराज रासो का निर्माण काल, पृ० ५७, कोशोत्सव स्मारक संग्रह ।

४. कविराव मोहनसिंह, पृथ्वीराज रासो, प्रथम भाग, सम्पादकीय पृ० १२, साहित्य संस्थान उदयपुर, स० २०१२ ।

काल भ्रात कैमास, खलन चांमड खग खद्विय ।  
 सूर नूर सम - सत्य, सकति पूजा सुर सद्धिय ॥  
 मेवाती मुंगल सु तथ्य, पुत्रि इष्ककह परनाइय ।  
 विय पुत्री सिरताज, सुती पृथ्वीराजह व्याहिय ॥  
 दो जान मान चहुआन दल, प्रथम कलस सेंभरि धनिय ।  
 उच्छाह बहुत मंगल करहि, गीत गांन अलि सुर बनिय ॥ १० ।

उपर्युक्त छन्द से स्पष्ट है कि कैमास ने अपनी बहिन का विवाह मुंगल से किया था । सम्भव है ऐसी घटना हुई हो, किन्तु 'रासो' के आधार पर ही उसे प्रमाणिक एवं ऐतिहासिक घटना मान लेना नितान्त भ्रम है । जब-तक कोई ठोस प्रमाण उपलब्ध नहीं होता तब-तक उपर्युक्त घटना में संदेह ही अधिक रहेगा । अब भी इस विषय पर स्वतंत्र रूप से अनुसंधान की आवश्यकता है । यहाँ पर सामग्री अभाव के कारण इस विषय पर निर्णायक मत देना भूल होगी ।

रतनसिंह—'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार चित्तौड़पति रावल समरसिंह के छोटे पुत्र का नाम रतनसिंह था । रावल समरसिंह ने निगमबोध की यात्रा की कामना करते हुए अपने समस्त सामन्तों को एकत्र करके राजकुमार रतनसिंह को चित्तौड़ की गद्दी का उत्तराधिकारी घोषित किया, जिसे समस्त सरदारों ने प्रसन्नता पूर्वक स्वीकार कर लिया ।<sup>१</sup> राजकुमार रतनसिंह के राज्याभिषेक का शुभ दिन शोधा गया । अकूगढ़, जालौर बूंदी, गोरगढ़, धार, उज्जैन तथा रणथम्भौर आदि के राजाओं के नाम निमंत्रण भेजे गये । उन राजाओं की उपस्थिति में राजकुमार रतनसिंह को गद्दी का भार सौंपा गया तथा देवराज को किले की रक्षा का भार सौंप कर रावल जी अपनी पत्नी पृथा सहित दिल्ली की ओर रवाना हो गये ।<sup>२</sup> रतनसिंह का इसके अतिरिक्त विवरण प्राप्त नहीं होता है ।

रनधीरराय—'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार रनधीरराय जुव्वनगढ़ का स्वामि था । जिस समय रावल समरसिंह पृथावाई के साथ निगमबोध की ओर अग्रसर हो रहे थे और मार्ग में उनके डेरे आमेर में पड़े हुए थे । उसी समय रनधीरराय को किसी ने बहकाया कि यदि इस अवसर पर आक्रमण करके रावल समरसिंह के डेरों को लूट लिया जावे तो अपार सम्पत्ति

१. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० १०, स० १६ ।

२. समा करी रावर समर । बंठे सूर सवान ।

निगम बोध भेटन सुतिय । चलिये दिल्ली थान ॥ छं० ४ ।

चित्र कोट गढ़ पट्ट कज । रावल पुत्र रतन ।

निट्ट सु रषिय हट्ट करि । घन प्रमोधि परिजन ॥ छं० ५, स० ६६ ।

३. पृथ्वीराज रासो, नामरी प्रचारिणी समा काशी, छं० ७-१०, स० ६६ ।

हाथ लगेगी, नाम ही जावेगा तथा आवेर की भूमि भी अपने हाथ आ जावेगी । रनधीरराय को यह शिक्षा-प्रिय लगी अतः उसने सेना को साथ लेकर रावल समरसिंह पर आक्रमण कर दिया—

कूच कूच करि पँर, प्रथा डोला दोइ सथ्यह ॥  
सत्त केक वाजिन्न, चले उमराव समथ्यह ॥  
किय डेरा आंमेर, कोस दोई उप्पर कदिठ्य ॥  
सहस तीस दोइ सथ्य, जुव्वन गढ़ रायां हट्टिय ॥  
किन कही बत्त रावर समर, इह राजा चितोरपति ॥  
तव कही बत्त रन धीर भर, इह अलोच किज्जं सुसति ॥ छं० २४ ।'

रनधीरराय के आक्रमण की सूचना पाकर रावल समरसिंह ने भी उसका सामना करने के लिए अपनी सेना को ब्यूह बद्ध किया । रनधीरराय के साथ वाइस हजार सवार और पैदल तथा एक हजार हाथी थे । उसने अपनी सेना को चक्र ब्यूहाकार बनाकर अंधरात्रि में रावल समरसिंह पर आक्रमण किया । रावल समरसिंह की ओर से कन्हूराय ने रनधीर का सामना किया । कन्हूराय ने शत्रु के ब्यूह को वेधकर रनधीर के समक्ष उपस्थित हो, उसका सामना किया । कन्हू ने सांग के प्रहार से रनधीर के कलेजे को छलनी बना दिया, जिससे वह बेहोस होकर गिर पड़ा तथा उसके अन्य साथी भाग खड़े हुए—

पर्यौ सथ्य रनधीर । भंजि सेना चालुषकी ॥  
तीन सत्त धर परे । जानि लगि तन भुकि ॥  
सौप्यो रन सी सोढ । कन्हू पट्टे बघायं ॥  
प्रथा कंत हुअ जैत । सषी युगतान बंधायं ॥  
दं वास सथ्य अप्पन सुपर । वीस रोज मुक्काम किय ।  
जिन घाव अंग लगे मरन । तिनह सीप चित्रकोट दिय ॥ छं० ४४ ।'

रयसल्लराय कमधज्ज—'रासो' में अनेक कमधज्ज वंशी योद्धाओं का उल्लेख मिलता

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० २५, स० ६६ ।
२. वही, छं० ३७, स० ६६ ।
३. वही, छं० ४४, स० ६६ ।
४. जयचन्द गाहुड़वाल को स्थान-स्थान पर रासोकार ने राठौर अथवा कमधज्ज वंशी लिखा है । स्पष्ट है कि, उसके सम्बन्धियों के लिए भी रासोकार ने कमधज्ज शब्द का प्रयोग किया है । 'कमधज्ज' शब्द को डॉ० त्रिपिनबिहारी त्रिवेदी ने रेवातट (द्वितीय भाग, पृ० २५) में जयचन्द की वंशक्रम से चली आती पदवी अथवा विशेषण माना है । टीड ने अपने राजस्थान में लिखा है "कन्तौज वाले राठौर वंशी राजपूत थे और

है। पंगराज की सभा का वर्णन करते हुए उन्हें सभा में उपस्थित बताया गया है। वीर रयसल्लराय, पंगराज के दक्षिण पार्श्व में स्थित था। 'दक्षिणिय अंग रयसल कमंध।' रासोकार के मत से स्पष्ट है कि यह कोई राजवंशी व्यक्ति था किन्तु क्षेपककारों की कल्पना ने उसे कान्यकुब्जेश्वर राजा जयचन्द का चचेरा भाई बना डाला। यद्यपि उद्धृत पंक्ति से पारस्परिक सम्बंध का कोई संकेत तक प्राप्त नहीं होता। कमंध शब्द से रासोकार का सम्भवतः आशय यही रहा होगा कि वीर रयसल्ल समान वंश का कोई योद्धा था।

संयोगिता अपहरण सम्बंधी पंगराज तथा पृथ्वीराज के मध्य होने वाले संग्राम में नवमी के दिन जब सात घड़ी दिन शेष रह गया तथा पंगसेना छिन्न-भिन्न होने लगी तब इस वीर पराक्रमी योद्धा ने घोर मारकाट मचा कर, पृथ्वीराज चौहान की सेना पर धावा बोल दिया—

घरिय सत रवि सेष, भयो कलहत ताम भर ।  
वज्र घात सायंत, अगि लगी सु षग भर ॥  
दल हलंत दल पंग, दंग चहुआन जान भय ।  
तब आयी रयसल्ल, विरद मर सूसूत राय ॥  
हांकत हक्क वर उच्चरिग, आतुल पान आजन हुआ ।

कमधज्ज लगी कमधज्ज छल, वीर धीर विजयास सुअ ॥ १७५६ ।

साहित्य संस्थान उदयपुर से प्रकाशित 'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार वीर रयसल्लराय का

कामध्वज उनका विशेषण या पदवी थी। कामध्वज का अर्थ है कि जिसकी ध्वजा में कामदेव अंकित हैं और कन्याध्वज का अर्थ है कि जिसकी ध्वजा में कुमारी कन्या अंकित है। सम्वत् ५२६ ( ४७० ई० पु० ) में नयनपाल ने कन्नौज पर अधिकार किया और तभी से राठौरों ने 'कामधुज' पदवी ग्रहण की।' टांड, राजस्थान, जिल्द २, पृ० ५ ।

किन्तु प्रसिद्ध इतिहासकार डॉ० रमाशंकर त्रिपाठी उपर्युक्त समाधान से संतुष्ट नहीं हैं, प्रथम तो राठौर-राष्ट्रकूट दो जाति हैं जिनका गाहड़वालों से कोई सम्बंध नहीं पुनः कमधज्ज भी कवि द्वारा प्रयुक्त विशेषण मात्र है उसका ऐतिहासिक चिन्ह कोई नहीं मिलता। डॉ० रमाशंकर त्रिपाठी, हिस्ट्री आव कन्नौज। 'रासो' में अनेक स्थलों पर जयचन्द के लिए 'कमधज्ज' विशेषण प्रयुक्त हुआ है। पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ८, स० २६। छं० ३९, स० २६। छं० २२, स० ३१। छं० ३०३, स० ६१। छं० ६५८, स० ६१ आदि।

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ५३०, स० ६१।

२. वही, छं० १७५६, स० ६१।

विरद 'भेरो भूत' था । 'काम घञ्जह रयसल्ल , विरद भेस सुभूत गह ।' घोर संग्राम के अनन्तर नवमी की रणचण्डी ने विश्राम लिया—

संभ सपत्तिय नृप तिरन , विय पारस पर कोट ।

एहै सूर सामन्त जकि , देषि नृपति तन चोट ॥ १७७० ।

संक्ष सपत्तिय रति भर , फुनि सज्जै दल पंग ।

चलिंग पति पहुपंग मिली , जुद्ध भरनि किय जंग ॥ छं० १७७१ ।

घोर रयसल्लराय कमधञ्ज, इसी घोर संग्राम में, पंग पक्ष की ओर से युद्ध में पराक्रम प्रदर्शित कर पराभव को प्राप्त हुआ ।

रावन—रासोकार के मतानुसार कन्नौजपति राजा जयचन्द गाहड़वाल का नगर रक्षक एवं सेनाध्यक्ष का नाम रावन था । सर्वप्रथम रावन का परिचय 'कनवज समय ६१' में प्राप्त होता है । राजा पंगराज ने कवि चन्द वरदायी के काव्य कौशल से सन्तुष्ट होकर रावन को कवि चन्द के रहने की व्यवस्था करने का आदेश दिया था । 'पंगराज का आदेश पाकर नगर रक्षक रावन कवि चन्द को गन्तव्य स्थान पर ले गया ।' कवि चन्द को महलों का उपयुक्त निर्देश करते हुए उसने विनम्रता से निवेदन किया—

डेरा सुकवि विरमतम , करि कवि लषौ चरित ।

राजनीति राज गति चरित , चितगनि कहौ सुचित ॥ छं० ७२७ ।

कवि चन्द का यथा विधि आदर-सत्कार कर तथा रहने का उचित प्रबंध करके रावन पुनः पंगराज की सेवा में आ उपस्थित हुआ । 'पंगराज को पृथ्वीराज की उपस्थिति की शंका होने पर वह कवि के आवास की ओर शंका निवारणार्थ अग्रसर हुआ । स्थिति को देखते हुए व्यवहार कुशल रावन भी अपनी सेना लेकर पंगराज के साथ ही कवि के आवास की

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १७७०-७१, स० ६१ ।

२. वही, ७२४, स० ६१ ।

३. आयस रावन सथ्य चलि , अपुत एक भर सथ्य ।

अग राह सों संचरै , भरे उचावहि वथ्य ॥ छं० ७२५ ।

पच्छिम विसि पुर चन्द सकवि सों नृपति रुपती ॥

रावन सथ्य समथ्य वचन सो कवि रस ततो ॥

धवल मक्षस सपन्न , कलस कुंदनह वज्र दुति ॥

जठित धंभ जगमगहि कनक वासन विचित्र मति ॥ छं० ७२६ स० ६१ ।

४. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ७२७, स० ६१ ।

५. वही, छं० ७२८, स० ६१ ।



ओर चल पड़ा ।<sup>१</sup> नीति कुशल रावन ने अत्यन्त चतुरता से पंगराज के आगमन की सूचना दी तथा स्वयं ने पृथ्वीराज तथा उसके १०६ सामन्तों की उपस्थिति की पूर्व सूचना के अनुसार कवि चंद वरदायी का निवास स्थान चारों ओर से घेर लिया ।<sup>२</sup>

संयोगिता अपहरण के उपरान्त पंगराज तथा पृथ्वीराज के मध्य होने वाले युद्ध में रावन ने अपनी सेना का नेतृत्व करते हुए अपार पराक्रम एवं रणकुशलता का परिचय प्रस्तुत किया—

मोरि हृथ्य विठ्ठारि काल विड्डारि भवन को ।  
तिरस जानि रस मुठ्ठि चलयो मोरन्न पवन को ॥  
काम अंध दिष्णो न कोइ सोच सुद्धित मदपानिय ।  
राज मद् राजनिय ग्यान सुद्धित पुर पानिय ॥  
करि देषि मंत रावन वलिय, उप्पर हरि धाव करन ।  
जो पम्मचद चंपै विसल तन्त मत कवहं करन ॥ छं० १०१४ ।  
ज्यो कलंक पर हरै - हान गगा तिथ्यह वग ।  
अयम धूम पर हरै, अवस पर हरै सुजस भग ॥  
माह थवथ ससि तजै देव धूम तजै सुद्र नर ।  
चंप भवर गुन तजै योज जिम तजै रिष्य गुरु ॥  
इम मुक्कि करिय रावन वलिय, राज सेन उप्पर परयो ।  
जय जाल काल हृथ्यो सुवर, तापच्छे क्रम क्रम परयो ॥ छं० १०१५ ।<sup>३</sup>

वीर रावन की सेना ने पृथ्वीराज के सामन्तों को चारों ओर से घेर लिया, जिससे युद्ध और भी भयंकर एवं विकराल हो उठा ।<sup>४</sup> दिल्लीपति चौहान पृथ्वीराज द्वारा पंग पुत्री संयोगिता के अपहरण की सूचना वीर रावन ने अपनी समस्त सेना को पुकार-पुकार कर दी, जिससे सेना के समस्त वीर उत्तेजित हो उठे ।<sup>५</sup> वीर रावन पराक्रमी एवं कुशल सेनाध्यक्ष ही नहीं था अपितु वह पंगराज को समय-समय पर मंत्रणा देने में भी अपनी कुशलता का परिचय देता था । युद्ध की भीषणता को देखकर उसने पंगराज के पक्ष से राव वनसिंह तथा केहरि कंठीर वीरों द्वारा सेनापतित्व किए जाने का आदेश प्रदान करने का परामर्श कान्यकुब्जेश्वर जयचन्द को दिया था—

१. अगिमोकलि रावन नृपति, हक्कारयो कवि राज ।  
मट्ट हट्ट मोकलि सुवर, कंक विसाहन काज ॥ छं० ९०९, स० ६१ ।
२. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ९११-१२, स० ६१ ।
३. वही, छं० १०१४-१५, स० ६१ ।
४. वही, छं० १०१२, स० ६१ ।
५. वही, छं० १३९३-९५, स० ६१ ।

प्रथम राव धन सिध , राव धनवीर जगि करि ।

हेत सुमन जगौत , उनै पहुपंग पूरिपरि ॥

केहरि कंठोर पठौ सुनूप , इन समान छित्री न छिति ।

अड्डौ सुधरो विमहार धन , रावन रिन सिध ईय पति ॥ १३९७ ।<sup>१</sup>

रावन योद्धा ही नहीं वरन् स्पष्टवादी वक्ता भी था । युद्ध की भीषणता देखकर जब पंगराज स्तब्ध से दीख पड़े, तब रावन ने स्पष्ट शब्दों में कहा—

तब रावन उच्चरै , नृपति इह मति सुझट्यौ ।

दीन होइ रा पंग , सरित डंडी गुर मिट्यौ ॥

इह जोगिनिपुर इंद , गंजि गोरी गज बंधन ।

इन सु सत्थ सामन्त सूर अति रन मद महन ॥

इह गहन बहन इच्छै नृपति मर समूह मोहन करै ।

नव अश्व घाज नवनव नृपति नव सुजोरि जग्गह धरै ॥ छं० १४०० ।<sup>१</sup>

सेनाध्यक्ष रावन के इस प्रकार के वचन सुन कर पंगराज ने भीरजमाम को भी युद्ध हेतु अग्रसर होने का आदेश दिया किन्तु सेनाध्यक्ष इस आदेश से सन्तुष्ट नहीं हुआ उसने पंगराज को स्वयं युद्ध करने के लिए सम्मति दी ।<sup>१</sup> किन्तु पंगराज पर उसकी बात का कोई प्रभाव न हुआ । पंगराज का नकारात्मक उत्तर पाकर सेनाध्यक्ष रावन ने पुनः युद्ध करने को कहा—

फिरि रावन उच्चारयौ , जग्य मंडि सकुमति किये ।

जैन जग्य आरम्भ प्रथम , चहुआन बंध लिये ॥

बहुत मत्त चुक्कए , अवहि तुम मंत सुमंते ।

सदेसैं व्यौहार , कहौ किन होतैं मंतैं ॥

व्यह्व बवस मंत्रिय मरन , चहुआन गहियन गहिय ।

संवेर जाय कन्याखन , जुगति पसरिय रहिय ॥ छं० १४०८ ।<sup>१</sup>

पंगराज पर अपनी बात का कोई प्रभाव न होता देखकर, सेनाध्यक्ष रावन ने उसे धिक्कारा भी ।<sup>१</sup> युद्ध के भीषण परिणाम से दूरदर्शी रावन भली-भाँति परिचित था । उसकी विचारधारा से अन्य कमधृज-सैनिक सहमत थे—

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १३९७, स० ६१ ।

२. वही, छं० १४००, स० ६१ ।

३. फिरि रावन नृप सों कह्यौ तात परयौ लुहि काम ।

जब लगि अप्प न नचियौ , काम न होइ सुताम ॥ छं० १४०५, स० ६१ ।

४. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १४०८, स० ६१ ।

५. के प्रारभन प्रिय मरन , मरन सु अगगर राइ ।

जग विगारन जूह चढ़ि , लिये सु कन्या जाई ॥ छं० १४१० ।

फिरि रावन उच्चरिय सुनौ कमधज्ज इलावर ।  
 अरि वधन इछियौ सुतन वछियै भरन भर ॥  
 प्रथम भूल दिज्जियौ च्याज आवै घुरजन्ती ।  
 इन कज्जै इलभार देव करयौ छिति लिन्ती ॥  
 छितिप्रीपम बुढ पावसह वैन पहुजु पंगहु सुनिय ।  
 कायर सु मीर भजै न भर , भर भजै समरि धनिय ॥ छं० १४२५ ।

कमधज्ज सेना के स्वामिभक्त सैनिक अपने नृपति को जुहार कर रण में जूझने को चल पड़े । सेनाध्यक्ष एवं नगर रक्षक रावन को सम्मुख कर, कान्यकुब्जेश्वर स्वयं युद्ध हेतु अग्रसर हुआ । युद्ध की भीषणता देखकर पल मात्र के लिए यह आशंका होने लगी कि अब दिल्लीपति चौहान पृथ्वीराज की सेना न टिक सकेगी तथा शीघ्र ही वह बन्दी बना लिया जावेगा ।<sup>१</sup> चौहान पृथ्वीराज के दल के पराक्रमी एवं रणकुवेर सामन्त लंगरीराव, लौहाना आजानवाहु, गोविन्दराव गहलौत, नरसिंह राय, पज्जून, चंद पुंडीर तथा कूरम्भराय आदि मोक्ष को प्राप्त हुए । मोरचे पर मध्याह्न के प्रखर सूर्य में वीर पल्हनराय की ज्योति भी सूर्य में तिरोहित हो गई, किन्तु रण वांकुरा रावन अविचल रूप से युद्ध करता हुआ शत्रु-पक्ष की ओर अग्रसर होता रहा ।<sup>२</sup> पृथ्वीराज के कुशल एवं पराक्रमी सामन्त सारंगराय सोलंकी का सेनाध्यक्ष रावन से सामना हुआ । दोनों वीरों ने अपार पराक्रम का प्रदर्शन किया जिसमें सारंगराय सोलंकी पराभव को प्राप्त हुआ—

सोलंकी सारंग वीर , रावन आरुद्धिय ।  
 दुम सुहृथ उत्तग तेग , लम्बी सां बुद्धिय ॥  
 दो भरदह आरुद्ध , रुद्ध मान क्षिल्लोरिय ।  
 टोप फुट्टि सिर फुट्टि , छिछ फुट्टिय कवि लोरिय ॥  
 निल वट्टि फुट्टि पलवन्त , वन कैज्वाल माल पावल पसरि ।  
 तन भंग धाय अरि सग करि , पति पहर चालुषक परि ॥ छं० १४७१ ।

मुष भजाव बुल्लौ वचन , नयर कघ कुटवार ।

सुविधि मीर संग्राम भर , तुम रण्यहु हठ वार ॥ छं० १४९१ ।

हहु नाम कुटवार जुनि , परि सामन्तन जंग ।

सवन निरण्यत पंग दल , पर पति दीप पतग ॥ छं० १४९२, स० ६१ ।

१. पृथ्वीराज रातो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १४२५, स० ६१ ।

२. वही छं० १४५३, स० ६१ ।

३. वही, छं० १४६२, स० ६१ ।

४. वही, छं० १४७१, स० ६१ ।

अष्टमी को हुए इस विकराल एवं भीषण युद्ध में पंग-पक्ष के अनेक योद्धा पराभव को प्राप्त हुए। अन्य युद्धों में पंग की सेना का नेतृत्व करते हुए अनेक नामों का उल्लेख मिलता है किन्तु रावन का नामोल्लेख तक नहीं हुआ है। ग्रन्थकार रावन के विषय में सर्वथा मौन है। अतः हमें विवश हो कल्पना करनी पड़ती है कि संभवतः सेनाध्यक्ष एवं नगर रक्षक रावन स्वामिधर्म का पालन करता हुआ संयोगिता अपहरण वाले संग्राम में घराशायी होकर वीरगति को प्राप्त हुआ होगा।

रावल समरसिंह—मेवाड़ाधिपति रावल समरसिंह 'रासो' के अनुसार पृथ्वीराज चौहान का बहनोई था। 'पृथा विवाह समय २१' में विवाह प्रसंग इस प्रकार प्राप्त होता है—अजमेर-पति राजा सोमेश्वर ने अपनी कन्या मेवाड़ाधिपति रावल समरसिंह को देने का विचार कर एक पत्र लिखा।<sup>१</sup> रावल समरसिंह अपने युग का पराक्रमी वीर था, उसकी वीरता से प्रभावित होकर ही, सम्भवतः राजा सोमेश्वर ने अपनी पुत्री का सम्बन्ध करना निश्चित किया होगा। योग्यवर जान कर, पुरोहित गुरु राम ने चित्तौड़ पहुँच कर वसंत पंचमी को तिलक कर दिया।<sup>२</sup> ग्रन्थकार ने रावलसमर सिंह की प्रशंसा मुक्त कण्ठ से की है। तत्कालीन शासकों में रावल समरसिंह का महत्व कम न था, उत्तरी भारत की प्रबल शक्तियों में से वह एक था—

नर नरिंद जोगिंद पति मुंजी ढाल विरह ।

उड़गन निकट नरिंद विय, सेवत रहत गिरह ॥ छं० २७ ।

सिगीरा अवधूत, वीर चित्रंग नरिंद ।

कमल पानि सारथ्य अरान तेज कहि चंद ॥

वर कप्पन कालंक, विरद साहन सुरतानं ।

वर प्रव्वत बैराज, भोग जोगह वड़दान ॥

सो महन रंस आरम्भवं, एक रंग रत्नौ रहे ।

कलि काल घाम छिपे नहीं, क्षल हलत दुज्जन दहे ॥ छं० २८ ।<sup>३</sup>

रासोकार के मतानुसार रावल समरसिंह तथा पृथ्वीराज दोनों समान स्तर के शक्ति-शाली एवं पराक्रमी थे।<sup>४</sup> समय आने पर रावल जी विवाह हेतु आए, उस समय रावल की सुन्दरता देखते ही बनती थी। अति आनन्द तथा उत्सव के साथ पृथा का विवाह समरसिंह के साथ हो गया। पृथ्वीराज ने रावल जी को पाणिग्रहण के सुअवसर पर ऋषि केश वंश तथा

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० २, स० २१।

२. वही, छं० ३१, स० २१।

३. वही, छं० २७-२८, स० २१।

४. वही, छं० १३२, स० २१।

चन्द के बेटे जल्ह को दिया ।' साथ ही प्रत्येक भांवरी पर भी कुछ न कुछ देकर अपनी प्रतिष्ठा को बनाए रखे—

एक फिरत भांवरी, साठि मेवात गांम दिय ।  
दुतीय फिरत भांवरी, दुरद दस एक अगगरिय ॥  
त्रितिय फिरत भांवरी, दयौ समरि उदक्क कर ।  
चौथी भांवरी फिरत, द्रव्य दीनौ अनत वर ॥  
चहुआन चतुर चावहिसा, हिंदवान वर भांन विधि ।  
गुन रूप सहज लच्छी सुवर, सहित वीर बंधी जु सिधि ॥ छं० १५९ ।'

इतना ही नहीं गजनीपति शाहबुद्दीन ने भी पृथा के विवाहोपलक्ष में रावल जी को उपहार देकर सम्मानित किया—

सतरि सत तिय अग, वीर गज राज सु अण्णिय ।  
ते लीनों सुरतान, साहि गेरी गोरी किय ॥  
सौ दासी चतुरंग, सत डोलिय अच्चमय ।  
चतुरंग लछ्छि चित्रगदे । वर सोमेश्वर थण्णियो ॥  
बुलाई सजन रावर समर, पंच कोस मिलि जणियो ॥ छं० २१३ ।'

रावल समरसिंह पृथ्वीराज के परम हितैषी थे । 'पृथ्वीराज रासो' इन दोनों के घनिष्ठ सम्बन्ध का स्पष्ट प्रमाण है । 'घन कथा २४' में मंत्री कैमास घन निकालने के पूर्व शत्रुओं के ईर्ष्या, आशंका के कारण पृथ्वीराज को समरसिंह को बुला कर फिर घन निकालने की सम्मति देता है । मंत्री कैमास की आशंका निर्मूल न थी । घन निकालने के पूर्व ही शाह गोरी का आक्रमण हो गया जिसमें पृथ्वीराज को रावल जी से अपार सहायता मिली । रावल जी के युद्ध के परिणाम स्वरूप गोरी की सेना परास्त होकर भाग खड़ी हुई । पुन 'रेवातट समय २७' में रावल समरसिंह को पृथ्वीराज की ओर से गोरी के विरुद्ध युद्ध करता हुआ पाते हैं— 'रावल जी अपने वायु वेगवान अश्व पर चढ़ कर शत्रु के बीच कूद पड़े । उनके मुख से मारो-मारो का शब्द उच्चारण हो रहा था । शत्रुओं के मस्तकों को वृक्ष के पत्तों सदृश्य तोड़ने लगे । सैकड़ों के वक्ष विदीर्ण कर दिए, हड्डियों को कंकड़ों के सदृश्य उड़ा दिया । मेवाड़पति रावल जी ने क्षण मात्र में सुलतान की सेना की घूल उड़ा दी । पृथ्वीराज की सेना के अग्रभाग

१. पृथ्वीराज रासो नगरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १५६, स० २१ ।

२. वही छं० १५९, स० २१ ।

३. वही छं० २१३, स० २१ ।

४. अपपास कढ़न नहि जाइराइ, चित्रंगराव लिज्जै घुलाइ ।

मिलि सुमट तास कढ़दो भंडार, तिन विना बंद मच्चै अपार ॥ छं० १२, स० २४ ।

में ऐसे पराक्रमी वीर रावल जी को युद्ध करते हुए देखा गया । 'रेवातट समय' के छन्द मुक्त कण्ठ से घोषणा कर रहे हैं कि पृथ्वीराज चौहान को रावल जी की सहायता की कितनी आवश्यकता थी—

अनी दौड़ घन घोर ज्यों , घाई मिले कर घाट ।

चित्रंगी रावर विना , करे कौम वह बाट ॥ छं० ६८ ।

'घघर नदी युद्ध' में चाचा कन्ह ने शाह गोरी को बन्दी बना लिया । गोरी से अपार घन राशि लेकर उसे मुक्त कर दिया गया । पृथ्वीराज ने कवि चन्द द्वारा गोरी से दण्ड स्वरूप पाया हुआ स्वर्ण रावल जी के पास भेज दिया । चन्देरीपति शिशुपाल वंशी राजा पंचाइन, राजकुमारी हंसावती के सौन्दर्य की चर्चा सुनकर उस पर आसक्त हो गया । अतः उसने राजा भान को एक पत्र लिख कर दूत द्वारा कहला भेजा कि राजकुमारी हंसावती का विवाह मेरे साथ करें दो या अपना किला छोड़ दो । यह समाचार पाकर भानराय क्रोध से कांप उठा । उसने राजा पंचाइन के प्रस्ताव पर कोई ध्यान न दिया । युद्ध को निकट जानकर उसने महाराज पृथ्वीराज की सरण लेना उचित समझा । पत्र में संव वृत्तान्त लिखकर एक दूत दिल्ली की ओर रवाना कर दिया गया । पत्र में लिखा कि पचास हजार सेना के साथ चन्देरी पति रणथम्भ को धूल-धूसरित करने हेतु अग्रसर हो रहा है । अतः ऐसे कठिन समय में आप ही का एक मात्र सहारा है । आतंक की पुकार सुन कर वीर पृथ्वीराज ने तुरन्त ही रणथम्भ की ओर प्रस्थान किया तथा चाचा कन्ह को चित्तौड़ भेज कर रावल जी को सहायतार्थ बुला भेजा । दोनों की सम्मिलित बाहनी ने आतंक का कण्ठ निवारण किया । द्वारिका यात्रा के समय कवि चन्द रानी पृथा तथा रावल समरसिंह से अपार सम्पत्ति पुरस्कार स्वरूप पाता है । 'द्वितीय हांसी युद्ध समय ५२' में एक बार पुनः रावल जी को पृथ्वीराज की सहायता करता हुआ पाते हैं । इस बार पृथ्वीराज के मंत्री कैमास ने आहुटपति रावल जी को सहायतार्थ बुला भेजा । युद्ध में विजयी होकर कुछ समय दिल्ली में ठहर कर, भेंट स्वरूप २० श्रेष्ठ अश्व तथा ५ हाथी लेकर चित्तौड़ प्रत्यावर्तित हुए ।

रावल जी का चरित्र सात्विक वृत्तियों से परिपूर्ण है । अमरसिंह की बहिन पर हुस्नैन द्वारा बलात्कार होते देखकर उसे उन्होंने मुक्त कराया—

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ६९, स० २७ ।

२. वही, छं० ६८, स० २७ ।

३. वही, छं० ५६-५७, स० ३५ ।

४. लुट्टि लच्छि चित्रंग । राज रिन थंम उवारे । छं० ८५, स० ३६ ।

५. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १८-२५, चन्द्र द्वारिका समय ४२ ।

६. वही, छं० २०३, स० ५२ ।

बंधवर हुस्तेन , वान बल सुवर कु आरिय ।  
 रन जिते दुज्जनह कौह , न मंडे रारिअ ।  
 कोइ न मंडे रारिअ , मेछ सुन्दरी वघेरी ।  
 समर सिंह सुनि कूह , त्रियं वघति फिरि हेरी ॥  
 धोठ पान दै आन , दूद अहस्तन सधै ।  
 धोठ जमन हकार , समर हेतु वर बंधै ॥ छं १३५ ।'

रावल जी के कृत्य के प्रति अत्यधिक कृतज्ञ हो वीर अमरसिंह ने अपनी बहिन का परिणय उन्हीं के साथ कर दिया—

अमर बंध राषी अमर , अगि दीनौ वरमाल ।  
 जस वेली चतुरंग कौ , वरन घल्लि उरमाल ॥ छं १३६ ।  
 जस वेली वरिजौ चतुरंगी , चढ़ि चौडोल ग्रेह अनभंजी ।  
 वरन राव रावल सजोगी , सुघर फेरि चालुक्कत भांजी ॥ छं १३७ ।'

रावल जी दार्शनिक एवं दूरदर्शी प्रवृत्ति के व्यक्ति थे । युद्ध हेतु पृथ्वीराज चौहान का निमंत्रण पाने पर उन्होंने मंत्री कैमास से स्पष्ट शब्दों में कहा था—

हसि जोगिद नरिद , वत्त से मुष उच्चारिय ।  
 एक ग्रघ समूह , भस लढौ पल हारिय ॥  
 श्रव्व प्रिद्ध विटयो , मस चम्पौ जै करिय ।  
 तव सुमत उप्पनौ , मस लढौ गति डारिय ॥  
 मुग बनि कोइ गड्डैति कोइ , कोइक पढ़ कोइ लम्भवै ।  
 देवान बुसकह देवगति , जो निम्मान सु निम्भवै ॥ छं २४ ।'

रावल जी पृथ्वीराज के सम्बंधी एवं सहायक होते हुए भी कोई कार्य ऐसा करने के लिए प्रस्तुत नहीं थे, जो उनके आत्मा सम्मान के विरुद्ध हो । 'घन कथा प्रस्ताव' में पृथ्वीराज चौहान निकाले हुए घन को रावल जी को सहायता के प्रतिदान स्वरूप देना चाहते थे किन्तु रावल जी ने इसका प्रत्यक्ष विरोध किया ।\* रासोकार ने रावल जी को अत्यन्त योग्य व्यक्ति बताया है । युद्ध-प्रयाण समय, रावल जी अपने सैनिकों को संसार की नश्वरता का पाठ पढ़ा

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १३५, स० ३६ ।
२. वही, छं० १३६-३७, स० ३६ ।
३. वही, छं० २४, स० २४ ।
४. वही, छं० ४७२, स० २४ ।

कर युद्ध हेतु उत्साहित करते थे । ग्रन्थकार ने रावल जी की समुद्र की भांति गहन एवं गम्भीर कहा है ।<sup>१</sup>

पृथ्वीराज द्वारा एक बार राजसूय यज्ञ भंग किये जाने पर, पुनः कान्यकुब्जेश्वर के यज्ञ की सफलता हेतु मंत्री सुमंत का कहना मानकर रावल समरसिंह को अपनी ओर मिलाने की चेष्टा की थी । परिणाम स्वरूप कान्यकुब्जेश्वर जयचन्द ने सौ घोड़े, एक हाथी, एक अनवेधा मोती, दस माणिक तथा अनेक मोती की मालाएं देकर रावल जी के पास मंत्री सम्बंध स्थापन का शब्देस ले कर मंत्री सुमंत को भेजा । साथ ही यह भी प्रस्ताव रखा कि वह तथा रावल मिल कर पृथ्वीराज को परास्त करेंगे तथा इस विजयोपलक्ष में रावल जी को पंजाब का आधा भू-भाग प्राप्त होगा । मंत्री सुमंत ने सब समाचार चित्तीड़ पहुंच कर रावल जी से निवेदन कर दिया किन्तु रावल जी ने तत्कालीन परिस्थिति देखते हुए यज्ञ को अनुचित ठहराया तथा इस प्रकार की मंत्रणा देने के लिए मन्त्री को भी बहुत बुरा भला कहा ।<sup>२</sup> एक बार पुनः रावल जी ने अपने त्रिकालदर्शी होने का परिचय देते हुए राजसूययज्ञ को असामयिक बताकर मंत्री सुमंत का समाधान कर दिया ।<sup>३</sup> रावल जी की कटुवृत्ति सहन न कर सकने के कारण, मन्त्री सुमन्त कुपित हो अपने राजा का राजसी आतंक वर्णन करके रावल जी को चुनौती देकर कन्नीज लौट गया ।<sup>४</sup> मन्त्री सुमंत ने राजा जयचन्द को मंत्रणा दी कि पृथ्वीराज को परास्त करने के पूर्व रावल समरसिंह का मद-मर्दन करना नितान्त आवश्यक है । रावल जी एक तो पृथ्वीराज का सहायक होने के कारण यों ही जयचन्द की आंखों में खटकता था दूसरे अपनी योजना का विरोध सुनकर वह क्रोधोन्मत्त हो उठा । तत्काल ही अपनी सेना सुसज्जित कर पंगराज ने मेवाड़ की ओर प्रस्थान कर दिया ।<sup>५</sup> पंगराज का आक्रमण सुनकर रावल समरसिंह भी रण प्रांगण में आ उपस्थित हुआ—

ध्वन सुनिग समरेस , पग आवाज वीर सुर ।

अति अनन्द मति चन्द , दह भंजन सु अरिन घर ॥

वजि निसान घुम्मरिय , चित्त अंकुरिय वीर रस ।

मोह कोह छिति छांह , मुविक अड्यौ सुअंग जस ॥

१. सर समुद्र चित्रंगपति , बुद्धितरा अपार ।

तर्क मीन भेदन अमर , ब्रह्म सु मध्य भंडार ॥ छं० २० ।

षग धारौ लज्जा सुजल , विद्या रवन वखान ।

आनि जीव परमात्मा , आतम पालन ज्ञान ॥ छं० २१, स० ५६ ।

२. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ३६-३७, स० ५५ ।

३. वही, छं० ५१, स० ५५ ।

४. वही, छं० ५९, स० ५५ ।

५. वही, छं० २, स० ५६ ।



श्रुत सीलतन द्विग चित्त अचल , चले हृथ्य उर विफ्फुरहि ।

चित्रंग राव रावन समर , भिरन सुमत मत्तह करहि ॥ छं० ५ ।<sup>१</sup>

सामन्तों ने रावल जी को रात्रि के समय धावा बोलने का परामर्श दिया किन्तु रावल जी ने उसका विरोध कर दिवस के प्रकाश में ही सुकीर्ति प्राप्त करने का प्रस्ताव रखा । निदान घोर युद्ध छिड़ गया । रावल जी के सैनिकों ने पंग दल के छक्के छुड़ा दिए । स्वयं पंगराज को गज छोड़कर अश्वारोहण करना पड़ा । सेना का धैर्य जाता रहा ।<sup>१</sup> अन्ततोगत्वा घमासान युद्ध के अन्तर्गत पंगराज की असंख्य सेना मारी गई, रावल जी के केवल १६ प्रमुख योद्धाओं ने वीरगति प्राप्त की किन्तु विजय श्री रावल जी को ही प्राप्त हुई । पंग सेना परास्त हो लौट आई । राजा जयचन्द का भतीजा कन्ह भी घायल होकर गिर पड़ा, अतः उसे डोली में लिवा कर जयचन्द ने कन्नौज की ओर प्रस्थान किया तथा मेवाड़ में जीत के नगाड़े बज उठे ।

एक रात रावल समरसिंह ने स्वप्न में दिल्ली की जयश्री को मलिन मुख देखकर अपना राज्यभार छोटे पुत्र रत्नसिंह को सौंप दिया<sup>२</sup> जिससे उनका जेष्ठ पुत्र कुम्भा अप्रसन्न होकर बीदर के बादशाह के पास चला गया ।<sup>३</sup> दिल्ली पहुंचने पर वहां की अव्यवस्था तथा पृथ्वीराज को संयोगिता के रूप-जाल में फंसा देखकर उन्हें बड़ा क्षोभ हुआ ।<sup>४</sup> गोरी के आक्रमण का समाचार प्राप्त होने पर पृथ्वीराज चौहान उससे मोर्चा लेने के लिए प्रस्तुत हुआ ।<sup>५</sup> चौहान द्वारा घर लौट जाने की अनुनय से क्रुद्ध हो समरसिंह भी सुलतान से युद्ध करने के लिए एक गया ।<sup>६</sup> इसी युद्ध में अपार पराक्रम का उत्कट प्रदर्शन कर चित्रांगी रावल समरसिंह वीरगति को प्राप्त हुआ—

दिष्टि धान पुरसान । गुर वर जमथ्य उपदिय ॥

समर सिध मुष चहर । हिन्दु मेछन मिलि जुटिय ॥

गिद्धिनि पल सग्रहन । जुथ्य लम्बे रन आइय ॥

श्रोव परत निज्जरत । पत्र जुगिनि लै धाइय ॥

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ५, स० ५६ ।

२. वही, छं० ६८, स० ५६ ।

३. वही, छं० १-२, स० ६६ ।

४. वही, छं० ५, स० ६६ ।

५. वही, छं० ६, स० ६६ ।

६. वही, छं० ७-७०, स० ६६ ।

७. वही, छं० १८०-३३३, स० ६६ ।

८. वही, छं० ३३९-६५, स० ६६ ।

पल चरिय मेछ हिन्दू सहर । अच्छरि मल अति जगु किय ॥

महदेव सीस ववे गरां । काल क्षरपि लीनो नुजिय ॥ छं० १३८७ ।

युद्ध का विषम परिणाम सुनकर संयोगिता के प्राण पखेरु उड़ गए । पृथा अपने स्वामी की सहचरी बनने के लिए प्रेम पथ का विधान करने लगी । उसने सोलह श्रंगार किए, मुक्ताओं का हार धारण किया तथा आभूषणों से अलंकृत, अश्व पर आरुढ़ होकर, वह कमल तथा अक्षत उछालती हुई चली । जगत 'हैहया' शब्द का उच्चारण कर रहा था तथा हर-हर का श्रेष्ठ उच्चारण हो रहा था । रावल समरसिंह की सहगामिनी पृथा अपने हाथों से पृथ्वी पर नारियल तथा फूल चढ़ाती हुई तथा भारतीय परम्परा के आदर्श को अक्षुण्न रखती हुई सती हो गई—

निरधि निधन संजोगि । प्रिथि सज्जी सु सामि सय ॥

हविक हंस तत्तारि । वीर अवरिय प्रेम पय ॥

साजि सकल श्रंगार । हार मडिय मुगता मनि ॥

रजि भूषन हय रोहि । जलिज अच्छित उच्छारति ॥

है हया सह जंपत जगत । हरि हर सुर उच्चार वर ।

सह गमन सिध रावर चले । तजि महि फूल श्रीफल सुकर ॥ छं० १६२० ।

'राजप्रशस्ति काव्य' में समरसिंह का विवरण रासो के समान ही है—मेवाड़ एवं राज-पूताने में यह प्रसिद्ध है कि अजमेर और दिल्ली के अंतिम हिन्दू शासक चौहान पृथ्वीराज की बहिन पृथाबाई का विवाह मेवाड़पति रावल समरसिंह से हुआ था, जो पृथ्वीराज की सहायता करता हुआ शहाबुद्दीन गोरी के साथ युद्ध में मारा गया ।

रायबहादुरगौरीशंकर हीराचन्द ओझा समरसिंह के पृथ्वीराज रासो वाले विवरण को पूर्ण-

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १३८७, स० ६६ ।

२. वही छं० १६२०, स० ६६ ।

३. ततः समर सिंहारव्यः पृथ्वीराजस्य भूपतेः ।

पृथाख्याया भगिन्यास्तु परिरित्यतिहादंतः ॥ २४ ॥

गोरी साहिव दीनेनगज्जनीशेन समरे ।

कुर्वतोऽखर्वगर्वस्य महासामंत शोभितः ॥ २५ ॥

दिल्लीश्वरस्य चौहान नाथस्यास्य सहायकतः ।

सद्वादश सहस्रैस्त्ववीराणा सहितो रणे ॥ २६ ॥

वध्वा गोरीपति देवात् स्वर्ग्यतः सूर्यविवमित ।

भाषा रासा पुस्तकेस्य युद्धस्योक्तिरिव विस्तरः ॥ २७ ॥

—राजप्रशस्ति, सर्ग ३ ।

रूपेण अनतिहासिक सिद्ध करते हुए लिखते हैं कि—‘रासो में लिखा है—पृथ्वीराज की वह्नि पृथा का विवाह मेवाड़ के राजा समरसिंह ( रावल तेजसिंह के पुत्र और रत्नसिंह के पिता ) के साथ हुआ था । जो पृथ्वीराज के पक्ष में लड़ता हुआ शहाबुद्दीन के साथ की लड़ाई में मारा गया ।

यह कथा बिल्कुल कल्पित है, क्योंकि समरसिंह पृथ्वीराज के बहुत समय बाद हुआ । पृथ्वीराज का देहान्त ( वि० सं० १३४९, ई० सं० ११९३ में ) हो गया था । समरसिंह का दादा जैतसिंह उक्त संवत् के बहुत बाद तक विद्यमान था । उसके समय के दो शिलालेखों में से एकलिंग जी के चौक में और दूसरा नादेसमा गाँव के चारभुजा के मंदिर के निकटवर्ती सूर्य मंदिर के स्तम्भ पर तथा दो हस्तलिखित पुस्तकें मिली हैं । दोनों शिलालेख क्रमशः वि० सं० १२७० और १२७९ के हैं । उसी के समय के पाक्षिक वृत्ति<sup>१</sup> वि० सं० १३०९ में लिखी गई । इन प्रमाणों से स्पष्ट है कि जैतसिंह वि० सं० १३०९ तक विद्यमान था । समरसिंह का पिता तेजसिंह वि० सं० १३२४ तक तो अवश्य विद्यमान था, जैसा कि उसके समय के उक्त संवत् के शिलालेख से जो गभीरी नदी ( चित्तौड़ के पास ) के पुल के नवे कोठे ( महराव ) में लगा है, पाया जाता है ।<sup>२</sup> समरसिंह के समय के आठ शिलालेख मिले हैं, जिसमें से प्रथम वि० सं० १३३० का है,<sup>३</sup> जो चीरवे के विष्णु मंदिर की दीवार में लगा है और अन्तिम लेख वि० सं० १३५८ का है,<sup>४</sup> जो चित्तौड़ के रामपोल दरवाजे के बाहर पड़ा हुआ पाया गया । इनसे स्पष्ट है कि रावल समरसिंह वि० सं० १३५८ तक अर्थात् पृथ्वीराज की मृत्यु से १०९ वर्ष पीछे तक तो अवश्य जीवित था । ऐसी अवस्था में पृथाबाई के विवाह की कथा भी कपोल कल्पित है । पृथ्वीराज समरसिंह और पृथाबाई के वि० सं० ११४३ और ११४५ ( इस संवत् के दो ) वि० सं० ११३९ और ११४५, तथा वि० सं० ११४५ और ११५७ के जो पत्र, पट्टे-परवाने नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित हिन्दी पुस्तकों की खोज में फोटो सहित छपे हैं, वे जाली हैं, जैसा कि हमने नागरी प्रचारिणी पत्रिका ( नवीन संस्करण ) भाग १, पृ० ४३२-५२, में बतलाया है ।<sup>५</sup>

‘रासो’ की प्रामाणिकता पर विचार करते हुए श्री अमृतलाल शील ने लिखा है कि—  
‘समरसिंह तथा रत्नसिंह के जो कई दान पत्र मिलते हैं, उनसे प्रमाणित होता है कि समरसिंह

१. सं० १२७९ वि० का लेख, भावनगर प्राचीन शोध संग्रह ।
२. पीटर्सन की तीसरी रिपोर्ट, पृ० १३० के अनुसार सं० १३०९ वि० विरचित ।
३. जे० ए० एस० वी०, जिल्द ५५, भाग १, पृ० ४६-४७; सन् १८८६ ई० ।
४. वियना ओरियंटल जर्नल, जिल्द २१, पृ० १५५-६२ ।
५. विक्टोरिया हाल, उदयपुर में सुरक्षित ।
६. गौरीशंकर हीराचन्द्र औझा; पृथ्वीराज रासो का निर्माण काल, कोशोत्सव स्मारक संग्रह, पृ० ५६ ।

ईसा की चौदहवीं सताब्दी में अलाउद्दीन खिलजी के समय विद्यमान था। इससे प्रमाणित होता है कि समरसिंह पृथ्वीराज का बहनोई अथवा रत्नसिंह पृथ्वीराज का भानजा नहीं हो सकता। चित्तौड़ के राना वंश में एक से अधिक समरसिंह तथा रत्नसिंह नाम के राना हो चुके हैं।<sup>१</sup>

श्री जगदीश सिंह गहलौत एक स्थान पर ओझा जी का समर्थन करते हुए लिखते हैं—‘पृथ्वीराजरासो में लिखा है कि पृथ्वीराज चौहान की बहिन पृथावाई का विवाह इस समरसिंह ( सं० १३३०-१३५८ ) से हुआ था और पृथ्वीराज की तरफ से लड़ता हुआ वह शहाबुद्दीन गोरी के हाथ से युद्ध में मारा गया परन्तु यह सब कपोल कल्पित है, क्योंकि समरसिंह ( समरसी ) पृथ्वीराज के बहुत बाद हुआ था और उसका अन्तिम शिलालेख सं० १३५८ की माघ सुदी १० ( ई० सन् १३०२ ता० १० जनवरी ) का मिला है। इससे पृथ्वीराज के मारे जाने से १०९ वर्ष पीछे तक तो समरसिंह अवश्य जीवित था। अलवत्त यह घटना सामन्तसिंह के समय की हो सकती है’।<sup>२</sup>

इसी पुस्तक में एक स्थान पर लिखा है कि—‘सम्भवतः यही सामंतसिंह जिसे ख्यातों में सामन्त भी लिखा है, चौहान नरेश पृथ्वीराज दूसरे ( सं० १२२६ ) सोमेश्वर और पृथ्वीराज तीसरे के समकालीन थे। यह बात शिलालेख से भी सिद्ध होती है। डूंगरपुर राज्य की पुरानी ख्यातों में इस सामन्तसिंह का विवाह सांभर और अजमेर के चौहानों के यहाँ होना लिखा है। इससे ज्ञात होता है कि यदि पृथावाई के विवाह की बात सत्य हो तो उसका विवाह इसी सामन्तसी के साथ हुआ होगा। पृथावाई को चौहान राजा पृथ्वीराज दूसरे की बहिन या बीसलदेव ( सं० १२१०-१२२० ) की पुत्री मान लिया जाए तो वह अन्तिम हिन्दू सम्राट पृथ्वीराज चौहान ( वि० सं० १२३६-१२४९ ) की बहिन मानी जा सकती है। सामंतसी व समरसी के नामों में थोड़े से अन्तर से भ्रान्त होकर ही पृथ्वीराज रासो के कर्ता ने इन्हें समरसी समझ लिया है। यह भी सम्भव है कि वागड़ राज्य छूट जाने पर ये सामंतसी अपने साले प्रसिद्ध चौहान पृथ्वीराज तीसरे के पास चले आये हों और वहीं शहाबुद्दीन गोरी से युद्ध करते हुए सं० १२४९ वि० में मारे गए हों।’<sup>३</sup>

रायबहादुर ओझा जी भी श्री जगदीश सिंह गहलौत के मत से सहमत हैं, वे लिखते हैं कि—‘वि० सं० १६०० ( ई० सं० १५४३ ) के आस-पास बने हुए पृथ्वीराज रासो के आधार पर सारे राजपूताने में यह प्रसिद्ध है कि सांभर और अजमेर के चौहान वंशी सुविज्यात

१. श्री अमृतलाल शील, चन्दबरदायी का पृथ्वीराज रासो—सरस्वती, भाग २७, संख्या ६, पृ० १९८, जून १९२६।
२. जगदीशसिंह गहलौत, राजपूताना का इतिहास, पृष्ठ १६८।
३. वही, पृ० १९८, फुट नोट-३।

महाराज पृथ्वीराज की बहिन पृथावाई का विवाह मेवाड़ के रावल समरसिंह से हुआ था तथा वह पृथ्वीराज और शहाबुद्दीन गोरी के युद्ध में पृथ्वीराज की सहायतार्थ लड़ता हुआ मारा गया, किन्तु रावल समरसिंह के समय के आठ लेख मिले हैं, जिनमें सबसे पहला वि० सं० १३३० ( ई० सं० १२७३ ) और अंतिम वि० सं० १३५८ ( ई० सं० १३०१ ) अर्थात् पृथ्वीराज के मारे जाने के १०९ वर्ष पीछे तक वह ( रावल समरसिंह ) जीवित था। ऐसी दशा में पृथ्वीराज की बहिन पृथावाई का विवाह उसके साथ होना सर्वथा असंभव है। अलवत्ता मेवाड़ और पीछे से वागड़ के राजा सामन्तसिंह का जिसे ख्यातों में समत सी लिखा है, चौहान वंशी राजा पृथ्वीभट ( पृथ्वीराज दूसरा वि० सं० १२२६-३४, ई० सं० ११६९-७७ ) और पृथ्वीराज तीसरा ( वि० सं० १२३६-४९, ई० सं० ११७९-९२ ) का समकालीन होना शिलालेखों से सिद्ध है। डूंगरपुर राज्य के बड़वे की ख्यात में भी सांभर और अजमेर के चौहानों के यहां सामन्तसिंह का विवाह होने का उल्लेख है। तदनुसार यदि पृथ्वीराज रासो में वर्णित पृथावाई के विवाह की घटना में कुछ सत्य हो तो यही मानना पड़ेगा कि सम्भवतः पृथावाई का विवाह मेवाड़ के रावल सामन्तसिंह ( समतसी ) से हुआ हो। पृथावाई पृथ्वीभट ( पृथ्वीराज दूसरे ) की बहिन या वीसलदेव ( विग्रहराज चौथे वि० सं० १२१०-१२१० ई० सं० ११५३-६३ ) की पुत्री हो, तो भी वह प्रसिद्ध राजा पृथ्वीराज ( तीसरे ) की बहिन ही कही जा सकती है। भाटों की पुस्तकों में सामन्तसिंह के स्थान पर समतसी और समरसिंह के स्थान पर समरसी लिखा मिलता है। समतसी तथा समरसी के नामों में थोड़ा सा ही अन्तर है, इसलिए सम्भव है कि इतिहास के अन्धकार की दशा में पृथ्वीराज रासो के कर्ता ने समतसी को समरसी मान लिया हो। वागड़ा राज्य छूट जाने के पश्चात् सामन्तसिंह कहाँ गया, इसका पता नहीं चलता। यदि वह पृथ्वीराज का वहनोई माना जाय तो वागड़ा का राज्य छूट जाने पर सम्भव है कि वह अपने साले पृथ्वीराज के पास चला गया हो और शहाबुद्दीन गोरी के साथ की पृथ्वीराज की लड़ाई में लड़ता हुआ मारा गया हो।”

डॉ० विपिनविहारी त्रिवेदी श्री ओक्षा जी की भाँति समरसिंह को सामन्तसिंह मानते हुए लिखते हैं कि—पृथ्वीराज की बहिन का विवाह रावल समरसी ( समरसिंह ) के साथ होना किसी प्रकार सम्भव नहीं हो सकता, क्योंकि पृथ्वीराज का देहान्त वि० सं० १२४९ ( ई० सं० ११९१-९२ ) में हो गया था और रावल समरसी ( समरसिंह ) वि० सं० १३५८ ( ई० सं० १३०२ ) माघ सुदी १० तक जीवित था, जैसा कि आगे बताया जायगा। सांभर और अजमेर के चौहानों में पृथ्वीराज नामक तीन और वीसलदेव ( विग्रह राज ) नामधारी चार राजा हुए हैं। परन्तु भाटों की ख्यातों तथा पृथ्वीराज रासो में केवल एक पृथ्वीराज

- 
१. गौरीशंकर हीराचन्द ओक्षा, डूंगरपुर राज्य का इतिहास-राजपूताने का इतिहास-जिल्द ३, भाग १, पृ० ५१-५३, वैदिक मंत्रालय, अजमेर, वि० सं० १९९३।

और एक ही वीसलदेव का नाम मिलता है और एक ही नाम वाले इन भिन्न-भिन्न राजाओं की जो कुछ घटनाएँ उनको ज्ञात हुई, उन सबको उन्होंने उसी एक के नाम पर अंकित कर दिया। पृथ्वीराज ( दूसरे ) के जिसका नाम पृथ्वीभट भी मिलता है, शिलालेख वि० सं० १२२४, १२२५ और १२२६ ( ई० सं० ११६७, ११६८ और ११६९ ) के और मेवाड़ के सामंतसिंह ( समतसी ) के वि० सं० १२२८ और १२३६ ( ई० सं० ११७१ और ११७९ ) के मिले हैं; ऐसी दशा में उन दोनों का कुछ समय के लिए समकालीन होना सिद्ध है। मेवाड़ की ख्यातों में सामन्तसिंह को समतसी और समरसिंह को समरसी लिखा है। समतसी और 'समरसी' नाम परस्पर बहुत कुछ मिलता जुलता है और समरसी नाम पृथ्वीराज रासो बनने के अन्तर अधिक प्रसिद्धि में आ जाने के कारण-इतिहास के अधिकार की दशा में-एक के स्थान पर दूसरे का व्यवहार हो जाना कोई आश्चर्य की बात नहीं है। अतएव यदि पृथावाई की ऊपर लिखी हुई कथा किसी वास्तविक घटना से सम्बंध रखती हो तो यही माना जा सकता है कि अजमेर के चौहान राजा पृथ्वीराज दूसरे ( पृथ्वीभट ) की बहिन पृथावाई का विवाह मेवाड़ के रावल समतसी ( सामंतसिंह ) से हुआ होगा।''

डॉ० त्रिवेदी के कथन को सत्य मानना ही अधिक उचित एवं समीचीन है। रासो का समरसिंह वास्तव में सामन्तसिंह है और फिर पृथ्वीराज रासो में एक स्थान पर समरसिंह के लिए सामन्तसिंह लिखा भी है—

सामंत सिंह रावर चवै, सुगति लम्भै तुरत ॥'

ऐतिहासिक विवाद कुछ भी हो किन्तु इतना निर्विवाद सिद्ध है कि 'रासो' का रावल समरसिंह अथवा सामन्तसिंह एक अद्वितीय योद्धा, रण कुशल तथा राजनीतिक दाव-पेचों में दक्ष था।

लाघन बघेल—'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार लाघन बघेल पृथ्वीराज चौहान का सामंत था। लाघन बघेल, सुलष प्रमार का पिता और आवू तथा धार के प्रमारवंशी राजकुमार जैतसिंह का सम्बन्धी था।' कन्नौज में सद्योगिता अपहरण सम्बन्धी युद्ध में वीर लाघन बघेल ने भी भाग लिया था। सुलष प्रमार के मारे जाने के उपरान्त लाघन बघेल ने युद्ध भूमि में अग्रसर होकर शत्रुओं का सामना किया—

वियौ दान पम्मार वलि। अरि सारंग समपेल।

मरन जानि मन सक्ष्म रत। लरि लघन बघेल ॥ छं० २३६३।'

१. डॉ० विपिनबिहारी त्रिवेदी, रेवातट, भाग २, पृ० ६८, हिन्दी विभाग, लखनऊ विश्व-विद्यालय लखनऊ, सन् १९५३ ई०।
२. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ९५३, स० ६६।
३. डॉ० विपिनबिहारी त्रिवेदी, रेवातट समय, द्वितीय भाग पृ० १००।
४. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० २३६३, स० ६१।

अपार पराक्रम दिखा कर तथा विपक्षी दल के सामन्त प्रतापसिंह को मार कर वह स्वयं भी वीर गति को प्राप्त हुआ—

जीति समर लब्धन वघेल । अरि हनिग घग झर ।  
तिघर तुटिठ घरनहि धुंकेत । निवंतरत अद्ध घर ॥  
तहं गिद्धाख हरिग । अत अंतह लगिग ।  
तरनि तेज रस वसह । पवन पवनां धन वज्जिग ॥  
तिहि नाद ईस मथ्यो धुन्यो । अमिय बुंद ससि उल्लस्यो ।  
विडस्यो धवल सकिय गवरि । टरिय गग संकर हस्यो ॥ छं० २३६४ ।<sup>१</sup>

लंगा लंगरीराय<sup>१</sup>—पृथ्वीराज चौहान ( तृतीय ) का सामन्त था । पृथ्वीराज रासो के अनुसार यह प्रसिद्ध सामन्त संजमराय का पुत्र था ।<sup>१</sup> लंगरीराय का पिता संजमराय भी कम पराक्रमी न था । महोबा युद्ध में पृथ्वीराज चौहान की मूर्च्छित अवस्था में एक गिद्धिनी द्वारा उनकी आँखें निकालने का प्रयत्न करते देखकर वीर संजमराय ने अपने शरीर का मांस काट कर गिद्धिनी को देना प्रारम्भ कर दिया जिससे पृथ्वीराज चौहान के प्राण बच गये तथा उसने अपने प्राणों की आहुति स्वामि धर्म हेतु दे दी ।<sup>२</sup>

दिल्लीपति चौहान पृथ्वीराज ने वीर संजमराय की वीरता एवं स्वामिधर्म पर प्रसन्न होकर उसके पुत्र लंगरीराय को आधी गद्दी तथा आधे राज्य का अधिकारी बनाया—

संजय राय कुंवर कौ । बोलि हजूर नरेस ।  
हय गय मनि मानिक बकसि । अघ आसन अघ देस ॥ छं० ८२८ ।<sup>३</sup>

शशिवृता-हरण में पृथ्वीराज चौहान के साथ गये हुए सामन्तों में लंगरीराय भी देवगिरि गया था—

चढ्यौ लंगरी राय लंगा सुवीर ।  
किधौ वाय वढ्यौ वुअ जानि धीर ॥ छं० २१३ ।<sup>४</sup>

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० २३६४, स० ६१ ।

२. 'लंगह, चालुक्य अथवा सोलंकी वंश के राजपूतों की एक शाखा विशेष थी । लंगह राजपूत मुलतन के अरीब-करीब रहते थे । इनका अब पता नहीं चलता, इनमें कुछ मार डाले गये, तथा कुछ मुसलमान बना लिये गये हैं ।' टॉड, राजस्थान, प्रथम खंड, पृ० १०० ।

३. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, २१-२४, स० ५ ।

४. वही, छं० ८१३, महोबा समय ६९ ।

५. वही, छं० ८२८, महोबा समय ६९ ।

६. वही, छं० २१३, स० २५ ।

‘रैवातट समय’ में वीर लंगरीराय का पराक्रम देखते ही बनता है। ‘लंगा’ तलवार उठाये हुए शत्रुओं के मध्य घूम रहा था। तलवार पर तलवार के प्रहार होने से बादलों के किनारे के समान दिखाई पड़ते थे। लंगा तथा सुलतान गोरी से उसी प्रकार युद्ध में लगा, जिस प्रकार दावाग्नि बन में लग जाती है। लंगा उसी प्रकार अग्रसर हुआ, जिस प्रकार वीर हनुमान लंका में आग लगा कर अग्रसर हुए थे। उसने एक बार में विपक्षियों को उछाल दिया तथा दूसरे बार में उसने उन्हें झाड़ कर एक स्थान पर एकत्र कर दिया। उसके एक बार से शत्रु की ऐसी दशा हो गई। अब उसने पुनः तलवार उठाई है अर्थात् अब शत्रु का बचना अत्यन्त कठिन है।’ डॉ० ह्योनले के मतानुसार वीर लंगरीराय ‘रैवातट समय’ के युद्ध में पंचतत्वकों प्राप्त हो गया था किन्तु ऐसा अनुमान लगाना भ्रम के अतिरिक्त कुछ नहीं है क्योंकि ‘पृथ्वीराज रासो समय ३१’ में पुनः उसकी वीरता तथा पराक्रम का उल्लेख मिलता है—

लग्यो लंगरी लोह लंगा प्रमान ।

पगो घेत पंड्यो पुरासान पान ॥ छं० १४४ ।<sup>१</sup>

शहाबुद्दीन से युद्ध होने पर ‘समय ४३’ में भी लंगरीराय का हाल पढ़ने को पुनः मिलता है। ‘भीम वध समय’ में वीर लंगरीराय पृथ्वीराज चौहान के साथ था।<sup>२</sup> ‘दुर्गाकिदार समय’ में दिल्लीपति पृथ्वीराज चौहान के साथ लंगरीराय भी था तथा इसने सुल्तान गोरी से युद्ध भी किया था।<sup>३</sup>

अन्त में ‘कनवज समय ६१’ में वीर लंगरीराय अन्तिम युद्ध करता हुआ दृष्टि-गोचर होता है। पृथ्वीराज कवि चन्द के साथ भेष बदल कर कन्नौज गये हुए थे। जयचन्द को यह सूचना मिलते ही उसने कवि चन्द के पड़ाव को चारों ओर से घिरवा दिया। ऐसी विषम परिस्थिति में युद्ध के अतिरिक्त अन्य कोई उपाय न था। योद्धाओं ने अपनी कमर कस ली। संजमराय का पुत्र वीर लंगरीराय सर्वप्रथम अपने ऋण से उद्धरण होने के लिए उठा तथा विपक्षियों को चीरता-फाड़ता हुआ राजमहल में प्रवेश कर गया—

जुघ जुट्य लंग उट्ठ्यो भीम । मानो कि पथ्य गो ग्रहन सीम ॥

संभरिय राज सों करि जुहार । प्रय सहस सुमट सजि लोह सार ॥ छं० ९८३ ।

मद गंध करी च्यालीस सोह । गज फूल कनक अप्पह अरोह ।

भानेज सहस मल सथ्य व्योम । घुघरिग मान इह दिग्ग घोम ॥ छं० ९८४ ।

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ११५, स० २७ ।

२. वही, छं० १४४, स० ३१ ।

३. जू चल्यो लंगरी राइ रन्न जग ॥ छं० ३१, स० ४३ ।

४. लंगरी राव तंह बैठि आइ । जगि जुद्ध समय जनु अगनि वाइ ॥ छं० १३, स० ४४ ।

५. सत तुंग मघन लंगरीराव ॥ छं० १७, स० ५८ ।



हम्मीर कनक राठौर बंस । चाल्यो कि कृष्ण मारनह कंस ॥  
हरि सिंघ जाइ कीनी प्रनाम । दुअ सहस महर दुज दिन्न दाम ॥ छं० ९८५ ।  
दरवार जाइ दरवान रुविक । सत सहस पौरि दरवान मुविक ॥  
लप तीन महल चौकीन हल्लि । परधान सुमित्र तव तेग क्षल्लि ॥ छं० ९८६ ।  
हहकारि सीस हर गयो लग । हल हलिय सुमट देषत पंग ॥  
उंचे अवास जाली सुमति । दस पंच महल मंडी जु पंत ॥ छं० ९८७ ।  
तिन मद्धि पग देष सु भट्ट । अन्नेक अवर मिलि एक थट्ट ॥  
धम धम निसान त्रय लण्य वज्जि । सिधूर राग करनाल सज्जि ॥ छं० ९८८ ।  
गुजरत्त सद् जंगी तवल्ल । मानो कि भूमम करिहै जु मल्ल ॥  
अन्नेक गिद्धि परि ठौर ठौर । जबुक कुलाह जिय नह सौर ॥ छं० ९८९ ।

इस विषम युद्ध में वीर लंगरीराय का शरीर बीच से चिर कर दो हो गया । उसके शरीर का एक भाग तो वहीं पड़ा रहा तथा दूसरा भाग महल की पहली चौकी में घुस गया तथा भीषण मार-काट करने लगा—

अद्धा सु अंग इह कहां दिट्ठ । तरवारि झपट पारंत रिट्ठ ।  
मुह मुह चमक्कि दामिनि झपट्टि । त्रय लण्य घटा घटा लोनी लपट्टि ॥ छं० ९९१ ।  
अन्नेक छिछ आकास उट्टि । जैचन्द थट्ट रहे निट्ठ निट्ठ ॥  
विहयंत तेग वाहत अंछेग । उड्डत सीस घर परत वेग ॥ छं० ९९२ ।  
निरषत सीस घर मद्धि पग । दुअ लण्य सेन करि भान भंग ॥  
हल हल सहर दुनियां अकंप । वाडलिय लगि उड्डंत लंप ॥ छं० ९९३ ।

राजा जयचन्द के रनिवास की रानियां झरोखे से वीर लंगरीराय का कौशल देखने लगीं । पंगराज की तीन लाख सेना का सफाया करने के उपरान्त वीर पराक्रमी लंगरीराय मन्त्री सुमन्त के सामने आया तथा अन्त में दोनों युद्ध करते हुए पराभव को प्राप्त हुए—

किलकिला नाल छुट्टी अग्राज ।  
लै चली लंग पर महल साज ॥  
दस कोस परे गोला रनविक ।  
परि महल कोट गज्जी घनविक ॥ छं० १००३ ।  
संजमह सुअन लै चली रंम ।  
सब लोक मद्धि हुआ अत्रंम ॥ छं० १००४ ।

- 
१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी समा काशी, छं० ९८३-८९, स० ६१ ।
  २. वही, छं० ९९१-९३ स० ६१ ।
  ३. वही छं० १००३-१००४, स० ६१ ।

कवि चन्द वरदायी ने इसी स्थल पर वीर लंगरीराय की प्रशंसा में निम्न तीन कवित्त कहे—

एह जुद्ध लंगरिय । आय चौकी सम जुट्यो ।  
 एक अंग लंगरिय । तीन लष्पन हथ पुट्यो ॥  
 सार सार उछरंत । परी गिद्धा रव भष्पन ।  
 गज वाजिय निहाय । वज्जि उत्तराधि दष्पिन ॥  
 इम भिज्यो लंग पंगह अनी । हाय हाय मुष फुट्यो ।  
 हल हलत सेन असि लष्प दल । चौकी चौरंग जुट्यो ॥ छं० १००६ ।  
 मंत्री राव सुमंत । हथ्य बिट्यो सचलंतो ॥  
 दुज्जाई दिल्लीय कोप । ओष कुंजरनि बढंतो ॥  
 हालो हल कनवज्ज । मंझ केहरि कूकंदा ॥  
 सजम राव कुमार । लोह लगा लू संदा ॥  
 चहुआन महोबं जुद्ध हुआ । ग्रेहा गिद्ध उडाइयां ॥  
 रन भंग रानबं वर विरद । लंग लोह उचाइयां ॥ छं० १००७ ।  
 एक कहै अप्पान । एक कहि बधि दिवाना ।  
 बंधो बंधन हार । भार लही सिर कन्हा ॥  
 बावारो वर तुंग । षग साहै विरुस्ताना ॥  
 लंगी लंगर राव । अद्ध राजी चहुआना ॥  
 उरतान ढंकि कमधज्ज दल । संजम राव समुद्ध हुआ ॥  
 प्रारम्भ जुद्ध जुद्धे सवल । चलि चलि वीर भुजंग भुअ ॥ छं० १००८ ।<sup>१</sup>

वीर लंगा लंगरीराय की वीरता से प्रभावित होकर वियोगी हरि जी ने भी उसकी प्रशंशा में निम्न तीन दोहे लिखे हैं—

है तेरी ही मूछ, औ तेरी तरवार ।  
 तुहीं पैज - रखवार है, संयमराय कुमार ॥ २८ ॥  
 किन तुव मरनु सराहियै, संयमराय - कुमार ।  
 जाहि शत्रु जयचंद हूं, दियो अश्रु-उपहार ॥ २९ ॥  
 अहैं सूर-सामन्त तुव और हूं, संमरि राय ?  
 पं हूजो नहि कन्ह, नहि हूजो लंगरिराय ॥ ३० ।<sup>१</sup>

१. पृथ्वीराज रासो नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १००६-८, स० ६१ ।
२. वियोगी हरि, वीर सतसई, चौथा शतक, पृ० ५०, साहित्य नवन ( प्राइवेट ) लिमिटेड, इलाहाबाद, सन् १९६१ ई० ।

लापनसिंह—आल्हा खंड की भूमिका भाग में लापनसिंह का पूर्ण परिचय इस प्रकार प्राप्त होता है—कन्नौज में एक राठौरवंशी क्षत्रिय राजा जयचन्द राजाओं में शिरोमणि हुआ। जिसके नगर में चारों फाटकों पर पाँच-पाँच सहस्र सेना शस्त्रों से सुसज्जित खड़ी रहती थी। राजा जयचन्द का छोटा भाई महावीर रतीभान बलवानों में अग्रगन्ता था। जिसके प्रभाव को देखकर शत्रु लोग रणछोड़ कर भाग जाते थे। उसी रतीभान का पुत्र विशाल नेत्रों वाला पूर्ण चन्द्रमा के समान सुन्दर मुख वाला नकुल का अवतार लाखनि नाम से इस पृथ्वी पर प्रसिद्ध हुआ।<sup>१</sup>

आल्हा खंड की भूमिका से ही यह सूचना भी प्राप्त होती है कि 'लापन सिंह का विवाह वंगदेश की राजधानी कामरु के बूंदी नरेश गंगाधर की कन्या कुसुमा से हुआ था।'<sup>२</sup> पंगराज का यह भ्रातृज अद्भुत वीर था। इसकी वीरता के विवरण आल्हा खंड, परमाल-रासो तथा पृथ्वीराज रासो के महोवा समय में प्राप्त होते हैं।

आल्हा-ऊदल के साथ राजा परमाल की सहायतार्थ युद्ध में वीर लापनसिंह भी कन्नौज-पति जयचन्द की आज्ञानुसार अपनी विशाल सेना लेकर महोवा गया था, जिसमें पचास हजार सैनिकों के अतिरिक्त, रूपसिंह मोरी, वीरमराय तोमर, कुंवरपाल, पंगुपाल तथा तात्हन आदि प्रसिद्ध योद्धा भी साथ थे—

कयरि जराव की दीनिय सोइ , रषी तुम आल्ह छती ध्रम होई ।

बुलाइव लापन सी कमघज्ज , धरौधम सीसह छत्र धरज्ज ॥ छं० २०५ ।

दई सग फौज पचास हजार , दिये दस डील बतार जुझार ।

दियो सग मोरिय रूपसि युद्ध , दिये संग चालुक केसव जुद्ध ॥ छं० २०६ ।

दिये संग तोंवर वोहिय वीर , दियो संग जादव दृष्ट गहरि ।

दियो किरवार तु कुंवर पाल , दियो संग वंसन पंगु सकाल ॥ छं० २०७ ।

१. कान्यकुब्जे नृपक्षं को राजन् राठौर वंशजः ।

जयचन्दः समारध्यातो नृभुजां शिरसो मणिः ॥ ११ ॥

पंच पच सहस्राणि यस्य द्वापुं चतुर्षु य ।

उद्यतास्त्राणि तिष्ठति सैन्यान्येवमर्हनिशम् ॥ १२ ॥

नृपाऽनुजो महावीरो रतिमानुर्वला षणीः ॥

यत्प्रभाव समालक्ष्या रयो जग्मुः परामवम् ॥ १३ ॥

तस्यात्मजो विशालाक्षः पूर्णचन्द्र समाननः ।

नकुलस्यावतारोऽनूला रवनेति परिश्रुतः ॥ १४ ॥

खेमराज श्रीकृष्णदास, आल्हा खंड, पृ० ६०-६१, श्री वैकटेश्वर, स्टोम प्रेस मुंबई ।

२. वही, पृ० ६१ ।

दियौ संग तालहन नेज पठाय , दिये सत भाव भतिज्ज बवान ।

हजार पचार दिये असवार , धरै कुल स्वामि घरम्म दुतार ॥ छं० २०८ ।<sup>१</sup>

महोबा तथा दिल्ली की सेना आमने-सामने होने पर, वीर लापनसिंह अपने चाचा निड्डुरराय से जुझ गया । फलतः दोनों पराक्रमी एक दूसरे पर घातक आघात करने लगे—

लाषन सी परिमाल जू , निड्डुर उर चौहान ।

वुय सामंत सु आहरे , कमधुज्ज सैन सुजान ॥ छं० ४२० ।

लाषन जैचन्द बंधव नन्दन , निड्डुरराय भतीजा द्वन्दन ।

दोउन वीर बाहुरे जंगह , दल चन्देल सम्हारी अगंह ॥ छं० ४२१ ।

मंडि निड्डुर लापन सीह नर , चहुआन चन्देल सुनिरपि भंर ।

कमधुज्ज सु दोयउ वार अरे , चहुलाज जंजीरन सो जकरे ॥ छं० ४२२ ।<sup>१</sup>

कमधुज्ज वंशी दोनों सम्बन्धियों का घोर संग्राम देखकर चौहान तथा चन्देल की सेनाओं में खलवली मच गई । सम्बन्ध को भूलकर स्वामि धर्म का आदर्श सम्मुख रखकर ये दोनों वीर युद्ध में सलग्न हो गये ।<sup>१</sup> निकट सम्बन्धियों का यह घोर संग्राम अपूर्व था । एक कन्नौज पति जयचन्द का भाई था तथा दूसरा भतीजा, किन्तु इस समय उनके सम्मुख केवल चौहान एवं चन्देल दल थे, उन्होंने अपने वंश सम्बन्ध को पूर्णतया भुला दिया था—

निड्डुर राय कमधुज्ज , वंधु जयचन्द सुतन कहू ।

लाषन सो राठौर , अनुज पंगान मान सुह ॥

चहुआन चन्देल , मिले दल मेल पेल सजि ।

भाई भाई विरंचि , वीर निस्सान पान गजि ॥

पिधित अनिय दोई धनिय , लखि लेय चढ़ा परिये प्रकट ।

परिमाल और प्रियिराज डिल , स्वामिकाज सौपंत घट ॥ छं० ४३१ ।<sup>१</sup>

पृथ्वीराज रासो के महोबा समय के अनुसार वीर लापनसिंह भी अपने चाचा निड्डुरराय के साथ युद्ध करता हुआ पराभव को प्राप्त हुआ—

‘भंजै जयचन्द की सेन विरांट , कियो नृप लापन निड्डुर काट ॥’

किन्तु आल्हा खण्ड की भूमिका में लिखा है कि ‘लाखनि राना ने पृथ्वीराज चौहान के वाणों के आघात से अपने प्राणों का परित्याग किया—

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० २०५-२०८, स० ६९ ।

२. वही, छं० ४२०-२२, स० ६९ ।

३. वही, छं० ४३०, स० ६९ ।

४. वही, छं० ४३१, स० ६९ ।

शराघात हतो वीरो वारणो भट्ट सत्तमः ।

यथा तयव संतस्थी मृतोऽपि वीर पुंगवः ॥ १५ ॥

वाण लगने पर लाखनि ने प्राण तो छोड़ दिये, परन्तु जिस प्रकार हाथी पर बैठे थे वैसे ही बैठे रह गये किसी ओर को सिर न हिला । जब लाखनि राना की हथिनि ने टक्कर मार कर पृथ्वीराज के हाथी को हटा दिया और पृथ्वीराज ने पीठ फेरी तब लाखनि राना मूर्छित हो गये, वास्तव में लाखनि राना बड़ा वीर था ।”

आल्हा खण्ड के भूमिका-लेखक ने निश्चय ही लापनसिंह का अतिशयोक्ति पूर्ण वर्णन किया है । किन्तु इतना निर्विवाद सत्य है कि लापनसिंह एक पराक्रमी योद्धा था तथा जयचन्द के इस भ्रातृज ने चौहान-चन्देल संग्राम में वीरगति प्राप्त की थी ।

लोहाना आजानवाहुः—पृथ्वीराज चौहान ( तृतीय ) के १०६ अथवा १०० प्रसिद्ध सामन्तों में से एक था । वीर लोहाना अद्वितीय पराक्रमी था । एक दिन महाराज पृथ्वीराज चौहान सायंकाल बत्तीस हाथ ऊँची चित्रशाला की गवक्ष में अपने प्रसिद्ध सामन्तों के साथ खड़े थे । इसी समय एक चित्रकार ने सुन्दर चित्र पृथ्वीराज की सेवा में प्रस्तुत किया । पृथ्वीराज ने चित्र अभी भली-भाँति देखा भी न था, कि वह चित्र हाथ से छूट पड़ा किन्तु लोहाना आजानवाहु ने कपोत की भाँति झपट कर बीच ही में पकड़ लिया, वह अचानक इस प्रकार झपटा मानो कोई शाखामृग ( बंदर ) कूदा हो । लोहाना के इस पराक्रम तथा निर्भीकता से प्रसन्न होकर पृथ्वीराज ने इसे आजानवाहु की उपाधि देकर सम्मानित किया, तथा ओरछा राज्य भी इसे पुरस्कार स्वरूप प्रदान किया जिसे वीर लोहाना आजानवाहु ने ओड़छा नरेश पर आक्रमण करके प्राप्त किया था—

१. खेमराज श्रीकृष्णदास आल्हा खण्ड, पृ० ६१, श्री वेंकटेश्वर स्टीम प्रेस, मुंबई ।

२. लोहाना, एक जाति विशेष का नाम है । ‘पहले ये राठौर वशी राजपूत थे जो कन्नौज से सिन्ध प्रदेश में खदेड़ दिये गये थे, तेरहवीं शताब्दी में सिन्ध से कच्छ चले गये थे । उस समय ये मसालियों की भाँति जनेऊ पहिन्ते थे तथा अपने को क्षत्रिय कहते थे । ( श्रिंग, हिन्दू ट्राइव एण्ड कास्ट्स, भाग-२, पृ० २४२ ) सिन्ध की हिन्दू आबादी में सबसे अधिक ये ही लोग हैं ( वही, पृ० ३७१ ) इनमें से कुछ सिक्ख धर्मावलम्बी भी हैं ( वही पृ० ३७५ ) । ‘लोहाना जाति घाट और तालपुरा में विस्तार से फैली हुई है । पहले ये राजपूत थे किन्तु व्यापार करने के कारण कुछ समय उपरान्त वैश्य हो गये ।’ टॉड, राजस्थान, पृ० ३२० ।

३. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० २, स० ४ ।

४. पृथ्वीराज रासो नगरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ५७, स० ३ ।

खेचर भूचर जल चरह, सूर गए सुर थान ।

जुद्ध जुरै जसवंतसी, रन जित्यो लोहान ॥ छं० ९ ।

पृथ्वीराज चौहान इस पराक्रमी वीर का बड़ा सम्मान करते थे । प्रायः पृथ्वीराज के समस्त युद्धों में वीर लोहाना ने भाग लिया था । 'कनकज समय ६९' में लोहाना ने अपना अपूर्व युद्ध कौशल दिखाया—

दल समंद पहुँपंग । गज्जि लग्यो चावदिसि ॥

लोहानौ वर वीर । पारि मंडी अड्डिय असि ॥

लोह लहरि डिल्लई । फिरि बज्जं दल पगगह ॥

हं हं हं आरुहिय । गजति गज्जन नर लगगह ॥

पारथ्य वीर वर वार हर । बढ्ढ कूर कढ्ढी बिहर ॥

रघुवीर तरंग तुरग जल । कमल जानि नचंति सिर ॥ छं० १४६३ ।

मित्त रथ्य रजि व्योम । मद्धि अट्टई असुर गुर ॥

रसह रौद्र बिथ्युच्यो । पित्ति पिजि लग्गे अमर पुर ॥

संकर मरि लगि लोह । धूरि धुंधरि तिनि सा छवि ॥

हाजुर मीर हनाम । मीर गिरदान सामि नामि ॥

चवदिट्ट उट्टि राजन सबद । पारसि गहन गहन किय ॥

है छडि मडि असिवर डुकर । जपत आतुर जीह लिय ॥ छं० १४६४ ।

'रासो समय ६९' में लोहाना आजानवाहु की मृत्यु उपयुक्त दोनों छन्दों से स्पष्ट हो जाती है, किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि पराक्रमी लोहाना आजानवाहु इस संग्राम में मृत्यु को प्राप्त नहीं हुआ था, क्योंकि इसी 'रासो' में 'समय ६६' में हम पुनः वीर लोहाना आजानवाहु को युद्ध करता हुआ पाते हैं । सम्भव है वह इस युद्ध में वुरी तरह घायल हो गया होगा । अन्त में अन्तिम युद्ध में आजानवाहु स्वामिधर्म का पालन करता हुआ विपक्षी से भिड़ गया<sup>१</sup> तथा वीरता का अपूर्व कौशल दिखाकर वह पंच तत्व को प्राप्त हुआ । लोहाना आजानवाहु तीन टुकड़े होकर गिरा, उसके गिरने पर सारी सेना के मुंह से जय जय कार निकल पड़ा, इन्द्र धन्य-धन्य कह उठे, नारद ने सुन्दर ध्वनि का उच्चारण किया । उस सूरमा के कौशल पर देवता चकित हो गये तथा इस लोक के योद्धाओं की टुकटकी बंध गयी । सारी अप्सराओं

१. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० ९, स० ४ ।

२. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १४६३-६४, स० ६१ ।

३. तवै गज्जियं वीर आजान वाहं । मित्यो मीर अड्डो सुरं जुद्ध राह ॥ छं० १२९३, स० ६६ ।

को बड़ा ही आश्चर्य हुआ जब उन्होंने देखा कि वह पराक्रमी योद्धा सूर्य मंडल की भेद गया है—

पर्यो होय आजान । वाह त्रयपंड धरन्नी ॥  
जं जं जं जंपत । मुष्प सव सेन परन्नी ॥  
घनि घनि जपि सुरेस । सु धुनि नारद् उचारं ॥  
करिग देव सव कित्ति । बुद्धि नम पुहुप अपारं ॥  
कौत्तिग सूर थवयो सुरह । मइय टगहण भुअ भरनि ॥  
आसंसी करं अच्छर सयल । गयो भेदि मण्डल तरनि ॥ छं० १३०५ ।<sup>१</sup>

अतः उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि लोहाना आजानवाहु की मृत्यु 'कमधज्ज समय ६१' में न होकर 'अन्तिम युद्ध समय ६६' के अन्तर्गत हुई थी ।

विजयपाल—'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार समस्त गढ़ों में श्रेष्ठ, पूर्व दिशा में समुद्रशिखर नाम का एक अत्यन्त दुर्गम किला था । वहाँ अजय यादव वंशी इन्द्र के समान विजयपाल नामक राजा राज्य करता था ।

पूरव दिसि गढ़ गढ़नपति समुद सिपर अति द्रुग ।  
तहं सु विजय सुर राजपति , जादू कुलह अमन्ग ॥ छं० १ ।<sup>१</sup>

राजा विजयपाल अत्यन्त वैभवशाली था, उसके पास असंख्य हाथी, घोड़े थे तथा उसका राज्य विशाल था । वह सागर पर्यन्त भूमि का स्वामी था । समस्त बलशाली राजा उसकी सेवा करते थे तथा उसके द्वार पर जोर-जोर से नगाड़ों की आवाज हुआ करती थी ।<sup>१</sup> उसके पास विशाल कोप एवं सेना थी । दस पुत्र तथा एक पुत्री थी जिसका नाम पद्मावती था ।<sup>२</sup> उसकी स्त्री का नाम पद्मसेन था ।<sup>३</sup> कुमारी पद्मावती के बड़े होने पर राजा विजयपाल ने उसकी सगाई कुमाऊगढ़ के राजा कुमोदमनि से पक्की कर दी ।<sup>४</sup> किन्तु कुमारी पद्मावती ने पृथ्वीराज को पत्र द्वारा अपने अपहरण के लिए आमंत्रित किया तथा समय पर पृथ्वीराज ने पद्मावती का अपहरण कर विजयपाल की इच्छा पूर्ण न होने दी ।<sup>५</sup>

राजा विजयपाल के विषय में रासो के अन्य समस्त संस्करण पूर्णरूप से मौन हैं ।

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं०, १३०५, स० ६६ ।
२. वही, छं० १, स० २० ।
३. वही, छं० २, स० २० ।
४. वही, छं० ३, स० २० ।
५. वही, छं० ३, स० २० ।
६. वही, छं० ३१, स० २० ।
७. वही, छं० ७२, स० २० ।

इतिहास भी इनके विषय में कुछ प्रकाश नहीं डालता । अतः इनके विषय में विस्तार से कुछ भी कहना असम्भव है ।

**वीरचन्द कमधज्ज**—रासोकार के मतानुसार वीरचन्द कमधज्ज रयसल्लराय का सहोदर अनुज तथा पंगराज जयचन्द का चचेरा भाई था ।<sup>१</sup> भानराय यादव के अनुज राजा मुञ्ज की कन्या शशिवृत्ता से इसका विवाह सम्बन्ध स्थिर हुआ था किन्तु गुण-श्रवण के परिणाम स्वरूप राजकुमारी शशिवृत्ता पृथ्वीराज पर पहले से ही अनुरक्त होने के कारण उसने सम्भरेश्वर पृथ्वीराज को अपने अपहरण हेतु सन्देश प्रेषित किया । परिणय हेतु राजकुमार वीरचन्द के देवास पहुंचने पर दिल्ली पति पृथ्वीराज ने यादव कुमारी का अपहरण कर लिया । फलतः चौहान तथा कमधज्ज दोनों की बाहिनी युद्ध में उलझ गई । घोर संग्राम छिड़ गया जिसके अन्तर्गत वीरचन्द ने अपूर्व पराक्रम का परिचय दिया—

सवर वीर कमधज्ज अरध अप्पिय जग भग ।

इपु अच्छित उच्छरहि जानि परिनाम न भग ॥

सार धार दुखिये वीन भगल उच्चारं ।

सबै साथ बदि भट्टि सकल पूजा सभारं ॥

वर मुक्कि वरन वरनी सुवर, इह अपुव्व पिण्णी नयन ।

उप्पनौ वीर सिंगार संग, रुद्र वीर चौरी सयन ।, छं० १८३ ।<sup>१</sup>

समस्त विवाहोत्सवों को तिलांजलि देकर वह वीर खड्ग द्वारा रक्त का अर्घ्य देने लगा । वीर पृथ्वीराज शशिवृत्ता को लेकर दिल्ली की ओर चल पड़ा । वीरचन्द ने पृथ्वीराज चौहान के सामन्तों से कस कर लोहा लिया किन्तु फिर भी पराजित हुआ परन्तु वह पराक्रमी वीर कन्नौज को प्रत्यावर्तित नहीं हुआ अपितु उसने यादव राज के दुर्ग को घेर लिया । भयभीत होकर राजा भान ने पृथ्वीराज की शरण ग्रहण की । ग्रन्थकार के अनुसार वीरचन्द का पिता उज्जयनी का शासक था ।<sup>२</sup>

**वीरमराय**—रासोकार के मतानुसार वीरमराय कमधज्ज कान्यकुब्जेश्वर जयचन्द की विमाता-जात पुत्र था । वीरमराय का परिचय संयोगिता अपहरण सम्बन्धी, चौहान पृथ्वीराज तथा पंगराज के मध्य होने वाले विकट संग्राम में प्राप्त होता है । रासोकार के अनुसार वीरमराय ने कन्नौजपति विजयपाल के समय में ही हिन्दू-मुसलानों पर विजय प्राप्त की थी तथा उसके बाएं पैर में टोडर (एक प्रकार का स्वर्णाभूषण) सम्मान स्वरूप पड़ा रहता था ।<sup>३</sup>

१. दक्षिणिय अंग रयसल्ल कमध । तिन अंगवीर चन्दह सुब्रध ॥ छं० ५३०, तं० ६१ ।

२. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १८३ तं० २५ ।

३. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, शशिवृत्ता नाम प्रस्ताव, समय २५ ।

४. वही, छं० २०७९, तं० ६१ ।



ग्रन्थकार ने अन्यत्र इसी वीरमराय को धायपुत्र भी कहा है, किन्तु कान्यकुब्जेश्वर जयचन्द अपने इस वंशज का आदर सहोदर भाई के समान ही करता था। वीर वीरमराय युद्ध-नीति का ज्ञाता था तथा राज्य-भार उसके कंधों पर था—

सुअन धाई जैचन्द नाम वीरम वीर वर ।

गरुड लाज गुर भार जुद्ध जुति जान ग्यान गुर ॥

वधव सम जैचन्द , प्रीति लिखिवं प्रेम गुन ।

अगि आदर नृप करै , गात उत्तग अंग रन ॥

सहस्र सत्त सेना ससत्त , वरन रत्त वाना धरै ॥

जह जहं सुराज काजह समय , तह तह परि अगं छरै ॥ छं० २१६५ ।<sup>१</sup>

रासोकार ने वीरमराय का चित्रण 'राम चरित मानस' के पराक्रमी योद्धा कुम्भकरण के समान किया है। संयोगिता अपहरण सम्बन्धी पृथ्वीराज चौहान तथा पंगराज के मध्य अष्टमी का घोर संग्राम होने पर भी यह वीर वारुणी पी कर निद्रा में मस्त था। नवमी जनिवार का दिन भी घोर युद्ध में व्यतीत हुआ किन्तु वीरमराय की निद्रा भंग न हुई। तृतीय दिवस उसे कहीं जाकर युद्ध की सूचना प्राप्त हो सकी। सूचना पाकर, क्रोध में भर कर उसने अपने सेवक पर पद प्रहार किया तथा युद्ध सूचना न देने के अपराध में उसे पाँच पकड़ कर पछाड़ दिया। पुनः युद्ध हेतु निश्चित हो, जमाही लेता हुआ यह पराक्रमी वीरमराय प्रैदल ही युद्ध क्षेत्र की ओर अग्रसर हुआ। वीरमराय को युद्ध क्षेत्र में आता देखकर चौहान पृथ्वीराज के सामन्त इसी प्रकार उत्साहित हो गये, जैसे समुद्र को देखकर अगस्त ऋषि उत्साह से उसे सोखने की आगे बढ़े थे—

सुक्रवार अष्टमिय निद जानी न जुद्ध पुर ।

नीमी सनि टरि गइय , सामि संग्राम इन्द्रजुर ॥

हय दिप्यत यव्वास , पाइ गहि सत्त पछारिय ।

रे सुयुद्ध मुदंग जग जुरि हो न जगारिय ॥

आयी निसंक सामन्त जंह कर कसंत आलसअ सन ।

तितने सूर साहिग समर जनु अगस्ति दरिया गसन ॥ छं० ५५६ ।<sup>२</sup>

शत्रुदल की ओर अग्रसर होता हुआ वीर वीरमराय ऐसा प्रतीत होता था मानो यज्ञान्तर हवि के समय हुंकार करता हुआ माया मार्ग से कोई देव उत्पन्न हुआ हो। पंगराज जयचन्द से किञ्चित् सम्भाषण के उपरान्त, इस वीर वीरमराय ने कटारियां बदल-बदल कर

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सना काशी, छं० २१६५, स० ६१ ।

२. वही, छं० ५५६, स० ६१ ।

शत्रु सेना पर प्रहार करना प्रारम्भ किया जिससे शत्रुपक्ष की पर्याप्त हानि हुई।<sup>१</sup> पृथ्वीराज चौहान के प्रसिद्ध सामन्त बड़गुज्जर द्वारा अपने सेवक बली तथा बली मोरों को घराघायी होता देखकर पंगराज ने अत्यन्त कुपित हो, इसी वीरमराय को चौहान के सामन्तों का वध तथा पृथ्वीराज चौहान को जीवित बन्दी बनाने का आदेश दिया—

परे भीर दिखे उभै , बिय अग्या तमिपंग ।

गहो जाइ चहुवान को , हनो सुयर सब जंग ॥ छं० २१६७ ।<sup>१</sup>

अपने अनुज पंगराज की आज्ञा शिरोधार्य कर, सेना के सम्मुख आकर पराक्रमी योद्धा वीरमराय ने पृथ्वीराज चौहान को ललकारा तथा साथ में ही अपने बंधु जयचन्द के दलबल का भी आतंक पूर्ण वर्णन प्रस्तुत किया।<sup>१</sup> स्वपक्ष के अनेकानेक भीरु बन्धों को आहत देखकर, कुपित हो राजा जयचन्द ने पुनः वीरमराय को बड़गुज्जर का सामना करने की आज्ञा प्रदान की। वीरमराय तथा बड़गुज्जर में विकराल युद्ध ठन गया। दोनों योद्धाओं ने अपने-अपने बल एवं पराक्रम का श्रेष्ठ परिचय दिया। पराक्रमी वीरमराय के प्रहारों से एक प्रकार से वीर बड़गुज्जर वैकुण्ठ को सिधार गया—‘बड़हथ्य बड़गुज्जर शुक्कि गयो वैकुण्ठ’ पारस्परिक घातक आघातों के फल स्वरूप दोनों ही वीर युद्ध करते हुए सूर्य लोक को प्रयाण कर गये—

हयौ अस्ति क्षार सु वीरम्म ताम , कटे बहु दूनौ घर तुहि ठाम ।

परे षंड वीरम्म तुट्टे विमगं , धन धन्न जप्पी कनवकति सगं ॥ २१७५ ।

धंन क्षारि ऊहक्षारि घायौ समुण्यं , मद मत्त दूम परे इत्त रूपं ।

दयौ आइ बड़गुज्जर पग घोर , कटे टट्ठरं सीस फट्यो कुठार ॥ छं० २१७६ ।<sup>१</sup>

वीरमराय का ऐतिहासिक ग्रन्थ में अस्तित्व नहीं मिलता है।

संजमराय—‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार संजमराय दिल्ली-अजमेर के अन्तिम हिन्दू शासक पृथ्वीराज चौहान का सामन्त था। इनके पुत्र वीर लंगरीराय को गणना भी श्रेष्ठ १०६ सामन्तों में होती थी। संजमराय भी कम स्वाभिमत न था। महोबा युद्ध समय के अन्तर्गत महोबापति राजा परमाल तथा पृथ्वीराज के साथ विकट युद्ध होने पर जब पृथ्वीराज चौहान युद्ध क्षेत्र में मूर्छित होकर गिर पड़े तथा एक गिद्धिनी ने उनके सिर पर बैठकर उनकी आँखें निकालने का प्रयास किया, तब वीर पराक्रमी संजमराय ने यह भीषण दृश्य देखकर गिद्धिनी को अपने शरीर का मांस काट-काट कर खिलाना प्रारम्भ किया तथा स्वामी की रक्षा करते हुए अपने प्राणों का उत्सर्ग कर दिया—

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ५५२, स० ६१।

२. वही, छं० २१६७ स० ६१।

३. वही, छं० २१७२, स० ६१।

४. वही, छं० २१७५-७६, स० ६१।

लोह लागि चहुवान । परे मूरछा हैव धरतिय ॥  
उटु गोघनि वैठि कै । चुंच वाहैति विरत्तय ।,  
देख्यो संजम राय । नृपति दूग दाढति पंछिन ॥  
अपने तन को मांस । काटि नपु दियो ततच्छिन ॥

अपने सु नयन देख्यो नृपति । अन्त सम ध्रम मल्लियव ॥  
आये चिचान वंकुण्ठ के । देह सहत धरि चल्लियव ॥ छं० ८१३ ।

गोघनि को पल नपु दियो । नृप के नैन बचाय ।  
देह हंसत वंकुठ को । पहुँच्यो सजमराय ॥ छं० ८१४ ।<sup>१</sup>

सम्भवतः वीर संजमराय की अपूर्व वीरता एवं स्वामिधर्म से प्रभावित होकर ही वियोगी हरि ने लिखा है—“संजमराज महाराज पृथ्वीराज का एक शूर सामन्त था । एक बार युद्ध स्थल पर महाराज पृथ्वीराज घोड़े से मूर्छित हो गिर पड़े । पास ही संजमराय भी आहत पड़ा था । यह समझकर कि महाराज मर गये हैं, गोघ उन पर मँडराने लगे । एक दो ने चौंच भी चला दी । संजमराय से यह न देखा गया । उठने की चेष्टा की, पर उठ न सका । उधर जरा भी देर करता है, तो गोघ महाराज को खाये जाते हैं । सामन्त ने अपने शरीर से मांस काट-काट कर फेंकना शुरू कर दिया । गोघों को और क्या चाहिए ? आनन्द से मांस खाने लगे । थोड़ी देर बाद महाराज होश में आए । आँख खोलते ही स्वामि भक्त संजमराय की यह बलि-लीला देखी । पर, वहाँ तो सामन्त मरण-प्रायः हो गया था । महाराज उसकी स्वामि भक्ति देखकर गद्गद हो गए । किसी तरह उठकर गोघों को भगाने लगे, पर सामन्त तो स्वर्ग को सिध्दार् चुका था—

रण-थल मूर्छित स्वामि के लीन्हें प्राण बचाय ।  
गोघनु निज तनु-मांस दै, धन्य संजमाराय ॥ २५ ॥  
फैंकि - फैंकि निज मांस लिय संभरि-राय बचाय ।  
है तू शिवि तैं घटि कहा, सुभट संजमाराय ॥ २६ ॥<sup>१</sup>

पराक्रमी योद्धा एवं स्वामि भक्त संजमराय का त्याग देखकर महाकवि सूर्यमल्ल मिश्रण भी चुप न रह सके—

नठ सो ही पहलां पड़े, चील्ह विलग चंक ।  
नैनं बचावै नाहरा, आप कलेजौ फैंक ॥ १६७ ॥<sup>१</sup>

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ८१३-१४, स० ६९ ।
२. वियोगी हरि, वीर सतसई, पहला शतक, छं० २५-२६, पृ० ९-१० ।
३. सूर्यमल्ल मिश्रण, वीर सतसई, छं० १६७, पृ० ८६ ।

पृथ्वीराज ने संजमराय के इस अपूर्व वलिदान पर प्रसन्न होकर उसके पुत्र लंगरीराय को आधी गद्दी तथा आधे राज का पट्टा लिख दिया—

संजम राय कुंवर कौ। वोलि हजूर नरेस।

हय गय मनि मानिक बकसि। अघ आसन अघ देस ॥ छ० ८२८।<sup>१</sup>

सलपराय प्रमार—‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार सलपराय प्रमार आवू का आधिपति था। जिस प्रकार दिल्लीपति पृथ्वीराज चौहान, दिल्ली में अपनी कीर्ति को फैलाये हुए था, उसी प्रकार आवू नरेश की कीर्ति सर्वत्र फैली हुई थी।<sup>१</sup> राजा सलप के एक पुत्र था जिसका नाम जैतराय प्रमार था तथा दो पुत्रियाँ थी जिनमें से बड़ी का नाम मन्दोदरी तथा छोटी का इच्छिनी था—

जैत पुत्र सलपेज लघु। इच्छिनी नाम कुमारि।

वर मन्दोदरी सुन्दरि। विमन रूप उनिहार ॥ छ० ४।<sup>१</sup>

बड़ी पुत्री मन्दोदरी का विवाह भोलाराय भीमदेव चालुक्य से हुआ था।<sup>१</sup> गुजरेश्वर भीमदेव चालुक्य ने अपने प्रधान द्वारा पत्र भज कर राजकुमारी इच्छिनी से विवाह करने की इच्छा प्रकट की किन्तु दृढ़ प्रतिज्ञ सलपराय ने निश्चय किया कि चाहे प्राण रहे अथवा जाय किन्तु पृथ्वीराज को इच्छिनी का वाग्दान देने पर, वह कभी भी विमुख न होगा।<sup>१</sup> कोरा उत्तर पाकर प्रधान भीमदेव के पास लौट गया। इसर राजा सलपराय ने युद्ध की तैयारी करके एक पत्र महाराज पृथ्वीराज को लिखा जिसमें राजकुमारी इच्छिनी के साथ विवाह के प्रस्ताव के साथ युद्ध में सहायता करने के लिए आग्रह किया गया था।<sup>१</sup> पृथ्वीराज चौहान राजा सलपराय का प्रस्ताव सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हुए तथा अनेक सैनिकों तथा सामन्तों को साथ लेकर स्वयं आवू की ओर सहायतायें चल पड़े। यह सूचना प्राप्त कर भोलाराय भीमदेव के वदन में आग लग गई।<sup>१</sup> उसने आवू पर आक्रमण कर दिया। सलपराय प्रमार ने भोलाराय भीमदेव का युद्ध में बड़ी वीरता से सामना किया किन्तु अन्त में युद्ध करता हुआ और अपनी कीर्ति को अजर-अमर करता हुआ वीरगति को प्राप्त हुआ।<sup>१</sup>

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छ० ८२८, स० ६९।

२. वही, छ० ३, स० १२।

३. वही, छ० ४, स० १२।

४. वही, छ० ५, स० १२।

५. वही, छ० ३२-३३, स० १२।

६. वही, छ० ५२-५३, स० १२।

७. वही, छ० ६७, स० १२।

८. वही, छ० १०९, स० १२।

सारंगदेव जाट—‘कनवज्ज समय ६१’ के अन्तर्गत कवि चन्द वरदायी कथित कन्नौजपति राजा जयचन्द की सभा में उपस्थित सामन्तगणों के नाम तथा ग्राम का उल्लेख करते हुए वीर सारंगदेव जाट का वर्णन इस प्रकार प्रस्तुत किया है—

जट्टहु सुदेव सारंग सूर, वीरम सवन घाती समूर ॥ छं० ५४० ।<sup>१</sup>

संयोगिता-अपहरण सम्बन्धी कान्यकुब्जेश्वर जयचन्द तथा सम्भरेश्वर चौहान पृथ्वीराज के मध्य होने वाले संग्राम में चौहान के प्रसिद्ध सामन्त विरम्भराय के अन्त के उपरान्त तेजस्वी सारंगदेव युद्ध हेतु आ उपस्थित हुआ, उसके साथ तीन सहस्र अस्वारोही सेना भी थी। खट्ग धारण करने में समर्थ तथा स्वामिधर्म के लिए उसका पवित्र स्नेह था। उसका हस्त-प्रहार, सिंह प्रहार तुल्य था। इस पराक्रमी वीर ने पंगराज के सम्मुख आकर अपना मस्तक नमित किया तथा राजा जयचन्द ने अपना हाथ ऊँचा उठाकर आशीर्वाद दे, उसे युद्ध हेतु विदा किया—

परत विम्भ चातुक्क, गहकि रावन सेन सब ।

जट्ट राउ सारंग देव, आयौ सु तपि तव ॥

सबस तीनि असवार, धार धारार समर्थ ।

त्रिमल नेह स्थामित, सिध रन वह सु हथ्य ॥

नाद्यों सीस नमि पक कह, दह्य सीष पट्ट ऊँच कर ।

उप्परि वग निज सेन सम, भाल प्रससिय अप्प भर ॥ छं० २३४७ ।<sup>२</sup>

कन्नौजपति राजा जयचन्द की आज्ञा पाकर जट्टराज सारंगदेव पकड़ो-पकड़ो की ललकार मचाता हुआ, शत्रु सेना से भयकर युद्ध करने लगा, युद्ध क्षेत्र में जट्टराज सारंगदेव का सामना पृथ्वीराज चौहान के प्रसिद्ध एवं अद्वितीय पराक्रमी सामन्त सलपराय प्रभार से हुआ जो अपनी अपार वीरता एवं पराक्रम से सुरों-असुरों को मुग्ध करता हुआ पराभव को प्राप्त हुआ—

तव मुजट्ट सारंग सुमन, समसेर समाहिय ।

विरचि पान करि रीस, सीस सण्यां पर बाहिय ।

टोप कटि विय टूक, फुट्टि तिम विचि सिर फट्यौ ।

सुमन पान कम्मन, वान लगत सिर घट्यौ ॥

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ५४०, स० ६१ ।

२. वही, छं० २३४७, स० ६१ ।

३. वही, छं० २३४८, स० ६१ ।

रिखयो सूर सुर असुर द्वै , वर वर कहि करिवर घरयो ॥

हुअ हथ्य मथ्य वई जहके , घर विन सर धरती टरयो ॥ छं० २३५९ ।'

सारंगदेव सोलंकी—'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार सारंगदेव सोलंकी, दिल्ली-अजमेरपति पृथ्वीराज चौहान का पराक्रमी सामन्त था तथा इसकी गणना श्रेष्ठ सामन्तों में होती थी । इसका एक भाई विश्वराय सोलंकी था, जो संयोगिता अपहरण सम्बन्धी युद्ध में मारा गया था । सारंगदेव ने पृथ्वीराज चौहान के अनेक युद्धों में अपनी वीरता एवं रण-कुशलता का परिचय दिया था । 'रेवातिट समय' में मोहम्मद गौरी तथा पृथ्वीराज चौहान के मध्य युद्ध होने पर सारंगदेव सोलंकी का युद्ध कौशल दृष्टिग्य है—'सोलंकी सारंग यकायक धितजीखाँ के सामने आ गया । वह पहले जयचन्द ( पग ) का भृत्य था, किन्तु इस अवसर पर पृथ्वी-राज चौहान की ओर था । सारंग के प्राण संकट में देखकर चाचा कन्ह दो घोड़ों की पीठ पर पैर रखकर खड़े हो गये तथा हाथी के समान चिंगघाड़ने तथा गर्जना करने लगे, जिससे पृथ्वी, पर्वत तथा कन्दरायें गुंजायमान हो उठी, जिससे वीर सारंगदेव के प्राण बच गये । देवताओं ने जय-जय का घोष किया तथा युद्ध की पूजा में पुष्पांजलि दी । सारंगदेव सोलंकी सारा युद्ध क्षेत्र खोजता रहा तथा कन्ह चिल्लाने की धुन बाँधे रहा ।''

सोलंकी सारंग , पाँन पिलची मुप लगा ।

वह पंगा नौ भ्रत , इतें चहुआन विलगा ॥

है कंधन दिय पाय , कन्ह उत्तर विय बाजिय ।

गज गूजार हुँ कोर , घरा गिर कदर गाजिय ॥

जय जय ति देव जय जय करहि , पहु पजलि पूजत रिनह ॥

इक पर्यो पेत सोध सकल , इक रह्यो बधे धुनह ॥ छं० १०४ ।'

वीर सारंगदेव के विषय में कुछ विद्वानों का मत है कि यह यहीं पर मारा गया था किन्तु उनकी ऐसी धारण निर्मूल है क्योंकि आगे भी हम उसे पुनः युद्ध करते हुए पाते हैं । संयोगिता अपहरण सम्बन्धी युद्ध में वह पृथ्वीराज चौहान की ओर से पंगराज के नगर-रक्षक रावण से बड़ी वीरता पूर्वक युद्ध करता हुआ मारा गया था—

सोलंकी सारंग । वीर राघन आरुद्धिय ।

हुअ सु हथ्य उत्तंग । तेगें लंबी सा लुद्धिय ॥

दो मरवह आरुद्ध । रुद्ध भानं सिल्लारिय ॥

टोप फुट्टि सिर फुट्टि । छिछ फुट्टिय कवि लोरिय ।

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० २३५९, स० ६१ ।

२. वही, छं० १०४, स० २७ ।

तिल वट्टि फुट्टि पलवन्न वन । कै ज्वाल नाल पावक पसरि ।  
 तन भंग घाय अरि सग करि । पति पहर चालुक्क परि ॥ छं० १५२३ ।  
 ग्रह्य चालुक ब्रह्म चार । ब्रह्म विद्या वर रषिय ।  
 फेस डान्न अरि करिय । रुधिर पन पत्र विसिखिय ॥  
 पगग गहिय अजुलिय । नाग गहि नासिक तामं ।  
 घरनि अघर दुहुं श्रवन । जाप जापं मुख रामं ॥  
 सिर फेरि पगग सम्हो धर्यो । दुअन तार मन उत्तहसिय ॥  
 अष्टमी जुद्ध सुक्क अयमि । सुर पुर जा सारंग वसिय ॥ छं० १५२४ ।

सिंहप्रसार—पृथ्वीराज रासो के अनुसार इस पराक्रमी वीर ने 'बड़ी लड़ाई प्रस्ताव समय ६६' के अन्तर्गत दिल्ली-अजमेर के अन्तिम हिन्दू शासक पृथ्वीराज चौहान की ओर से शहाबुद्दीन गोरी की सेना से, बगरीराव के वीरगति प्राप्त होने के उपरान्त युद्ध क्षेत्र में अग्रसर होकर शाही सेना में कुहराम मचा दिया था । इन्होंने अपार पराक्रम दिखाकर शाही सेना के १५ झुंड सरदारों का सफाया कर दिया तथा अन्त में स्वयं भी युद्ध करता हुआ वीरगति को प्राप्त हुआ । इनका विशद वर्णन अन्यत्र प्रायः नहीं मिलता है ।

ढर्यो अप्प सुम्भाय तच्चे परन्न । सुतं निरभयं निरभयं अप्प मन्नं ॥

पर्यो सिध पामर सामार वच्चं । पलं पेत ज्यों मूत भैरुं सुनच्चं ॥ छं० १२८८ ।

सुग्रीव (गौड़ नरेश)—पृथ्वीराज रासो के अन्तर्गत कान्यकुब्जेश्वर राजा जयचन्द को गौड़ प्रदेश का आधिपति भी बताया गया है । ग्रन्थकार ने राजा जयचन्द को गुंडदेश (गौड़) को बाँध कर मुक्त कर देने वाला अर्थात् अधीनस्थ बना कर रखने वाला विजेता कहा है—

जिनं छंडयो बन्धि इक गुंड गीरा ।

ग्रहे लिद्ध वेरागेंर सच्च हीरा ॥ छं० ५७५ ।

गुंडदेश का शासक सुग्रीव राजा जयचन्द का सहयोगी था । संयोगिता अपहरण सम्बंधी पृथ्वीराज चौहान तथा पंगराज के मध्य होने वाले युद्ध के अन्तर्गत नवमी को कान्यकुब्जेश्वर के पक्ष से लड़ता हुआ यह वीर पचत्व को प्राप्त हुआ । युद्धोपरान्त गिनाए गये पंग-पक्ष के आहत वीरों में उसका नामोल्लेख हुआ है । 'सुपट्ट गुंड सुग्रीव ।'

गौड़ नरेश सुग्रीव कवि कल्पना प्रसून पात्र ही प्रतीत होता है । इतिहास तो राजा

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १५२३-२४, स० ६१ ।

२. वही, छं० १२८८, स० ६६ ।

३. वही, छं० ५७५, स० ६१ ।

जयचन्द की गौड़ प्रदेश पर सत्ता को भी स्वीकार नहीं करता है। तत्कालीन इतिहास को देखने पर ज्ञात होता है कि गौड़ प्रदेश ( बंगाल ) पर राजा हर्ष की मृत्यु के बाद आसाम के शासक भास्कर वर्मन ने शंशाक को पराभूत कर अपना अधिकार स्थापित कर लिया था। आठवीं शती में कन्नौज नरेश यशोवर्मन, काश्मीर के आधिपति लालितादित्य तथा कामरूप के राजा श्री हर्ष ने बंगाल पर आक्रमण किये थे तथा देश में आराजकता का ताण्डव नृत्य हो रहा था। ऐसी स्थिति में जनता ने गोपाल नामक व्यक्ति को राजा निर्वाचित किया तथा बंगाल पर पाल वंश का शासन स्थापित हो गया। पालवंश का अन्तिम शासक रामपाल हुआ, इसके उपरान्त बंगाल पर सेन वंश का शासन प्रारम्भ हुआ। इस वंश का संस्थापक सामन्त सेन था। कान्यकुब्जेश्वर जयचन्द के समकालीन सेन वंशी शासक बल्लाल सेन ( ११५२-११७९ ई० ) तथा लक्ष्मण सेन ( ११७९-१२०५ ) थे। सेनवंशी उपरोक्त दोनों शासक निश्चय ही कान्यकुब्जेश्वर जयचन्द के आधीनस्त न होकर स्वतंत्र शासक थे। श्री नेत्र पाण्डे का अनुमान है कि लक्ष्मण सेन को सम्भवतः गाहड़वाल वंश के विरुद्ध सफलता भी प्राप्त हुई थी।<sup>१</sup> इसके उपरान्त विश्वरूप सेन तथा केशवसेन नामक इसके पुत्र क्रमशः शासक हुए तथा मुसलमानों से युद्ध करते रहे। लगभग सन् १२६० ई० में सेन वंश के राजा का मुसलमान आक्रमण कारियों ने आमूल उन्मूलन कर दिया।

स्पष्ट है कि रासो का वर्णन कान्यकुब्जेश्वर जयचन्द की महानता एवं गौरव बखान करने के फलस्वरूप ही हुआ है। रासो के उपर्युक्त विवेचन में सत्यता एवं ऐतिहासिकता का पूर्ण अभाव है।

सुमन्त-पृथ्वीराज रासो के अनुसार कन्नौजपति राजा जयचन्द के प्रधानमंत्री का नाम सुमन्त था। मंत्री सुमन्त मृत्युपर्यन्त जयचन्द का सहयोगी तथा सहायक रहा, जिसके निधन से पंगराज को भयंकर हानि उठानी पड़ी। सर्वप्रथम 'बालुकाराय समय' के अन्तर्गत पंगराज तथा मंत्री सुमन्त विचार-विनिमय करते हुए दृष्टिगोचर होते हैं। पंगराज ने राजसूय यज्ञ सम्पन्न करने की कामना को कार्य रूप में परिणित करने की योजना को मन्त्री के सम्मुख प्रस्तुत किया—

मत मंडत छंडत कलह, बल दीरघ प्रतिवाम।

कहै पंग नृप ऊँच मति, रहै तो खखै नाम॥

के के न गया सहि मडला, बज्जाये दोह दिवहाई।

विष्फुरं जासु किन्ती ते गया, नहं गया हुंती॥

मन्त्री ने अपना कर्तव्य पालन करते हुए उचित मंत्रण दी कि सामयिक स्थिति **यन्**



के अनुकूल नहीं। पंगराज द्वारा दिल्लीपति पृथ्वीराज चौहान से दिल्ली प्रदेश का आधा भू-भाग मांगने पर सुमन्त ने पंगराज को अपनी सम्मति पर पुनः विचार करने के लिए निवेदन किया—‘महाराज न तो अब वह समय है तथा न अर्जुन और भीम जैसे प्रतापी महापुरुष, कलिकाल में इस यज्ञ का सम्पादन असम्भव है।’ मंत्रणा को विफल होते देखकर मन्त्री सुमन्त ने अपने राजा की आज्ञा का पालन किया।

स्वामी पंगराज का शुभ चिन्तक मन्त्री सुमन्त उनका अन्तरंग भी था। जयचन्द द्वारा प्रेषित पत्र चौहानराज पृथ्वीराज के सम्मुख रखकर उसने युक्ति पूर्वक निवेदन किया—‘राजन् जैसे हिरणयाक्ष और दक्ष प्रजापति के यज्ञ में कुवेरपर्यन्त सब यक्ष और किन्नर उपस्थित थे, वैसे ही इस समय मनुष्य मात्र राजा जयचन्द की सेवा में अपना सौभाग्य मानते हैं, अस्तु इस समय मेरी प्रार्थना है कि जिस इन्द्रप्रस्थ के लिए पहले बड़े-बड़े गन्धर्व जूझ-मरे तथा दुर्योधन का विनाश हुआ, उस इन्द्रप्रस्थ का आधा भू-भाग मातुल बन्धु कन्नौजपति को दीजिए।’ मन्त्री का वाक चातुर्य दृष्टव्य है। भले ही मन्त्री को अपने उद्देश्य में सफलता न मिली हो किन्तु उसने एक बार पृथ्वीराज जैसे शासक को भी असमन्जस में डाल दिया था।

कन्नौज लौटने पर एक बार पुनः सुमन्त ने पंगराज को समझाया कि—‘कलियुग में यज्ञ कार्य सम्पन्न होना नितान्त कठिन है किन्तु स्वामी की आज्ञा शिरोधार्य है। आज्ञाकारी मन्त्री ने सर्वप्रथम राज्य सुरक्षा का भार बालुकाराय तथा मुसलमान सेना प्रधान खुरासान खां को सौंप कर यज्ञारम्भ की मन्त्रणा दी। पंगराज ने मन्त्री की मन्त्रणा मानकर यज्ञ-तिथि शोध कर तथा साथ ही कन्या संयोगिता के स्वयंवर का आयोजन कर, द्विजवर को आमन्त्रित किया। पंगराज का परम हितैषी होने के साथ ही साथ विदेश नीति में भी वह सक्रीय भाग लेता हुआ दृष्टिगोचर होता है। यज्ञ विध्वंस होने पर जहाँ एक ओर समस्त सेना को युद्ध हेतु तैयार किया वहीं दूसरी ओर पंगराज को संघपरिष्म के पूर्व कन्या संयोगिता के स्वयंवर कार्य को सम्पादित करने का परामर्श भी उसने दिया। उसने उस समय उक्त परामर्श देकर, दूरागत राजाओं की उपस्थिति से लाभ उठाकर अपनी कुशाग्र बुद्धि का भी परिचय दिया।

‘सामन्त पंग युद्ध’ के अन्तर्गत चौहान पृथ्वीराज को दिल्ली में न पाकर प्रत्यावर्तित होने पर पंगराज ने रावल समरसिंह को बलपूर्वक दवाने की इच्छा हुई। फलतः मन्त्री को बुलाया गया तथा पुनः राजसूय यज्ञ की व्यवस्था की आज्ञा दी गई किन्तु मन्त्री होने के नाते उसने पुनः पंगराज से निवेदन किया—

ताराकृत सघरिय, चित्त रावर उनमनिय।

विधि मत्र जंत्र आशक्ति करि, साम दास भेदह सवल ॥

जानो सुवीर सो उच्चरहु, काम क्रीध साधन प्रबल ॥ छं० २३ ।<sup>१</sup>

कन्नौजपति पर मन्त्री के कथन का विपरीत प्रभाव हुआ । उसने मन्त्री को इस प्रकार से व्यवस्था करने का आदेश दिया जिससे यज्ञ निर्विघ्न समाप्त हो सके । नीति कुशल मन्त्री ने पंगराज की यज्ञ के प्रति उत्कण्ठ अभिलाषा देखकर रावल समरसिंह से संधि करने का प्रस्ताव रखा, क्योंकि चौहान पृथ्वीराज के एक महान सहायक को स्वपक्ष में कर लेने से सभी कार्यों के सुगम हो जाने की सम्भावना थी—

तब सुमंत्र मन्त्रिय प्रधान, उच्चरिय राजवर ।

चाहुआन वंधन सुमन्त, मंडन जग्य घर ॥

नर उत्तिम चित्रंग, राज उत्तिम चित्रंगी ।

कर अन्नग दगन, जगत् रण्यन गज अंगी ॥

कालंक अछिय कट्टन सुछिप्र, परसु चार तिन तिन करय ॥

चित्रंग सबर समर, मिलि सु नग्य किरि दिन घरय ॥ छं० २४ ।<sup>१</sup>

कुशल मन्त्री सुमन्त के उचित प्रस्ताव से सहमत होकर पंगराज ने तुरन्त ही श्रेष्ठ भेंट आदि देकर मन्त्री को चित्तौड़पति रावल समरसिंह से संधि करने के लिए भेजा । मन्त्री अत्यन्त ही नीति कुशल तथा बहुज्ञ था—

मुक्कलै पंग वर मन्त्र वीर, जानै सुगति राजन सरीर ।

मन पंग होइ सों कले बत्त, विन बुलत बोले सु बत्त ॥

जानै सु चित्त नर नरनि बत्त, अनिरत्त ते लपहि गत्त ।

कीटी सुभ्रंग ज्यों मिलहि स्याम, डर ग्रहै रहै जामित्त जाम ॥ छं० २२ ।<sup>१</sup>

चित्तौड़पति चित्रंगी रावल समरसिंह द्वारा आगमन का अभिप्राय पूछे जाने पर मन्त्री सुमन्त ने अत्यन्त कुशलता से राजसूय यज्ञ की सूचना दी ।<sup>१</sup> मन्त्री सुमन्त के मुख से यज्ञ की बात सुन कर रावल समरसिंह ने यज्ञ को असामयिक बताकर मन्त्री को भी बहुत कुछ भला-बुरा कहा<sup>२</sup> किन्तु प्रधानमन्त्री चित्रांगी रावल समरसिंह के सम्मुख पंगराज के यज्ञ को अनुचित न मान कर पुनः कहता है—‘पूर्वकाल में अपनी श्रुतियों के कारण ही राजा लोग यज्ञ न कर सके, राम ने दिग्विजय काल में राजनीति की चाल बली तथा राजा बलि ने क्षत्रिय धर्म का

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० २३, स० ५५ ।

२. वही, छं० २४, स० ५५ ।

३. वही, छं० २२, स० ५५ ।

४. वही, छं० ३३, स० ५५ ।

५. वही, छं० ३६-३७, स० ५५ ।

विचार नहीं किया । यज्ञ करना पंगराज का धर्म है, क्योंकि सभी राजा जयचन्द की आज्ञा मानते हैं । किन्तु इस बार भी रावल जी ने यज्ञ को असामयिक ही बताया—

कहि मोकलि परधान कर, इह सुकथ्य चित्रंग ।

तो तुम अब जज अंज से, कहा करहु पट्टपंग ॥

अश्व मेघ जगछ से करि, विश्व मित्र तप जोर ।

कहा करे नृप मन्दमति, अहंकार मन जोर ॥ छं० ५१ ।'

रावल समरसिंह की कटुवित सहन न कर सकने के फलस्वरूप मन्त्री ने आवेश में आकर योगेन्द्र नरेन्द्र रावल समरसिंह को पंगराज की सेना का आतंक वर्णन करके, चुनौती दे दी और कन्नौज लौट आया ।' चित्तोड़ से लौटने पर मन्त्री सुमन्त ने सर्वप्रथम रावल समरसिंह का मान मर्दन करने की पंगराज को सलाह दी ।

कमध्वज समय में कवि चन्द के स्वागत करने के विषय में पंगराज ने मन्त्री से परामर्श लिया । प्रधान मन्त्री के द्वारा ही भेंटादि कवि चन्द के पास भेजी गई । वहाँ से लौटने पर तीक्ष्ण दृष्टि वाले मन्त्री ने कवि चन्द के पानधर के विलक्षण तेजधारी पुरुष होने की सूचना पंगराज को दी, साथ ही अपना सन्देह भी प्रकट किया—

कहे मन्त्रिय विप्रसुराज सुनै, कवि मनिय गति न चित्त गुनै ।

रजरौति अनुप अदब्ब लहौ, भ्रित देपि अनुप न जाय कही ॥

भ्रित रूपहि इन्द्र समान लज, दल तेजिअ जेज सुराज सज ॥ छं० ७४० ।'

कविचन्द की विदाई के अवसर पर पंगराज को मन्त्री सुमन्त से परामर्श करने के उपरान्त ही कार्य करता हुआ देखते हैं ।' कुशल नीतिज्ञ मन्त्री सुमन्त को पृथ्वीराज चौहान द्वारा चन्द के खवास का वेप धारण करने की बात पर विश्वास नहीं होता तथा यही उसकी प्रथम एवं अन्तिम भूल थी । पंगराज ने कवि चन्द वरदायी से स्पष्ट पूछा तथा भ्रम का निराकरण होते ही पंग पक्ष के रण बाध निनादित हो उठे । समरांगण में युद्ध के साथ ही साथ मन्त्री सुमन्त का मंत्रणा कार्य भी चलता रहा । संयोगिता अपहरण के उपरान्त उसने पंगराज को वनसिंह और केहरि कंठीर को युद्ध में अग्रसर होने की आज्ञा देने का परामर्श दिया था—

प्रथम राव वन सिंह, राव वनवीर अग्नि करि ।

हेतु सुमत जगोत, उन्नै पट्टपंग पूरि परि ॥

१ पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी मभा काशी, छं० ५१, स० ५५ ।

२. दल सज्जि करहि नृप सद्गुनेव, पट्टपंग राइ राजसू वेद ॥ छं० ५९, स० ५५ ।

३. पृथ्वीराज रासो. नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ७४०, स० ६१ ।

४. वही. छं० ८२९, स० ६१ ।

केहरि कंठीर पठौ सुनूप , इन समान छित्री न छिति ।

अड्डौ सुधेरा विम्भार घन , रावन रिज सिय ईय पति ॥ १३९७ ।<sup>१</sup>

अपार वीरता प्रदर्शन के उपरान्त राजा पंगराज के इस स्वामिभक्त एवं अनन्य सहयोगी मन्त्री ने एक बार में पृथ्वीराज के प्रसिद्ध सामन्त लंगरीराय का मस्तक विच्छिन्न कर दिया तथा विपक्षी के घातक आघात के फलस्वरूप सुमन्त ने सूर्य लोक को प्रस्थान किया ।

रासोकार के मतानुसार सुमन्त कन्नौजपति जयचन्द का प्रवान मन्त्री था । इतिहास इसके विषय में मौन है । असंभव नहीं यदि राजा जयचन्द के यहाँ सुमन्त जैसा योग्य एवं नीति कुशल मन्त्री रहा हो । मन्त्री सुमन्त की पुष्टि रासो के अन्य समस्त संस्करण भी करते हैं ।

सुलष पवार—‘पृथ्वीराज रासो’ के मतानुसार सुलष पवार पृथ्वीराज का सामन्त तथा आवू के जैत प्रमार का कोई सम्बन्धी था । सुलष, लपन का पुत्र था तथा लपन प्रमार वंशी क्षत्रि था ।<sup>१</sup> अतएव सुलष भी प्रमारवंशी क्षत्री हुआ । सुलष प्रमार की वीरता एवं पराक्रम का चित्रण कवि ने अनेक स्थानों पर किया है । संयोगिता अपहरण में पृथ्वीराज चौहान की सहायतार्थ यह वीर भी गया था—

परमार सलष जालौर राह । जिन बंधि लिद्ध गजनेस साह । छं० ९४५ ।<sup>१</sup>

पंगराज की अस्सी लाख सेना पृथ्वीराज के समस्त सामन्तों को घेर कर युद्ध कर रही थी । इसी बीच पृथ्वीराज संयोगिता का अपहरण कर लाये । पृथ्वीराज ने संयोगिता से चलने का आग्रह किया, किन्तु संयोगिता अपने पिता के बल एवं पराक्रम का ध्यान कर पृथ्वीराज चौहान के साथ चलने में संकोच करने लगी । यह देख कर गोविन्द राय, हाहुलीराय, चंदपुंडीर, कन्हू, बड़गुज्जर, अल्हनकुमार के साथ ही सुलष प्रमार ने उसे उत्साह तथा गर्व पूर्ण वाक्यों से प्रबोधा—

सुबर वीर पामार । सलष बुल्ल्यो प्रति धारं ॥

जगि जलनि कमधज । जोग जीवन जुग तारं ॥

ए अमन्त सामन्त । मज्जि जानै न अभंग अपु ॥

बज्र सार क्षल्लै प्रहार । निश्चलित सार चपु ॥

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १३९७, स० ६१ ।

२. पर्यौ जैत बंध सु पावार मानं ।

जिने भेजियं मीर वानेति वान ॥ छं० १२१, स० २७ ।

—चन्द बरवायो, पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी ।

३. वही, छं० ९४५, स० ६१ ।

जं करं गहर संजोगि सुनि । भुगति गहर वित्तिय घरिय ॥

जग्गाय पंग दिप्यं दलं । रपित कुअर के अरि फिरिय ॥ छं० १३०८ ।

फलस्वरूप संयोगिता पृथ्वीराज के साथ चलने को प्रस्तुत हो गई तथा पृथ्वीराज ने उसे अपने घोड़े की पीठ पर बैठा लिया । भयंकर संग्राम के मध्य पृथ्वीराज के प्रसिद्ध सामन्त बिलराय के खेत रहने पर चीर एवं पराक्रमी सुलप प्रमार ने विपक्षियों का सामना किया तथा विपक्षी दल के जैसिह से अपार पराक्रम के साथ युद्ध करके पंचतत्व को प्राप्त हुआ—

राह रूप कमधज्ज । गज्जि लग्ग्यो आकासाह ॥

धार तिथ्य उर जानि । न्हान पम्मार फिरयो तह ॥

रधिर मद्धु जव करिय । जीव तनु तिलनि पंडअय ॥

जुरित सीस अरि गहिय । पांनि सो भिमहि कंस कुय ॥

करि नृपति सार नृप पंग दल । अब्बुअ पति जप सब्ब किय ॥

उग्रहो ग्रहनु प्रथिराज रवि । सलप अलप भुज दान दिय ॥ छं० २३६२ ।

डॉ० ह्योर्नले का मत है कि सुलप 'रेवातट समय २७' में शाह गोरी की सेना से युद्ध करता हुआ मारा गया, किन्तु उपर्युक्त प्रमाणों के आधार पर यह बात सर्वथा अमान्य है । वास्तव में इस संग्राम में सुलप का पिता लपन मारा गया था ।<sup>१</sup> जिसके लिए ह्योर्नले मद्बोध ने रासो समय ६१ के प्रमाण देकर सिद्ध किया है कि लपन जीवित रहा तथा सुलप मर गया किन्तु ये प्रमाण उनके मत का समर्थन करने के स्थान पर खण्डन करते हैं, क्योंकि ६१ वें समय में लखन प्रमार वंश का नहीं था, वरन् वघेल वंश का था ।<sup>२</sup> अतः उपर्युक्त प्रमाणों के आधार पर स्पष्ट है कि वीर सुलप प्रमार संयोगिता अपहरण के समय ही वीर गति को प्राप्त हुआ था । रेवातट समय के अन्तर्गत पृथ्वीराज तथा शाह गोरी के संग्राम में नहीं ।

हरिसिंह—'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार हरिसिंह सम्भरेश पृथ्वीराज चौहान (तृतीय) का प्रसिद्ध सामन्त था जिसकी गणना उनके श्रेष्ठ सामन्तों में होती थी । संयोगिता अपहरण सम्बन्धी युद्ध में पृथ्वीराज चौहान की ओर से बलिभद्र के मारे जाने के उपरान्त हरिसिंह युद्ध भूमि की ओर अग्रसर हुआ । हरिसिंह के हाथ में तलवार लेते ही, पंग सेना छिन्न-भिन्न होकर इधर-उधर भागने लगी—

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १३०८, स० ६१ ।

२. वही छं० २३६२, स० ६१ ।

३. जंत वघ दहि परयो, सुलप लपन को जायो ॥ छं० १०९, स० २७ ।

—चन्द वरदायो, पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी ।

४. दिया दान पम्मार वलि । अरि सारंग सम पेल ॥

मरन जानि मन मझरत । लरि लपन वघेल ॥ छं० २३६३, स० ६१ ।

चंपे चाइ चौहान हरसिध नायो । जिसे सेन में सिध गज जूथ पायो ॥

करं कूह गज जूह सन मुष्प घायो । तवें पग दल समटि चिहं कोह छायो ॥ छं० २१४६ ।

पंगराज ने अपनी सेना को छिन्न-भिन्न होते देख कर अपने मुसलमान सरदार अली-वली मीरों को युद्ध में अग्रसर होने की आज्ञा प्रदान की । यही मीर बंधु पांच हजार सैनिक लेकर युद्ध भूमि में हरिसिंह का सामना करने के लिए आ उपस्थित हुए । हरिसिंह ने इस मीर मंडली का सामना बड़ी वीरता एवं पराक्रम के साथ किया किन्तु दुर्भाग्यवश घातक चोट लगने के कारण, वह पंचतत्व को प्राप्त हुआ—

घनं घाइ अघाय पर्यो सु पानं । पर्यो सिध हरि सिध करि जीति पानं ॥ छं० २१६० ।

हाड़ाहम्मीर—'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार हाड़ा हम्मीर सम्मरेश्वर पृथ्वीराज चौहान का प्रसिद्ध सामन्त था तथा इसकी गणना उनके श्रेष्ठ सौ सामन्तों में होती थी । कवि चन्द के मतानुसार हाड़ा हम्मीर ने एक बार शाह शाहबुद्दीन गोरी को युद्ध में परास्त करके बन्दी बनाया था । हाड़ा हम्मीर अत्यन्त पराक्रमा एव वीर योद्धा था । संयोगिता अपहरण सम्बन्धी युद्ध में इसका सामन्ती विपक्षी दल के काशी नरेश से हुआ । अन्त में यह वीर काशी नरेश के साथ द्वन्द्व युद्ध करता हुआ पराभव को प्राप्त हुआ—

हाड़ा राय हलकि उत । कासिराजह कर वर कसि ॥

जोगिनि पुर सामन्त । बहत कनवज्ज वीर रस ॥

वियों वीर आहुरिय । धरिय दतदर आवध ॥

उडि हस मंस नसह मुहर । फुहरति सा वज्जिय सुहर ॥

जगयो नाग तब नागपुर । होम दुरग घामकवर ॥ छं० २०४२ ॥

हाड़ा राय सु हथ्य धरि । गंभीरा रस वीर ॥

कासिराज दछ सम जुरिग । कुल उच्चारिय नीर ॥ छं० २०४३ ॥

नूप अलसिग अलसिग सुमर । अलसिय पंग नरिद ॥

विलसित काल करक किय । सह सति तीस गनिद ॥ छं० २०४४ ॥

हाहूलीराय—'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार कन्नौज-युद्ध में पृथ्वीराज के श्रेष्ठ ६४ सामन्तों की मृत्यु हो चुकी थी । पृथ्वीराज चौहान को विलासिता के कारण राज्य कार्य शिथिल हो चुका था । सामन्तों में परस्पर एकता न रह गई थी । जालधरगढ़ का राजा हाहूलीराय हमीर अन्य सामन्तों से अपमानित होकर पृथ्वीराज चौहान से रुष्ट होकर बँट गया

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० २१४६, स० ६१ ।

२. वही, छं० २१६०, स० ६१ ।

३. हाडी हम्मीर सथ्ये कृलाह । बंधयो जैन निरि पानिसाह । छं० १४५, स० ६१ ।

४. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० २०४२-४४, स० ६१ ।

या । 'बड़ी लड़ाई को प्रस्ताव ६६' में जब गजानिपति शाह गोरी के आक्रमण का समाचार दिल्ली पहुंचा तब पृथ्वीराज ने भी अपनी सेना के साथ पानीपत से बढ़कर सतलज नदी पार की । अपने ऊपर आपत्ति आई देखकर पृथ्वीराज ने कवि चन्द को हमीर हाहूलीराय को मना लाने के लिए भेजा—

सुनर उतरि सतनंज , चन्द पट्टी कंगूरह ।  
लं आयी जालघ , राइ हाहूलि हमीरह ॥  
अरु जाल पाप रसि परस , परस दरसत इह अप्यौ ।  
आदि जुद्ध दय दीन , सिध पणपरि किन दिख्यौ ॥  
हम नमस्कार करि पुच्छ्यौ , अरु पुछ्यौ पछली विगति ।  
हूं कहों सु तुम जानहु सकल , चलहु चन्द अगगे निरति ॥ छं० ६७० ।<sup>१</sup>

और भी—'मार्ग में विश्राम न करना, समय अत्यन्त कम है । श्रेष्ठ सामन्तों ने भी चन्द से कहा, नृप कार्य हेतु शीघ्र जालघर जाओ तथा ऐसे भीषण समय में पृथ्वीराज की रक्षा करो ।' कवि चन्द ने हाहूलीराय के पास पहुंच कर पृथ्वीराज पर आई हुई विपत्ति का विस्तार से वर्णन करके, सहायता की याचना की । और कहा—नरेन्द्र हाहूलीराय अब आप अपने मन का रोप मिटा कर तथा मुझ पर प्रसन्नता लाकर पृथ्वीराज की जय-जयकार करिए—

मुप मिट्टी रुड्ढी सुजी , हाहूलिराव नरिद ।  
बोल बक सो कक करि , जपि सु मुप जं चन्द ॥ छं० ६७५ ।<sup>१</sup>

इतना ही नहीं चन्द ने भांति-भांति की बातें करके राव हमीर को पृथ्वीराज के पक्ष में होकर युद्ध करने के लिए आग्रह किया । हमीर ने चन्द के वचन सुनकर कहा कि, चन्द ! पृथ्वीराज से कहा कि गोरी से सन्धि करके और राज्य को आधा बांट कर सुख से राज्य करें । क्यों नाहक दप के कारण युद्ध करते हो ।<sup>२</sup> चन्द ने ऐसे निराशा भरे वचन सुनकर सांसारिक सुखों को धिक्कारा तथा युद्ध भूमि में ही प्राण त्याग देने के लिए कहा—चन्द के उत्साह पूर्ण शब्द सुनकर हमीर ने पुनः कहा—चन्द सुनो, तुम दिल्ली पति पृथ्वीराज को मंत्रणा दो कि युद्ध हेतु अग्रसर न हो, राजनीति पर भी विचार करें, शाह का दल तुमने देखा नहीं है, न ही तुम्हें अपने दल का अनुमान है । यदि केवल यश के लिए प्राण दोगे तो संसार में ख्याति

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ६७०, स० ६१ ।

२. मगगह चंलत नहि करि विरन्म , सामन्त सूर सुनर मुदित तम्म ॥

जालंघ जाहु नृप पति मुकाज . रापहु त राज प्रथिराज आज ॥ छं० ६७१, स० ६६ ।

३. पृथ्वीराज रासो. नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ६७५ स० ६६ ।

४. वही. छं० ६८०, स० ६६ ।

५. वही, छं० ६८१, स० ६६ ।

चाहे भले ही पा जावो । सूर्य और चन्द्र दोनों ही अन्धकार विनाश में लगे रहें तो भी चौहान के जीवन में अंधकारपूर्ण दिन अब नष्ट नहीं हो सकते—

कहि हमीर सुनि चन्द , नाम तुम चन्द न्यायवरि ।

कहौ मन्त्र कुल वह , कवहुं उत्तरै न संभरि ॥

रजनीति जानहु न , साहि दिष्यौ दल अप्पन ।

गल्हां करि मरिहौ जु , विरद लम्भे उर कंपद ॥

जद्यपि सुमान उत्तर तपै , जदपि संक्ष चपिय गहन ।

चहुआन अग ते दिन नहीं , गहन राज ते रिपुरहन ॥ छ० ६८२ ।<sup>१</sup>

कवि चन्द ने पुनः यश प्राप्ति हेतु प्राणों का उत्सर्ग कर देना ही श्रेष्ठ बताया । उसने कहा यश स्थिर है तथा मानव शरीर नाशवान है, अतः यश की प्राप्ति ही श्रेष्ठ है ।<sup>१</sup> हमीर ने पुनः नाना प्रकार के उदाहरण प्रस्तुत कर तर्क किया कि अब पृथ्वीराज के अच्छे दिन बुरे दिनों में परिवर्तित हो गए हैं । अतः उसे हट त्याग देना ही उचित है—

कहि हमीर सुनि चन्द , हुअै दिन आदिन विचारौ ।

जब रावण हरि सीत , कियौ गढ लंक संधारौ ॥

अदिन काज पंडवनि , जूअ सों हेतु विचारौ ।

अदिन काज परिछत्त , रिक्ख गल अप्प हकारौ ।<sup>२</sup>

इह अदिन बुद्धि सामन्त सब , कलह केलि अति बल सरिय ।

हरि हरा देवि इन्द्रादि सुर , वरजि गये अति गति बुरिय ॥ छ० ६८४ ।<sup>३</sup>

हमीर के ऐसे वचन सुन कर चन्द ने कहा कि आप ऐसा क्यों सोचते हैं ? पृथ्वीराज तथा आपका सम्बन्ध मिटने वाला नहीं है । सामन्त जैतराव तथा वीर बलभद्र शाह ही गोरी को बन्दी बना लेंगे । सारांश यह कि तुम्हें किसी प्रकार का भय न मान कर चौहान की सहायता करना ही उचित है ।<sup>४</sup> हाहूलीराय ने पृथ्वीराज चौहान की राज्य व्यवस्था पर प्रकाश डालते हुए कहा कि जैतराय आदि सामन्त अग्रगण्य रूप में गोरी के साथ हैं, दिखावे में वह कुछ भी कहें । वास्तविकता यह है कि आज कल दिल्ली में सूठों का राज्य है तथा पृथ्वीराज भी उन्हीं के हाथ में हैं—

काली बल विषं घरै , डंक बीछी उच्छारै ।

नील कण्ठ शिववरै , मोर महोरग निहारै ॥

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छ० ६८२, स० ६६ ।

२. वही, छ० ६८३, स० ६६ ।

३. वही, छ० ६८४, स० ६६ ।

४. वही, छ० ६८५, स० ६६ ।



काल अघं दूरि जाहि, जीह पपीह पुकारै ।  
 घण्यं वहै गयन्द, चढै शिक्कार सिआरै ॥  
 सुरतान काम सद्धं सलय, जेत राइ विरदां वहै ।  
 हाहुल्लि राइ भट्टं कहै, को अनप दूतै सहै ॥ छं० ६८७ ।  
 दावानल पांवार, अनल चहुआन सहाई ।  
 घट जनया रिपिराज, समद सोपै घरताई ॥  
 जंतराव कन्ठीर, हथ्य सामन्त राज सिर ।  
 पहू पहार पांवार, घडै भंजै गोरीं घर ॥  
 अन्धुआ राव अगै पहर, बिन न जोर जम्बू रहै ।  
 चुंगलिय बाज जोगिनि पुरिय, जजं भावै तं कहै ॥ छं० ६८८ ।

हमीर ने और भी कहा कि—मरण काल में बुद्धि विपरीत हो जाती है। अर्थात् जब जिसका काल आ जाता है उसे कितना भी समझाया अथवा धिक्कारा जावे उसकी बुद्धि में कुछ नहीं आता।<sup>१</sup> अन्त में हमीर ने कहा कि मुझे शाह गोरी तथा पृथ्वीराज दोनों से ही निमन्त्रण प्राप्त हुआ है। अतः दोनों पत्रों को जालंधरी देवी के समक्ष रख कर सम्मति लेना चाहता हूं। देवी जी जैसी आज्ञा देंगी, वैसा ही करूंगा। तुम स्वयं भी श्रेष्ठ वीर हो, तुम भी इसका औचित्य वतलाओ—

सुनौ भट्ट कवि चन्द, रहसि बुल्यो जम्बूपत ।  
 मों जिय ह्य अन्देस मत पुच्छौ जालंध गति ॥  
 उभं लिखै कागद प्रमान, राज राजन सुलितानं ।  
 धीय अगै मुक्कियं, तोई अप्पै फुरमान ॥  
 वत्ती विवेक द्रुगा सुपत, ह्य समप्पि हम्मीर कर ।  
 आरम्भ होई इह वत्त गति, सुवर वीर जंपी सुवर ॥ छं० ६९० ।<sup>१</sup>

कविचन्द ने उपर्युक्त बात सुनकर हमीर से कहा कि स्वामिधर्म का पालन करते हुए युद्ध में प्राण त्यागना ही श्रेष्ठ है।<sup>१</sup> हमीर ने पुनः कहा कि आवू का जैत प्रमार हाहुल्लि कह कर पुकारता था, कहू चौहान कहता था कि पृथ्वीराज ऐसे कुत्तों को नहीं पालता, चामण्ड-राय से अब क्यों नहीं पूछते कि लाहौर तथा असंख्य हाथी-घोड़े दण्ड स्वरूप मांगे जा रहे हैं, अब क्या किया जावे—

- 
१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ६८७-८८, स० ६६ ।
  २. वही, छं० ६८९, स० ६६ ।
  ३. वही, छं० ६९०, स० ६६ ।
  ४. वही, छं० ६९३, स० ६६ ।

अव्वूरा पांवार , जंत हाहुलि कहि धुल्लै ।  
 सुनि क्रन्तां चहुआन , वाहि प्रथिराज न पल्लै ॥  
 पूछानी चामण्ड , दंड मगं लाहोरी ।  
 जिम रवाना गन्धान , कोल लद्धी कारोरी ।  
 उच्चार भार बोलै हरै , राज उलगयी साहनी ।  
 उपरै जाम जद्धी लगर , सुभर उभारै वाहनी ॥ छं० ६९४ ।<sup>१</sup>

कवि चन्द ने पुनः समझाया कि हे हमीर ! यह समय ऐसी बातें सोचने का नहीं हैं । हे सामन्त राज, ऐसे वचन बोल कर टाल-मटोल करने का प्रयत्न न करो अर्थात् पृथ्वीराज की सहायता करने के लिए तत्पर हो जाइए ।<sup>१</sup> हमीर ने अपने अपमान को स्मरण कर कहा कि एक समय था जब सामन्तों की कीर्ति चारों ओर फैली हुई थी, किन्तु उन्हें तो कन्नौज में जुझा डाला गया । शाहबुद्दीन गोरी अब पहले जैसा नहीं रहा, उसका दल हाथी-घोड़े तथा देश पहले से दस गुने हैं । अतः युद्ध में कलंक लेना मूर्खता है । हे भट्ट, इस प्रकार से उत्साहित कर व्यर्थ ही दिल्लीश्वर को नष्ट मत करो—

चहुआना रै रजधान , सामन्त बड़ाई ।  
 ते बोला वर लागि , जाइ कनवज्ज झुझाई ॥  
 ऐ गोरी साहाब , दीन जानै पहिलो ना ।  
 हसम हयगय देस , देह दण्यो दह गोना ॥  
 कै काम कलहु कदल चढी , कम्मा मंता गढी ।  
 बे काम भट्ट गल्हां पढ़ै , जिन भंजौ दिल्ली सढी ॥ छं० ७०० ।<sup>१</sup>

चन्द कवि ने भ्रांति-भ्रांति के तर्क उपस्थित कर हाहुलीराय को समझाने को प्रयत्न किया किन्तु हाहुलीराय अपने अपमान को न भूल सका तथा अन्त में उसने कहा—तुम सब बातों से परिचित हो, किन्तु मैं तो महामाया की इच्छा पर निर्भर हूँ । अस्तु पान, नारियल, फूल, कपूर आदि लेकर दोनों ही जालंधरी देवी के मंदिर की ओर चले—

तत्त बत्त जानौ सबै , हम माया इच्छांमि ।  
 चलि जालंधर देहरा , मिलि जालय पुच्छांमि ॥ छं० ७१२ ।  
 नालिकेर फलदल सुफल , कर कपूर तंमोर ।  
 उभै सुवर पूजन चलै , दै सब सथ्य बहोरि ॥ छं० ७१३ ।<sup>१</sup>

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ६९४, स० ६६ ।
२. वही, छं० ६९५, स० ६६ ।
३. वही छं० ७००, स० ६६ ।
४. वही, छं० ७१२-१३, स० ६६ ।

अन्त में देशद्रोही हाहुलीराय ने अपने मन में पृथ्वीराज का अन्त निश्चित कर चन्द को मन्दिर में बन्दी बना दिया तथा स्वयं शाह शहाबुद्दीन गोरी की सेना से जा मिला—

एह पस्तर दीह , चन्द जन्यो चहुआन ।

जिन भुजानि घर नार , मोमतीय अंधर मान ॥

हसम ह्यगगय देस , दीह घट्टे बल घट्टे ।

घन्न मरन तिन जानि , महल सिर सारे पट्टे ॥

अ.वृत वात जोगिनि पुरह भव नवस्य इह निर्मयो ।

कवि चन्द रविक वच्छो जियन, ग्रिह गोरी हाहुलि गयो ॥ छं० ७२६ ।<sup>१</sup>

उपर्युक्त सूचना पाते ही पृथ्वीराज चौहान के हृदय में अग लग गई । साथ ही यह भी सूचना प्राप्त हुई कि कवि चन्द को बन्दी बना कर हाहुलीराय स्वयं शत्रु-पक्ष की ओर दस हजार श्रेष्ठ घुड़सवारों तथा एक लाख सैनिकों को साथ लेकर शाह गोरी से मिलने जा रहा है—

रोकि कविदाह अप्प मिलि , मो सुरतान अबुझ ।

सुनत राज प्रथिराज कै , हवि लागी उर मझ्झ ॥

हवि लागी उर मझ्झ , सझ आई गुर गल्हां ।

नट्ट बसीठह रोकि , अप्प है वै दिसि हल्हां ॥

दस हजार है वरनि , लण्ण पयदल भ्रम वृन्दा ।

मित्यो जाइ सुलितान , रोकि देवले कविदा ॥ छं० ७२८ ।<sup>१</sup>

कहने की आवश्यकता नहीं कि देशद्रोही राजा हाहुलीराय, गोरी तथा पृथ्वीराज के अन्तिम युद्ध में युद्ध करता हुआ पराभव को प्राप्त हुआ ।

इतिहास हाहुलीराय के विषय में मौन है । रासो की उपर्युक्त घटना का इतिहास में कहीं भी उल्लेख नहीं है । ऐसी-ऐसी घटनाओं को देखकर ही विद्वानों ने इस ग्रन्थ को अनैतिहासिक तथा काल्पनिक कह दिया है । सम्भव है काव्य ग्रन्थ होने के कारण इसमें कल्पना का भी योग हो किन्तु ग्रन्थ को पूर्ण रूपेण अनैतिहासिक मानना भ्रम है । सम्भव है ग्रन्थ की पूर्ण जांच करने से कुछ सत्य घटनाएं प्रमाणिक सिद्ध हो सकें । हाहुलीराय ऐसा ही पात्र है । डॉ० दशरथ शर्मा ने हाहुलीराय को एक ऐतिहासिक पात्र मानते हुए लिखा है कि—‘पर्वतराज हाहुलीराय हमीर के विद्रोह के प्रमाण भी अनुपलब्ध नहीं हैं । हाहुलीराय पंजाब आदि का शासक माना गया है । उसका असली नाम सम्भवतः विजयदेव था । तबकाले-नासिरी के अनुवाद के टिप्पणी में रेवर्टों ने जम्मू राजाओं की तबारीख से अनेक अवतरण दिए हैं । उनसे स्पष्ट है कि जम्मू के राजा ने शहाबुद्दीन गोरी का साथ दिया था । पञ्चनद मुसलमानों के हाथ में था, इसलिए हाहुलीराय से इस राजा का ही निर्देश हो सकता है । जम्मू की तबारीख में लिखा है कि तरावड़ी की दूसरी लड़ाई में पृथ्वीराज का मुख्य सेनापति

१ पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ७२६, स० ६६ ।

२. वही, छं० ७२८, स० ६६ ।

गोविन्दराय विजयदेव के पुत्र नरसिंहदेव के हाथ से मारा गया। यह कहना कठिन है कि इस तवारीख की सब बातें ठीक हैं। परन्तु इतना तो अवश्य निश्चित है कि जम्मू में एक ऐसा परम्परागत ऐतिहासिक है कि जम्मू के राजाओं ने पृथ्वीराज के विरुद्ध शहाबुद्दीन का साथ दिया था। मेरी धारणा है कि यही स्वदेश विरोधी राजपूत राजा 'रासो' का हाहूलीराय है।"

हैजमकुमार प्रतिहार—पृथ्वीराज रासो में सर्व प्रथम हैजमकुमार प्रतिहार का परिचय पंगराज की राजसभा के द्वार पर ही कवि चन्द वरदायी एवं छद्मवेश धारी पृथ्वीराज चौहान के साक्षात्कार के समय हुआ था। हैजमकुमार प्रतिहार पंगराज के राज्यद्वार का द्वारपालध्यक्ष था। कविचन्द ने उसका परिचय इस प्रकार दिया है—

करनि कनक मय दण्ड , परम उद्दंड चड बल ।  
विध्व देह सुन्दर समत्य , जाति सुमति सुन्निल ॥  
प्रतिनर प्रीति प्रसन्न , परम सपन्न सव्व जग ।  
अवर भूप पिण्यत नयन्न , परसाद लग्न नग ।  
सुकलम्म कलपतरु बग जिम , पुन्य पुञ्ज पुञ्जिय सुमुअ ।  
प्रतिहार राज दरवार सहि , दिपि वरदाय नमित हुअ ॥ छं० ४६५ ॥'

कवि चन्द को द्वार पर उपस्थित पाकर उसने उसके परिचय, नाम, ग्राम तथा आगमन का कारण जानने की इच्छा प्रकट की—

एकि कविद हैजम बुल्लिय हसि , कौन यान वर चलिय कौन दिस ।

को नृप सेव देव को नाम , किहि दिसि चित करयो परिनाम ॥ छं० ४६६ ॥'

कवि चन्द वरदायी का पूर्ण परिचय प्राप्त होने के उपरान्त हैजमकुमार प्रतिहार ने पुनः मार्मिक व्यंग कर उससे कहा—

मगिवान विवारता कवि ने , संधिवान की विग्रहात् ।

जुद्धवान पंग राएन् , ना भूत्ती न भविष्यति ॥ छं० ४६९ ॥'

स्वामी पंगराज के गौरव शाली व्यक्तित्व से वह अपने को भी गौरवान्वित अनुभव करता था।" पारस्परिक परिचय तथा अपने स्वामी कान्यकुब्जेश्वर जयचन्द गाहड़वाल का

१ डॉ० दशरथ शर्मा, पृथ्वीराज रासो की कथाओं का ऐतिहासिक आधार, राजस्थानी भाग ३, अंक ३, जनवरी १९४०, कलकत्ता ।

२. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ४६५, स० ६१ ।

३. वही, छं० ४६६, स० ६१ ।

४. वही, छं० ४६९, स० ६१ ।

५. चैरी काटन राज बय , डंड भरन परधान ।

सेवा मानन भेदियन , हिन्दू मुसलमान ॥ छं० ४६९, स० ६१ ।

गीरव गान करने के उपरान्त चतुर एवं नीति कुशल द्वारपालाध्यक्ष हैजमकुमार ने कवि चन्द वरदायी से उसके आने का वास्तविक कारण जानने का प्रयत्न किया—

पंग दरस जंचन मिसह, कै भोकलिंग वसीठ ।

के मिलि पट्ट मंडल नृपति, राजं राग सुदीठ ॥ छं० ४७२ ।<sup>१</sup>

हैजमकुमार वास्तव में एक कुशल द्वारपालाध्यक्ष था । वह दरवार में किसी को ऐसे ही प्रवेश नहीं करने देता, वह पूर्णरूप से सन्तुष्ट होने के बाद ही दरवार में प्रवेश की अनुमति देता है । कविचन्द वरदायी द्वारा 'मण्डली मोहि जांचन नियम' जैसे कृत्रिम दीन शब्द के उच्चारण पर भी वह उसे राज दरवार में प्रवेश नहीं करने देता । चन्द के साथ छद्मवेशी तेजस्वी चौहान पृथ्वीराज को देखकर, उसकी ओर संकेत कर अपनी शंका निवारण करने की चेष्टा की—

तू मंगन कविचन्द, सथ्य मंगन नत होइय ।

तो देपत तिय थान, इन्द्र भुल्लिय द्रग जोइय ॥ छं० ४७४ ।<sup>१</sup>

कवि की बातों से उसे पूर्ण सन्तुष्टि न हो सकी । संदिग्ध होने पर भी उसने शिष्टाचारवश अतिथियों को आदर सहित बैठने को कहा तथा उन्हें राजनीति के विभिन्न भेदों को बताकर हैजमकुमार ने सामन्तों से घिरे हुए कान्यकुब्जेश्वर राजा जयचन्द को दिल्ली के कवि चन्द वरदायी के आगमन की सूचना दी ।<sup>१</sup> प्रतिहार हैजमकुमार ने कवि चन्द की पंगराज से नाना प्रकार की प्रशंसा कर उसके हृदय में कवि की प्रतिभा के प्रति औत्सुक्य जागृत किया । फलस्वरूप राजा जयचन्द गाहड़वाल ने कवि की काव्य परीक्षा के लिए एक दसोधी को नियुक्त किया । परीक्षा में सफल होने के उपरान्त ही कवि चन्द वरदायी को दरवार-प्रवेश की आज्ञा मिल सकी ।<sup>२</sup> छद्मवेशधारी खवास चौहान पृथ्वीराज तथा चन्द वरदायी को साथ ले जाकर प्रतिहार हैजमकुमार ने उन्हें पंगराज के सम्मुख जा उपस्थित किया । ग्रन्थकार ने इसके उपरान्त प्रतिहार हैजमकुमार का कहीं भी उल्लेख नहीं किया है । अतः विवश हो हमें भी उसके इतने से ही परिचय से सन्तुष्ट हो जाना पड़ता है । ऐतिहासिक तथ्य भी इनके विषय में सुलभ नहीं होते ।

१. पृथ्वीराज रासो. नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ४७२, स० ६१ ।

२. वही. छं० ४७४, स० ६१ ।

३. कवि जो जूगिनपुर कहै, संपत्ती द्वारेस । छं० ४८२, स० ६१ ।

४. हक्कारयो हैजम कवि निकट वोलि नृप ईस । छं० ५६०, स० ६१ ।



## मुसलमान-पात्र

‘रासो’ में प्रयुक्त सैकड़ों मुसलमानों के नाम देखकर आश्चर्य होता है कि क्या वास्तव में रासोकार चन्दवरदायी मुसलमान पक्ष के इतने अधिक सैनिक नामों से परिचित था ? परिचित ही नहीं वरन् यदि ‘पृथ्वीराज रासो’ वर्णित समस्त घटनाओं को सत्य एवं ऐतिहासिक मान लिया जाय तो वह गजनी दरबार की अनेक घटनाओं से भी अनभिज्ञ न था। लगभग तत्कालीन मुसलमान इतिहासकारों ने तबकाते-नासिरी, ताजुल-म-आसिर आदि प्रसिद्ध ग्रन्थों में बहुत ही थोड़े हिन्दू नाम लिये हैं तथा वह भी प्रसिद्ध हिन्दू शासक वर्ग के ही। यह माना जा सकता है कि गुप्तचर विभाग से उभय पक्षों को परस्पर भेद मिलता रहता होगा, जिससे विपक्षी दल के सामन्त वर्ग के नामों के विषय में भी ज्ञान मिलता रहता था, किन्तु चन्द की तथाकथित जानकारी की बातें किंचित कठिनाई से ही समझ में आती हैं। सम्भव है मुसलमानों के इतने नाम किसी प्रक्षेपकर्ता के कौशल का परिणाम हो। इतना ही नहीं रासो में ‘मुगल’ नाम कई स्थलों पर प्रयुक्त हुआ है। चीन इतिहास का अवलोकन करने से स्पष्ट विदित हो जाता है कि सन् १२२१ ई० के पूर्व मुगलों का नाम तक सुनाई नहीं पड़ता है। ‘कैम्ब्रिज हिस्ट्री आव इंडिया’ में स्पष्ट लिखा है कि ‘१२२१ में विघर्षों मुगलों के आक्रमणों का प्रभाव प्रथम बार भारत पर पड़ा जो बाद में दिल्ली के मुलतान के लिए निरन्तर चिन्ता का स्रोत बन गये थे। इन जंगलियों ने क्रूर चंचेजियाँ के नेतृत्व में अलाउद्दीन मुहम्मद खवारजम शाह को उसके सिंहासन से उतार, बाहर किया। उसके पुत्र जलालुद्दीन मंगवरनी ने लाहौर में शरण ली तथा अल मरा के पास अपने साम्राज्य में शरण देने के लिए दूत भेजा’।’

किन्तु इतिहास का उपर्युक्त विवेचन कल्पना को इतना आधार तो दे ही सकता है कि सम्भवतः सन् १२२१ ई० के २५ वर्ष पूर्व गजनीपति गोरी की सेना में मुगल सैनिक भी रहे हों। सम्भव है चन्द वरदायी ने मुगल शब्द का प्रयोग ठीक ही किया हो।

‘मेवाती मुगल कथा’ के अन्तर्गत अजमेर पति सोमेश्वर तथा मेवात के शासक मुगल के युद्ध का वर्णन ‘रासो’ में प्राप्त होता है। इस प्रसंग को क्षेपक तथा अनैतिहासिक मानते हुए म० म० गोरीनकर हीराचन्द ओझा ने लिखा है कि—‘पृथ्वीराज रासो में लिखा है कि सोमेश्वर ने मेवात के मुगल राजा (मुग़दलराय) से अन्य राजाओं के समान कर माँगा। उसके इन्कार करने पर सोमेश्वर ने उस पर चढ़ाई कर दी। पृथ्वीराज भी कुछ समय बाद अजमेर से चला और रातों रात मुगल सेना पर उसने आक्रमण कर दिया। युद्ध में मुगल पराजित हुए। मुगल राजा का ज्येष्ठ पुत्र वाजिद खाँ मारा गया और वह स्वयं कैदी हुआ। (पृथ्वीराज रासो, मेवाती मुगल कथा, आठवाँ समय, रासो सार, पृष्ठ ३८) यह कथा भी कथित है। सोमेश्वर के समय में तो मेवात प्रदेश अजमेर के राज्य के अन्तर्गत था। वहाँ कोई स्वतंत्र राजा नहीं था और मुगलों का तो क्या, अन्य मुसलमान तक का उस प्रदेश पर अधिकार नहीं था। सोमेश्वर की जीवित अवस्था में पृथ्वीराज इतना बड़ा न था कि युद्ध में जा सकता है।’

इसी प्रकार से रासो में अनेक स्थानों पर तेमूरलंग का भी नाम आया है। जो अप्रामाणिक प्रतीत होता है। इतिहास में प्रसिद्ध है कि सन् १३९८ ई० में उसने भारतवर्ष पर आक्रमण किया था। ‘दिल्ली की यह परिस्थिति थी। जब सन् १३९८ में समाचार मिला कि समरकन्द का अमीर, ईरान, अफगानिस्तान तथा मेसोपोटामिया का विजेता लंगड़ा तेमूर इस, रावी तथा चेनाव को पार कर तालवा लेकर अपने पीछे द्वारा विजित मुलतान का अधिकारी हो चुका है। तेमूर को अपनी लूट-खसोट के लिए प्रेरणा या वहाना बहुत कम दूढ़ता पड़ता था परन्तु भारतवर्ष ने दोनों की पूर्ति कर दी। वहाना यह था कि दिल्ली के मुसलमान शासक मूर्ति पूजा के प्रति सहिष्णु थे और प्रेरणा यह थी कि पिछले समय में विपरीत राज्य विभाजित था। आक्रमणकारी का उद्देश्य लूट था और यदि भारत की स्यायी विजय का कोई भाव उसके मन में रहा भी हो तो दिल्ली पहुँचने के पूर्व ही वह समाप्त हो चुका था।’ अन्तु रासो के तेमूरलंग विषयक छन्दों एवं स्वयं तेमूरलंग पात्र को अप्रामाणिक होने में कौन सन्देह करेगा।

नामो प्रयः युद्ध प्रधान प्रबन्ध काव्य है। युद्ध प्रसंग में कवि ने तुपक, तोप, गोला,

१. म० म० गोरीनकर हीराचन्द ओझा, कोशोत्सव स्मारक संग्रह, पृथ्वीराज रासो का निर्माण काल पृ० ५६-५७, सन् १९२८ ई०।
२. कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इन्डिया, भाग ३, पृ० १९५ सन् १९२८ ई०। तथा चन्द वरदायी और उनका काव्य, पृ० ३४९-५०।

बन्दूक आदि शब्दों का प्रयोग किया है किन्तु इन छन्दों को प्रक्षिप्त अंग मानना ही अधिक समीचीन जान पड़ता है क्योंकि भारतवर्ष में बाबर से पूर्व युद्ध क्षेत्र में तोपों के प्रयोग का प्रमाण इतिहास में अभी तक प्राप्त नहीं होता है। निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि इस प्रकार के छन्दों में प्रयुक्त पात्र भी प्रायः काल्पनिक ही हैं जिन्हें बाद में किसी प्राक्षिप्तकार ने अज्ञानतावश जोड़ दिया है। तुपक, तोप, गोला तथा बन्दूक आदि के विषय में इतिहास में लिखा है कि—तैमूर के उत्तराधिकार स्वरूप जब बाबर को खोकन प्रदेश तथा बंधु के उत्तर में कुछ भूमि मिली, उस समय युद्ध कला सादी थी। तलवार और घनुप ही प्रधान अस्त्र-शस्त्र थे। अपनी स्मृतियों में उसने शशपर या छै फलवाली गदा, बरछी और फरशा का उल्लेख करते हुए लिखा है कि एक बार मैं केवल इन्हीं पर विश्वास किया जा सकता है। इन सेनाओं में तोड़ेंदार बन्दूक का प्रवेश प्रारम्भ हो गया था परन्तु काबुल और कंधार की सीमा पर बाजौर के निवासियों ने तांडेदार बन्दूक देखी तक नहीं (१५१९)। बड़ी तोपें फेरिगिहा कहलाती थी और छोटी जखुजन जिसे आज कल मशीनगन कहते हैं। तुर्कों ने थोड़े दिन पूर्व ही कुस्तुनतुनियाँ पर अधिकार पाया था और उस पर बड़ी तोपों का प्रयोग किया था परन्तु फेरिगी या फ्रैक शब्द से स्पष्ट है कि उन्हें यूरोपीय आविष्कार माना जाता था। एशिया में तोपों की कला में निष्णात व्यक्ति रूसी या ओसमानली तुर्क थे और एशिया निवासियों द्वारा बन्दूक, तोप, वःरुदखाना आदि प्रयोग में लाये जाने वाले प्रायः सभी शब्द तुर्की भाषा के हैं। बाबर पहले तोपखाने से परिचित नहीं था परन्तु जब वह आगरा में जम गया तब उसने उस्ताद अली कुली को एक बड़ा तोप ढालने का आदेश दिया।

ऐसा प्रतीत होता है कि बाबर ने अपनी सेना में अनुशासन और सैनिक कौशल की वृद्धि की थी जो तब तक भारतवर्ष में प्रचलित नहीं थी। बन्दूकधारी सैनिकों का एक नियम बद्ध दल और तोपखाने का एक जत्था उसकी प्रधान शक्ति थे।"

कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इंडिया में लिखा है—'१६ मार्च सन् १५२७ ई० में खनुवा का युद्ध हुआ। बाबर ने पुनः अरावा ब्यूह का प्रयोग किया। वह स्वयं कम्ब्र में था, चीन तीमूर और खुसरा कुविलताश दाहिनी ओर थे। (पूर्व के युद्ध से सफलता प्राप्त कर लौटा हुआ) हुमायूँ, दिलावर, खानखाना तथा अन्य भारतीय अमीर भी दाहिने पक्ष में थे, सय्यद महदी ग्याजा बाईं ओर था और दाहिनी तथा बाईं तरफ वगली रक्षा करने वाली टुकड़ियाँ थी तथा निजामुद्दीन अली खलीफा तोपखाने का नायकत्व कर रहा था। राणा के वामपाश्वर्क ने बाबर के दक्षिण पाश्वर्क पर आक्रमण करके युद्ध प्रारम्भ किया परन्तु चीन तीमूर ने उन्हें पीछे

१. ए डिस्कपिप्सन ऑफ इन्डियन एण्ड ओरियन्टल आर्म्स, लार्ड ईगर्टन एम० ए०, पृ० २१-२२ सन् १८९६ (नया संस्करण) लन्दन।

नोट—इस विषय में मेम्बायर्स आव बाबर, लीडेन और एसेंलाइन, पृ० २५३-६७, १८२६, तथा मेम्बायर्स आव बाबर, वेवरिय, भाग-२, पृ० ५६८-७७, १९२१ भी दृश्य हैं।



खदेड़ दिया। इसी बीच में तुर्की तोपची मुस्तफा सफी हुमायूँ के विभाग के केन्द्र से गाड़ियाँ और तोपें आगे बढ़ा लाया तथा शत्रुओं का मोर्चा तोड़ दिया।”

विलियम इरविन महोदय ने लिखा है कि तोप शब्द का प्रयोग वावर ने भी नहीं किया है—‘फारसी कोषों में ‘तोप’ शब्द तुर्की वताया जाता है परन्तु वावर ने ‘जर्वे-जन’ शब्द प्रयोग किया है। भारतीय साहित्य में तोप शब्द का व्यवहार कब से प्रारम्भ हुआ मैंने नहीं खोजा परन्तु संभवतः प्रथम यह दक्षिण में प्रयोग में आया जिसे लाने वाले रूम या तुर्की से लाये तोपखाने में काम करने वाले अधिकारी थे। तोप शब्द का प्रयोग बहुधा बढ़ी या घेरा डालने वाली तोपों के लिए किया जाता है और कभी-कभी हर प्रकार की छोटी-बड़ी सभी तोपों के लिए व्यवहृत होता है, जैसे तोप-खुद और तोप कला।”

विलियम इरविन महोदय ने ही एक स्थान पर और लिखा है— ‘यह (तोड़ेंदार बन्दूक) थी, तुफंग (स्टीन्गास ३१४) या बन्दूक (वही, २०२) मद्रास मैनुअल के तीसरे परिशिष्ट, पृ० ९१५, पर तुपक शब्द है जिसका अर्थ छोटी तोप या बन्दूक होता है। आइने अकबरी, भाग १, पृ० ११३ पर अकबर को तोड़ेंदार बन्दूकों के निर्माण में सुधार करने का श्रेय दिया जाता है। इतना सब होने पर भी १८ वीं शताब्दी के मध्यकाल तक इस अस्त्र को घनुप और बाण की अपेक्षा कम महत्व दिया जाता था। तोड़ेंदार बन्दूक प्रधानतः पैदल सैनिकों के पास रहती थी जो मुगल सेना नायकों की सम्मति से, अश्वारोही सैनिकों की तुलना में अति घटिया दर्जे के समझे जाते थे। १८वीं शताब्दी के मध्य काल से फ्रांसीसियों और अंग्रजों ने भाग प्रदर्शन से पैदल सैपाही के अस्त्र-शस्त्रों और अनुशासन में उन्नति के प्रयत्न प्रारम्भ हुए। योराप में भी तोपों और बारूद का आविष्कार इसी १४वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में हुआ था।’

इन अनेक प्रमाणों के आधार पर ‘पृथ्वीराज रासो’ में प्रयुक्त तोप, तुपक बन्दूक आदि के प्रयोग वाले छन्द अविश्वसनीय ठहरते हैं। साथ ही इनसे सम्बन्धित सैनिक अथवा सामन्त भी सन्देह का विषय बन जाते हैं। वास्तव में ‘रासो के मुसलमान पात्र’ के नाम से स्वतंत्र खोज होनी चाहिए किन्तु फिर भी यहां पर रासो में मुसलमान पात्रों की स्थिति पर अति संक्षेप में संकेतमात्र प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया गया है।

अरवखाँ—‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार पराक्रमी वीर अरवखाँ गजनीपति शाह शहा-बुद्दीन गोरी का दूत था। अरवखाँ गोरी की आज्ञा पाकर तीन सौ सवार तथा रथ लेकर मीर

१. कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इन्डिया, भाग ४, पृ० १७, सन् १९३७।
२. दि आर्मी ऑफ दि इन्डियन मुगल्स, विलियम इरविन, पृ० ११३, १९०३ लन्दन।
३. वही, पृ० १०३।
४. Encyclopaedia Britannica, 14th edition, Vol 11 sec-Gunpowder, P. 3-4. तथा चदवरदायी और उनका काव्य, पृ० ३५०-५१।

हुसैन खाँ से गोरी की परमप्रिय चित्ररेखा नामक वंश्या को लेने दिल्ली दरबार में गया किन्तु जब हुसैन ने चित्ररेखा को लौटाने से इन्कार कर दिया तो उसने दिल्लीपति पृथ्वीराज चौहान से हुसैनशाह को अपने आश्रय से निकाल देने के लिए कहा ।<sup>१</sup> किन्तु अभयदान दिए हुए व्यक्ति को निकालने का प्रस्ताव सुनकर पृथ्वीराज क्रोधावेश से भर गया—

संभलिय व्रत प्रथिराज मत , भ्रिकुटी करूर द्रिग रत्त जंत ।

आरत्त मुष्प स्त्रुत श्रोन वुंद , कल मलिय कोप रोमंत जिद ॥ छं० ४५ ।<sup>१</sup>

अपना निरादर होता देखकर अरबखाँ दरबार से उठकर चला गया तथा गजनी की ओर प्रस्थान किया । तात्तार खाँ के व्यंग करने पर अरब खाँ ने पृथ्वीराज चौहान की वीरता का उल्लेख करते हुए कहा कि तुम इसीलिए ऐसी बातें कर रहे हो, क्योंकि तुम पृथ्वीराज चौहान के पराक्रम से परिचित नहीं हो ।<sup>२</sup> अरब खाँ शकुनशास्त्र का ज्ञाता प्रतीत होता है क्योंकि गजनी से युद्ध हेतु सेना के कूच करने पर तथा अपशकुन होने पर अरब खाँ कूच करने से रोकता है ।<sup>३</sup>

आलम खाँ—‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार आलमखाँ नाम का सरदार गजनीपति शाह शाहाबुद्दीन गोरी का सेना नायक था । रासोकार के मतानुसार यह विश्व अभिमानी था । रेवातट पर पृथ्वीराज तथा गोरी के मध्य होने वाले संग्राम में इसने गोरी की एक सेना का नेतृत्व किया था । सेना को चार भागों में विभाजित कर शाह ने तीस सरदारों को नियुक्त किया जिनके साथ विश्व में अभिमानी आलमखाँ, निर्वासित उजबकखाँ, उपनायक छोटा मारुफ तथा पहलवान दुस्तनखाँ थे । शाह ने इन सरदारों को साथ लेकर हिन्दुओं के दल पर आक्रमण कर दिया । शोर मचाते हुए इन सरदारों ने अपनी-अपनी सेना लेकर नदी पार की । पृथ्वीराज उपयुक्त सूचना पाकर क्रोध से भर गया—

करि तमा इ चौ साहि , तीस तहँ रण्वि फिरस्ते ।

आलम खाँ आलम गुमान , पांन उजबक निरस्ते ॥

लहु मारुफ गुमस्त , पांन दुस्तम वजरंगी ।

हिन्दु सेन उप्परे , साहि वज्ज रन जंगी ॥

सह सेन टारि सोरा रच्यो , साहि चिन्हाव सु उत्तर्यो ।

सभले सूर सामन्त नृप , रोस वीर वीर दुर्यो ॥ छं० ४५ ।<sup>४</sup>

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ३२-३८, स० ९ ।

२. वही, छं० ४५, स० ९ ।

३. वही छं० ५२-५५, स० ९ ।

४. वही, छं० ६२, स० ९ ।

५. वही, छं० ७१, स० ९ ।

६. वही छं० ४५, स० २७ ।

उजबकखाँ—‘पृथ्वीराज रासो’ के मतानुसार वीर उजबक खाँ गजनीपति शाह शहाबुद्दीन गोरी का सामन्त था। नर्मदा के तट पर पृथ्वीराज से युद्ध के लिए अग्रसर होने पर शाह गोरी ने एक सेना के नेतृत्व का भार उजबक खाँ को दिया था।<sup>१</sup> पराक्रमी उजबक खाँ ने हिन्दू दल से घोर संग्राम करके अपनी वीरता का पर्याप्त परिचय दिया। हुसेनखाँ हिन्दू सेना पर आक्रमण हेतु अग्रसर हुआ और घुड़सवार सेना ने उसका अनुकरण किया। संग्राम में भागे हुए सैनिकों को पुनः रोकने के लिए उजबकखाँ रण क्षेत्र में रोक लगाये खड़ा रहा। तातारखाँ तथा अन्य सरदार एक साथ अग्रसर हुए तथा गोरी भी शीघ्रता से आगे बढ़ कर शत्रु सेना के समक्ष झूमने लगा। शाह ने अपनी तलवार घुमाकर प्रतीक्षा की, कि यदि संघर्ष तक युद्ध में शत्रु को भली-भाँति पराजित न कर दूँ, तो शाह न कहलाऊँगा—

पां हुसेन डरि पर्यो, अत्त फुनि पर्यो सार वहि ।  
झुज्ज फेरि सत सीव, पांन उजबक पेत्त रहि ॥  
पां ततार मारुफ, पांन पांन घट घुम्मे ।  
तव गोरी सुविहांन, आइ दुज्जन मुप झुम्मे ॥  
फर तेग झल्लि मुट्टिय सुवर, नहि सुरतानह पन करी ।  
आवि हार दीह पलटे सुवर, तर्वाहि साहि फिर पुवकरी ॥ छ० १४६।<sup>२</sup>

केलीखाँ कुंजरी—‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार केलीखाँ कुंजरी गजनीपति शाह गोरी का सरदार था। इसने रेवातट पर पृथ्वीराज से होने वाले संग्राम में गोरी की ओर से शाह की जिरह-बख्तर से सुसज्जित सेना का संचालन किया था—

केली पां कुंजरी, साह सारी दल पप्पर ॥ छ० ४४।<sup>३</sup>

खाँपिंदामहमूद—‘पृथ्वीराज रासो’ के मतानुसार खाँपिंदामहमूद गजनीपति शाह शहाबुद्दीन गोरी का सहजादा था जिसने पृथ्वीराज तथा गोरी के मध्य युद्ध होने पर रेवातट पर एक सेना का सेनापतित्व किया था—

रचि हरवल सुरतानं, साहिजादा सुरतान ॥ छ० ४४।<sup>४</sup>

इस संग्राम में महमूद का सामना पृथ्वीराज के प्रसिद्ध सामन्त लोहाना से हुआ। पराक्रमी लोहाना ने महमूद पर एक बड़ा भारी वाण चलाया जो उसका वक्षस्थल फोड़ कर घूम गया तथा ऊपर पीठ में आ निकला मानो द्वारवन्द देखकर उसने पीछे में खिड़की खोल

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ४५, स० २७।

२. वही, छं० १४६, स० २७।

३. वही, छं० ४४, स० २७।

४. वही, छं० ४४, स० २७।

दी । लोहाना ने फिर कटार निकाल ली तथा उसका अन्त करने के लिए संभला ही या कि भीर ने एक बार से उछाल कर उसे गिरा दिया तथा लोहाना सुमेर की परिक्रमा करने चला गया । रणक्षेत्र में गोरी के चौसठ खान मारे गये तथा पृथ्वीराज के तेरह राव-राजे वीरगति को प्राप्त हुए—

(तब) लोहानौ महमुद, वानं मुक्के बहुनारी ।

फुट्टि सु डढ़र वहि जु वान, पिट्ट ऊरद्ध निकारी ॥

मनों किवारी लागि, पुट्टि पिरकी उघ्धारिय ॥

कट्टारी वर कट्टि, वीर अवसान सेंभारिय ॥

एक क्षर भीर उज्झारि क्षर, करि सुमेर परिभरि सुफिरि ॥

चवसट्टि धान गोरी परे, तीन राइ इक राज परि ॥ छं० ११७ ।<sup>१</sup>

इतना अधिक घायल होने पर भी महमूद खाँ पुनः युद्ध करता हुआ दिखाई देता है । हुंकारने तथा नाद करने वाले वीर वानेत ने शहजदा महमूद का सामना किया तथा वह युद्ध करता हुआ वीरगति को प्राप्त हुआ—

पर्यौ वीर वानेत नादंत नाद ।

जिने साहि गोरी मिल्यौ साहिजांद ॥ छं० १२३ ।<sup>१</sup>

अतः उपर्युक्तः विवरण से स्पष्ट हो जाता है कि खाँपदामहमूद वास्तव में एक पराक्रमी तथा रण कुशल योद्धा था ।

खानखाना—‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार खानखाना गजनिपति शाह शहाबुद्दीन गोरी का भानजा था । ‘बड़ी लड़ाई को प्रस्ताव समय ६६’ के अन्तर्गत गोरी तथा पृथ्वीराज चौहान के मध्य होने वाले संग्राम में, इसने भाग लिया था और इन्होंने अपूर्व साहस एवं पराक्रम का परिचय दिया था—

तब तज्ज्यौ धान धानं करुंर । सुरत्तान मानेज जुद्धं जरुर ।

सहससंच पंच वरं वधि फौजं । वचं वाच दीनं सुदीन सरोज ॥ छं० १३७१ ।<sup>१</sup>

पराक्रमी खानखाना का सामना विपक्षी दल के योद्धा रावल समरसिंह से हुआ । दोनों पक्षों का घोर संग्राम हुआ जिसमें वीर रावल समरसिंह, खानखाना के प्रसिद्ध चोदह मोरों को स्वर्ग भेज कर अन्त में स्वयं भी युद्ध करता हुआ वीरगति को प्राप्त हुआ—

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ११७, स० २७ ।

२. वही, छं० १२३, स० २७ ।

३. वही, छं० १३७१, स० ६६ ।

समर सिध के तें कतें । जहं तहं कट्टे मार ।

गनं कौन हय गय क्षरें । परे पान दस च्यार ॥ छं० १३८४ ।

+

+

+

+

सिरदारह दस च्यार गिरि । समर सिध धन घाई ।

मुविहान चत्तरि परे । चट्टे पील मंगाय ॥ छं० १३८६ ।

दिपि पान पुरसान । गुर वर जंमथ्य उपदिय ॥

समर सिध मुप चहर । हिन्दु मेछन मिलि जुटिय ॥

गिद्धिन पल संग्रहन । जुथ्य लंवे रन आइय ॥

थोन परत निज्जरत । पय जुगिनि लं घाइय ॥

पलचरिय मेछ हिन्दु सहर । अच्छरि मल अति जग किय ।

महदेव सास वधे गरा । काल क्षरपि लीनी नुजिय ॥ छं० १३८७ ।

अन्त में जब महाराज पृथ्वीराज यवन सेना के मध्य बुरी तरह से घिर गये तब उन्होंने प्रोहित गुरुराम को बुलाकर अपने कुण्डल दान किए, और स्वयं घोर युद्ध में प्रवृत्त हो गये । इसी बीच गोरी के बह्वल नामक सामन्त ने गुरु राम का सिर काट दिया किन्तु गुरु राम ने भी मरते-मरते शाह के भानजे खानखाना पर ऐसा वार किया कि वह बच न सका तथा वीरगति को प्राप्त हुआ—

गुर डिग कूडलि देपि । पेपि बहवल्ल पान घपि ॥

द्रोपद सुत जिमि तेग । वेग क्षारी क्षनग क्षपि ॥

राम सोस लिय ईस । कमल विन पजर कट्टयौ ॥

हथ्य छेदि उर पान । पोठि पच्छं दल बट्टयौ ॥

वामग हथ्य अच्छरिय सुनहु । अरि कठि तें असिबार लियौ ॥

भानेज साहि साहावदी । हय समेज चव पैंड कियौ ॥ छं० १४२७ ।

इस प्रकार शाह के भानजे खानखाना का गुरु राम के हाथों धोके से बध हो गया तथा वह वीरगति को प्राप्त हुआ ।

खानखाना हजरत्तखाँ—‘पृथ्वीराज रासो’ के मतानुसार खानखाना हजरत्तखाँ शाह गहाबुद्दीन गोरी का सरदार था । नर्मदा नदी के तट पर पृथ्वीराज तथा गोरी के मध्य होने वाले संग्राम में खानखाना हजरत्तखाँ ने एक सेना का सेनापतित्व ग्रहण किया था । मालूम होता है ‘खानखाना’ इनका विरद था ।

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १३८४, १३८६ तथा १३८७, स० ६६ ।

२. वही, छं० १४२७, स० ६६ ।

वज्जीर पांन गोरी सुमर , पांन पांन हजरति पां ।

विय सेन सज्जि हरवल करिय , तहाँ उभो सजिरति छां ॥ छ० ४२ ।'

खिलचीखाँ—'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार वीर खिलचीखाँ गजनीपति शाह गोरी का सरदार था । लाहौर से आये हुए दूत ने जो सूचना पृथ्वीराज को दी उसके अनुसार ऐसा प्रतीत होता है कि खिलचीखाँ गोरी का सेनापति था क्योंकि उसने अपने सिर पर छत्र धारण कर रखा था—

पां मारुफ तत्तार , पांन खिलची वर गढ़े ।

चामर छत्र मुजक्क , गोल सेना रचि गढ़े ॥ छ० ४३ ।'

पराक्रमी वीर खिलची खाँ ने रेवातट पर पृथ्वीराज के साथ होने वाले संग्राम में अपार वीरता का परिचय दिया था । रणक्षेत्र में पृथ्वीराज के दल के सामन्त सोलकी माधवराय का खिलचीखाँ से सामना हुआ । दोनों पराक्रमी वीर थे । वीररस से परिपूर्ण हो गये । युद्ध में प्रबल, दोनों वीरों ने दोनों हाथों में तलवारें उठा ली । युद्ध-मध्य वीर सोलकी (चालुक्य) की तलवार टूट गई तथा उसने कमर से कटार खींच ली । किन्तु शत्रुओं ने उसे चारों ओर से घेर लिया तथा अधर्म युद्ध करने लगे । सारंग के बंधु के अनेक घाव लगे जिससे वह बाहृत होकर गिर पड़ा तथा गोरी ने उस पर घातक प्रहार कर मार डाला—

सोलकी माधव नरिंद , (पांन) पिलची मुप लगा ।

सुवर वीर रस वीर , वीर वीरा रस पगा ॥

बुअन बुद्ध जुध तेग , दुहू हय्यन उप्नारिय ।

तेग तुट्टि चालुकक , बय्य परि कद्धि कटारिय ॥

अग अग रुक्कि ठिल्ले वलन , अधम जुद्ध लग्गे लरन ।

सारंग बध घन घाव परि , गोरी वै दिन्नी मरन ॥ छ० ९९ ।'

अपने बंधु का शव ढूँढते हुए सारंग सोलकी अचानक वीर खिलचीखाँ के सम्मुख आ गया । वह पहले पंगराज का भूत्य था, किन्तु इस युद्ध में चौहान पृथ्वीराज की ओर से युद्ध कर रहा था । कन्हू, सारंग को संकट में देखकर दो घोड़ों के कंधों पर पर रच पड़े हो गये तथा हाथी के समान गर्जना करने लगे जिससे पृथ्वी तथा कन्दरायें गूँज उठी । देवताओं ने जय-जय कार किया तथा पुष्प वृष्टि की । वह भूमि ढूँढता तथा कन्हू चिल्लाने की धुन बाँधे रहा—

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छ० ४२, स० २७ ।

२. वही, छ० ४२, स० २७ ।

३. वही, छ० ९९, २७ ।

सोलंकी सारंग, पांन पिलची मुप लग्गा ।  
 वह पंगा नाँ भ्रत, इतें चहुआन विलग्गा ॥  
 हें लंघन दिप पाप, कन्ह उत्तर विय वाजिय ।  
 गज गुंजार हुँकार, घरा गिर कंदर गाजिय ॥  
 जय जयति देव जय जय करहि, पहु पंजलि पूजत रिनह ।  
 इक पर्यो पेत सोधें सकल, इक्क रह्यो बंधे घुनह ॥ छं० १०४ ।'

उपर्युक्त छन्द को रासो में देखकर उसके सम्पादकों ने इसी छन्द के अन्तर्गत खिलची खाँ को मरा हुआ जान कर 'रासोसार' में इसका अर्थ इस प्रकार दिया है—'इधर जब खिलची खाँ के मुकाबिले में दो तीन अच्छे-अच्छे वीर काम आये तब सारंगदेव ने उस पर आक्रमण किया, सारंगदेव ने अपने घोड़े को एड देकर खिलचीखाँ के हाथी के मस्तक पर जा टपकारा । इस अद्भुत कौशल से इधर तो हाथी चिक्कार उठा उधर सारंगदेव ने खिलची खाँ को मार कर दो कर दिया ।'

उपर्युक्त छन्द को देखते हुए सम्पादक मण्डल का इस प्रकार से लिखना उचित नहीं जान पड़ता । सत्य से वह कोसों दूर है । वास्तव में खिलची खाँ इस संग्राम में मारा नहीं गया था । अन्य युद्धों में भी वह सहज ही देखा जा सकता है ।

खुरासानखाँ—'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार खुरासान खाँ गोरी का सरदार था ।' हुसैन कथा के अन्तर्गत पाते हैं कि खुरासान खाँ ने पृथ्वीराज चौहान की सेना से अपार पराक्रम के साथ युद्ध किया किन्तु परास्त होकर भाग गया तथा गोरी की सेना से जा मिला ।'

गाजीखाँ—'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार वीर गाजीखाँ गोरी का सामन्त था । 'बड़ी लड़ाई को प्रस्ताव' के अन्तर्गत गोरी तथा पृथ्वीराज के मध्य होने वाली लड़ाई में इसने भाग लिया था । गोरी के साथ एक लाख सवार, नौ लाख पैदल और दस हजार हाथी थे । जब गोरी ने राजपूत सेना के आक्रमण के विषय में सुना तो उसने अपने मंत्री को भी अपनी समस्त सेना को तैयार हाँकर, व्यूहवद्ध होने की आज्ञा दी । तदनुसार मुसलमान सेना भी सज धज कर मैदान में जम गई तथा इस प्रकार से व्यूहवद्ध हुई, दो लाख सिपाही, दो हजार हाथी, तथा चिमनखाँ, समीरखाँ, णाह का भाई उसमानखाँ, महमूद खाँ, रुस्तमखाँ, नुरेसखाँ, हाजीखाँ, तथा गाजीखाँ आदि सामन्त तथा पाँच सौ गवखरों के साथ महामंत्री

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १०४, स० २७ ।

२. रासोसार, नागरी प्रचारिणी सभा काशी पृ० १०२ ।

३. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ५९, स० ९ ।

४. वही, छं० १५८-१६७, स० ९ ।

सातारखाँ दाहिनी बाजू पर था ।<sup>१</sup> दोनों दलों में विकट संग्राम हुआ । विपक्षी दल के वलिभद्र की मृत्यु के उपरान्त पावस पुण्डरीर अग्रसर हुआ जिसका सामना वीर एवं पराक्रमी गाजीजी ने किया । दोनों योद्धाओं में विकट संग्राम हुआ किन्तु अन्त में पावस पुण्डरीर वीरगति को प्राप्त हुआ तथा गाजी खाँ की विजय हुई—

मुक्किय जू संगि उन्हें उनाह । लगिय जुउअर कुट्टिय पराह ॥

चल्ले सुसंग जर वीर इन । असिझाक सीस तुट्टे सजन ॥ ११५८ ॥

सिर परे इन लग्गे सुवथ्य । चंपयी पान गाजी सुहथ्य ॥

नण्णयो घरनि गाजी सुषान । संभुही सूर घायी परान ॥ छं० ११५९ ।<sup>१</sup>

जलाल जलूस—‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार जलाल जलूस गोरी का सामन्त था, जिसने ‘बड़ी लड़ाई को प्रस्ताव समय ६६’ के अन्तर्गत पृथ्वीराज चौहान तथा शाह शहाबुद्दीन गोरी के मध्य होने वाले अन्तिम संग्राम में भाग लिया था । विपक्षी दल के वीर एवं पराक्रमी योद्धा वलिभद्र को अग्रसर होता देखकर जलाल जलूस उसके आड़े आ गया—

समैं तिन सथ्य वलीभद्र वीर । लगे अरि सौं असि तेग तरीरं ॥

सन मुंष आय जलाल जलूस । ततारह बंध जरे तन जूस ॥ छं० ११३९ ।<sup>१</sup>

पराक्रमी जलाल जलूस तथा विपक्षी दल के योद्धा वलिभद्र के मध्य विकट संग्राम हुआ । दोनों ने ही अपने-अपने कौशल का खुलकर प्रदर्शन किया किन्तु वीर जलाल जलूस ने अपनी तलवार का एक ऐसा वार किया जिससे वीर वलिभद्र का सिर घड़ से अलग जा गिरा किन्तु जलाल जलूस भी उसके वार से न बच सका और वीरगति को प्राप्त हुआ—

हहविकय धविकय धामिय ताहि । पर्यौ विपि बधव लगिय दाह ।

सनमुष सारिय क्षारिय पगग । पर्यौ वलिभद्रह सीस अलग ॥ छं० ११४८ ।

हयौ विन सीस असीवर क्षाक । पर्यौ सिर सथ्यह तुट्टिय साक ।

विना सिर धधिय धामिय वीर । परे सय दून सुहथ्यह मोर ॥ छं० ११४९ ।<sup>१</sup>

इस प्रकार जलाल जलूस अपना अपूर्व रण कौशल दिखाकर इस लोक से सर्वदा के लिए विदा हो गया । इतिहास से इनके विषय में कोई उल्लेखनीय प्रमाण नहीं मिलता ।

जहाँगीरखाँ—‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार जहाँगीर खाँ गजनीपति गोरी का सरदार था । गोरी की सेना ने पृथ्वीराज पर आक्रमण करने के लिए चिनाव नदी पार की, उस

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ११५५ स० ६६ ।

२. वही, छं० ११५९, स० ६६ ।

३. वही, छं० ११३९, स० ६६ ।

४. वही, छं० ११४८-४९, स० ६६ ।



समय एक दूत ने पृथ्वीराज को गोरी की सेना के विषय में सूचना दी। दूत के द्वारा ही जहाँगीरखाँ के विषय में भी मालूम होता है, “अन्य योद्धाओं के साथ विजयी जहाँगीर खाँ, दगावाज हिन्दूखाँ, पश्चिमी खाँ तथा पठान हरावल रचकर उपस्थित हुए—

जहाँगीर पान जहगीर वर, पां हिन्दू वर वर बिहर।

पच्छिमी पांन पट्टान सह, रचि उप्मी हरवल गहर ॥ छ० ४३ ।<sup>१</sup>

अतः स्पष्ट है कि नर्मदा नदी के तट पर होने वाले संग्राम में गोरी की ओर से जहाँगीर खाँ नामक, किसी सरदार ने युद्ध में भाग लिया था। रासोकार ने इसका विस्तृत वर्णन इस समय के अन्तर्गत नहीं दिया है। इतिहास भी इस नाम के किसी योद्धा का प्रमाण प्रस्तुत नहीं करता।

तातारखाँ—पृथ्वीराज रासो के मतानुसार वीर तातारखाँ गजनीपति शाह शहाबुद्दीन गोरी का प्रधान सेनापति एवं मंत्री था। ‘रासो’ में स्थान-स्थान पर गोरी को, इससे सलाह लेता हुआ पाते हैं। चन्द ने कहीं-कहीं पर तातारखाँ के लिए ‘खाँ तातार मारुफ खाँ’ नाम का प्रयोग किया है। ऐसा मालूम होता है कि इसका पूरा नाम ‘तातार मारुफ खाँ’ रहा होगा जिसे चन्द ने संक्षेप्ता के कारण कहीं-कहीं पर तातार खाँ लिख दिया है—

खाँ ततार मारुफ पां, लिये पांन कर साहि।

घर चहुआनी उप्परै, वज्जा वज्जन वाई ॥ छ० १४ ।<sup>१</sup>

डॉ० विपिनविहार। श्रिवेदी भी तातार मारुफ खाँ को दो व्यक्ति नहीं मानते, उन्होंने लिखा है कि ‘यह इस (रेवातट समय) युद्ध में शहाबुद्दीन गोरी का प्रधान सेनापति समझ पड़ता है, क्योंकि इस सम्पूर्ण सभ्यों में हम उसे एक प्रतिष्ठित पद और मुख्य-सैन्य-संचालन में पाते हैं। नागरी प्रचारिणी सभा (पृथ्वीराज रासो) में इस छन्द के ऊपर के नीट में एक नाम ‘तातार-मारुफखाँ’ के स्थान पर तातारखाँ और मारुफखाँ दो नाम पाये जाते हैं जो उचित नहीं समझ पड़ते। दोहे का अर्थ है कि खाँ तातार मारुफ खाँ ने शाह के हाथ से पान का बीड़ा उठाया (प्राचीन समय में यह नियम था कि जब कोई कठिन कार्य या उपस्थित होता था तो दरबार में पान का बीड़ा रखकर अपेक्षित कार्य की सूचना दी जाती थी अतएव जो सरदार अपने को उस काम के करने के योग्य देखता वह बीड़ा उठा लेता) —जो प्रथानुमार भी ठीक है अतएव तातार-मारुफखाँ एक व्यक्ति है। डॉ० ह्यीनले भी एक ही व्यक्ति मानते हैं। दो व्यक्तियों का भ्रम इस शब्द (खाँ तातार-मारुफ खाँ) के दोनों ओर खाँ

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छ० ४३, स० २७।

२. वही, छ० १४, स० २७।

लगाने से ही हो गया है परन्तु चन्द ने रासो के अनेक स्थलों पर एक ही व्यक्ति के लिए इसके अनुरूप प्रयोग किये हैं ।”

‘रेवातट समय’ के अन्तर्गत तातारखाँ की वीरता देखते ही बनती है । गोरी की सेना को पृथ्वीराज की सेना ने बुरी तरह घेर लिया । सुभट गोरी का तेज छूट गया किन्तु ऐसी स्थिति में तातारखाँ ने धीर्य नहीं खोया तथा गोरी का प्रबोधते हुए कहा—कि मेरे रहते हुए आप पर अर्थात् सुल्तान पर कष्ट नहीं पड़ सकता :—

तेज छुटि गोरी सुवर , दिय धीरज ततार ।

मो उपभं सुरतान को , भीर परीइ न वार ॥ छं० ८० ।’

इसके उपरान्त तातारखाँ ने जो घोर अंग्राम किया उसकी प्रशंसा किए बिना नहीं रहा जा सकता । विपक्षी दल की ओर से वीर विड्डुरराय युद्ध भूमि में अग्रसर हुए जिन्हें वीर तातारखाँ ने कुछ ही क्षणों में परास्त कर वीरगति को प्राप्त कराया—‘विड्डुरराय अपनी तलवार चलाने की योग्यता पर विश्वास करके तातार मारुफाँ की ओर अग्रसर हुआ । वीर तातारखाँ ने एक प्रहार ऐसा किया जिससे वीर विड्डुरराय का सिरस्त्राण टूट कर बिछर गया तथा उसका शरीर पंचतत्व को प्राप्त हुआ—

मनि लोह मारुफ , रोस विड्डर गाहक्के ।

मनो पंचानन बाहि , सद सिरसइ हहक्के ॥

डुहं भीर वर तेज , सोस इक सिघट्ट वाही ॥

टोप टुट्टिवर करी , चद उप्पमा सुपाई ॥

मनुसीस वीय अंग विज्जुलह , रही हेत तुटि भाम न हति ।

उतमग दुहै विव टुक ह्वै , मनु उडगन नृप तेजमति ॥ छं० ११८ ।’

इस प्रकार, प्रायः समस्त रासो में गोरी के वर्णन के साथ-साथ तातारखाँ का भी वर्णन मिलता है ।

बड़ी लड़ाई को प्रस्ताव समय ६६ के अन्तर्गत वीर तातारखाँ को पुनः युद्ध करता हुआ देखते हैं । पृथ्वीराज चौहान तथा गोरी के मध्य निर्णायक संग्राम होने वाला है । दोपहर के समय रावल समरसिंह युद्ध भूमि में अग्रसर हुए । तातारखाँ इनका सामना करने के लिए अपनी विशाल सेना लेकर आगे बढ़ा—

१. डॉ० विपिनबिहारी त्रिवेदी, रेवातट समय, द्वितीय भाग, पृ० २०, हिन्दी विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, सन् १९५३ ई० ।

२. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ८०, स० २७ ।

३. वही, छं० ११८, स० २७ ।

समर सिंघ मारय्य मिलि । उत मिलि पान ततार ।

अप्य अप्य भीरम्म करि । ज्यों वहल घन सार ॥ छं० १०६६ ।

दोनों दलों में घोर संग्राम हुआ, योद्धागण कट-कट कर गिरने लगे । समस्त पृथ्वी खून से लाल हो उठी । घोर संग्राम के मध्य वीर तातारखाँ की पराजय हुई तथा नागरी प्रचारिणी सभा, काशी से प्रकाशित पृथ्वीराज रासो के सम्पादकों के मतानुसार तातारखाँ की मृत्यु भी हो गई, तथा उसके स्थान पर वीर निमुरत्तिखाँ ने अपनी सेना को अग्रसर किया—

मुरत पान ततार । ताम निमुरति पान लपि ॥ छं० १०७४ ।

किन्तु रासो में स्पष्ट रूप से कहीं भी नहीं लिखा है कि वीर तातारखाँ वीरगति को प्राप्त हुआ । दूसरे अगले समय 'वान वेध प्रस्ताव समय ६७' के अन्तर्गत पुनः उसे जीवित अवस्था में देखते हैं । इससे स्पष्ट है कि सम्पादकों का कथन उचित नहीं ।

अन्तिम संग्राम में पृथ्वीराज की पराजय हुई, गोरी, पृथ्वीराज चौहान को बन्दी बनाकर गजनी ले गया तथा नेत्र विहीन करके कारागार में डाल दिया । पृथ्वीराज का दरबारी कवि उन्हें छुड़ाने के उद्देश्य से गजनी गया । कवि ने अपने वाक चातुर्य एवं कुशल व्यवहार से शाह को, नेत्र विहीन महाराज पृथ्वीराज चौहान का शब्द वेधी वाण चलाने का कौशल देखने के लिए प्रसन्न कर लिया । चन्द ने शाह से यह भी वचन लिया कि फरमान यदि आप स्वयं देंगे, तभी चौहान अपना कौशल दिखावेगा । चन्द की बात का कोई मर्म न समझ सका, तथा मंत्री तातारखाँ ने भी चन्द की बात को लक्ष न किया और उसे डपटा कि क्या निरर्थक बात करता है—

तव ततार झुकि उठ्यो । भट्ट जीवन पर रूठी ॥

पात साहि गोरी नरिद । अगं भयो झूठो ॥

सत्त सुनर धरियार । अग्र विन इक्क न विद्विय ॥

मरद सुमुष उच्चरहि । होई अगं जो सिद्धिय ॥

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १०६६, स० ६६ ।

२. गिरं उतमग उठे श्रोन लल्लै । सुभं दग लग्गे सुपावक्क प्रल्लै ॥

नचं कंध हीनं कवंध कलापं । जणी जोगनी जोग जांप अलापं ॥ छं० १०६९ ।

रंगी रंग नूमी वितालं उत्तहं । घरं कंध उद्ध विरद्ध विरद्ध ॥

गपंनंति गिद्ध सुसिद्ध विमानं । वरं रंभ रथ्यं सुरं तंत थोनं ॥ छं० १०७०, स० ६६ ।

३. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, पृ० २२८५ ।

४. वही, छं० १०७४, स० ६६ ।

फूरमान साहि तुहि तो नहीं । जिय चहुआन न होइ कल ॥

इह बाह एह सिंगिन धरिय । ए धरियार न विद्धि बल ॥ छं० ४३६ ।<sup>१</sup>

कवि चन्द ने विश्वास दिलाते हुए कहा कि यदि शाह वचन दें तो प्रत्यक्ष तमाशा देख लें; शाह आज्ञा देने के लिए राजी हो गया तथा पृथ्वीराज का शब्द वेधी बाण चलाने का कौशल देखने के लिए रंगभूमि में घड़ियाल सजाये गये, उनका कौशल देखने के लिए दर्शकों का अपार समुदाय एकत्र हो गया । मंत्री तातारखाँ ने शाह को समझाया कि आज जुमेरात का दिन है तथा रात्रि में मैंने बहुत अशुभ स्वप्न देखा है । अतः आज यह तमाशा न देखिए—

देखि भूप नक पून वर । पां ततार कहि नांति ॥

आज रवि साहाव वर । भरयो दिवस जमांरति ॥ छं० ४४७ ।

बोलि पान ततार । साहि सपनतर जबकहि ॥

अद्भुत चरित मैं दिट्ट । सोस दिट्टी न पोज लहि ॥

ग्रद्धसार संसार । पीर पंगम्बर रुट्ट ॥

विन बहुर उम्मरी । मेघ आफूत सु बुट्ट ॥

वर स्वान सिध जुबुक सयन । हरसिद्ध बीबी झगरी ॥

एजरत वार मट्टन सकल । अकल किति सम्हौ लरी ॥ छं० ४४८ ।

और भी—

कहै पांन ततार । साहि दुल्लन मनुच्छ जम ॥

वार वार पावै न । बहुरि अवतार राज क्रम ॥

छिन मे देह भजत । प्रान धरिजै इह घत्ते ॥

वर कोटर धरियार । उत न बट्टे जुध तत्ते ॥

इह देह जतन करि पारियं । कहै पीर पंगवरह ॥

पल मट्ट तदिन निधि अणष वह । सुनौ साहि कहि उम्मरह ॥ छं० ४५० ।<sup>१</sup>

मंत्री तातारखाँ ने नाना प्रकार से शाह को समझाने का प्रयत्न किया किन्तु शाह ने उत्तर दिया कि मैं दिया हुआ वचन नहीं पलट सकता । यह सुनकर तातारखाँ खीस कर दरबार से उठ कर चला गया—

झुकि ततार पां उट्टि । हाथ सिर झारि सोस घुनि ॥

वर मुक्क दरबार । गई सुरस्तान मत्ति फुनि ॥

विधि विधान नृम्मान । मत्ति घट्टी पंगम्बर ॥

बोलि पान पुरसान । दिण्णि ततार भिस्ति घर ॥

१. पृथ्वीराज रासो नागरी प्रचारिणी समा काशी, छं० ४३६, स० ६७ ।

२. वही, छं० ४४७-४४८ तथा ४५०, स० ६७ ।

कविचन्द्र राज चहुआन पै । सर अद्भुत उच्चार पिय ॥

घरियार एक सत सर इकै । वर वर वद भारे सरिय ॥ छं० ४५३ ।<sup>१</sup>

रंगभूमि में सब साज सामान ठीक करने के उपरान्त, पृथ्वीराज को बुलाया गया । योग्य एवं दूरदर्शी मंत्री ने शाह से एक बार पुनः अनुरोध किया कि ऐसा भीषण तमाशा मत देखिए—

अही साहि साहाब । सुनी अरदास हित हर ॥

अरि मू इहे आरिष्ट । दिपि अनमूत तेज नर ॥

इह कमान उत्तान । जोर जूतान समान ॥

नन दीजै या हथ्य । चिति प्राक्रम पुमागं ॥

कम्मान याहि संगह सजै । सु जनु नाग लहिय मनी ॥

सय पपं चित्ह संगह मिलं । चिति काल कत अप्पनी ॥ छं० ४७१ ।

बीर भी—

काल व्याल दसा कराल । समपंष कोष सम ।

ता आनन अगुरी । कीड मेलं सुमत क्रम ॥

आय अभुत उम्मारा । सीम पपलि सब सज्जै ॥

क्रोध सज्ज करिवान । मत्त मारहि विन कज्जै ॥

वचै सुसाहि ततार तुअ । मम करि चित ततार जुअं ॥

विन नयन वान इच्छे गुनै । सो नन विद्वं घात तुअ ॥ छं० ४७२ ।<sup>१</sup>

इतना स्पष्ट रूप से समझाने पर भी शाह की समझ में कुछ न आया, तथा उसने अपने मुख से आज्ञा प्रदान की । पृथ्वीराज ने गोरी के शब्दों को लक्ष कर बाण चलाया जिससे गोरी को योग्य मंत्री ततारखाँ की बात न मानने का परिणाम भोगना पड़ा, अर्थात् गोरी महाराज पृथ्वीराज चौहान का बाण खा कर भूमि पर आ गिरा तथा उसका प्राणान्त हो गया । इस कथा में सत्य का अंश कितना भी हो किन्तु तातारखाँ की योग्यता पर अवश्य ही अच्छा प्रकाश पड़ता है ।

महाराज पृथ्वीराज चौहान की मृत्यु के उपरान्त दिल्ली पर उनका एक मात्र पुत्र रयनसी राज्यगद्दी पर बैठा । गजनी के उत्तराधिकारी ने एक बार पुनः दिल्ली पर आक्रमण किया । दिल्ली को चारों ओर से घेर लिया गया । इस संग्राम में भी बीर तातारखाँ ने भाग लिया था । सात माह तक मुसलमान सेना दिल्ली का किला घेरे पड़ी रही किन्तु

१. पृथ्वीराज रासो. नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ४५३, स० ७७ ।

२. वही, छं० ४७१-७२, स० ७७ ।

किला उनके हाथ न आ सका । अन्त में तातारखाँ ने किले की एक दीवार को मुरंग लगा कर उड़ा दिया—

सप्त मास दिन उमय वर । दोहन मंह्यो वीर ॥  
 वजे असपति साम दह । गज्जि सुगोरी वीर ॥ छ० ८८ ।  
 तव तत्तारहि कसति । सार सीघड़ मुप नारिय ॥  
 करि सुरंग संचार । मद्धि दर मंस सुधारिय ॥  
 करिय सज्ज सब सेन । आनि आतस संचारिय ॥  
 लगि कसान पाषान । उड़िय असमान अंगारिय ॥  
 आघात सोर सोराँ सुवजि । लेहु लेहु मुप मेछ कहि ।  
 हिंदवान प्रान अव तुच्छ हैं । फते नाम सुविहान लहि ॥ छ० ८९ ।

तातारखाँ की दूरदर्शिता के परिणाम स्वरूप ही दिल्ली का राज्य गजनी की सत्तनत में मिल सका ।

तातार निसुरत्तखाँ—‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार वीर निसुरत्तखाँ, गजनीपति शाह शाहबुद्दीन गोरी का सेना नायक तथा प्रमुख सामन्त था । ‘रेवातट समय २७’ के अन्तर्गत पृथ्वीराज चौहान तथा मुहम्मद गोरी के मध्य रेवा नदी के तट पर भीषण संग्राम होने पर वीर निसुरत्तखाँ ने गोरी की ओर से भाग लिया था । इस युद्ध में गोरी को बन्दी बना लिया गया था । साथ ही निसुरत्तखाँ भी न बच सका—‘सुल्तान गोरी को बन्दी बना लिया, हुसेनखाँ को नष्ट कर दिया गया तथा तातार निसुरत्तखाँ को शोली बना कर बांध लिया गया । गोरी के चमर-ठत्र रखने का समय व्यतीत हो गया । समरांगण में चौहानों की जय-जय कार गूँज उठी । दिल्लीपति पृथ्वीराज चौहान गोरी को हाथी पर बांध कर दिल्ली की ओर ले चले । नर-नाग तथा देवता स्तुति करने लगे कि महाराज पृथ्वीराज पृथ्वी पर इन्द्र के समान यशस्वी हों—

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छ० ८८-८९. स० ६८ ।

२. तातारखाँ का नाम प्रायः रासो के समस्त संस्करणों में प्राप्त होता है । सभी संस्करणों को देखने से स्पष्ट होता है कि तातारखाँ ने गोरी की ओर से ही पृथ्वीराज से युद्ध किया था, १-पृथ्वीराज रासो—साहित्य संस्थान उदयपुर । २-पृथ्वीराज रासो—रायल ऐशियाटिक सोसाइटी, लन्दन (अप्रकाशित), ३-पृथ्वीराज रासो—धारणोज की प्रति (अप्रकाशित) ।

३. प्रतीत होता है कि निसुरत्तखाँ तातार देश का निवासी था । सभी कवि चन्द ने उसे तातार निसुरत्तखाँ लिखा है । तातार तुर्क जाति के थे । तुर्क जाति की दो मुख्य शाखाएँ होती हैं—(१) तातार तथा (२) मंगोल । रासो के समस्त संस्करणों में इस नाम का जोड़ा गोरी की ओर से युद्ध करता हुआ दिखाई देता है ।

गहि गोरी सुरतान , पान हुस्नेन उपारयो ॥

पां ततार निसुरत्ति , साहि शोरी करि डारयो ॥ छं० १४८ ।<sup>१</sup>

सन्धेय में वीर निसुरत्तखा के दर्शन गोरी के साथ प्रायः सभी युद्धों में होते हैं। बड़ी नट्टाई को प्रस्ताव समय ६६' के अन्तर्गत हम पुनः पराक्रमी वीर निसुरत्तखा को युद्ध करता हुआ देखते हैं। पृथ्वीराज चौहान तथा गोरी के मध्य निर्णायक युद्ध हो रहा है। वीर निसुरत्तखा भी अपने एक हजार श्रेष्ठ योद्धाओं को लिए हुए संग्राम कर रहा है किन्तु दुर्भाग्य, उसके एक हजार सैनिक वीरगति को प्राप्त हुए। निसुरत्तखा को हारता देखकर स्वयं शाह उसकी सहायतार्थ अग्रसर हुआ—

दल आसुर दह पिंड , लोह झर भर आहुटिय ॥

सहस एक निज सेन , देष निसुरत्ति सु घटिय ॥

तब आवरतन वीर , सेष सेना आभासिय ॥

मम मज्जों धरो लाज , करी कंदल असि रासिय ॥

परसंसि सहस सेना सकल । बल बधयो साहाब गजि ॥

तजि मोह पिंड सजि मिरति मन , भाय दीन महमुंद भजि ॥ छं० १०८० ।<sup>१</sup>

शाह को अपनी सहायतार्थ बढ़ता देखकर वीर निसुरत्तखा का हौसला और बढ़ा तथा वह विपक्षी दल के योद्धा कन्हाराय से विकट संग्राम करने लगा। दोनों योद्धाओं ने अपने-अपने घात-प्रतिघात किये किन्तु अन्त में वीर निसुरत्तखा पंचतत्व को प्राप्त हुआ—

इसी जुद्ध कन्ह महावीर कीन । महा जोति में जोति संयान लीन ॥

महाजोग ध्यानं सुग्यानं जुमत्ती । जुरे जुद्ध पार्वतिका सार वृत्ती ॥ छं० १०९५ ।

जिके कन्ह चित्रंग सों बोलबोले । तिके पण्य मग्न दरवार षोले ॥

इसी जुद्ध सेनापती राउ कीनी । जिने पान निसुरत्ति कों भिस्त दीनी ॥ छं० १०९६ ।<sup>१</sup>

किन्तु आश्चर्य तब होता है जब पुनः निसुरत्तखा को जीवित अवस्था में देखते हैं। अन्तिम युद्ध में पृथ्वीराज को वन्दी बना लिया गया तथा गोरी उन्हें अपने साथ गजनी ले गया। वहाँ पर पृथ्वीराज को नेत्र विहीन कर दिया गया। पृथ्वीराज चौहान का मित्र एवं कवि नन्द वरदायी गजनी पहुँचा तथा गोरी को पृथ्वीराज का शब्दवेधी वाण का कौशल देखने के लिए तैयार कर लिया। अब पृथ्वीराज रगभूमि में चमत्कार दिखाने के लिए उपस्थित किया गया। दुर्जावखा ने पृथ्वीराज को कई कमानें दी, जिन्हें उन्होंने खींचकर तोड़

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १४८, स० २७ ।

२. वही, छं० १०८०, स० ६६ ।

३. वही, छं० १०९५-९६ स० ६६ ।

डाला। तब मीरा शाह की कमान प्रस्तुत की गई, उनका खींचना देखकर विलन्दीखी ने कहा यदि घडियाल फोड़ दिए तो शाह बहुत कुछ देगा।<sup>१</sup> इस पर चन्द ने कहा कि राजा की स्वयं की कमान दिलाई जाय, फिर हुआयखां ने वही धनुष दिया।<sup>१</sup> महाराज पृथ्वीराज अपना धनुष प्राप्त कर प्रसन्न हो उठे। इसी बीच मिसुरत्तखी ने उनके हाथ में तरकस भी दे दिया—

तब साहि ताम बच्चयो अमोर। निमुरत्ति देहु तरकस तीर॥

निमुरत्ति आनि दिय साहि हथ्य। तरकस तीर गोरी गुरथ्य॥ छं० ४८४।<sup>१</sup>

वास्तविकता यह है कि रासो में इस प्रकार की असंगत बातें अनैकानेक स्थानों पर देखने को मिलती हैं। असम्भव नहीं, यदि यह सब क्षेपककर्ताओं की कृपा का फल हो। जब तक कि रासो के समस्त संस्करणों का वैज्ञानिक अध्ययन करके उसका सम्पादन नहीं हो जाता, तब तक ऐसी असंगत बातों को देखकर रासो में विद्वानों की आस्था का अड़िग रहना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है। विद्वानों ने ऐसी असंगत तथा तर्क हीन बातें देखकर ही रासो को अप्रामाणिक तथा अनैतिहासिक होने का नारा लगाया। उसके बाद जो विषाद युद्ध हुआ है, वह सर्व विदित है ही।

दुस्तमखां—‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार बीर दुस्तमखां गजनीपति शाह शहाबुद्दीन गोरी का सेना नायक था। गोरी ने लाहौर पर आक्रमण करके चिनाव नदी को किस प्रकार पार किया, इसका विवरण प्रस्तुत करता हुआ एक दूत पृथ्वीराज चौहान से कहता है कि— ‘सेना को चार भागों में विभाजित करके शाह ने तीस पदाधिकारी नियुक्त किये जिनके साथ विश्व में अभिमानी आलमखां, निर्वासित उजबक्खां, उपनायक छोटा मारुफ तथा पहलवान दुस्तमखां थे। शाह ने इन सरदारों के साथ हिन्दुओं पर आक्रमण कर दिया है। शोर मचाते हुए अपनी सेना को अग्रसर किया तथा चिनाव नदी पार की।’ दूत की बात सुन कर सम्भल के शूर, सामन्तों ने स्वामी और श्रेष्ठ बीर पृथ्वीराज का क्रोध फूट पड़ा—

करि तमा इचौ साहि, तीस तहें रथि फिरस्ते।

आलम पां आलम गुमान, पान उजबक् निरस्ते॥

लहु मारुफ गुमस्त, पांन दुस्तम यजरंगी।

हिन्दु सेन उप्परे, साहि वज्जं रनं जगी॥

- 
१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ४६३-६८ स० ६७।
  २. वही, छं० ४६९-७३, स० ६७।
  ३. वही, छं० ३८४, स० ६७।



सह सेन टारि सोरा रत्नौ, साहि चिन्हाव सु उत्तरयौ ।

सन्नेले सूर सामत नृप, रोस वीर वीर दुरयौ ॥ छं० ४५१ ।

उपर्युक्त छन्द से स्पष्ट है कि दुस्तमखाँ पहलवानी अर्थात् मल्ल युद्ध के लिए प्रसिद्ध रहा होगा तभी उसे कवि ने पहलवान शब्द से सम्बोधित किया है ।

घरिखाँ—ग्रन्थकार ने घरिखाँ का परिचय 'कनवज्ज खण्ड' के अन्तर्गत प्रस्तुत किया है । घरिखाँ पंग राज की सेना का सेनापति था । संयोगिता अपहरण के उपरान्त पृथ्वीराज तथा जयचन्द के मध्य होने वाले संग्राम में इसने सेना का नेतृत्व किया था । पंग सेना को युद्ध हेतु आठ भागों में विभाजित किया गया, जिसमें से एक भाग का नेतृत्व मुसलमान योद्धा घरिखाँ को प्रदान किया गया—

अट फौज पहुपंग परिस यह आनह फेरिय ।

मीर धीर धरवान पान असमानह केरिय ॥ छं० १७२१ ।

स्वामी के आदेश पर समरागण में प्राणों को उत्सर्ग कर देने वाले यह मुसलमान वीर पंगराज की सेना के एक प्रमुख अंग थे । प्रायः पृथ्वीराज पर प्रत्यक्ष आक्रमण का आदेश जयचन्द द्वारा गाह्वडवाल इन्हीं को प्राप्त होता था—

अप्प अप्प दल विपफुरे, दिल्ली गहन नरिंद ।

मीर जमाम हमाम को, दिये आयस जय चन्द ॥ छं० १३८३ ।

दिसि दिसि आगं सज्जिवर, चतुरगिनी पंग जाइ ।

चक्को चक्क धियोगिनी, अनंद कमोद कदाइ ॥ छं० १३८७ ।

निमुरत्तखाँ—कवि चन्द वरदायी द्वारा पंगराज की सभा का अदृश्य वर्णन के अन्तर्गत कुछ मुसलमान सामान्तों का नामोल्लेख हुआ है । 'कनवज्ज खण्ड ६१' में भी कान्यकुब्जेश्वर जयचन्द की ओर से अनेक मुसलमान सैनिकों द्वारा सेनापतित्व का कार्य सम्पादित हुआ था । यहाँ पर हम उनमें से कुछ प्रमुख यवनों के विषय में उल्लेख करेंगे ।

ग्रन्थकार ने पंगराज का वैभव तथा प्रताप वर्णन करते हुए लिखा है कि वीर निमुरत्त खाँ गजनीपति शाह शहाबुद्दीन गोरी की ओर से पारस्परिक सम्बंधों को ठीक रखने के प्रतीक रूप में पंग दरबार में रहता था । 'जिन गज्जन सूर साहव साही, तिने मोक्लयौ सेव निमुरति याही ।' कवि द्वारा पंगराज के दरबार का अदृश्य वर्णन करने के समय भी निमुरत्त खाँ राज्य सभा में उपस्थित था—

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ४५, स० २७ ।

२. वही, छं० १७२१, स० ६१ ।

३. वही, छं० १३८६-१३८७, स० ६१ ।

४. सम्पूर्ण रासो में अनेक निमुरत्तखाँ नामक योद्धाओं का उल्लेख हुआ है किन्तु इसे सर्वथा उनसे विपरीत समझना चाहिए ।

हर सिंघ राइ रजि पास वान । निसुरति वीर मरेज पान ॥ छं० ५४२ ।'

'रेवातट समय २७' के अन्तर्गत गजनीपति शाह महाबुद्दीन गोरी की वीर से निसुरत्तपा नामक एक सेनापति के आहत होने का उल्लेख प्राप्त होता है—

गहि गोरी सुरतान पान हुस्सेन उपार्यो ।

पां ततार निसुरत्ति , साहि क्षोरी करि डार्यो ॥ छं० १४८ ।'

वीर निसुरत्तखा अपनी विशाल मुसलमान सेना लेकर समय-समय पर पंगराज की सहायता करता हुआ दृष्टिगोचर होता है। देवास तथा पीपा युद्ध समयों में भी वीर निसुरत्तखा का उल्लेख हुआ है।

नूरमुहम्मद—'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार नूरमुहम्मद गजनीपति शाह महाबुद्दीन गोरी का एक प्रसिद्ध सरदार था। एक दूत ने आकर शाह गोरी के आक्रमण तथा चिनाव नदी को पार करने की बात पर प्रकाश डालते हुए पृथ्वीराज चौहान से यह भी बताया कि उसने किस प्रकार चिनाव नदी पार करके अपनी समस्त सेना को एकत्र कर, पुनः सरदारों को किस-किस विभाग का दायित्व सौंपा है। दूत ने कहा—'चिनाव नदी पार करने के उपरान्त तातार मारुफखा तथा खिलचीखा मिल गये। सेना को व्यूह बद्ध किये वे खड़े थे, उनके ऊपर चंवर और छत्र था जिसके द्वारा वे पहिचाने जा सकते थे। हुजाव नूरीखा तथा नूरमुहम्मद को बड़ी तोपों, गोलों, छोटी तोपों और हाथियों के विभाग का उत्तरदायित्व सौंपा गया। गोरी के वीर योद्धा बजीरखा ने और खानखाना हजरत्तिखा ने दूसरी सेना का हरावल सजा दिया। वहीं सजरत्तीखा भी उपस्थित था—

पां मारुफ ततार , पान खिलची वर गट्टे ।

चामर छत्र मुजवक , गोल सेना रचि गट्टे ॥

नारि गोरि जंबूर , सुवर कीना गज सार ।

नूरी पां हुजाव , नूर महमूद सिर नार ॥

वज्जीर पांन गोरी सुभर , पांन पांन हजरत्ति पां ।

विथ सेन सज्जि हरवल करिय , तहाँ उमो सजरत्ति पां ॥ छं० ४२ ।'

उपर्युक्त छन्द से स्पष्ट है कि वीर नूरमुहम्मद गोरी की गोला-बारूद तथा हाथियों का अध्यक्ष था।

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ५४२, स० ६१ ।

२. वही, छं० १४८, स० २७ ।

३. वही, छं० ४२, स० २७ ।

पश्चिमीखाँ—‘पृथ्वीराज रासो’ के मतानुसार पश्चिमीखाँ गजनीपति शाह शहाबुद्दीन गोरी का सेनापति था। एक दूत ने महाराज पृथ्वीराज चौहान से आकर बताया कि गोरी ने विम प्रकार चिनाव नदी पार की तथा उसकी सेना के प्रधान सैनिक अथवा सरदार कौन है—दूत कहता है कि—अन्य सामंतों के साथ ही वीर पश्चिमीखाँ तथा पठान हरावल रचकर उपस्थित हुए—

पश्चिमी पां पठान सह , रचि उपमं हरवल गहर ॥ छं० ४३ ।<sup>१</sup>

पहाड़खाँ गोरी—‘कनवज्ज खण्ड समय ६१’ में पृथ्वीराज तथा जयचन्द कमधज्ज के मध्य संयोगिता अपहरण वाले युद्ध में अष्टमी के दिवस पंगराज की सेना का सेनाध्यक्ष पहाड़खाँ गोरी था। युद्ध में असंख्य सैनिकों को पराभव को प्राप्त होते देखकर कान्यकुब्जेश्वर जयचन्द गाढ़वाल ने साठ हजार सैनिकों को लेकर पृथ्वीराज की सेना पर आक्रमण करने का आदेश पहाड़खाँ गोरी को दिया—

अगे सुपंग वज्जोर वीर , फरमान अपि अरि गहन भीर ।

वधि सिलह कह् उम्माँ केहर , मनु घाइ छुटि भद्व तिरर ॥ छं० १०३४ ।

सन्नाह सज्जि गोरी पहार , जानिये सूर सायर अपार ।

हज्जार सित्त सजि सुभर भीर , मिली पंग वर वीर तीर ॥ छं० १०३५ ।<sup>१</sup>

पहाड़खाँ गोरी की अध्यक्षता में इस यवन सेना में राज्यसभा में उपस्थित अन्य मुसलमान सरदार भी सम्मिलित थे। जिनमें से प्रमुख ये हैं—ममरेजखाँ, मीर महबलखाँ, पीरोजखाँ का बन्धु आरासखाँ, कम्मोदखाँ, अलीखाँ, महमूदखाँ, अब्दुल्लाखाँ, सलीमखाँ तथा इस्तमखाँ आदि ।

बलीखाँ एवं अलीखाँ—रासोकार के मतानुसार बलीखाँ एवं अलीखाँ दोनों सहोदर भाई थे। दोनों मल्ल विद्या में निपुण तथा कान्यकुब्जेश्वर जयचन्द के अंग रक्षक थे। मल्ल युद्ध के अतिरिक्त शस्त्र युद्ध में भी इनकी गति अगम्य थी। स्वामिधर्म में लीन रहना ही उनका मनवांछित मार्ग था। जयचन्द की सेना के मध्य यह दोनों सूर्य के समान तेजस्वी थे—

बली अली द्व उभं वंधव वर वीरह ।

छतोय ह्यथ दुस्तल . मल्ल विद्या एक श्री रह ॥

खग भग विन रेह , जुद्ध जाने निरगम गम ।

हक हलाल प्रिच्छवन , करग वदिगि त्रतीय सम ॥

१. इसके नाम से ऐसा ज्ञात होता है कि सम्भव है यह पश्चिमी दिशा का खाँ हो तथा इसमें भी आश्चर्य नहीं कि इसका नाम ही यही हो ।

२. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ४३, स० २७ ।

३. वही. छं० १०३४-३५, स० ६१ ।

भुज कहे कोरि उम्मय अमय , स्वामि धम्मस्ते सुरह ।

आनहि सु पंग लज्जी अदव , दल पंगर विय उदित गह ॥ छं० २१४७ ।<sup>१</sup>

रासोकार ने इन दोनों सहोदरों की मुक्त कंठ से प्रशंसा की है । युद्ध की भीषणता देखकर बली एवं अली ने पंगराज से युद्ध में भाग लेने की आज्ञा मांगी तथा जयचन्द की टुहाई देकर दिल्लीपति चौहान पृथ्वीराज को बंदी बनाने के लिए ललकार मचा दी—

भग्यो आइस नमि सिर , कहै पंग करि आन ।

जीयसु छडै पत्त पट्ट , गहो गहो चहुवान ॥ छं० २१४९ ।<sup>१</sup>

कान्यकुब्जेश्वर राजा जयचन्द गाहड़वाल ने इन दोनों पराक्रमी योद्धाओं की पाँच सहस्र मुसलमान सेना का नेतृत्व प्रदान किया जिसमें समस्त योद्धा श्रेष्ठ, निर्भीक एवं युद्ध में पीठ न दिखाने वाले थे । श्याम वर्ण की पताका लेकर और पंगराज का आदेशप्राप्त कर सूर्योदय के समय, रविवार के युद्ध में दोनों भाई अपनी विशाल बाहनी सजा कर उपस्थित हो गए—

करिय कृपा पट्टपंग , सहस्र पंचह दिय मीरह ।

कुल विपत्त जुधे जुत्त , लहइ वर लज्जि अमीरह ॥

स्याल चमर पप्परसु , स्यात्र गजगाह सु नेतह ।

झंडे स्याम सुभाग , पच्छ पय पुत्र न पेत्तह ॥

अग्या सु मगि पट्टपंग पहि , आए पीर पठान पुर ।

आदित जुद्ध हरि उगमनि , आए आतुर सज्जि अरि ॥ छं० २१४८ ।<sup>१</sup>

युद्ध भूमि में अली एवं बली मीरों का सामना पृथ्वीराज चौहान के प्रसिद्ध एवं प्रमुख सामन्त नृसिंह न किया, जिसमें अपने अनेकानेक सहयोगियों सहित दोनों यवन सहोदरों ने वीरगति प्राप्त की तथा अपनी कीर्ति को अजर-अमर किया ।

वह्वलखाँ—पृथ्वीराज रासो' के अनुसार वह्वलखाँ गजनीपति शाह शहाबुद्दीन गोरी का सामन्त था तथा 'बड़ी लड़ाई' को प्रस्ताव समय ६६ के अन्तर्गत इसने पृथ्वीराज चौहान तथा गोरी के मध्य अन्तिम युद्ध में भाग लिया था ।

पृथ्वीराज चौहान को यवन सेना ने चारों ओर से घेर लिया । ऐसी विषम स्थिति देख तथा अपना अन्त निश्चित जान कर पृथ्वीराज ने अपने गुरु एवं राज्य पुरोहित गुरु राम को अपने निकट बुलाकर अपने कुण्डल दान दे दिये तथा स्वयं विकट युद्ध कर यवन

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० २१४७, स० ६१ ।

२. वही, छं० २१४९, स० ६१ ।

३. वही, छं० २१४८, स० ६१ ।

सेना को व्याकुल करने लगे। गुरु राम के पास पृथ्वीराज चौहान के कुण्डल देखकर गोरी के सामन्त बह्वलखा ने तपक कर गुरु राम पर अपनी तलवार से ऐसा वार किया कि उसका सिर घट से अलग हो गया। इस प्रकार बह्वलखा ने अपनी वीरता एवं रण कुशलता का परिचय दिया—

गुर ढिंग कूंडलि देपि । देपि बह्वल्ल पान धपि ॥  
 द्रोपद सुत जिमि तेग । वेग झारी झनंग क्षपि ॥  
 राय सीस लिय ईस । कमल विन पंजर कढ्यौ ॥  
 ह्य्य छेदि उर पान । पीठि पच्छ दल बढ्यौ ॥  
 वामंग ह्य्य अचरिज सुनहु । अरि कटि तें असि वर लियौ ॥  
 मानेज साहि साहावदी । हय समेत चव बंड कियौ ॥ छं० १४२७ ।<sup>१</sup>

बह्वल का इसके अतिरिक्त अन्य कहीं पर विस्तृत विवरण प्राप्त नहीं होता है।

बावसू—‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार बावसू, दिल्ली-अजमेरपति पृथ्वीराज चौहान का सामन्त था जिसने गजनीपति गोरी द्वारा चिनाव नदी पार करने की सूचना पृथ्वीराज को सर्व प्रथम आकर दी थी—

बावसू नृप सुवकर्ते, दूत आइ तिहि वार ।  
 सजी सेन गोरी सुवर, उत्तरयो नदि पार ॥ छं० ४० ।<sup>१</sup>

टॉड महोदय ने लिखा है कि ‘सामन्त चार भागों में विभाजित थे उनमें से एक भाग का नाम बवस (पैदल) था और बवस चौहान वंश की प्रशाखा की एक शाखा के राजपूत हैं ।’

यह भी असम्भव नहीं है कि बावसू नामक व्यक्ति चन्द पुण्डरी द्वारा भेजे हुए दूत का नाम हो। बावसू का विस्तृत विवेचन प्राप्त नहीं होता है।

भट्टी महनंगखा—‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार यह गजनीपति शाह शाहाबुद्दीन गोरी का सामन्त अथवा सेनाध्यक्ष था। यह जाति का भट्टी राजपूत था, किन्तु गोरी की ओर से युद्ध करने के कारण ही सम्भवतः महाकवि चन्द बरदायी ने इसके नाम के पूर्व खाँ शब्द जोड़ दिया है। ‘रेवातट समय’ में इनके विषय में लिखा है—‘इसमानखाँ के पठानों और गप्परीं के हरावल रचते ही केलीखाँ कुजरी ने शाह की जिरह-वख्तर से सुसज्जित सेना का संचालन किया। खाँ भट्टी महनंग, खाँ खुरासानी, बन्वर और संसार में सबसे अभिमानी

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १४२७, स० ६६।
२. वही, छं० ४०, स० २७।
३. टॉड, राजपूताना-भाग १, पृ० १४२।

हवशियों का सरदार हवशखाँ वहाँ थे । उनके आगे बाठ श्रेष्ठ गजराज थे जिनकी कनारियों से मद जल श्रवित हो रहा था—

रचि हरवल पट्टान , पांन इसमान र गप्पर ।

केली पां कंजरी , साह सारी दल पापर ॥

पां मट्टी महनंग , पांन पुरसानो बव्वर ।

हवसपांन हवसी हुजाव , बव्व आलम जास वर ॥

तिन अग अडु गजराज वर , मद सरवर पट्टेतिनं ।

पंच दिन पिंड जो उप्पजं , (तौ) जुड होइ लच्छा विनां ॥ छं ४४ ।'

एक स्थान पर डॉ० विपिनविहारी त्रिवेदी ने भट्टी महनंग खाँ के विषय में लिखा है कि—'भट्टी राजपूतों की एक जाति जो ई० सन् १५ मे गजनी से आई और पंजाब मे बसी तथा वहाँ से पश्चिमी राजपूताना पहुँच कर सन् ७३१ ई० में तनीट बसाया । कुछ समय तक लोडोरवा उनकी, राजधानी थी । सन् ११५७ ई० में जैसल ने अपने भतीजे भट्टी (रावल) का राज्य गोरी की सहायता से छीन लिया और नई राजधानी जैसलमेर की नीव टासी ( राजस्थान, टॉड, वाल्यूम २, पृ० २१९, २३२, २३८, २४२-४३ ) । वर्तमान रेवातट सम्यो वाले युद्ध काल में जैसल का पुत्र सालवाहन राज्य कर रहा था और उसका भाई अचिलेस पृथ्वीराज का मुख्य सामन्त था । भट्टी महनंग सालवाहन का दूसरा सम्बंधी था जिसका वर्णन प्रायः पृथ्वीराज की ओर मिलता है—

परि भट्टी महनंग । छत्र नष्पी अरि सक्किय ॥ रासो सन्या ३२, छं० ७७ ।

इसका पिता गोरी का सामन्त था । गोरी के पक्ष का होने के कारण ही चन्द ने भट्टी महनंग के पहिले पाँ लगा दिया है ।<sup>१</sup>

मंगोल लल्लरी—पृथ्वीराज रासो के अनुसार मंगोल लल्लरी नामक व्यक्ति गजनीपति शाह शाहाबुद्दीन गोरी का सामन्त था । यह खंजर चलाने में अत्यन्त निपुण था । इसके लिए प्रसिद्ध था कि यह एक समय में बीस खंजरों को खींच सकता था ।<sup>२</sup> 'रेवातट' पर पृथ्वीराज चौहान तथा गोरी के मध्य संग्राम होने पर इसने गोरी के पुत्र पैदा महमूद खाँ की अध्यक्षता में अपार संग्राम किया था ।

'रासोसार' में एक स्थान पर इसे सेनानायक लिखा है—'महमूदखाँ, मंगोल लल्लरी, सहवाजखाँ, जहाँगीरखाँ, आदि सेना नायकों और निज पुत्र सहित एक सेना को लेकर मुल्तान

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ४४, स० २७ ।

२. डॉ० विपिनविहारी त्रिवेदी, रेवातट (पृथ्वीराज रासो) द्वितीय भाग, पृ० ८४, हिन्दी विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ १९५३ ।

३. पां मंगोल महमूद वीर बंध्यौ सु विहान ॥ छं० ४३, स० २७ ।

ने तो बिनाब पार करने की तैयारी की और आलमख़ाँ, मारुफ़ ख़ाँ, उजबक ख़ाँ आदि तीस यवन वीरों को कुछ सेना सहित उस पार अपनी सहायता के लिए रखा ।”

मंगोल लल्लरी वास्तव में गोरी का प्रसिद्ध एवं पराक्रमी योद्धा एवं सेना नायक ही रहा होगा तभी चन्द बरदायी ने इसका नामोल्लेख करने की आवश्यकता समझी । यदि यह साधारण सा मिपाही होता तो इसका उल्लेख संभव न था । प्रायः रासो के समस्त मुसलमान पात्र सन्देह की दृष्टि से देखे जाते हैं । मंगोल लल्लरी भी ऐसा ही पात्र है ।

महमूदख़ाँ—‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार महमूदख़ाँ गजनीपति शाह शहाबुद्दीन गोरी का एक सामन्त था जिसने ‘बड़ी लड़ाई’ को प्रस्ताव सम्यो ६६’ वर्णित पृथ्वीराज तथा गोरी के मध्य होने वाले संग्राम में भाग लिया था । महाराज पृथ्वीराज यवन सेना के मध्य बुरी तरह से घिर गये थे । अपना अंत निकट समझ कर उन्होंने यवन सेना को बड़ी भीषणता से काटना प्रारम्भ कर दिया । जब पृथ्वीराज चौहान उग्र रूप धारण करके यवन सेना का संहार कर रहे थे, उसी बीच उनका सामन्त महमूदख़ाँ नामक सामन्त से हो गया । पृथ्वीराज चौहान ने अपने तीक्ष्ण वाणों की वर्षा करके महमूदख़ाँ को धराशायी कर दिया—

निरपि राज प्रयिराज । दिट्ट महमूद करारिय ।  
मुट्टि वान मंडयो । तविक नाजी उप्फारिय ॥  
घथ्य तथ्य चित्तिय समथ्य । चहुआन मनि मन ।  
घरिय झलक सिगिनिय । सुलल विपज्ञाल कालफन ॥  
नपयो तानि हिन्दू विहव । आवं तो सर मार मनि ।  
पचेवि ह्यो केवर कहर । तुट्ट मद्धि निरुद्ध उन ॥ छ० १५२१ ।

और भी—

पंपु भाग परि अग्र । उड्डि आयास पोनि पर ॥  
लागि वान संपप । मनो मि हंस धरा ढरि ॥  
अग्रवान लगि उरनि । मयो महमूद सुरेस ॥  
बडौ अग विहंग । मनो वलि उरग प्रवेस ॥  
महमूद विकल तनपरि अवनि । जानि कि नट्टहु लाग सजि ॥  
धन धन्य सयल जपिय सकल । विकल चित्त विभ्रम्म रजि ॥ छ० १५२२ ।

निर्या मनसूर रहिल्ला—‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार मिर्या मनसूर रहिल्ला गजनीपति शाह शहाबुद्दीन गोरी का सामन्त था, जिसने ‘बड़ी लड़ाई’ को प्रस्ताव सम्यो ६६’ के अन्तर्गत वर्णित

१. रामोसार, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, पृ० १००-१०१ ।

२. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १५२१-२२, स० ६६ ।

गोरी तथा पृथ्वीराज चौहान के मध्य होने वाले संग्राम में भाग लिया था। विपक्षी दल के पावस पुंडीर आदि योद्धाओं के काम आने पर पराक्रमी जैतराव प्रमार हरावल में आया तथा वीर चामण्डराय ने युद्ध भूमि में घुसकर विकट मार-घाट प्रारम्भ कर दी। यवन सेना को विचलित होता हुआ देखकर मिया मनसूर रहिल्ला, वीर चामण्डराय का सामना करने के लिए युद्ध भूमि में अग्रसर हुआ। मियाँ मनसूर रहिल्ला द्वन्द्व युद्ध के लिए प्रसिद्ध था। अतः दोनों रण वाकुंरे आपस में गुथ गये। नाना प्रकार के युद्ध कौशल दिखाने के उपरान्त दोनों ही वीर अपने-अपने स्वामिधम का अनुसरण करते हुए वीर गति को प्राप्त हुए—

च्यारि सहस असवार । मद्धि चामड दहिम्मों ॥  
चौवह से मफरद् । मियाँ मनसूर रहिल्ली ॥  
हूह हक्क किलकार । सोस जुट्टहि घर घावहि ॥  
आनंदित अपछरा । आज इच्छा वर पावहि ॥  
घांवडराइ दाहर तनय । हर हारावलि दृष्टी ॥  
मफरद् पान पीरोज सुअ । तेजवत भिस्तिहि गयी ॥ छ० १२३३ ।'

मियाँ मुस्तफा-‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार मियाँ मुस्तफा गजनीपति शाह जहांगीर की गोरी का सामन्त था। ‘वही लड़ाई को प्रस्ताव सम्यो ६६’ में मियाँ मुस्तफा निमुरत्तियाँ की मृत्यु के उपरान्त शाह की आज्ञा मान कर अपने भाई सहित पृथ्वीराज चौहान की सेना से युद्ध हेतु अग्रसर हुआ—

मियाँ मान मुस्तफा । उअं वंधव अस्ति उम्मर ॥  
धरा रोम उद्धरन । धरा स्वामित्त समुद्धर ॥  
सोय निरखि साहाव । दई अग्या तमि ताम ॥  
तुम लष्यौ तत्तार । भार मडे सिर कम ॥  
निसुरत्ति हयौ रावर भरन । हल हलत तत्तार दल ॥  
तुम जाय जुरी उपपर करौ । परी बुध दधेव नर ॥ छ० १११० ।

समरांगण में मियाँ मुस्तफा का रावल समरसिंह से सामना हुआ। विकट मारघ के उपरान्त दुर्भाग्य से मुस्तफाबंधु वीरगति को प्राप्त हुए—

जुटे मुस्तफा सीह सामंत पगै , दुअं वृत्तधारो फित स्वामि अगै ।  
उअं धारि उम्भारि संगी दुहृथं , जपे आनईस जपे इष्ट तप्य ॥ छ० १११२  
+ + +  
परयौ मान मुस्तफा , इण्यि धर रोम समुद्धर ॥ १११६ ।'

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छ० १२३३, स० ६६।
२. वही, छ० १११०, स० ६६।
३. वही, छ० १११२ तथा १११६, स० ६६।



मियाँ मुस्तफा की युद्ध कुशलता देखकर इसकी वीरता में किसी प्रकार का संदेह नहीं रह जाता है। किन्तु प्रमाणों के अभाव में मियाँ मुस्तफा को प्रामाणिक मानने में संदेह होता है।

मीर कम्मोद खाँ—ग्रन्थकार कवि चन्द वरदायी ने पंगराज सभा का अदृश्य वर्णन में उपस्थित सरदारों में मीर कम्मोद खाँ का भी उल्लेख किया है—‘कम्मोद पान जहान भार’। यहीं पर हमें मीर कम्मोद खाँ का प्रथम परिचय प्राप्त होता है। कान्यकुब्जेश्वर के इस वीर सभासद ने संयोगिता अपहरण सम्बंधी पृथ्वीराज चौहान तथा जयचन्द के मध्य होने वाले युद्ध में अपूर्व पराक्रम एवं रण कुशलता का प्रदर्शन किया था। पृथ्वीराज के प्रसिद्ध सामन्त चन्दपुण्डीर तथा मीर कम्मोद खाँ का सामना होने पर वीर पराक्रमी चन्द पुण्डीर पराभव को प्राप्त हुआ—

वीर मीर कामोद आय , जव पुंडीर उप्पर ।  
बिहय नेज उज्झारि , वाहि निझझाहि चदउर ॥  
सेल सेल समुहिय , हड्ड भजिय हिय दंपिय ।  
सुघर ढार निझझार , वाहि असुराइन कपिय ॥  
पुंडीर राइ आसर सयन , भूत जिम नचिय समर ।

दल मति पंग पुंडीर परि , जं जय सुर सद्द अमर ॥ छं० १४८७ ।

चन्द पुण्डीर के पराभव के बाद पृथ्वीराज के सामन्त कूरम्भराय तथा पाल्हनराय भी मीर कम्मोदखाँ के हाथों वीरगति को प्राप्त हुए। अपार पराक्रम एवं रण कुशलता का परिचय देता हुआ मीर कम्मोद खाँ ने भी अष्टमी के युद्ध में वीर मार्ग का अनुशरण किया।

रुमीखाँ तथा बहरामखाँ—रुमीखाँ तथा बहरामखाँ यह दोनों वीर संयोगिता अपहरण सम्बंधी पृथ्वीराज तथा जयचन्द के मध्य होने वाले संग्राम में पाँच लाख सेना का विपम दल लेकर इन यवन योद्धाओं ने पृथ्वीराज चौहान को जीवित पकड़ लाने का उद्योग किया था। इन दोनों योद्धाओं का नामोल्लेख गोरी के सहयोगी सरदारों के रूप में भी ‘रेवातट समय २७’ में वर्णित है किन्तु यहां पर यह कहना नितान्त असम्भव है कि उपर्युक्त योद्धा गोरी के सहयोगी हैं अथवा कवि कल्पना प्रसूत नवीन चरित्र—

पां मारुफ नवरति खाँ , रूपमी पा बहराम ।  
पान मडि लीनी सुकर , सामि सपते काम ॥ छं० १४४५ ।  
पंच लय तिन सथ्य किय , अनी वधि नृपराज ।  
गुन गोरी नन जानई , सामि ध्रम्म सौं काज ॥ छं० १४४६ ।

१. पृथ्वीराज रासो नागरी प्रदारिणी सना काशी, छं० ५४३, स० ६१ ।

२. वही छं० १४८७, स० ६१ ।

३. वही, छं० १४४५-४६, स० ६१ ।

यवन सेना का प्रचंड आक्रमण होने पर चौहान पृथ्वीराज के प्रसिद्ध सामन्त वीर पञ्जूनराय ने दीर्घकाल तक उन दोनों योद्धाओं का सामना किया—

पंग हुकुम परमान , अग्र चौकी पुरसानिय ।

प्रथम जुद्ध किय मीर , हाति किनही नहमानिय ॥

परे मीर पथ्यार धार , असिबर सिर सारं ।

सामंतनि लंमरिय , घाइ उट्ठी ग्रह सारं ॥

समसथ्य बाघ बघेल नृप , जंग जोट फोटह अकल ।

टारै न मुख साइस छल , लोह लहरि घाजंत सल ॥ छं० १४८४ ।

ग्रन्थकार ने इन दोनों योद्धाओं का विस्तृत विवरण प्रस्तुत नहीं किया है। अतः उपर्युक्त सूचना के अतिरिक्त तथा सामग्री अभाव के कारण इन्हें ऐसी स्थिति में विवश हो छोड़ना पड़ता है।

शाह शहाबुद्दीन मुईजुद्दीन सुल्तान गोरी—‘पृथ्वीराज रासो’ के घनकथा समय के अंतर्गत गजनाधिपति शहाबुद्दीन गोरी के प्रारम्भिक जीवन पर कवि चन्द वरदायी ने प्रकाश डाला है। गोरी को पराजित कर पृथ्वीराज द्वारा बन्दी बना लेने के उपरान्त गजनी से उसे मुक्त कराने के अभिप्राय से एक प्रार्थना पत्र लेकर गोरी का सेवक लोरक आया। राज्यसभा के मध्य पृथ्वीराज चौहान ने दूत लोरक से गोरी का नाम का कारण जानने की जिज्ञासा की, जिसके उत्तर में सेवक लोरक ने सम्राट को गोरी के प्रारम्भिक जीवन की सूचना दी—असुरों के राज्य पर शाह जलालुद्दीन सिंहासनारूढ़ हुआ जो भयंकर कामुक था। उसके ‘हरम’ में पाँच सौ दस वेगमें थी किन्तु फिर भी भाग्य वश वह निःसन्तान था। निराज होकर वह शाह पीर निजाम की कृपा का आकांक्षी होकर उनकी सेवा में निरन्तर रत रहने लगा। अपनी निरन्तर सेवा से प्रसन्न होकर, शाह पीर ने शाह को श्रेष्ठ एवं प्रतापी पुत्र रत्न प्राप्ति की शुभाशीष दी, साथ ही यह भी कहा कि यह पुत्र चतुर्दिक असुर साम्राज्य को प्रसारित कर हिन्दुओं को भी विजित तथा निस्तेज करके दिल्ली साम्राज्य पर सूर्य की भाँति तपेगा।

चिरकामना की फल प्राप्ति कर शाह जलालुद्दीन घर लौट तो आया किन्तु उसे पुनः चिन्ता ने घेर लिया, वह सोचने लगा, कहीं यह प्रतापी पुत्र मुझे ही मार कर राज्य का अधिकारी न बन जावे, तुरन्त ही एक वेगम के गर्भ धारण करने की सूचना पाकर शाह जलालुद्दीन ने माँचा ठोक लिया तथा क्रोधावेश में उसने उस वेगम को हरम से निकाल दिया। उक्त घटना को पाँच वर्ष ही व्यतीत हुए थे कि शाह का देहावसान हो गया। जलालुद्दीन की मृत्यु होने पर मंत्रियों को अपने शाह के लिए चिन्ता हुई। शाह जलालुद्दीन निःसन्तान ही मर गया, अब प्रश्न यह हुआ कि राजगद्दी का अधिकारी कौन हो? इस समस्या का समाधान शेख द्वारा हुआ, जिन्होंने गोर में रहने वाले एक अत्यन्त सुन्दर तेजस्वी बालक को सिंहासनारूढ़ करने का आदेश दिया—

गोरि दिवाई पान तिहि , ततपिन भंजीपाज ।

निकरयो सूरति सरास की , ज्योति भान महाराज ॥ छं० ३२३ ।<sup>१</sup>

बालक का जन्म-पत्र बनवाने पर ज्ञात हुआ कि भविष्य में यही बालक शाह जलालुद्दीन से भी अधिक पराक्रमी होगा, इसकी जाति गोरी है तथा यह हिन्दोस्तान पर भी राज्य करेगा—

जोति रूप महाराज , साह ते प्रगट सवायी ।

पांना पांन जिहान , वेगि निज्जूमि बुलायी ॥

लियि जनम तिय लेष , सेष ततपिन इम भण्णो ।

नाम साह साहाव जाति , गोरी तिहि वण्णो ॥

बहुतेज तपत तप जग्गि है , घरा हिन्द सम लग्गिहै ।

दसदिषा साह दोही फिर , घन वीरारस भुग्गि है ॥ छं० ३२५ ।<sup>१</sup>

रासो के उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट रूप से ज्ञात नहीं होता कि शाह गोरी, शाह जलालुद्दीन द्वारा निकाली हुई गर्भवती वेगम के गर्भ से उत्पन्न था अथवा कोई अन्य बालक । इस विवेचन से इतनी सूचना अवश्य प्राप्त होती है कि शाह शहाबुद्दीन गोरी वंश क्रम से गद्दी पर नहीं बैठा था ।<sup>१</sup>

रासो की उपर्युक्त कथा का ऐतिहासिक प्रमाण कुछ भी प्राप्त नहीं होता है । श्री वृजविलास श्रीवास्तव गोरी को राज्य मिलने की कथा का राजा का देवी चुनाव नामक कथानक रूढ़ि के अन्तर्गत रखते हुए लिखते हैं कि—‘प्रथम अध्याय में कथानक रूढ़ियों पर किए गए कार्य पर विचार करते समय ‘पंच दिव्याधिवास’ अर्थात् दैवी शक्तियों द्वारा राजा के चुनावपर विचार किया गया है । शाहबुद्दीन का चुनाव भी विल्कुल देवी तो नहीं पर इसी से मिलता जुलता है । + + + + पंच दिव्याधिवास द्वारा राजा के चुनाव में भी जो व्यक्ति राजा चुना जाता है वह प्रायः कहीं न कहीं का राजा अथवा राजपुत्र रहता है । होता यह है कि किसी विपत्ति के कारण विपन्नावस्था में वह इधर-उधर घूमता हुआ किसी ऐसे राजा के राज्य में पहुँच जाता है जिसकी ठीक उसी समय निःसंतान मृत्यु हो जाती है और मंत्रियों के सामने यह समस्या उपस्थित हो जाती है कि किसको राजा बनाया जाय । अधिवासित दिव्य पंचक (हाथी, अश्व, चामर, छत्र और कुम्भ या कभी कभी केवल हाथी) भी प्रायः किसी वृक्ष के नीचे सोये या ऐसे ही किसी स्थान पर पड़े व्यक्ति को राजा चुनते हैं ।’<sup>२</sup>

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ३२३, स० २४ ।

२. वही, छं० ३२५, स० २४ ।

३. साहित्य संस्थान उदयपुर से प्रकाशित ‘रासो’ में यह कथा नहीं है । धारणीज की अप्रकाशित प्रति भी इस विषय में सर्वथा मौन है ।

४. वृजविलास श्रीवास्तव, पृथ्वीराज रासो की कथानक रूढ़ियाँ, पृ० ११५-११६ ।

इतना निर्विवाद सत्य है कि रासो की उपयुक्त कथा में कल्पना का योग अवश्य है। प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता डॉ० सत्यकेतु विद्यालंकार गोरी को राज्य प्राप्त होने की घटना का इस प्रकार वर्णन करते हैं—“गजनी के उत्तर में एक छोटे से राज्य का शासन अफगान सरदारों के हाथ में था जिसे ‘गोर’ कहते थे। तुर्क सुलतानों की निर्वलता से लाभ उठाकर सन्-११५० ई० में गोरी के सरदार अलाउद्दीन ने अपने को स्वतंत्र कर लिया तथा अवसर पाकर गजनी को भी जीत लिया। गजनी के शासन के लिए उसने अपने भाई शहाबुद्दीन गोरी को नियुक्त किया जो आगे चलकर गजनी का स्वतंत्र सुलतान बन गया।” इसी प्रकार के विचार डॉ० आशीर्वादीलाल श्रीवास्तव ने भी व्यक्त किए हैं—उन्होंने लिखा है कि ‘गोर’ का पहाड़ी जिला गजनी तथा हिरात के बीच पहाड़ों में स्थित है। दसवीं शताब्दी में वह स्वतंत्र राज्य था। एक ताजिक दरबार के लोग जिनके पूर्वज ईसान से आए थे, वहाँ शासन करते थे। इतिहास में वे शसवनी वंश के नाम से विख्यात हैं। सन् १००९ ई० में महमूद गजनवी ने गोर के शासक मुहम्मद बिनसूर को परास्त किया और उसे अपना करद सामन्त बना लिया उस समय से गोर के शासक को गजनी की आधीनता में रहना पड़ा किन्तु महमूद की मृत्यु के बाद गजनी का पतन आरम्भ हो गया। ‘गोर’ राज्य ने इस स्थिति से लाभ उठाया। दोनों राज्यों के शासक वंशों में संघर्ष आरम्भ हो गया। गजनी के सुलतान बहराम ने गोर के राजकुमार मलिक कुतुबुद्दीन हसन का बध कर दिया। इससे कुपित होकर हसन के भाई सैफुद्दीन सूरी ने गजनी पर आक्रमण किया और बहराम को पराजित किया। झगड़ा बढ़ता गया और उसने एक पारिवारिक कलह का रूप धारण कर लिया। सैफुद्दीन के छोटे भाई अलाउद्दीन हुसेन ने गजनी को पूर्णतया जलाकर खाक कर दिया और जैसा कि हम पहले लिख चुके हैं, जहाँसोज के नाम से विख्यात हुआ। अलाउद्दीन ने सुल्जुक वंश के अन्तिम सम्राट संजर से भी युद्ध किया। संजर उस समय अनेक कठिनाइयों से घिरा हुआ था, इसलिए अलाउद्दीन नष्ट होने से बच गया। उसने वरमैन, तुर्किस्तान, जसम वुस्त तथा मुर-गाँव नदी की घाटी के स्थित गरजिस्तान को जीत लिया। अपने शासन के अन्तिम दिनों में बलख, तुर्किस्तान और हिरात से उसे हाथ धोने पड़े। किन्तु राज्य के अन्य भागों पर उसका अधिकार कायम रहा। सन् ११६१ ई० में अलाउद्दीन की मृत्यु हो गई। उसका एक अन्य भाई सैयुद्दीन उत्तराधिकारी हुआ। उसकी मृत्यु के उपरान्त उसका चचेरा भाई गियासुद्दीन गोर की गद्दी पर बैठा। उसने गजनी पर जो उसके पूर्वजों के हाथों से निकल गई थी, पुनः अधिकार कर लिया और कुछ नए प्रदेशों को भी जीत कर अपने राज्य में मिला लिया। अपनी महत्वाकांक्षाओं के कारण वह ख्वारिज्म के शाह के विरुद्ध युद्ध में फँस गया। आरम्भ में गियासुद्दीन को कुछ सफलता मिली और खुरासान के पड़ोस के अनेक जिलों को भी उसने जीत लिया, किन्तु अन्त में अन्धखुद के युद्ध में उसकी जय हुई। उत्तर पश्चिम में उसने जो अनेक प्रदेश जीते थे, उनमें से केवल हिरात और बलख उसके अधिकार में रह गये।

इस प्रकार हम देखते हैं कि गोर के शासकों को उत्तर पश्चिम में अपनी आक्रमणकारी नीति ने अधिक लाभ नहीं हुआ। इसीलिए उन्होंने भारत की ओर ध्यान दिया। गोर के मुहम्मद को गजनी का सूत्रेदार नियुक्त किया। मुहम्मद ने अपने बड़े भाई के साथ अच्छा सम्बंध कायम रखा और पूर्णरूप से उसके प्रति वफादार रहा। यद्यपि गजनी में वह स्वतंत्र शासक की हैसियत से राज्य करता था फिर भी उसने सिक्कों पर अपने भाई का नाम उत्कीर्ण कराया और उसके साथ वैसा ही व्यवहार किया जैसा कि एक अधीनस्थ राजा को अपने प्रभु के प्रति करना चाहिए। यही मुहम्मद गोरी भारत पर आक्रमण करने वाला तीसरा मुसलमान नेता था।<sup>१</sup> इन इतिहासवेत्ताओं का समर्थन करते हुए डॉ० विपिनविहारी त्रिवेदी ने भी ऐसे ही भाव व्यक्त किये हैं—‘अलाउद्दीन गोर गजनी पर चढ़ आया और बहराम शाह को भगाकर उसने नगर को जलाने और निवासियों को तलवार के घाट उतारने की आज्ञा दी। इस क्रूरता के कारण अलाउद्दीन गोर का नाम ‘जहाँशोज’ पड़ गया और बरबाद गजनी फिर न बन सका। अलाउद्दीन गोर के जाते ही बहराम ने पुनः गजनी पर अधिकार कर लिया। सन् ११५७ ई० में उसकी मृत्यु के बाद उसका पुत्र खुसरोशाह गद्दी पर बैठा परन्तु उसके राजस्व काल में गज्ज (Ghazz) नामक तुर्की जाति ने गजनी को हथिया लिया। बादशाह लाहौर भाग गया और उसके पुत्र के बाद गजनवी वंश का नाम लेवा-पानी देवा कोई न रह गया। सन् ११७३ ई० में अलाउद्दीन गोर जहाँशोज के भतीजे गयासुद्दीन ने घज्जी (या गज्जों) से गजनी छीन कर अपने भाई मुईजुद्दीन को दे दी जिसे इतिहासकार मुहम्मद गोरी भी कहते हैं। सन् ११७४-७५ ई० में मुहम्मद गोरी ने भारत वर्ष पर आक्रमण करके खुसरों मलिक गजनवी से लाहौर तक का प्रदेश छीन लिया, सन् ११९२ ई० में थानेश्वर के युद्ध में दिल्ली-अजमेर के राजा को पराजित कर हिमालय से अजमेर तक का प्रदेश हस्तगत कर लिया। गयासुद्दीन के बाद मुहम्मद गोरी, गोर और गजनी का सुलतान हो गया। सन् १२०६ ई० में गोरी की हत्या हो जाने पर ख्वारजम के सुलतान मुहम्मद शाह ने गजनी को अपने राज्य में मिला कर उसका शासन प्रबन्ध अपने पुत्र जलालुद्दीन के हाथ में दे दिया।’<sup>२</sup>

यह तो हुआ गजनी एवं गोरी के प्रारम्भिक जीवन के विषय में, अब किंचित गोरी तथा पृथ्वीराज चौहान के मध्य हुए युद्धों की परिस्थिति पर भी विचार कर लिया जावे—ऐतिहासिक तथ्यों को दृष्टि में रखते हुए सर्व प्रथम ‘शाह शाहाबुद्दीन गोरी ने अपने राज्य विकास की अभिलाषा से सन् ११७५ ई० में सुलतान पर आक्रमण करके विजय प्राप्त की, सन् ११७६ ई० में ऊँचे फतह किया तथा सन् ११७८ ई० में पेशावर को जीत लिया। इस प्रकार शाह धीरे-

१. डॉ० आशीर्वादीलाल श्रीवास्तव, दिल्ली सल्तनत पृ० ८४-८५, शिवलाल अग्रवाल एण्ड कं० प्रा० लि०, आगरा, तृतीय संस्करण।
२. डॉ० विपिनविहारी त्रिवेदी, रेवातट, भौगोलिक प्रसंग, परिशिष्ट, पृ० ५८।

धीरे आगे बढ़ कर चौहान पृथ्वीराज की राज्यसीमा छूने लगा। पृथ्वीराज रासो के अनुसार शाह शहाबुद्दीन गोरी तथा पृथ्वीराज के मध्य इक्कीस बार युद्ध हुए जिनमें से वह पन्द्रह बार बन्दी बना कर मुक्त कर दिया गया तथा शेष पाँच बार परास्त होकर लौट गया। अन्तिम युद्ध में शाह गोरी की विजय हुई तथा उसने पृथ्वीराज चौहान को सदा के लिए अपने मार्ग से हटा दिया।

पृथ्वीराज रासो के अनुसार सुलतान का प्रथम युद्ध 'माघो भट्ट कथा' के अन्तर्गत वर्णित है। युद्ध का कारण कोई भयंकर कारण नहीं है। गोरी ने सुना कि पृथ्वीराज चौहान को दिल्ली का शासन प्राप्त हो गया है। शाहबुद्दीन को यह अच्छा न लगा। उसने दो लाख सेना लेकर पृथ्वीराज की राज्य सीमा का अतिक्रमण करने के लिए सिन्ध नदी पार की।<sup>१</sup>

युद्ध की कामना करने वाले चौहान पृथ्वीराज ने भी आक्रमण कर दिया। चौहान ने अपनी सेना शकट व्यूह में खड़ी की। दाहिने भाग का भार, मंत्री कैमास तथा सेनानायक चामुण्डराय ने ग्रहण किया। इनकी अध्यक्षता में अन्य ४,००० सैनिक नीलवर्ण पताकाएं लिए हुए खड़े थे। शकट के ढाँचे पर मारु महनसी तथा दोनों पहियों के स्थान पर मालदेव चन्देल तथा भोला क्रमशः खड़े थे।<sup>२</sup> वाम पार्श्व की सुरक्षा का भार तरनाह काका कन्हू को प्रदान किया गया तथा साथ में हरिसिंह, वरसिंह, हाड़ा हम्मीर, गम्मीर, मंडलीक मल्हन, भानराय भट्टी, उद्दिगपगार, तथा सारंगराय सोलंकी ये आठ प्रधान सामन्त तीन सहस्र अन्य सैनिकों के साथ आकर डट गए।<sup>३</sup> अग्रभाग में महाबली जैत्र प्रमार, लोहाना आजानबहु, सिंह प्रमार, सामला सूर, संजमराय चहुवान, ठठरीराय, चांटा टाक तथा लोहाना का पुत्र जशधवल और उसका भाई केशवीसिंह थे। इन सब सामन्तों का साथ देने के लिए अन्य पाँच सहस्र सैनिक और थे।<sup>४</sup> सेना के पूंछ भाग में जामदेव यादव, जिनका चामर, घोड़ा, पाखर, हाथी ढालें आदि सब इमाम वर्ण की थी, सुसज्जित होकर खड़े हुए तथा साथ में लंघरीराय, अल्हूत प्रतिहार, अचलदास, वारडराय, जघारा भीम आदि भी थे।<sup>५</sup>

शाह शहाबुद्दीन गोरी की ओर से सेना में भाग लेने वाले प्रमुख योद्धा, धनुर्धर मीरशेखर्खा, मारुफर्खा, जम्मनर्खा, गजनीर्खा, महमूदर्खा, फतहजगर्खा हसमर्खा, कालेर्खा,

१. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० २७-२८, स० १०।

२. वही, छं० ३१, स० १०।

३. वही, छं० ३३, स० १०।

४. वही, छं० ३४, स० १०।

५. वही, छं० ३५, स० १०।

ब्रह्मन्, घराणाही हुए तथा चामण्डराय ने शाह को बन्दी बना लिया ।<sup>१</sup> युद्ध के अन्त में शाह गोरी बाठ सहस्र घोड़े दण्ड स्वरूप देकर गजनी लौट गया ।<sup>१</sup>

युद्ध में पृथ्वीराज चौहान की सेना के चाचा कन्ह के तीन पुत्र भीमसिंह, मारवरदास, तथा प्रियदास, लोहाना का पुत्र जसधवल तथा भाई केशवीसिंह, विजयराय का पुत्र रणवीर सोलंकी, प्रसगराय खींची का पुत्र सागर, पृथ्वीराज का भाई हरिराज सिंह, वीरसिंह प्रमार तथा उसका पुत्र नीलध्वज, लखन बघेल का पुत्र भीम तथा एक हजार अन्य हिन्दू और अठारह हजार मुसलमान घराणायी हुए ।<sup>१</sup>

द्वितीय युद्ध 'हुस्सैन कथा' समय में वर्णित है । कवि के अनुसार इस युद्ध का मूल कारण शाह शहाबुद्दीन गोरी का भाई हुस्सैन शाह था । हुस्सैनशाह, शाह गोरी की परम प्रिय चित्ररेखा को लेकर पृथ्वीराज के दरबार में आ रहा । अतः गोरी ने पृथ्वीराज पर कुपित होकर आक्रमण कर दिया ।<sup>१</sup> सारुंडे के मैदान में दोनों दल आ उपस्थित हुए । पृथ्वीराज की ओर से समीखाँ, कम्माखाँ, हुस्सैनवेग, दलेलखाँ, कासिमखाँ, करीमखाँ, तथा खोजा कासिम आदि वीरों ने भाग लिया ।<sup>१</sup> इन वीरों के अतिरिक्त जामराय यादव, मोहनसी प्रतिहार, रामराय बड़गुज्जर, टीकमराय, नारेनराय, देवराय वगैरी का पुत्र तथा प्रसगराय खींची का पुत्र मंडलीक भी सेना के वाम पक्ष में उपस्थित थे ।<sup>१</sup> सेना के दक्षिण भाग पर वीर कैमास की अध्यक्षता में चामण्डराय, चन्दसेन पुण्डीर, सिध प्रमार गोविन्दराय, पहाड़राय तौवर तथा चार हजार अन्य सैनिक उपस्थित हुए ।<sup>१</sup> हरावल में गोविन्द चहुवान, बड़गुज्जर तथा पाँच सहस्र सेना खड़ी हुई ।<sup>१</sup> दोनों दलों में घोर संग्राम हुआ । शाह गोरी को वीर चामण्डराय ने मथी कैमास की सहायता से बन्दी बना लिया । युद्ध में शाह के सामन्त गाजीखाँ, नाजीखाँ तलवार के घाट उतार दिए गए तथा मीर मामखाँ, कम्मानखाँ, आरवखाँ, आदि भाग निकले ।<sup>१</sup> युद्ध भूमि में पृथ्वीराज के सामन्त मंडलीक खींची, टीकमराय अपने युवा भाई के

१. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० ५२-५३, स० १० ।

२. वही छं० ५८, स० १० ।

३. वही छं० ५४-५६, स० १० ।

४. वही, हुस्सैन कथा समय, ११ ।

५. वही, छं० ५०, स० ११ ।

६. वही छं० ५३, स० ११ ।

७. वही, छं० ५४ स० ११ ।

८. वही, छं० ५५, स० ११ ।

९. वही, छं० ६६-६७, स० ११ ।

साथे मारा गया। शाह गोरी को पाँच दिन बन्दी बना कर हुस्सैन के पुत्र गाजी हुस्सैन को देकर बिदा किया।<sup>१</sup>

शाह शहाबुद्दीन गोरी तथा पृथ्वीराज का तृतीय युद्ध 'आखेट चूक समय' के अन्तर्गत वर्णित है। दो बार परास्त हो चुकने के उपरान्त शाह ने भेद नीति से शत्रु पर विजय प्राप्त करने के अभिप्रायः से रावखमी से सूचना पाकर कि पृथ्वीराज चौहान खट्टू बन में मृगया में मस्त है, शाह ने खट्टू बन को घेर लिया। खट्टू बन में पृथ्वीराज के साथ केवल उनके विश्वास पात्र पाँच सामन्त-सलख प्रमार, कन्ह चहुआन, रघुवंशी रामराय, कनकराय बड़गुज्जर तथा वीर नृसिंह चालुक्य थे। शाह की सेना इन पाँच सामन्तों के प्रखर प्रहारों के समझ न ठहर सकी, इतने में ही पृथ्वीराज के अन्य सैनिक जो शिविर में थे, आ गए जिससे शाह गोरी को प्रत्यावर्तित होना पड़ा। इस युद्ध में शाह का मीर वाजिन्दखाँ को वीर लघरीराय द्वारा बन्दी बना लिया गया तथा पृथ्वीराज का सामन्त नृसिंह चालुक्य वीरगति को प्राप्त हुआ।<sup>२</sup>

शाह गोरी ने एक बार पुनः छिप कर पृथ्वीराज चौहान को परास्त करने के लिए आक्रमण किया। 'पद्मावती समय' के अन्तर्गत पृथ्वीराज चौहान समुद्र शिखर गढ़ की राजकुमारी पद्मावती का अपहरण कर दिल्ली की ओर जा रहे थे कि इतने में ही शाह गोरी ने पृथ्वीराज का मार्ग अवरुद्ध कर लिया। युद्धोपरान्त पृथ्वीराज की विजय हुई तथा शाह को बन्दी बना कर पुनः छोड़ दिया गया।<sup>३</sup>

गजनीपति शाह शहाबुद्दीन गोरी का पाँचवाँ युद्ध 'सलषयुद्ध समय' में वर्णित है। यह युद्ध सारंगदेव के रणक्षेत्र में आनन्द संवत् ११४४ के कुछ समयोपरान्त हुआ था।<sup>४</sup> इस युद्ध का मूल कारण भोलाराय भीमदेव चालुक्य है, उसने सलष प्रमार के किसी दुर्ग पर अपना अधिकार करके शाह गोरी को अपने दूत सारंगदेव मकवाना को भेज कर युद्ध हेतु पृथ्वीराज के विरुद्ध आमंत्रित किया किन्तु सुलतान ने यह निमन्त्रण स्वीकार नहीं किया।<sup>५</sup> दिल्लीपति पर इस बार दो पक्षों से आक्रमण हुए। गुर्जरेश्वर भोलाराय भीमदेव अपनी सेना लिए हुए युद्ध हेतु प्रस्तुत था ही। शाह गोरी भी अपनी पन्द्रह हजार सैनिकों की विशाल वाहिनी लेकर आ डटा। इतने में ही रामराय बड़गुज्जर अचानक ८,००० सैनिकों को लेकर आ

१. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० ७२, स० ११।

२. वही, आखेट समय १२।

३. वही, छं० २५, स० १७।

४. वही, छं० १, समय २१।

५. वही, छं० ३५-३७, स० २१।



उपस्थित हुआ ।' इतने में ही पाँच सौ लोहाने योद्धाओं के साथ आजानवाहु द्रोणाचार्य के सदृश्य गुरु राम तथा काका कन्ह भी आकर सम्मिलित हो गए ।' तीन घड़ी रात्रि व्यतीत होने पर पञ्जूनराय भी सेना में आ मिला ।' दोनों दलों में घोर संग्राम हुआ । शाह की सेना परास्त हो गई तथा सुल्तान गोरी वीर सलपराज द्वारा बन्दी बना लिया गया । इस भीषण नर संहार यज्ञ में भटनेर के राजवंशी सिंह ने अपने प्राणों की आहुति दी ।' शाह का प्रसिद्ध सामन्त अहमदखाँ वीरगति को प्राप्त हुआ ।' मंत्री तातारखाँ, खुरासानखाँ, रुस्तम खाँ आदि योद्धा घायल हुए तथा शाह को बन्दी देखकर रणक्षेत्र छोड़कर भाग गए । शाह ने भी दंड देकर मुक्ति पाई तथा गजनी चला गया ।'

छठी बार सुल्तान गोरी तथा पृथ्वीराज की सेना 'खट्टू वन' में एक दूसरे के समक्ष युद्ध करती हुई दृष्टिगोचर होती है । नागौर से दो कोस पर रावल समरसिंह अपनी सेना लिए हुए पड़े थे ।' शाह गोरी, पृथ्वीराज को छोड़कर रावल समरसिंह से जा भिड़ा । दूसरे दिन पृथ्वीराज को ज्यों ही सूचना मिली त्यों ही उसने शाह की सेना को घेर लिया । विषम युद्ध प्रारम्भ हो गया । पुंज पहाड़ ने वीर गति प्राप्त की । पुंज पहाड़ के गिरते ही लक्खर पुण्डोर ने जो चन्द पुण्डोर का भाई था, ने मोचा सम्भाला ।' जब यह वीर भी वीर-गति को प्राप्त हो गया तो रावल समरसिंह स्वयं उसके स्थान पर आकर युद्ध करने लगे ।' रावल समरसिंह के विकट युद्ध के परिणाम स्वरूप गोरी के प्रसिद्ध सेना नायक याकूबखाँ, कलीखाँ, कुंजरखाँ, कुलहखाँ आदि वीर पराभव को प्राप्त हुए ।

द्वितीय दिवस प्रातः काल गोरी का सेना नायक अरवखाँ, रावल समरसिंह के सामने आया । अरवखाँ के गिरते ही खुरासान खाँ ने आकर सामना किया । किन्तु वह भी शीघ्र ही पीछे हट गया । रावल समरसिंह तथा पृथ्वीराज ने शीघ्र ही गोरी को जा घेरा । पृथ्वीराज ने अलीखाँ, आलमखाँ, असदखाँ, शरीफखाँ तथा सलीमखाँ, इन पाँच योद्धाओं का कल्याण किया । इन वीरों के गिरते ही सेना में खलबली मच गई । तातारखाँ भी घायल हो गया ।

१. पुनि गुज्जर बलि बड, लौह अनडड निडडन ।

अट्ट सहस हसवार सार पाहार प्रव्रतिय ॥ छं० १८, स० २१ ।

२. वही, छं० ४१, स० २१ ।

३. वही, छं० २३, स० २१ ।

४. वही, छं० ७६, स० २१ ।

५. वही, छं० ५०, स० २१ ।

६. वही, छं० ७६ स० २१ ।

७. वही, छं० २५, स० २२ ।

८. वही, छं० ३८, स० २२ ।

९. वही, छं० ४८ स० २२ ।

युद्ध में पृथ्वीराज तथा शाह गोरी का मुकाबला हुआ जिसमें गोरी के अंगों में अनेक घाव आए। इतने में ही रावल समरसिंह ने गोरी को बन्दी बना लिया।<sup>१</sup>

सुल्तान एवं चौहान का सातवाँ युद्ध रेवा नदी के तट पर हुआ। वीर पृथ्वीराज मृगया हेतु वनों में भटक रहा था। गोरी ने दिल्ली को खाली जानकर चिनाव नदी पार कर पृथ्वीराज की सीमा का अतिक्रमण किया किन्तु शाह का उचित स्वागत करने के लिए चन्द पुण्डरी पहले से ही वहाँ डटा खड़ा था। अतः गोरी को प्रथम चन्द पुण्डरी का ही सामना करना पड़ा। इस युद्ध में चन्द पुण्डरी की पराजय हुई तथा उसके पाँच भाई स्वामिधर्म की रक्षा करते हुए सदा के लिए सो गए।<sup>२</sup> अब शाह की सेना ने अग्रेसर होकर पृथ्वीराज चौहान का सामना किया। युद्ध भूमि में कछवाहा नृसिंह तथा जैत प्रमार का छोटा भाई वीरगति को प्राप्त हुआ।<sup>३</sup> विषम संग्राम के उपरान्त शाह गोरी बन्दी बना लिया गया तथा शरणागत वत्सल पृथ्वीराज चौहान ने पुनः उसके अपराध को क्षमा करके मामूली सा दण्ड लेकर मुक्त कर दिया।<sup>४</sup>

सुल्तान तथा पृथ्वीराज चौहान का आठवाँ संग्राम सोनपुर के रणक्षेत्र में सम्पन्न हुआ। इस बार सुल्तान को पृथ्वीराज के नाना अनंगपाल ने युद्ध हेतु आमंत्रित किया था। अनंगपाल ने शाह का स्वागत किया तथा दोनों की सम्मिलित वाहनी रणक्षेत्र में आ उपस्थित हुई। सेना के अग्र भाग में तातारखाँ, बाई दिशा में मारुफखाँ, दाहिनी ओर खुरासानखाँ अपनी-अपनी सेनाएँ लेकर खड़े हो गए तथा मध्य भाग में राजा अनंगपाल तथा पृष्ठ भाग में स्वयं गोरी खड़ा हुआ।<sup>५</sup> शाह की विशाल वाहनी को इस प्रकार व्यूह में खड़ा देखकर चौहान पृथ्वीराज ने अपनी सेना सर्प व्यूह में खड़ी की, जिसके अग्र भाग पर मंत्री कैमास तथा पृष्ठ भाग पर सेना नायक चामण्डराय खड़े हुए।<sup>६</sup> निदान दोनों सम्मिलित वाहिनियों की भी कुछ न चली। शाह तथा राजा अनंगपाल दोनों ही बन्दी बना लिए गए। बीस हाथी, सौ घोड़े तथा एक लाख स्वर्ण मुद्राएँ दण्ड स्वरूप देकर, शाह गोरी ने गजनी का मार्ग ग्रहण किया।<sup>७</sup>

सुल्तान मुहम्मद गोरी का नवाँ युद्ध पंजाब में पेशावर के पास सोन नदी के तट पर

१. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० ९२-९३, स० २२।
२. वही, छं० ३१, स० २५।
३. वही, छं० ५५, स० २५।
४. वही, छं० ७२, स० २५।
५. वही, छं० ५८, स० २६।
६. वही, छं० ५९, स० २६।
७. वही, छं० ७१, स० २६।

हुआ था। 'रासो' में यह युद्ध घघर की लड़ाई के नाम से प्रसिद्ध है। वीर पृथ्वीराज ने साठ हजार अश्वरोहियों को साथ लेकर टीला नामक पहाड़ की भूमि को जा दबाया। सीमा का अतिक्रमण देखकर शाह गोरी भी पाँच लाख सैनिकों को साथ लेकर युद्ध हेतु आ उपस्थित हुआ।<sup>१</sup> शाह ने अपनी सेना को 'हथ पान' ब्यूह में खड़ा किया। तातारखाँ, खुरासानखाँ, निसुरत्तखाँ तथा स्वयं शाह ने सेना के प्रमुख भागों की सुरक्षा का भार सम्भाला।<sup>१</sup>

चौहान पृथ्वीराज ने जैत प्रमार को सेनापति का उत्तरदायित्व पूर्ण भार सौंप कर अपनी समस्त सेना को 'गरुड़ ब्यूह' में खड़ा किया। गरुड़ के पंख स्थान पर पृथ्वीराज, चोंच स्थान पर वीर चामुण्डराय, ग्रीवा स्थान पर वीर अत्ताताई, पैरों के स्थान पर गोविन्दराज, पूँछ भाग पर कन्ह चौहान तथा उदर स्थान पर जैत प्रमार यम सदृश्य कर्तव्य निष्ठ होकर खड़े हुए।<sup>१</sup> नरनाह चाचा कन्ह की आँखों की पट्टी खोल दी गई। नरनाह ने ऐसा भीषण युद्ध किया कि देखने वाले दंग रह गए। अन्ततोगत्वा शाह चाचा कन्ह द्वारा बंदी बना लिया गया।<sup>१</sup> शाह को पुनः मुक्त कर दिया गया, लोहाना स्वयं शाह को गजनी तक छोड़ने गया। शाह ने एक-एक हाथी तथा एक-एक घोड़ा पृथ्वीराज के सामन्तों को भी प्रदान किया।<sup>१</sup>

दसवीं बार सुल्तान गोरी तथा पृथ्वीराज का मुकाबला 'देवास कथा' (पीपायुद्ध) समय २९ में पृथ्वीराज से हुआ। जब पृथ्वीराज सेना को सुसज्जित कर देवास की ओर व्याह-विनोद की कामना से अग्रसर हुआ ही था कि जयचन्द की सहायता से गोरी ने मार्ग अवरुद्ध कर लिया।<sup>१</sup> फिर क्या था, हिन्दू वीरों में उत्साह भर गया। पृथ्वीराज की सेना के अग्रभाग में चाचा कन्ह, बायीं ओर गोविन्दराय, दाहिनी ओर जैतप्रमार, पृष्ठ भाग में जामराय यादव, तथा मध्य भाग में स्वयं पृथ्वीराज ब्यूह बना कर खड़े हुए।<sup>१</sup> इस संग्राम में वीर पीपा ने विशेष पराक्रम का प्रदर्शन किया। पीपा का उपद्रव देखकर शाह ने अपने सेना नायक तातारखाँ, खुरासानखाँ, मारुफखाँ तथा हसमखाँ भोरी को प्रचारा। निदान वीर तातारखाँ मतवाले हाथी के सदृश्य रण प्रांगण में कूद पड़ा। भयंकर युद्ध करते हुए

१. पृथ्वीराज रासो साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० १, स० २७।

२. वही, छं० ९, स० २७।

३. वही छं० १५, स० २७।

४. वही, छं० १३-१७, स० २७।

५. वही, छं० २६, स० २७।

६. वही, छं० ३३ तथा ४३, स० २७।

७. वही, छं० ७, स० २९।

८. वही, छं० १४, स० २९।

पीपा प्रतिहार ने शाह को बन्दी बना लिया ।<sup>१</sup> दण्ड में आठ सहस्र घोड़े लिए गये जिनमें एक हजार चाचा कन्ह को, एक हजार चन्द पुण्डीर को, एक हजार जैतराय को, एक हजार गोविन्दराय को, एक हजार जामराय यादव को, एक हजार चन्द वरदायी को तथा दो हजार पीपा प्रतिहार को दिए तथा स्वयं पृथ्वीराज चौहान ने अपने लिए कीर्ति ही सुरक्षित रखी ।<sup>१</sup>

ग्यारहवीं बार 'जैतप्रमार समय ३२' में सुल्तान गोरी तथा पृथ्वीराज का मुकाबला हुआ । युद्ध का कारण, शाह ने पृथ्वीराज से, अपना दूत भेजकर पंजाब का भू-भाग तथा गाजी हुसैन को मारना था । पृथ्वीराज के मना करने पर युद्ध असम्भावी हो गया ।

आजानवाहु ने मारुफखाँ तथा उसमानखाँ को धराशायी किया । सारंगदेव सांखला, युवक वीर पंचामन अजमेरपति केसरी गोड़, घायल होकर मृत्यु को प्राप्त हुआ ।<sup>१</sup> द्वितीय दिवस शाह मुहम्मद गोरी बन्दी बना लिया गया ।<sup>१</sup> बारहवाँ युद्ध सुल्तान मुहम्मद गोरी तथा पृथ्वीराज के मध्य पञ्जून चालुक्य समय ३७' में वर्णित है । ग्रन्थकार ने इस युद्ध में सीमदेव तथा पृथ्वीराज के युद्ध का वर्णन किया है ।<sup>१</sup> किन्तु कवि ने संकेत किया है कि वीर चालुक्य, कमधज्ज तथा गोरी तीनों की सम्मिलित वाहिनी से पृथ्वीराज के सामन्त पञ्जून कछवाही को टक्कर लेनी पड़ी—

काल-ध्याल सुरतान दल , कमव सु पंखय कूट ।

हरि बाहन पञ्जून दल , ते सजि धाए ऊठ ॥ छं० ७ ।<sup>१</sup>

इस समय के अन्तर्गत अन्य विस्तृत सूचना प्राप्त नहीं होती है ।

तेरहवाँ संग्राम 'कैमास युद्ध समय ४०' के अन्तर्गत वर्णित है । एक दिन शाह ने अपने मंत्री तातारखाँ से मंत्रणा की, कि पृथ्वीराज पर आक्रमण करना चाहिए । अतः शाह ने तीन लाख अश्वारोहियों के साथ पृथ्वीराज को खट्टू वन में आ घेरा । सुल्तान ने अपनी सेना को पाँच भागों में विभाजित कर आनन्द सम्बत् ११४० में चौहान पृथ्वीराज का मुकाबला किया ।<sup>१</sup> भयंकर संग्राम के मध्य मंत्री कैमास तथा चामुण्डराय दोनों वीर भाइयों ने शाह को घेर लिया । चामुण्डराय ने सुल्तान का हाथी मार गिराया तथा कैमास ने लपक कर

१. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० ३५, स० २९ ।

२. वही, छं० ४०, स० २९ ।

३. वही, छं० १९, स० ३२ ।

४. वही, छं० २३, स० ३२ ।

५. वही, छं० २-३, स० ३७ ।

६. वही, छं० ७, स० ३७ ।

७. वही, छं० २७, स० ४० ।

सुल्तान को पकड़ लिया और बन्दी बना लिया ।<sup>१</sup> बारह हाथी तथा आठ हजार अश्व दण्ड स्वरूप लेकर शाह को पुनः मुक्त कर दिया गया तथा सुल्तान मजनी लौट गया ।<sup>२</sup>

चौदहवाँ युद्ध 'पहाड़राय समम ४२' में वर्णित है । शाह ने अपने मंत्रियों से मंत्रणा कर धर्मायन कायस्थ को एक पत्र लिखा कि वह अपने राजा पृथ्वीराज चौहान को आक्रमण की सूचना दे दे । इस युद्ध में स्वयं पृथ्वीराज चौहान ने नेतृत्व ग्रहण किया । वीर चामुण्डराय, जैत प्रमार, पज्जनराय तथा कनकराय बड़गुज्जर ने शाह के पाँच मुख्य मीरों को घराशायी किया ।<sup>३</sup> अन्ततोगत्वा पहाड़राय ने सुल्तान की सेना को विचलित कर दिया तथा शाह को बन्दी बना लिया ।<sup>४</sup> शाह को बन्दी बना कर दिल्ली ले जाया गया, जहाँ पर छः हाथी, सात हजार अश्व तथा एक लाख स्वर्ण मुदाएँ दण्ड स्वरूप देने पर शाह को पुनः मुक्त कर दिया गया ।<sup>५</sup>

गजनीपति शाह गोरी तथा पृथ्वीराज चौहान के मध्य पन्द्रहवाँ युद्ध 'हाँसी प्रथम युद्ध' तथा 'हाँसी द्वितीय युद्ध' नाम के समयों में वर्णित है । महाराज पृथ्वीराज चौहान बालुकाशय कमघज्ज को मार कर मृगया हेतु वनों में विचरण करने लगे । पृथ्वीराज के बहुत से सामन्त हाँसी दुर्ग में रहते थे ।<sup>६</sup> अतः चौहान पृथ्वीराज की शक्ति विखरी हुई थी, इस उचित अवसर का लाभ उठा कर शाह ने एक चाल चली कि हम अपनी वेगमों को उसी मार्ग से निकालेंगे, यदि सामन्तों ने कुछ कहा तो उन्हें सरलता से मार लिया जावेगा ।<sup>७</sup> किन्तु शाह की योजना सफलीभूत न हो सकी । सामन्तों ने उनकी वेगमों को लूट लिया जिसके परिणाम स्वरूप शाह क्रोधित हो असंख्य सेना लेकर हाँसी दुर्ग पर टूट पड़ा ।<sup>८</sup> शाह ने दस मील की दूरी पर अपना शिविर लगा लिया । शाह की विशाल सेना देखकर पृथ्वीराज के समस्त सामन्तों के होश उड़ गये । किन्तु फिर भी सामन्तों ने तिरछे होकर खड्ग चलाना प्रारम्भ किया ।<sup>९</sup> अन्ततोगत्वा हमेशा की भाँति इस बार भी शाह गोरी को पराजित होकर लौटना पड़ा तथा सामन्तों की विजय हुई—

१. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० ५७, स० ४० ।
२. वही, छं० ५९, स० ४० ।
३. वही, छं० ४०, स० ४२ ।
४. वही, छं० ४८, स० ४२ ।
५. वही, छं० ४९, स० ४२ ।
६. वही, छं० २, स० ४९ ।
७. वही, छं० ८, स० ४९ ।
८. वही, छं० १३ तथा २९, स० ४९ ।
९. वही, छं० ४८, स० ४९ ।

मइय जित्ति सामंत, सेन मग्गी सुरतानह ।

अप्प सूर ब्रब कुसल, खित्ति रखी चहुआनह ॥

उभै सहस परि मीर, सहस वस वाज प्रमान ।

परिय दति सत एक, करिय अच्छरि वर गानं ॥

जै जया सद् आयास हुआ, घाव सूर क्षीरी धरिय ।

वित्तियौ कलह भारत्य जिम, कही चन्द छंदहु करिय ॥ छं० ४९ ।<sup>१</sup>

युद्ध में शाह की सेना की रसद एवं अन्य सम्पत्ति लूट ली गई जिससे शाह को तातारी एवं खुरासानी सेना से विश्वास उठ गया ।<sup>१</sup>

शाह गोरी अपनी इस पराजय को न भूल सका । अतः उसने एक विशाल सेना को आठ भागों में विभाजित कर हांसी दुर्ग पर पुनः आक्रमण किया । पृथ्वीराज के प्रसिद्ध १०६ सामन्तों में से निड्डुरराय, हरिसिंह, वीर भौहा, नरसिंह, बड़ा गोविन्दराय, रामराय बडगुंजर, ब्राह्मराय, नरसिंह दाहिम, सगर गौड़ तथा सारंगदेव आदि योद्धाओं ने शाह की सेना का सामना किया ।<sup>१</sup> प्रमार देव अपार रण कौशल दिखाता हुआ वीरगति को प्राप्त हुआ किन्तु उसके कर्मध ने उठकर शाह की सेना को विचलित कर दिया ।<sup>१</sup> वीर अलीखाँ ने कर्मध के गिरते ही दुर्ग को घेर लिया जिससे सभी सामन्त दुर्ग में बन्दी हो गए । इतने में ही रावल समरसिंह की सहायता प्राप्त कर पृथ्वीराज भी हांसी सहायतार्थ आ पहुँचा । घोर संग्राम के उपरान्त शाह गोरी को परास्त होना पड़ा तथा विवश होकर हांसी दुर्ग का घेरा छोड़ कर पीछे हटना पड़ा ।

सोलहवाँ युद्ध शाह गोरी तथा पृथ्वीराज चौहान की सेना के मध्य महोबा में हुआ था । पिछली बार कछवाहों की मार खा कर सुल्तान को युद्ध भूमि से पीछे हटना पड़ा था । अतः महोबा पर पज्जून कछवाहा का अधिकार सुनकर शाह ने आक्रमण हेतु तातारखाँ, निसुरतखाँ, मौजदीन की अध्यक्षता में भेजे ।<sup>१</sup> शाह के आक्रमण की सूचना पाकर पज्जून ने पृथ्वीराज से सहायता की याचना की किन्तु सहायता आने के पूर्व ही पज्जूनराय को शाह की सेना से मुकाबला करना पड़ा । पज्जूनराय के पुत्र मलयसिंह तथा बलिभद्र ने शाह की सेना को विचलित कर दिया ।<sup>१</sup> इसी बीच मोहिल के सभापतित्व में दिल्ली से सहायता आ गई ।

१. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० ४९, स० ४९ ।

२. वही, छं० १, स० ५० ।

३. वही छं० ९, स० ५० ।

४. वही, छं० २३, स० ५० ।

५. वही, छं० ३, स० ५१ ।

६. वही, छं० २०, स० ५१ ।

चाचा कन्ह तथा वीर कल्हन आदि के विकट संग्राम को देखकर शाह की सेना को विवश होकर महोबा का मोर्चा छोड़कर भागना पड़ा ।<sup>१</sup>

मुहम्मद गोरी तथा चौहान पृथ्वीराज का सत्रहवाँ युद्ध 'पज्जून-पातशाह समय ५२' के अन्तर्गत वर्णित है । पृथ्वीराज ने सीमा के नागौर दुर्ग का प्रबन्ध सामन्त पज्जूनराय को सौंप दिया था । शाह को सूचना प्राप्त होने पर, उसने पज्जूनराय से आत्म समर्पण करने के लिए कहा ।<sup>२</sup> किन्तु पज्जून ने विरोचित उत्तर दिया कि 'पज्जून से इस प्रकार की आशा करना व्यर्थ है ।' निदान युद्ध-वाद्य बज उठे । सामन्त वीरम्मराय तथा बलिभद्र ने शाह की सेना को भयकर संग्राम कर विचलित कर दिया । मंत्री तातारखाँ तथा मारुफखाँ घायल होकर छून में डूब गए, अन्त में शाह, मलयसिंह नामक सामन्त के हाथो-बन्दी बना लिया गया ।<sup>३</sup> पृथ्वीराज ने शाह से एक सहस्र अश्व, पन्द्रह शक्ति शाली हाथी दण्ड स्वरूप लेकर उसे मुक्त कर दिया ।<sup>४</sup>

सुल्तान गोरी तथा पृथ्वीराज का अठारहवाँ युद्ध 'दुर्गा केदार समय ५६' में वर्णित है । पृथ्वीराज चौहान ने अपने मंत्री कैमास का वध करनाटी वेश्या के कारण कर दिया था । अतः वह अपने सुयोग्य मंत्री के अभाव के कारण प्रायः दुःखी रहा करता था । सामन्तों ने मिलकर मन-बहलाव हेतु, भृगया का प्रस्ताव रक्खा । प्रस्ताव को स्वीकार कर दिल्लीपति चौहाद पृथ्वीराज ने पानीपत में अपना शिविर लगाया ।<sup>५</sup> शाहबुद्दीन को सूचना मिलने पर उसने भी पानीपत के दस कोस पहले ही अपने शिविर लगवा लिए । रात्रि में सब मीर उमरावों से मंत्रणा कर प्रातः गोरी ने युद्ध वाद्य बजवा दिए । पृथ्वीराज ने भी रण वाद्यों में फूंक भरी । पृथ्वीराज के वीर सामन्त लोहाना आजानवाहु ने शाह गोरी के हाथी को घायल कर दिया, अतः शाह के गिरते ही पहाड़राय ने उसे बन्दी बना लिया ।<sup>६</sup> उदार हृदय पृथ्वीराज ने दण्ड लेकर इस बार भी शाह को मुक्त कर दिया तथा दण्ड में लिए गये सामान का आधा भाग पहाड़राय को तथा शेष अन्य पाँच सामन्तों, जामराव यादव, भीहा चन्देला, लोहाना आजानवाहु, उद्दिगपगार तथा विज्ञा चालुक्य को बाँट दिया ।<sup>७</sup>

उन्नीसवाँ संग्राम शाह शहाबुद्दीन गोरी तथा पृथ्वीराज के मध्य 'घोर पुण्डीर समय ६०'

१. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० २४, स० ५१ ।

२. वही, छं० ११, स० ५२ ।

३. वही, छं० १९, स० ५२ ।

४. वही छं० २७, स० ५२ ।

५. वही, छं० २९, स० ५६ ।

६. वही, छं० १०३, स० ५६ ।

७. वही, छं० १०७, स० ५६ ।

में वर्णित है। अब तक पृथ्वीराज के प्रधान सामन्त कन्नौज युद्ध में घराशायी हो चुके थे। सामन्तों में मन-मुटाव भी हो गया था। इस प्रकार से पृथ्वीराज की शक्ति छिन्न-भिन्न हो गई थी। अतः इस अवसर का लाभ उठाकर शाह ने पृथ्वीराज पर पुनः आक्रमण कर दिया। युद्ध के प्रथम दिवस ही पुण्डरी ने शाह के हाथी की सूँड़ काट डाली जिससे शाह अपने हाथी से नीचे गिर पड़ा तथा पुण्डरी ने उसे बन्दी बना लिया।<sup>१</sup> सुल्तान की शेष सेना जान बचा कर भाग गई।<sup>२</sup> उदार हृदय पृथ्वीराज चौहान ने इस बार भी उदारता दिखाकर शाह से दस हजार अश्व लेकर मुक्त कर दिया।<sup>३</sup>

पृथ्वीराज शाह शहाबुद्दीन गोरी के निरन्तर आक्रमणों से परेशान हो गया था। कन्नौज युद्ध में उसके अनेक प्रसिद्ध एवं पराक्रमी योद्धा वीरगति प्राप्त कर चुके थे। घोर पुण्डरी को लेकर सामन्त वर्ग में असन्तोष की लहर दौड़ रही थी। पृथ्वीराज चौहान संयोगिता के प्रेम में इतना मस्त था कि उसे राज्य कार्य का भी ध्यान शेष न रह गया था। ऐसा अनुकूल वातावरण देखकर एक बार पुनः शाह ने अपनी किस्मत आजमाने का प्रयत्न किया। फिर सामन्त वर्ग शक्ति क्षीण होने के कारण पृथ्वीराज को सधि करने के लिए बाध्य कर रहे थे किन्तु रावल समरसिंह से मंत्रणा करने पर उन्होंने युद्ध करने का ही परामर्श दिया।<sup>४</sup> रावल को दृढ़ प्रतिज्ञा जानकर पृथ्वीराज ने चामुण्डराय की वेड़ियाँ काट दी तथा मृत्यु प्राप्त सामन्तों के पुत्रादि भी युद्ध हेतु पृथ्वीराज के झण्डे के नीचे एकत्र हो गए।<sup>५</sup> मंत्री कैमास का पुत्र प्रतापसिंह भी पृथ्वीराज से आ मिला।<sup>६</sup> बचे-खुचे सामन्तों ने भी मंत्रणा करके युद्ध हेतु प्रस्थान किया। कवि चन्द सहायतार्थ जालंधर के सामन्त हाहुली हम्मीर को लेने गया था।<sup>७</sup> किन्तु हम्मीर ने कवि चन्द को छल करके जालंधरी देवी के मंदिर में बन्द कर दिया तथा स्वयं सुल्तान से जा मिला। शाह ने प्रसन्न होकर उसे मुल्तान का राज्य देने का वचन दिया।<sup>८</sup> शाह सुल्तान गोरी दस हजार अपनी स्वयं की सेना तथा पच्चीस हजार सेना जो अन्य सामन्तों द्वारा सहायतार्थ आई थी, उनको कई भागों में विभाजित करके झेलम नदी पार कर, सोन नदी के निकट पहुँचा।<sup>९</sup> इसपर पृथ्वीराज चौहान की सेना

१. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० ८१-८२, स० ६०।

२. वही, छं० ८६, स० ६०।

३. वही, छं० ९५, स० ६०।

४. वही, छं० ७८, स० ६१।

५. वही, छं० ८२, स० ६१।

६. वही, छं० १०५, स० ६१।

७. वही, छं० १८४, स० ६१।

८. वही, छं० २०२, स० ६१।

९. वही, छं० २३०-२५, स० ६१।



भी युद्ध भूमि में सामना करने के लिए आ उपस्थित हुई। सेना का दक्षिणी भाग रावल समरसिंह के अधिकार में था। जैत प्रमार इस संग्राम में सेनापतित्व का उत्तरदायित्व पूर्ण भार संभाले हुए था। शनिवार के दिन युद्ध भेरी बज उठी। रावल समरसिंह ने अपनी सेना को गिद्ध व्यूह में खड़ा करके, पक्ष भाग पर बलिभद्र कछवाहा तथा जामराय यादव, चंचु तथा ग्रीवा भाग पर पावस पुण्डीर, पैर तथा पिंड पर स्वयं रावल समरसिंह, पुच्छ भाग पर मोहनसी भारू तथा पृथ्वीराज बाएँ अंग पर रहे। शाह की सेना अर्ध चन्द्राकार व्यूह बना कर खड़ी हुई। सेना के अग्र भाग में मंत्री तातारखाँ, खनिखाँ, मारुफखाँ, खुरेशखाँ, रुस्तमखाँ आदि योद्धा थे तथा इन्हीं वीरों के पीछे देश द्रोही हाहुलीराय हम्मीर खड़ा था। हम्मीर ने युद्धारम्भ किया। पराक्रमी पावस पुण्डीर ने लपक कर अन्य सामन्तों की सहायता से हम्मीर का सिर अपनी वर्छी से छेद दिया। हम्मीर को गिरता देखकर तातारखाँ ने अपनी सेना आगे बढ़ाई तथा इतनी भयंकर मार-काट की कि हिन्दू योद्धा व्याकुल हो उठे। सेनानायक कन्ह ने उसको विदीर्ण कर दिया किन्तु निसुरतखाँ ने मरते-मरते अपनी सेना में अपार जोश भर दिया जिससे दोनों दलों में लोहा बज उठा। युद्ध में जामराय यादव पंचतत्व को प्राप्त हुआ। वीर बलिभद्र के साथ रावल समरसिंह के अन्य नौ वीर सिघराव, सांखला, पूरनराव प्रतिहार, पहाड़ी प्रदेश का स्वामी सारंगदेव, भारी वीर वैनराय बघ्वेल, सामर्थ्यवान सारंगदेव देवड़ा, सुभट हरदेव खीची, वीरसिंह चालुक्य, रत्नसिंह डोड तथा जिसकी तलवार सदा रक्त से तर रहती थी ऐसा सारंगराय तोमर, उसके साथ आ मिला। किन्तु दुभाग्य वश यह सभी योद्धा वीरगति को प्राप्त हुए। पृथ्वीराज चौहान की सेना का बायें पक्ष टूट गया। पावस पुण्डीर ने वह स्थान आकर सम्भालने का प्रयत्न किया किन्तु युद्ध करता हुआ वीर गति को प्राप्त हुआ।

तृतीय दिन प्रातःकाल ही वीर चामुण्डराय जो सेना के दाहिने भाग का सेनापतित्व ग्रहण किए हुआ था, अपने साथियों सहित सूर्य मंडल में प्रवेश कर गया, अर्थात् पंचतत्व को प्राप्त हुआ। जैत प्रमार भी अपार बल प्रदर्शन करता हुआ वीरगति को प्राप्त

१. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० २४०, स० ६१।
२. वही, छं० २४२, स० ६१।
३. वही, छं० २६५, स० ६१।
४. वही, छं० २६५, स० ६१।
५. वही, छं० २८५, स० ६१।
६. वही, छं० २८६, स० ६१।
७. वही, छं० २८८, स० ६१।
८. वही, छं० २९१, स० ६१।
९. वही, छं० ३००, स० ६१।

हुआ ।<sup>१</sup> प्रसंगराय खींची ने भी अपने-सात सौ सथियों सहित स्वर्गारोहण किया ।<sup>१</sup> चतुर्थ दिवस देवराज बगरी तथा दीलतखा दोनों ही योद्धा वीरगति को प्राप्त हुए ।<sup>१</sup> पृथ्वीराज की सेना के सामन्तों को गिरता देखकर शाह की सेना उत्साहित होकर आगे बढ़ चली । शाह के परम पराक्रमी योद्धा मोनदीन तथा सम्मान मीर पृथ्वीराज को बन्दी बनाने के लिए अग्रसर हुए ।<sup>१</sup> किन्तु लोहाना आजानवाहु ने पृथ्वीराज की रक्षा की तथा स्वयं वीरगति को प्राप्त हुआ ।<sup>१</sup> अरजराय भी युद्ध में काम आया । मदनसिंह वल्लार, सारंगराय खींची, महनंग मारु प्रतिहार आदि सामन्तों ने भी स्वर्ग का मार्ग ग्रहण किया । अब रावल समरसिंह सेना को साथ लेकर शत्रु की ओर अग्रसर हो रहे थे किन्तु दुर्भाग्यवश उनका मस्तक कट कर गिर गया । परन्तु उनका रुंड निरन्तर युद्ध करता रहा ।<sup>१</sup> रावल समरसिंह के गिरते ही हिन्दुओं को अपनी पराजय दिखाई देने लगी, तथा अब तक मोहिल भी वीरगति को प्राप्त हो चुका था ।<sup>१</sup> पृथ्वीराज चौहान भाग्य को विपरीत देखकर अपने कुण्डलों को गुरु राम को दान देकर पाँच हजार सैनिकों को साथ लेकर शाह पर दूट पड़े ।<sup>१</sup> शाह सुल्तान के सैनिकों ने चौहान पृथ्वीराज को चारों ओर से घेर लिया तथा सारंग देव धराशायी हुआ । बहवलखा ने गुरु राम को मार गिराया ।<sup>१</sup> दुर्भाग्यवश पृथ्वीराज अपने वाणों से असंख्य वीरों को धायल करता हुआ पकड़ा गया—

जिहि करिवर अरि झरिय , झरिय करि वर अरि बद्धत ।

जिहि सकति मुख सकति , सकति विद्विय सक कद्धत ॥

जिहि बानावलि वान , प्रान कर्पाहि मद सिधुर ।

तिन मद स्यधुर सुडि , डड सिर छत्र नृपति पर ॥

जिहि मुख सहाव संमुह सहिन , तिहि मुह जंपइ गह गहन ।

प्रथिराज देव दुअननि ग्रहो , रे छत्री गुर ग्रव रह ॥ छं० ३९२ ।<sup>१०</sup>

१. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० ३०३, स० ६१ ।

२. वही, छं० ३०८, स० ६१ ।

३. वही, छं० ३१२, स० ६१ ।

४. वही, छं० ३१४, स० ६१ ।

५. वही, छं० ३१७, स० ६१ ।

६. वही, छं० ३३४, स० ६१ ।

७. वही, छं० ३४१, स० ६१ ।

८. वही, छं० ३४२-४३, स० ६१ ।

९. वही, छं० ३४४, स० ६१ ।

१०. वही, छं० ३९२, स० ६१ ।

उपर्युक्त कथन का रासो के प्रायः सभी संस्करणों में समर्थन मिलता है। नागरी प्रचारिणी सभा काशी द्वारा प्रकाशित 'रासो' के अनुसार भी पृथ्वीराज युद्ध करता हुआ अन्त में पकड़ा गया—

एक वान फम्मान । साहि चहुआन कोप गहि ।  
पां ततार लहु बंध । कट्टे सुरंग वहि ॥  
ओड़न नपि नरिद । वार कट्टिय कट्टारिय ।  
दिन पलट्यो चहुआन । हथ्य छुट्टे नह तारिय ॥

भावी विगति भंजन घडन । दइ दुवाह इह निर्म्मयी ।  
पृथ्वीराज गहन सुरतान कै । मुष जंपत्त वर सुम्नयो ॥ छं० १५३३ ।<sup>१</sup>

मुहम्मद गोरी के अन्य युद्ध—सुल्तान मुहम्मद गोरी ने अरब तथा सिन्ध के अधिपति अरबखाँ की ओर अपनी वक्र दृष्टि की। अपने प्रसिद्ध सामन्त खुरासानखाँ, तातारखाँ तथा अन्य खानों में श्रेष्ठ बलवान शेरनखाँ आदि को एकत्र किया।<sup>२</sup> तथा रण-मंत्रणा करके अरबखाँ पर आक्रमण कर दिया।<sup>३</sup> बारह सहस्र अश्वारोहियों को साथ लेकर चित्ररेखा की कामना से शाह ने यह आक्रमण किया था।<sup>४</sup> अरबखाँ ने शाह गोरी के आक्रमण का कारण जानकर संधि स्वरूप मुग्धा चित्ररेखा को अर्पण कर विग्रह का अन्त किया।<sup>५</sup> शाह गोरी प्रसन्नता पूर्वक वेश्या चित्ररेखा को लेकर गजनी लौट आया।

मुहम्मदगोरी तथा जयचन्द गाहड़वाल—पृथ्वीराज चौहान को परास्त कर भारतवर्ष में एक छत्र राज्य स्थापित करने के लिए कन्नौजपति जयचन्द गाहड़वाल को परास्त करना अत्यन्त आवश्यक था। पंगराज जयचन्द पर गोरी के आक्रमण का कारण स्पष्ट करते हुए प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता सत्यकेतु विद्यालंकार लिखते हैं—“शहाबुद्दीन गोरी केवल गजनी के राज्य सिंहासन से ही सन्तुष्ट नहीं हुआ, उसने पहले उत्तरी पश्चिमी भारत से तुर्कों के शासन का अन्त कर दिया। फिर पंजाब से आगे बढ़ कर दिल्ली और कन्नौज के चौहान तथा गाहड़वाल राजाओं के साथ युद्ध किए। अनेक युद्धों में परास्त होकर भी अन्ततः वह दिल्ली तथा शाकम्भरी के चौहान राजा पृथ्वीराज (तृतीय) को परास्त करने में समर्थ हुआ।

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १५३३, स० ६६।
२. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० ३, स० १३।
३. वही, छं० ४, स० १३।
४. वही, छं० ६, स० १३।
५. वही, छं० ८, स० १३।

( ११९२ ई० ) और दो ही साल बाद गाहड़वाल राजा जयचन्द को हराकर कन्नौज के राज्य पर उसने अपना अधिकार कर लिया ।<sup>१</sup>

स्पष्ट है कन्नौज विजय का मूल कारण शाह मुहम्मद गोरी की विशाल साम्राज्यकांक्षा ही थी । सोभाग्य की बात है कि गोरी को भारत में हिन्दुओं की सम्मिलित शक्ति का सामना न करना पड़ा अन्यथा उसकी राज्य विस्तार की कामना कल्पना मात्र बनकर रह जाती । दिल्ली पर आक्रमण हुआ, कन्नौजपति तटस्थ होकर तमाशा देखता रहा । दिल्ली गई । अब कन्नौज की चारी आई, वह भी युद्धाग्नि से किसी प्रकार न बच सका—

उभय दिवस सौरभ , राज्य जयचन्द प्रपत्ती ।

इत गज्जन वैसेन , धाइ चर पवरि नियत्ती ॥

उभय चातिय दिन प्रात , मात कार्लिदी तट्टह ।

मिले पंग पतिशाह वहै , घर थोन उपढूह ॥

जुद्धत जोध दिन सतभय , हर रभ रंडरिय ।

हर रुण्ड माला गुंथत गहर , रंक जेम रसन सरिय ॥ छं० २१५ ।

+ + + +

कहि न ईस कहि दंद , कह न ब्राह्मा सावित्री ।

गन गन्धर्व अपछरा , वत्त नारव निरत्ती ॥

कहि न मरे मह मट्टन , मनिष मनैष को मिलियौ ।

कहौ उडियन आकास , जलनि कंते जै ललियौ ॥

संग्राम मिलै सुर नर असुर , अनल पषं दिट्ठौ अरनि ।

जयचन्द राव किहि परि हुऔ , किहि निसंक सच्चौ घरनि ॥ छं० २१६

गजनी की विशाल वाहिनी तथा कान्यकुब्ज साम्राज्य की चतुरंगिनी सेना के संग्राम करता हुआ कन्नौजपति जयचन्द पराभव को प्राप्त हुआ—

इंद्र पथ्य घर लिङ्घ । रयन सध्यौ असुरायन ।

दिसि कनवज आवत । सुन्यौ जैचन्द पराइन ॥

सयन सनम्मुख आय । जुद्ध मारथ मर मच्चौ ।

जित्यौ वितय सहाव । परस घर सिर बर नच्चौ ॥

१. डॉ० सत्यकेतु विद्यालंकार, भारतीय संस्कृति का इतिहास, पृ० ४१६ ।

२. पृथ्वीराज रासो, नगरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० २१४ तथा २१७, स० ६८

नरम्मान पान भावी विगति । असिय लज्प जित्ते असुर ॥

जयचन्द कमध सत्रह सहस । हनिय लगि गय धार धुर ॥ छं० २१८ ।'

और भी—

सु सिर पर्यो रिन भुवन । तेह गिर धरनि उचायो ॥

गिरघन अपछर लेत । राव चाहत न पायो ॥

गिरिधनि कर हवि छुट्टि । पर्यो गंगा जल भीतर ॥

गंगह लियो उछंग । लैन चाहे सिर सकर ॥

गंगा सुपास लिय चय नयन । हर उछास किय आप कौ ॥

गल संड माल लै संठयो । वह सुसीस जय चन्द कौ ॥ छं० २१९ ।'

## रासो के युद्धों की ऐतिहासिकता—

( १ ) पृथ्वीराज तथा गोरी के युद्धः—शाहबुद्दीन गोरी तथा पृथ्वीराज के मध्य रासो में कुल २१ युद्धों का विवरण दिया गया है । हाँसी प्रथम तथा द्वितीय युद्धों का विवरण एकही साथ प्रस्तुत करने के कारण युद्धों की संख्या २० रह गई है । अब प्रश्न यह उठता है कि क्या वास्तव में पृथ्वीराज चौहान तथा गोरी के मध्य २१ संग्राम हुए थे ? जिनमें १६ बार गोरी वन्दी बना कर मुक्त किया गया । फारसी इतिहासकार केवल दो युद्धों का ही उल्लेख करते हैं । अतः यहाँ पर विभिन्न साहित्यिक ग्रन्थों की सहायता से पृथ्वीराज चौहान तथा गोरी के मध्य हुए युद्धों पर विचार किया जावेगा—

डॉ० शम्भूनाथ सिंह ने रासो—वर्णित युद्धों के विषय में लिखा है कि—'रासो को पढ़ने पर इतिहास के ये सभी भाव सत्य आँखों के सामने मूर्त हो जाते हैं । उसके युद्धों में अधिकांश व्यसन युद्ध ही हैं । पृथ्वीराज विवाह के लिए या यों भी अकारण किसी पर आक्रमण कर देता था । उस पर भी किसी बात का बदला लेने के लिए आक्रमण होते थे । शाहबुद्दीन के आक्रमणों का ताँता कभी टूटता ही नहीं है तथा आश्चर्य यह कि वह बार-बार पकड़ कर छोड़ दिया जाता था । उसके आक्रमण के समय पृथ्वीराज के किसी न किसी सामन्त को जो उसे पकड़ने का बीड़ा उठाता था, पकड़ने का अवसर दिया जाता था । परन्तु पकड़ा जाने पर भी हर बार संभवतः उसे इसलिए छोड़ भी दिया जाता था कि गोरी को आक्रमण करने और पृथ्वीराज के सामन्तों को उसे फिर पकड़ने का अवसर मिले । इस प्रकार रासो में युद्ध आवश्यकता ही नहीं, सामन्तों, राजाओं के व्यसन के रूप में भी वर्णित हुआ है । उसमें

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० २१८, स० ६८ ।

२. वही, छं० २१९, स० ६८ ।

इतने युद्धों का वर्णन हुआ है कि सर्वों को एक साथ स्मरण भी नहीं रखा जा सकता। अतः कवि के लिए भी असम्भव था कि किसी युद्ध का वर्णन पीछे जिस प्रकार हो चुका है उसकी शब्दावली और ढंग की पुनरावृत्ति को वह आगे न कर सके।”

फारसी इतिहासकार पृथ्वीराज चौहान तथा गोरी के मध्य केवल दो युद्धों का उल्लेख करते हैं। पंजाब की सीमा से आगे बढ़ कर पृथ्वीराज की राज्य सीमा प्रारम्भ होती थी। सन् ११९१ ई० में गोरी को भारत में प्रवेश लेने पर सर्वप्रथम पृथ्वीराज चौहान से ही मोर्चा लेना पड़ा। इतिहासवेत्ताओं के मतानुसार गोरी इस युद्ध में परास्त होकर गजनी लौट गया। उसका एक स्वामिमक्त खिलजी सेवक युद्ध भूमि से उसे निकाल ले गया अन्यथा गजनीपति का अन्त वहीं हो गया होता। सुल्तान की सेना तितर-बितर हो गई। मुसलमानों की इसके पूर्व ऐसी हार नहीं हुई थी। श्री के० एम० मुंशी ने भी इस संग्राम में सुल्तान की पराजय की चर्चा की है।

पुनः सन् ११९२ ई० में गोरी ने पृथ्वीराज चौहान पर एक लाख बीस हजार सवार लेकर आक्रमण किया। पृथ्वीराज चौहान अपने समस्त सामन्तों को एकत्र कर एक विशाल बाहिनी बनाकर युद्ध हेतु अग्रसर हुआ। शाह गोरी की भेद नीति के कारण विजय हुई, पृथ्वीराज चौहान परास्त हुआ तथा वहीं युद्ध में मारा गया। श्री के० एम० मुंशी भी उपयुक्त मत के समर्थक हैं।

१. डॉ० शम्भूनाथसिंह, हिन्दी महाकाव्य का स्वरूप विकास, पृ० २९६-२९९।
2. In 1191 A. C. Ghuri organised his forces and took the fortress of Taharu Hind, modern Bhatinda. Prithviraja, at the head of a confederate force, fell up on him. On the field of Taraori a severe encounter followed. The Muslims were beaten; Ghuri, the Hinder of his times and a second Rustom narrowly escaped. His army broke and fled till it reached, Ghazna. Prthiraja did not follow up the victory by swift action. He paused to invest Bhatinda, which fell in to his hands after thirteen months. (The Glory that was Gurjaradea. Pt. III. Page 205. The Imperial Gurjara. By K. M. Munshi, Bhartiya Vidya Bhawan Bombay. 1st edition, 1944.)
3. In the next year 1192 A. C. Ghuri collected a large army including 1,20,000 horses and marched on Prithviraja. Neither caution nor humility were part of the young hero's make up. It never so much as entered his head to seek aid from, Bhima II or from Jai Chandra. Prondy he asked Ghuri 'to retire to his own country.' Ghuri was consummate diplomat, he sent word that he was there only at the bidding of his brother

रासमाला में पृथ्वीराज तथा गोरी के युद्ध का विवरण इस प्रकार दिया गया है— 'मोहम्मद गोरी का पहला हमला सन् ११९१ ई० में हुआ था। उस अवसर पर यानेश्वर और कर्नाल के बीच में तिरौरी नामक स्थान पर पृथ्वीराज ने उससे करारी टक्कर ली थी और दिल्ली के राज प्रतिनिधि चामुण्डराज की सहायता से मुसलमानों को पूर्णतः पराजित किया था। इसके दो वर्ष बाद ( सन् ११९३ ई० में ) फिर युद्ध हुआ। उस समय देव ने दृष्टि फेर ली। दोनों सेनाएं सरस्वती के किनारे मिली और बहुत समय तक लड़ाई होती रही परन्तु अन्त में शत्रु की कुशल व्यूह रचना से टक्कर लेते, सूर्यास्त के समय राजपूत सेना थक गई और तभी स्वयं मोहम्मद की अध्यक्षता में मुसलमानों के बारह हजार चुने हुए कवच धारी घुड़सवारों ने हत्ला बोल दिया जिससे हिन्दुओं की सेना का कच्चरघाण (नाश) हो गया। चामुण्डराज मारा गया और चौहान की विशाल सेना एक बार नींव हिलने पर किसी बड़ी भारी इमारत के समान एक दम घसक गई और अपने ही खंडहरों में विलीन हो गई। शूर वीर पृथ्वीराज पकड़ लिया गया और वहीं उसका बध कर दिया गया। इसके बाद मोहम्मद स्वयं अजमेर गया और निर्दयता से उसने कत्ले-आम जारी कराया। फिर शहरों को लूटता-पाटता वह गजनी को खाना हुआ।'

इतिहासवेत्ता मूलतः शाह गोरी तथा पृथ्वीराज चौहान के दो ही युद्धों का समर्थन करते हैं जबकि संस्कृत के ग्रन्थ अनेक युद्धों की पुष्टि करते हैं। सं० १३६१ में प्रणीत मेरुतुंग के प्रबंध चिन्तामणि में तुंग सुभट प्रबंध में शहाबुद्दीन तथा पृथ्वीराज के मध्य २२ बार युद्ध होने की बात कही गई है। सं० १४०५ में राजशेखर सूरि द्वारा प्रणीत प्रबंधकोश के वस्तुपाल प्रबंध में शाह सुल्तान को पृथ्वीराज चौहान द्वारा २० बार बन्दी बनाने एवं मुक्त करने का उल्लेख प्राप्त होता है। सम्वत् १६२४ वि० में प्रणीत सुर्जनचरित महाकाव्य में शाह को पृथ्वीराज चौहान द्वारा २१ बार बन्दी बना कर मुक्त करने की बात का उल्लेख किया गया है। महाकवि सूदन कृत 'सुजान चरित' काव्य में गोरी को पृथ्वीराज द्वारा ७ बार बन्दी बनाने का उल्लेख प्राप्त होता है।

---

and master. If Prithiraja gave him time he would get instructions from his master and enter in to a treaty. He asked for a truce and the confiding Prithviraja gave it. Then the Hindu army fell in to remissness. Ghuri took advantage of the truce and fell up on Prithviraja. The young Cahamana fled from the field, was taken prisoner and killed, ( The Glory that was Gurjaradesa pt. III, ( The Imperial Gurjaras ) page 206, By K. M. Munshi, Bhartiya Vidya Bhavan, Bombay 1st edition 1944)

१. फार्वस, अनुवादक श्री गोपालनारायण बहुरा, र.समाला, पृ० २६७-६८, मंगल प्रकाशन, जयपुर प्रथम संस्करण, नवम्बर, १९५८।

अतः उपर्युक्त विवेचन से इतना तो स्पष्ट हो जाता है कि सं० १४०५ तक पृथ्वीराज चौहान तथा शहाबुद्दीन गोरी के बीच २०-२२ युद्धों की अनुश्रुति प्रचलित हो गई थी ।

मूलतः रासो के चार संस्करण उपलब्ध होते हैं । लघुतम, लघु, मध्यम तथा बृहत् । इन चार संस्करणों को देखने से स्पष्ट हो जाता है कि गोरी तथा पृथ्वीराज के बीचग्रंथ के आकार के साथ ही साथ युद्ध संख्या में भी अभिवृद्धि होती गई है । ऐसी स्थिति में निर्णायक मत देना नितान्त असंभव है । लखनऊ विश्वविद्यालय रासो के विभिन्न संस्करणों की हस्तलिखित प्रतियों के आधार पर 'रासो' का वैज्ञानिक तथा संशोधित संस्करण संपादित करने जा रहा है । जब तक 'रासो' का वैज्ञानिक संस्करण सामने नहीं आता तब तक इस पर निर्णायक मत देना संगत न होगा ।

( २ ) गोरी तथा जयचन्द गाहड़वाल—दिल्ली अजमेर पति पृथ्वीराज चौहान को परास्त करने के उपरान्त भारतवर्ष पर एकछत्र राज्य स्थापित करने के लिए कन्नौजपति जयचन्द गाहड़वाल को परास्त करना भी गोरी के लिए नितान्त आवश्यक था । अतः दूसरे ही वर्ष सन् ११९४ ई० में मोहम्मद गोरी फिर हिन्दुस्तान आया और यमुना नदी के किनारे पर जयचन्द को हराकर उसने कन्नौज एवं काशी को अपने अधिकार में कर लिया, तथा वहाँ पर एक हजार से भी अधिक देवालयों की मूर्तियों को तुड़वा कर उनको परमात्मा की सच्ची उपासना (नमाज) के स्थान (मसजिद) में बदल दिया । राठौर राजा ने पवित्र नदी में प्राण त्याग करके हिन्दुओं के मतानुसार अभीष्ट मृत्यु का वरण किया । कन्नौज का विशाल और विचित्र नगर उस समय हिन्दू नगर नहीं रह गया था, परन्तु थोड़े ही वर्षों बाद इस अभागे राजा के पौत्रों ने इस नगर पर फिर राठौड़ों की ध्वजा फहरा दी । कालान्तर में वही ध्वजा यहाँ से मरु देश में जोधपुर के किले पर जा फहराई जहाँ से इसने निर्भय होकर कुतुबुद्दीन के राज्य नाश के दृश्य का अपनी आँखों से साक्षात्कार किया ।" शाह गोरी की इस विजय को प्रसिद्ध लेखक श्री के० एम० मुंशी भी ऐतिहासिक मामले हैं तथा रासमाला द्वारा प्रस्तुत विवरण का समर्थन करते हैं । अतः शाह गोरी तथा कान्यकुब्जेश्वर जयचन्द का मध्य होने वाले संग्राम में किसी को भी संदेह नहीं है ।

1. फार्बस, अनुवादक श्री गोपालनारायण बहुरा, रासमाला, प्रथम भाग पृ० २६६, मंगल प्रकाशन जयपुर, सन् १९५६ ।
2. Within a year of the fateful battle of Taraori Ghuri with lightning speed marched against Jay Ghandra who fell fighting on the field of Chandwar. Ghuri proceeded with total destructiveness. Men were massacred. Towns were looted. Smiling Madhyadesa was charred ruin. The conquerors then proceeded to the capital of Jay Chandra. India looked on terror struck varanasi, the intellectual and spritual centre of India, from



गोरी का अवसान—साहित्य संस्थान उदयपुर से प्रकाशित 'पृथ्वीराज रासो' इस विषय में सर्वथा मौन है किन्तु नागरी प्रचारिणी सभा काशी द्वारा प्रकाशित 'पृथ्वीराज रासो' में लिखा है कि 'शहाबुद्दीन गोरी पृथ्वीराज चौहान को अन्तिम युद्ध में बन्दी बनाकर गजनी ले गया। वहाँ उसने पराक्रमी एवं उदार सम्राट की आँखें निकलवा लीं। युद्ध परिणाम ज्ञात होने पर कविचन्द वरदायी योगी का भेष धारण कर गजनी गया तथा शाह गोरी को नेत्र विहीन पृथ्वीराज चौहान का शब्द बेघी वाण चलाने की कला देखने के लिए उत्सुक किया। कवि ने कहा कि यदि आप आज्ञा देना स्वीकार करें तो राजा का कौशल देख सकते हैं। शाह, कवि की बात का मर्म न समझ सका तथा आज्ञा देने के लिए सहमत हो गया। मंत्री तातारखाँ ने बहुत मना किया कि ऐसा प्रदर्शन देखना ठीक नहीं है किन्तु शाह ने उसकी एक न सुनी। चन्द वरदायी, पृथ्वीराज को रगभूमि में लेकर उपस्थित हो गया। उस समय निम्न सम्बत् मास, पक्ष तथा घड़ी थी—

संवत् अष्टावन माघ मास , अनसित पक्ष दसमी सुमास ।

दिन घटिय अंत पल आदि जात , तारक मूल त्रिव तिथ्य पात ॥ छं० ४६१ ।'

रंग भूमि में हुआवर्खाँ ने पृथ्वीराज चौहान को कई कमार्ने दी जो उसके खींचते ही टूट गई। अन्त में पृथ्वीराज को उसकी स्वयं की कमान दी गई। कवि के गूढ़ संकेत के द्वारा महाराज पृथ्वीराज चौहान ने सुल्तान के सम्मुख अपना मुख कर लिया—

गिरनारा लगि गीढ़ , देस जीता जंगल थल ।

लका गढ़ जित्तयो , समद जित्तो उर सलियल ॥

हथिनावर जित्तयो , सीम कंधारा बंधिय ।

मयूरापुर जित्तयो , एक मुष धार न संघिय ॥

प्रथिराज सुनवि संभरिधनी , सुहिनेही मम जानि सुष ।

इमि जपे चन्द वरहिया , सजि जालधर देस मुष ॥ छं० ५२५ ।'

वीर पृथ्वीराज चौहान सन्नद्ध होकर खड़ा हो गया, कवि ने डमरू बजाकर शाह से

---

where for centuries had flown inspiration and knowledge, fell into the hands of the foreign invader. A thousand temples were laid low. Mosques rose in their places. Jaya Chandra's son Hari Chandra, a boy of eighteen retired to a distant place and kept up his independence. ( The Glory that was Gurjaradesa, ( The Imperial Gnrjaras ) pt. III. Page 206, By. K. M. Munshi, Bhartiya Vidya Bhawan Bombay I st edition. 1944)

१. पृथ्वीराज रासो नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ४६१, स० ६७ ।

२. वही, छं० ५२५, स० ६७ ।

फरमान देने की प्रार्थना की तथा महाराज पृथ्वीराज की विरुदावली पढ़नी प्रारम्भ की । प्रथम आज्ञा पर चौहान ने वाण संघाना, द्वितीय पर उसे लक्ष पर दृढ़ किया, तृतीय आज्ञा पर राजा का शब्द वेधी वाण सुल्तान के दांत, जीभ, तालू तोड़ता-फोड़ता हुआ सिर के टुकड़े-टुकड़े करके पार हो गया तथा उसका घड़ नीचे गिर पड़ा—

भयो एक फुरमान , वान जोगिनिपुर संध्यौ ।

सोइ सबद अरु वान , अग्र अविचल करिवघ्यौ ॥

भयो विधौ फुरमान , तानि रघ्यौ श्रवन्तरि ।

तियो भयो अन भयो , पर्यौ पाति साहि घरंतरि ॥

लं दसन रसन तालू सघन , सीस फट्टि वट्ट दिसि गवन ।

सुरतान पर्यौ पां पुक्करै , भयो चन्द राजन भरन ॥ छं० ५४९ ।

सुल्तान के प्राणान्त होते ही कवि चन्द ने अपने जूड़े में से छिपी हुई छुरी निकाल कर अपना पेट फाड़ लिया तथा वही छुरी पृथ्वीराज चौहान को दे दी, जिससे उसने भी अपना पेट फाड़ कर इहलीला समाप्त की । इस प्रकार तीनों की मृत्यु हो गई । किन्तु इतिहासवेत्ता 'रासो' के उपर्युक्त कथन का समर्थन नहीं करते । उनके विचार से रासो का वर्णन भट्ट-भट्ट के अतिरिक्त और कुछ नहीं है । इतिहासवेत्ताओं ने लिखा है कि—'कुतुबुद्दीन ऐबक को भारत के विजित प्रदेशों का शासनभार सौंप कर मुहम्मद गजनी लौट गया, क्योंकि मध्य एशिया में ख्वारिज्म का शाह उसका मुख्य शत्रु था । उसके विरुद्ध उसे कुछ सफलता मिली किन्तु स्थायी सिद्ध नहीं हुई । कराखिताइस ( Qara-Khitais ) की सहायता से ख्वारिज्म की सेना ने सन् १२०४ ई० में अघखुद के युद्ध में मुहम्मद को भयकर पराजय दी । वह स्वयं बड़ी कठिनाई से अपने प्राण बचाकर अपनी राजधानी गोर पहुंच सका । ख्वारिज्म के शाह अलाउद्दीन के साथ उसे एक रक्षा संधि करने पर बाध्य होना पड़ा जिसके अनुसार उसे हिरात और बलख को छोड़कर मध्य एशिया के अपने सभी विजित प्रदेश त्याग देने पड़े । मुहम्मद की अघखुद की पराजय का समाचार बनाविन की भाँति चारों ओर फैल गया और युद्ध में स्वयं उसके भी मारे जाने की अफवाह उड़ा दी गई । इसका परिणाम यह हुआ कि पंजाब की दुर्दम्य जनता ने उसके विरुद्ध आम विद्रोह का झण्डा खड़ा कर दिया । मुहम्मद के एक अफसर ऐबक-बक ने सुल्तान के सूवेदार को मार डाला और स्वयं वहाँ का शासक बन बैठा । उसके इस द्रोह तथा विश्वासघात ने स्थिति और भी अधिक खराब कर दी । खोखर तथा अन्य उच्छखल जातियों ने जो लाहौर और गजनी के बीच में निवास करती थीं, खुले रूप से विद्रोह कर दिया और जिनाव तथा झेलम के दो बाँव को लूटने लगी । उन्होंने लाहौर को भी जीतने का प्रयत्न किया । सड़कों पर विद्रोही छा गये और पंजाब से गजनी का राजस्व भेजना कठिन हो गया । विद्रोहियों का दमन करने के लिए

मुहम्मद को फिर पंजाब आना पड़ा। उसने कुतुबुद्दीन को आज्ञा भेजी कि तुरन्त ही सेलम के पास आकर उससे मिले। मार्ग में विद्रोहियों ने ऐवक को घेर लिया किन्तु वह उन्हें हराता और खदेड़ता हुआ अपने स्वामी के पास जा पहुँचा। ऐवक को साथ लेकर मुहम्मद लाहौर आया और स्थिति को ठीक करके गजनी के लिए प्रस्थान कर गया। मार्ग में जब वह दमयक नामक स्थान पर डेरा डाल १५ मार्च, १२०६ ई० के दिन सन्ध्या की नमाज पढ़ रहा था, कुछ शिया तथा हिन्दू खोदखर विद्रोहियों ने उसका वध कर दिया।<sup>१</sup>

प्रसिद्ध इतिहासकार गोरीशंकर हीराचन्द्र ओझा ने भी रासो के विवरण को अनैतिहासिक मानते हुए लिखा है कि 'यह सम्पूर्ण कथन भी ऐतिहासिक दृष्टि से ठीक नहीं है क्योंकि शाहबुद्दीन की मृत्यु पृथ्वीराज के हाथ से वि० सं० १२४९ में नहीं हुई किन्तु वि० सं० १२६३ चैत सुदी ३ को गवखरों के हाथ से हुई थी। जब गवखरों को परास्त कर लाहौर से गजनी जा रहा था उस समय धमेन्द के पास नदी के किनारे बाग में नमाज पढ़ता हुआ, वह मारा गया।'<sup>२</sup>

रासो का उपर्युक्त वर्णन वास्तव में अनैतिहासिकता की पराकाष्ठा है किन्तु हमें स्मरण रखना चाहिए कि 'पृथ्वीराज रासो' मूलतः इतिहास नहीं वरन् चरित्र काव्य है। कवि ने नायक पृथ्वीराज चौहान की प्रतिष्ठा एवं आत्म सम्मान को ठेस न लगने देने के कारण ही उपर्युक्त कथा की कल्पना की है, फिर भी इससे यह न समझ लेना चाहिए कि 'पृथ्वीराज रासो' की सम्पूर्ण घटनाएँ ही अनैतिहासिक तथा अप्रामाणिक हैं।

सहवाजखाँ—'सहवाजखाँ अथवा सव्वाज गजनीपति शाह शहाबुद्दीन गोरी का सेना नायक था जिसने पृथ्वीराज तथा गोरी के मध्य रेवातट पर होने वाल सग्राम में भाग लिया था। सव्वाजखाँ चार तलवारों को वाँधने तथा बाण द्वारा शत्रुओं के प्राण खींचने के लिए अत्यन्त प्रसिद्ध था। चीतेगी सव्वाज वान अरि प्रांन सु ऊँचै। छं० ४४।'<sup>३</sup>

इनके विषय में निश्चिन् रूप से विस्तृत विवरण देना कठिन है। प्रमाणों के अभाव में हमें विवश होकर इतने से ही सन्तोष करना पड़ता है।

सुभानखाँ—'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार वीर सुभानखाँ, शाह शहाबुद्दीन गोरी का सामन्त था तथा 'बड़ी लड़ाई को प्रस्ताव' के अन्तर्गत उसने पृथ्वीराज तथा गोरी के अन्तिम

१. डॉ० आशीर्वादीलाल श्रीवास्तव, दिल्ली सल्तनत, पृ० ९७-९८, विश्वलाल अग्रवाल एण्ड कं० प्रा० लि० आगरा, तृतीय संस्करण।
२. गोरीशंकर हीराचन्द्र ओझा, पृथ्वीराज रासो का निर्माण काल, पृ० ६०, कोसोत्सव स्मारक संग्रह, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, १९८५।
३. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ४४, स०-२७।

युद्ध में भाग लिया था। गोरी के पक्ष के मियाँ मुस्तफा तथा अन्य ग्यारह सरदारों के युद्ध में खेत रहने के उपरान्त गोरी पक्ष से सुभानखाँ युद्ध करने के लिए युद्ध भूमि की ओर अग्रसर हुआ। कवि के अनुसार सुभानखाँ 'निसानपति' था अर्थात् झण्डों का आधिपति अथवा नगाड़ों का स्वामी था। उसके आक्रमण करते ही हिन्दू सेना में खलवली मच गई—

अग्ने वध वि आय। पच्छि जद्धव दल लगिय ॥

हय गय नर आरुखिय। भररि गोरी घर भगिय ॥

पग छुटत पतिसाह। पान पाना पुरसानी ॥

हिन्दवान की हद्। बोलि अग्ने सुरतानी ॥

सिरदार सिवान निसानपति। सूविहान असमान भति ॥

हों हाल गहों चहुआन को। तों पठान श्रगिवानपति ॥ छ० ११२९ ।'

युद्ध भूमि में अग्रसर होते ही सुभानखाँ का विपक्षी दल के सामन्त जामराय जादव से सामना हो गया। दोनों वीरों ने अपने-अपने जीहर दिखाए, किन्तु विपक्षी दल का जामराव जादव, सुभानखाँ के समक्ष न ठहर सका तथा वीरगति को प्राप्त हुआ।<sup>१</sup>

हवशखाँ—'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार वीर हवशखाँ गोरी का सेना नायक था। यह अत्यन्त अभिमानी तथा हवशियों की सेना का सेना नायक था। रेवातट पर पृथ्वीराज चौहान तथा शाह गोरी के मध्य होने वाले विकट संग्राम में इसके भाग लेने का उल्लेख मिलता है।

हवसपांन हवसी हुजाव , ग्रव्व आलम्म जास वर ॥ छ० ४४ ।'

प्रमाणों के अभाव में इसके विषय में कुछ अधिक लिखना अनधिकार चेष्टा करना होगा।

हिन्दूखाँ—पृथ्वीराज रासो' के अनुसार हिन्दूखाँ गोरी की सेना का सेनानायक था। रेवातट समय में गोरी तथा पृथ्वीराज चौहान के मध्य संग्राम होने पर इसने भी अन्य अगणित सैनिकों के साथ भाग लिया था। कवि ने इसके नाम के पूर्व दगावाज शब्द का प्रयोग किया है—

जहगीर पांन जहगीर वर , पां हिन्दू वर वर बिहर ॥ छ० ४३ ।'

'हिन्दूखाँ-ख्वारजम तथा खुरासान के सुल्तान तकिश का पोता तथा मलिक शाह का जेष्ठ पुत्र था। उसने अपने चाचा सुल्तान महमूद से खुरासान का सूबा लेना चाहा किन्तु

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छ० ११२९, स० ६६।

२. वही, छ० ११३०-३६, स० ६६।

३. वही, छ० ४४, स० २७।

४. वही, छ० ४३, स० २७।

असफल रहा। अन्त में अपने देश के शत्रु सुल्तान गोरी के यहाँ उसने नीकरी कर ली। संभव है कवि ने इसी कारण इसके नाम के पूर्व देशद्रोही अथवा दगावाँज जैसे शब्द का प्रयोग किया हो तथा शहाबुद्दीन के अन्य अधिकारी वर्ग के साथ उसके नाम का भी उल्लेख किया हो, तबकाते नासिरी में उसकी अत्यन्त प्रशंसा की गई है।<sup>१</sup>

हुजावनूरीखाँ—‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार हुजावनूरी खाँ, गंजनीपति शाह शहाबुद्दीन गोरी का एक प्रसिद्ध सरदार था। एक दूत ने आकर शाह गोरी के आक्रमण तथा चिनाव नदी को पार करके पुनः समस्त सेना को एकत्र करने की बात पर प्रकाश डालते हुए पृथ्वीराज से कहा कि गोरी ने हुजावनूरी खाँ तथा नूरमुहम्मद को बड़ी तोपों, गोलों, छोटी तोपों तथा हाथियों के विभाग का उत्तरदायित्व सौंपा है। अतः स्पष्ट है कि हुजावनूरी खाँ शाह गोरी के तोप विभाग का उच्च कर्मचारी था—

मारि गोरी जंवूर, सुवर कीना गज सारं।

नूरी खाँ हुज्जाव, नूर महमुव सिर भारं ॥ छं० ४२।<sup>१</sup>

हुसैनखाँ—‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार, हुसैनखाँ ने रेवातट पर शाह गोरी तथा पृथ्वीराज के मध्य होने वाले संग्राम में पृथ्वीराज चौहान के पक्ष में रह कर गोरी की सेना से भीषण युद्ध किया था—

रावर उप्पर धाड़ पर्यो, पांवार जैत विजि।

तिहि उप्पर चामंड, कर्यो हुस्सेन पान सजि ॥

धक्काई धक्काई, दोउ हरवल बल मंज्जे।

पच्छ सेन आहुटि, अनी वंधी आलुज्जे ॥

गजराज विय सु सुरतान दल, दह चतुरग वर वीर वर।

धनि धार धार धारह धनी, वर मट्टी उप्पारि करि ॥ छं० ७०।<sup>१</sup>

हुसैनखाँ, मीर हुसैन का पुत्र मालूम होता है तथा यह भी सम्भव है कि यह उसका कोई निकट का सम्बंधी हो। ‘रासो समय ९’ में लिखा है कि मीर हुसैन गोरी के भारत पर निरन्तर आक्रमणों का मुख्य कारण था। मीर हुसैन, शाह हुसैन अथवा हुसैनखाँ एक पराक्रमी योद्धा था, जो गोरी का चचेरा भाई था तथा उसी के दरबार में रहता था। चित्ररेखा नामक एक परम सुन्दरी वेश्या थी जिसे सुल्तान बहुत चाहता था। हुसैनखाँ भी चित्ररेखा से प्रेम करने लगा तथा वह भी हुसैन को चाहने लगी। शाह को ज्ञात होने पर उसने हुसैन से बहुत बुरा-भला कहा किन्तु उसका चित्ररेखा के प्रति प्रेम कम न हुआ। अन्त में हुसैनखाँ

१. डॉ० विपिनविहारी त्रिवेदी; रेवातट समय, पृ० ४३-४४।

२. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ४२, सं० २७।

३. वही छं० ७०, सं० २७।

४. देखिए; पृथ्वीराज रासो, ग्यारहवाँ समय, नागरी प्रचारिणी सभा काशी।

को गजनी शहर छोड़ना पड़ा। वह धन आदि के साथ ही चित्ररेखा को भी लाना न भूला तथा पृथ्वीराज चौहान की शरण में आ रहा। गोरी यह सुनकर क्रोध से पागल हो उठा तथा चौहान पर आक्रमण कर दिया। युद्ध में अपार पराक्रम का प्रदर्शन कर हुसैनखाँ वीर गति को प्राप्त हुआ। गोरी युद्ध में बन्दी बना लिया गया। चित्ररेखा मीर हुसैनखाँ की कक्ष में जिन्दा दफन हो गई। पाँच दिन बन्दी रहने के उपरान्त गोरी, हुसैनखाँ के पुत्र गाजी को लेकर और कभी भविष्य में युद्ध न करने का वचन देकर गजनी वापस लौट गया, गाजी हुसैन को गोरी ने गजनी जाकर कैद में डलवा दिया। एक माह पाँच दिन के बाद हुसैनखाँ (गाजी) कैद खाने से भाग निकला तथा पृथ्वीराज के पास पुनः आ गया—

मास एक दिन पंच रहि बद्धि धाइ हुसैन ।

पग लगौ चौहान कै राज प्रसन्निय बन ॥ छं० २ ।<sup>१</sup>

उपयुक्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि मीर हुसैनखाँ के पुत्र का नाम गाजी हुसैन रहा होगा जिसे कवि ने कहीं-कहीं पर केवल गाजी तथा कहीं पर हुसैन लिख दिया है।

रासो सार में एक स्थान पर हुसैनखाँ के सम्बन्ध में लिखा है कि 'दूसरे दिन मीर हुसैन के पुत्र हुसैनखाँ ने मारुफखाँ का मुकाबिला किया और उसे घायल करके गिरा दिया, यह देखकर उजबकखाँ उसके मुकाबिले पर आया। दोनों में बड़ी देर तक बड़ी नोक-झोंक होती रही। अन्त में उजबक ने एक ऐसा हाथ मारा कि जिससे हुसैनखाँ के भी गहरी चोट लगी और उसका घोड़ा कट कर जमीन पर लोट गया। इस युद्ध में शहाबुद्दीन विकट व्यूह से रक्षित तलवार लिए मरने-मारने पर उद्यत था।'<sup>२</sup>

रेवातट समय को पढ़ने से स्पष्ट होता है कि हुसैनखाँ गोरी के पक्ष का कोई सामन्त था क्योंकि उसमें लिखा है कि—'गहि गोरी सुरतान, घात हुसैन उपार्यों।' यदि यह बात सत्य मान ली जाय तब रासोसार का उपयुक्त कथन ठीक नहीं बैठता क्योंकि यदि हुसैन पृथ्वीराज के पक्ष में होता तो सुल्तान को बन्दी बनाने के उपरान्त उसे क्यों 'उपार' देता अथवा नष्ट करता। 'पृथ्वीराज रासो' इसी प्रकार की अनेक विवादास्पद बातों का समूह जाल है; जिसके विषय में निश्चित रूप से लिखना अथवा निश्चित मत व्यक्त करना अत्यन्त कठिन कार्य है।

वैसे एक हुसैनखाँ नामक व्यक्ति तातार मारुफखाँ का भाई भी था। संभव है रेवातट के छन्द संख्या १४८ का हुसैन, मीर हुसैन का लड़का अथवा कोई निकट का सम्बन्धी न होकर तातार मारुफखाँ का भाई ही रहा हो।

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० २, स० १० ।

२. रासोसार, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, रेवातट समय ।

३. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १४८, स० २७ ।

आपूव तम्मि आपैति वार ।

सम लाल धान हस्सन हकार ॥ छं० १९ ।<sup>१</sup>

जो भी हो हुसैन, मीर हुसैन, हुसैनखाँ आदि कई नाम रासो में प्राप्त होते हैं, उनके विषय में निश्चित रूप से लिखना अत्यन्त कठिन है । जब-तक 'पृथ्वीराज रासो' का वैज्ञानिक संस्करण प्रस्तुत नहीं किया जाता तब-तक इस प्रकार के भ्रमों को दूर करना नितान्त दुःसाध्य कार्य है ।

हुस्सैन—वीर हुस्सैन गजनीपति शाह शहाबुद्दीन गोरी का भाई था । ग्रन्थकार इसके पराक्रम की प्रशंसा इस प्रकार करता है—'शाहाबुद्दीन के भाइयों में धनुर्धर मीर हुस्सैन अपनी प्रतिज्ञा का भली-भाँति पालन करने वाला, शब्द भेदी वाण चलाने वाला, सगीतादि विषयों में प्रवीण, लम्बी भुजा वाला, श्रेष्ठ वक्ता, भेद नीति को परखने वाला और जानने वाला, यश धारियों में उच्च स्थान वाला, युद्ध वीर, उदार चित्त और विशेष दान देने वाला, एक विषम तेग का बाँधने वाला था जिससे शहाबुद्दीन भी आशंकित रहता था । ऐसा था हुस्सैन जो सदैव विजित गवं से मतवाला रहता था—

बंधव साहि सहाव , मीर हुस्सैन वानधर ।

निज्ज वान सु प्रमान , वान नीसान वेघसुर ॥

गान तान मुज्जान , बाहु अज्जान वान वर ।

भेव जान परमान , उंच जस थान जुझक्ष भर ॥

उदार चित्त दातार अति , तेग एक वंदे विसव ।

संकंत साहि साहाव तिन , तेज अजै जयमंत ग्रव ॥ छं० २ ।<sup>१</sup>

इतना ही नहीं वीर हुस्सैन की बुद्धि तथा सुआचरण देखकर दरबार के अन्य सब मीर तथा सामन्त उसकी प्रशंसा करते थे । गजनीपति शाहाबुद्दीन गोरी के एक चित्ररेखा नामक वेश्या थी । उसका रूप-रंग तथा अंग-रति जैसी थी वैसी ही विलक्षण वह गान विद्या में भी थी । वह वीणा बजाने में प्रवीण तथा वक्तीसों शुभ लक्षणों से सुशोभित थी । उसकी आयु केवल पन्द्रह वर्ष की थी । वह सत्य प्रिय तथा मधुर भाषिणी थी । वह शाहाबुद्दीन की अत्यन्त प्रिय थी । उस चित्ररेखा नामक वेश्या पर मीर हुस्सैन मुग्ध हो गया तथा दोनों में परस्पर प्रेम, दो देह तथा एक प्राण के समान हो गया—

इहिख बुद्धि आचार , मीर उमराव जंपि जस ।

इयक पात्र साहाव , चित्ररेखा सु नाम तस ॥

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १९, स० ४३ ।

२. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० २, स० ११ ।

रूप रंग रति अंग , गान परिमान विचखन ।  
 छीन जान वज्जान , आनि घत्तीसह अच्छन ।  
 वस पंच घरख घाचा सुवय , सु प्रिय साहि साहाव अति ।  
 आसिक्क तास हुस्सैन हुअ , प्रति परसपर प्रान गति ॥ छं० ३ ।<sup>१</sup>

हुस्सैन तथा चित्ररेखा की प्रेम चर्चा शाहबुद्दीन गोरी को भी ज्ञात हो गई । गोरी सुन कर अत्यन्त कुपित हुआ तथा हुस्सैन से कहला भेजा कि यह स्त्री तेरे लिए निश्चय ही काल रूप है अतः तुझे इससे दूर ही रहना चाहिए किन्तु हुस्सैन ने एक न सुनी । अतः शाह ने हुस्सैन से कहला भेजा कि यदि वह अपने कृत्य से वाज नहीं आता तो मैं मार डालूंगा अन्यथा शीघ्र ही गजनी प्रदेश को छोड़कर चला जा—

सुनिग वेन साहाब तउ , प्रीतिन छंडिय वाम ।  
 कुप्पि कह्यो सुरतान तब , हनौ कि छंडिय गाम ॥ छं० ५ ।<sup>१</sup>

शाह गोरी की आज्ञा सुनकर मीर हुस्सैन ने अपनी सेना को तैयार किया तथा गोरी की मन में शंका रखते हुए भी उसने गजनी निःसंकोच छोड़ दी । अगली प्रहर रात गए उस परम गुणवती वेश्या चित्ररेखा को एवं अपने परिवार को लेकर, अंग रक्षकों तथा साथियों सहित कवच धारण कर शाह के साथ ईर्ष्या की गाँठ मजबूत बाँधकर उसने अपनी मातृभूमि को त्याग, नागौर की ओर प्रस्थान किया—

सुनि सु वत्त हुस्सैन , सेन अप्पन साधारिय ।  
 छंडिय नयर नित्सक , सक म न साह नासारिय ॥  
 निसा जाम इक आदि , लई सो पात्र परम गुन ।  
 तरनि पुत्र परिवार , सज्ज सब साज सु अप्पन ।  
 परिगह सु अप्प अगो करिय , खान ज्वान बंधिय सिलह ।  
 सचर्यौ नैर नागौर रह , तजिय देस निज गंठि गह ॥ छं० ६ ।<sup>१</sup>

मीर हुस्सैन अपने साथियों को साथ लेकर पृथ्वीराज चौहान की ओर गया । र पृथ्वीराज चौहान अपने शिकारियों के साथ खट्टू वन में शिकार खेल रहे थे । इतने सूचना प्राप्त हुई कि मीर हुस्सैन आया है । पृथ्वीराज ने सुन्दरदास खत्री को बुलाकर, हुस्सैन के आने का कारण पूछवाया । सुन्दरदास ने पृथ्वीराज से आकर मीर हुस्सैन से बातें विस्तार से बता दीं तथा यह भी बताया कि वास्तव में हुस्सैन गोरी के विरुद्ध

- 
१. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० ३, स० ११ ।
  २. वही, छं० ५, स० ११ ।
  ३. वही, छं० ६, स० ११ ।



विरोध का कारण स्पष्ट करते हुए सुन्दरदास खत्री ने कहा 'शाहबुद्दीन के पास रहने वाली एक वेश्या जिनका नूर, गुण और गाना परी के समान है, उस वेश्या को हुस्सैन लेकर आपकी शरण चाहता है—

पात्र एक साहाव संग, हूर नूर गुन गान ।

लं आयी हुस्सैन इत, सरन तविक चहुआन ॥ छं० १६ ।'

महाराज पृथ्वीराज ने अपने मंत्रियों से मंत्रणा करने के उपरान्त मीर हुस्सैन को आदर पूर्वक बुला लिया । उसे अपने साथ लेकर नागौर की ओर प्रस्थान किया तथा वहाँ पर एक सभा का आयोजन किया । सभा का अधिकारी जो कायस्थों में श्रेष्ठ धर्मायन था उसने राजाज्ञा से हुस्सैन को दक्षिण पंक्ति में बैठाया—

लिये सख्य प्रियराज पहु, गयी सु पुर नागौर ।

ध्रमाइन काइय धवल, दिसि दच्छिन दिय ठौर ॥ १८ ।'

इतना ही नहीं—विविध प्रकार के उत्तम खाने योग्य श्रेष्ठ व्यंजनों को भेजकर मीर हुस्सैन का भली भाँति सत्कार किया गया तथा उसे वीरों में विशेष उत्तम योद्धा मान कर राजा पृथ्वीराज चौहान ने प्रेम पूर्वक दो घोड़े प्रदान किए—

भोजन भव्य विविध वर, बहु आदर विधि कीत ।

मान महत्तम रक्खि रस, राज उभय हय दीन ॥ छं० १९ ।'

मीर हुस्सैन ने भी दूसरे दिन राजा पृथ्वीराज चौहान को प्रसन्नता पूर्वक पाँच भारी तरकस, प्रत्येक तरकस में तीन सौ तीर तथा खुरासनी कुल पाँच कमाने दी । तदुपरान्त जिसके कपोलों पर भीरे गुन्जार करते थे, और जिसकी मदगंध से दूसरे हाथी भाग जाते थे ऐसा एक मदमस्त श्वेत वर्ण सिंघली जाति का हाथी तथा रत्न जटित साज से सुसज्जित उच्च एराकी कुल के पाँच घोड़े तथा एक बहुमूल्य हीरा और दो लाल नजर किए ।'

शाहबुद्दीन गोरी ने जब यह सूचना प्राप्त की, कि हुस्सैन दिल्लीपति चौहान पृथ्वीराज से जा मिला तो उसने पृथ्वीराज के पास अपना दूत आरवखाँ भेजकर कहलाया कि हुस्सैन मेरा शत्रु है, अतः आप इसे आश्रय न दें तथा अपने दरबार से निकाल दें । किन्तु पृथ्वीराज ने, शरणागत वत्सल्य होने के कारण मीर हुस्सैन को नहीं निकाला । गोरी को आरवखाँ से ज्ञात होने पर उसने पृथ्वीराज पर अपने मंत्रियों से मंत्रणा कर आक्रमण कर दिया—

१. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० १६, स० ११ ।

२. वही, छं० १८, स० ११ ।

३. वही, छं० १९, स० ११ ।

४. वही, छं० २१, स० ११ ।

गयो साहि चहुआन थर, दिए मिलान मिलान ।

गए सु घर नागौर पुर, कही खबरि सुरतान ॥ छं० ३६ ।'

गुप्तचरों ने पृथ्वीराज को नागौर मे आकर सूचना दी कि गोरी ने आक्रमण कर दिया है । अतः पृथ्वीराज ने भी मंत्रियों की मंत्रणा लेकर रण वाद्य बजवा दिए । दोनों सेना आकर आमने-सामने खड़ी हो गई । इतने में हुस्सैन ने पृथ्वीराज से कहा 'हे पृथ्वीराज ! युद्ध की बात सुनो । आज यह सिर आपके लिए है । शहाबुद्दीन की सेना को काट कर नष्ट कर दूंगा । मेरे कारण जो आपने साहस कर शरणागत धर्म का पालन किया है, मैं आज उस उपकार को सार्थक कर दूंगा । तब पृथ्वीराज ने कहा—यह क्या कह रहे हो । मैं सेना को बढ़ा कर शाह को बन्दी बना लूंगा तथा तुम्हारे सिर पर गजनी का छत्र सुशोभित करूंगा—

कहै साह हुस्सैन, सुनौ चहुआन जुझक्ष बत ।

आज सीस तुम कज्ज, सेन साहाब खंडौ खत ॥

मो कज्जै साहस, करिग प्रथिराज सरन धम ।

हौं उजऊ सु अज्ज, करौ राजन्न अकथ क्रम ॥

जपैसु राज पृथ्वीराज तब, कहा अचिज्ज जंपौ तुमह ।

अपौं सु छत्र गज्जन पुरह, सद्धि सेन साहाब गह ॥ छं० ५१ ।'

हुस्सैन ने इतना कहकर पृथ्वीराज को प्रणाम किया तथा अपनी सेना को वाम पार्श्व पर रखा । उसने अपने गले में सजरा ( वंश सूच पत्र ) बाँध लिया तथा रण-स्थल में एक सहस्र सगोत्रीय वीरों को लेकर डट गया—

करि सलाम हुस्सैन, अनी बंधी दिसि बाई ।

सजरा बंधे कंठ, सहस सज्जे थन थाई ॥ छं० ५२ ।'

युद्ध भूमि में हुस्सैन ने अपार साहस का प्रदर्शन किया तथा अन्त में युद्ध करता हुआ वीर गति को प्राप्त हुआ—

सहस पंच रन भीर परि, सत्थिजु खान ततार ।

परे हुसेनह तीन सै, सै दो हिन्दू सार ॥ छं० ५७ ।'

अन्त में शाह गोरी को बन्दी बना लिया गया तथा पृथ्वीराज ने रणक्षेत्र को खोजा

१. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० ३६, स० ११ ।

२. वही, छं० ५१, स० ११ ।

३. वही, छं० ५२, स० ११ ।

४. वही, छं० ५७, स० ११ ।

तथा जीत के रणतूर्य बजाए गए । शरीर पर अपार घाव लगे हुए श्रेष्ठ वीर हुस्सैन को भी उठवाया गया —

खेत दृढि पृथ्वीराज नृप , बजे जीत रनतूर ।

खां हुस्सैन घन घाय घट , उप्पारिग वरसूर ॥ छ० ७० ।<sup>१</sup>

अन्त में हुस्सैन की मृत्यु की सूचना पाकर चित्ररेखा वेश्या भी अपने धर्म का चिन्तन करती हुई हुस्सैन के साथ स्वयं कदम में पड़ गई—

पर्यो हुस्सैन सु पात्र सुनि , चितिय चित्त इमान ।

सज्यो घोर हुस्सैन सत्य , कर्यो प्रवेस अपान ॥ छ० ७१ ।<sup>१</sup>

प्रश्न यह है कि क्या मीर हुस्सैन वास्तव में शाहबुद्दीन का भाई था ? क्या वास्तव में चित्ररेखा वाली घटना सत्य है ? कविराज मोहनसिंह ने हुस्सैन के विषय में लिखा है कि 'हुस्सैन क्या वाला हुस्सेन नासिरुद्दीन हुस्सेन था जो 'तबकाते नासिरी' के लेखानुसार कामी था तथा रासो भी उसके अन्य गुणों के साथ-साथ कामी होने के अवगुण पर प्रकाश डालता है । चित्ररेखा पहले बादशाह की ओर फिर उसकी प्रेमिका बनी थी, जो बादशाह के अरब और सिंध के आक्रमण में उसे सधि रूप में प्राप्त हुई थी ।'

मुसलमान इतिहासकारों ने अपना इतिहास बड़ा ही पक्षपात पूर्ण लिखा है जिससे सत्यता पर प्रकाश पड़ने के स्थान पर भ्रम की ही अधिक सम्भावना रहती है । हुस्सैन के विषय में भी मुसलमान तारीखकार कुछ विशेष सूचना नहीं देते हैं किन्तु यूरोपियन विद्वानों ने उसका पता लगाने में बड़ा परिश्रम किया है । डॉ० होर्नली ने चन्द चित्रित हुस्सैन के विषय में निम्न सूचना दी है—

"195, Hussena Khana ( Husaina khan ) appears to have been a son of the Mir Husain, who as related in Canto 8, was the primary cause of the invasions of India by Shahabuddin Mir Husain or as he is variously called Shah Hussain or Husain Khan, is there said to have been a cousion ( bandhava ) of Shahabuddin, a distinguished warrior, living at the Shah's court at Ghazni. The shah had a beautiful mistress, named Chitrarekha, to the story of whom the 10th Canto is devoted. She was fifteen years old and very skilful in music and was greatly beloved by the shah. Hussain fell in love with her and

१. पृथ्वीराज रासो साहित्य संस्थान उदयपुर, छ० ७०, स० ११ ।

२. वही, छ० ७१, स० ११ ।

३. कविराज मोहनसिंह, पृथ्वीराज रासो, प्रथम खण्ड, साहित्य संस्थान उदयपुर, सम्पादकीय, पृ० १२ ।

she with him. One morning the shah sent for him and upbraided him on his conduct. But Hussain continued to intrigue with chitrarekha and was forced to leave the city. He carried off his family and property and Chitrarekha, and fled to Prithviraj to Nagor. Prithiviraj, after some hesitation wellcomed him and gave him asylum. Hearing of this Shahabuddin was furious and sent messengers to demand chitrarekha from Husain failing in which they were to demand the expulsion of Husain from prithiviraj. Husain refused to send the woman back, and Prithiviraj replied, he could not give up the man who came to him for refuge. Shahabuddin receiving this answer, at once prepared to invade India, Prithiviraj, on his part also prepared for war. In the battle that ensued Hussain distinguished himself greatly, but lost his life. Chamand Rai succeeded in capturing the shah, and thus the battle was decided in favour of prithviraj. After five days the shah was released and allowed to return to Ghazni taking Ghazi Hussain's son with him, and pledging himself no more to make war upon the Hindus. The pledge, it need hardly be said, was not kept by the shah, and the implacable hatred, which these events had created in his mind was never appeared till it was slackened in the blood of Prithviraj and the destruction of his Empire. The capture of the shah, here related is the first of the seven times, he is said to have become the captive of Prithviraj. The next occasion of his capture is referred to in note 187, once more he is made captive as related in the present Canto. Chitrarekha is said to have buried herself with the corpse of husain. If the Husain khan mentioned here is the son of the elder Husain, who was taken to Ghazni by Shahabuddin, he must have made his escape afterwards and returned to Prithviraj. The elder Husain is undoubtedly the same as Nairuddin Hussain, who is repeatedly mentioned in the *Tabguat-i-Nasiri* (Major Raverty's Translation pp 344, 361, 364, 365). He was the older of the two sons of Malik Shahabuddin Muhammad, a younger brother of Sultan Baha-uddin Sam, the father of Sultan Shahabuddin. The elder husain, therefore, was as chand orrec-

tly states, a cousin (bandhava) of the latter. In the Tabagat-it is true, it is said that Nasir uddin Husain usurped the throne of his uncle Alauddin during the latter's temporary captivity at the court of Sultan Sanjar of khorasan, and that he was murdered by his uncle's partisans on the latter's return from captivity ( p 364 ) But firstly, this story is contradicted by all other Muhammadan historians, who pass at once from Alauddin to his son ( see Majar Raverty's foot note pp 364 ) secondly it is more probable that if there was any unurpation at all, it was made by Nasiruddin's father Muhammad, the younger brother of Alauddin. The three brothers Saifuddin Suri, Bahauddin sam and Alauddin Hussain, succeeded each other on the throne of Ghor, it is natural therefore, that during Alauddin's captivity, the fourth brother Shihabuddin Muhammad should have occupied or attempted to occupy the throne. The writer of the Tahaj-uat must have confused father and son, as he has done also on other occasions (e. g. with regard to Ziya uddin Muhammad) Thirdly the description of Nasir-uddin Hussain's character. "he had a great passion for women and virgins and had taken a humber of the hand maids and slave girls of the Sultn's harem." ( Tabagat p. 364 ), agree with chand's story about his intrigue with Chitrarekha and has evidently a confused recollection of it. There can, therefore, be little doubt that chand gives snbstantially the true account of Hussain's fortunes. It may be added that both the Tabagat and other Muhammadan histories give a rather confused relation of an ancesstor of this Husain ( and of the Ghorī royal family generally ) who also bore the name of Husain or Hassan, having fled to India, and having lived some time at Delhi, ( see Tabaguat pp. 322, 323, 332 ). There is perhapes in this a confused recollection of the fight of Hussain to Prithiraj related by chand."

---

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, नवें समय की उपसंहारणी टिप्पणी, पृ ४२३-४२४ ।

उपयुक्त विवेचन से इतना अवश्य स्पष्ट हो जाता है कि मीर हुस्सैन शाहबुद्दीन गोरी का सगा भाई नहीं ही सही किन्तु बान्धव अवश्य था। रासोकार ने भी मीर हुस्सैन को 'बान्धव' ही लिखा है। तबकाते नासरी के अनुसार हुस्सैन कामी था अतः चित्ररेखा वाली घटना भी सत्य के अधिक निकट प्रतीत होती है।

---

## काल्पनिक-पात्र

अधिक से अधिक ऐतिहासिक एवं प्रामाणिक समझे जाने वाले महाकाव्यों में भी कथाओं को अभीष्ट दिशा में मोड़ने के लिए तथा कथा में रोचकता एवं चमत्कार उत्पन्न करने की दृष्टि से कवि अथवा ग्रन्थकार नाना प्रकार की कल्पना करके नये-नये पात्रों को प्रस्तुत करता है, किन्तु अनेकानेक विद्वान् ठीक-ठीक न समझने के कारण ऐसी काल्पनिक घटनाओं में भी ऐतिहासिक तथ्य खोजने का असफल प्रयत्न करते हैं। परवर्ती काल के ऐतिहासिक काव्यों का अवलोकन करने से स्पष्ट हो जाता है कि उनमें ऐतिहासिक तथ्य तो विस्कुल गौण हो गए तथा काल्पनिक तथ्य ही प्रमुख हो उठे हैं। 'पृथ्वीराज रासो' तथा 'पद्मावत' इसी युग की रचनाएँ हैं तथा अन्य ऐतिहासिक कहे जाने वाले काव्यों की भाँति इनमें भी कवि ने कल्पना को योग देकर कथा को रोचक बनाने के लिए नाना प्रकार की निजन्धरी कथाओं को प्रस्तुत किया है।

महाकवि चन्द वरदायी का 'पृथ्वीराज रासो' युद्ध और प्रेम वद्ध कथा काव्य है, जिसकी कथा वस्तु इतिहास तथा कल्पना के योग से प्रस्तुत की गई है। 'पृथ्वीराज रासो' में कुल ६९ प्रस्ताव अथवा समय हैं उनमें से दस का नाम कवि ने 'कथा' लिखा है, यथा—दिल्ली-किल्ली कथा, नाहरराय कथा, मेवाती मुगल कथा, हुस्सैन कथा, इंछिछनी व्याह कथा, माघो-भाट कथा, होली कथा, दीपमालिका कथा, धन कथा तथा वरुण कथा इन कथाओं को पढ़ने के उपरान्त निश्चित हो जाता है कि कवि ने इनका वर्णन केवल कथा में प्रवाह लाने के लिए किया है, इनमें यदि ऐतिहासिक तथ्यों का अभाव हो तो आश्चर्य की कौन सी बात है। इन्हीं कथाओं के अन्तर्गत कथानक रुद्धियों एवं निजन्धरी कथाओं के विषय में भी यहीं उल्लेख कर देना आवश्यक है। पृथ्वीराज रासो में प्रायः दो प्रकार की कथानक रुद्धियों का प्रयोग किया गया

है, एक तो वह जो प्रायः लोकाश्रित कथानक रुढ़ियाँ हैं तथा दूसरी वह जो कवि कल्पना प्रसूत रुढ़ियाँ हैं।

## लिंग परिवर्तन

कहानियों में अथवा काव्यों में लिंग परिवर्तन वाली घटना का अनेक स्थानों पर उपयोग किया गया है। पृथ्वीराज रासो भी इसका अपवाद नहीं हैं। कन्नौज में संयोगिता हरण सम्बन्धी युद्ध में पृथ्वीराज ने कवि चन्द से वीर आत्ताताई की उत्पत्ति कथा के विषय में पूछा इस पर कवि ने जिस कथा का वर्णन किया उसमें इसी अभिप्राय का उपयोग किया गया है।<sup>१</sup>

भारतीय साहित्य में लिंग परिवर्तन सम्बन्धी प्राचीनतम अभिप्राय हमें महाभारत में प्राप्त होता है। शिखंडी-कथा तथा अत्ताताई की कथा में मूलतः कोई विशेष अन्तर नहीं है।

भारत के विभिन्न भागों में इस कहानी के विभिन्न रूपान्तर प्राप्त होते हैं। गुल चकावली, पंचतन्त्र, कथा सरितसागर आदि ग्रन्थों में भी इस प्रकार की कथा का अवलोकन किया जा सकता है।

## संकेतिक भाषा

अपने मनोभावों को प्रदर्शित करने के लिए विभिन्न वस्तुओं की सहायता से संकेत आदि करने की परम्परा भारतीय साहित्य में अत्यन्त प्राचीन है। इसका उपयोग भारत में ही नहीं अपितु विदेशों में भी किया जाता है, अफ्रीका के कुछ भागों में भी संकेतिक भाषा का प्रयोग किया जाता है। ऐसी भाषा का उपयोग प्रायः प्रेम-संवाद भेजने के लिए प्रयुक्त किया जाता है क्योंकि प्रेम-पत्र भेजने में नाना प्रकार के खतरों की सम्भावना रहती है।

यही कारण है कि भारतीय साहित्य में विशेष रूप से कथा आदि में संकेतिक भाषा का प्रयोग खूब किया गया है। पृथ्वीराज रासो में भी ऐसे प्रसंग उपलब्ध हो जाते हैं। कवि चन्द वरदायी को पृथ्वीराज ने कठोर संदेश तथा भड़काने के चिह्न, चोली तथा लाल पगड़ी लेकर चालुक्य राज भीमदेव के पास भेजा ही था किन्तु चन्द ने अपनी बुद्धि से उसमें समक-गिचं लगा कर अपने साथ गले में जाली और नसेनी डाल ली तथा एक हाथ में कुदाली और दूसरे में अंकुश तथा त्रिशूल ले लिया—

चल्यो चन्द गुज्जरह , गरं जारी जंजारह ॥

नीसरनी कुदाल , दीप अकुस आधारह ॥

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १९७०-२००७, स० ६१।



फरन सूल संग्रह, गयी चालुक दरवारह ॥

इह अचन जन देपि, मिल्यो पेपन संसारह ॥ छं० १०२ ।

किन्तु भीमदेव को कवि का यह आडंबर वेश एवं रहस्य समझ में नहीं आया । अतः वह कवि से इस अटपटे वेश का अर्थ समझाने के लिए कहता है । तब चंद प्रत्येक वस्तु का अर्थ बतलाता हुआ कहता है—पृथ्वीराज चौहान का कथन है कि यदि भीमदेव प्राण रक्षा के लिए जन में छिपेगा तो उसे जाल से पकड़ कर खींच लाऊंगा, यदि वह आकाश में जावेगा तो नसेनी लगाकर पकड़ लाऊंगा, यदि पाताल में छिप जावेगा तो कुदाल से खोद निकालूंगा, यदि कहीं अंधेरे में छिपेगा तो दीपक लेकर खोज लूंगा, अंकुश से उसे अपने वश में करके त्रिशूल से मार डालूंगा—

एक जाल सग्रहो, जाय जल भीतर पड़्यो ।

इन नीसरनी ग्रहों, जाय आकासह चढ़्यो ॥

इन कुदाल पनी, जाय पायाल पनठ्यो ।

इन दीपक सग्रहो, जाय अंधारे नह्यो ॥

इन अकुस असि वसि करी इन त्रिसूल हनि हनि सिरों ।

जग मग जोति जग उत्पर, तो डर प्रयम नरिदरों ॥ छं० १०३ ।

इस प्रकार के अभिप्रायों का प्रयोग प्रायः प्रेम कथाओं में अधिक देखने को मिलता है । एक नायिका कालिख लगे हाथों से दूती को पीटती है तथा उसकी पीठ पर पड़ी पाँवों उंगलियों की छाप दिखा कर नायक को कृष्ण पंचमी की रात्रि में मिलने का संकेत करती है—

स्व दह्यो कृष्ण पंचम्यां सा संकेत मदाव ध्रुवम् ।

पंचागुलिर्मयोहस्तः पृष्टेऽस्या यददीयत ॥ परिशिष्ट पर्व ॥ ४८६ ॥

## पूर्व जन्म की स्मृति

‘पृथ्वीराज रासो’ के चन्द द्वारिका गमन नामक ४२वें समय में पूर्व जन्म की स्मृति की कथा का उल्लेख प्राप्त होता है । जिस समय मोरी राजा ने गढ़ के निकट गोमुख कुण्ड एवं आनन्द उपवन बनवाना प्रारम्भ किया, उस समय खुदाई करने पर एक गुफा में एक श्रृष्टि दृष्टिगोचर हुए, जिनके सम्मुख एक सिंहनी उनके शिष्य को भक्षण करने जा रही थी । वहीं कवि ने इन श्रृष्टि की जन्म कथा का वर्णन इस प्रकार किया है—

‘यह श्रृष्टि अयोध्या का कीर्ति धवल नामक राजा था तथा वह सिंहनी उसकी पूर्व जन्म

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १०२, स० ४४ ।

२. वही, छं० १०३, स० ४४ ।

की रानी पी। राजा को एक गर्भवती हरिणी को मारने के कारण उन्हें वैराग्य उत्पन्न हो गया। रानी को इस सूचना से अपार आनन्द हुआ तथा आनन्दातिरेक के कारण उसे मार्ग तक दिखाई न दिया तथा वह गवाक्ष मार्ग से ही मिलने के लिये दीड़ी, किन्तु पृथ्वी पर गिरकर मर गई। रानी ने सिंहनी का जन्म ग्रहण किया तथा संयोग से उसी स्थान पर जा पहुँची जहाँ उसका पति कीर्तिधवल अपने पुत्र के साथ तपस्या कर रहा था। क्षुधा पीड़ित सिंहनी ने पुत्र पर आक्रमण किया किन्तु ज्योंही उसके मांस को खाना चाहा उसे पूर्व जन्म का स्मरण हो आया। वह उसी अवस्था में वहाँ खड़ी रही। बिना भोजन-पानी के एक मास तक खड़ी बसू बहाती रही, अन्त में उसने प्राण त्याग दिए।<sup>१</sup>

इस प्रकार की कल्पना का उपयोग विभिन्न स्थानों पर किया गया है। प्रायः इस प्रकार की कल्पना, कथा विस्तार में अत्यन्त सहायक होती है तथा हिन्दू धर्म के अनुसार पूर्व जन्म के प्रसंग को बल भी मिलता है।

### फलादि द्वारा सन्तानोत्पत्ति :

सन्तान हीनता का प्रसंग कथाओं में अक्सर देखने को मिलता है। कहानी को विकास देने एवं चमत्कार उत्पन्न करने के लिए ग्रन्थकार अक्सर इस का उपयोग करता है। प्रायः सन्तानहीन पुरुष, तप, किसी देवी-देवता आदि से वरदान तथा किसी ऋषि से फल प्राप्ति से सन्तान प्राप्त करते हैं। चन्द्र वरदायी ने भी रासो में इस अभिप्राय का उपयोग किया है—‘अनंगपाल की कन्या को ढुंढा राक्षस द्वारा एक फल प्राप्त हुआ था जिसे तेरह भागों में विभाजित करके अपनी महलियों को बाँटने पर तेरह सामन्तों का एक साथ जन्म हुआ था—

ढुंढा नाम दानव उत्तंग दियो फल अंब विसालं ।

बदि तीन नूपराज आय फिर गेह सुवालं ॥

सत्त नाग एह अग्न बटि दिय भ्रत समानं ।

तिनह सूर सामंत किति रयपन चहुआन ॥

रजमेल चन्द फल अमिय प्रयु सवर साहि मोपन सुगह ।

इकदस समंत पचंह समं नए थान पचम सु पहु ॥ छं० ३७ ।<sup>१</sup>

### अप्राकृत जन्म :

देवी शक्ति की सहायता एवं उनसे प्राप्त अलौकिक गुण वाले फलों से सन्तानोत्पत्ति के अतिरिक्त चमत्कारिक जन्म सम्बन्धी भी अनेक कथाएं भारतीय कथा साहित्य में प्रचलित

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ६०८-१५, स० ४२ तथा पृथ्वीराज रासो मे कथानक रुढ़ियाँ; पृ० ९१ ।
२. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ३७, स० १ ।

है। कभी किसी स्त्री के मांस-खण्ड उत्पन्न होता है तो कभी किसी घड़े से सन्तान पैदा होती है। रासो में भी इसी प्रकार की एक कथा का उपयोग ग्रन्थकार ने किया है। पृथ्वी-राज के पूर्वज माणिकराव की रानी के गर्भ से बालक के स्थान पर अण्डजाकार अस्थि-खण्ड ने जन्म लिया—

तक्षक पुर चाहुल ग्रह पुत्तिय । मानिक राव पारिनि गज गत्तिय ॥

तिहि रानी पूरव भ्रम गत्तिय । इंडज आकृति हड्ड प्रसूतिय ॥ छं० १९६ ।

राजा ने कृपित होकर उस अस्थि खंड को जंगल में फेंकने की आज्ञा दी, किन्तु रानी ने यह स्वीकार नहीं किया। इस पर राजा ने उसे महल से निकाल दिया। कालान्तर में उसी अस्थि खंड का एक राजा की पुत्री से विवाह हो गया—

पानिग्रहन कर लियो कुअर हड्डा कमधज्जनि ।

दसहू दिसि उडि बत्त सुने अचरज पति गज्जनि ॥ छं० १९९ ।

कालान्तर में जब गजनी के शाह ने माणिकराव पर आक्रमण किया, तब उसी अस्थि-खण्ड में से साक्षात् नरसिंह के समान सुन्दर राजकुमार निकला—

वज्यो सिन्धु औ राग सारे करारं । तवे हड्ड फट्यो प्रगट्यो कुमारं ॥

प्रचण्डं भुजा दण्ड उत्तंग छत्ती । नरं नारसिंघ अवतारमत्ती ॥ छं० २०४ ।

## राजा का दैवी चुनाव :

दैवी शक्तियों द्वारा राजा का चुनाव होने की प्रथा का भी उल्लेख भारतीय साहित्य में खुल कर किया गया है। गजनीपति शाह गोरी का चुनाव भी बिल्कुल दैवी तो नहीं किन्तु कुछ मिलता-जुलता अवश्य है—‘असुरों के राज्य पर शाह जलालुद्दीन सिंहासनासीन हुआ जो सीमातीत रूप से कामुकता में पड़ा हुआ था। पाँच सौ दस उसके हरम थे परन्तु दुर्भाग्यवश वह एक भी सन्तान का मुख न देख सका। निराश हो शाह पीर निजाम की कृपा का आकांक्षी हो उनकी सेवा में निमग्न रहने लगा। अपने प्रति शाह जलालुद्दीन की अनन्य सलग्नता का अनुभव कर, प्रसन्न हो उन्होंने शाह को श्रेष्ठ प्रतापी पुत्र की प्राप्ति का आशीर्वाद दिया जो चतुर्दिक् असुर साम्राज्य को फैला कर हिन्दुओं को भी विजित कर दिल्ली साम्राज्य पर सूर्य की भाँति तपने वाला होगा।

चिर अभिलाषित फल की प्राप्ति कर शाह घर लौट तो आया किन्तु उसे पुनः चिन्ता ने घेर लिया। कहीं यह प्रतापी राजकुमार मुझे ही काल को समर्पित कर, राज्य का अधिकारी न बने, तत्काल ही एक वेगम के गर्भ धारण करने की सूचना पा शाह ने माया ठोक ली।

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १९६, स० ५७।

२. वही, छं० १९९, स० ५७।

३. वही, छं० २०४, स० ५७।

तथा क्रोधावेश में वेगम को निवासित कर दिया। उक्त घटना को केवल पाँच वर्ष ही व्यतीत हुए थे कि शाह का देहान्त हो गया। वजीरगणों को चिन्ता हुई कि सिंहासन का अधिकारी कौन हो ? इसका समाधान शेख द्वारा हुआ, जिन्होंने गौर में रहने वाले एक सुन्दर तेजस्वी बालक को सिंहासन देने का आदेश दिया तथा समस्त मंत्रियों ने उसे ही राज्य का उत्तराधिकारी बनाने का निश्चय किया—

वरप पंच अनि ऊपर बीत । हुआ साह सुरतान सुअत ।  
सवै पान मिलि मंत्र विचार । कवन सोस अव छत्र सुधार ॥  
सेप एक मधि गोर निवासी । तिहि अद्भुत रस दिखि प्रकासी ।  
आपिय आई जहाँ मिलि पान । कुदरति कथा एक परमान ॥ छं० ३२४ ।'

इसी प्रकार लोकाश्रित कथानक रुढ़ियों के अन्तर्गत मुनि का शाप, प्राकृत दृश्य द्वारा लक्ष्मी प्राप्ति का शकुन, सर्प आदि द्वारा गड़े घन की रक्षा, वरदानादि द्वारा निर्धन का धनी होना, भविष्य सूचक स्वप्न, स्वप्न में अलौकिक व्यक्तियों द्वारा भविष्य सूचना, प्रेम व्यापार में दूती अथवा योगिनियों की सहायता, मन्त्र-तन्त्र का युद्ध, मृत व्यक्ति का पुनः जीवित होना, आकाशवाणी आदि बातें हैं, जिनका कवि चन्द वरदायी ने कथा विकास के लिए पूर्ण स्वतन्त्रता पूर्वक उपयोग किया है।

पृथ्वीराज रासो की कल्पित कथा-सूत्रों का भारतीय साहित्य में पहले से ही प्रयोग होता चला आया है। इसे ठीक से समझने के लिए हम यहाँ पर उनका विस्तृत विवेचन न करके संक्षेप में गिना भर देंगे। जैसे शुक सम्बंधी कथा सूत्र, नायिका, अप्सरा का अवतार, रूप-गुण श्रवण जन्य आकर्षण, नायक-नायिका का चित्र देखकर एक दूसरे पर आसक्त होना, स्वप्न में भावी प्रिय या प्रिया का दर्शन, प्रिय प्राप्ति के लिए शिव-पार्वती पूजन, देव द्वारा पूर्व निर्धारित विवाह सम्बंध, मंदिर में पूजा के लिए आई कन्या का अपहरण, प्राण देने की धमकी, वारह भासे के माध्यम से विरह निवेदन आदि। यह ऐसे कथा सूत्र हैं जिनका प्रयोग कवि ने कथा विकास की दृष्टि में रखते हुए किया है। यदि कोई इनसे सम्बंधित पात्रों के विषय में ऐतिहासिक तथ्य खोजना प्रारम्भ करे तो उसे निराशा के अतिरिक्त और क्या प्राप्त हो सकता है। उपर्युक्त कथा सूत्र तो कथा-विकास के निमित्त मात्र हैं उनसे इतिहास का कोई सम्बंध नहीं है। अन्य कारणों के साथ एक यह भी कारण है कि 'पृथ्वीराज रासो' अप्रामाणिक एवं अनेतिहासिक ग्रन्थ लगता है। वास्तव में रासो एक ग्रन्थ है, ( जहाँ कल्पना को पर्याप्त स्थान है ), इतिहास नहीं। कल्पना के अभाव में ग्रन्थ के सर्जन की कल्पना भी नहीं की जा सकती। मत को पुष्ट करने के लिए य एक दो प्रमाण देना आवश्यक है। उदाहरण के लिए वावन वीरों की कथा ली जा

है। 'अष्टक वीर वरदान समय ६' में लिखा है कि महाराज पृथ्वीराज एक वन में अश्वेद हेतु गए थे, चन्द भी उनके साथ था, मार्ग में अपने साथियों से भटक कर चन्द एक यती के सामने जा पहुंचा और यती को प्रसन्न करके, उसने उनके द्वारा दीक्षित हो वावन गणों को वशीभूत करने वाला मंत्र सिद्ध कर लिया—

प्रसन्न चन्द सम जतिय , दिन्न इक मंत्र इष्ट जिय ।

इह आराधत नट्ट , प्रगठ पंचास वीर जिय ॥

करि साधन इह साथ , व्याधि नासत फल धारिय ।

गुरु उपदेसह पाइ , सकल आधीन अकारिय ॥

घरि कान मंत्र लीनो कविय , परसि पाइ लगै चलिथ ।

करवे सु परिष्णा मंत्र की , रचि आसन अगै वलिय ॥ छं० २६ ।<sup>१</sup>

चन्द के मंत्र से प्रेरित वीरगण तत्काल वहीं प्रकट हो गये, उनके दर्शन से चन्द को अत्यन्त प्रसन्नता प्राप्त हुई। उसने उनकी पूजा की, वीरों ने पूछा कि हमें क्यों बुलाया है? चन्द ने उत्तर दिया कि महाराज पृथ्वीराज की सहायतार्थ मैंने आपका आह्वान किया है। गणों ने कहा अस्तु, संकट काल में हमारा स्मरण करना, तथा भैरव ने एक गण को आज्ञा दी, कि सब वीरों को चन्द की पहचानवा दी, फिर प्रत्येक का नाम गुण आदि सुनकर कवि ने प्रणाम करके उन्हें विदा किया।<sup>१</sup> कालान्तर में यही वावन वीर पृथ्वीराज चौहान की संकट में सहायता करते हुए दिखाई देते हैं। क्या इन वीरों को ऐतिहासिक पात्र माना जा सकता है? कदापि नहीं। इनमें ऐतिहासिक तत्व का खोजना समय नष्ट करने के अतिरिक्त और क्या है। निश्चय ही यह सब कवि कल्पना प्रसूत है। इसी प्रकार से यहाँ पर दो चार उदाहरण और देना अनुचित न होगा। संयोगिता अपहरण सम्बंधी संग्राम में महाराज जयचन्द की ओर से शंख ध्वनी, योगियों को समर भूमि में अग्रसर होता देखकर पृथ्वीराज ने चन्द से पूछा कि ऋषि, स्वरूप शंख ध्वनि करने वाले, अत्यन्त पराक्रमी माया से परे ये वीरागी जयचन्द की सेवा में क्यों रहते हैं—

रिपि सरूप संपह धुनिय , अति बल पिथ्य कहंब ।

वीरागी माया रहित , किमि सेव जयचन्द ॥ छं० १७९१ ।<sup>२</sup>

इस पर चन्द ने उत्तर दिया कि—'इन सबको ऋषियों का अवतार जानो, जिन्हें नारद ने प्रबोध किया था, इनकी कथा विस्तार से सुनाता हूँ।'<sup>३</sup> पूर्व समय में तैलंग प्रमार नामक

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० २६, स० ६ ।

२. वही, छं० २७-९३ स० ६ ।

३. वही, छं० १७९१, स० ६१ ।

४. वही, छं० १७९२, स० ६१ ।

एक राजा था, अवस्था पाकर उसने वनवास ग्रहण किया और अपनी भूमि क्षत्रियों को बाँट दी ।<sup>१</sup> यह वटवारा निम्न प्रकार से हुआ—

दिय दिल्ली तोवर न , देई चावड सु पट्टन ।

दय संभरि चौहान , देई कनवज कमधजन ॥

परिहारन भुर देस , सिन्धु वारडा सु चाल ।

दे सोरठ जह्वन , देई दच्छिन जावाल ॥

चरन कच्छ डोनी करग , भट्टा पूरध मावही ।

वन गये नृपति वटं धरा , गिरिजा पति माला गही ॥ छं० १७९५ ।<sup>१</sup>

राजा के एक हजार सुभटों ने भी वनवास ले लिया और ऋषि होकर वन में तपस्या करते हुए अजपा जाप में अपना चित्त स्थिर किया ।<sup>१</sup> हवन आदि कार्यों के लिए उन्होंने इन्द्र से कामधेनु मांग ली थी । परन्तु उस वन में दैत्यों का महान उपद्रव था । यहाँ तक कि एक दिन उन्होंने गाय को बछड़े समेत भक्षण कर डाला ।<sup>२</sup> ऋषियों को उस स्थान पर दो सौ वर्ष बीत चुके थे जब कि उनकी गाय खाई गई, इससे वे अति क्षुब्ध हो उठे और उन्होंने अग्नि में प्रवेश करने का संकल्प किया ।<sup>३</sup> उस समय वहाँ नारद मुनि आ उपस्थित हुए और उनको उपदेश किया कि ऋषियों, बीस वर्षों से तुम लोग अजपा जाप में लगे हो परन्तु तुम क्षत्रिय हो इस लिए पड़ग तीर्थ का साधन करो दीर्घ काल तक तपस्या करने के उपरान्त भी यदि कहीं इन्द्रिय विकार हो गया तो सारा कर्म नष्ट हुआ जानो । परन्तु जो क्षत्रिय धार तीर्थ का आदर करते हैं उनकी सुख पूर्वक तुरन्त मुक्ति हो जाती है । धार तीर्थ ही क्षत्रिय का प्रधान धर्म है, उसके लिए पृथ्वी पर अन्य सबको भ्रम मात्र समझो, इस समय पृथ्वी पर उग्र रूप से तपने वाला एक राजा जयचन्द है, वह मानो इन्द्र का अवतार है और पृथ्वी का भार उतारने आया है, उसका एक शत्रु केवल चौहान है अन्यथा सारे राजे उसके सेवक हैं । संभरेश दिल्ली का राजा है, सो सामन्त उसकी सेवा में रहते हैं । वही तुम्हारे सम्मुख रण में खड़ा होगा, तुम सब लोग जयचन्द की सेवा में रहो । वह एक लाख गह्वों का अधिपति है और अस्सी लाख घोड़े उसके पास हैं, इस उपदेश से उनकी सुख और शान्ति की प्राप्ति हुई ।<sup>४</sup> तदुपरान्त नारद राजा जयचन्द के पास गये और योगियों की कथा कह कर उन्हें अपने

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १७९३-९४, स० ६१ ।

२. वही, छं० १७९५, स० ६१ ।

३. वही, छं० १७९६, स० ६१ ।

४. वही, छं० १७९७-९८, स० ६१ ।

५. वही, छं० १७९९, स० ६१ ।

६. वही, छं० १८००-१०, स० ६१ ।

वहाँ स्थान देने के लिए कहा जिसे राजा ने स्वीकार कर लिया ।' ये योगी अपनी जटाओं में मोंर पंख बांधते थे, शंख और चक्र इन्होंने धारण कर रखे थे, मोहादि विकारों से ये दूर थे ।' इन एक हजार पराक्रमी शूरमाओं को जयचन्द ने अपने यहाँ पर ठहराया ।' राजा इनका बड़ा सत्कार करता है और अपने बड़े भाइयों के समान समझता है तथा ये भी राजा की रक्षा करते हैं, आज इनसे युद्ध में योगदान देने के लिए कहा गया है—

अति वर नृप आदर करें, जेठा बंधव जोग ।

तिनहि राज रप्यह रहे, तें छुटि अज जुघ जोग ॥ छं० १८२९ ।'

अब कोई यदि शंख धुनि साधुओं की ऐतिहासिकता के विषय में समय खराब करे तो क्या किया जावे, अथवा इस प्रकार की असंगत बातें देखकर कोई 'रासो' को अनैतिहासिक घोषित कर दे उसको भी क्या कहा जा सकता है । यह सब तो पृथ्वीराज की उत्कृष्टता एवं पराक्रम तथा कथा को प्रभावी एवं ओजपूर्ण बनाने के लिए ही लिखा गया है । इसी प्रकार से रासो वर्णित 'होलिका कथा स० २२' तथा 'दीपमाल का कथा स० २३' के विषय में भी कहा जा सकता है ।

वस्तुतः महाकवि चन्द वरदायी ने रासो में कथा सूत्रों एवं नाना प्रकार की अन्य काल्पनिक कथाओं का समावेश रोचकता लाने के लिए ही किया है । यही बात उन पात्रों के विषय में भी कही जा सकती है, जिन्हें कवि को काल्पनिक पात्रों के रूप में वहाँ उत्पन्न करना पड़ा है जहाँ कथा में रोचकता एवं प्रभाव लाने की आवश्यकता समझी गई है । अतः ग्रन्थकार द्वारा प्रसूत पात्र कथा विकास में सहायक ही हुए हैं वाचक नहीं ।

अत्ताताई—पृथ्वीराज रासो के 'कनवज्ज सम्यो ६१' के अन्तर्गत अत्ताताई की जन्म कथा का उल्लेख कवि चन्द वरदाई ने दिल्लीपति चौहान पृथ्वीराज की जिज्ञासा शान्त करते हुए किया है । जब पृथ्वीराज चौहान कान्यकुब्जेश्वर की कन्या संयोगिता को घोड़े पर बैठा कर दिल्ली की ओर अग्रसर हो रहे थे, उस समय वीर अत्ताताई विषम युद्ध करके दोनों दलों को चकित कर रहा था । अन्त में इसी संग्राम में वह पराक्रमी योद्धा वीरगति को प्राप्त हुआ । इसी अवसर पर पृथ्वीराज ने कवि चन्द से अनुपम योद्धा तथा रण के स्वामी अत्ताताई की उत्पत्ति कथा सुनाने के लिए आग्रह किया—

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १८१३-२६, स० ६१ ।

२. वही, छं० १८११-१२, स० ६१ ।

३. वही, छं० १८२७-२८, स० ६१ तथा डॉ० विपिनविहारी त्रिवेदी, चन्द वरदायी और उनका काव्य, पृ० ११६-१७ ।

४. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १८२९, स० ६१ ।

अत्ताताई अभंग सर । सब पहु प्राक्रम पेछि ॥  
 लगी टगटगी दुअ दलनि । निरूप कवि पुच्छि बिसेव ॥ छं० १९७० ।  
 अतुलित बल अतुलित तनह । अतुलित जुद्ध सु चिंद ।  
 अतुलित रन संग्राम किय । कहि उत्तपति कवि चन्द ॥ छं० १९७१ ।

कवि चन्द ने महाराज की जिज्ञासा शान्त हेतु उत्तर दिया—‘आशापुर राज्य मंडल के तोमरों का प्रधान चौरंगी चौहान था, उसके घर में अपार धन तथा पतिव्रता स्त्री थी, जिसके गम से उत्पन्न पुत्री की ख्याति संसार में पुत्र रूप में हुई । उस कन्या का नाम अत्ताताई रखा गया, तथा पुत्र की भांति सब सस्कार करके, दुजों को अपार धन दान दिया गया, तथा (दिल्लीपति) अनंगपाल तोमर के मंत्री के पुत्र रूप में वह इस पृथ्वी पर प्रसिद्ध हुई—

चौरंगी चहुआन । राज मंडल आसापुर ।  
 तूअर घर परधान । सु वर जान वृतासुर ॥  
 घर असंघ घर धरिय । एक नारिय सुचि धाइय ॥  
 तिहि उर पुत्री जाइ । पुत्र करि कही बधाइय ॥  
 करि ससकार दुज दान दिय । अत्ताताइय कुल कुंअर ।  
 नृपि अनंगपाल दीषान महि । पुत्र नाम अनुसरइ सर ॥ छं० १९७२ ।

उस अत्यन्त रूपवान मंत्री-कुमार को देखकर राजा उसका उठकर आदर करते थे, उसके कारण चौरंगी चौहान की कीर्ति चतुर्थ दिशाओं में व्याप्त हो गई, बारह वर्ष की आयु तक उसकी माता उसका रूप छिपाये रही तथा राज्य कार्य में चौरंगी चौहान के पुत्र रूप में उल्लेख होता रहा, मनुष्य की तो बात क्या, सुर गण भी उसके रूप पर मोहित थे, उसी समय उसकी माता ने हरिद्वार जाकर शिव आराधना करने का विचार किया—

अति तन रूप सरूप । भूप आदर कर उठुहि ।  
 चौरंगी चहुआन । नाम कीरति कर पटुहि ॥  
 द्वादस घरस स पुज्ज । मात गोचर करि रख्यो ॥  
 राज काज चहुआन । पुत्र कहि कहि करि भण्यो ॥  
 हरद्वार जाइ बुल्यो सु हर । सेव जननि सहर करिय ॥  
 नर कहै रवन रबनिय पुरुष । रूप देयि सुर उद्वरिय ॥ छं० १९७३ ।

कन्या की किशोरावस्था आते ही उसके स्त्रियोचित अंग प्रगट होकर दिखाई देने लगे तथा उसकी माता अर्ध रात्रि में कन्या को लेकर शिव स्तुति हेतु चल पड़ी—

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १९७०-७१, स० ६१ ।
२. वही, छं० १९७२, स० ६१ ।
३. वही, छं० १९७३, स० ६१ ।



जब त्रिय अनं प्रगट् हुअ । तब किय अंग दुराइ ॥

अद्व रयन लं अनुसरिय । सिव सेवन सत माइ ॥ छं० १९७४ ।<sup>१</sup>

भगवान् आशुतोष जकर की आराधना करते हुए उस कन्या ने अपनी समस्त शंकाओं को त्याग दिया, निराहार बन करते हुए उसने शंकर की उग्र आराधना प्रारम्भ की—

ईस जप्प उर दिन धरति । तजि संका सुर वार ॥

सो वाली लघन किये । पानी पन्न अघार ॥ छं० १९८४ ।<sup>१</sup>

जिव की उग्र आराधना करते हुए, उस कन्या को निराहार छह मास व्यतीत हो गये । उसके मन को निष्कपट देखकर एक रात्रि में तृतीय प्रहर के स्वप्न में शिव प्रकट हुए तथा उसकी तपस्या से प्रमत्त होकर वर मांगने के लिए कहा—

षट् मास गये दिन अन्न पान । दिष्यौ सु चित निह कपट मान ॥ छं० १९८२ ।

जगि जगि निसा तज्जिय त्रिजाम । संपनत ईस दिष्यौ प्रमान ॥ छं० १९८३ ।

एक दिवस सिव रीक्षि कै । पूछन छेहन लीन ।

सुनि सुनि वाल विलास तौ । जो मंग सोइ दीन ॥ १९८६ ।<sup>१</sup>

कन्या ने कहा—‘मेरे पिता दिल्लीपति अनंगपाल के प्रधान मंत्री हैं, मुझे पुत्र-पुत्र कह कर अर्थात् पुत्र रूप में प्रसिद्ध कर सकट में पड़ गये हैं । हे सर्वज्ञ त्रिलोकी नाथ आप ही मेरे पिता का दोष मिटाइये आपको छोड़ कर अन्य कोई भी इस कार्य में समर्थ नहीं है—

मुझ पित जुगनिपुर धनिय । अनंगपाल परधान ।

पुत्र पुत्र कहि अनुसरिय । जानि बितडुर मानि ॥ छं० १९८७ ।

विदित सकल सुनि चपल । सतीअ लपट विन कपटे ॥

नगत उधव अरुविद । सीस चदह दिपि क्षपटे ॥

गीत राग रस सार । सुमर मासत तन सोमित ॥

काम दहन जम दहन । तीन लोकह सोय लोकित ॥

सुर अगन निद्वि सामत गवन । अरि भंजन सज्जन रवन ॥

मो तात दोष वर भंजनह । तुअ विन नह भंजै कवन ॥ छं० १९८८ ।<sup>१</sup>

अबदूर दानी भगवान् शिव से कन्या ने जो मांगा उन्होंने वही दिया अर्थात् उसके पिता चोरंगी चौहान के अपवाद को दूर करते हुए कहा—

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १९७४, स० ६१ ।

२. वही, छं० १९८४, स० ६१ ।

३. वही, छं० १९८२-८३; तथा १९८६, स० ६१ ।

४. वही, छं० १९८७-८८, स० ६१ ।

पुत्र लिपिनि पुत्रं कहों । देउ सु ताहि प्रमान ॥

जु कछु इछ बछें मनह । सो अप्पौ तुहि ध्यान ॥ छं० १९९० ।

भगवान शिव ने उस कन्या को आगे स्वप्न में ही कहा कि तेरा नाम अत्ताताई रखता हूँ, हे पुत्र तेरा स्त्री रूप चला जायगा, तू अपार वीर एवं पराक्रमी होगा, युद्ध में तेरी समानता कोई न कर सकेगा । इतना कह कर शिव अन्तरध्यान हो गये ।

चन्द ने पुनः कहा—हे दिल्लोपति चौहान ! दिल्ली प्रत्यावर्तित होने के एक मास छह दिन बाद उस कन्या के पुरुष के सब गुण उत्पन्न हो गये—

इसक मास षट दिवस वर । रहि नृप दिल्ली धान ।

सु वर वीर गुन उप्पजिय । सुनि संभरि चहुआन ॥ छं० २००५ ।

शिव-पार्वती का सिर पर वरद हस्त होने के कारण परम पराक्रमी अत्ताताई अपने शरीर पर राख मले, श्रंगी बाजा तथा त्रिशूल लिए रहता था, युद्ध में उसके साथ सदैव किलकारती हुई योगिनियाँ चलती थीं—

सिब सिवाह सिर हथ्य । नयो कर पर समथ्य दे ॥

सु विधि राज आदरिय । सत्ति स्वामित्त अथ्य लै ॥

वपु बिभूति आसरै । सिंगि संग्राह घरै वर ॥

त्रिजट कय कंठरिय । तिष्य तिरसूल घरै कर ॥

कलकंत वार किलकत क्रमि । जुगिनि सह सथ्य फिरै ॥

चौरंगि नंद चहुआन चित्त । अत्ताताइ नामह सरै ॥ छं० २००८ ।

कवि चन्द ने यह कथा वर्णन की तथा पृथ्वीराज ने इसे श्रवण किया । अत्ताताई का शौर्य एवं पराक्रम देख कर उसे सवने वीर कार्य का कृती माना—

इह वत्ती कविचन्द कहि । सुनिय राज प्रथिराज ॥

जुद्ध पराक्रम पेयि कै । मन्यौ सब कृत काज ॥ छं० २०१२ ।

वीर अत्ताताई की कथा, महाभारत की शिखंडी की कथा से बहुत कुछ साम्य रखती है । सम्भव है अत्ताताई की कथा लिखते समय कवि के मस्तिष्क में शिखंडी की कथा रही हो ।

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १९९०, स० ६१ ।

२. वही, छं० १९९४-९८, स० ६१ ।

३. वही, छं० १९९९, स० ६१ ।

४. वही, छं० २००५, स० ६१ ।

५. वही, छं० २००८, स० ६१ ।

६. वही, छं० २०१२, स० ६१ ।

७. डॉ० विपिनविहारी त्रिवेदी, रेवातट समय, भूमिका, पृ० १८१-८४ ।

## बावन वीर :

‘पृथ्वीराज रासो’ के आखेटक वीर वरदान समय ६’ के अन्तर्गत लिखा है कि एक बार मृगया हेतु जाते समय कवि चन्द वरदायी को एक ऋषि की कृपा से बावन वीरों को वन में करने का मन्त्र प्राप्त हो गया। फलस्वरूप चन्द ने बावन वीरों का आवाहन किया जिससे वे सब प्रकट होने लगे। भैरव जी की आज्ञा से कवि चन्द को एक वीर ने अपने समस्त साधियों का परिचय देते हुए नामों को इस प्रकार गिनाया—

(१) आइयक, (२) वपुलाई, (३) बुड़िआई, (४) आनल्ल प्रहारिय, (५) नारीय, (६) सूलीप, (७) समयसानलोटन, (८) गढ़ उपड़नाइ, (९) सामुद्र तिरन, (१०) सामुद्र सोप, (११) इह लीह, (१२) संकलाचोट, (१३) विसपाय, (१४), रुड़माल, (१५) अगिया, (१६) विपयिया, (१७) जमघंट, (१८) कालाइ, (१९) कुचलाइ, (२०) अगि-क्रान्त, (२१) विपकत, (२२) रगतिया, (२३) कोडलाइ, (२४) कालक, (२५) कालवेलाइ, (२६), काल घंटाइ (२७) इंद्र वीराइ, (२८) जम वीराइ, (२९) देवगिन, (३०) उकार, (३१) हापटा, (३२) मानिक भद्र, (३३) कपड़िया, (३४) केदाइ, (३५) नरसिंह, (३६) गोरिया, (३७) घटघंट, (३८) कम्टेम्प, (३९) वग, (४०) माह्वगाव, (४१) सती साइ, (४२) महासंतोष, (४३) भ्रमराइ काइ, (४४) महाभ्रम राइ, (४५) सहसाप, (४६) सहस्रांग, (४७) पेत्रपाल, (४८) भूतपनइ, (४९) साकिनीमार, (५०) केदरी रीति, (५१) सालिवाहन तथा, (५२) परिचय देने वाला वीर जिसका रासोकार ने नाम नहीं दिया है।

उपयुक्त ५२ नाम निश्चय ही कवि कल्पना प्रसूत हैं। इनकी ऐतिहासिकता की खोज करना बालू से तेल निकालने का प्रयत्न करना होगा। कवि ने इन्हीं बावन वीरों का समय-समय पर पृथ्वीराज चाहान की ओर से युद्ध करने का भी उल्लेख किया है।

## अन्य काल्पनिक पात्र—

यहाँ पर मुख्यतः उन पात्रों का विवेचन किया गया है जिनका विवरण प्रबंध में अन्य स्थानों पर नहीं आ सका है। ऐसे पात्रों का रासोकार ने विशेषतः नाम नहीं दिया है किन्तु ये कथा में तारतम्य बनाए रखने में अवश्य सहायक हुए हैं। इस वर्ग के अन्तर्गत आने वाले पात्र सम्भावना पर अधिक आधारित हैं। किसी भी युग में साधुओं, फकीरों, काजी, पंडितों का होना असम्भव नहीं है। उन्हीं की सम्भावना करके रासोकार ने भी उनका कथानक के ताने-बाने को ठीक रखने के लिए खुल कर प्रयोग किया। ऐसे पात्रों में ऐतिहासिक तत्व खोजना नितान्त अज्ञानता होगी। अतः यहाँ पर कुछ ऐसे ही सम्भावित पात्रों की ओर संक्षेप में निर्देश मात्र करने की चेष्टा की गई है।

## ऋषि-मुनि :

‘पृथ्वीराज रासो’ में अनेकानेक स्थानों पर ऋषि-मुनियों की कथाएँ दृष्टिगोचर होती

हैं। इस प्रकार की कथाएं 'कथान रुद्धियां' ही मालूम होती हैं। सत्य का अंश इसमें कितना है यह पढ़ने के उपरान्त स्वयं ही स्पष्ट हो जावेगा, देखिए—

( १ ) ढुंढा दानव ने योगिनिपुर में यमुना तट पर हारीफ ऋषि को देखा जिन्होंने उसे तपस्या करने के लिए उपदेश दिया—

द्विग जुगिनिपुर सरित तट । अचघन उदक सु आय ।  
तह इक तापस तप तपत । वीली ब्रह्म लगाय ॥ छं० ५६० ॥  
ताली पुत्तिलय ग्रह्य । दिरिष इक असुर अदम्भुत ॥  
दिध देह चप सीस । मुष्य करुना जस जप्पत ॥  
तिनि रिषि पूछिय ताहि । कवन कारन इत अंगम ॥  
कवन थान तुम नाम । कवन दिसि करवि सु जंगम ॥  
मो नाम ढुंढ वीसल नृपति । साप देह लम्मिय दयत ॥  
छुट्टन सु तेह गगा दरस । जतन देह जन मंत कृत ॥ छं० ५६१ ॥  
तब मुनि वर हसि यी कहिय । विन तप लहिय न राज ।  
अन धन सुत दारा मुदित । लहौ सब सुख साज ॥ छं० ५६४ ।'

मुनि के उपदेश के फलस्वरूप ढुंढा ने तीन सौ अस्सी वर्ष तक तपस्या की—

तपत निसाचर तप्पं । वीते वरष तीन सैं असीयं ।  
नय बाधा विण लंग । लग्यो राम धारना ध्यानं ॥ छं० ५६७ ।'

( २ ) एक वन में एक ऋषि का मिलने तथा उनके रूप का वर्णन कवि ने इस प्रकार किया है—

तहाँ सु अवंतर रिष्य इक । क्रस तन अंग सरंग ।  
दव दढ्यो जनु द्रुम्म कोइ । कं कोई मूत भुअंग ॥ छं० १७ ।  
जप माला मृग छाला । गोटा विभूत जोग पट्टायं ।  
कुविजा खप्पर हृथं । रिद्ध सिद्धाय वचनयं मझं ॥ छं० १८ ।'

( ३ ) एक बार चन्द पृथ्वीराज के साथ वन में आखेट खेलने गया किन्तु वन में उनसे अलग होकर भटक गया । भटक कर एक ऋषि के पास पहुंचा तथा उन्हें अपनी सेवा और वचन से प्रसन्न करके वावन वीरों को वश में कर लेने का मंत्र प्राप्त कर लिया । उनकी इस प्रकार की सिद्धि पर सामन्तों को विश्वास नहीं हुआ, फल स्वरूप चन्द ने उनका आवाहन

१. पृथ्वीराज रासो. नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ५६०-५६१ तथा ५६४, स० १ ।
२. वही, छं० ५६७, स० १ ।
३. वही, छं० १७-१८, स० ६ ।

कर डग्वार में ही प्रकट कर दिया । किन्तु उनके आगमन से आकाश से भयोत्पादक गर्जना होने लगी, पृथ्वी डगमगाने लगी, दिग्पाल भयभीत हो उठे, तपस्वियों का ध्यान भग हो गया, कायर कांप उठे—

किय जप जाप सु होम , आए वीर धीर आतुरयं ।

गर्जं गयन गहीर , भय भं भीत सौर आघातं ॥ छं० १५० ।

धमककी घरा धम्म धम्म धरक्की , कंठ पिठ्ठ कमठ्ठे पिठ्ठे करक्की ।

दिगं आडगं सो दिग्पाल दस्सं , तरक्कं चकं मुनि जन तपस्सं ॥ छं० १५१ ।

भरक्कं सु वांज सु वांज विछुट्टं , तरक्कं एक उलट्टं सुलट्टं ।

इसो आगम भी बावलं वीर , कर्पं काइर धीर रप्यो सुधीर ॥ छं० १५२ ।

( ४ ) इसी प्रकार से मुनि द्वारा शाप का एक विवरण भी देखिए—‘आखेटक श्राप प्रस्ताव’ नामक ६३ वें समय में पृथ्वीराज चौहान के ऐसे ही शाप की कथा का उल्लेख मिलता है । राजा सयोगिता, इच्छिनी आदि प्रिय रानियों के साथ पानीपत में शिकार खेलने गया । वहाँ अनेक दिन आमोद-प्रमोद तथा शिकार में व्यतीत हुए । एक दिन शिकार खेलते समय उन्हें कुछ अनुचरों ने सूचना दी कि जंगल में एक स्थान पर एक बहुत बड़ा सिंह है । वहाँ पहुँच कर राजा ने सिंह के भ्रम में गुफा के द्वार पर खूब धुआँ करवाया । राजा को क्या पता था, कि उस गुफा में सिंह नहीं वरन् बाघाम्बर ओढ़े हुए एक तपस्वी तप कर रहा है, सिंह की खाल के कारण ही अनुचरों को सिंह का भ्रम हुआ था । उस तीव्र धुँवेँ से अति व्याकुल हो कर एक मुनि क्रोध पूर्वक निकले तथा उन्होंने शाप दिया कि जिस व्यक्ति के धुआँ कराने से मेरे नेत्रों की असह्य वेदना हुई है, उसके भी भविष्य में नेत्र निकाले जावेंगे :-

कं अंजुलि कुस पकरि , कहै रिपराज सुनहु सब ।

जिहि मो दिग दुष्ये , निरा अपराध आय अव ॥

ता जुग लोचन जोनु , अयन जुग बीतत कहुदय ।

मन बयन्न नहि टरै , विप्र पिप्पि पिप्पि यो रद्वय ॥

जितकि पीर हम नोगर्व , भूमि लोक अवलीकि इहि ।

सत गुनी विरधता होइ चष , चलयो चाइ मुनि ईस कहि ॥ छं० १६२ ।

ऋषि द्वारा ऐसा भयंकर श्राप पाकर पृथ्वीराज थर-थर कांपने लगे साथ के सामन्त और झूरो के हृदय में आस बैठ गया । उनके मुँह कुम्हला गए । भय के मारे मुँह से वचन

१. पृथ्वीराज रासो, नगरी प्रचारिणी समा काशी, छं० १५०-५२, सं० ६ ।

२. वही, छं० १६२, सं० ६३ ।

नहीं निकलती था। आप के कष्ट से दग्ध हो रहे थे तथा पृथ्वीराज घर अथवा जंगल की ओर एक पंग भी न रख रहे थे अर्थात् अठिग से खड़े के खड़े रह गये—

सुनिय वयस श्रवस, कपि प्रथिराज थरथर ।

जिते सय्य सामत, सूर उर त्रास घरदर ।

गये दवन कुमिलाय, सयिक अति-अधर अद्ध उध ।

बोलत बोल न वैन, सैन संताप साय दध ।

रवि आप दाप को अंग में, को ठिल्ल पंग एक लगि ।

जगल न जाइ नन जाइ घर, भरि न सरवक भूपडग ॥ छं० १६३ ।

संभवतः कवि ने इस घटना का वर्णन पृथ्वीराज के चरित्र का उत्कर्ष दिखाने के लिए ही किया है। गोरी द्वारा पृथ्वीराज के पराजित होने के ठीक पूर्व ही इस घटना का उल्लेख इसीलिए ही किया गया है कि पाठक यह पूर्व निश्चय करके आगे बढ़ें कि पृथ्वीराज की पराजय अवश्यम्भावी है। मुनि के शाप के कारण ही पृथ्वीराज की पराजय हुई, उसे बन्दी बनाकर गजनी ले जाया गया तथा उसे वहाँ नैत्र विहीन किया गया। मोहम्मद गोरी की शक्ति के कारण यह सब नहीं हुआ। इस प्रकार पृथ्वीराज का चरित्र पाठक की दृष्टि में खडित नहीं होता वह अन्त तक वीर तथा महान बना रहता है। अतः स्पष्ट है कि पृथ्वीराज के चरित्र को अन्त तक महान बनाए रखने के लिए ही कवि ने बीच-बीच में ऐसी कथाओं अथवा ऋषि-मुनियों की कल्पना की है।

(५) इसी प्रकार से विषक्षी पंगराज की सेना में शंख धुनि साधुओं का वर्णन करके परोक्ष रूप में कवि ने पृथ्वीराज की महानता एवं रण कुशलता का ही परिचय दिया है, देखिए—

संयोगिता-अपहरण सम्बन्धी युद्ध में पंगराज की ओर से शंखधुनी साधुओं को समरागण में अग्रसर होते हुए देख कर पृथ्वीराज चौहान ने इन वैरागियों के विषय में जानने की जिज्ञासा की—

रवि सरूप संपह धुनिह, अति बल पिथ्य कहंद ।

वैरागी भाया रहित, किमि सेवै जयचन्द ॥ छं० १७९१ ।

कवि चन्द ने पृथ्वीराज की जिज्ञासा शान्त करते हुए उत्तर दिया कि इन सब योगियों को ऋषियों का अवतार समझिए इन्हें नारद मुनि ने प्रबोधा था, अब इनकी कथा विस्तार से सुनाता हूँ। प्राचीन काल में तैलंग प्रमार नाम का एक राजा राज्य करता था, पूर्ण

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १६३, स० ६३ ।

२. वही, छं० १७९१, स० ६१ ।

३. वही, छं० १७९२, स० ६१ ।

अवस्था प्राप्त कर उसने वनवास ग्रहण किया तथा अपनी समस्त भूमि क्षत्रियों में विभाजित कर दी ।<sup>१</sup> यह विभाजन इस प्रकार हुआ—

दिय दिल्ली तोवरन , देई चावड सु पट्टन ।

दय संभरि चौहान , दर्ई कनवज्ज कमधज्जन ॥

परिहारन मुरदेस , सिन्धु चारडा सु चालं ।

दे सोरठ जद्वन , दर्ई दच्छिन जावाल ॥

चरना कच्छ दीनी करग , भट्टां पूरव भावही ।

वन गये नृपति बंटै घरा , गिरिजापति माला गही ॥ छं० १७९५ ।<sup>१</sup>

राजा के साथ ही उनके एक हजार योद्धाओं ने भी सन्यास ले लिया तथा ऋषि होकर वन में तपस्या करते हुए अजपाजाप (योग मार्ग) में अपने चित्त को लगाया ।<sup>१</sup> हवनादि शुभ कार्यों के लिए इन्होंने इन्द्र से कामधेनु गाय भी मांग ली किन्तु उस वन में राक्षसों का आतंक छाया हुआ था । यहाँ तक कि उन्होंने एक दिन बछड़े समेत गाय को भक्षण कर लिया ।<sup>२</sup> ऋषियों को तपस्या करते हुए दो सौ वर्ष व्यतीत हो गए थे जब दैत्यों ने उनकी गाय का भक्षण किया, इससे वे क्षुब्ध हो उठे तथा उन्होंने अग्नि में प्रवेश करने का दृढ़ निश्चय किया ।<sup>३</sup> उसी समय वहाँ नारद मुनि प्रकट हुए तथा ऋषियों को उपदेश देते हुए कहा कि, हे ऋषियों ! बीस वर्षों से तुम लोग निरन्तर अजपाजाप कर रहे हो किन्तु तुम लोग क्षत्रिय हो, अतः तुम लोग धार-तीर्थ का अनुगमन करो, दीर्घ काल तक निरन्तर तपस्या करने के बाद यदि कहीं भूल से भी इन्द्रिय विकार हो गया तो सारा कर्म नष्ट हो जावेगा । किन्तु जो क्षत्रिय पद्म तीर्थ का सम्मान करते हैं उनकी मुक्ति अनायास ही हो जाती है । धार-तीर्थ ही क्षत्रियों का प्रमुख धर्म है । इसके अतिरिक्त पृथ्वी पर अन्य सबों की भ्रम यात्रा समझो, इस भूमि पर प्रचण्ड रूप से तपने वाला राजा जयचन्द है, वह इन्द्र के अवतार के समान है तथा पृथ्वी का भार हरण करने आया है, उसका एक मात्र शत्रु पृथ्वराज चौहान है, अन्यथा समस्त राजा उसकी सेवा में रहते हैं । चौहान दिल्लीपति है, सौ सामन्तों का स्वामी है, वही तुम्हारे सम्मुख युद्ध क्षेत्र में खड़ा होगा, अतः तुम सब लोग पंगराज जयचन्द की सेवा में रहो । वह एक लाख गदों का स्वामी है, तथा उसके पास अस्सी लाख अश्व हैं, इस प्रकार नारद जी का सारगरभित उपदेश सुनकर उनकी आनन्द एवं शांति प्राप्त

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १७९३, स० ६१ ।

२. वही, छं० १७९५, स० ६१ ।

३. वही, छं० १७९६, स० ६१ ।

४. वही, छं० १७९७-९८, स० ६१ ।

५. वही, छं० १७९९, स० ६१ ।

हुई । 'तदुपरान्त नारद जी पंगराज जयचन्द के समक्ष गए तथा योगियों का चरित्र वर्णन कर अपने यहाँ स्थान देने का आग्रह किया, जिसे राजा ने प्रसन्नता पूर्वक स्वीकार कर लिया ।' ये समस्त योगी अपनी जटाओं में मोर पंख बाँधते थे, शंख तथा चक्र धारण किए हुए थे, मोहादि धिकारों से परे थे । इन एक हजार पराक्रमी योद्धाओं को कबीरजीपति राजा जयचन्द ने अपने यहाँ ठहराया ।' राजा इनका बहुत सम्मान करता है तथा इन्हें अपने बड़े भाइयों की भाँति मानता है । परिणाम स्वरूप यह भी राजा की रक्षा करते हैं तथा आज इसी कारण युद्ध भूमि में आ उपस्थित हुए हैं—

अति वर नृप आदर करै, जेठा बंधव जोग ।

तिनहि राज रप्यह रहै, ते छुटि अज जुघजोग ॥ छं० १८२९ ।\*

इसी प्रकार से अन्य कई साधु महात्माओं की कथाएँ रासो में भरी पड़ी हैं । इन सब कथाओं का उपयोग मूलतः रासो को सुर्गाच एव जनप्रिय बनाने के लिए ही किया गया है ।

काजी, फ़कीर, औलिया आदि :

'पृथ्वीराज रासो' में अनेकानेक स्थानों पर काजियों एवं दरवेशों का उल्लेख हुआ है । मुसलमान सेना के योद्धाओं के साथ ही साथ काजी आदि भी रहा करते थे जिनका कार्य दिन-रात नमाज तथा पूजा में व्यर्थ रहना था । विशेषतः इन काजियों का काम केवल सेना पर आई हुई आपत्ति के निवारणार्थ खुदावन्द ताला की इवाजत करना था । यह अधिकतर युद्ध में शूरमाओं की भाँति अस्त्र-शस्त्र ग्रहण नहीं करते थे—

तिन महि पंच से घूर । रन रग नेन लषि मौवकर ।

पंच बीस पंच दिन करे निवाज । हक अहक बस्त नहीकाज ॥ छं० १२४ ।

त्रय काल पाक अस्वान अन्न । छल छेद भेद जिन नहीं रंग ।

समरन सग जिन नहीं दून । अल्लाहलाह व्यापार मूक ।

कीरीय कही जिन देह एक । पैराति परच पज्जीन टेक ॥ छं० १२५ ।\*

'पृथ्वीराज रासो' में सूफी अथवा दरवेशों का चित्रण उपदेशक के रूप में प्रस्तुत नहीं किया गया है । सूफी अथवा फ़कीरों के भेष में गुप्तचर समस्त देश में घूमा करते थे । ऐसा

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १८००-१०, स० ६१ ।

२. वही, छं० १८१३-२६, स० ६१ ।

३. वही, छं० १८२७-२८, स० ६१ ।

४. वही, छं० १८२९, स० ६१ ।

५. वही, छं० १२४-२५, स० १३ ।



उल्लेख 'रासो' में कई स्थानों पर किया गया है। उपर्युक्त घटनाओं से ऐसा प्रतीत होता है कि उस युग में फकीरों अथवा सूफी मतावलंबियों को सन्देह की दृष्टि से नहीं देखा जाता था, यही कारण है कि गुप्तचरी करने के लिए इनका वाना ही अधिक उपयुक्त समझा जाता था। ऐसा ही एक वर्णन देखिए—शाह की आज्ञा शिरोधार्य करके दूत ने सूफी वेप धारण किया तथा दिल्ली की ओर चल पड़ा—

ल्यो दूत दिल्ली दिसा। लिये साह फुरमान ॥

मेप सु सोफिया तंत्र सजि। चित अचितिय मान ॥ छं० ९२।<sup>१</sup>

यह दूत दिल्ली में पाँच माह तक रह कर गुप्तचर का कार्य करता रहा तथा अवधि समाप्त होने पर गजनी लौट कर शाह को दिल्ली के समस्त गुप्त भेद एवं रहस्यों से अवगत करा दिया—

एवरि सर्व लीनी नृपति। चलिय दूत निज मग ॥

आतुरपति गज्जन नमिय। सूफी कै यह जग्य ॥ छं० ९७।<sup>१</sup>

इसी प्रकार से अन्य स्थानों पर भी रासोकार ने ऐसा ही चित्रण किया है। किसी का रहस्य जानने के लिए सूफी वाना धारण करके लोग अपने कार्य की सिद्धि करते थे। अतः स्पष्ट है कि उस युग में सूफी कुछ आदर एवं सम्मान की दृष्टि से देखे जाते थे, उन पर जनता का विश्वास था, तथा वे सन्देह की दृष्टि से नहीं देखे जाते थे।

सूफी वेप धारण करने वाले गुप्तचर केवल मुसलमान दरबार में ही हों ऐसी बात नहीं थी। यह हिन्दू शासकों के यहाँ भी रहा करते थे तथा सूफी वाना पहन कर गुप्तचर का कार्य सम्पादन करते थे। दिल्लीपति चौहान पृथ्वीराज को कन्नौजपति पंगराज जयचन्द द्वारा आयोजित कुमारी संयोगिता के स्वयंवर की सूचना देने वाले भी सूफी वेपधारी गुप्तचर ही थे—

इह सुकथा पहिली मुनि राजन। आय कही सोफी पुनि साजन ॥

ल्यो राग श्रोतन राजान। बुझ्मो बहुरि सुजगम जान ॥ छं० १०।<sup>१</sup>

हिन्दुओं में तो तंत्र-मंत्र का प्रचार था ही किंतु मुसलमान भी तंत्र-मंत्र से अनभिज्ञ न थे। इस बात पर रासो में कई स्थान पर प्रकाश पड़ता है। एक बार पृथ्वीराज तथा गोरी के मध्य युद्ध में पृथ्वीराज के गुरु एवं पुरोहित राम ने मुसलमान सेना पर अपने मंत्रों का प्रभाव कर दिया जिसके परिणाम स्वरूप गोरी की समस्त सेना वशीभूत होकर चित्र लिखित सी

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ९२, स० १९।

२. वही, छं० ९७, स० १९।

३. वही, छं० १०, स० ६४।

खड़ी रह गई। गोरी अपनी सेना की ऐसी विचित्र दशा देख कर अत्यन्त व्याकुल हुआ तथा अपनी सेना के काजी को बुला कर कहा—देखो शत्रु ने अपनी तंत्र-मंत्र विद्या का प्रभाव दिखाया है। तुम किस विचार में हो, उसे उखाड़ते क्यों नहीं—

कहे साहि गोरी सुनो मान काजी । लिय मीर हज्जूर तंह मीर हाजी ।

करी जोर विद्या सुजंत्रार दारं । करो क्यों न उषेल भी क्या विचारं ॥ छं १०३ ।<sup>१</sup>

शाह की ऐसी आज्ञा पाकर काजी ने अपने दोनों हाथों को मुंह पर फेरा तथा मीरों का जाप करना प्रारम्भ कर दिया। कुछ समय उपरान्त उसने हाथ हटा कर दोनों सेनाओं की ओर दृष्टिपात किया जिससे मुसलमान सेना का मोह दूर हो गया तथा हिन्दू सेना को नागपाश में बाँध दिया—

तवं कज्जियं दस्त दुअ मुष्य फेरी । जपे जाप पीरा दुघों सेज हेरी ॥

तव मेच्छ सेन सह मोह भग्गो । सर्वे हिन्दु सेना फनी बद्द लग्गो ॥ छं १०४ ।<sup>१</sup>

गुरु राम ने जब अपनी सेना की ऐसी दशा देखी तो उन्होंने गरुड़ का आह्वान किया तथा नाग पाश को काट कर सेना को पुनः मुक्त करा दिया।<sup>१</sup> अतः स्पष्ट है कि काजी आदि सेना की मंगल कामना के साथ ही साथ ऐसी विपत्तियों का भी निवारण किया करते थे। मुसलमान काजी तंत्र-मंत्र की लड़ाई के अतिरिक्त शकुन विचार भी किया करते थे। 'बड़ी लड़ाई को प्रस्ताव समय ६६' के अन्तर्गत इसी प्रकार के एक काजी का उल्लेख हुआ है। जब गोरी, पृथ्वीराज से युद्ध हेतु गजनी से चलने लगा तब उसके काजी ने कहा कि मेरी बात पर विश्वास कीजिए, अब की बार चौहान अवश्य परास्त होगा तथा बन्दी बना लिया जावेगा—

तवं बुझयो ताम काजी मदन्नं । तन वृद्ध विद्या सुराज्जे सद्व्रं ।

सदा वदिगो साइं लागै सुमन्नं । सदानं कुरांन सुभासं सबन्नं ॥ छं ८२२ ।

कहै ताम काजी समं साहि गोरी । घरी मुझ्ज वातं चरंचित्त छोरी ।

दिनं काल्हि कूहु दिन उंच दीनं । गहौ चाहुआनं कला इंद पीनं ॥ छं ८२३ ।

परं मैंन दूनी भरं भार भारं । रनं रौद्र वित्तं अभूतं सुसारं ।

पलं रुद्र रत्तं अभूतं भयानं । विभछछ समथ्यं उहथ्यं सयानं ॥ छं ८२४ ।

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १०३, स० १३ ।

२. वही, छं० १०४, स० १३ ।

३. गरं गरुड़ आह्वान राम उच्चारयो । तव बंधन नाग तिनबंध डारयो । छं० १०५, स० १३ ।

घड़े काल्हि चंपौ चिर हिन्दु सेन । न चुकं कुरानं सुभानं सेवनं ।

गहो जीन हिन्दू पंल दुष्ट जेसं । करी पोदि षोली तनहं प्रवेसं ॥ छं० ८२५ ।'

इसी प्रकार के विवरणों से 'रासो' भरा पड़ा है । इन काजी, औलिया तथा दरवेशों के नामों की ऐतिहासिकता खोजना छम है । कवि ने इनका सृजन कथा विकास के लिए किया है, यही इनका महत्व भी है ।

---



---

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ८२२-२५, सं० ६६ ।

## स्त्री-पात्र

‘पृथ्वीराज रासो’ मूलतः वीर काव्य है। सम्भवतः इसी कारण कवि ने स्त्री पात्रों का ‘रास’ में बहुत कम विवेचन किया है। ग्रन्थकार का अभीष्ट पृथ्वीराज की वीरता का गान करना था। स्त्री पात्रों के नाम तो प्रसंगवश आ गए हैं। ऐसी स्थिति में स्त्री पात्रों की न्यूनता स्वाभाविक ही है। कुछ स्त्री पात्र ऐसी भी हैं जिनका कवि ने नामोल्लेख नहीं किया। ऐसे पात्रों की ऐतिहासिकता खोजना असम्भव होने के कारण छोड़ दिया गया है।

### इच्छिनी :

इच्छिनी तथा पृथ्वीराज की विवाह कथा बड़े ही रोचक ढंग से प्रारम्भ की गई है। शुक्र-शुकी वार्ता के अन्तर्गत शुकी कहती है कि मुझे नींद नहीं आ रही है, अतः इच्छिनी तथा पृथ्वीराज के विवाह का विस्तार से वर्णन करो और शुक्र इच्छिनी तथा पृथ्वीराज के विवाह का वर्णन विस्तार से सुनाना प्रारम्भ कर देता है—

कहै सुकी सुक संमली, नींद न आवे मोहि ॥

रय निरवानिय चन्द करि, कय इक पूछौ तोहि ॥ १ ॥

सुकी सरिस सुक उच्चार्यौ, धर्यौ नारि सिर चत ।

समय संजोगिय संसरै, मन सैं मंडिय हित ॥ २ ॥’

सुकी की जिज्ञासा के साथ ही कथा प्रारम्भ हो जाती है—सलषर्जत ने अपने पुरोहित ‘भानु’ के हाथ सुवर्ण-पत्र पर लख लिख कर भेजा, जिसके साथ श्री फल (नारियल) के अतिरिक्त बहुत से रत्न और जरी-वस्त्र भी थे, जिन्हें देखने मात्र से मन आनन्दित हो जाता था—

पटवो प्रोहित मान कर, कनक पत्र लिखि सन्न ।

श्रीफल बहुत रतन जरि, पिबिख होत मन मग्न ॥ ३ ॥<sup>१</sup>

मन लेकर आए हुए पुरोहित से पृथ्वीराज पूछने लगे कि हे द्विज ! कुमारी की इस ममय वितनी आयु है और कैसी रूपवती तथा गुणवती है ? उसके विषय में विस्तार से वर्णन करो, जिसमें मेरे मन में शान्ति हो-

पद्म पृष्ठत घनननि सुनि, कही बाल किन वेस ।

वितक रूप गुन अगरी, सुनत मोहि अवेस ॥ ४ ॥<sup>२</sup>

ब्राह्मण ने रानी इच्छिनी का रूप तथा वयः सन्धि का विशद वर्णन किया जिसे सुनकर पृथ्वीराज अत्यन्त प्रसन्न हुए तथा अपने प्रमुख सामन्तों को साथ लेकर विवाह हेतु चल पड़े-

सय्य कंह चहुआंभ, सय्य निड्डुर रति राच ।

सय्य सोम - सामंत, अल्लह पल्लहन प्रति साज ।

बलिय गरुड गहिलौत, बलिय मोहा असिध वर ।

दाहिम्मी कंभास, सय्य सूरौ चावड़ गुर ॥

मति-मद्र मति साधन सकल, सीहांनी स्वांमिंत धुर ।

चतुरंग सूर यय रूप गुन, लिए राज - राजन्म गुर ॥ ११ ॥<sup>३</sup>

ग्रन्थकार ने आगे चलकर विवाह संस्कार तथा रानी इच्छिनी का नख-शिख वर्णन थड़े विस्तार के साथ किया है । अन्त में रानी इच्छिनी का विवाह बड़ी धूमधाम से पृथ्वीराज के साथ सम्पन्न हो गया तथा विदा होकर दिल्ली की ओर प्रस्थान किया-

चल्यो व्याहि संभरिघनी, मंगन नए निहाल ।

पुहचावन धन सँग नए, नृप गुज्जरव साल ॥ ७२ ॥<sup>४</sup>

पाँच कोस तक साथ में चलकर पृथ्वीराज चोहान से आवू राजवंशी सलप और जैत ने यह कहते हुए कि आपको हम क्या दे सकते हैं और ऐसे देने में हमारी क्या शोभा है । अस्तु, आपके काम के लिए हमारा सिर समर्पित है, विदा ली-

पंच कोस पर पिय्य यह, बिदा मंगि अबु इस ।

भोर देन तुम सौंन कह, काम तुम्हें हम सीस ॥ ७३ ॥<sup>५</sup>

१. पृथ्वीराज रासो, साहित्य सस्थान उदयपुर, छं० ३, स० १४ ।

२. वही, छं० ४, स० १४ ।

३. वही, छं० ११, स० १४ ।

४. वही, छं० ७२, स० १४ ।

५. वही, छं० ७३, स० १४ ।

इस प्रकार के वचन कह कर सलख राज ने घर की ओर प्रस्थान किया तथा पृथ्वीराज दुल्हन को साथ लिए हुए दिल्ली अपने घर पहुंच गए ।

कवि ने जिस रोचक ढंग से कथा का प्रारम्भ किया था वैसे ही उसका अन्त भी किया है—‘इस प्रकार रानी इंछिनी की कथा कहते और सुनते-सुनते वह रात्रि व्यतीत हो गई । इस कथा को कवि चन्द ने कही तथा उसकी पत्नी ने सुनी । जो कोई यह सुहावनी कथा को सुनेगा उसे सुखप्रद होगी—

सुनत कयत इछि वत्तरी, गढ़ रत्तरी विहाइ ।

दुग्ग कही दुजि स्पंभरिय, सुवख श्वग्ग सुहाइ ॥ ८४ ॥’

उपयुक्त विवेचन से इतना स्पष्ट हो जाता है कि रानी इंछिनी आवूपति सलपराज की पुत्री थी जिसका विवाह दिल्ली-अजमेर के आधिपति चौहान पृथ्वीराज के साथ हुआ था । रासो के अनुसार यह पृथ्वीराज चौहान की पटरानी थी ।

### ऐतिहासिकता :

अब प्रश्न यह उठता है कि ‘रासो’ के इस विवाह वर्णन में सत्यता का कितना अंश है—ओझा जी इस कथा को पूर्णरूप से काल्पनिक मानते हुए लिखते हैं कि—‘रासो में लिखा है कि १२ वर्ष की अवस्था में, पृथ्वीराज ने आवूप के परमार राजा सलप की पुत्री और जंत की चहिन इंछिनी से विवाह किया । यह कथा ऐतिहासिक नहीं है । आवूप पर सलख या जयत नाम का परमार राजा कभी हुआ ही नहीं । आवूप पर की वि० सं० १२८७ की वस्तुपाल के मंदिर की प्रशस्ति में आवूप के परमारों की उस समय तक वंशावली दी है । उसमें वहाँ के परमार राजा यशोधवल का पुत्र घरावर्प होना लिखा है । यशोधवल का वि० सं० १२०२ का शिलालेख राजपूताना म्यूजियम (अजमेर) में विद्यमान है । उसके पुत्र घरावर्प के १४ शिलालेख और एक ताम्र पत्र मिला है, जिनमें से वि० सं० १२२० ज्येष्ठ सुदि १५, वि० सं० १२६५, १२७१ और १२७४ के चार मूल लेख राजपूताना म्यूजियम में सुरक्षित हैं, जिनसे निश्चित है कि पृथ्वीराज की गद्दी नशीनी के पूर्व से लगा कर उसकी मृत्यु के बहुत पीछे तक आवूप का राजा घरावर्प था, न कि सलप या जंत ।’

श्री अमृतलाल शील ने राष्ट्रकूट घवल के सन्-९९६ ई० के शिलालेख के आधार पर बताया है कि चौहान पृथ्वीराज से दो सौ वर्ष पूर्व आवूप अथवा चन्द्रावती का शासक घरणी-वराह था, जिसने गुजरात के राजा मूलराज सोलंकी (चालुक्य) की आधीनता स्वीकार कर

१. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० ८४, सं० १४ ।

२. रायबहादुर गौरीशंकर हीराचन्द ओझा, पृथ्वीराज रासो का निर्माणकाल, कोशोत्सव स्मारक संग्रह, पृ० ४५-४६, १९२८ ई० ।

भी भी तथा आवू के अन्नेश्वर के मंदिर तथा वस्तुपाल के जैन मंदिर की सन् १२३० ई० ( वि० सं० १२८७ ) की प्रशस्ति में गुजेश्वर कुमारपाल द्वारा संपादलक्ष या शाकम्भरी सरदा अणोरज को परास्त करके उनके पक्ष में चले जाने वाले अपने आवू के सामन्त विक्रम परमार को गद्दी पर से उतार कर उसके भतीजे शयषवल को वहाँ का अधिपति बनाने का उन्नेय करके, आवू के अजारी गाँव के कुमारपाल की प्रशस्ति सूचक सन् ११४५ ई० ( वि० सं० १२०२ ) के लेख, सिरोही राज्य के कायद्रा ग्राम के उपकण्ठ के काशी विश्वेश्वर के मंदिर के सन् ११६३ ई० ( वि० सं० १२२० ) के यशोधवल परमार के पुत्र धारावर्ष के शिलालेख और 'ताज-उल-म-आसीर' उल्लिखित सन् ११९७ ई० ( वि० सं० १२५४ ) में खुसरों अर्थात् कुतुबुद्दीन-ऐबक द्वारा अहलवाड़ा पर आक्रमण-काल में गुजरात के राय कर्ण और धारावर्ष ( परमार ) सामन्तों के युद्ध करने का विवरण देकर सिद्ध किया है कि पृथ्वीराज के समय में आवू पर गुर्जरेश्वर द्वारा नियुक्त परमार जातीय सामन्तों का आधिपत्य था ।"

कविराव मोहनसिंह रानी इंछिनी को प्रमाणिक पात्र मानते हुए लिखते हैं कि— "रानी इंछिनी आवू राजवंशी सलप जैत्र की पुत्री थी। सलप जैत्र गुर्जर-देशीय चालुक्यों के विरुद्ध थे ।"

डॉ० दण्तरय शर्मा 'कन्हू दे प्रबन्ध' के आधार पर रानी इंछिनी को धारावर्ष परमार के छोटे भाई पाहलन दे की पुत्री पद्मावती भी अनुमान करते हैं ।"

डॉ० विपिनविहारी त्रिवेदी एक स्थान पर लिखते हैं कि— "जो भी हो प्रधान मंत्री कैमात का वध कराने वाली, संयोगिता के रूप के कारण सपत्नी द्वेष से राजमहल त्यागने का उपक्रम करने वाली रासो की सुन्दरी, आवू की परमार राजकुमारी और पृथ्वीराज की पटरानी इंछिनी चरित्र-चित्रण की दृष्टि से चन्द के काव्य की एक अद्भुत प्रतिमा है ।"

## इन्द्रावती :

महाराज पृथ्वीराज ने अपने सामन्तों की अपना खड्ग देकर राजकुमारी इन्द्रावती से

१. एपिग्राफिया इंडिका, जिल्द ८, पृ० २०८-१३ ।
२. राजपूत ना म्यूजियम, अजमेर ।
३. श्री अमृतलाल शील, हिस्टारिसिटी आव दि ऐंपिक पृथ्वीराज रासो, मार्डन रिव्यू, तथा चन्दवरदाई का पृथ्वीराज रासो, सरस्वती, पृ० ५५८-६१, मई सन् १९२६ ई० ।
४. कविराव मोहनसिंह, पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, सम्पादकीय, पृ० १२ ।
५. डॉ० दण्तरय शर्मा, सम्राट पृथ्वीराज चौहान की रानी पद्मावती, मरु भारती, भाग १, अंक १, सितम्बर १९५२ ।
६. डॉ० विपिनविहारी त्रिवेदी, रेवातट समय, भूमिका भाग, पृ० २१८, हिन्दी विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय लखनऊ, १९५३ ई० ।

विवाह कर लाने के लिए भेजा । कवि चन्द ने सारंगीपुर के प्रमार राजा से विवाह करने की प्रार्थना की किन्तु उसने खड्ग से विवाह करना अस्वीकार कर दिया ।'

पिता के हट पूर्ण वचन सुनकर सुन्दरी इन्द्रावती ने अपना मस्तक लज्जा से नीचा कर लिया तथा मन ही मन विचार करने लगी कि हे पृथ्वी ! तू फट कर मुझे अपने में आत्मसात कर ले अथवा अग्नि में जल कर मर जाना ही श्रेष्ठ है—

सुनि इन्द्रावति सुन्दरी, धरति सरन सिर लाइ ॥

कैं धरनी फट्टै कुहर, कैं पावक जरि जाइ ॥ छ० ४ ।'

कवि राजकुमारी के मन की बात को स्पष्ट करता हुआ लिखता है कि राजकुमारी सोचती हैं कि मैं तो इस जन्म में वादशाह गोरी को बांध लेने वाले राजा सोमेश्वर के पुत्र पृथ्वीराज चौहान को ही प्रेम करती हूँ । इसके बिना मेरे लिए समुद्र में डूबकर आत्महत्या करना ही उचित है—

इन भव नृप सोमेस सुअ, जुध बंधन सुरतान ॥

कैं जलद्धि वृडवि मरैं, अवर न बंछीं प्रान ॥ छ० ५ ।'

सखियों ने राजकुमारी का दृढ़ निश्चय जान कर उसे पृथ्वीराज से विरक्त करने का भरसक प्रयत्न किया किन्तु राजकुमारी ने एक न सुनी तथा उन्हें ही बुझा-भला कहती हुई कहने लगी—

तुम दासी दासी सु मति, मो मति नृप पुत्रीय ।

बोलि बिन चुषकैं न नर, जो वर मुषके जोय ॥ छ० ७ ।'

इधर राजा भीम पृथ्वीराज के खड्ग के साथ विवाह करने को तैयार न थे । पृथ्वीराज के सामन्तों ने विचारा कि यदि हम खड्ग से विवाह बिना किए वापिस जावेगे तो बड़ी जग हँसाई होगी दूसरे पृथ्वीराज को भी विश्वास न आवेगा ।' अतः समस्त सामन्तों ने मंत्रणा करके वहाँ से पाँच कोस की दूरी पर डेरा डाल दिया तथा पट्टन नरेश (भीम) की गोओं को घेर लिया, जिसे सुनकर भीम ने ससैन्य चढ़ाई कर दी—

पंच कोस मेलान करि, लिय नृप पट्टन धेन ।

कूक कहुर वज्जिय, विषय चढिय भीम नृप सेन ॥ छ० २३ ।'

१. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छ० १-३, स० ३१ ।

२. वही, छ० ४, स० ३१ ।

३. वही, छ० ५, स० ३१ ।

४. वही, छ० ७, स० ३१ ।

५. वही, छ० २०, स० ३१ ।

६. वही, छ० २३, स० ३१ ।



दोनों शैलों में घोर संश्राम छिड़ गया, प्रातः से सांय काल तक रणभेरी बजती रही, वन में भीम की पराजय हुई तथा भयभीत होकर उसने राजकुमारी इन्द्रावती को पृथ्वीराज को समर्पित कर दिया—

भीम नयानक भैं ग्रहणी, सरन राम कविराज ।

घर इन्द्रावती सुन्दरी, दें बीनी प्रथिराज ॥ छं० ३२ ।<sup>१</sup>

सामन्तों ने पृथ्वीराज को सूचना दी कि राजा भीम ने सुन्दरी इन्द्रावती का विवाह कर दिया है ।<sup>२</sup> इतना ही नहीं राजा भीम ने यथा शक्ति दहेज भी दिया, देखिए—

सत्त हय्यी हय सहस विय, सांकति सांजि अनूप ।

हयलेखी चहुआन कों, दियां भीम वर भूप ॥ छं० ३३ ।

नाग जरित चौडोल सौ, मुर सत दासिय सय्य ।

दं पहुचाइय सुन्दरी, कही वने वर गय्य ॥ छं० ३४ ।<sup>३</sup>

कहना न होगा रानी इन्द्रावती मनवांछित वर को पाकर अत्यन्त हर्षित हुई तथा दिल्ली के महलों में पृथ्वीराज के साथ सुख भोगने लगी ।

## ऐतिहासिकता :

श्री अमृतलाल शील इन्द्रावती को काल्पनिक पात्र मानते हुए लिखते हैं कि—मालवा के लक्ष्मी वर्मा ( सन् ११४३ ई० ), हरिश्चन्द्र ( सन् ११७९ ई० ) और उदय वर्मा ( सन्-११९९ ई० ) के दान पात्रों को देखने पर 'रासो' के ( समय ३३ ) के भीमदेव यादव-राय और इन्द्रावती कल्पित पात्र प्रमाणित होते हैं ।<sup>४</sup>

कविराय मोहनसिंह इन्द्रावती के सम्बन्ध में अपने उद्गार इस प्रकार प्रकट करते हैं—  
'इन्द्रावती विवाह, से ज्ञात होता है कि पहले तो इन्द्रावती के पिता भीम ने खड्ग के साथ अपनी पुत्री से विवाह करने से इन्कार कर दिया किन्तु बाद में पृथ्वीराज के सामन्तों द्वारा पट्टनपुर की गायों को घेरकर युद्ध में पराजित कर देने पर उसने इन्द्रावती का विवाह खड्ग से कर दिया । (करहेरा युद्ध से स्पष्ट हो गया है कि यह राजकुमारों सारंगीपुर के राजा भीम की पुत्री थी ) ।'<sup>५</sup>

१. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० ३२, स० ३१ ।

२. वही, छं० ३६, स० ३१ ।

३. वही, छं० ३८-३९, स० ३१ ।

४. श्री अमृतलाल शील, सरस्वती, भाग २७, संख्या ६, पृ० ६२७ ।

५. कविराय मोहनसिंह, पृथ्वीराज रासो, द्वितीय भाग, सम्पादकीय, पृ० ६, साहित्य संस्थान, राजस्थान विश्वविद्यापीठ, उदयपुर, सम्बत् २०१२ ।

सम्भव है इतिहास की दृष्टि से इन्द्रावती काल्पनिक पात्र हो क्योंकि इसका कहीं अधिक विवरण प्राप्त नहीं होता है ।

**कमला (पृथ्वीराज की माता) :**

‘पृथ्वीराज रासो’ में लिखा है कि दिल्ली नरेश तोमर राजा अनंगपाल के दो पुत्रियाँ थीं उनमें से एक कान्यकुब्जेश्वर विजयपाल को तथा दूसरी अजमेरपति राजा सोमेश्वर को इस कलियुग में मृत्यु का बीज बोन के लिए दी थीं, अर्थात् उनसे विवाह किया था—

अनंगपाल पुत्री उभय । इक दीनी विजयपाल ।

इक दीनी सोमेश को । बीज बवन कलिकाल ॥ छं० ६८१ ।<sup>१</sup>

ग्रन्थकार तोमर नरेश अनंगपाल की पुत्रियों की नामोश्लेष करता हुआ लिखता है—

एक नाम सुर सुन्दरी । अनिवर कमला नाम ।

दरसन सुर नर हुल्लही । मनो सु कलिका काम ॥ छं० ६८२ ।<sup>२</sup>

अर्थात् एक का नाम सुन्दरी तथा दूसरी का नाम कमला था । उनके दर्शन देवता तथा मानवों को भी दुर्लभ थे । वे मातों काम की सुन्दर कलिकाएं थीं । दूसरी राजकुमारी ‘कमला’ ही ग्रन्थ के नायक की माता थी । यह कथन निम्नलिखित दोहे से और भी स्पष्ट हो जाता है—

सोमेश तोमर घरनि । अनंगपाल पुत्रीय ॥

तिन सु पिय्य गर्भ घरिय । दावन कुल छत्रीय ॥ छं० ६८५ ।<sup>३</sup>

कालान्तर में पुत्र जन्म होने पर अत्यन्त हर्ष मनाया गया तथा विविध प्रकार के दान दिए गए ।<sup>४</sup> पृथ्वीराज नामक अपने दौहित्र को दिल्लीपति अनंगपाल ने योगिनिपुर (दिल्ली) दान कर दी तथा स्वयं तपस्या हेतु बद्रिकाश्रम चले गए—

जुगिनिपुर चहुआन दिय । पुत्री पुत्र नरेश ॥

अनंगपाल तोमर तिनिय । किय तीरथ परवेश ॥ छं० ९६ ।<sup>५</sup>

**ऐतिहासिकता :**

कमला की ऐतिहासिकता पर विचार करते हुए श्री अमृतलाल शील ने लिखा है कि

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ६८१, स० १ ।

२. वही, छं० ६८२, स० १ ।

३. वही, छं० ६८५, स० १ ।

४. वही, छं० ६८७, स० १ ।

५. वही, छं० ९६, स० १८ ।

दिल्ली के अज्ञात सम्भ (आधुनिक फिरोजशाह की लाट) पर सोमेश्वर के बड़े भाई विग्रह राज चतुर्थ उपनाम बीसनदेव के लेख के आधार पर लिखा है कि इससे यह प्रमाणित होता है कि मन् ११९३ ई० में कुछ पहले बीसनदेव ने दिल्ली को जय किया था। इससे यह भी प्रमाणित होता है कि सोमेश्वर के राज्य काल में दिल्ली में अजमेर का कोई करदाता राजा राज्य करता था अथवा अजमेर राज्य का कोई वेतन भोगी सामन्त वहाँ का दुर्ग रक्षक था। पृथ्वीराज अजमेर के युवराज थे। उनका अपने पिता के अधीन किसी करदाता राजा अथवा उनके नीकर दुर्ग रक्षक के घर गोद जाना केवल असम्भव ही नहीं, अश्रद्धेय भी प्रतीत होता है।"

म० म० ओझा रामो की घटना को अप्रामाणिक एवं अनैतिहासिक मानते हुए लिखते हैं—दिल्ली के तब राजा अनंगपाल ने अपनी छोटी पुत्री कुंवरि कमला का विवाह सोमेश्वर के साथ किया। जिससे पृथ्वीराज का जन्म हुआ था। अन्त में अनंगपाल देहली का राज्य अपने दैह्य पृथ्वीराज को देकर वद्विकाश्रम में तप करने को चला गया। यह सारी तथा कल्पित है, क्योंकि उस समय न तो अनंगपाल दिल्ली का राजा था और न उसकी पुत्री कमला का विवाह सोमेश्वर के साथ हुआ था। दिल्ली का राज्य तो पहले ही सोमेश्वर के बड़े भाई विग्रहराज (चतुर्थ) ने ही अपने राज्य (अजमेर) के अधीन कर लिया था। बिजोलियाँ के उक्त लेख में विग्रहराज का दिल्ली और हाँसी को लेना लिखा है। तबकाले-नासिरी में जाहायुद्दीन गौरी के साथ की पहली लड़ाई में दिल्ली के राजा गोविंदराज का पृथ्वीराज के साथ होना और उसी (गोविन्दराज) के भाले से सुल्तान का घायल होकर सोटना तथा दूसरी लड़ाई में, जिसमें पृथ्वीराज की हार हुई, उस (गोविन्द) का मारा जाना लिखा है। इससे निश्चित है कि पृथ्वीराज (तृतीय) के समय दिल्ली-अजमेर के उक्त सामन्त के अधिकार में थी।

पृथ्वीराज की माता का नाम भी कमला नहीं, किन्तु कर्पूरदेवी था और वह दिल्ली के राजा अनंगपाल की पुत्री नहीं, किन्तु त्रिपुरी (चेदि अर्थात् जवलपुर के आस-पास के प्रदेश की राजधानी) के हैहय (कलचुरि) वंशी राजा तेजल (अचलराज) की पुत्री थी।"

पृथ्वीराज चौहान की माता का नाम कर्पूरदेवी, ओझा जी जयानक का १२वीं शताब्दी

१. श्री अमृतनाथ शील, चन्द बरदाई का पृथ्वीराज रासो, सरस्वती, भाग २७, संख्या ५, पृ० ५५६, जून १९२६।
२. रायबहादुर गौरीप्रसाद हीराचंद ओझा, पृथ्वीराज रासो का निर्माण काल, पृ० ४२, श्रीप्रोत्साह स्मारक संग्रह।

विरचित 'पृथ्वीराज विजय' १३वीं शताब्दी का हम्मीर महाकाव्य तथा १६वीं शताब्दी का 'सुर्जन चरित' के आधार पर कहते हैं ।

म० म० ओझा जी के मत को निराधार मानते हुए म० म० मथुराप्रसाद दीक्षित ने अपने लेख में लिखा है कि—'सोमेश्वर के विवाह सम्बंध में इतना कहना पर्याप्त है कि राजाओं के अनेक विवाह होते थे । दिल्ली को अजमेर नरेश के आधीन मान लेने पर भी दिल्ली नरेश अजमेर के यहाँ विवाह नहीं करेगा, यह नहीं सिद्ध होता है और जिस पृथ्वीराज काव्य के आधार पर वे वंसा आरोप करते हैं, वही संदिग्धास्पद है ।'

डॉ० दशरथ शर्मा ने वीकानेर फोर्ट लाइब्रेरी की रामसिंह के समय की लगभग सं० १६५७ वि० लिखित ४००४ छन्द परिमाण वाले रासो की हस्तलिखित प्रति की प्रमाणिकता सिद्ध करते हुए लिखा है—'सोमेश्वर की स्त्री को अनंगपाल की पुत्री अवश्य बतलाया गया

१. इति साहससाहचर्यचर्यस्समयजः प्र ( तिपादि ) त प्र प्रमावाम् ।  
 तनयां स सपादलक्षपुण्यैरुपयेमे त्रिपुरीपुर ( न्द ) रस्य ॥ ( १६ ), सर्ग ७ ।  
 पृथ्वीं पवित्रतां नेतुं राजशब्दं कृतार्थताम् ।  
 चतुर्वर्णधन नाम पृथ्वीराज इति व्यधात् ॥ ( ३० ) सर्ग ८ ।  
 मुपतेवति सुधवा वश गतपुरुषमोषितकं ।  
 देव सोमेश्वरं द्रष्टुं राजश्रीरुदकण्ठत ॥ ५७ ।  
 आत्मजाम्यमिव यशः प्रतापाम्यामिवान्वितः ।  
 सपादलक्षमानिन्ये महामात्यमंहीपतिः ॥ ( ५८ ) ।  
 कर्पूरदेव्यथादाय दानभोगविवात्मजौ ॥  
 विवेशाजय राजस्य संपन्नमूर्तिमती पुरीम् ॥ ( ५९ ) सर्ग ८ ।  
 —जयानक, पृथ्वीराज विजय महाकाव्य ।

२. इलाविलासी जयति स्म तस्मात् ।  
 सोमेश्वरोऽनश्वरनीतिरीतिः ॥ ६७ ।  
 कर्पूरदेवी बभूव तस्य ।  
 प्रिया ( प्रिया ) राघनसाव धाना ॥ ७२ । —हम्मीर महाकाव्य, सर्ग २ ।

३. शकुन्तलामां गुणरूपशीलैः  
 स कुन्तलानामधिपस्य पुत्रीम् ।  
 कर्पूरधारां जनलोचनानां  
 कर्पूरदेवीमुदुवाह विद्वान् ॥ ४ ॥ —सुर्जनचरित, सर्ग ९ ।

४. पं० मथुराप्रसाद दीक्षित, पृथ्वीराज रासो और चन्द बरदाई, सरस्वती पृ० ४५८  
 नवम्बर, सन् १९३४ ई० ।

है। परन्तु सम्भव है कि वे पृथ्वीराज की विमाना हों। दिल्ली के बीसलदेव के आधीन होने पर भी तोंवर राजाओं का वहाँ रहना संभव है।<sup>१</sup>

कविराय मोहनमिह उपर्युक्त मतों का खंडन करते हुए यह सिद्ध करने का प्रयत्न करते हैं कि अनंगपाल नीनर दिल्ली का शासक था तथा उसकी पुत्री कमला ही, चौहान पृथ्वीराज की माता थी। वह लिखते हैं कि—'अनंगपाल के नाम दिल्ली के कई स्तम्भों पर उपलब्ध हैं, लेकिन उनमें सम्भव नहीं है केवल कुतुबुद्दीन ऐबक की मसजिद के आहूते में जो लोह स्तम्भ पड़ा हुआ है उसी पर उसने विषय में सम्भव का उल्लेख इस प्रकार है, 'संवत् दिल्ली' लिखने के पश्चात्त अनंग लिखे हैं। इसमें यह सिद्ध होना है कि दिल्ली के सम्बत् ११०९ में इसे ( दिल्ली को नए सिरे से या जीर्णोद्धार के रूप में ) बसाया उसमें बसाने के स्थान पर नाम नहीं आया, परन्तु जहाँ यह लेख लगा है वह स्थान ही अपने बसाने की पुष्टि स्वयं कर देता है। यह दिल्ली वाला सम्बत् कौन सा था इस पर विचार किए जाने से निश्चित है कि वही दिल्ली वाला रासो में लिखा अनन्द सम्बत् ही है। जिसमें स्वर्गीय पंड्या मोहनलाल जी के मतानुसार ९१ वष विक्रमी सम्वत् से जो कमी है वे जोड़ देने से वि० सं० १२०० में अनंगपाल का दिल्ली पर होना सिद्ध होता है।

जिनपाल रचित 'खरतरगच्छ पट्टावली' का अनुसरण करते हुए श्रीयुत अगरचन्द नाहटा, डॉ० दशरथ शर्मा आदि विद्वान भी वि० सं० १२२३ के लगभग मदनपाल नामक राजा का नाम दिल्ली के शासक रूप में होना लिखते हैं। मदनपाल अनंगपाल का पर्याय-वाची है। अस्तु इससे भी अनंगपाल का समय चहुवान विग्रह ( चतुर्थ ) सोमेश्वर और पृथ्वीराज से आ मिलता है।

प्रातः स्मरणीय महाराणा प्रताप के उत्तराधिकारी अमर ने अपने मित्र रट्टी को जो दो पद्य लिखे उनसे भी निश्चित है कि तंवर और राठौर वंश के मुख्य स्थान दिल्ली और पन्नोज का एक ही समय ( २२ वर्ष के अन्तर्गत ही ) में नाश हुआ।

अस्तु चहुवानों से पूर्व दिल्ली का शासक तंवर ही था और वह था अनंगपाल तंवर ही।

जब कि उपरोक्त प्रमाणों से और लोक प्रसिद्धि से अनंगपाल तंवर का उस समय होना सिद्ध है तो उसकी पुत्री कमला से पृथ्वीराज के पिता सोमेश्वर का विवाह होने में कोई शंका नहीं होनी चाहिए और बहु विवाह की प्रथा होने से कर्पूरदेवी भी सोमेश्वर की रानी रही हो और विमाता होने से उसको भी पृथ्वीराज की माता लिखा गया हो यह सम्भव है।

१. डॉ० दशरथ शर्मा, पृथ्वीराज रासो की एक प्राचीन प्रति और उसकी प्रामाणिकता, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, पृ० २७५-८२, कार्तिक सं० १९९६ वि०।

पृथ्वीराज का जन्म कमला से ही हुआ, कर्पूरदेवी से नहीं, इस विषय में भी प्रमाण देने की आवश्यकता है।

पृथ्वीराज विषयक अन्य पुस्तकादि में लिखे गये उसके जीवन वृत्तान्त पर खूब सोचने से पृथ्वीराज का जन्म रासो में लिखे अनुसार वि० सं० १२०५-६ में होना ही मानना पड़ता है। परन्तु विद्वानों ने सोमेश्वर का विवाह कर्पूरदेवी के साथ वि० सं० १२१८ के बाद होना माना है। अतः; पृथ्वीराज का कर्पूरदेवी के गर्भ से उत्पन्न होना सम्भव नहीं।"

'बलभद्र विलास' में पृथ्वीराज के जन्म के विषय में लिखा है कि संवत् ११३२ माघ शुक्ल त्रयोदशी शुक्रवार को दोपहर दिन के समय पुष्प नक्षत्र अभिजित मुहूर्त में सब लोगों के प्रसन्न काल में कमला के पुत्र उत्पन्न हुआ जिसको सब मनुष्य दुर्योधन का अवतार कहते हैं।"

अतः उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि 'कमला' ही पृथ्वीराज की माता तथा अत्रमेरु पति सोमेश्वर की पत्नी थी। अतः रासो की कुछ घटनाओं को सत्य मानने के लिए बाध्य होना पड़ता है।

करनाटी :

पृथ्वीराज रासो में लिखा है कि चौहान पृथ्वीराज ने करनाटक प्रदेश पर आक्रमण करके सधि रूप में एक अनुपम सुन्दरी करनाटी नामक वेश्या को प्राप्त किया।" इस प्रकार पृथ्वीराज नर्तकी सहित करनाटी वेश्या को अपने साथ ले आया—

लै आयौ नाइक सथ , करनाटी प्रियिराज ।

जत्र तत्र एकठ भए , सब साज सम्माज ॥ ४ ॥"

महाराज पृथ्वीराज कारनाटी के रूप, गुण तथा लक्षणों पर रीझ गए तथा उसकी रक्षिता रूप में रानी इंच्छिनी प्रमारनी के अंतःपुर के बाहर द्वार पर रहने के लिए व्यवस्था कर दी तथा उसके भवन पर रक्षा हेतु दिन-रात बहुत सी दासियाँ रख दी गई—

१. कविराव मोहनसिंह, पृथ्वीराज रासो पर पुनर्विचार, राजस्थान भारती, भाग १, अंक २-३, पृ० ४१-४४, सन् १९४६ ई०।

२. अथ स माघ मासे तु त्रयोदश्यां सिते भ्रगो ।

पुण्ये द्वित्रिन्दुचन्द्रेऽन्वे मध्यान्हेऽभिजितक्षणे ॥ १ ॥

मुदिते लोक सन्ताने तदा पुत्रमजीजनत ।

ये वदन्ति नराः सर्वे घातैराष्ट्रावतारकम् ॥ २ ॥ —बलभद्र विलास

३. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० ३, सं० २८।

४. वही, छं० ४, सं० २८।

काम कला तुष्टे नृपति, सुग्रिह पवारी द्वार ।

तिन अयास दासी सघन, अहनिस् रहि रखवार ॥ ११ ।'

'कैमास वध' समय में एक बार फिर हमें करनाटी वेश्या की सूचना प्राप्त होती है । महाराज पृथ्वीराज चौहान शिकार खेलने गए थे । घनघोर घटा छा रही थी । ऐसे समय में वेश्या करनाटी की आँखें मंत्री कैमास से चार हो गई । रात्री में वेश्या ने कैमास को अपने यहाँ बुलाया, कामान्ध कैमास ने भी बिना विचारे करनाटी के महल में प्रवेश किया । प्रवेश करते हुए रानी दन्तिनी ने उसे देख लिया तथा प्रतिहारिनी को भेज कर राजा की मृगया में सूचना देकर बुला लिया । महाराज पृथ्वीराज ने सीदामिनी के प्रकाश में कैमास पर दान चलाया जिससे मंत्री कैमास मृत्यु को प्राप्त हुआ । कैमास को पृथ्वीराज ने पृथ्वी में गढ़वा दिया किन्तु भाग्यवश करनाटी वेश्या भाग गई तथा कन्नीजपति जयचन्द से समस्त घटना का वर्णन कर उसी के दरवार में रहने लगी—

खनि गह्यो नृप सम घनह, सो दासी सुर पात ।

दिव्य धार ने जलधि तें, लीला कहिग सु प्रात ॥ ४० ।'

स्मरण रहे महाराज पृथ्वीराज को कैमास जैसा स्वामीभक्त मंत्री इसी वेश्या के कारण अपने हाथों से मारना पड़ा, जिसका उन्हें जीवन भर पश्चाताप बना-रहा । इस पाप के प्रायश्चित्त स्वरूप पृथ्वीराज चौहान ने कैमास के पुत्र को उसके पिता के सिंहासन पर बैठाया तबही उसे कुछ सन्तोष प्राप्त हुआ—

उर सल्लें कैमास नृप, पुत्र परद्विय पट्ट ।

चित चचल अचचल करिय, दिय हय गय वर थट्ट ॥ ६९ ।'

'कनवज्ज कथा' में एक बार फिर करनाटी वेश्या हमारे सामने आती है किन्तु इस बार दूसरे रूप में । वह एक स्वामिभक्त तथा नमक को ध्यान में रख कर पृथ्वीराज की जीवन रक्षा करती हुई दिखाई देती है—जयचन्द के दरवार में करनाटी वेश्या ने चन्द कवि के साथ छद्मवेगी पृथ्वीराज को पहचान कर लज्जा से धूँधट खींच लिया । अपना भेद खुलने के भय से कविचन्द ने सकेत से कहा कि तेरे ही कारण कैमास जैसा स्वामिभक्त मंत्री मारा गया, अब क्या तू महाराज पृथ्वीराज को भी मरवाना चाहती है । कवि के सकेत का अर्थ समझ कर वेश्या करनाटी ने तुरन्त ही अपना अवगुण्ठन हटा दिया, जिससे पृथ्वीराज पर आई हुई विपत्ति टल गई—

१. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० ११, स० २८ ।

२. यही, छं० ४०, स० ५५ ।।

३. यही, छं० ६९, स० ५५ ।

करि कलबलह स मंत्री मारयो , नहि चहुआनं सर न विचारयो ।

सेन सुवर कहि कवि समुझाई , अब तूं कलह करन इहां आई ॥ छं० ७१८ ॥

समक्षि दासि सिरवर तिन ढक्यो , कर पल्लव तिन दूगवर अक्यो ।

कव रस सब समा कमधज्जी , मैचकि भूप सिगिनी सज्जी ॥ छं० ७१९ ॥

करनाटी वेश्या केवल पृथ्वीराज को ही पुरुष मान कर अपना मुँह लज्जा से ढकती थी, तथा यह बात सर्वत्र प्रसिद्ध थी अतएव उसके अवगुंठन निकालते ही जयचन्द को पृथ्वीराज की उपस्थित का भ्रम हो गया तथा अवगुंठन हटते ही सब आश्चर्य एवं विस्मय से चकित रह गए तथा पृथ्वीराज पर आया हुआ संकट टल गया । करनाटी की इसके उपरान्त कहीं भी सूचना प्राप्त होती है ।

### ऐतिहासिकता :

पृथ्वीराज के महामंत्री कैमास के अस्तित्व में अब किसी को भी सन्देह नहीं रह गया है । कैमास-वध के सम्बन्ध में भी पुरातन प्रवन्ध संग्रह के दो उदाहरण साक्षी हैं—

इक्कु घाणु पडुवीस जु पइं कई बासह मुक्क ओ ।

अतः यह भी स्पष्ट है कि मंत्री कैमास का वध पृथ्वीराज के हाथों ही हुआ था । पुरातन प्रवन्ध संग्रह से करनाटी वाली घटना स्पष्ट नहीं होती है फिर भी अनुमान को पर्याप्त स्थान मिल जाता है । इसमें आश्चर्य नहीं कि पृथ्वीराज ने कैमास की हत्या करनाटी वाली घटना से कुपित होकर ही की थी । मुहणोत नेणसी की ख्यात में एक खींची सरदार ( जो पृथ्वीराज का सामन्त था ) के लिए भी ऐसी ही कथा प्राप्त होती है । कथा इस प्रकार है :—

“राजा पृथ्वीराज चौहान की राणी सुहृदे जोइयाणी अपने पति से रूठ कर पिता के घर आन वैटी थी, उसके पिता ने खार्दू (गांव) को पहाड़ी पर पुत्री के लिए एक महल बनवा दिया । वह इतना ऊँचा था कि उसमें जलता हुआ दीपक अजमेर से नजर आता था । जोइयाणी की आज्ञाकारी गुन्दलराव से हो गई । गुन्दल ने अपने गाँव से उस महल तक एक सुरंग खुदवाई जिसमें होकर वह जोइयाणी के महल में आया-जाया करता था एक द्वार पृथ्वीराज की दूसरी राणी अजयदेवी दहिमाणी ने उस दीपक को देखकर अनुमान बाँधा कि वहाँ अवश्य कोई भद्र आता जाता होवेगा और उसने यह बात पति से कही तब अपने चौकी के घोड़े पर सवार होकर पृथ्वीराज अचानक सुहृदेव के महल की झोडा पर जा पहुँचा और घोड़े से उतर पड़ा । द्वारपाल ने राणी के पास खबर पहुँचाई इतने में पृथ्वीराज भी महल में पहुँच गया । गुन्दलराव तो तत्काल सुरंग के मार्ग से चलता घना परन्तु उसके पाँव का जोड़ा वहाँ रह गया । प्रभात को जब पृथ्वीराज ने वह जोड़ा देखा तो सुहृदे से पूछा कि यह किसका है और



महाँ कीन मई बाता है । थोड़ी देर तो वह टाल-मटोल का उत्तर देती रही परन्तु जब देखा कि मच कहे दिना काम न चलेगा तो स्पष्ट कह दिया कि यहाँ गुन्दलराव खींची बाता है । यह सुनकर पृथ्वीराज पीछा अजमेर लौटा और दूसरे दिन ही दाहिम चामुण्डराय को फौज देकर जायस की तरफ गीचियों पर बिना किया' ।'

संभव है गुन्दलराव खींची पृथ्वीराज का महामंत्री कैमास रहा हो । निश्चय ही करनाटो कदा में सत्य के कुछ न कुछ अंग अवश्य हैं चाहे इस विषय में इतिहास भले ही मौन हो ।

### कुँअर पद्मसेन :

पृथ्वीराज रांसी के मतानुसार ममुद्रगिलर गढ़ के अधिपति यादववंशी विजयपाल की स्त्री का नाम कुँअर पद्मसेन था । इसके गर्भ से दस पुत्रों ने तथा एक पुत्री ने जन्म लिया जो अन्द्रमा भी कलाओं के समान थी —

पद्मसेन कुँअर सुघर , ता घर नारी सुजाँन ।

ता उँर इक पुत्री प्रगट , मनहुँ कला ससि भाँन ॥ छं० ४ ।'

कालान्तर में यही पुत्री पद्मावती नाम से रासो में प्रसिद्ध हुई । रानी पद्मसेन के विषय में कवि ने अधिक विवरण प्रस्तुत नहीं किया है । अतः हमें इतने से ही सन्तोष करना पड़ता है । "रासो" के अन्य तीन संस्करण (लघुनम, लघु एवं मध्यम) इनके विषय में मौन हैं । इतिहास में भी इनका विवरण प्राप्त नहीं होता है ।

### चित्ररेखा :

चित्ररेखा की उत्पत्ति अर्थात् गोरी के पास आने की कथा पूछने पर हुसैनखाँ के सेवक ने इस प्रकार कहा —

पुच्छि चद वरवाइ नै . चित्ररेख उत्तपति ।

साँ-हुसेन खावास कहि , जिम,लिनी असपति ॥ छं० १ ।'

एक बार शाह गोरी ने फरमान दिया कि अरब और सिन्ध तट के स्वामी हमसे झुककर नहीं रहते हैं अतः उन पर युद्धार्थ सेना सजाई जाय । किन्तु वास्तविकता यह थी कि गोरी शाहाबुद्दीन अरबवाँ की चित्ररेखा नामक वेश्या में अनुरक्त था उसी की प्राप्ति हेतु उसने आक्रमण किया था । गोरी के प्रेम की बात इससे स्पष्ट हो जाती है —

चित्तं मत्त गयंदं , सुतारं नख्य उत्तरयं ।

त्योँ चित्र रेखय चित्त , सुविहांन मंडियं नेहं ॥ छं० ७ ।'

१. मुहणोत नीणसी की ख्यात, प्रथम भाग, पृ० १८५-६ ।

२. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ४, सं० २० ।

३. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० १, सं० ११ ।

४. वही, छं० ७, सं० १३ ।

जब आरबखा ने विपक्षी शहाबुद्दीन के चढ़ आने तथा चित्ररेखा के प्रति आकृष्ट होने की बात सुनी, तब उसने उत्तर स्वरूप बिना किसी प्रकार का युद्ध किए ही मुग्धा स्त्री संघि रूप में समर्पित कर दी जिससे विपक्षी गोरी का समस्त द्वेष एवं बल क्षण हो गया जैसे मानो किसी ने तपते तवे पर जल छिड़क दिया हो—

सुनि आवाज आरब मुखसु . वर उत्तर तिय मुंद ।

बल भग्यो इन भति वर , (ज्यों) तत्ततवे पर बुंद ॥ छं० ८ ॥

हुसैन का सेवक चित्ररेखा का रूप वर्णन करता हुआ कहता है—“वह बाला रूप की सरिता के तुल्य थी, उसके कटाक्ष की तट भावना, (इच्छा) ही तरंग हाव-भाव ही मीन और गुण ही ग्राह स्वरूप थे। वह सिद्धों के मन को भंजन करने वाली थी। उसके समान अन्य कोई स्त्री त्रैलोक्य में भी नहीं थी। ऐसी केलि रस से परिपूर्ण वैश्या शहाबुद्दीन को प्राप्त हुई—

रूप नहि कटाच्छ कुल तटयौ , भायं तरंगं वर ।

हाव भाव ति मीन प्रासित गुनं , सिद्धं मनं भंजनी ॥

सोयं जोग तरंग रव ति वर, त्रैलोक्य ना ता समं ।

सोय साहि सहाबदीन ग्रहियं , आनंग क्रीडा रसं ॥ छं० १० ॥<sup>१</sup>

और भी—वह अर्थात् चित्ररेखा सुलक्षणों की अंग स्वरूपा, उसका शरीर कंचन की भांति तथा मस्तक पर नग धारण करने वाली ऐसी गोरी (सुन्दर स्त्री) को लेकर गोरी शाह वापस लौट आया तथा उसका बिना युद्ध के ही क्रोध शांत हो गया—

अंग सुलच्छिन हेम तन , नगघरि सुन्दरि सीस ।

गौरी ग्रहि गोरी गयो , विना जुद्ध बुझि रीस ॥ छं० ११ ॥<sup>१</sup>

चित्ररेखा (वैश्या) को सुलतान गोरी ने बड़े आदर और प्रेम से अपने महल में लाकर रख लिया। उसके प्रेम में वह इतना वशीभूत हो गया कि अपनी अन्य सारी वेगमों को छोड़कर अहर्निश उसी के साथ महल में रहने लगा—

जिय जिय साह सु आवरिय , तिम तिम बढ़यं प्रेम ।

क्रम क्रम फल गुन बढ़इय , बेली नमं सु तेम ॥ छं० ३१ ॥

बसि कीनों सुरतान , चग जिम भ्रमं डोरि कर ।

ज्यों भावी बसि लाइ , वचन उद्योत बाल सुर ।

१. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० ८, स० १३ ।

२. वही, छं० १०, स० १३ ।

३. वही, छं० ११, स० १३ ।

ज्यों बनि जोवन मन , प्रात बसि जेम फाँसुनगुर ।  
ज्यों बसि नाद फुरग , वास बसि जेम मधुवकर ।  
महिला गु चुकि सब बसि नय , महिला महिल सु मति बसि ।  
एकग एक अंदर महल , रहै साहि सुरतान रांसि ॥ छं० ३२ ॥<sup>१</sup>

एक ओर तो नूतान चित्ररेखा में इतना अधिक अनुरक्त था दूसरी ओर चित्ररेखा शाह के वाग्धव हस्सैन्या ने प्रेम करती थी—दोनों की प्रेम लीला ज्ञात होने पर हस्सैन को गोरी ने मदनो में निकास दिया किन्तु हस्सैन साथ में चित्ररेखा को भी ले कर नागौर में पृथ्वीराज की शरण में चला गया—

पात्र एक साहब सँग , हर नूर गुन गान ।  
लं आयी हस्सैन इत , सरन तविक चहुआन ॥ छं० १६ ॥<sup>२</sup>

कालान्तर में उसी द्वेष भाव के कारण गजनीपति गोरी ने पृथ्वीराज पर आक्रमण किया । घोर युद्ध हुआ । पृथ्वीराज की ओर से हस्सैन शाह ने भी युद्ध में भाग लिया किन्तु दुर्भाग्यवश मृत्यु को प्राप्त हुआ । चित्ररेखा ने जब हस्सैन की मृत्यु की सूचना प्राप्त की तो वह भी अपने धर्म का चिन्तन करती हुई हस्सैन के साथ स्वयं भी कब्र में गड़ गई—

पर्यो हस्सैन सु पात्र सुनि , चितिय चित्त इमान ।  
सज्यो घोर हस्सैन सय , करयो प्रवेस अपान ॥ छं० ७१ ॥<sup>३</sup>

“हस्सैन कथा” वाला हस्सैन नासिरुद्दीन हस्सैन था जो तबकाले नासिरी के लेखानुसार कामी था तथा रातों भी उसके अन्य गुणों के साथ-साथ कामी होने के अवगुण पर प्रकाश डालता है । चित्ररेखा, पहले वादशाह की ओर फिर उसकी प्रेमिका बनी थी जो वादशाह को अन्ध और सिध के आक्रमण में उसे सन्धि स्वरूप प्राप्त हुई थी । “अतः स्पष्ट है कि जब हस्सैन एक ऐतिहासिक पात्र था तो चित्ररेखा भी अवश्य ही ऐतिहासिक रही होगी । हस्सैन का कामी होना चित्ररेखा की प्रमाणिकता पर पर्याप्त प्रकाश डालता है ।

**जुन्दाई :**

रामोकार के अनुसार सम्राट जयचन्द गाहड़वाल के स्वर्ण रचित विस्तीर्ण रनिवास में काम कला सद्ज अनेक नव योवनाएं थीं, जो सब चित्रिनी तथा पद्मनी जाति की एक से एक

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ३१-३२, स० ७ ।
२. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० १६, स० ११ ।
३. यही, छं० ७१, स० ११ ।
४. कविराय मोहनसिंह, पृथ्वीराज रासो, प्रथम भाग, सम्पादकीय पृ० २, साहित्य संस्थान उदयपुर ।

सुन्दर एवं मनोहर थी परन्तु राजा का जुन्हाई पर विशेष प्रेम था ।' सम्राट जयचन्द गाहड़वाल की उस अप्सरा सदृश्य सुन्दर रानी जुन्हाई का वर्णन कवि चन्द ने इस प्रकार प्रस्तुत किया है —

'संसार के अन्धकार समूह को विनष्ट करने वाले श्री भास्कर की प्रखर किरणों से एक सुन्दर बालिका ने जन्म लिया । एक बार जब वह कैलाश पर्वत के मेघस्पर्शी वृक्ष की डाल पर पड़े झूले में झूल रही थी, तब उस सुन्दर कन्या को देख कर भूपति जयचन्द उस पर मुग्ध हो गया । राजा ने अपने नेत्रों को नासिकाग्र पर दृढ़ कर तथा एक पैर पर खड़े होकर उसकी प्राप्ति हेतु उग्र तपस्या करना आरम्भ किया । कवि विशिष्ट ने राजा की तपस्या से प्रसन्न हो कर भगवान भास्कर से प्रार्थना करके उस सुन्दर कन्या का राजा पंगराज से विवाह करा दिया । वही काम कला के सदृश्य सुन्दर रानी इस समय जुन्हाई के नाम से प्रसिद्ध है ।'

सूर किरनि तें प्रगटि, रुचिर कन्यका तपत्या ।

तरवर तुंग कैलास, साष संग्रह करि सत्या ॥

झुलती सपेखि, मयी भुवपति सु आसिक ।

एक पाइ तब मडि, धारि द्रग अग सु नासिक ॥

वाचिष्ट रिषि सु प्रसन्न होइ, रवि प्रारथिथ विवाह किय ।

जै चन्द राय बरदाइ कहि, तिहि सम जुन्हाइ लहिय ॥ छं० ७५१ ।'

उपर्युक्त जन्म कथा निश्चय ही काल्पनिक है । किन्तु रासोकार ने रानी जुन्हाई का वर्णन इस प्रकार प्रस्तुत किया है जिससे प्रतीत होता है कि यही रानी पंगराज की पटरानी थी । रासों के अनुसार इसे सभी राजकीय एवं राजपरिवार के सभी महत्वपूर्ण कार्यों में प्रमुख भाग लेता हुआ देखते हैं । सर्वप्रथम रानी जुन्हाई ने ही पंगराज को राजकुमारी संयोगिता के पृथ्वीराज चौहान के प्रति अनुराग की सूचना दी थी । उसी के परामर्शानुसार सम्राट जयचन्द ने राजसूय यज्ञ के साथ ही साथ संयोगिता स्वयंवर की आयोजना भी की थी । यज्ञ विध्वंस होने पर जब राजा उग्र हो पृथ्वीराज का विनाश करने को तत्पर था उसी समय इसने भार्यो-चित परामर्श प्रदान कर प्रथम शान्ति पूर्वक कन्या का विवाह करने की महत्वपूर्ण राय दी थी ।

देवगिरी समय २६ के अन्तर्गत रासोकार ने इस का स्नेही रूप प्रस्तुत किया है । पंगराज के युद्ध हेतु प्रस्तुत होने पर प्रिय वियोग की कल्पना मात्र से वह ज्योत्सना स्वरूप रानी विरह वेदना से कातर हो उठी । पंगराज की यह सुकुमार रानी रात्रि में पति से वियुक्त होने

१. रासोसार, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, पृ० १८७ ।

२. नागरी प्रचारिणी सभा काशी से प्रकाशित रासो के सम्पादकों के अनुसार यह कवित्त मो० प्रति में नहीं है अतः इसे वे क्षेपक मानते हैं ।

३. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ७५१, तं० ६१ ।

पर श्याम वर्ण कमल मात्र को देख कर भयाक्रान्त हो उठने वाली, भला पति प्रयाण के समय चित्र चेदना में दग्ध होना स्वाभाविक ही था.....उसका मनोहारी मुख मलिन हो गया, संभव चेरादि मुख सामग्री दुःखद प्रतीत होने लगी तथा समस्त आमोद-प्रमोद से विरक्त हो वह मुकुमार चित्र निखित पुतलिका सदृश्य चेतना शून्य हो वैंसी की वैंसी रह गई। राहु द्वारा चन्द्रमा-प्रसिद्ध हो जाने पर जो दशा कुमुदनी की होती है वही इस समय इस नवोढा की भी हो रही थी।<sup>१</sup>

जुह्वाई विरह ताप से केवल कुम्हलाने वाली मुकुमारी मात्र ही नहीं वरन् अपने पटरानी पद के महत्व को भी भली प्रकार समझती थी। राजा पंगराज तथा अन्य सामन्तों द्वारा कविचन्द का सत्कार हो जाने के उपरान्त भी उसने अपनी ओर से नाना भेंट भेजी थी, जो पंगराज के वैभव का परिचय देने के साथ-साथ रानी जुह्वाई की व्यवहार कुशलता का भी परिचायक था—

मुचन सिगारिय सह सखिय, विवह वस्त लिय सध्व ।

सो निज स्वामिनी अगि सुनि, क्रमिय सु अथ्यह कव्व ॥ छं० ३०५ ।<sup>१</sup>

म्हण्ट ही रानी जुह्वाई कवि कल्पना प्रसूत पात्र है। फिर भी कवि ने उसका चरित्र-चित्रण अत्यन्त सजीव रूप में प्रस्तुत किया है।

**मुन्दरी :**

पृथ्वीराज रासो' के अनुसार दिल्लीपति अनंगपाल तोंवर की जेष्ठ कन्या का नाम सुन्दरी था, जिसका विवाह कन्नोजपति राजा विजयपाल से हुआ था—

अनंगपाल पुत्री उमय । इक दीनी विजपाल ।

इक दीनी सोमेश को । वीज बवन कलिकाल ॥ छं० ६८१ ।

एक नाम मुर मुन्दरी । अनिवर कमला नाम ।

वरसन मुर नर दुल्लही । मनो सु कलिका काम ॥ छं० ६८२ ।<sup>१</sup>

संभवतः यही मुन्दरी कन्नोजपति राजा जयचन्द की माता भी थी। ग्रन्थकार ने इस बात का स्पष्ट उल्लेख नहीं किया है किन्तु एक स्थान पर पृथ्वीराज के जन्म के वर्णन में संकेतमात्र दिया है जो अत्यन्त महत्वपूर्ण है। सोमेश्वर के पुत्र के जन्म का समाचार कन्नोज पहुँचने पर

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० २५-३८, सं० २६ ।

२. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० ३०५, सं० ५८ ।

३. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ६८१-६८२, सं० १ ।

जयचन्द की माता का ( जिसका नामोल्लेख ग्रन्थकार ने नहीं किया है ) वहिन के पुत्र होने के उपलक्ष में नाना उपहार भेजते हुए दिखाया है—

कनकज जयचन्द मात , भयी समरि बहनी सुत ।

तिन पवत दुज पठिय , थार जर चीर थापेय थुत ॥<sup>१</sup>

प्रत्यक्ष वर्णन न होने पर भी परोक्ष रूप से स्पष्ट है कि ग्रन्थकार के मतानुसार राजा जयचन्द की माता का नाम सुन्दरी था ।

इसके विपरीत इतिहासकार जयचन्द की माता का नाम चन्दलेखा मानते हैं । रम्भा-मंजरी नाटिका जिसका नायक स्वयं जयचन्द है, उसमें भी जयचन्द की माता का नाम चन्द्र-लेखा ही वर्णित है । चन्द्र लेखापातानु जन्मा जैत्राचन्द्रो आवि ।<sup>२</sup>

ओक्षा जी एक स्थान पर सुन्दरी के अस्तित्व में सन्देह करते हुए लिखते हैं कि—‘कमला के सोमेश्वर के साथ विवाह की कथा के समान सुन्दरी के विजयपाल के साथ विवाह की कथा भी कल्पित ही है ।’

शिलालेख एवं दानपत्र इस विषय में सर्वथा मौन हैं । अतः अन्य प्रमाणों के अभाव में सुन्दरी को जयचन्द की माता तथा अनंगपाल की पुत्री मानने में संदेह न होना चाहिए । रम्भा मंजरी की ऐतिहासिकता में विद्वानों को संदेह है ही ।<sup>३</sup> रासो की प्रामाणिकता एवं ऐतिहासिकता एक विवाद ग्रस्त विषय है । फिर भी अब रासो-विज्ञ राजा अनंगपाल की पुत्री कमला को अंतिम हिन्दू शासक पृथ्वीराज की माता स्वीकार करने लगे हैं ।<sup>४</sup> अतः अनुश्रुति तथा पारिवारिक सम्बन्धों को दृष्टि में रखते हुए अनंगपाल की ज्येष्ठ पुत्री सुरसुन्दरी को जयचन्द की माता तथा विजयपाल की पत्नी मानने में किसी प्रकार का व्यवधान शेष नहीं रह जाता ।

उपर्युक्त विवेचन से यह सब स्पष्ट होते हुए भी इस विषय पर स्वतंत्र रूप से पर्याप्त अनुसन्धान की आवश्यकता है । यहाँ पर एक तो सामग्री अभाव तथा दूसरे प्रबंध के विस्तार भय से इसे ऐसी ही स्थिति में छोड़ कर विवश हो आगे बढ़ना पड़ रहा है ।

## दाहिमी :

दाहिमराज के तीन पुत्र थे, उनमें कैमास यमराजा के भ्राता के समान बलशाली था,

१. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० ४५, स० १ ।

२. रम्भामंजरी, अंक १, पृ० ६, तथा भूमिका, पृ० ४ ।

३. रायवहादुर गोरीशंकर हीराचंगव ओक्षा, पृथ्वीराज रासो का निर्माणकाल, कोशोत्सव स्मारक संग्रह, पृ० ५८ ।

४. डॉ० दशरथ शर्मा, राजस्थान भारती, भाग १, अंक २-३ जुलाई-अक्टूबर सन् १९४६ ।

५. डॉ० विपिनविहारी त्रिवेदी, रेवातट समय, भाग १, पृ० २०६-२१० ।

हमरा धीर नानंदराज या जिसकी तलवार ने दुष्टों को खदेड़ दिया था, उन दोनों भाइयों का तेज मूर्त के समान था। दाहिर राजा की दो कन्याओं में से एक मेवातपति मुंगल नरेश से व्याही गई थी तथा द्वितीय जो अत्यन्त रूप एवं गुणवती थी उसका पाणिग्रहण पृथ्वीराज चौहान के साथ हुआ था। दोनों बरातें साथ ही साथ आईं उनका सम्मान बराबर किया गया, किन्तु चौहान पृथ्वीराज का द्वार पर प्रथम कलश बंधवाया गया। उस समय सुन्दरियाँ मंगल गान गा रही थीं —

काल भ्रात कंभास, खलन चामेड़ खग खद्विय ।

सूर नूर सम-सत्य, सकति पूजा सुर सद्धिय ॥

मेवाती मूल सु तय्य, पुत्रि इक्ककह परनाइय ।

विष पुत्री सिरताज, सुतौ पुथिराजह व्याहिय ॥

दो जान मान चहुआन दल, प्रथम कलस सैसर धनिय ।

उच्छाह बहुत मंगल करहि, गीत गांन अलि सुर वनिय ॥ छं० १० ।<sup>१</sup>

विवाह में दाहिम राजा ने नाना प्रकार से स्वागत करके यथाशक्ति दहेज में सुन्दरियों के सिर की ताज स्वरूपा ऐसी सुन्दर और श्रेष्ठ थंगारी हुई आठ सहेलियाँ तथा अच्छी शरीर वाली श्रेष्ठ दासियाँ, जो सब १५ वर्ष की आयु की थी उन्हें साथ में दी। शुद्ध ऐराकी जात के एक सौ घोड़े तथा दस सुन्दर डाले तथा ऋतुओं में मद से छके रहने वाले दो हाथी एवं चाँदी के मुखपाल दिए। दाहिमी पति की सेवा करने वाली थी। दाहिम राजा के इस समान व्यवहार की प्रशंसा शत्रुओं तक ने की —

सखी अट्ठ सिरताज, थंग थंगारि सुरग वर ।

सट्ठ तीन दासी सुचंग, चरख सत अट्ठ सरम्मर ॥

एक सत्त शुन सुरंग, दोई पक्खे ऐराकिय ।

दो हत्थी दस डाल, रहे छह रिति मद छाकिय ॥

मुख पाल रजत सोभा सु बनि, सत्त पुत्तलि सेवा करें ।

डाइची दिद्ध दाहिम दुहन, भुज भुजंग कीरति करें ॥ छं० १२ ।<sup>१</sup>

कालान्तर में इसी दाहिमा रानी से पृथ्वीराज के पुत्र रयणसी ने जन्म लिया —

वर समुद्र - चहुआन, रतन सो रतन उपज्जं ।

दाहिम्मी उर प्रम्म, कित्ति आनूखन रज्जं ॥

इह सु बंध बंधनह, जुगति बंधन वर राजिय ।

इह समोल मोलन, मौल ग्रह फिरि साजिय ॥

१०. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० १०, तं० १६ ।

२. वहाँ, छं० १२, तं० १६ ।

(१ह) परलियौ कविन किति चसम , (वह) चसम परवखन परखयो ।

इह सोम राज राजन महि , वह घर कंचन थरकयो ॥ छं० १५ ।

नागरी प्रचारिणी सभा से प्रकाशित 'रासो' के विवाह सम्यों ६५ में उल्लिखित है कि १२ वर्ष की आयु में चौहान पृथ्वीराज का विवाह वीर चामंडराय दाहिम की बहिन से हुआ था इस विवाह का इसके अतिरिक्त कहीं भी उल्लेख प्राप्त नहीं होता है । किन्तु उदयपुर से प्रकाशित रासों में दाहिमी का विवाह का उल्लेख मिलता है उसी के आधार पर उपर्युक्त विवरण प्रस्तुत किया गया है । "कैमास वध" समय में लिखा है कि रयन कुमार भानजे तथा चामण्डराय मामा में परस्पर अत्यन्त प्रेम था ।

दिल्ली वै चहुवान . तप अति तेज खग वर ।

चपि देस सह सोम , गज्जि अरि मलिय घान्न घर ॥

रयन कुमार अति तेज , रोहि हय पिट्ट विसम ॥

साय राइ चामंड , कर न कलि किति असमं ॥

मव्वास वास गज दुगम , अप्पनेह रवखे अनत ।

मातुलह नेह भानेज पर , भागनेय मातुल सु रत ॥ छं० ४ ।

तथा उन दोनों के परस्पर प्रेम को देख कर चन्दपुण्डीर ने पृथ्वीराज के कान भरे थे—

सयन इक्क सं वसहि , इक्क आसन आश्रमहि ।

चारी नद विहार , भार जल राह सु रम्महि ॥

भागनेह मातुलह , जानि अति प्रीति सु उम्भर ।

च्यत चंद पुण्डीर , कहि प्रति राज हित मर ।

चामंड रयन स्यघह सु पर , अप्पनेह बंध्यो असम ।

जानहु सु कृत्य कारन सु कलि , कलै धम्म घरनिय विसम ॥ छं० ५ ॥

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि रानी दाहिमी वीर चामण्डराय की बहिन थी जिसका विवाह पृथ्वीराज के साथ हुआ था ।

## ऐतिहासिकता :

ओझा जी दाहिमी तथा पृथ्वीराज के विवाह को भी ऐतिहासिक नहीं मानते हैं—अपने मत में प्रमाण देते हुए लिखते हैं कि—“रासो में लिखा है कि १३ वर्ष की अवस्था में पृथ्वीराज

१. पृथ्वीराज रासो साहित्य संस्थान उदयपुर. छं० १५ सं० १६ ।

२. वही, छं० ४, सं० ५५; तथा पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १, सं० ५७ ।

३. वही, छं० ५, सं० ५५, तथा पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, छं० २, सं० ५७ ।



में दाहिमा चामण्ड की वहिन में विवाह किया, जिससे रेणसी का जन्म हुआ। यह कथन निरा-  
धार कल्पित है, क्योंकि पृथ्वीराज का पुत्र रेणसी नहीं किन्तु गोविंदराज था, जो पृथ्वीराज के  
मारे जाने के समय बालक था। फारसी तबारीखों में उसका नाम 'गोला या गोंदा' पड़ा जाता  
है, जो फारसी वर्णमाला की अपूर्णता के कारण गोविन्दराज का विगड़ा हुआ रूप ही है  
हम्मीर महाकाव्य में भी गोविन्दराज नाम मिलता है (सर्ग ४)। सुलतान शहाबुद्दीन ने अपनी  
अधीनता में उसे अजमेर की गद्दी पर बिठाया, परन्तु उसके सुलतान की अधीनता में रहने के  
कारण पृथ्वीराज के छोटे भाई हरिराज ने उसे अजमेर से निकाल दिया, जिससे वह रण-  
घंभीर में जा रहा। हरिराज का नाम पृथ्वीराज रासों में नहीं दिया, परन्तु पृथ्वीराज विजय,  
प्रबंध कोश के अन्त की वशावली और हम्मीर महाकाव्य में दिया है। और फारसी तबारीखों  
में हीराज या हेमराज मिलता है जो उसी के नाम का विगड़ा हुआ रूप है।''

कविराज मोहनसिंह दाहिमी तथा पृथ्वीराज के विवाह को प्रामाणिक मानते हुए लिखते  
हैं—“कैमास और चामण्डराय की वहिन से पृथ्वीराज का विवाह हुआ। कैमास पृथ्वीराज  
का महामंत्री था, यह सप्रमाण है। इसी का भाई चामण्डराय था जिसे रासों के अन्तम युद्ध  
में चण्डेराय भी लिखा है।

सबें मुरंगी बाँध हों , अप्प अप्पने भाग ।

ते बाँधी सुलतान पर , खडे खडी पाग ॥

अतएव मुसलमानी तबारीखों में जिस दिल्ली के हाकिम खांडेराव का उल्लेख हुआ है  
वह प्रसिद्ध वीर चामण्डराय ही था।''

अतः स्पष्ट है कि दाहिमा वीर चामण्डराय तथा कैमास की वहिन थी जिसका विवाह  
दिल्लीपति पृथ्वीराज चौहान के साथ हुआ था।

## दूती अथवा योगनी :

पृथ्वीराज रासों के 'आदि पर्व' में योगिनी द्वारा राजा वीसलदेव को नपुंसक किए जाने  
की कथा प्राप्त होती है। महाराज वीसलदेव चौहान की अनेकानेक रानियाँ थी, किन्तु वह  
रम्भा समान रूपवती गुण शीला पाँवर पटरानी को अधिक स्नेह करते थे। उनका अधिकांश  
समय उसी के साथ व्यतीत होता था। अतः अन्य समस्त रानियों ने मिलकर राजा को ही  
नपुंसक बनवाने की योजना बनाई।

१. राघवहादुर गौरीशंकर हीराचन्द ओझा, पृथ्वीराज रासों का निर्माण काल, कोशोत्सव  
स्मारक संग्रह, पृ० ४८।

२. कविराज मोहनसिंह, पृथ्वीराज रासों, भाग १, साहित्य संस्थान उदयपुर, सम्पादकीय,  
पृ० १३।

पटरागिनि पांवर रूप रंभा गुन जुब्बन ।  
 प्रमाद प्रान समान नही विसस्त इवक् छिन् ॥  
 रतिभोग सुरति तिन सौ सवा , कवहुंक आनन विच्छ त्रिय ।  
 विक्षि सौति सकल एकत्र भय पुरपातन तिन गन्ध किय ॥ छं० ३७० ॥<sup>१</sup>

राजा को नपुंसक बनाने के लिए रानियों को योगिनी की ही सहायता लेनी पड़ी ।  
 योगिनी का यह दावा है कि —

तुम कहौ कहुं जीव तैं बद्ध । तुम कहौ करौ नारी विरुद्ध ॥  
 तुम कहौ करौ काम तैं भंग । ज्यौ नारी अंग त्यौ पुरुष अंग ॥ छं० ३७६ ॥<sup>१</sup>

निश्चित ही इस कथा में सत्य का लेशमात्र भी नहीं है । कवि को कथा को रोचक बनाने के लिए ही ऐसी काल्पनिक कथाओं का सहारा लेना अभीष्ट रहा होगा । इस कथा से रासो कालीन स्थिति पर अवश्य कुछ प्रकाश पड़ता है । निश्चित ही उस युग में मनुष्यों का मंत्र-तंत्र, जादू-टोना आदि में विश्वास रहा होगा ।

### पद्मावती :

पूर्व दिशा में एक गढ़, जहाँ का राजा बड़ा पराक्रमी, था, तथा उसका नाम विजयसुर था । उसके घर में कुंवर पद्मसेन नाम की स्त्री थी, जिसके गर्भ से एक अत्यन्त सुन्दर पुत्री ने जन्म लिया जो चन्द्र और सूर्य की कलाओं के समान थी—

पद्मसेन कुंवर सुघर , ता घर नारि सुजान ।  
 ता उर इक पुत्री प्रगट , मनहुं कला ससि मान ॥ छं० ४ ॥<sup>१</sup>

यही समुद्रशिखर गढ़ की राजकुमारी एक दिन उद्यान में खेलते समय एक शुक पकड़ लायी तथा उसे अपने महल में रत्न जटित पिंजड़े में रखा । उस राजकुमारी का चित्त शुक में इतना रम गया कि उसने सब खेल छोड़ कर उसे राम-नाम पढ़ाना प्रारम्भ कर दिया—

तिहीं महल रष्यत भइय । गइय खेल सब भुल्ल ॥  
 चित्त चहुट्यों कीर सौ । राम पढ़ावत फुल्लि ॥ छं० १० ॥<sup>१</sup>

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ३७०, सं० १ ।
२. वही, छं० ३७६, सं० १ ।
३. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० ४, सं० १७ ।
४. वही, छं० ८, सं० १७ ।
५. वही, छं० १०, सं० १७ ।

की शुक्र राजकुमारी पद्मावती के सौंदर्य, गुण आदि को देखकर अपने मन में विचार करने लगा कि यदि यह पृथ्वीराज को प्राप्त हो तो बहुत अच्छा था ।<sup>१</sup> एक दिन पद्मावती द्वारा बना देन पृष्ठने पर शुक कहता है कि हिन्दुओं के गढ़ दिल्ली का निवासी हूँ, जहाँ के शासक मुमूक्षु के सम्राट पृथ्वीराज मानों इन्द्र के अवतार हों —

उच्चरिय कीर सुनि बयन । हिन्दवान दिल्ली गढ़ अपन ।

देव अवतार, चुहान । पृथ्वीराजह सूर सुम्भार ॥ छं० १५ ॥<sup>१</sup>

वीर पृथ्वीराज का नाम आते ही चतुर शुक ने पृथ्वीराज के सौन्दर्य तथा पराक्रम का प्रशस्ति गान करना प्रारम्भ कर दिया जिससे राजकुमारी पद्मावती के हृदय पर बाँछित प्रभाव पड़ा कवि लिखता है —

सुनत श्रवन प्रियराज जस । उमग वाल विधु अग ।

तन मन चित चहुआन पर । बस्यों सुरत्तह रंग ॥ छं० १७ ॥<sup>२</sup>

वयः प्राप्त होने पर राजकुमारी की माता-पिता को उसके विवाह की चिन्ता हुई । उन्होंने पुरोहित भेज कर कमार्यगढ़ के राजा कुमोदमनि से सम्बन्ध निश्चित कर दिया । मुग्धा-मोहिता पद्मावती ने जब कमार्यगढ़ के राजा कुमोदमनि के साथ अपना विवाह होने तथा वारात भाने की बात सुनी तो उसे अत्यन्त दुःख हुआ तथा शुक को एकान्त में बुलाकर दिल्लीपति चौहान को शीघ्र बुला लाने के लिए कहा —

पद्मावति बिलपि बर वाल बेलि । कही कीर साँवत तब होअ केलि । छं० ४१ ।

मट जाहु तुम्ह कीर दिल्ली सुदेस । वरं चाहवान आनी नरेश ॥ छं० ४२ ॥<sup>३</sup>

इतना ही नहीं, 'ज्यों रुक्मनि कन्हारवरी' द्वारा अपने पत्र में प्रेरणा देती हुई, शिव-पूजन के समय अपना हरण करने की बात भी स्पष्ट लिख भेजी —

ज्यों रुक्मनि कन्हार वरिय । ज्यों वरि संनरि कान्त ।

सिय मंडप पच्छिम दिसा । पूजि समय स प्रान्त ॥ छं० ४५ ॥<sup>४</sup>

कूजल शुक आठ प्रहर में ही पद्मावती की सूचना लेकर दिल्ली जा पहुँचा—

लं पत्री शुक यों चलयो । उद्यो गगनि गहि बाज ।

जहँ दिल्ली प्रविराज नर । अट्ट जाम मे जाव ॥ छं० ४६ ॥<sup>५</sup>

१. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० ११, स० १७ ।

२. वही, छं० १५, स० १७ ।

३. वही, छं० १७, स० १७ ।

४. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ४१-४२, स० २१ ।

५. वही, छं० ४५, स० २१ ।

६. वही, छं० ४६, स० २१ ।

दिल्लीपति चौहान पृथ्वीराज पत्र पाकर तथा शुक को देख कर उस पर रीझते-मुसकराते हुए, प्रेम के अभयदान की आकांक्षिणी के त्रास हेतु प्रस्थान की आयोजना में लग गए —

दिय कगार नृपराज कर । पुलि वंचिय प्रथिराज ।

सुक देषत मन में हंसे । कियो चलन को साज ॥ छं० ४७ ॥<sup>१</sup>

शुक ने दिल्ली से आकर विरहिणी राजकुमारी पद्मावती को पृथ्वीराज के आने की सूचना से हर्ष विह्वल कर दिया —

दिपंत पंथ दिल्ली दिसानं । सुष भयो सुक जब मिल्यो आन ॥ छं० ५२ ॥

संदेस सुनत आनन्द नैन । उमगीय बाल मनमय्य सेन ॥ छं० ५३ ॥<sup>२</sup>

तथा प्रेम से परिपूर्ण राजकन्या प्रियतम पृथ्वीराज से मिलन कामना करती हुई अपने शृंगार में तनमय हो गई —

तन विकट चीर डार्यो उत्तारि । मज्जन भेंक नव सत सिंगार ॥ छं० ५४ ॥

भूषन मंगाय नप सिष अनूप । सजि सेन मनो मनमय्य सूप ॥ छं० ५५ ॥<sup>३</sup>

अधिक कहने की आवश्यकता नहीं, अपहरण तथा युद्ध के उपरान्त राजकुमारी पद्मावती ने अपने मनचाहे पति के साथ दिल्ली के राजभवन में विलास किया ।

## ऐतिहासिकता :

श्री अमृतलाल शील संमुद्रशिखरगढ़ की पद्मावती को अप्रामाणिक एवं अतिहासिक सिद्ध करते हुए लिखते हैं कि—“लेखक ने राढ़ के पालवंशी प्रतापी राजाओं के नाम सुनें होंगे और वारेन्द्र भूमि के प्रतापी राजा विजयसेन का नाम सुना होगा, इन दोनों को मिला कर उसने विजयपाल का नाम गढ़ लिखा होगा । इस विवाह की कहानी को यदि अधिक ध्यान देकर देखें तो प्रतीत होगा कि रासो के रसिक लेखक ने महाभारत में वर्णित भगवान श्रीकृष्ण और रुक्मिणी के विवाह की कथा का अनुकरण कर यह एक नई कथा गढ़ कर लिख दी है । पृथ्वीराज को भी कृष्ण से उपमित कर उनको भी एक अवतार बनाना चाहा । रासो के इस अंश से ऐतिहासिक सत्य संवाद निकालना और मरु भूमि की बालु की राशि से विशुद्ध पय उत्पन्न करना किसी गुप्त विद्या से ही संभव हो सकता है ।”<sup>४</sup>

दूसरी ओर डॉ० दशरथ शर्मा “कान्हू दे प्रबंध” के आधार पर यह सिद्ध करने का प्रयत्न करते हैं कि पृथ्वीराज की रानी पाहलण की पुत्री पद्मावती किसी राज्य प्रधान के

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ४७, स० २१ ।

२. वही, छं० ५२-५३, स० २१ ।

३. वही, छं० ५४-५५, स० २१ ।

४. श्री अमृतलाल शील, सरस्वती, भाग २७, संख्या ५, पृ० ५६१-६२, सन् १९२६ ई० ।

उनका कारण बनी थी तथा उसके इस कार्य से चाहमान राज्य की अत्यधिक क्षति उठानी पड़ी थी। उनका विचार है कि—अपरोक्ष रूप से चाहमान साम्राज्य के सर्वनाश का सूत्रपात्र प्रधान मंत्री कैमाम के वध द्वारा कराने वाली आवू के परमार राजा की पुत्री, रासो की महारानी इच्छिनी और पद्मावती संभवतः एक ही रही हों, उनका पृथक्करण उस समय हुआ होगा जब चारण और भाट चौहान इतिहास को अशतः भूल चुके थे। इसी से उन्हें इच्छिनी की आवू के राजा सलग की पुत्री और जैत परमार की बहन बनाना पड़ा, यद्यपि पृथ्वीराज की गद्दी नगीनी से लगाकर उसकी मृत्यु के बहुत पीछे तक आवू का राजा (प्रह्लादन या पाहलन का बड़ा भाई) धारावर्ष या और शायद इसी से पूर्व दिशा में उन्हें समुद्रशिखर नाम के एक ऐसे दुर्ग की कल्पना करनी पड़ी जिसके विषय में इतिहास कुछ नहीं जानता ..... सुए की कथा में प्रचलित लोककथानों, बल्कि पुराणों, जायसी के पद्मावती से भले ही ली गई हो, परन्तु पद्मावती स्वयं कल्पित न थी..... साहित्य की दृष्टि से रासो का 'पद्मावती' समय बहुत सुन्दर है, किन्तु अपने सत्य और असत्य के अविवेच्य समिश्रण के कारण ऐतिहासिक के लिए यह प्रायः निरर्थक है”

टी० दशरथ शर्मा जी के कथन से इतना तो स्पष्ट है कि वे पद्मावती के अस्तित्व में विश्वास करते हैं।

फविराव मोहनसिंह पद्मावती को पूर्ण रूपेण ऐतिहासिक मानते हुए लिखते हैं—“पद्मावती के विषय में मिश्रवर डॉ० दशरथ शर्मा ने “कान्हड़ देव रासो” से प्रमाण दिए हैं। उसमें उसके पिता का नाम “पाहनवई” लिखा मिलता है, जिससे उन्होंने आवू वाले धारावर्ष के छोटे भाई प्रह्लादन का अनुमान लगाया है। रासो में पद्मावती के पिता का नाम पद्मसेन लिखा है। पद्म का नाम पर्याय रूप पुरयन भी होता है, जो अपभ्रंश में पुलयन, पुल्लन, पालन आदि रूप में हो जाना संभव है। इन विकृत रूपों से पद्मावती के पिता पद्मसेन का होना प्रमाणित हो जाता है। इसी पद्मसेन की पुत्री पद्मावती के साथ पृथ्वीराज का विवाह हुआ और आल्हा ऊदल के लोक गीतों से तथा रासो के अन्त में दिए हुए पद्मावती गण्ड एवं परिमाल रासो (महोवा खंड) से स्पष्ट होता है कि इसी विवाह के अवसर पर युद्ध हुआ उसमें पृथ्वीराज के घायल सामंत रणक्षेत्र में रह गए उन्हें महोबे के राजा परिमाल (परमदि) ने मरवा डाला, इसीलिए पृथ्वीराज ने महोबे राज्य का सर्वनाश किया जिसका प्रमाण मदनपुर के मन्दिर के स्तंभ वाले वि० सं० १२३९ के लेख में मिलता है।”

उपपुंक्त विद्वानों के मतों को देखकर राजकुमारी पद्मावती के अस्तित्व में आकायक सन्देह नहीं किया जा सकता।

१. टी० दशरथ शर्मा, मरुमारती, वर्ष १, अंक १, पृ० २७-२८, सितम्बर १९५२ ई०।
२. फविराव मोहनसिंह, पृथ्वीराज रासो, प्रथम भाग, सम्पादकीय पृ० १३, साहित्य संस्थान उदयपुर।

## पृथाबाई :

पृथ्वीराज रासो के अनुसार पृथाबाई अंजमेरपति सीमेश्वर की पुत्री तथा पृथ्वीराज चौहान की बहन थी । 'पृथा विवाह समय' के अन्तर्गत कवि ने सूचना दी है कि इनका विवाह मेवाड़ाधिपति रावल समरसिंह से हुआ था । रासो का अप्रकाशित मध्यम संस्करण भी उपर्युक्त कथन का समर्थन करता है ।

## पुंडीरनी :

महाराज पृथ्वीराज चौहान को रानी इच्छिनी से विवाह किए हुए अभी एक ही वर्ष हुआ था कि उन्होंने सुना कि चन्दपुण्डोर के घर एक अत्यन्त सुन्दरी कुमारी है, जो विस्तृत गुणों वाली है । उसकी प्रशंसा सुन कर पृथ्वीराज के मन में प्रेम उदय हो गया—

चन्द पुंडोर नरेस घर, सुंदरि अति सुकुमारि ।

प्रेम प्रगट राजन मयो, गुन सुनत विस्तारि ॥ छं० ३ ।

महाराज पृथ्वीराज पुण्डोरनी में अनुरक्त हो गए तथा चन्दपुण्डोर से अपनी पुत्री व्याहने के लिए कहला भेजा । चन्दपुण्डोर ने महाराज पृथ्वीराज की आज्ञा मानकर, हीरे के तुल्य अनुपम रूपवती कुमारी का ग्याह कर दिया —

सुनि ओतान नरिद हुआ, कहिय बत्त पुण्डोर ।

रूप अनुपम राज बरि, दिय राजन हित हीर ॥ छं० ४ ।

इतना ही नहीं, लग्न दिवस आने पर वीर चन्द पुण्डोर ने अपनी पुत्री का पाणिग्रहण पृथ्वीराज को कराया तथा दहेज स्वरूप उसने सात हाथी, इकहत्तर घोड़े और नग तथा मोतियों से जड़ा हुआ बहुत सा सामान दिया—

लग्न सु दिन हयलेव करि, चन्द सत्त गज राज ।

इक अगार सत्तरि सु हय, नग मोतो बहु साज ॥ छं० ५ ।

## ऐतिहासिकता :

कविराव मोहनसिंह चन्दपुण्डोर को ऐतिहासिक पात्र मानते हुए लिखते हैं कि 'रासो

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, पृथा विवाह समय ।
२. रासो की हस्तलिखित प्रति, पृथा विवाह स० ५, रा० ए० सो० लंदन ।
३. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर छं० ३, स० १६ ।
४. वही, छं० ४, स० १६ ।
५. वही, छं० ५, स० १६ ।

के मेघादुत्तम चन्द पुण्डरीर हरिराय का पुत्र था और 'हम्मीर काव्य' के लेखानुसार चन्द्रराज श्री गोविन्दराज का पुत्र था। वही नासो वाला चन्दपुण्डरीर प्रतीत होता है। उसके पिता का नाम हनिगय और गोविन्दराय पर्याय रूप में दोनों एक हैं। उपर्युक्त चन्दपुण्डरीर की पुत्री में पृथ्वीराज का विवाह हुआ था।<sup>१</sup>

कविराय मोहनसिंह के कथन से स्पष्ट है कि चन्द पुण्डरीर की कन्या का विवाह पृथ्वी-राज चौहान से हुआ था। उस युग की प्रवृत्ति देखते हुए सम्भव है ऐसी घटना हुई हो, किन्तु ऐतिहासिक सामग्री के अभाव में निश्चित एवं निणयिक मत देना सम्भव नहीं है।

**लाले ( खत्राणी वाला ) :**

लाले (गुत्रीवाला) अत्यन्त रूपवती थी। 'भोलाराय समय १२' में वर्णित है कि गुर्ज-रेश्वर भोलाराय भीम देव चालुक्य के मंत्री अमरसिंह सेवरा ने मन्त्र-तन्त्र के बल पर तथा लाले नामक अत्यन्त रूपवती स्त्री के द्वारा महाराज पृथ्वीराज चौहान के प्रसिद्ध मंत्री कैमास के पास भेज कर, वशीकरण करके, पृथ्वीराज के नागौर नगर पर चालुक्यराज भीमदेव की आन अथवा दुहाई फिरवा दी थी।<sup>१</sup>

लाले (गुत्राणी वाला) का विवरण 'रासो' के लघुतम, मध्यम एवं बृहत् रूपान्तरों में समान रूप से मिलता है। किन्तु इतिहास लाले खत्राणी के विषय में सर्वथा मौन है।

**संयोगिता :**

रासोकार ने राजा जयचन्द के एक संयोगिता नामक कन्या का उल्लेख किया है। कवि ने इसके विवाह सम्बंध की घटना को अत्यन्त रोचक ढंग से प्रस्तुत किया है। रासो के अति-रिक्त आल्हा-छट, हम्मीर रासो, मुर्जन चरित्र, आदि काव्य ग्रन्थों में भी संयोगिता का वृत्तान्त मिलता है।

'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार संयोगिता ने राजा जयचन्द की पट्टरानी जुन्हाई के गर्भ में जन्म लिया था। कवि ने संयोगिता की जन्म कथा बड़े विचित्र ढंग से प्रस्तुत की है। चण्डी ने, महाभारत तथा रामायण के महायुद्धों के उपरान्त भी तृपित रहने के फलस्वरूप इन्द्रदेव से पृथ्वी पर पुनः रुधिर धारा प्रवाहित करने का आग्रह किया जिससे चिरकाल की त्रासा शान्ति हो सके। देव-घिदेव इन्द्र ने चण्डी को पृथ्वीराज चौहान तथा पंगराज के मध्य होने वाले संग्राम में क्षुधा पूर्ति का आश्वासन दिया तथा युद्ध को असम्भावी बनाने के लिए विविध जाल रचना, प्रारम्भ की। महाराज इन्द्र ने मति प्रधान गन्धर्व को बुलाकर भाषा दी कि मृत्यु लोक में जा कर पंगराज तथा सम्भरेश के मध्य शत्रुता का बीजारोपण

१. कविराय मोहनसिंह पृथ्वीराज रासो, प्रथम भाग, सम्पादकीय, पृ० १२-१३, साहित्य सम्मान उदयपुर।

२. पृथ्वीराज रासो नागरी प्रचारिणी सभा काशी, भोलाराय समय १२।

करे। देवेन्द्र की आज्ञा मानकर गन्धर्व ने कन्नौज की ओर प्रस्थान किया, कुछ काल तक नगर सौन्दर्य अवलोकन करने के उपरान्त, उसने मदनिका ब्राह्मणी के प्रागण स्थित एक वृक्ष पर रात्रि व्यतीत की। लौटने पर उसने अपनी माया नामक पत्नी से कन्नौज का विस्तृत वर्णन किया जिससे प्रभावित होकर माया ने संयोगिता के पूर्व जन्म की कथा तथा कन्नौजपति पंगराज के यहाँ उत्पन्न होने की घटना जानने की जिज्ञासा की।

रासोकार ने 'संयोगिता पूर्व जन्म प्रस्ताव' में संयोगिता को रम्भा नामक अप्सरा का अवतार बताया है। इन्द्र द्वारा पतिष मंजुघोषा अप्सरा को जरज के पुत्र सुमंत मुनि का तप भंग करने के अपराध में मृत्युलोक में जन्म ग्रहण कर जयचन्द्र तथा पृथ्वीराज में घोर संग्रमो-परान्त पुनः स्वर्ग जाने का शाप मिला।<sup>१</sup> इसके कुछ ही कालोपरान्त रम्भा को देवेन्द्र की समा-मध्य शिव की उपस्थिति में भी इन्द्र की वन्दना करने के फलस्वरूप पुनः शिव के शाप का भागी बनना पड़ा।<sup>२</sup>

अतः स्वर्ग की अप्सरा अपने समस्त सौन्दर्य को धारण करके कन्नौज पति पंगराज के घर में उत्पन्न हुई। संयोगिता बाल चन्द्रमा के समान दिन प्रति दिन विकसित होती गई। कवि चन्द उसके नख-शिख का वर्णन करते नहीं हुए अघाता।<sup>३</sup> राजा पंगराज द्वारा राजसूय यज्ञ के आयोजन तथा संयोगिता स्वयंवर के अवसर पर राजकुमारी की अवस्था केवल १२ वर्ष की थी। इस यज्ञ की आयोजना आनन्द सम्बत् १११४ में हुई थी। अतः संयोगिता का जन्म आनन्द सम्बत् ११३३ में माना जा सकता है।

मदनिका ब्राह्मणी द्वारा राजकुमारी संयोगिता को पृथ्वीराज के विषय में ज्ञात हुआ, जिसके गुण श्रवण कर वह उस पर मुग्ध हो गई तथा स्वयंवर के मध्य पृथ्वीराज चौहान की स्वर्ण प्रतिमा को तीन बार वरमाला पहना कर अपना पति घोषित किया। राजा जयचन्द्र ने उपरोक्त घटना से कुपित हो राजकुमारी को गंगातट स्थित प्रासाद में दण्ड स्वरूप निर्वासित कर दिया। पृथ्वीराज अपनी मूर्ति का वरण करने का समाचार पा तुरन्त ही कन्नौज की ओर चल पड़ा। राजा पृथ्वीराज कन्नौज नगर की शोभा देखता-भालता, नगर के दक्षिण प्रान्त में गंगा किनारे संयोगिता के महलों की ओर जा पहुँचा तथा गंगा जल की तरंगों के आनन्द में खो गया। इसी बीच घोड़े के हार का एक मोती टूट कर गंगा में जा गिरा, उस पर सैकड़ों मछलियाँ टूट पड़ी। वह उस मोती को कभी ऊपर लाती कभी नीचे ले जाती। यह देख कर पृथ्वीराज ने अपार आनन्द का अनुभव किया तथा हार में से मोती तोड़-तोड़ कर मछलियों को चुगाना प्रारम्भ कर दिया।

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १२२९-३४, स० ४५।

२. वही, पृ० १२५३-५४, स० ४५।

३. वही पृ० १२५९, स० ४५।

४. वही, छं० १०६-२४, स० ६२।



दासी द्वारा संयोगिता को जब यह ज्ञात हुआ कि पृथ्वीराज आ गया है तो उसके शरीर में रोनांन हो गया तथा उसके आनन्द का पारावार न रहा । दासी पृथ्वीराज को महलों में बुला ले गई । महलों में पैर रखते ही व्याह की तैयारी होने लगी । विवाह में केवल सखियों के अतिरिक्त अन्य कोई न था । विवाह सम्पन्न हो जाने के बाद पृथ्वीराज अपने डेरे में लौट आया । संयोगिता विरह का अनुभव करने लगी । राजा के हाथ में कंगन बंधा हुआ था, ललाट पर टीका लगा था, तथा गले में मोहन माला न थी । ऐसी दशा में पृथ्वीराज को देखकर चाचा कन्हू ने मुस्करा कर पूछा यह क्या बात है । किन्तु राजा ने लज्जावश नीचा सिर करके उत्तर दिया, क्या कहूँ केवल उसी का प्रण नहीं था मेरी भी प्रतिज्ञा थी और यहाँ आकर भी प्रतिज्ञा पूर्ण न करता तो कोई क्या कहता । किन्तु मुझें तो आप लोग आँखें दिखा रहे हैं । इसलिए उसे (संयोगिता को) रोती हुई छोड़कर आ रहा है । यह सुनते ही काका कन्हू कड़क कर बोले, खूब किया, पर यह क्या किया, बहू को वहीं छोड़ आए । धिक्कार है, कोई अपनी स्त्री को भी इस प्रकार छोड़ता है । चिन्ता क्या थी, जब-तब हम सौ सामन्तों में से एक भी जीवित रहेगा, तुम्हारा बाल भी बाँका नहीं हो सकता । इतना सुनते ही पृथ्वीराज संयोगिता को लेने पुनः चल दिया । संयोगिता का अवहरण करके महाराज पृथ्वीराज अपनी सेना से फिर आ मिला ।"

पंगराज को कन्या अवहरण की सूचना मिलने पर, वह क्रोध से भर गया । चार दिन तक घोर संग्राम होता रहा, अन्त में भीरु पृथ्वीराज संयोगिता को लेकर दिल्ली सकुशल पहुँच गया ।

रासो की उपयुक्त कथा को काल्पनिक एवं अप्रमाणिक सिद्ध करते हुए ओझा जी लिखते हैं—“जयचन्द बहुत दानी राजा था । उसके कई उपलब्ध दान पात्रों से पाया जाता है कि उसने प्रसंग-प्रसंग पर अनेक-अनेक भूमि दान किए । यदि उसने राजसूय यज्ञ किया होता तो उस महत्वपूर्ण अवसर पर वह बहुत अधिक दान करता, परन्तु उसके सम्बंध का न तो भवन्तक कोई दान पत्र ही मिला और न किसी शिलालेख या प्राचीन पुस्तक में उसका उल्लेख है । इसी तरह पृथ्वीराज और जयचन्द की परस्पर लड़ाई और संयोगिता स्वयंवर की कथा भी ऐतिहासिक नहीं है । ग्वालियर के तैवर राजा-वीरम के दरबार के प्रसिद्ध कवि जयचन्द ने वि० सं० १४६० के आस पास संस्कृत ‘हम्मीर महाकाव्य’ बनाया, जिसमें पृथ्वीराज का विस्तृत वर्णन किया है । और उसी की रची हुई ‘रम्भामजरी’ नाम की नाटिका में उसने जयचन्द को उसका नायक बनाया है, जिसकी प्रशंसा में लगभग दो पृष्ठ उसके विशेषणों के दिए हैं । इन दोनों पुस्तकों में पृथ्वीराज और जयचन्द की पारस्परिक लड़ाई, राजसूय यज्ञ और संयोगिता के स्वयंवर का उल्लेख तक नहीं है । इससे स्पष्ट है कि वि० सं० १४६० तक ये कथाएँ प्रसिद्धि में नहीं आई थी ।”

१. रायबहादुर गोरीशंकर हीराचन्द ओझा, पृथ्वीराज रासो का निर्माण काल, कोशोत्सव स्मारक संग्रह, पृ० ५८ ।

श्री बीक्षा जी के उपर्युक्त प्रमाणों को निराधार सिद्ध करते हुए डॉ० दशरथ शर्मा ने लिखा है कि—‘हम्मीर महाकाव्य’ निःसंशय इन घटनाओं के विषय में मौन है। शायद आप इस मौन साक्षी को पर्याप्त मानकर संयोगिता की अनैतिहासिकता के विरुद्ध निर्णय दें। किन्तु क्या ‘हम्मीर महाकाव्य’ पृथ्वीराज के नागार्जुन, भादानक जाति, चन्देल राजा परमर्दिन, चालुक्यराय भीमदेव द्वितीय एवं परमार राजा धारावर्षादि के साथ हुए युद्धों के विषय में भी उतना ही मौन नहीं है? ये सर्वथा ऐतिहासिक बातें हैं। यदि ‘हम्मीर महाकाव्य’ का मौन इन्हें असिद्ध न कर सके तो उसका मौन कुछ विशेष अर्थकर नहीं कहा जा सकता। संयोगिता के नाम का उसमें न आना, उसे अनैतिहासिक सिद्ध नहीं कर सकता और न जयचन्द और पृथ्वीराज का परस्पर संग्राम इस मौन के कारण अनैतिहासिक है। आप सन् १९९० के लगभग लिखित ‘जयचन्द प्रवध’ पढ़ें। आपको ज्ञात होगा कि पृथ्वीराज के मरने पर जयचन्द ने वर्धापन आरम्भ किया था, घी के दिए जलवाये थे, शहर भर में आनन्द मनाया गया था, रही विचारी ‘रम्भा मंजरी’ वह तो ‘हम्मीर महाकाव्य’ से भी कहीं अधिक अप्रमाणिक है। उसके ‘कादम्बरी’ की शैली पर लिखे विशेषणों के आधार पर जयचन्द की जीवनी का निर्माण करना धूलि पर मकान बनाने के समान है।” इसी लेख में डॉ० दशरथ शर्मा ‘पृथ्वीराज विजय’ महाकाव्य की नायिका तथा रासो की नायिका संयोगिता में सामंजस्य स्थापित करते हुए लिखते हैं—“पृथ्वीराज के इतिहास के लिए सबसे प्राचीन एवं सबसे अधिक प्रमाणिक ग्रन्थ ‘पृथ्वीराज विजय’ है। .....प्राप्त अंश से हमें ज्ञात होता है कि पृथ्वीराज ने अनेक विवाह किए थे। सभी रानियाँ अत्यन्त सुन्दर थीं किन्तु एक दिन अपनी चित्रशाला में तिलोत्तमा का चित्र देख कर राजा प्रेमान्मत्त हो गया। कारण यह था कि राजा राम का अवतार था और तिलोत्तमा ने सीता का अभिनय कर पूर्व जन्म में उसे बहुत प्रसन्न किया था। वन्दी पृथ्वीभट को अत्यन्त चिन्ता हुई। किन्तु उसे निश्चय था कि पृथ्वीराज का किसी तरह अहित न होगा, तिलोत्तमा किसी राजकुमारी का रूप ग्रहण कर अवश्य उसे वरण करेगी। वास्तव में वह अवतार ले भी चुकी थी। वह स्वर्ग में नृत्य करते-करते थक गयी थी।

अन्तिम प्राप्त सर्ग के अन्तिम चार श्लोक अत्यन्त श्रुति पूर्ण हैं। ७४वें श्लोक की श्रुति टीका में गंगा का नाम है। ७५वें श्लोक में नाक नदी तटस्थित पद वर्तमान है। क्या इससे अनुमान किया जाय कि तिलोत्तमा कहीं नाक नदी गंगा के किनारे राजकुमारी के रूप में अवतीर्ण हुई थी? ७७वें एवं ७६वें श्लोक के अविशिष्टांश से यह ध्वनि निकलती है कि जिस प्रकार कमलनी चन्द्रभा को सामने आया देखकर भयभीत होती है एवं सूर्य को स्मरण

कहती है उसी तरह नायिका किसी अनमियत पुरुष के विवाह प्रस्ताव से उद्विग्न होकर पृथ्वीराज का स्मरण कर रही है।

रामो में दी हुई संयोगिता की कथा एवं पृथ्वीराज विजय के इस युद्धित प्रकरण में निम्नलिखित समानतायें दर्शनीय हैं—

(१) संयोगिता रम्भा का अवतार थी, पृथ्वीराज विजय की राजकुमारी तिलोत्तमा का।

(२) पृथ्वीराज इन दोनों में उन्हीं पर बिना देखे ही अनुरक्त हुआ था।

(३) इस अनुगन के पूर्व 'रासो' और 'पृथ्वीराज विजय' पृथ्वीराज के अन्य कई प्रियाओं का वर्णन करते हैं।

(४) दोनों काव्यों की नायिकाओं का सम्भवतः गंगा के तट पर स्थित किसी स्थान से सम्बंध था।

(५) दोनों ही का किसी अनमियत पुरुष से विवाह निश्चित हुआ था।

'पृथ्वीराज विजय' की सम्पूर्ण कथा 'रासो' की संयोगिता की कथा से कितना मेल पाती है, यह बतलाना अभी कठिन ही नहीं प्रायः असंभव है, किन्तु यह अवश्य निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि संयोगिता सी किसी राजकुमारी से पृथ्वीराज के प्रणय एवं परिणय का वर्णन 'पृथ्वीराज विजय' में भी वर्तमान था।

पृथ्वीराज की ऐतिहासिक तथा वीरानेरी की एक लाख अक्षर वाली प्रति को प्रामाणिक मानते हुए, डॉ० दशरथ शर्मा ने संयोगिता-अपहरण की अकबर काल तक प्रसिद्ध बताते हुए लिखा है—“संयोगिता हरण और जयचन्द से युद्ध की कथा कम से कम अकबर के समय में काफी प्रसिद्धि प्राप्त कर चुकी थी अकबर के प्रसिद्ध मंत्री ने अकबर नामा एवं आईने-अकबरी के लेखक अबुलफजल ने इस विषय का अत्यन्त रोचक वर्णन दिया है। हम राजस्थानी के पाठकों के लिए उसका अनुवाद उपस्थित करते हैं—“क्या प्रसिद्ध है कि हिन्दुस्तान का सम्राट राजा जयचन्द राठीड़ इस समय दिल्ली में राज्य कर रहा था और दूसरे राजा कुछ हद तक उसका प्रभुत्व स्वीकार करते थे। वह स्वयं भी इतना उदार हृदय था कि ईरान और तूरान के निवासी उसके यहाँ नौकरी करते थे। उसने अपने चक्रवर्तित्व के परिचायक यज्ञ करने का निश्चय किया और उसके लिए तैयारियाँ शुरू कर दी। इस यज्ञ का नियम था कि सेवादि का सब काम राजा लोग ही करें और राजा के यहाँ उस समय रसोई बनाना और आग जलाना भी उनके (नात्कालिका) कार्य का एक अंग था। उसने यह भी वचन दिया था कि एकत्रित राजाओं में सबसे बहादुर व्यक्ति को उसकी कन्या विवाह दी जायगी। राजा पियौरा ने इस उत्सव में भाग लेने का निश्चय किया था, परन्तु उसका एक दरबारी अकस्मात् कह उठा कि

चौहानों का स्वतंत्र राज्य रहते हुए राठौर राजा को यज्ञ करने का अधिकार नहीं है। इससे पृथ्वीराज का पैतृक गर्व जाग उठा और उसने यज्ञ में न जाने का निश्चय किया। राजा जयचन्द ने उस पर आक्रमण करने का विचार किया, परन्तु उसके मंत्रियों ने उत्सव की निकट तिथि और युद्ध के समय लगने का ध्यान दिलाते हुए उसे आक्रमण करने से रोक दिया। यज्ञ को संपूर्ण बनाने के लिए, राजा पिथौरा की स्वर्ण मूर्ति बनायी गयी और उसे द्वार रक्षक के स्थान पर रखा गया। इस समाचार से क्रुद्ध होकर राजा पिथौरा ने वेश बदला, और ५०० चुने हुए सामन्त लेकर यज्ञ में पहुंचा। वह मूर्ति को उठा लाया, बहुत से आदमियों को मार डाला और शीघ्रता से वापस आ गया। इस साहस के कार्य को सुन कर जयचन्द की पुत्री जो दूसरे किसी की वागदत्ता थी—पृथ्वीराज से प्रेम करने लगी और उसने दूसरे आदमी से विवाह करना मंजूर न किया। इस व्यवहार से रुष्ट होकर उसके पिता ने उसे राजमहल से निकाल दिया और उसके लिए अलग महल बनवाया। इस समाचार से उन्मत्त होकर पिथौरा उससे विवाह करने का निश्चय कर वापस लौटा। यह इन्तजाम किया गया कि चन्द जो कावुल के बन्दियों की बराबरी करने वाला था जयचन्द की स्तुति करने के बहाने उसके दरबार में पहुंचे और राजा कुछ चुनिन्दा साथियों सहित उसका सेवक बन कर जाय। प्रेम ने इस निश्चय को कार्य में परिणत कर दिया और इस चातुर्य पूर्ण उपाय एवं अतिशयनी वीरता के सहारे उसने अपनी इच्छा पूर्ण की और शूरवीरता के अनेक आश्चर्यकारी कार्य कर अपने राज्य में पहुंचा, उसके सौ सामन्त अनेक रूप धारण कर उसके साथ गए थे। उन्होंने राजा को भगाने में मदद दी और उसका पीछा करने वालों को हराया। गोविन्दराय गहलीत ने सर्व प्रथम युद्ध किया और बहादुरी से लड़ता हुआ मारा गया। उसने सात हजार शत्रुओं का संहार किया। तदन्तर नरसिंहदेव, चन्द पुण्डरीर, सरघोल सोलंकी और अनेक दो भाइयों पाल्हणदेव कछवाहा पहले दिन की लड़ाई में आश्चर्यकारी वीरता के कार्य कर युद्ध में काम आए और बाकी सब सामन्त भी खेत रहे। चन्द और उसके दो भाइयों सहित राजा दुलहिन को दिल्ली लाया और तमाम संसार उसके इस कार्य से आश्चर्य चकित हो गया”।<sup>१</sup>

उपर्युक्त कथा को पढ़ लेने के बाद अब इसे १५ वीं-१६ वीं शताब्दी का कहने का कौन साहस करेगा। यदि अब भी विश्वास न हुआ हो तो सुर्जन चरित्र जो आईने अकबरी से सम्भवतः कुछ प्राचीन है, उसका अवलोकन करना चाहिए। डॉ० दशरथ शर्मा ‘सुर्जन चरित’ की कथा संक्षेप में इस प्रकार वर्णन करते हैं—एक बार पृथ्वीराज नगर से बाहर विहार भूमि में वास कर रहा था प्रतिहारी ने आकर निवेदन किया कि कान्यकुब्ज से आई हुई एक स्त्री आप का दर्शन करना चाहती है। आज्ञा प्राप्त कर उसने उस स्त्री को अन्दर बुलाया। प्रश्न पूछने पर नवागन्तुक स्त्री ने निवेदन किया “नी लाख असवारों के स्वामी कान्यकुब्जेश्वर के

- 
१. डॉ० दशरथ शर्मा, पृथ्वीराज रासो की कथाओं का ऐतिहासिक आधार, राजस्थानी, भाग ३, अंक ३, पृ० ७-९, जनवरी सन् १९४०, कलकत्ता।

कान्तिमति नामक एक अत्यन्त सुन्दरी कन्या है, पिता के पास बँधी हुई कान्तिमति ने एक चान्की के मुख ने आपका मग्न मुना। स्वप्न में भी एक बार उसे आपके दर्शन हुए। तब ही ने गाना-गीता सब भूल कर आप ही की चिन्ता में मग्न है। पूछने पर कुछ उत्तर नहीं देती, कभी स्वयं ही आपका नाम रटा करती है। भाग्य भी उसके अत्यन्त प्रतिकूल हो रहा है। उसका पिता अभी एक अन्य राजा को अपना जमाई बनाना चाहता है। इससे अत्यन्त आहत हो कर कान्तिमती ने एकान्त में अपनी सखी से कहा उन्हें प्राप्त करने की दुर्गशा क्या बनना ही मोह का कार्य नहीं है जितना कि रसातल के पिंजरे में बन्द किसी चकोरी का यह उम्मीद करना कि वह कभी आकाश में स्थित चन्द्रमा का स्पर्श कर सकेगी। यदि मैं उनके पान सन्देश भेजू तो क्या वह हास्य का ही विषय न होगा कन्याएँ कहीं पाणिग्रहण के लिए प्रार्थना छोड़ ही किया करती है। अब तो मेरे लिए मरण ही शरण है। सखि ने कान्तिमती को आश्वासन दिया और मुझे सब बात निवेदन करने के लिए आपको सेवा में भेजा है। पृथ्वीराज ने मुत्कारते हुए उत्तर दिया मैंने कान्तिमती के गुणों का श्रोतपुरों द्वारा अनेक बार पान किया है। मैं शीघ्र ही उसकी इच्छा को पूर्ण करने का प्रयत्न करूँगा। मेरी यह इच्छा भी है कि मैं कान्यकुब्ज नगर देखूँ। तुम जाकर मेरी प्रिया को मेरे वचनों से प्रसन्न करो। मैं शीघ्र ही जाता हूँ उसने बन्दी को मुखिया बनाया, और जय के आशय, साहस आदि की परीक्षा करने और शहर के बाहर जाने के मार्गों को अच्छी तरह देखने के लिए अपना वेश छोड़ कर बन्दी का अनुसरण किया। उसके साथ १५० सामन्त थे। जयचन्द की सभा में वह दूसरे का पशुचर बन कर रहना, परन्तु अपने शिविर में सब लोग उससे राजा का सा ही व्यवहार करते। पृथ्वीराज गंगा के तीर पर निर्भय विहार किया करता। एक चाँदनी रात के समय छोड़े को पानी पिलाने के लिए गंगा तट पर पहुँचा। फैन के गन्ध से कई मछलियाँ समुद्र पर आ गई। राजा ने कीतुकवण अपने कंठ से कई मोती उनके बीच में फेंक दिए। मछलियों के झुण्ड के झुण्ड उन्हें खीले समझ कर उठ आए। कान्यकुब्जेश्वर की कन्या ने उसे इस प्रकार क्रीड़ा करते हुए देख कर अपनी सखियों से कहा कि इस प्रकार से मुक्ताओं से क्रीड़ा करने वाला मनुष्य कोई बड़ा राजा ही हो सकता है। पृथ्वीराज के समीप जो दासी भेजी गई थी उसने पृथ्वीराज को पहचाना और कहा कि वह पृथ्वीराज के अतिरिक्त और कोई नहीं हो सकता। यदि तुम्हें विश्वास न हो तो किसी दासी को भेज कर इस बात की परीक्षा कर लो। अधीश्वरों का यह स्वभाव ही होता है कि अकेले होने पर भी वे अपने आप को सेवकों से घिरा हुआ समझते हैं इस हार के समाप्त होने पर दूसरे मोतियों के लेने की इच्छा से मन में यह समझता हुआ कि पीछे कोई खड़ा है, यह अपना हाथ पसारेंगा। कीतुकवण राजकुमारी ने उसकी सलाह के अनुसार कार्य किया जब पृथ्वीराज ने हार समाप्त होने पर पीछे की तरफ हाथ पसारता तो दासी ने उसके हाथ में मुक्ता जाल रख दिया। जब वे अग्रयित मोती भी समाप्त हो गये तब दासी ने अपने गले का हार उतार कर राजा के हाथ में रख दिया। म्त्रियों के उस कण्ठ भूषण को देख कर राजा विस्मित हुआ और पीछे मुड़कर उसने उस दासी को देखा और पूछा—'तू कौन है, राक्षसी के समान तू रात्रि

के समय कहाँ घूम रही है, और तूने किस लिए मुझे बहुमूल्य मोती दिए हैं। 'उसने उत्तर दिया, हे महाभाग ! मैं राजकुमारी की दासी हूँ। आपको यहाँ विहार करते हुए उसने तथा उसकी सखियों ने देखा था और स्वभावतः उनके मन में यह प्रश्न उत्पन्न हुआ, कि आप कौन हैं ? उसकी पुरानी दासी ने बतलाया था कि यह पृथ्वीराज है परन्तु दूसरों ने इस बात को नहीं माना और इसलिए परीक्षार्थ मुझे भेजा गया है।' पृथ्वीराज ने कहा 'तुम्हारी इस गवेषणा से कोई लाभ नहीं। वह ऐसा रादेह ही क्यों करती है। मैं कल रात्रि के समय फिर आऊँगा। उस समय सब सन्देह दूर हो जायगा।' पृथ्वीराज का यह सन्देश सुनकर राजकुमारी अत्यन्त प्रसन्न हुई। दूसरे दिन जत्र आकाश में चाँदनी खिल चुकी थी, पृथ्वीराज द्वारपालों की नजर बचाकर राजकुमारी के महल में घुस गया। राजकुमारी और उसकी सखियों ने उसका स्वागत किया पृथ्वीराज ने वहाँ कुछ समय बिताकर फिर यह कहते हुए छुट्टी माँगी 'हे मंगनयानि ! कोई आदमी यह नहीं जानता कि मैं यहाँ आया हूँ यदि मैं ठीक समय पर शिविर में न पहुँचा तो मेरे सेवकों के हृदयों में अनेक शंकाएँ उठेंगी परन्तु मैं तुम्हारा वियोग भी सहन नहीं कर सकूँगा इसलिए सामन्तों से मिल कर मैं शीघ्र ही वापस आऊँगा और तुम्हारी इच्छापूर्ण करूँगा।' इनकी बात सुनते ही राजकुमारी की आँखों में आँसू भर आए और उसने अश्रुपूर्ण नेत्रों से सखियों की तरफ देखा। अपनी प्रिया को इस प्रकार विरह से तप्त देखकर पृथ्वीराज ने उसका हाथ पकड़ा और उसके साथ-साथ महल के दरवाजे पर पहुँचा। वहाँ उत्तम घोड़े खड़े थे। पृथ्वीराज ने एक तेज घोड़ा छीन लिया और राजकुमारी सहित उस पर सवार हो गया। द्वारपाल चकित होकर उसकी तरफ देखते ही रह गए और वह अपने शिविर में पहुँच गया। तब उसके मुख्य सामन्तों ने प्रसन्नता पूर्वक उसके पास जाकर कहा 'आप वधू सहित राजधानी के लिए प्रस्थान करें। जब-तक आप चार योजन जायगे तब-तक मैं अकेला ही जयचन्द की सेना का सामना करूँगा।' इस प्रकार सब योजनों को सामन्तों ने अपने बीच में बाँट लिया। वे वास्तव में दानवों के अवतार थे और युद्ध में मृत्यु प्राप्त कर अपने असल स्वरूप में पहुँचना चाहते थे। पहले दानव ने अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार ही कार्य किया। पृथ्वीराज के इन्द्रप्रस्थ पहुँचते-पहुँचते बहुत थोड़े सामन्त ही शेष रह गये। इसके बाद पृथ्वीराज ने जयचन्द से घोर संग्राम किया। जयचन्द युद्ध में हार गया और पृथ्वीराज को विजय लक्ष्मी और वधू दोनों ही प्राप्त हुई।"

मुन्देलखंड के प्रसिद्ध कवि जगनिक विरचित 'आल्हा' में भी संयोगिता अपहरण की कथा विस्तार से मिलती है। कवि ने संयोगिता अपहरण के समय होने वाले संग्राम का वर्णन इस प्रकार किया है — "दोनों ओर के वीर बड़े उत्साह से युद्ध में सम्मिलित हुए। नृसिंह फूँके गये, तलवारें म्यान से निकल कर चकाचौंध करने लगीं। दोनों सेनाओं के बीच

घमासान युद्ध हुआ कि जय तथा मित्र का विवेक जाता रहा। दिन-भर मार-काट होती रही। योद्धाओं ने रात बहाने से हाथ तब-तक नहीं खींचा जब तक सिर पर तारागण न घमसाने लगे। जयचन्द ने आज्ञा दी की राजकुमारी की पालकी रणभूमि में लाकर रख दी जाये तथा घोषणा की कि जिसे विजय श्री प्राप्त हो वही डोला उठा कर ले जाय। उम्मा उर्हृदय यह था कि पृथ्वीराज स्वयं मैदान में आ जाये और मैं उसे मार डालूं। चौहानों के तलवार कर कहा 'पालकी यहाँ रख दो तथा ठंडे-ठंडे गृह भागं ग्रहण करो। उधर राठौर भी चित्लाये, जिन योद्धाओं में पालकी दिल्ली ले जाने का गर्व हो जरा सम्मुख तो आवें। प्रत्येक वीर ने दो तलवारें हाथों में सम्भाल ली तथा वीर मृत्यु को एक मनोरंजक खेल समझकर युद्ध में जुट गए। चौहानों का पल्ला भारी था तथा पालकी पाँच कोस दिल्ली की ओर अग्रसर हो चुकी थी।

कन्नौजियों ने भी पिड न छोड़ा। रात-दिन बराबर लड़ते-लड़ाते रहे। पालकी कभी दिल्ली की ओर अग्रसर होती तो कभी कन्नौज वाले अपनी ओर खींचते थे। किन्तु डोला दिल्ली की ओर क्रमशः अग्रसर होता गया। सोरों के घाट पर गंगा पार जाते समय एक बार फिर घमासान युद्ध हुआ। दोनों ओर के चुने हुए वीर आमने-सामने आकर अपनी-अपनी कुशलता का परिचय देने लगे। किन्तु बाजी चौहानों के हाथ ही रही तथा कन्नौज की सेना दिन प्रति दिन घटती ही गई। दिल्ली के फाटक के सामने फिर अन्तिम युद्ध हुआ। उसमें राठौर सेना के बचे छुचे सैनिक भी काम आ गए। आनन्द एवं उत्साह में चन्द वरदायी तथा पृथ्वीराज ने स्वयं डोला उठा लिया तथा अत्यन्त हर्षित हो नगर प्रवेश किया। कवि चन्द ने जयचन्द को सम्बोधित कर कहा 'यदि आपके सब सैनिक काम आ गए तो पृथ्वीराज की भी यही दशा है अतः अब युद्ध व्यर्थ है, शान्ति से घर की ओर प्रस्थान करिए।'

उपयुक्त ग्रन्थों में संयोगिता की कथा होते हुए भी यदि इतिहासवेत्ता संयोगिता को काल्पनिक पात्र मानें तो इसे उनकी हृदयर्मी के अतिरिक्त और क्या कहा जा सकता है। स्पष्ट है संयोगिता अपहरण की घटना अवश्य ही घटित हुई होगी तभी तो समस्त साहित्यिक ग्रन्थ एक स्वर से प्रमाण प्रस्तुत कर रहे हैं।

ज्ञाने प्रमाणों के होते हुए भी इतिहासवेत्ता घोषणा करते हैं कि—'पृथ्वीराज और जयचन्द के विषय में बहुत सी निर्मूल कहानियाँ प्रचलित हैं जो चन्द वरदायी के पृथ्वीराज रासों पर आधारित हैं.....यह सिद्ध हो चुका है कि चन्द वरदायी सोलहवीं शती से पूर्व

का नहीं है। जयचन्द की बेटी संयोगिता सर्वथा कल्पित पात्र है। पृथ्वीराज तथा जयचन्द के द्वेष की बात भी निरी कल्पना है।”

वस्तुतः शिलालेख, दानपात्रों तथा अन्य साहित्यिक ग्रन्थों के अभाव में उपर्युक्त घटनाओं को काल्पनिक मानना न्यायसंगत नहीं है। डॉ० विपिनविहारी त्रिवेदी, मत के समर्थन में लिखते हैं कि—‘पृथ्वीराज की रानी और कान्यकुब्जेश्वर की राजकुमारी संयोगिता का उल्लेख नागार्जुन, भद्वानक जाति, महोबा नरेश परमर्दिदेव चंदेल, गुर्जरेश्वर भीमदेव चालुक्य ( द्वितीय ) और आवू के धारावर्ष के साथ चौहान नरेश के इतिहास प्रसिद्ध युद्धों का नाम तक न लेने वाले हम्मीर महाकाव्य और जयचन्द की सूर्यवंशी मल्लदेव का पुत्र, महोबा के मदन वर्मा को उसका आलान स्तम्भ आदि निराधार बातों का वर्णन करने वाली नाटिका ‘रम्भा मंजरी’ में यदि नहीं है तो इसमें निराशा की कोई बात नहीं।”

डॉ० दशरथ शर्मा आईने-अकवरी तथा सुजंन चरित्र की कथाओं को पढ़ कर रासो की संयोगिता कथा के विषय में अपना निर्णायक मत प्रस्तुत करते हुए लिखते हैं कि—“इन दोनों अवतरणों को देखते हुए प्रायः सभी कह सकते हैं कि (१) रासो अकवर के समय वर्तमान था। (२) मुसलमान और बंगाली दोनों ही उसे ऐतिहासिक ग्रन्थ समझते थे। (३) अबुलफजल की दृष्टि में रासो का ऐतिहासिक महत्व फारसी तबारीखों से कम न था। (४) ऐतिहासिक महत्व को देखते हुए यह भी स्पष्ट है कि पृथ्वीराज रासो उस समय भी प्राचीन ग्रन्थ समझा जाता था और इसे सोलहवीं या सत्रहवीं शताब्दी का ग्रन्थ मानना भूल है।”

अतः उपर्युक्त विद्वानों के मत का समर्थन करते हुए हम भी यही कहेंगे कि अनुश्रुति की प्रबलता निश्चित रूप से इस सुन्दर कथा की ऐतिहासिकता का अकाट्य प्रमाण है जिसकी उपेक्षा करना असम्भव है।

संयोगिता के अतिरिक्त ग्रन्थकार पंगराज की दो पुत्रियों का और उल्लेख करता है, जिनमें से छोटी का नाम तारा था तथा दूसरी अज्ञात नामा का विवाह दक्षिण के राजा देवग्रह से हुआ था। यहाँ पर सामग्री अभाव के कारण इस विषय पर प्रकाश डालना अत्यन्त कठिन है।

१. जयचन्द विद्यालकार तथा स्वर्गोय डॉ० काशीप्रसाद, इतिहास प्रवेश, भाग २, पृ० ३, पाद टिप्पणी।
२. डॉ० विपिनविहारी त्रिवेदी, रेवातट समय, भूमिका भाग १, पृ० २२२।
३. डॉ० दशरथ शर्मा, पृथ्वीराज रासो की कथाओं का ऐतिहासिक आधार राजस्थानी, भाग ३, अंक ३, पृ० १२, सन् १९४० कलकत्ता।



संयोगिता की मृत्यु के सम्बन्ध में रासोकार ने लिखा है कि 'पृथ्वीराज तथा गोरी के युद्ध का दुःखद परिणाम तथा पृथ्वीराज के बन्दी होने की सूचना पाकर रानी संयोगिता के प्राण छूट गये । चौहान की स्त्रियों ने अपने शरीर अग्नि पर चढ़ा दिए । दुःख के बन्धन में पड़ कर संयोगिता ने (पहले ही) योग द्वारा अपने पति से संयोग किया -

चर आये डिल्लिय नयर , वसमि सुदिन अंगार ।  
बुद्धवार एकादशी , चली वरन स्थगदार ॥  
चली वरन स्थगदार , सूर सामंत तीयवर ।  
सय परिगह प्रथिराज , मयी मगल मंगल क्षर ॥  
पट मुर तिय चहुआन , अग्नि आलिग अंग वर ।  
एपहु वधि संजोगि , जोग संजोग कहै चर ॥ छं० १६१८ ।

तत्कालीन सती प्रथा के प्रचार की ध्यान में रखते हुए रासोकार का संयोगिता का सती होना, वर्णन उचित एवं सत्य ही प्रतीत होता है ।

## नुरसुन्दरी :

'पृथ्वीराज रासो' के अनुसार नुरसुन्दरी कन्या दिल्लीपति अनंगपाल तोमर की पुत्री थी ।<sup>१</sup>

ग्रन्थकार के मतानुसार एक बार राजा विजयपाल ने दिग्विजय की कामना से दिल्लीपति अनंगपाल तोंवर पर आक्रमण कर दिया ।<sup>२</sup> राजा अनंगपाल तोंवर ने विजयपाल के आक्रमण की सूचना पाकर एक विशाल बाहिनी एकत्र कर कालिन्दी के उत्तर दिशा में मुकाबला किया । इसी बीच अजमेरपति राजा सोमेश्वरदेव अनंगपाल की सहायतार्थ दिल्ली की ओर अपनी विशाल सेना लेकर अग्रसर हुआ । सोमेश्वर चौहान तथा तोंवर की सम्मिलित सेना ने राजा विजयपाल की दिग्विजय की कामना पूर्ण न होने दी ।

विजयोपलक्ष, एवं सोमेश्वर की सहायता के प्रति कृतज्ञता प्रदर्शन हेतु दिल्लीपति राजा अनंगपाल ने अपनी छोटी पुत्री कमला का विवाह सोमेश्वर से तथा दूसरी कन्या का विवाह विजयपाल के साथ चिर मंत्री के फलस्वरूप कर दिया ।<sup>३</sup> पृथ्वीराज रासो के प्रायः सभी संस्करणों में नुरसुन्दरी को राजा अनंगपाल की पुत्री एवं राजा विजयपाल की पत्नी होना लिखा है । किन्तु इतिहासवेत्ता राजा विजयपाल की रानी का नाम चन्दलेखा मानते हैं तथा तोंवर वंशी राजा अनंगपाल से उसके किसी प्रकार के सम्बन्ध को भी स्वीकार नहीं करते ।<sup>४</sup>

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ६८१-६८२, स० १ ।

२. वही, छं० ६१७, स० १ ।

३. वही, छं० ६८१-६८२, स० १ ।

४. डॉ० रमार्शकर त्रिपाठी, हिस्ट्री आफ कन्नौज, पृ० २३६ ।

## शशिवृत्ता :

नागरी प्रचारिणी सभा काशी द्वारा प्रकाशित 'पृथ्वीराज रासो' के 'शशिवृत्ता वर्णन नाम प्रस्ताव २५' में शशिवृत्ता तथा पृथ्वीराज का विवाह विस्तार से वर्णित है। देवगिरि के राजा भान की पुत्री का नाम शशिवृत्ता था। एक बार देवगिरि का नट दिल्ली दरबार में आया, तथा महाराज पृथ्वीराज चौहान द्वारा पूछने पर कि देवगिरि की राजकुमारी शशिवृत्ता का विवाह किसके साथ निश्चित हुआ है, उसने बताया कि उज्जैन नगरी के कमध्वज राजा के यहाँ उसकी सगाई हुई है किन्तु राजकुमारी शशिवृत्ता को यह संवन्ध स्वीकार नहीं है। आगे उसी नट ने पृथ्वीराज चौहान से शशिवृत्ता का मेनका सद्गुण रूप वर्णन किया जिसे सुनकर पृथ्वीराज का उस पर अनुराग जागृत हो गया तथा प्रेम विह्वल हो नट से उसकी प्राप्ति का उपाय पूछने लगा। नट ने उन्हें पूर्ण आश्वासन देकर कहा कि राजेन्द्र, मैं कुछ न उठा रखूँगा तथा यह कहकर उनसे विदा ली। राजा पृथ्वीराज ने शिव की आराधना की तथा उनसे अपना मनोरथ सिद्ध होने का वरदान पाया और वर्षा और शरद ऋतु शशिवृत्ता के विरह की काम पीड़ा में बिताई तथा देवगिरि जाने का अपने मन में निश्चय किया।

दूसरी ओर कन्नोजपति जयचन्द के भ्रातृज वीरचन्द के साथ शशिवृत्ता की सगाई की सूचना पाकर एक गन्धर्व देवगिरि गया। तथा वन में जहाँ राजकुमारी अपनी सहेलियों के साथ क्रीड़ा कर रही थी, वह स्वर्ण हंस के रूप में एक स्थान पर बैठकर विश्राम करने लगा, राजकुमारी ने अत्यन्त आश्चर्य एवं विश्मय से उसकी ओर देखा तथा बल पूर्वक वंदी बनाकर उससे उसका वृत्तान्त पूछा। हंस ने उत्तर दिया कि मैं मति प्रधान नाम का गन्धर्व हूँ, सुरराज इन्द्र के कार्य हेतु आया हूँ, मुझमें तीनों लोकों में जाने की शक्ति है—

- 
१. साहित्य सस्थान उदयपुर, से प्रकाशित 'पृथ्वीराज रासो' में 'शशिवृत्ता समय' की संख्या २३ है।
  २. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १५-१७, स० २५।
  ३. वही, छं० १८, स० २५।
  ४. वही, छं० १९-२३, स० २५।
  ५. वही, छं० २४-२७, स० २५।
  ६. वही छं० २८, स० २५।
  ७. वही, छं० २९, स० २५।
  ८. वही, छं० ३२-४५, स० २५।
  ९. वही, छं० ६९, स० २५।
  १०. वही, छं० ७०, स० २५।

हेम हंस तन धरिय । विपन मध्य विश्राम लिय ।  
 दिष्ट तास शशिवृत्त । अतिहि अचरिज्ज मानि जिय ॥  
 वल कर गहिय मु तत्व । हत्व लं करि तिहि पुच्छिय ।  
 कवन देव तुम थान । कवन माया तन अच्छिय ॥  
 उच्चर्यो हंस सशिवृत्त सम । मति प्रधान गन्धर्व हम ।  
 मुरराज काज आए करन । तीन लोक हम बाल गम ॥ छं० ७१ ।<sup>१</sup>

अपना परिचय देने के साथ ही उस गन्धर्व ने यह भी बताया कि वीरचन्द कमधज्ज की आयु केवल एक वर्ष की है, हे वाले, इसी से करुणा करके इन्द्र ने मुझे तुम्हारे पास भेजा है—

तेम रहें वर वरय इक्क रुहि । हय गय अनत झुझिहैं हैं समतहि ॥  
 तिहि चार करि तुमहि पै आयो । करि कहना यह इन्द्र पठायो ॥ छं० ७४ ।<sup>१</sup>

गन्धर्व वचन सुनकर स्वाभाविक था कि राजकुमारी शशिवृत्ता का चित्त उधर से विरक्त हो जाता तथा गन्धर्व से उसने अपने अनुरूप वर पूछा —

तय उच्चरिय बाल सम तेह । तुम माता सम पिता सनेह ॥  
 मुस्र सहाय अवरि को करिहो । पानि ग्रहन तुम चित अनुहरिहो ॥ छं० ७५ ॥<sup>१</sup>

चतुर गन्धर्व ने अवसर पाते ही पराक्रमी आधिपति दिल्ली नरेश पृथ्वीराज का गुणगान प्रारम्भ कर दिया ।<sup>१</sup> पृथ्वीराज का पराक्रम श्रवण कर उसे उनसे अनुराग हो गया तथा राजकुमारी ने कहा कि तुम उन्हें जाकर लिवा लाओ, मैं छः माह तक चौहान पृथ्वीराज की प्रतिष्ठा करूँगी तथा इस अवधि तक न आने पर अपना शरीर त्याग दूँगी —

तहां तुम पिता कृपा करि जाउ । दिल्ली वे अनुराग उपाउ ॥  
 मांस पटह हों वृत्तह मंडो । श्युना आवैं तो तन छंडो ॥ छं० ७९ ॥<sup>१</sup>

गन्धर्व, राजकुमारी शशिवृत्ता का ऐसा प्रण सुनकर दिल्ली दिशा की ओर चल पड़ा । वन में जिकार खेलते हुए वीर पृथ्वीराज ने अश्चर्य के साथ उस हेम-हंस को देखा तथा उसे पकड़ लिया, तब उसने राजा पृथ्वीराज को सारी कथा कह सुनाई —

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ७१, स० २५ ।

२. यही, छं० ७४, स० २५ ।

३. यही, छं० ७५, स० २५ ।

४. यही, छं० ७६-७८, स० २५ ।

५. यही, छं० ७९, स० २५ ।

वय किसोर प्रथिराज । रम्य हा रम्य प्रकारं ।  
 सेत पण्व विय चंद । कला उदित तन मारं ॥  
 विपन मध्य चहुआन । हंस दिष्यौ अप अण्विय ॥  
 चरण मग्य दुति होत । हेम पछ्छी वियलण्विय ॥  
 आचिज्ज वेप्रि प्रथिराज वर । घाइ नृपति वर कर गहिय ॥  
 आपुव्व दुज्ज गति दूत कथ । रहसि राज सों सब कहिय ॥ छं० ८१ ।<sup>१</sup>

हस रूपी गन्धर्व ने समय पाकर राजकुमारी शशिवृत्ता की वयः संधि का शिशिर तथा वसत का आरोप करके चित्रण किया —

ससिर अत आवन वसंत । बालह सैसव गम ॥  
 अलिन पंष कोकिल सुकंठ । सजि गुंड मिलत भ्रम ॥  
 मुर मासत मुरि चले । मुरे मुरि वंस प्रमानं ॥  
 तुछ को परसिस फुटिट । आनि किस्सोर रंगानं ॥  
 लीनी न अमि नक स्याम नन । मधुप मधुर धुनि धुनि करिय ॥  
 जानी न वयन आवन वसंत । अग्याता जोवन अरिय ॥ छं० ९५ ॥  
 पत्त पुरातन क्षरिग । पत्त अंकुरिय उट्ठ तुछ ॥  
 ज्यों सैसव उत्तरिय । चढिय सैसव किसोर कुछ ॥  
 शीतल मंद सुगंध । आई रिति राज अचानं ॥  
 रोम राइ अकुच नितव । तुछ सरसानं ॥  
 बढ्ढे न सीत कटि छीन ह्वै । लज्ज मांनि टकनि फिरै ॥  
 ढकै न पत्त ढकै कहै । बन वसत मंत जु करै ॥ छं० ९६ ॥<sup>१</sup>

गन्धर्व द्वारा किया हुआ उपयुक्त शशिवृत्ता का सौन्दर्य वर्णन सुनकर पृथ्वीराज चौहान व्यह्वल हो गए तथा सम्पूर्ण रात्रि उसी के चिन्तन में व्यतीत की । प्रातः काल होने पर उन्होंने हंस से उसके विषय में और बातें जानने की जिज्ञासा की ।<sup>१</sup> गन्धर्व ने कथा को गति देते हुए तथा पृथ्वीराज की जिज्ञासा शान्त करते हुए कहा—देवगिरि के राजा द्वारा अपनी सगाई जयचन्द के भ्रातज वीरचन्द से सुनकर वह शीकातुर हो गई ।<sup>२</sup> शशिवृत्ता चित्ररेखा अप्सरा का अवतार है तथा वर रूप में आपको प्राप्त करने के लिए नित्य प्रति गौरी-भूजन

१. पृथ्वीराज रासो, नगरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ८१, स० २५ ।
२. वही, छं० ९५-९६, स० २५ ।
३. वही, छं० ९७-९८, स० २५ ।
४. वही, छं० १०७-८, स० २५ ।

रिदा करनी है' । इतना कहने के उपरान्त ही हंस राजकन्या का नख-शिख वर्णन कर गया—

पीनो रूपीन उरजा , सम शशि वचना , पद्म पत्रायताक्षी ॥  
व्यवोष्ठी तृण नासा , गज गति गमना , दक्षना वृत्त नाभी ॥  
संघ्राघा चार केशी , मृदु प्रयु जघना , वाम मध्या सु वेसी ॥  
हेमांगो कंति हेला , वर रुचि दसना , काम वाना कटाक्षी ॥ छ० ११४ ॥'

पृथ्वीराज ने गन्धर्व से पूछा कि हे हंस ! मुझे अब यह बताओ कि अप्सरा ने शशिवृत्ता के रूप में जन्म कैसे ग्रहण किया । इतना सुनते ही उसने आप और शिव वरदान की बात विस्तार पूर्वक कह सुनाई ।<sup>१</sup> तथा बताया कि शिव की वाणी के अनुसार शशिवृत्ता आपको अवश्य प्राप्त होगी—

तुछ दिन अंतर क्रमिय । आगम भरतार यांमि उद्ध लोक ॥  
फिर अच्छरि अवतार । पामे तुझ ईस वर बांणी ॥ छ० १६२ ॥'

इतना ही नहीं हंस शशिवृत्ता को एक स्थान पर चित्ररेखा अप्सरा, दूसरे स्थान पर रम्भा तथा अब यहाँ पर कहता है कि उसका मेनका का अवतार आपके लिए ही हुआ है —

और सुवर संकेत सुनि । हंस कहै नर राज ॥  
मेन केस अवतार इह । तुम कारन कहि साज ॥ छ० १६४ ॥'

हंस द्वारा शशिवृत्ता का रूप वर्णन तथा उसकी प्रतिज्ञा सुनकर तुरन्त ही दिलीश्वर पृथ्वीराज ने दस सहस्र अश्वारोही सैनिकों को सजा कर देवगिरि की ओर प्रस्थान करने की आज्ञा दी —

सुनत धवन चढ्यो नृप राज । कहि कहि दूत वृजन सिरताज ॥ छ० १६९ ॥  
मय अनुराग राज दिल्ली वै । दस सहस्र सज्जी नृप हेवै ॥ छ० १७० ॥'

हंस ने देवगिरि के राजा का परिचय देकर अन्त में पृथ्वीराज से कहा कि राजकुमारी शशिवृत्ता ने रुक्मिणी की भाँति हरण करने का सन्देश देकर मुझे आपके पास भेजा है—

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छ० १०९, स० २५ ।

२. वही, छ० ११४, स० २५ ।

३. वही, छ० १५५-६१, स० ६१ ।

४. वही, छ० १६२, स० २५ ।

५. वही, छ० १६४, स० २५ ।

६. वही, छ० १६९-७०, स० २५ ।

हुअ प्रसन्न सिध सिधा । बोलि हूँ पठय तुझ प्रति ॥

इह बरनी तुम जोग । चढ जोसना वान वृत्त ॥

ज्यों रुकमिनि हरि देव । प्रीति अति बढ़े प्रेम भर ॥

इह गुन हस सरूप । नाम दुजराज मनिय चर ॥ छ० १८६ ॥

दिल्लीपति पृथ्वीराज ने फिर जिज्ञासा की, कि यदि राजकुमारी शशिवृत्ता की ऐसी मनोदशा थी तो फिर उसके पिता ने पुरोहित भेज कर विवाह क्यों रचाया । हंस ने जिज्ञासा शान्त करते हुए उत्तर दिया कि यादव राज को कभीजपति जयचन्द से ही सम्बन्ध प्रिय लगा तथा उन्होंने उनके पास पुरोहित के हाथ श्रीफज तथा वस्त्राभूषण सहित लग्न भेज दी । राजा जयचन्द ने पुरोहित से यह जानकर कि विवाह मूर्त निकट ही है अपनी सेना सजाकर अगणित द्रव्य साथ लेकर, उत्साह पूर्वक देवगिरि की ओर प्रस्थान कर दिया है । राजा जयचन्द की दस लाख सेना विवाहोत्सव के लिए स्थान-स्थान पर पड़ाव डालती हुई आगे बढ़ रही है । हे दिल्लीपति चौहान ! कलयुग में अपनी कीर्ति अजर-अमर करने के लिए आप भी चढ़ चलिए, देवगिरि की मुग्धा शशिवृत्ता आपके ही योग्य है । राजकुमारी ने आपसे वरण करने की प्रतिज्ञा कर रखी है, हे राजन ! अब केवल एक माह का समय है अतः विवाह हेतु शीघ्र ही प्रस्थान की तैयारी कीजिए—

कह हंस राज राजन सु वृत्त । चढ़ि चली कलू रषण सु कृत्य ॥

तुम योग नारि बरनी कुमारि । हूँ पठय ईस तुम वृत्त नारि ॥ छ० १९५ ॥

उन लियो वृत्त तुम दूढ़द नेम । नन करि विरम्म राजन सु एम ॥

इक मास अवधि दुज कहै वृत्त । व्याहन सु काज मन करौ रत्त ॥ छ० १९६ ॥

हंस की इतनी बातें सुनने के उपरान्त राजा पृथ्वीराज ने शशिवृत्ता से मिलन हेतु संकेत स्थल पूछा । हंस ने बताया कि माघ शुक्ल त्रयोदशी को हरसिद्धि के स्थान में मिलन होगा—

कह यह दुज संकेत । हो राज्यंद धीर हिल्लेस ॥

तेरसि उज्जल माघे । व्याहन बरनीय थान हर सिद्धि ॥ छ० २०० ॥

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छ० १८६, स० २५ ।

२. वही, छ० १८७, स० २५ ।

३. वही, १८८-६९, स० २५ ।

४. वही, छ० १९०-९२, स० २५ ।

५. वही, छ० १९३-९४, स० २५ ।

६. वही, छ० १९५-९६, स० २५ ।

७. वही, छ० २००, स० २५ ।

करने की आवश्यकता नहीं कि वीर पृथ्वीराज ने यथा समय पहुँच कर 'ज्यों रुक्मिणि हरिदेव' की भाँति राजकुमारी का अपहरण किया तथा साथ ही जयचन्द के भाई वीरचन्द तथा यादव राज से घोर संग्राम करके राजकुमारी शशिवृत्ता को दिल्ली लाने में समर्थ हुआ।

### ऐतिहासिकता :

श्री अमृतलाल शील देवगिरी की राजकुमारी शशिवृत्ता के विवाह को ऐतिहासिक न मान कर इस प्रकार लिखते हैं कि 'पृथ्वीराज की यौवनावस्था में नर्मदा से काँची तक विस्तृत कल्याण राज्य की ईंटें घिसक रही थीं उस समय देवगिरि में वहाँ का एक वेतन भोगी दुर्गपति रहता था। सन् ११८९ ई० के उपरान्त इस दुर्गपति ने कल्याणराज को दुर्बल देखकर स्वाधीन होने की चेष्टा की। ईसा की तेरहवीं सदी में देवगिरि के यादवों ने पूर्ण गौरव से राज्य किया।—रासो में संवत् नहीं लिखा है, तथापि शशिवृत्ता का विवाह सन् ११८९ ई० से पहले ही हुआ होगा।'

ओझा जी ने भी श्री अमृतलाल शील की भाँति ही विचार व्यक्त करते हुए लिखा है— 'रासो में देवगिरि के यादव राजा भान की पुत्री शशिवृत्ता और रणथम्भौर के यादव राजा भानराय की पुत्री हंसावती के विवाह करना लिखा है। ये दोनों बातें भी कल्पित हैं, क्योंकि देवगिरि में भान नाम का कोई राजा ही नहीं हुआ।'

एक ओर तो ओझा जी तथा शील जी शशिवृत्ता के अस्तित्व में सन्देह करते हैं दूसरी ओर कविराव मोहनसिंह उसे पूर्ण ऐतिहासिक सिद्ध करने के लिए निम्न तर्क उपस्थित करते हैं— शशिवृत्ता समय में पृथ्वीराज का विवाह शशिवृत्ता के साथ होने का उल्लेख हुआ है। यह राजकुमारी दक्षिण देशीय देवगिरि की न होकर मध्य प्रान्त (मालवा) स्थित देवास के यादव राजा के भाई पुंज की पुत्री थी। पृथ्वीराज को सर्वप्रथम उसका वृत्तान्त एक मालव निवासी नर्तक से ही ज्ञात हुआ। देवास के राजा की 'यादव भान' लिखा है, जिसका अर्थ 'यादवों का गुरु' भी हो सकता है। उसे 'तान' (तवनपाल) नाम से भी सम्बोधित किया है। इसी की पुत्री हंसावती जो आगे चलकर पृथ्वीराज से व्याही गई। शशिवृत्ता को वरण करने में पृथ्वीराज को कन्नीजपति जयचन्द के भाइयों में वीरचन्द से युद्ध करना पड़ा। दोनों सूर्यवंशी वीरों में युद्ध होने के पश्चात् पृथ्वीराज शशिवृत्ता को दिल्ली ले जाने में सफल हुआ।'

१. श्री अमृतलाल शील, सरस्वती, भाग २७, संख्या ६, पृ० ६७६।
२. रायचहादुर गीरीशंकर हीराचन्द ओझा, पृथ्वीराज रासो का निर्माण काल, कोशोत्सव स्मारक संग्रह, पृ० ४९।
३. कविराव मोहनसिंह, पृथ्वीराज रासो, द्वितीय भाग, सम्पादकीय, पृ० ४, साहित्य संस्थान, राजस्थान विश्वविद्यालय, उदयपुर।

इतिहास का विवाद कुछ भी हो किन्तु इतना निर्विवाद सत्य है कि 'पृथ्वीराज रासो' का शशिवृत्ता समय साहित्यिक दृष्टि से अद्वितीय है।

**हंसावती :**

नागरी प्रचारणी सभा द्वारा प्रकाशित 'पृथ्वीराज रासो' के 'हंसावती विवाह नाम प्रस्ताव ३६' में रणथम्भौर के राजा भान की सुन्दर कन्या पर कामासक्त होकर चन्देरी के अधिपति शिशुपाल वंशी पंचाइन ने राजकुमारी से विवाह करने की अथवा राज्यहरण करके का प्रस्ताव कर, राजा भान को डराया। कामी पंचाइन को इस ललकार से राजा भान का क्षत्रित्व जाग उठा तथा उन्होंने राजा पंचाइन को कोरा जवाब दे दिया। परिणाम स्वरूप राजा पंचाइन ने शाहबुद्दीन गोरी की सहायता लेकर रणथम्भौर को घेर लिया। राजा भान ने विपत्ति को सामने आया देख कर दिल्लीपति पृथ्वीराज चौहान से सहायता की याचना की। वीर पृथ्वीराज ने 'भान वीर पुक्कार, धाई आई दिल्ली वै' समाचार कन्हू द्वारा चित्तोड़ के रावल समरसिंह के पास भेज दिया। फिर मृदंग की भाँति शत्रु को पूर्व और पश्चिम दोनों ओर से दबाए हुए, उस भयंकर युद्ध में पराक्रमी वीर पृथ्वीराज चौहान की विजय हुई। विजय की रात्रि में वीर पृथ्वीराज ने एक हंस गामिनी और मानिनी सुन्दरी को पुष्प लिए देखा—यह सुन्दरी और कोई नहीं अपितु राजकुमारी हंसावती ही थी—

हंस सुगति माननी । चन्द जामिनी प्रति घट्टी ॥

इक तरंग सुन्दरि सुचग । हय नयन प्रगट्टी ॥

हंस कला अवतरी । कुमुद वर फुल्लि समथ्य ॥

एक चित्त सोइ वाल । मीत संकर अस रथ्य ॥

तेहि बाल संग में पूह्य लिय । वरन वीर संगति जुवह ।

जाग्रत देवि बोलि न कछू । नवह देव नन मानवह ॥ छं० ८६ ॥

**नोट—**रासो के अप्रकाशित मध्यम संस्करण की शशिवृत्ता कथा उपर्युक्त प्रसंग से सर्वथा मिलती-जुलती है। तात्त्विक दृष्टि से दोनों में बहुत समानता है।

१. साहित्य संस्थान उदयपुर से प्रकाशित पृथ्वीराज रासो में 'हंसावती समय' की क्रम संख्या ४१ है।
२. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० २-५, स० ३६।
३. वही, छं० ६-७, स० ३६।
४. वही, छं० ८-१२, स० ३६।
५. वही, छं० १९-२०, स० ३६।
६. वही, छं० २१-२२, स० ३६।
७. वही, छं० ४०-८५, स० ३६।
८. वही, छं० ८६, स० ३६।



दूधरे ही दिन राजा भान का पुरोहित लग्न लेकर आ गया।<sup>१</sup> सम्भव है, राजा भान ने पृथ्वीराज की वीरता ने प्रभावित होकर अपनी पुत्री हंसावती का विवाह पृथ्वीराज के साथ कर दिया हो। अतः स्पष्ट है कि राजकुमारी हंसावती पृथ्वीराज जैसे पराक्रमी पति को पाकर आनन्द ने दिल्ली के राज-महलों में निवास करसे लगी।

## ऐतिहासिकता :

श्री अमृतलाल जोन राजकुमारी हंसावती को काल्पनिक पात्र मानते हुए लिखते हैं कि—  
 'वि० सं० १५०० रचिन हम्मीर महाकाव्य (सर्ग ४) के आधार पर पृथ्वीराज का पुत्र गोविंदराज ही रणयम्मीर का प्रथम शासक था। मदनपुर का शिलालेख पृथ्वीराज को चंदेरी और महोबा का स्वामी सिद्ध करता है। अस्तु रासो के समय ३६ के पात्र कल्पित हैं।'<sup>२</sup>

ओझा जी भी हंसावती को कल्पित पात्र मानते हुए लिखते हैं—“रासो में देवगिरि के राजा भान की पुत्री शशिवृत्ता और रणयम्मीर के यादव राजा भानराय की पुत्री हंसावती से विवाह करना लिखा है। यह दोनों बातें भी कल्पित है। ..... रणयम्मीर पर कभी यादवों का राज्य ही नहीं रहा। उस पर पहले से ही चौहानों का अधिकार था। पृथ्वीराज के मारे जाने के बाद उसके भाई हरिराज ने अपने भतीजे गोविन्दराज को अजमेर से निकाला तब वह रणयम्मीर में रहा और हम्मीर तक उसके वंशजों ने वहीं राज्य किया।”<sup>३</sup>

कविराय मोहनसिंह हंसावती के विषय में लिखते हैं कि—‘हंसावती समय’ में हंसावती के पिता भानुराय देवास से (शरण रूप में) रणयम्मीर आकर रहने लगे। इसका कारण यह था कि कन्नोजपति शशिवृत्ता बानी घटना के कारण रुष्ट था ही, शहाबुद्दीन भी उसके सकेत से देवास पर अपनी क्रूर दृष्टि लगाए था। इधर राजकुमारी हंसावती के सौन्दर्य की प्रशंसा सुनकर शिशुपाल वंशी पंचाइन भी उससे विवाह करने को उत्सुक था। भानुराय यादव के रणयम्मीर पर सकुटुम्ब रहने पर पंचाइन ने रणयम्मीर पर चढ़ाई की। भानुराय की बरही (देवास के साथ में आए आश्रितों की टोली) युद्धार्थ रणयम्मीर से उतर पड़ी। उस समय रणयम्मीर का वास्तविक राजा पृथ्वीराज यशो-वन्ता तुल्य और शरण में आया हुआ राजा भानु कल स्वरूप दिखाई दिया। एक ओर यादव राजा भानु युद्धार्थ उतर पड़ा, दूसरी ओर पृथ्वीराज द्वारा भेजे गये कन्हू ने रावल समर से निवेदन किया कि बलवान होते हुए भी यादव राजा भानु की पृथ्वी छुट गई है। तब वीर एवं शरणागत रक्षक रावल जी और

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ९९, सं० ३६।

२. श्री अमृतलाल जोन, सरस्वती, भाग २७, संख्या ६, पृ० ६७७-७८।

३. रायबहादुर गौरीशंकर हीराचन्द ओझा, पृथ्वीराज रासो का निर्माण काल, कोशोत्सव स्मारक संग्रह, पृ० ४९।

पृथ्वीराज ने मिलकर पंचाइन को परास्त किया । फिर उस मध्य देशीय मालव राजा भानु की सुन्दरी राजकुमारी हंसावती का प्रेम पृथ्वीराज की ओर उमड़ पड़ा । पृथ्वीराज ने उस राजकुमारी से विवाह किया और एक मास तक राजा भानु को रणथम्भीर पर रखा । युद्ध के बाद चित्तौड़ेश्वर चित्तौड़ को और पृथ्वीराज हंसावती सहित दिल्ली आ गए, तब राजा भानु भी देवास लौट गया । हंसावती विवाह के समय पृथ्वीराज की आयु २२ वर्ष और चित्तौड़ेश्वर रावल समर-विक्रम की ५७ वर्ष की थी ।”

## राज्य कवि एवं पुरोहित वर्ग

धर्म प्रधान राज्यों में धर्म गुरु अथवा पुरोहित ही राज्य का स्वामी होता था जिसके उदाहरण मुसलमानों के शासन में खलीफा एवं आधुनिक वैटिकन राज्य में पोप है प्राचीन भारतीय साहित्य में भी राज्य तथा सम्प्रदाय के मध्य संघर्ष की बात सुनाई पड़ती है। ऐतरेय ब्राह्मण में लिखा है कि यदि राज्य योग्य ब्राह्मण पुरोहित की सहायता नहीं लेता तो देवगण उसके पक्ष को स्वीकार नहीं करते।<sup>१</sup> ऋग्वेद में लिखा है कि जो राजा अपने पुरोहित का सम्मान करता है, वह सदा शत्रुओं पर विजय तथा प्रजा की प्रतिष्ठा का अधिकारी होता है। ब्राह्मण युग के अन्त तक पुरोहित वर्ग, शासक एवं शासित प्रजा को पर्याप्त प्रभावित करते रहे। किन्तु कालान्तर में यह सम्बन्ध स्थायी न रह सका। धर्म गुरुओं की प्रभुता के प्रति विरोधी भाव के उदय होते ही संघर्ष का जन्म हुआ परन्तु भारत में इस प्रकार का उदाहरण देखने में नहीं आता, जैसा कि मध्य योरोप के इतिहास में दिखाई पड़ता है।

कालान्तर में क्षत्रिय एवं ब्राह्मण वर्ग में समझौता हो गया। सरकार एवं सम्प्रदाय समझ गए कि पारस्परिक सहयोग ही दोनों के हितों की रक्षा में समर्थ है। दोनों ने एक दूसरे के देवताओं को स्वीकार कर लिया। पुरोहित वर्ग का समाज में सम्मान था तथा यज्ञदि द्वारा वह देवी महायना में सहायक होता था। इस के लिए समाज सदा उसका उपकार मानता था किन्तु वैदिक काल में भी राजा उसके हाथ की कठपुतली कदापि नहीं था। ब्राह्मण को वास्तव में कुछ विशेषधिकार अवश्य प्राप्त थे यथा—‘वह कर तथा शारीरिक दण्ड से मुक्त थे’।

पुरोहित का वैदिक काल के मंत्रियों में प्रमुख स्थान था तथा अनेक शक्तियों तक उनका स्थान मन्त्रिपरिषद् में सुरक्षित रहा। वह राजा का गुरु भी होता था। उसका कार्य शत्रु के

१. न यं अपुरोहितस्य देवा बलिमश्रन वंति । ऐतरेय ब्राह्मण ७५, २४ ।

२. स इन्द्राजा प्रतिजग्यानि दिश्या शुष्मेण तस्यो अग्नि वीर्येण

तस्मिन्विशः स्वयमेवानमन्त यस्मिन्ब्रह्मा राजनि पूर्वमेति ॥

—ऋग्वेद ४, ५, ७९ ।

विनाश हेतु नाना प्रकार के अनुष्ठानों का आयोजन करना तथा राष्ट्र की कल्याण कामना करना था। वैदिक कर्मों की प्रधानता के साथ-साथ पुरोहित वर्ग का प्रभाव भी अत्यधिक हो गया होगा। क्रमशः औपनिषदिक, बौद्ध तथा जैन दर्शन के विकास के फलस्वरूप कर्म-काण्ड के प्रचार के ह्रास के साथ ही साथ पुरोहित वर्ग का प्रभाव भी कम होता गया। इतना सब होते हुए भी वह राज्य का एक महत्वपूर्ण अधिकारी, फिर भी बना रहा। राजा पर उसका नैतिक प्रभाव अत्यधिक था। आदर्श पुरोहित का भ्रूंसंग ही राजा को सतपथ पर लाने के लिए पर्याप्त समझा जाता था।<sup>१</sup>

१२ वीं शती तक यह पद राजसभा में विभिन्न अनुष्ठानिक महत्व तक सीमित रह गया था। धार्मिक क्षेत्र में पुरोहित का स्वामित्व था। राजकीय यज्ञ, दान, विवाह आदि महत्वपूर्ण कार्य इसकी उपस्थिति बिना सम्पन्न नहीं हो सकते थे। इस अध्याय के अन्तर्गत विभिन्न राज्यों के कवि एवं पुरोहितों के विषय में संक्षिप्त परिचय देने का प्रयत्न किया गया है।

### कमल भट्ट :

कवि चन्द ने कन्नौजपति राजा जयचन्द की बैठक का सुन्दर वर्णन करते हुए कमल भट्ट का उल्लेख भी किया है जो राजा जयचन्द के सिंहासन के समक्ष हमेशा रहा करता था—

शिवराज होत हरि गुन मिलत । उर सुनत सत्त पत्तह पिलत ॥

श्री कंठ सु गुर कवि कमल भट्ट । जुग जोर समुष कमधज्ज पट्ट ॥ छं ५४६ ॥<sup>१</sup>

कमल भट्ट का ऐतिहासिक एवं साहित्यिक ग्रन्थों में विशेष विवरण प्राप्त नहीं होता। अतः विवश हो कर इतने से ही संतोष करना पड़ता है।

### कविचन्द :

‘पृथ्वीराज रासो’ में स्वयं कवि चन्द वरदायी ने अपने जन्म के विषय में लिखा है। कवि ने अनेक सामन्तों का जन्म स्थान बताते हुए अपना जन्म स्थान लाहौर बताया है—

हुअ निझक्षर कनवज्ज जैत सलषं अब्वगढ़ ।

मंडोवर परिहार करषि कंगुर हाहुलि दिढ ।

बलिमन्न सु नागौर चन्द उप्पजि लाहौरह ।

विल्लीय अत्ताताइ वियाघर सामत सोरह ।

१. यत्कोप भीत्या राजापि धर्म नीति रतो भवेत् । शुक्र २-१९ ।

२. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ५४६, स० ६१ ।

राम दे राम जाकोर घर, गोइंद गढ़ू धामनि असे ।

बाहिम्म बसाने चप्पनी, प्रियराज परिघह बसे ॥ छं० ५८४ ॥

पृथ्वीराज रासो के अनुसार कवि चन्द ढुंढा राक्षस की जिह्व से उत्पन्न हुआ था ।<sup>१</sup> सत्य ही ग्रन्थकार करने आपको महाराज पृथ्वीराज का समवयस्क प्रमाणित करता है ।<sup>२</sup> अतः चन्द का जन्म संवत् भी वही होगा जो महाराज पृथ्वीराज का था । पृथ्वीराज के जन्म संवत् के विषय में कवि ने लिखा है—

एकादस सं पंच दह, विक्रम साल अनन्द ।

तिहि रिपु जयपुर, हरन की नय प्रियराज नरिद ॥ छं० ६९४ ॥

उपबृंक्ष छन्द के अनुसार महाराज पृथ्वीराज का जन्म अनन्द विक्रम शाक १११५ सिद्ध होता है अर्थात् नागरी प्रचारिणी सभा से प्रकाशित पृथ्वीराज रासो के सम्पादकों के मतानुसार १११५+९९=१२०६ वि० स० हुआ, अर्थात् यही संवत् कवि चन्द की जन्म तिथि सिद्ध हुई । किन्तु यह तिथि पूर्णरूप से प्रामाणिक नहीं है । सामग्री के अभाव के कारण निश्चय मत देना नितान्त असम्भव है ।

कवि चन्द घरदायी ने अपने पिता का नाम 'मल्ह' दिया है । कवि चन्द ने पृथ्वीराज से युद्ध हेतु आज्ञा मांगी किन्तु उन्होंने युद्ध की आज्ञा यह कह कर न दी कि यह कार्य तो अत्रियों का है । तुम तो कीर्ति गान करो । कवि बिना पूछे ही युद्ध भूमि में कूद पड़ा । ऐसी स्थिति में 'मल्ह' के पुत्र को कौन रोक सकता था—

तीर तुवक सिर पर बहत, गहत नरिद गुमान ।

घरदाई तहां लरन को, हुकुम मांगि चहुआत ।

हम झूमत रजपूत रिन, जंपत संनरि राव ।

अमर किति सामंत करन, घरदाई घर जाव ॥ छं० १८७२ ॥

किति करन गुन उद्वरन, जल्हन पच्छ सु लज्ज ।

मोहि नृपति आयस करी, ईस सीस छी अज्ज ॥ छं० १८७३ ॥

बिन आयस प्रियराज के, धाय तंपयी बाज ।

को रप्य सुत मल्ह की, सूर नूर मुप लाज ॥ छं० १८७४ ॥

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ५८४, स० १।

२. वही, छं० ५८२, स० १; छं० ५८३, स० १; छं० ५५७, स० ६७ ।

३. वही, छं० ९२, ७६०, स० १; छं० १७०२, स० ६६ ।

४. वही, छं० ६९४, स० १ ।

५. वही, १८७२-७४, स० १ ।

अतः स्पष्ट है कि “पृथ्वीराज रासो” के अनुसार कवि चन्द के पिता का नाम मल्ह था । कवि की माता के विषय में रासो सर्वथा मौन है । अतः उसके विषय में निराधार कल्पना करना अनुचित ही होगा ।

“पृथ्वीराज रासो” में कवि चन्द वरदायी के १० पुत्र सूर, सुन्दर, सुजान, जल्ह, बल्ह, बलिभद्र, केहरि, वीर चन्द, अवधूत तथा गुनराज का उल्लेख किया गया है । इनमें से जल्ह ही सर्व गुण सम्पन्न तथा कवि था—

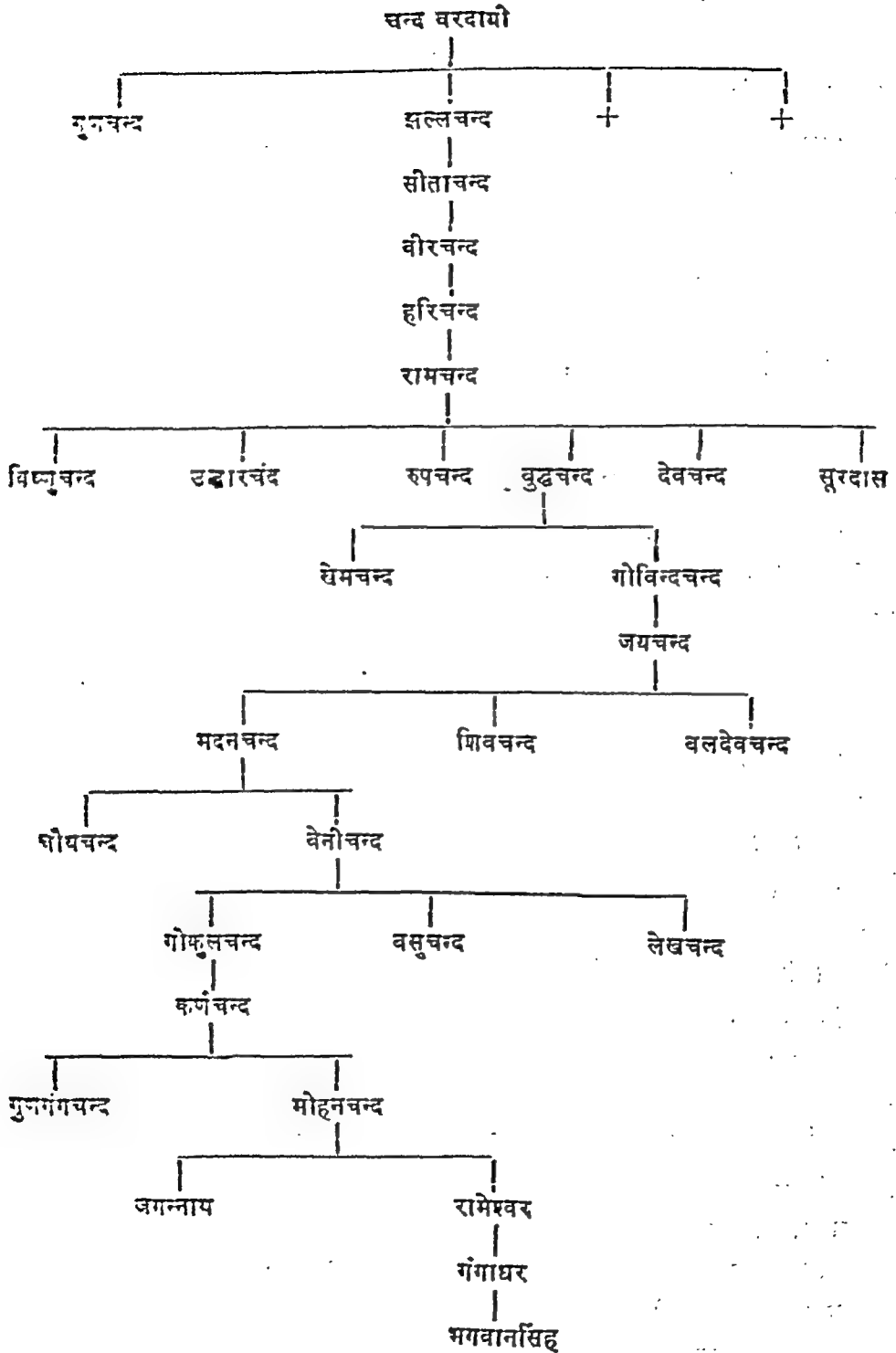
दहति पुत्र कवि चन्द , सूर सुन्दर सुजान ।  
जल्ह बल्ह बलिभद्र , कवि केहरि वधान ॥  
वीरचन्द अवधूत , वसम नन्दन गुनराज ।  
अप्य अप्य क्रम जोग , बुद्धि भिनःभिन करि काज ॥  
जल्हन जिहान गुन साज कवि , चन्द छद सायर तिरन ॥  
अप्यो सहित रासो सरस , चलयो अप्य राजन सरन ॥ छं० ८३ ॥<sup>१</sup>

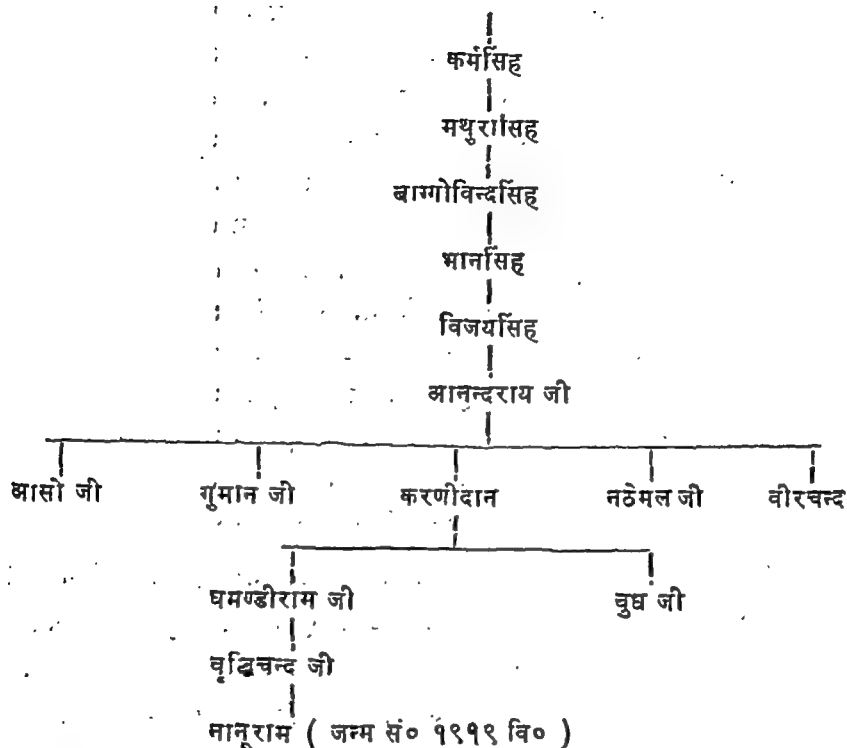
कवि चन्द अपना रासो ग्रन्थ अपने पुत्र जल्हन को देकर ही गजनी नृप कार्य हेतु गया था । स्पष्ट है उसके बाद की रचना कवि जल्ह द्वारा प्रणीत है । अन्तिम समय के छन्दों से उसकी प्रतिभा का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है ।

महामहोपाध्याय पंडित हरप्रसाद शास्त्री ने सन् १९०९ से १९५३ तक राजपूताने में प्राचीन ऐतिहासिक ग्रन्थों की खोज की थी । उनका विवरण बंगाल ऐशियाटिक सोसाइटी से छपा था । म०म० हरप्रसाद शास्त्री कवि जल्ह के विषय में लिखते हैं—“चन्द का पुत्र जल्ह एक गुणज्ञ कवि था । कहते हैं कि उसने अपने पिता रचित रासो में बहुत कुछ जोड़ा है । कहा जाता है कि अपनी माँ का नाम चलाने के लिए चन्द और उसकी स्त्री विषयक वार्तालाप उसी के जोड़े हुए हैं जो छपे रासो में दिए हैं । जल्ह के वंशजों का अकबर के समय तक जोड़ करते रहना कहा जाता है । अकबर को रासो सुनने की इच्छा थी ।”

शास्त्री जी की भेंट चन्द के वंश प्रतिनिधि नानूराम से हुई थी जिससे उन्हें एक वंश वृक्ष प्राप्त हुआ था । वंश वृक्ष भी शास्त्री जी की रिपोर्ट में उल्लिखित है, वंश वृक्ष की प्रतिलिपि इस प्रकार है—

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० छं० ८३, स० ६३ ।
२. वही, ८४-८५, स० ६७ ।
३. महामहोपाध्याय पं० हरप्रसाद शास्त्री, प्रिलिमिनरी रिपोर्ट आन वि' ऑपरेशन इनसर्च आव मेनुस्क्रिप्ट्स आव बार्डिक क्रानिकल्स, पृ० ३०, रॉयल ऐशियाटिक सोसाइटी ऑफ, बंगाल, ( १९१३ ), तथा रामशंकर त्रिपाठी; महाकवि चन्द के वंशघर; ; सरस्वती, पृ० ५१६, नवम्बर, १९२९ ।





डॉ० उदयनारायण तिवारी ने 'वीर काव्य' में लिखा है—'नानूराम का कहना है कि चन्द के चार लड़के थे, जिनमें से एक मुसलमान हो गया, दूसरे का कुछ पता नहीं, तीसरे के वंशज अंभौर में जा बसे और चौथे जल्ह का वंश नागौर में चला गया ।'

ब्रज भाषा के श्रेष्ठ कवि सूरदास भी अपने को चन्द का वंशज मानते हैं । सूरदास की 'साहित्य लहरी' की टीका में एक पद ऐसा प्राप्त होता है, जिसमें सूरदास की वंशावली दी हुई है । वह पद इस प्रकार है—

प्रथम ही प्रभु यत्न ते भो प्रगट अद्भुत रूप ।  
 ब्रह्मराव विचारि ब्रह्मा राखु नाम अनूप ।  
 पान पय देवी विद्यो सिव आदि सुर सुख पाय ।  
 कहुँ तुर्ग पुत्र तेरो भयो अति अधिकाय ।  
 पारि पार्येन सुरन के सुर सहित अस्तुति कीन ।



तासु वस प्रसस में भी चन्द चार नवीन ।  
 नूप पृथ्वीराज वीन्हों तन्हें ज्वाला देस ।  
 तनय ताके चार कीनो प्रथम आप नरेस ।  
 दूसरे गुनचन्द ता सुत सीलचन्द सरूप ।  
 वीरचन्द प्रताप पूरन मयो अद्भुत रूप ।  
 रयनीर हमीर नूपति संगत खेलत जाय ।  
 तासु वस अनूप भी हरिचन्द अति विख्याय ।  
 आगरे रहि गोपचल में रह्यो ता सुत वीर ।  
 पुत्र जन्मे सात ताके महा भट गम्भीर ।  
 दृग्गचन्द उदारचन्द जु रूपचन्द सुभार ।  
 युद्धिचन्द प्रकाश चौथे चन्द मे सुखदाइ ।  
 देवचन्द प्रबोध संसृतचन्द ताको नाम ।  
 नयो सप्तो नाम सूरजचन्द मन्द निकाम ।

उपयुक्त दोनों वंशावलियों की तुलना करने पर मुख्य भेद यह प्रकट होता है कि नानूराम ने जिनकी जल्हचन्द की वंश परम्परा में रक्खा है, सूरदास उन्हें गुणचन्द की परम्परा में बताते हैं। जेय नाम प्रायः एक से हैं।

उपयुक्त पद की आलोचना करते हुए डॉ० ब्रजेश्वर वर्मा लिखते हैं कि—‘साहित्य लहरी’ का रचनाकार कोई सूरजचन्द नामक भाट जान पड़ता है, जो कदाचित् चन्द वरदायी और सूरदास—हिन्दी के दो महान् कवियों से अपने व्यक्तित्व को सम्बोधित और मिश्रित करने के लोभ में साहित्यिक प्रवचना का अपराध कर बैठे..... उसका समय भापा भूपणकार जसवंतसिंह के पहले नहीं माना जा सकता।”

मं०म० हरप्रसाद शास्त्री अपनी खोज रिपोर्ट में उल्लेख करते हैं कि ‘कवि के चार पुत्रों में से एक मुसलमान हो गया और दूसरे अमझरा में जा बसे, तीसरे के विषय में हमें कुछ ज्ञात नहीं। काव्य कीर्ति में चन्द का योग्य उत्तराधिकारी चौथा पुत्र जल्ह चन्द था। नानूराम जो मुझे विश्वास दिलाते हैं कि लोग मुसलमान हो जाने वाले चौथे को छोड़ कर चन्द के केवल तीन पुत्रों की ही बात करते हैं।

नानूराम का कहना है कि जल्ह के पुत्र वीरचन्द ने रणथम्भीर के दृढ़ दुर्ग निर्माता तथा एक स्वतंत्र छोटे राज्य के संस्थापक और अलाउद्दीन खिलजी से युद्ध में वीरगति पाने वाले हम्मीरराय की कीर्ति में हम्मीररायों की रचना की थी।

यद्यपि चारण डिगल गीतों को अपनी निज की सम्पत्ति समझते हैं और डिगल की

अधिकांश रचनाएं उन्हीं की हैं परन्तु नानूराम का कहना है कि वीरचन्द के पुत्र हरिचंद ही ढिगल गीत के प्रथम आविष्कारक थे, उन्होंने भाषा के २४ गीत लिखे थे तथा एक कोष भी बनाया था ।”<sup>१</sup>

पृथ्वीराज रासो में चन्द के दस पुत्र होना लिखा है जबकि उपर्युक्त वंशावलियाँ केवल चार पुत्र होने का उल्लेख करती हैं । ऐसी स्थिति में निर्णायक मत देना असम्भव है, भविष्य में पुष्ट प्रमाण प्राप्त होने पर ही इस विषय में कुछ लिखना सम्भव है ।

कवि चन्द की जाति भट्ट थी । जाति के समर्थन में रासो के अनेक छन्दों को प्रस्तुत किया जा सकता है । कवि चन्द एक ऋषि को अपना परिचय देते हुए अपने को भट्ट कहता है—

भट्ट जाति कवियन नृपति , नाथ नाम मो चन्द ।

आलस में गंगा वही , अन्व गये सब दन्व ॥ छं० २५ ॥<sup>२</sup>

एक स्थान पर एक अन्य ऋषि को परिचय देता हुआ कवि अपने आपको भट्ट लिखता है—

तवहि भट्ट आपत , स्वामी मो नाम चन्द कवि ।

वह नरिंद प्रथिराज , लज्ज मरि रह्यौ देव दवि ॥ छं० १६८ ॥<sup>३</sup>

इसके अतिरिक्त अनेक छन्दों में कवि के भट्ट होने का प्रमाण उपलब्ध है ।<sup>४</sup> अतः स्पष्ट है, कि कवि चन्द भट्ट जाति का था ।

कवि चन्द षड्भाषा, व्याकरण, काव्य, साहित्य, छन्द शास्त्र, ज्योतिष, पुराण, नाटक आदि विषयों का पूर्ण पंडित था । कवि चन्द ने स्वयं लिखा है कि इस ग्रन्थ में छः भाषाओं का प्रयोग किया गया है—

उक्ति धर्म विशालस्य , राजनीति नवं रसं ।

षट भाषा पुराणं च , कुराणं कथितं मया ॥ छं० ८३ ॥<sup>५</sup>

पंगराज के दसौंघी ने कविचन्द का परिचय देते समय उसे ६ भाषाओं का ज्ञाता बताया है—

१. पं० हरप्रसाद शास्त्री, प्रिलिमिनरी रिपोर्ट आन दि आपरेशन इनसर्च मैनूस्क्रिप्ट्स आव चार्टिक क्रानिकल्स, पृ० ३०, रायल एशियाटिक सोसाइटी, बंगाल, (१९१३) ।
२. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० २५, स० १ ।
३. वही, छं० १६८, स० ६३ ।
४. वही, छं० ९५, स० ५; छं० १४४, स० ६; छं० २७८, स० १२; छं० ११५, स० १३; छं० ४४६, स० २४; छं० २४, स० ४०; छं० ७२, स० ४२; छं० १६७, स० ४७; छं० ७८, स० ६०; छं० ९१, स० ६६; छं० ६९०, स० ६६ इत्यादि ।
५. वही, छं० ८३, स० १ ।

भाषा पट नव रस पदुत , वर पुच्छे कविराज ।

मंग्रति पंग नरिद फं , वर दरवार विराज ॥ छ० ५५५ ॥

भाषा परिछा भाष छह , वस रस दुम्भर भाग ।

वित्त कवित्त जु छद लों , पंग सम पिगल नाग ॥ छ० ५५६ ॥

गजनीपति शाह गोरी के द्वारपाल द्वारा चन्द का परिचय पूछे जाने पर भी चन्द ने स्वयं दो ६ भाषाओं का ज्ञान बताया है—

पट भाष रस नव नट नाव ।

जानो विवेक विचार घाद ॥ छ० १७९ ॥

अतः उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि कवि चन्द ६ भाषाओं का ज्ञाता था । अच्छा हो यदि कवि के शब्दों में ही ६ भाषाओं का परिचय भी प्राप्त कर लिया जावे । कवि के मतानुसार सरकारीन ६ भाषाएँ संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, पञ्चाचिक, मागधी, तथा शौरसेनी थी तथा इन सब भाषाओं के ज्ञाता पृथ्वीराज चौहान भी थे—

संस्कृत<sup>१</sup> प्राकृत<sup>२</sup> चैव , अपभ्रंश पिशाचिका ।

मागधी शूरसेनी च , पट भाषाश्चैव जायते ॥ छ० ७४६ ॥

कवि चन्द की ज्योतिष का भी पूर्ण ज्ञान था । कवि ने इसका परिचय ग्रन्थ में अनेक स्थानों पर दिया है, जिसमें से यहाँ पर केवल एक स्थान का ही निर्देश कर रहे हैं—महाराज पृथ्वीराज ने शाह गोरी पर आक्रमण करने की आज्ञा दी, उस समय ग्रहों की स्थिति इस प्रकार थी—

वर मंगल पंचमी दीनी सु दीनों प्रियिराज ।

राह केतु जप दीन दुष्ट टारे सुन काज ॥

अष्ट चक्र जोगिनी भोग भरनी सुधिरारी ।

गुरु पंचमि राव पंचम अष्ट मंगल नृप मारी ॥

कंद्वर बुद्ध नारय्य नल कर त्रिशूल चक्रावलय ।

सुम घरिय राज वर लोन बर चढ्यो उदं कूरह बलिय ॥ छ० ५५ ॥

टी० विपिनविहारी त्रिवेदी जी ने उपर्युक्त छन्द की ज्योतिष शास्त्र ने अनुसार कुण्डली

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छ० ५५५-५६, स० ६१ ।

२. वही, छ० १७९, स० ६७ ।

३. वही, छ० ७४६, स० १ ।

४. वही, छ० ५५, स० २७ ।

बनाकर चन्द का ज्योतिष ज्ञान देखने की चेष्टा की है, जिसमें कवि चन्द पूर्णरूप से उत्तीर्ण भी हुआ है ।'

चन्द के जीवन के सम्बन्ध में जितनी सामग्री प्राप्त होती है, प्रायः सभी संदिग्ध है । इसी प्रकार से चन्द वरदायी की मृत्यु की घटना को भी प्रामाणिक नहीं माना जा सकता । रासो में चन्द वरदायी की मृत्यु के विषय में लिखा है कि बलभद्र नामक देव के मुख से पृथ्वीराज की मृत्यु की सूचना पाकर कवि ने महाराज पृथ्वीराज के उद्धार हेतु गजनी की ओर प्रस्थान किया । गजनी पहुँच कर कवि चन्द ने गजनीपति को वीर पृथ्वीराज के शब्द वेधी बाण का चमत्कार देखने के लिए तैयार कर लिया । शाह ने चन्द को आश्वासन दिया कि मैं स्वयं फरमान दूँगा, तुम अपने राजा का कोशल दिखलाओ । यह सुनकर कवि चन्द पृथ्वीराज को लेकर रग-भूमि में आ उपस्थित हुआ ।' पृथ्वीराज को उसी की कमान दी गई । तदुपरान्त कवि ने गजनीपति से आज्ञा देने की प्रार्थना की । आज्ञा होते ही वीर पृथ्वीराज ने अपने शब्द वेधी बाण से गजनीपति की हत्या कर दी—

भयो एक फुरमान , बान जोगिनपुर संच्यो ।  
सोई सबद अरु बान , अग्र अविचल करि वंच्यो ।  
भयो बियो फुरमान , तानि रष्यो भवनंतरि ।  
तियो भयो अन भयो , पर्यो पतिसाहि घरंतरि ।  
लं दसन रसन तालू सघन , सीस फट्टि वह दिसि गवन ।  
सुरतान पर्यो पां पुक्करं , भयो चन्द राजन मरन ॥ छं० ५४९ ॥'

शाह के मरते ही चन्द ने अपना मरण निश्चित जानकर अपनी जटाओं से छिपी हुई छुरी निकाल कर अपना सिर अलग कर दिया तथा वही छुरी पृथ्वीराज की ओर बढ़ा दी जिससे उन्होंने भी आत्महत्या कर ली—

कहै घान तत्तार , मट्ट करि टूक रज्ज सम ।  
मैं त्रिग देषत कहि मट्ट , दुष्ट देखिये काल भ्रम ।  
घरौ साहि अव गौरि , बिनै साहाब चरन लगि ।  
चन्द राज वर घेरि , लोह छुट्टै न अंग लगि ॥

छुरिका कविव जट मक्ष्म थी । कट्टि मट्ट कटि सीस अप ।

ता पछै चन्द वरबाय नै , दइय राज वर हृथ्य नूप ॥ छं० ५५४ ॥

१. डॉ० विपिनबिहारी त्रिवेदी, रेवातट समय, पृ० ५१-५६ ।
२. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ४५५, स० ६७ ।
३. वही, छं० ५४९, स० ६७ ।

नूत यंत मन वृत्तयो , भवद्वित पढ़ि कविचन्द ।  
 गयी धर्म जीयंत करि , तजिय सुवर ग्रह दंद ॥ छं० ५५५ ॥  
 मरन चन्द वरदाइ , राज पुनि मुनिग साहि हनि ।  
 पुढुवजलि असमान , सीस छोड़ी सु देवतनि ॥  
 मेच्छ अवद्वित घरनि , घरनि सय तीय सोह सिंग ।  
 तिनहि तिनह संजोति , जोति जोतिह संपातिग ॥  
 रासो असन नय रस सरत , चन्द छन्द किय अमिय सम ।  
 अगार घोर करुना चिमछ , भय अद्भुत हसंत सम ॥ छं० ५५६ ॥

इस प्रकार भट्ट कविकुल चूड़ामणि चन्द वरदाई ने स्वामिधर्म हेतु अपने प्राणों का उत्सर्ग कर दिया । धन्य है कवि चन्द तथा धन्य है यह भूमि जिस पर ऐसे स्वामिभक्त ने जन्म ग्रहण किया ।

गुरु राम :

दिल्ली तथा अजमेर के अन्तिम हिन्दू शासक राजा पृथ्वीराज चौहान के गुरु एवं पुरोहित का नाम 'राम' था । यह प्रायः रासो में गुरु राम के ही नाम से प्रसिद्ध है । राज्य दरबार में महाराज पृथ्वीराज के पृष्ठ भाग में ब्रह्मा सदृश योग्य गुरु राम पुरोहित का आसन रहता था—

गुरु राम पिढु विराजय । जनु वेद ब्रह्म सु साजय ।  
 मुप अग चद सु भूपन । रज रीति हृद सु ररपन ॥ छं० १८ ॥

महाराज पृथ्वीराज को वाल्यावस्था में गुरु राम के द्वारा ही शिक्षा प्राप्त हुई थी—

कोइक दिन गुरु राम पै , पढ़ी सुविद्या अप ।  
 चवदे विद्या चतुर वर , लई सीख पद लिप ॥ छं० ६० ॥

पुरोहित गुरु राम को हम पुरोहिती भी करते हुए पाते हैं । 'प्रिया विवाह' वर्णन समय २९ में पुरोहित गुरु राम ने चित्तौड़ पहुँच कर वसंत पंचमी को रावल समरसिंह को तिलक किया था । इतना ही नहीं गुरु राम पृथ्वीराज के साथ युद्धों में भी भाग लेते हुए देखे जाते हैं । प्रायः ब्राह्मण वर्ग युद्ध से दूर ही रहता था किन्तु समय-समय पर वह अपने मंत्र बल का नमस्कार दिखाते हुए अवश्य पाए जाते हैं । एक बार मुहम्मद गोरी तथा दिल्लीपति चौहान पृथ्वीराज के मध्य युद्ध होने पर गुरु राम ने मुसलमान सेना पर अपने मंत्रों का प्रभाव कर दिया, जिसके कारण मुसलमान सेना मंत्र बल से वशीभूत होकर चित्रलिखित सी रह गई ।

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ५५४-५६, स० ६७ ।

२. वही, छं० १८, स० ५९ ।

३. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० ६०, स० १८ ।

४. वही, छं० ३९, स० २१ ।

गोरी अपनी सेना की ऐसी विचित्र दशा देख कर अत्यन्त व्याकुल एवं दुःखित हुआ तथा अपने सेना के काजी को बुलाकर कहा कि देखो शत्रु ने अपनी विद्या-बल का प्रभाव दिखाया है, तुम किस विचार में हो, तुम भी अपना मंत्र प्रभाव दिखा कर, उनकी विद्या को उखाड़ फेंको—

कहै साहि गोरी सुनो मान काजी । लिय मीर हज्जूर तंह मीर हाजी ॥

करी जोर विद्या सुजतार दारं । करो क्यों न ऊषेल भी क्या विचार ॥ छ० १०३ ॥'

गजनीपति शहाबुद्दीन गोरी का आदेश पाकर काजी ने अपने दोनों हाथों को मुँह पर फेरा तथा पीरों का जाप प्रारम्भ किया । जाप समाप्त होने पर हाथ हटा कर दोनों सेनाओं की ओर दृष्टिपात किया जिससे गुरु राम की विद्या का विनाश हो गया तथा मुसलमान सेना का मोह दूर हो गया । इतना ही नहीं काजी के जाप के द्वारा समस्त हिन्दू सेना नागपाश में भी बँध गई—

तवं कज्जियं दस्त दुअ भुष्य फेरी । जपे जाप पीरा दुवों सेज हेरी ॥

तवं मेच्छ सेन संह मोह भगो । सब हिन्दु सेना फनी बद् लगो ॥ छ० १०४ ॥'

गुरु राम ने पृथ्वीराज चौहान की सेना को इस विषम परिस्थिति में देख कर तुरन्त ही गरुड़ का आवाह्न किया, जिसने आकर तुरन्त ही नागपाश को काट दिया तथा सेना को बन्धन मुक्त कर दिया—

गुरुं गरुण आह्वान राम चच्चारयो । तव बधन नाग तिन पंड डार्यो ॥ छ० १०५ ॥'

गुरु राम प्रायः पृथ्वीराज चौहान के साथ ही रहा करते थे । समय-समय पर उचित मंत्रणा द्वारा पृथ्वीराज का कार्य आसान किया करते थे । अन्तिम युद्ध में वीर पृथ्वीराज चौहान ने अपने कर्ण कुण्डलों को गुरुराम पुरोहित को देते हुए कहा—‘आपका राजा युद्ध का सामना करना चाहता है । अतः मेरे इन कुण्डलों को, जिनका मूल्य सवा करोड़ है स्वीकार कर, दिल्ली की ओर प्रस्थान कर, चौहान राज्य की रक्षा कीजिए । गोरी के द्वारा मेरा नाश हो जाने के साथ ही उसके विनाश की भी सम्भावना है । अतः अब आप शीघ्र ही दिल्ली की ओर प्रस्थान कीजिएः—

या रखौ गुरुराज, राज विग्रह मुख चाह्यौ ।

पं चइतं कुंडलिय, लहै ब्रव्य कोरि सवायौ ।

जा जोगिनिपुर बैव, राज राखहु चहुआनिय ।

मों काया बल भग्य, संग हूँ हैं सुरतानिय ।

१. पृथ्वीराज रांसी, नागरी प्रचारिणी सभा कोशी, छ० १०३, स० १३ ।

२. वही, छ० १०४, स० १३ ।

३. वही, छ० १०५, स० १३ ।

दृज हस्त मंडि छंडी तुरय, मो हर जुद्ध विश्व दिन ।

छिन भग देह विज्जुल छटा, दुख न करहि मंहत जन ॥ छं० ३४२ ।<sup>१</sup>

गुरु राम ने चौहान पृथ्वीराज से कुण्डलों को दान में ग्रहण कर राजा को स्वस्ति नगन के साथ वेद मंत्र सुनाया तथा जालपा देवी का मंत्र जप कर राजा के शरीर को अक्षय कर दिया—

पानि मडि लिय दान, सुस्ति भनि वेद मंत्र दिय ।

मंत्र जाप जातपा, राज अगह अभग किय ।

सार धार निध्र घात, नेद छेद न राजन वप ।

सिलहदार सारग, सध्य किय इन्द्र देव जप ।

यच्चंग पाट गाजिय सकति, घररि घट गोरिय सु घर ।

सुनि हक्क धक्क हैगय मुरिय, सहस पच उत्तरिय भर ॥ छं० ३४३ ।<sup>१</sup>

गुरु राम ज्यों ही कुण्डल लेकर अग्रसर हुए कि गजनी के सेनापति बहवलखा ने देख लिया तथा उनका पीछा किया । बहवलखा ने अपनी तीव्र खनखनाती हुई तलवार से गुरु राम पर प्रहार किया जिससे उनका सिर कट गया तथा उनके कटे हुए सिर को भगवाग निव ने तत्काल उठा लिया—

गुर दिग कूडलि देखि, पेलि बहवल्ल खान धपि ।

द्रौपह सुत जिमि तेग, वेग झारी झनंग झपि ॥

राम सोस लिय ईस, कमल बिन खंजर कढ़्यो ।

हृय्य छेदि उर खान, पीठि पच्छे दल बढ्यो ॥

वामंग हृय्य अचरिज सुनहु, अरि फटि तें असिवर लियो ।

जानेज साहि साहाबदी, हय समेत चव खंड कियो ॥ छं० ३४५ ।<sup>१</sup>

उपयुक्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि गुरु राम जहाँ एक ओर मंत्र-तंत्र में निपुण थे वहीं दूसरी ओर शस्त्र चलाने में भी अत्यन्त कुशल थे । गोरी तथा चौहान के मध्य होने वाले युद्ध में गुरु राम पुरोहित युद्ध कौशल दिखाते हुए वीरगति को प्राप्त हुए ।

## ऐतिहासिकता :

जिस प्रकार से दिल्ली-अजमेर के शासक पृथ्वीराज चौहान एक ऐतिहासिक व्यक्ति हैं

१. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० ३४२, स० ६१ तथा पृथ्वीराज रासो, नगरी प्रचारिणी सना काशी, छं० १४२३, स० ६६ ।
२. वही, छं० ३४३ स० ६१; तथा वही, छं० १४२४, स० ६६ ।
३. वही, छं० ३४५, स० ६१; तथा वही, छं० १४२७, स० ६६ ।

उसी प्रकार से गुरु राम को भी ऐतिहासिक मानने में सन्देह न करना चाहिए । महामाहोपाध्याय गौरीशंकर हीराचन्द ओझा ने अत्यन्त परिश्रम करके गुरु राम के घराने का पता लगा लिया है । इन्हीं के पूर्वज सम्भवतः गुरु राम, पृथ्वीराज चौहान के पुरोहित थे । हम उन्हीं के शब्दों को यहाँ पर ज्यों का त्यों प्रस्तुत कर रहे हैं, जिसने विद्वानों को गुरु राम के अस्तित्व में किसी प्रकार का सन्देह न रह जावे—“पुरोहित राम के पूर्वज अजमेर के सम्राट पृथ्वीराज चौहान के पुरोहित थे । वे पृथ्वीराज के मारे जाने और उसके सम्राज्य पर मुसलमानों का अधिकार हो जाने के पीछे उसके वंशज हम्मीर तथा रणथम्भीर के चाहानों के पुरोहित रहे ।”

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि पुरोहित राम के पूर्वज पृथ्वीराज चौहान के पुरोहित थे । सम्मतः पुरोहित राम के पूर्वज और कोई नहीं उन्हीं के नामधारी पुरोहित ‘गुरु राम’ हो रहे होंगे ।

जगदेव भाट :

गुर्जरेश्वर भोलाराय भीमदेव चालुक्य के भाट का नाम जगदेव था । कवि चन्द द्वारा युद्ध हेतु भड़काए जाने पर भोलाराय ने जगदेव भाट को कवि चन्द के पास निम्नलिखित संदेश लेकर भेजा था—

सुनों भट्ट जगदेव, कहै मोरा भीमदे ।

तुमहुं चन्द पै जागु, पवरि पायान दिगंदि ॥

जो कुछ तुम बुल्लए, ज्वाव मंगन हों आयौ ।

ज्यौ सुत्तौ सुष उरग, मीडि वर पुछ जगायौ ॥

आयौ नरिंद गुज्जर सबर, करिय सेन चतुरंग भर ।

मो दिठ्ठ दिठ्ठ पुच्छिय सयन, बयन बाद मानो न उर ॥ छं० १०८ ।<sup>१</sup>

भट्ट जगदेव ने चन्द से कहा कि तुम दीपक, जाल, कुदाल से आडवरी वेप धारण करके गुर्जरेश्वर को छेड़ने गए थे, यदि कैमास, चामण्डराय अथवा संभरिपति पृथ्वीराज चौहान स्वयं गए होते तो मालूम पड़ जाता, तुमको तो उसने भट्ट, ब्राह्मण तथा दूत समझ कर छोड़ दिया—

कहु मिसरे छेड़्यौ, राउ गुज्जरी नरसर ।

दीबी जाल कुदाल, कहमि वह सह आडवर ।

१. महामहोपाध्याय गौरीशंकर हीराचन्द ओझा, उदयपुर का इतिहास, द्वितीय जिल्द, पृ० १०२४, वैदिक ग्रन्थालय, अजमेर, वि० सं० १९८८ ।

२. पृथ्वीराज रासो, मागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १०८, सं० ४४ ।



कह मिसरं कमास, जास पुच्छत विचप्पन ।  
 चामंड रा कहां गयी, बहुत राया घर दध्पन ॥  
 कह मिसरं कह विप्पनी, जगदेव संची खविय ।  
 वनन ह्य या दिद्ध घर, कह मिसरे संभरि धनिय ॥ छं० १०९ ।'

जगदेव के वचन सुनकर कवि चन्द ने भी ऐसा ही उत्तर दिया, कि अपने राजा से कहना कि अभी तक तुमने अनेक राजाओं को परास्त किया है किन्तु सम्भरिपति चौहान पृथ्वीराज को नहीं, इस बार बिना बिच्छू का मंत्र जाने हुए सर्प के बिल में हाथ डाला है, अर्थात् इस बार उसकी विजय होना असम्भव है—

बार बार बोलयी, सरस वत्तड़िया गुज्जर ।  
 अब विगति लभिन् है, मिरच चव्वं ज्यों गज्जर ॥  
 तू अनि राव मजाय, जिके रन अगम जिता ।  
 इन सभरि वं राव, कोडि सँ सहस विधत्ता ॥  
 मेदयो नहीं गुर अण्णरी, कविय वचन संहो सरं ।  
 कर नहीं मय घोछिय तनी, घत्ते ह्य सप्पा हरं ॥ छं० ११० ।'

चंद के उपर्युक्त वचन सुन कर जगदेव भट्ट पुनः गुर्जरेश्वर भोलाराय भीमदेव चालुक्य (द्वितीय) के पास लौट गया तथा सूचना दी कि हाथी, घोड़े तथा योद्धाओं की चतुरंगिणी सेना सजा कर पृथ्वीराज चौहान युद्ध हेतु अग्रसर हो रहा है—

सुनि सु वेन जगदेव फिरि । कहि मोरा नीमंग ।  
 आयो नृप चहुआन सजि, ह्य गय भर चतुरंग ॥ छं० १११ ॥'

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि जगदेव भट्ट भीमदेव का दरबारी भाट था । समय-समय पर यह दूतत्व कार्य भी किया करता था । पर्याप्त उल्लेख न मिलने के कारण यहाँ पर इतने से ही सन्तोष करना पड़ता है । जगदेव को ऐतिहासिक सिद्ध करना अत्यन्त कठिन कार्य है ।

## दुर्गा केदार :

गजनीपति शाह गोरी के दरबारी कवि का नाम दुर्गा केदार था । एक बार दुर्गा केदार के मन में कवि चन्द से शास्त्रार्थ करने की अभिलाषा जागृति हुई । अतः उसने गजनीपति गोरी से

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १०९, स० ४४ ।
२. यही, छं० ११०, स० ४४ ।
३. यही, छं० १११, स० ४४ ।

दिल्ली जाने की इच्छा प्रकट की। सुलतान ने भट्ट को यह कह कर आज्ञा दे दी कि मुझसे क्या पूछते हो, जहाँ जाना हो वहाँ जा सकते हो—

घरी एक बिसमति भयो, मुख दिक्खे सुरतान ।

मोहि भट्ट पुंछहु कहा, जाहु जहाँ तुम जान ॥ छं० २३ ॥<sup>१</sup>

भट्ट दुर्गा केदार ढाई माह निरन्तर चल कर पृथ्वीराज के पास पानीपति पहुँचा—

पक्ख पंच पथह गवन, आतुर खरि उत्तान ।

सुनिय राज संभरि धनो, पानी पंथ पयान ॥ छं० २८ ॥<sup>१</sup>

कवि ने पृथ्वीराज के समक्ष पहुँच कर, उसके गुणों पर मोहित हो राजा पृथ्वीराज को आशीर्वाद दिया तथा अपनी नीति एवं काव्य प्रतिभा से उसका चित्त जीत लिया—

दिय असीस प्रथिराज को, बहुत भाव गुन चाव ।

साम वाम दँड मेदि करि, तव तिन वेध्यो राव ॥ छं० ३५ ॥<sup>१</sup>

अन्ततोगत्वा कवि ने अपने आने का अभिप्राय प्रकट करते हुए कहा कि—सुना है आप का कवि चन्द अथाह बुद्धि वाला है। हे राजा, अतः मैं उससे शास्त्रार्थ करने की कामना से ही यहाँ उपस्थित हुआ हूँ :

कहै भट्ट नृप राज सुनि, मुहि मति बुद्धि अगाध ।

सुनिय चन्द वरदाय है, आयौ वहन वाद ॥ छं० ३७ ॥<sup>१</sup>

उदार हृदय चौहान पृथ्वीराज ने शास्त्रार्थ की आज्ञा दे दी। दोनों कवि शिष्टाचार के उपरान्त अपनी-अपनी कला प्रदर्शन हेतु सम्मुख आ बैठे। सर्व प्रथम दोनों ने अपनी-अपनी काव्य प्रतिभा का चमत्कार दिखाया।<sup>१</sup> जब दोनों में से किसी की हार न हुई तो पुनः तंत्र-मंत्र का चमत्कार प्रस्तुत किया गया। भट्ट केदार ने एक घट से ज्वालाएं प्रकट की तथा वेदोच्चार करवाया, चन्द ने भी प्रत्युत्तर में अपने घट से १४ विद्याएं प्रकट कर दी। पुनः केदार भट्ट ने एक अश्व से चौहान पृथ्वीराज को आशीर्वाद दिलवाया, चन्द ने भी उसी अश्व के मस्तक पर कुछ पुष्प फेंके जिसके फलस्वरूप अश्व ने एक आशीर्वादात्मक गाथा का उच्चारण किया। भट्ट केदार ने अपने मंत्रबल से पत्थर को पिघला कर उसमें अंगूठी डाल दी, और कवि चन्द ने शिला को पुनः द्रव्य रूप में परिणित कर अंगूठी को निकाल लिया,

१. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० २३, स० ५६।

२. वही, छं० २८, स० ५६।

३. वही, छं० ३५, स० ५६।

४. वही, छं० ३७, स० ५६।

५. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ७५-८४, स० ५८।

भट्ट केदार ने माना प्रकार के कला प्रदर्शन किए किन्तु कवि चन्द ने सबके प्रत्युत्तर दिए ।  
मृत में दोनों कवियों के तंत्र-मंत्र समान कोटि के सिद्ध हुए—'

पट्ट मंत्र वरदाय , चत्थो पापन सुरंग कल ।  
घट बहं रिति कलिय , विद्ध असीस हम सुखल ॥  
वर सुदरि कटि नंघि , और आरम्भ सु किन्नी ।  
पंथ मय बहु जुगति , मंगि फिर बोल सु दिन्नी ॥  
ठट्ठो सु दुर्गा केदार वर , देव विष्ट नंघे सुनन ।  
जित्थी न कोय हार्यो न को , सुनिय कय्यप्रथिराज उन ॥ छं० १४८ ॥  
घाद घिबादन घोर कवि , सत्ति सुभाव सुधीर ।  
दुग मत्ति तो संचरी , जो चन्द वयठ्ठी नीर ॥ छं० १४९ ॥'

ग्रन्थकार के मतानुसार दुर्गा केदार जाति का भट्ट ब्राह्मण तथा गजनीपति शाह सुल्तान गोरी का दरबारी कवि था ।' कवि चन्द तथा भट्ट के शास्त्रार्थ के व्याज से उसकी योग्यता पर भी पर्याप्त प्रकाश डालने का प्रयत्न किया गया है । किन्तु यहाँ पर यह कहना कठिन ही नहीं प्रायः असम्भव है कि वास्तव में दुर्गा केदार नामक कोई भट्ट गोरी के दरबार में था अथवा नहीं । उस युग की परम्परा को ध्यान में रख कर अनुमान ही लगाया जा सकता है कि दुर्गा केदार गजनीपति का दरबारी कवि हो तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है ।

## ऐतिहासिकता :

हिन्दी साहित्य के प्रथम इतिहास में लिखा है कि "कवि और वंदीजन, ११५० ई० में उत्पन्न थे । शिवसिंह सरोज का कथन है कि भट्ट, अलाउद्दीन गोरी के यहाँ थे । अतः यह ११५० ई० के लगभग उपस्थित थे और यदि इनकी कोई भी रचना सुलभ हो जाय तो वह उपलब्ध भाषा साहित्य का सभ्यतः प्राचीनतम नमूना होगा इनकी कोई भी कविता हमारी नजर से नहीं गुजरी, और यदि टांड संग्रह में वे सुलभ नहीं हैं तो मुझे आशंका है कि वे खो गई हैं । संभवतः इनका उल्लेख टांड में हुआ है, पर मुझे टांड में इनका नाम नहीं मिला । अनुवादक महोदय श्री किशोरीलाल गुप्त ने उपर्युक्त कथन पर टिप्पणी लिखी है वह भी कविता उद्धृत है, जिसका तृतीय चरण यह है—

१. पृथ्वीराज रासो, नगरी प्रचारिणी समा काशी, छं० ८५-१४१, स० ५८ ।

२. वही, छं० १४८-४९, स० ५८ ।

३. निता एक निज गेह । नट साहाव दुग वर ।

परिय देवि उर ध्यान । इष्ट चिन्तन सु अप्प कर ॥ छं० १४, स० ५६ ॥

—पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर ।

चंद चउहान के केदार गोहि साहि जू के ,  
गंग अकबर के बखाने गुन गान है ।

इसके अनुसार केदार किसी गोरी शाह के यहाँ थे । इस गोरी का नाम अलाउद्दीन नहीं था, सम्भवतः शहाबुद्दीन था । शुक्ल जी इस कवित्त को भट्ट भणत मानते हैं । शुक्ल जी के अनुसार यह केदार (केदार नहीं जैसा कि ग्रियर्सन ने लिखा है) कन्नौज के राजा जयचन्द के यहाँ स० १२२४ और १२४३ के बीच थे । इन्होंने जयचन्दप्रकाश नामक महाकाव्य लिखा था, जो आज उपलब्ध नहीं, पर इसका उल्लेख बीकानेर के राजा के पुस्तक भंडार में सुरक्षित सिंघायच दयालदास कृत राठीड़ां री की ख्याति में हुआ है ।<sup>१</sup>

डॉ० रामकुमार वर्मा ने भी अपने हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास में केदार भट्ट नामक कवि के विषय में लिखा है किन्तु वह गोरी का दरबारी कवि नहीं मानते हैं । उन्होंने लिखा है “पृथ्वीराज रासो के बाद दो ग्रन्थों का उल्लेख मिलता है, जिनके सम्बन्ध में निश्चित रूप से कुछ भी नहीं कहा जा सकता । पहला ग्रन्थ है ‘जयचन्दप्रकाश’ जिसका कर्ता भट्ट केदार कहा जाता है । इसने कन्नौज के अधिपति जयचन्द की वीर गाथा का गान किया है । इस ग्रन्थ का परिणाम भी अज्ञात है क्योंकि वह अभी तक अप्राप्य है, उसका केवल निर्देश मात्र ‘राठीड़ा री ख्यात’ नामक संग्रह ग्रन्थ में मिला है, जिसका लेखक सिंघायच दयालदास नामक कोई चारण था । अतः यह केदार कृत ‘जयचन्दप्रकाश’ हिन्दी साहित्य के इतिहास में केवल स्मरण कर लेने की वस्तु है । भट्ट केदार का समय संवत् १२२५ माना गया ।”<sup>२</sup>

अन्य प्रमाणों के अभाव में भट्ट केदार के विषय में निश्चित मत देना असंभव है । पृथ्वीराज रासो के लघुतम एव लघु संस्करण इसके विषय में मौन है ।

भानु :

पृथ्वीराज रासो के अनुसार ‘भानु’ आवूपति सलपराज का कुल पुरोहित था जो पृथ्वीराज चौहान के पास कन्या इंच्छिनी का लग्न लेकर दिल्ली आया था । इसी पुरोहित ने कुमारी इंच्छिनी का सौन्दर्य वर्णन पृथ्वीराज के समक्ष प्रस्तुत किया था—

पठ्यौ प्रोहित भान कर , कनक पत्र लिखि लग्न ।

श्रीफल बहुल रतन्न जरि , पिबिख होत मन मग्न ॥ छं० ३ ॥

१. डॉ० अब्राहम जार्ज ग्रियर्सन, हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास, पृ० ६०-६१, ओमप्रकाश नेरी, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय पो० बों नं० ७०, वराणसी, प्रथम संस्करण नवम्बर, १९५७ ।

२. डॉ० रामकुमार वर्मा, हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, पृ० २७२, राम-नारायण लाल इलाहाबाद, तृतीय संस्करण, १९५४ ।

पृष्ठ-पूछत बनननि सुनि, कही वाल किन वेस ।

वितरु रूप गुन अगरी, सुनन मोहि अंदेस ॥ छं० ४ ॥<sup>१</sup>

रा० ए० मो० लदन की अप्रकाशित रासो के मध्यम संस्करण की प्रति में पुरोहित भानु का उल्लेख प्राप्त होता है । रासो के अन्य संस्करण इनके विषय में मौन है । इतिहास इनके विषय में कोई उल्लेख प्रस्तुत नहीं करता ।

**माधो भाट :**

गजनीपति जहाबुद्दीन गोरी के राजकवि का नाम माधो भाट था । ग्रन्थकार के मतानुसार वह समस्त विद्याओं में निपुण था । 'नाना प्रकार के मंत्रों का ज्ञाता, तर्क-वितर्क के जानने वाला तथा चौसठ विद्याओं में निपुण था । वह छन्द तथा काव्य रचना का मरमज्ञ था ।' एक बार गजनीपति गोरी ने माधो को दिल्ली की समस्त सूचना प्राप्त करने के लिए भेजा था । माधो, गोरी की आज्ञा मान कर दिल्ली आया तथा दिल्ली का सौन्दर्य एवं अपार वैभव देख कर मोहित हो गया ।<sup>२</sup> माधो भाट ने अपनी कुशाग्र बुद्धि एवं वाक्-चातुर्य से दिल्ली पहुँच कर पृथ्वीराज चौहान के समस्त सामन्त-गणों को मुग्ध कर लिया—

दिपि नट माधो नरिद । राजधानी चहुआनी ॥

दूत भेद अनुसरं । दूत लग्यो परिमानी ॥

हिन्दु भाष पट रस । मेछ पारसी उच्चारं ॥

जहाँ अछिर फोड़ कहै । वान तै ही विधि मारै ॥

नापा फवित नाटिक सकल । गीत छन्द गुन उच्चरं ॥

जानत तर्क चितर्क सब । राग विरागह अनुसरं ॥ छं० १२ ॥

हिन्दू हिन्दू अबचने । रचने मेछायं मेछयो वयनं ॥

ज जं जेम समुत्तमं । तं त समुझाय माधव भट्टं ॥ छं० १३ ॥<sup>३</sup>

अन्त में माधो भाट जिस उद्देश्य से आया था, उसी में लग गया । अतः पृथ्वीराज चौहान के सम्राट्ट प्रमाइन कायस्थ से माधो भाट ने दिल्ली पति पृथ्वीराज के समस्त गुप्त भेद जान लिए—

प्रमाइन कायय सुरग । मिल्यो वर भट्ट प्रमानं ॥

जू कटु भेद अहुआन । दिप्यो निहर्ष सुरतानं ॥ छं० १४ ॥<sup>४</sup>

१. पृथ्वीराज रासो, साहित्य संस्थान उदयपुर, छं० ३-४, स० १४ ।
२. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० २, स० १९ ।
३. यही, छं० ३-४, स० १९ ।
४. यही, छं० ५-८, स० १९ ।
५. यही, छं० १२-१३, स० १९ ।
६. यही, छं० १४, स० १९ ।

दिल्लीपति पृथ्वीराज चौहान ने गजनीपति गोरी के दूत माघो भट्ट को एक माह तक दिल्ली में बड़े सम्मान के साथ रखा तथा विदाई के समय इतना अधिक दान दिया जितना माघो भट्ट को इससे पूर्व कहीं भी प्राप्त नहीं हुआ था—

लैं सुदान गज्जनपुर लायो । दूतो दान जनमत न पायो ॥

महादान विद्या परकारं । दियो राज चौहान विचारं ॥ छं० २० ॥<sup>१</sup>

अपार धन-राशि दान स्वरूप पाकर माघो भाट गजनी की ओर चल दिया तथा घमाइन कायस्थ के द्वारा प्राप्त समाचार को गोरी से कह सुनाया । किन्तु गोरी को भट्ट की वाणी का विश्वास न हुआ । उसने माघो को 'भाट' कह कर उसकी उपेक्षा की तथा एक अन्य दूत दिल्ली भेद लेने के लिए भेज दिया—

साह बबी सुरतान तब । माघो कह्यो न मानं ॥

भट्ट जाति जीह गुनो । दूत सुषठ्य प्रमानं ॥ छं० ७३ ॥<sup>२</sup>

दूत के दिल्ली आगमन पर पुनः घमाइन कायस्थ ने दिल्ली के सब मंत्रियों के विषय में बात कर अन्य भेद भी कागज पर लिख दिए—

विवरि धवरि धमानं । कही चहुआन सेन वर ॥

पण्य सत्त राजान । सुवास कीन पिथ्य पुर ॥

पण्य पंच कैमास । राव चावड पण्य चव ॥

वसि वित्ते दिन अट्ट । पण्य लोहान रसे सब ॥

चहुआनं कन्ह पण एक हुअ । बसिय वास दिन पंच हुअ ॥

सामत अवर आगम इछं । सवन वास चहुआन रय ॥ छं० ९५ ॥

लषि करि इह बंधी विवरि । राज धूमस चहुआनं ।

दिय कगर तसु दूत कर । घर कागर ध्रम्मान ॥ छं० ९६ ॥<sup>३</sup>

डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी, ने पं० रामचन्द्र शुक्ल द्वारा बताए हुए मधुकर भट्ट को ही माघो भाट होने की सम्भावना व्यक्त करते हुए लिखा है कि—१९वें समय में माघो भाट को शहाबुद्दीन का राजकवि बताया गया है । यह व्यक्ति शहाबुद्दीन का विश्वासपात्र था और वह पृथ्वीराज के दरबार की गुप्त खबरें संग्रह कर रहा था । वह कई भाषाएं बोल सकता था । हिन्दुओं से तो हिन्दुओं की भाषा बोलता था और मुसलमानों से मुसलमानों की । जो जैसे समझ सकता था उसे माघो भाट उसी प्रकार समझा देता था—

१. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० २०, स० १९ ।

२. वही, छं० ७३, स० १९ ।

३. वही, छं० ९५-९६, स० १९ ।

हिन्दू हिन्दुस घबने, रचने मेच्छय मेच्छय घबने ।

जं जं जेम समुझा, तं तं समुसाय माघवं भट्ट ॥

प्रमाणन (धमादन) कायस्थ ने इस कवि को दरबार के भेद बता दिए थे। इन बातों ने जान पड़ता है कि परम्परा यह बात विदित थी कि शहाबुद्दीन के दरबार में हिन्दू भाट सम्मान पाते थे। सम्भवतः १० रामनन्द शुक्ल जिसे मधुकर भट्ट कहते हैं, वे माघो ही हों। यह बात सम्भव जान पड़ती है।

यहाँ पर सँका उठता स्याभाविक है कि क्या गजनी में उस समय हिन्दू जनता थी? डॉ० द्विवेदी माघो भाट का समयन करते हुए ही हिन्दू जनता होने के पक्ष में इस प्रकार लिखते हैं कि—“यद्यपि महमूद ने बहुत थोड़े पहले ही गजनी के ब्राह्मण राजाओं से राज्य छीना था और यहाँ तक भी बहुत से हिन्दू थे और कुछ पुराने बंदीजन भी उसके आश्रय में रह गये हों तो आश्चर्य करने की बात नहीं है। जो हो, इससे केवल इतना ही सिद्ध होता है कि सुदूर गजनी में भी कुछ भाषा कवि वर्तमान थे, परन्तु उनकी कविता कैसी होती थी, भाषा कैसी थी, यह जानन का कोई उपाय नहीं है।”

रासोकार ने माघो भाट का विशेष विवरण प्रस्तुत नहीं किया है। न ही आज तक कोई इस नाम के कवि की रचना ही प्राप्त हो सकी जिसके आधार पर कुछ लिखा जा सके। अतः ऐसी विषम स्थिति में इनके विषय में कुछ भी कहना सम्भव नहीं है। रासो के आधार पर इतना निर्विवाद रूप से सिद्ध जा सकता है कि यह एक योग्य भाषाविद्, सफल दूत तथा गुप्तचर का कार्य करने में समर्थ था।

श्रीकंठ :

‘पृथ्वीराज रासो’ में कान्यकुब्जेश्वर जयचन्द के कवि का नाम श्रीकंठ बताया गया है—

शिव राग होत हरि गुन मिलत । उस सुनत सत्त सत्तह पिलत ॥

श्री कंठ सुगुर कवि कमल नट । जुग जोर समुप कमधज्ज पट्ट ॥ छं० ५४६ ।

राजसभा में इनका स्थान अत्यन्त सम्मान पूर्ण था। राजकवि श्री कंठ ही राजा जयचन्द के पुरोहित का कार्य भी सम्पादित करता था। संयोगिता अपहरण के उपरान्त जयचन्द के, पृथ्वीराज चौहान को जामात्र मानने के लिए वाध्य होने पर, श्रीकंठ ने ही दिल्ली जाकर पृथ्वीराज तथा संयोगिता का विवाह विधिवत सम्पन्न कराया था। महाराज पृथ्वीराज चौहान ने इस कवि एवं पुरोहित श्रीकंठ को अपने यहाँ अत्यन्त सम्मान के साथ ठहराया था।

१. डॉ० हमारीप्रसाद द्विवेदी, हिन्दी साहित्य का आदि काल, पृ० ३२-३३, द्वितीय संस्करण, बिहार साहित्य परिषद, पटना-३ ।

२. यही, पृ० ३२-३३ ।

३. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० ५४६, सं० ६१ ।

ऐतिहासिक ग्रन्थों को देखने पर श्रीकंठ नामक किसी कवि का जयचन्द के दरबार में उल्लेख नहीं मिलता है। वैसे संस्कृत साहित्य के अन्तर्गत पंगराज जयचन्द का नाम विशेष उल्लेखनीय रहने का एक मात्र कारण यही है कि उसने नाना साहित्यिक व्यक्तियों को राज्य आश्रय दिया था। नेपथ्यीय चरित्र का रचयिता श्रीहर्ष जो हीर एवं मांगल्लदेवी का पुत्र था, जयचन्द का राज्यश्रित कवि था। श्रीहर्ष एवं पंगराज की राज सभा के सम्बन्ध विषयक प्रमाण जैन कवि राजशेखर के प्रसिद्ध ग्रन्थ प्रवच कोष से प्राप्त हुए जहाँ उन्होंने लिखा है कि—“श्रीहर्ष कान्यकुब्जाधिपति जयचन्द्रस्य सभा सन महाकविरासीत.....।”<sup>१</sup> स्वयं श्रीहर्ष ने भी पंगराज द्वारा सम्मानित होने की बात का उल्लेख किया है। “ताम्बूलद्वय आसन च लनते यः कान्य-कुब्जेश्वरात्।”<sup>२</sup> तात्कालीन भारतीय सम्राटों में श्रेष्ठ विद्वानों का सम्मान ताम्बूल देकर ही किया जाता था।

अतः यह निर्विवाद सत्य है कि राजा जयचन्द के राज्याश्रय में नानाकवि रहा करते थे। सामग्री अभाव के कारण श्रीकंठ के विषय में प्रामाणिक रूप से लिखना अत्यन्त कठिन है। असंभव नहीं यदि श्रीकंठ नाम का कोई कवि भी उनके राज्याश्रय में रहा हो।

### हाजीखाँ काजी :

‘पृथ्वीराज रासो’ के अनुसार हाजीखाँ काजी, गजनीपति शाह शहाबुद्दीन गोरी का काजी था। ‘सलष युद्ध समय १३’ के अन्तर्गत पृथ्वीराज चौहान तथा गोरी के मध्य युद्ध होने पर तथा मुस्लिम सेना का आतंक बढ़ता हुआ देख कर पृथ्वीराज चौहान के पुरोहित गुरु राम ने अपने मंत्र बल के द्वारा गोरी की सेना में मोह निद्रा व्याप्त कर दी थी। इस पर गोरी के काजी हाजीखाँ ने यवन सेना का मोह-निद्रा अपने मन्त्रबल द्वारा समाप्त कर दी जिससे दोनों दल पुनः प्रचार-प्रचार कर लड़ने लगे।<sup>३</sup> काजी ने युद्ध की भोषड़ता एवं यवनों को परास्त होते देखकर अपने हाथ की तसवीह तोड़ दी थी।<sup>४</sup> इतिहास में काजी जी को खोजना अत्यन्त कठिन है।

१. डॉ० रमाशंकर त्रिपाठी, हिस्ट्री ऑफ कन्नौज, पृ० ३३१।

२. श्री शिवदत्त, नेपथ्यीय चरित, अध्याय २२, बम्बई, सन् १९१९।

३. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० १०१-८, सं० १३।

४. वही, छं० ११०, सं० १३।

५. ‘रासो’ के विवरण से स्पष्ट विदित होता है कि युद्ध में काजी आदि भी जाया करते थे तथा वह अपने साथ तसवीह आदि भी रखते थे।



## उपसंहार

विद्वानों ने एक मत हो कर स्वीकार किया है कि "इस देश में इतिहास को ठीक आधुनिक अर्थ में कभी नहीं लिखा गया। बराबर ही ऐतिहासिक व्यक्ति को पौराणिक या काल्पनिक बनाने की प्रवृत्ति रही है। .....कर्म फल की अनिवार्यता में दुर्भाग्य और मोभाग्य की अद्भुत शक्ति में और मनुष्य के अपूर्व शक्ति भाण्डार होने के दृढ़ विश्वास ने इस देश के ऐतिहासिक तथ्यों को सदा काल्पनिक रंग में रंगा है। यही कारण है कि जब ऐतिहासिक व्यक्तियों का भी चरित्र लिखा जान लगा तब भी इतिहास का कार्य नहीं हुआ। सन्त तक ये रचनाएँ काव्य ही बन सकीं, इतिहास नहीं।"

कवियों के हाथ में पड़ कर इतिहास को सदैव कल्पना के हाथों परास्त होना पड़ा। भारतीय कवियों ने ऐतिहासिक व्यक्तियों के नाम पर काव्य लिखा। काव्य निर्माण की ओर उनकी प्रवृत्ति विशेष रही, विवरण सग्रह की ओर कम, कल्पना विलास का अधिक सम्मान हुआ किन्तु तथ्य निरूपण का कम। ऐतिहासिक तथ्य तो उनके काव्यों में कल्पना का उत्कर्ष प्रदान करने के साधन बन गए। कल्पना एवं सभावना को उत्तरोत्तर प्रणय प्राप्त होने के फलस्वरूप ही इन ग्रन्थों में शुद्ध इतिहास नहीं मिलता, किन्तु फिर भी ऐतिहासिक शोध की सामग्री थोड़े बहुत अंगों में प्राप्त हो ही जाती है। फिर भारतीय परम्परा सदैव से दुःखपरक विरोधी परिस्थितियों की उपेक्षा कर नायक को उसका उपयुक्त गौरव प्रदान करने की रही है। भारतीय कवि इतिहास प्रसिद्ध पात्र को भी निजन्धरी कथानकों की ऊँचाई तक ले जाना चाहता है।

"पृथ्वीराज रासो" ऐतिहासिक व्यक्ति के नाम के साथ संबद्ध एवं उल्लिखित परिपाटी का अनवाद नहीं है। वास्तव में कवि ने अपने काव्य नायक के उत्कर्ष हेतु ही अन्य पात्रों का

सृजन किया है। इतिहास प्रसिद्ध समसामयिक चरित्रों को लेकर उन्हें अपनी आवश्यकता एवं मनोवृत्ति के अनुकूल ही रूप दिया है। कवि रुचि से बाध्य पृथ्वीराज चौहान भी “पृथ्वीराज रासो” का एक ऐसा ही पात्र है। अजमेरपति सोमेश्वरदेव के अपूर्व तप एवं पुण्य के परिणाम स्वरूप चरित्र नायक पृथ्वीराज का जन्म हुआ। जिस दिन उनका जन्म हुआ, पृथ्वी का भार भी उसी दिन हल्का हो गया। उनके जन्म से क्षत्रियों के छत्तीसों वंश प्रसन्न हो उठे। गुरु राम से चौदह विद्याओं, चौरासी कलाओं अस्त्र-शस्त्र का संचालन एवं गीतया ब्राह्मण की पूजा आदि की शिक्षा ग्रहण कर पृथ्वीराज ने संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, पेशाची मागधी, शौरसेनी इन छः भाषाओं का ज्ञान प्राप्त किया।

पुरुषार्थी योद्धाओं को सम्मानित करने वाले तथा परिस्थिति विशेष में सोलह गज ऊँचे गवाक्ष से कूद पड़ने वाले लोहाना को “आजानवाहु” उपाधि देने वाले थे। शरणागत सात चालुक्य भाइयों को दरबार में मूँछ ऐँठने के साधारण से अपराध पर, कन्हू द्वारा मारने पर सम नीति को दृष्टि में रख कर आँखों पर सोने की पट्टी बंधवा दी, कन्या दान का वचन देकर अपमान करने वाले मडोवरपति नाहरराय परिहार को परास्त कर, उसकी कन्या का पाणिग्रहण करके प्रतिष्ठा एवं सम्मान की रक्षा की। शरणागत वत्सल्य पृथ्वीराज ने गजनी-पति शाह शहाबुद्दीन गोरी के भाई मीरहुसैन को आश्रय दिया जिसके परिणाम स्वरूप गोरी से आजन्म शत्रुता का सूत्र-पात हुआ। गुजंरेश्वर भोलाराय भीमदेव चालुक्य के दुव्याहार से दुःखी सलष प्रमार की सहायता कर उसकी पुत्री इन्छिनी से विवाह स्वीकार किया। समुद्र शिखरगढ़ की राजकुमारी पद्मावती की याचना पर उसका हरण किया, अपनी एक माय बहिन पूथा का विवाह रावल समरसिंह से किया, देवगिरि की यादव कुमारी शशिवृत्ता का हरण किया तथा यादवराज पर जयवन्द के क्रुद्ध होने पर उसकी रक्षा की, उज्जैनपति भीमदेव के अपनी कन्या इन्द्रावती का पहिले विवाह प्रस्ताव कर फिर पलटने पर युद्ध करके राजकुमारी का वरण किया, रणथम्भोर के राजा भान की सहायता कर शिशुपाल वंशी पंचाइन को परास्त किया, सोमेश्वर के निघन पर राज्यसिंहान प्राप्त किया, तथा पितृघाती भीमदेव चालुक्य को मार कर ही दम लिया, राजसूय यज्ञ में द्वारपाल का कार्य अस्वीकार करने पर पंगराज द्वारा स्वर्ण मूर्ति के रूप में उक्त स्थान पर खड़े किये जाने के अपमान के परिणाम स्वरूप उसके भाई बालुकागय को युद्ध में मार कर यज्ञ विध्वंस किया, अन्तःपुर में रहने वाली अपनी प्रेयसी करनाटी वेश्या के साथ अशिष्ट व्यवहार करने के अपराध में अपने प्रिय मंत्री कैमास का वध किया, पंगराज की राजकुमारी संयोगिता द्वारा तीन बार अपनी स्वर्ण प्रतिमा

१. सोमेश्वर महाबाहो । तस्यापूर्वं तपो गुणोः ॥  
तेन पुण्यं जगज्जेता । गर्मान्ते पृथुराडयम् ॥ छं० ६९६; स० १।
२. ज दिन जनम प्रथिराज भो । त दिन मार घर उत्तरिय ॥ छं० ६८८, स० १।
३. विगसंत बदन छत्तीस बंस । जदुनाथ जन्म जनु जदुन बंस ॥ छं० ७१५, स० १।
४. संस्कृत प्राकृत चैव । अपभ्रंशः पिशाचिका ॥  
मागधी शूरसेनी च । षट् भाषाश्चैव ज्ञायते ॥ छं० ७४६, स० १।

की घर माना पहिनाने की सूचना प्राप्त कर, छद्मवेश में अपने प्रिय मित्र एवं कवि चन्द बर-दाई को साथ लेकर, कन्नौज पहुँच कर उसका हरण किया तथा पगराज की असद्व्य सेना से विरामबुद्ध कर अपने श्रेष्ठ चौसठ सामन्तों का आहूति देकर संयोगिता को पत्नी रूप में प्राप्त किया। उन्नीस बार गोरी से मोर्चा सेने तथा चौदह बार बन्दी बना कर पुनः मुक्त कर देने वाले पृथ्वीराज ने अपनी दयावीरता का परिचय दिया। तथा अन्तिम युद्ध में गोरी द्वारा बन्दी तथा जेठा किए जाने पर भी कवि चन्द की सहायता से अपना वीर का बदला लेने में कृतकार्य हुआ तथा गजनी दरबार में कवि की छुरी से आत्मघात करके इह लोक लीला समाप्त की। मनेच्छों का भार भूमि से हटाने वाले इस परम पराक्रमी राजा पृथ्वीराज चौहान की मृत्यु पर देवताओं ने पुष्पांजलि डाली थी।<sup>१</sup> इतना ही नहीं वीणा-पाणि सरस्वती भी इस पराक्रमी योद्धा के सत् कार्यों में प्रभावित होकर कह उठी थी—‘पृथ्वीराज के गुणों का श्रवण करने से मयको आनन्द उपलब्ध होता है, पृथ्वीराज के गुण सुन कर गीदड़ के समान पुरुष भी रण प्रांगण में युद्ध करता है, पृथ्वीराज का गुणानुवाद सुन कर कृपण जन कपट रहित हो जाते हैं, पृथ्वीराज के गुण जान कर गूंगा व्यक्ति भी सिर हिलाने लगता है, नव रसों से परिपूर्ण पृथ्वीराज का सरस ‘रासो’ मूर्खों को पंडित एवं असहाय को साहसी बनाने में समर्थ है—’

प्रियराज गुन सुनत । होय आनन्द सकल मन ॥

प्रियराज गुन सुनत । करय संग्राम स्यार रन ॥

प्रयीराज गुन सुनत । क्रयन कपटय ते खुल्लय ॥

प्रयीराज गुन सुनत । हरपि गूगो सिर डुल्लय ॥

रासो रसाल नवरस सरस । आजानो जानप लहे ॥

निसटो गरिष्ट साहस कर । सुनी सति सरसति कहै ॥ छं० २४० ॥<sup>१</sup>

उपयुक्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि ‘पृथ्वीराज रासो’ वास्तव में पृथ्वीराज चौहान (तृतीय) के साहित्यिक कार्यों का अभिलेख मात्र है। कवि ने पृथ्वीराज के चरित्र-चित्रण में ही अपनी प्रतिभा का उपयोग किया है। यही कारण है कि ‘रासो’ में अन्य पात्रों का विवरण प्रसंग यश ही कवि ने किया है। कवि रुचि से बाध्य कन्नौजपति जयचन्द गाहड़वाल, गुर्जरेश्वर भीमदेव चालुक्य, शाह शहाबुद्दीन गोरी आदि समस्त पात्र ‘पृथ्वीराज रासो’ के ऐसे ही पात्र हैं। ये प्रायः सभी दिल्लीपति पृथ्वीराज चौहान (तृतीय) के प्रबल प्रतिद्वन्द्वी हैं। सामयिक, परवर्ती साहित्य एवं इतिहास ग्रन्थों में उनका जो विवरण मिलता है, उससे कहीं अधिक बढ़ा-चढ़ा कर रासोकार ने प्रस्तुत किया है। इससे वह काव्य नायक पृथ्वीराज चौहान के चरित्र को उत्कर्ष प्रदान कर सका और यही उसे अभीष्ट भी था। फिर ग्रन्थकार ने वीर

१. मरन चन्द बरदाइ । राज पुनि सुनिग साहि हनि ॥

पुहपंजिल असमान । सोस छोड़ी सु देवतनि ॥

भेठ अवदिर धरनि । धरनि सब तीय सोह सिग ॥ छं० ५५६, स० ६७ ।

२. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, छं० २४०, स० ६८ ।

युग की वीर आत्माभिमान से ओतप्रोत वीर भावना को कहीं विस्मृत नहीं किया । नायक को उसका गौरव प्रदान करने के लिए उसने शाह शहाबुद्दीन गोरी, पृथ्वीराज चौहान तथा कवि चन्द बरदायी के एक ही समय अवसान दिखाने के लिए चौहान सम्राट के शब्दवेदी घाण का लाघव प्रदर्शन की घटना की अवतारणा करके इतिहास को भी नायक के गौरव गान की वेदी पर बलिदान कर दिया । इसी प्रकार प्रायः सभी पात्रों का भी जीवन कल्पना से अनुरजित है । पंगराज जयचन्द की मृत्यु की घटना भी ऐसी ही है । जहाँ इतिहासकारों द्वारा जिस कान्यकुब्जेश्वर के विच्छिन्न मस्तक का म्लेच्छ विदेशियों द्वारा भाले की नोक पर घुमाया जाना वर्णित है, वहाँ रासोकार 'उदधि बुडि के घर लियी' कह कर एक ओर म्लेच्छों के अपवित्र हाथों में जाने से बचा लिया तथा दूसरी ओर भारतीय विश्वास को भी प्रतिष्ठित किया । ऐसे असंगत प्रसंग देख कर ही कवि इतिहासज्ञ के कर्म से कवि कर्म को अधिक महत्व देता हुआ स्पष्ट दृष्टि-गोचर होता है ।

परिस्थितियों के सम्मुख विवश फिर भी उनसे निरन्तर जूझ कर अपने अमूल्य प्राणों की आहुति देने वाले, वीरयुग के प्रतिनिधि शासक एवं सामन्तों को अपभ्रंश कवि हेमचन्द के शब्दों में गौरव देना औचित्य की सीमोल्लघन न मान कर निष्पक्ष कर्म की सीमा में ही आता है और इन्हीं पक्तियों के साथ मैं इस प्रबंध क्रम को विश्राम देता हूँ—

तउ गुण संपद तुज्झ मदि तुअ अणुत्तर खंति ॥

सइ उप्पत्ति अन्न जण महि-मंडलि सिक्खन्ति ॥ छं० ३७२।१ ॥'

१. काश ! तुम्हारी गुण सम्पत्ति, तुम्हारी बुद्धि, तुम्हारी सर्वोत्तम क्षमा को महिमंडल से जन्म लेकर अन्य व्यक्ति भी सीख लेते ।

आचार्य हेमचन्द्र, अपभ्रंश व्याकरण; ३७२।१॥



## परिशिष्ट

१

(अ) अयान्यदा सपादलक्ष्मीयराज्ञः कश्चित् सन्धिविग्रहिकः श्रीकुमारपालनृपतेः सभायामुपेतो राज्ञा 'भवत्स्वामिनः कुशलम्' इति पृष्ठः । स मिथ्याभिमानी पण्डितमानी च 'विश्वं लातीति विश्वलः तस्य च को विजयसन्देहः ?' राज्ञा प्रेरितेन श्रीमता कपदिना मन्त्रिणा—श्वल श्वल आशु गतौ इति धातोः विरिव श्वलतीति विश्वल । अनन्तर प्रधानेन तन्नामद्रूपेण विज्ञप्तः स राजा विग्रहराज इति पण्डितमुखात्ताम वभार । परस्मिन् वर्षे स एव प्रधानः श्रीकुमारपालनृपतेः पुरो विग्रहराज इति नाम विज्ञपयन् मन्त्रिणा कपदिना-विग्रो विगतनासिका एवंविधो हराजो रुद्रनारायणौ कृतौ येन इति । तदनन्तरं स नृपः कपदिना नामखण्डनभीरुः कविदान्धव इति नाम वभार ।

(ब) स च (परमहिनामा नृपश्च) सपादलक्ष्मीयज्ञितिपतिना श्रीपृथ्वीराजेन सञ्जात-विग्रहः समराजिरमधिरूढः स्वसैन्ये पराजिते सति कान्दिशीकः कामपि दिशं गृहीत्वा पलायन-परः स्वां राजधानीमाजगाम । अथ तस्य परमहिपाथिवस्यापमानितपूर्वः कोऽपि तत्पूर्वसेवको निर्विषयीकृतः पृथ्वीराजराजसभामुपेतः प्रणामान्ते 'किं दैवतं परमहिपुरे निशेषात् सुकृति-भिरिज्यते ?' इति स्वामिनादिष्टस्तत्कालोचितं काव्यमिदमपाठित्—

मन्दश्चन्द्रकिरीटपूजनरसस्तूष्णा न कृष्णाचने .

स्तम्भः शम्भुनितम्बिनोप्रणतिषु व्यग्रो विधातुग्रहः ।

नाथो नः परमहानेन वदनन्यस्येन सरजितः

पृथ्वीराजनराधिपादिति तूष्णं तत्पत्तने पूज्यते ॥

इति स्तुतिपरितोषितः स राजा तं यथेप्सितेन पारितोषिकेणानुजग्राह । स च त्रिःसप्त-कृत्वः त्रासितम्लेच्छाधिपो द्वाविंशतितमवेलायां स एव म्लेच्छाधिपतिः पृथ्वीराजराजधानी-मुपेत्य निजदुर्घरस्कन्धावारेण समवात्सीत् । त्रासितमल्लिकेव भूयो भूयो रिपुरुपतीति निजजनप-तेररति मनोगतामवगम्य प्रभोः निःसीमप्रसादपात्रं द्वितीयमिव गात्रं तुङ्गनामा साग्रं तेजो वहन् सुभटकोटिकोटीरः स्वप्रतिविम्बरूपेण पुत्रेण समं म्लेच्छपतेरनीकं प्रविश्य तस्यौ ।

नितोपममेव तस्मिन् रिशोर्गुणदरात् परितः स्वादिराङ्गारधगघगायमानां परिखां निरीक्ष्याङ्गजं  
पलाद-‘अस्मां मम प्रविष्टस्य पृष्ठे पद ददानो म्लेच्छपति निगूहाणे’ ति पितुरादेशान्ते  
‘जादमेनमनासाधनमम् त्विन्न निजजीवितकाङ्क्षया पितुर्विपत्तिदशनम्, तदहमस्यां विशामि  
मदन् एव तमन्तं नयन्तु ।’ इत्युक्त्वा तेन तथाकृते स्वामिकार्यं पर्याप्तप्रायं मन्यमानस्त-  
मगनि नीलया निगूह्य यथागतमाजगाम । विभातभूयिष्ठ्यां निशि विपन्नं स्व स्वामिनं  
निरीक्ष्य पर दैव्यं दधन् म्लेच्छसैन्यं पलायांचक्र । स तुङ्गभटस्तुङ्गप्रकृतितया नृपतेः कदाचिन्न  
आदयामास । कस्मिन्नप्यवसरे राजमान्यतया नितान्तपरिचितां तुङ्गपुत्रवधूमवधूतमङ्गलवलया-  
मातीक्ष्य सम्प्रमान् नृपातना पृच्छवमानोऽपि पयोधिरिव गम्भीरतया मौनमर्यादया किमप्य-  
विज्ञयन् निजजपयदानपूर्वकं पृष्ठो निजगुणकथापनकं दुष्करमिति तथापि प्रभोरभ्यर्थनया  
निवेद्यमानमस्तीर्तानिधाय तद्बृत्तान्तं प्रत्युपकारभीरुर्यथावस्थितं निवेदयामास ।

“इयमुच्चधियामलीकिकी महती कापि कठोरचित्तता ।

उपकृत्य नवन्ति निःस्पृहाः परितः प्रत्युपकारशङ्कया ।”

(ग) अथ कदाचित्तस्य म्लेच्छपतेः सूनुर्नृपतिः पितुर्वरं स्मरन् सपादलक्षक्षितिपति-  
विग्रहकाम्यया सर्वमामप्रया समुपेतः । पृथ्वीनाथस्य नासीरवीरघनुर्धरशरैः प्रावृषेण्यधाराधर-  
धारासारैरिव तस्मिन् ससैन्येऽपि आसिते पृथ्वीराजस्तदा तदानुपदिकीभावं भजन् महानसाधि-  
कृतपञ्चकुलेन व्यज्ञपि-‘करभीणां सप्तशत्यापि महानसपरिस्पन्दः सुखेन नोह्यते,  
ततः कियतीभिः करभीभिः प्रभुः प्रसीदतु-इति विज्ञप्तो नृपतिः म्लेच्छपतिमुच्छेद्य  
तदोष्कमाच्छिद्य भवदभ्ययिताः करभीः प्रसादीकरिष्यामीति तत्संबोध्य पुनः प्रयाणं कुर्वन्  
मोमेत्तरनाम्ना प्रधानेन भूयो भूयो निपिध्यामानः तत्पक्षपातघ्नान्त्या निगूहीतकर्णः । तदत्यन्त-  
पराभयात् तस्मिन् प्रभो सामर्षो म्लेच्छपति प्राप्य तदभिभवप्रादुःकरणतस्तान् विश्वस्तान्  
पृथ्वीराजस्कन्धावारसन्निधौ समानीय, पृथ्वीराजराज्ञ एकादशपुपवासकृतपारणादनु सुप्तस्य  
तन्नासीरवीरैः सह समरसरम्भे सञ्जायमाने निर्भरनिद्रानिद्रायमाण एव तुरुष्कैर्नृपतिनिबध्य  
स्वमीधे नीतः । पुनरप्येकादशपुपवासपारणके नृपतेर्देवतार्चनावसरे म्लेच्छराज्ञा प्रहितं पत्र-  
पात्रीकृत मांसकं गुह्यदरान्तनिपुज्य तथैव देवताराधनवैयग्र्ये सति शुनाऽपह्नियमाणे तस्मिन्  
विनिजिते ‘किं न रक्षसि ?’ यामिकैरित्यभिहितः, करभीणां सप्तशत्या दुर्वहं यत् पुरा मम  
महानगं तत् साम्रतं दुर्देवयोगादीदृशीं दुर्दत्ताप्राप्तमिति फीतुकाकुलितमानसो विलोक्य-  
न्न-मीति तेनोक्ते-‘किं काचिदद्यापि त्वय्युत्साहशक्तिरवशिष्यत ?’ इति तैर्विज्ञप्ते ‘यदि  
रक्षस्यानं गतुं नभेत् तदा दजंयामि यपुःपीरूपमिति’ यामिकैर्विज्ञप्तो म्लेच्छभूपतिस्तात्साहसं  
दिद्भुस्तदीयां राजधानीमानोय पृथ्वीराजं तत्र राजसीधे यावदभिपेक्ष्यति तावत्तत्र चित्र-  
गानायां शूकरनिवृद्धेन्यमानान् म्लच्छानाजोक्यामुना मर्माभिघातेनात्यन्तपीडितस्तरुष्कपायिवः  
पृथ्वीराजं कूटारनिरप्येदपूर्वं सजहार ।

[ प्रबन्ध चिन्तामणि से ]

चाहमान वंश कीर्तनम्—

व्याहृत्य वाक्यमिति पुष्करकारणेन ।  
तूष्णीमभूयत च पुष्करकारणेन ।  
आसर्गसम्मतपिशाचजनादेनस्य  
भास्वत्यपत्यत दशा च जनादेनस्य ॥

तत्कालं रविमण्डलात्पुनरिव त्वष्टुर्गताद् गोचरं  
दैत्यारोविषयीकृताद् रविमयेनैवेक्षणेनोदगात् ।  
गाढाकृष्टनमोवरोहसमयन्यञ्चन्मुखाश्रावली—  
वल्गाहिं त्रुटितापतत्फणमणिज्योतिस्सपलन्तं सहः ।  
आकालाग्नेः शिवान्तं प्रथममजनि यत् तद् विपर्यासिवृत्या  
सम्प्रत्याग्नेयलिङ्गं किमिदमधतरत्यन्ययेयत् क्व तेजः ।  
इत्यन्तःकान्तिजातं कमलजकमलाकान्तमेलापवेला—  
साक्षित्वेन स्थितानां किमपि दिविपदां विस्मयं तद्वित्तेने ।

( प्रथम सर्ग )

इति प्रतापायतनेन तेजसा  
नमश्चराणां निचयेन चर्चितः ।  
जगत्त्रयीपुण्यसमृद्धिसंगमः  
पतङ्गमध्यात् पुरुषो विनिर्ययो ॥ १४ ॥  
करेण चापस्य हरेर्मनीषया  
चलेन मानस्य नयस्य मन्त्रिभिः ।  
धृतस्य नामाग्निमवर्णनिर्मितां  
स चाहमानोऽयमिति प्रयां ययौ ॥ ४५ ॥  
ककुत्स्थमिक्ष्वाकुरधू च यद् दधत्  
पुराऽभवत् त्रिप्रवरं रघोः कुलम् ।



कलावपि प्राप्य स चाहमानतां  
 प्रगटनूप्रवर वनूव तत् ॥ ७२ ॥  
 दष्ट वपूर्वपुरुषोदयनूप्रदेश—  
 मेनारजंऽनिभर्वाद्यप्रसहस्रनेत्राः ।  
 अश्रान्तयजशततपितहव्यवाह—  
 मुद्धान्तगीतभुजसाहसप्रदायाः ॥ ७४ ॥  
 ब्रह्मारविन्दमकरन्दकणान्तरङ्ग—  
 तीरङ्गधूलिविरसीकृतदिव्यभूङ्गाः ।  
 श्रीचाहमानकुलमुज्ज्वलयांचनूव—  
 दौमण्डलानरजभूवलयाः प्रवीराः ॥ ७९ ॥

दमे तेय मशेषप्रयमनूपभुजाकीर्तिसम्पद्वलाका—  
 मेमारम्भानुभूतच्छयिसदसिपटामोदविश्रान्तिशैलः  
 कलामोदवल्गुमङ्गीतकसनिकशिवादिष्टगंधर्वरामा—  
 गातव्योदामकर्मा समजनि वसुधावासनो वासुदेवः ॥ ८३ ॥  
 (द्वितीय सर्ग)

सधितुः कुले कति न भूपतयो भुजशालिनः समभवन्परे ।  
 स पुनर्यया व्यवज्रहार तथा न भगीरथो न सगरो न रघुः ॥ ५ ॥  
 यदि वा द्युचेरजनि यस्य कुले स विधेर्गतिः परिभवेष्वभवत् ।  
 नगवान् स्मरन्पकृति न ततस्तदलङ्कृताः परिवभूव दिशः ॥ २९ ॥  
 (तृतीय सर्ग)

जजे तदन्ययोदन्वत्सुधांशुर्वसुधापतिः ।  
 सामन्तराजः सामन्तराजिकैरविणीरविः ॥ ७ ॥  
 मुपुवे जयराज तं राजन्तं स जयश्रिया ।  
 यं विक्षयाजो विवस्वन्तं वस्वन्तं पाप राजकम् ॥ ८ ॥  
 दति स्तुत कविवरं मुंरुख्यं सर्वमहस्विनाम् ।  
 प्राप विप्रहराज स प्रहराजमिवात्मजम् ॥ ११ ॥  
 तनयश्चन्द्रराजोऽस्य चन्द्रराज इवाऽभवत् ।  
 सग्रहं यः सुवृत्तानां सुवृत्तानामिव व्यधात् ॥ १५ ॥  
 तस्य गोपेन्द्रराजोऽमूदनुजो यो मनीषिणाम् ।  
 गोपेन्द्रराजस्मृतिशृद् गोमण्डलवृते ॥ १७ ॥  
 ततो दुर्लभराजेन चन्द्रराजस्य सूनुना ।  
 यिनोदमेन गमिता वृद्धि कीर्तिलता भुवि ॥ १८ ॥  
 प्रजापतिपदग्रह्या पादगुण्यपुरुषोत्तमः ।  
 सुतो गोविन्दराजोऽस्य शक्तित्रयमहेश्वरः ॥ २१ ॥

नम्रममयमुल्लासमात्मभूतः शिवस्य च ।  
 द्वितीयश्चन्द्रराजोऽभूत् ततोऽरिध्वान्तचन्द्रमाः ॥ २२ ॥  
 सर्वराजाकंजीभूतः सर्वदिग्बलरीमधुः ।  
 गोवाकस्तत्भूतः सर्वद्वीपमण्डलयामिकः ॥ २३ ॥  
 नन्दनश्चन्दनस्तस्य यस्य नामन्युदीरिते ।  
 जनः सफल इत्युक्तिशेषाद् वृक्षभ्रमं जहौ ॥ २३ ॥  
 सुनुवक्पतिराजोऽस्य प्रसाद इव भूतिमान् ।  
 हिताय सर्वलोकानामुदपद्यत शास्त्रमवः ॥ ४० ॥  
 धर्मस्येव नवः सर्गः स्थितिः.....इव श्रियः ।  
 सिंहराजः सुतस्तथ संहार इव मान्मथः ॥ ४४ ॥  
 सिंहराजं तामलोक्य सिंहराजमिवाऽपरम् ।  
 धर्मस्य त्रिपदीच्छेदौ ननाम कलिकुञ्जरः ॥ ४६ ॥  
 सुनुविग्रहराजोऽस्य सापराधानपि द्विपः ।  
 दुर्वला इत्यनुष्यायन्नक्षत्रिय इवाऽभवत् ॥ ४७ ॥  
 त्यक्तं तपस्विना स्वच्छं यशोऽशुकमितीव यः ।  
 गुजंरं मूलराजाख्यं कन्यादुर्गमवीविशत् ॥ ५१ ॥  
 तस्य दुर्लभराजोऽभूदनुजो माधवानुगः ।  
 नारीणां सततं येन हृदये मदनायितम् ॥ ५४ ॥  
 यशांसि शीतलीकर्तुमिच्छयेव दिग्गङ्गनाः ।  
 यस्य गोविन्दराजाख्यः स तस्मादुदपद्यत ॥ ५६ ॥  
 तस्माद् वाक्पतिराजेन संभूतमवनीभुजा ॥  
 कलिः कृतो कृतो येन भूमिश्च त्रिविवीकृता ॥ ५८ ॥  
 अस्वाप्रसादमाघाटपतिं यः सेनयान्वितम् ॥  
 व्यसृजद् यशसः पश्चात् पार्श्वं दक्षिणदिग्पतेः ॥ ५९ ॥  
 वीर्यरामः सुतस्तस्य वीर्येण स्यात् स्मरोपमः ॥  
 यदि प्रसन्नया दृष्टयान् दृश्येत पिनाकिना ॥ ६५ ॥  
 अद्वितीयो रणाल् लब्धः शुद्धिमान् रक्षणोचितः ।  
 परित्यक्तो महायोधैः सहायत्वे स्थितैरपि ॥ ६६ ॥  
 अगम्यो यो नरेन्द्राणां सुधादीधितिसुन्दरः ।  
 जघ्ने यशश्चयो यश्च भोजेनाऽवन्तिभूभुजा ॥ ६७ ॥

तस्य चामुण्डराजेन कनिष्ठेन विनिर्ममे ।  
 विष्णोर्नरपुरे धाम विष्णुलोके तयात्मनः ॥ ६८ ॥  
 अमूद् दुर्लभराजोऽस्माद् यदीयैः प्रतियोगिमिः ।  
 चराचराणां तुष्टितं पादान्ते भूभृतां मयात् ॥ ६९ ॥  
 मातङ्गसमरे यस्मिन् धीरसिंहेऽस्तमागते ।  
 अपरागोऽनुतापश्च विधिना प्रापि कर्कशः ॥ ७० ॥  
 तस्य विग्रहराजेन मोगीन्द्रेणानुजन्मना ।  
 श्रेयेण च महोन्नारं त्याजिताः पृथिवीभृतः ॥ ७१ ॥  
 चकार दुर्बलानां यः क्षमामागस्विनामपि ।  
 जह्मे निरपराधानामपि यश्च बलीयसाम् ॥ ७२ ॥  
 मालवेनोदयादित्येनास्मादेवाऽऽप्यतोन्नतिः ।  
 मन्दाकिनी हृदादेव लेभे पूरणमधिना ॥ ७३ ॥  
 सारङ्गाख्य तुरङ्गं स ददौ यस्मै मनोजवम् ।  
 नह्युच्चैःश्रवसं क्षीरसिन्धोरन्यः प्रयच्छति ॥ ७४ ॥  
 जिगाय गुर्जरं कर्णं तमश्वं प्राप्य मालवः ।  
 लब्धानूरुः सूर्यरयं करोति व्योमलंघनम् ॥ ७५ ॥  
 पृथ्वीराजः सुतस्तस्मात् ततोऽभूदतिसारभृत् ।  
 कुमारग्रह्यचारी हि कुमारो मदनान्तकात् ॥ ७६ ॥  
 तस्माद् अजयराजोऽभूद् यदान्यो यद्वदान्यतः ।  
 सर्वरत्नप्रदात् सिन्धोः कल्पवृक्षस्य जन्म तत् ॥ ७७ ॥  
 भ्राष्ट्यः सल्हण इत्यस्य जप्यते नाम पार्थिवः ।  
 यीजाक्षरप्रयच्छायां धत्ते शक्तित्रयस्य यत् ॥ ७८ ॥  
 सोम्येन मालवपतिः सुल्हणो येन दीप्तिमान् ।  
 शमितोऽम्बुधरप्रस्तदवाग्निश्रियमानशे ॥ ७९ ॥  
 सोमलेखा प्रियाप्यस्य प्रत्यहं रूप्यकनैवैः ।  
 कृत्तरपि न संस्पर्शं कलङ्केन समासदत् ॥ ८० ॥  
 मायैः सम समुत्पन्नं प्रजामिः सह लालितम् ।  
 यद्विधत्तं मुहुतैः साकरुणोराजममृतं सा ॥ ८१ ॥  
 एवविधामजयमेरुगिरेः प्रतिष्ठां  
 कृत्वा स कीतुक इवाजयराजदेवः ।

दोर्धर्यसहृत्तनयं तनयं विधाय

सिंहासने त्रिदिवमीक्षितुमुच्चचाल ॥ १८९ ॥

अर्णोराजोऽय सावाशिवमनिशमनु याय रूपं प्रसन्नाद् ।

अस्मादन्नैव जन्मन्यतुलबलमिव प्राप्तपञ्चाननत्वम् ।

सर्वोर्वोपुण्डरीकप्रकटविघटनोन्मत्तम तङ्गराज-

त्रासायासावताख्यवसितमकरोत् पुष्करक्षेत्रमेकम् ॥ १९० ॥

( पञ्चम सर्ग )

अक्षीचिमागो मरुभूमिनामा खण्डो द्युलोकस्य च गूर्जराख्यः ।

परीक्षणायेव दिशि प्रतीच्यामेकीकृतौ पाशघरेण यो द्वौ ॥

तयोर्द्वयोरप्युदिते नरेन्द्रं तं वव्रतुस्तुल्यगुणे महिष्यौ ।

रसातलस्वर्गमवे इव द्वे त्रिलोचन चन्द्रकलात्रिसर्गे ॥

पूर्वा तयोर्नाम कृतार्थयन्ती तं प्राप्य कान्तं सुधवानिधाना ।

सुतानवापत् प्रकृतेः समानान् गुणानिवान्योन्यधिमैदिनस्त्रीन् ॥

एको दशग्रीव इवाचकाङ्क्ष पितुर्विरुद्धं व्यवहृत्य नाशम् ।

अन्येन बाल्येऽपि च कुम्भकर्णन्यायेन नामाप्यत..... ॥

आसीत् तृतीयस्तु मधुद्विपोऽशः सत्वोन्नतो विप्रहराजनामा ।

महाबला... .. ॥

( गूर्जरेन्द्रो जयसिंहस्तस्मै यां दत्तावान् सा काञ्चनदेवी रात्री  
च दिने च सोम सोमेश्वरसंज्ञमजनयत् । जोनराजटीका । )

उत्पत्स्यते कचन कार्यशेषं निर्मातुकामस्तनयोऽस्य रामः ।

सांवत्सरैरित्युदितानुभावं मातामहस्तं स्वपुरं निनाय ॥

( षष्ठ सर्ग )

अथ गूर्जरराजमूर्जितानां मुकुटालङ्करण कुमारपालः ।

अधिगम्य सुतासुतं तदीयं परिरक्षन्नमवद् ययार्थनामा ॥

प्रथमः सुधवासुतस्तदानीं परिचर्या जनकस्य तामकार्षीत् ।

प्रतिपाद्य जलाञ्जलि घृणायै विदधे यां भृगुनन्दनो जनन्याः ॥

न परं विदधे वृथागुणित्वं जनकं स्नेहमयं विनाश्य यावत् ।

स्वयमेव विनश्य गर्हणीयं व्यतनोद् दीप इवानुरागगन्धम् ॥

इति साहससाहचर्येनयः

समयज्ञः प्रयमोदतप्रभावाम् ।

तनयां स सपादलक्षपुण्य—

रूपयेमे त्रिपुरीपुरन्दरस्य ॥

उपेष्टस्य चरितार्थतामय नयद्रामान्तरापेक्षया ।

उपेष्टस्य प्रणयन् परंतपतया ग्रीष्मस्य मीष्मां स्थितिम् ॥

द्रादस्यास्तियिमुत्पयतामुपदिशन् भानीः प्रतापोन्नति ।

तन्वय गोत्रगुरोनिजेन नृपतेर्जजे सुतो जन्मना ॥

( सप्तम सर्ग )

[ पृथ्वीराजविजय महाकाव्य से ]

---

विप्रश्रीवत्सगोत्रेऽमृदहिच्छप्रपुरे पुरा ।

सामन्तोऽनन्तसामन्तपूर्णतल्लो नपस्ततः ॥ १२ ॥

तस्माच्छोजयराजविप्रहनूपो श्रीचन्द्रगोपेन्द्रकी ।

तस्माद् दुर्लभगूवकी शशिनूपो गूवाकसच्चन्वनी ।

श्रीमद्वप्पयराजविन्ध्यनृपतिः श्रीसिहराड्विप्रहो ।

श्रीमदुर्लभगदुवाक्पतिनृपाः श्रीवीर्यरामोऽनुजः ॥ १३ ॥

श्रीचण्डावनिपेति राणकधरः श्रीसिहलो दूसल—

स्तद्व्राताऽथ ततोऽपि बीसलनृपः श्रीराजदेवीप्रियः ।

पृथ्वीराजनृपोऽथ तत्तनुमवो रासत्यदेवीविभु—

स्तत्पुत्रोऽजयदेव इत्यवनिपः श्रीमल्लदेवीपतिः ॥ १४ ॥

हत्वापाधिगमिचलामिधयशोराजादिवीरग्रयं

क्षिप्रं क्रूरकृतान्तवक्त्रकुहरे श्रीमार्गदुर्गान्वितम् ।

श्रीमत्सोल्लणवण्डुनायकवरः संप्रामरङ्गगङ्गणे ।

जीवन्नेव नियन्त्रितः करमके येनेष्टनि तात् ॥ १५ ॥

अर्णोराजोऽस्य सनुधृतहृदयहरिः सत्ववाशिष्टसीमो

गामीयो दार्यवर्यः समभवदपरालम्बमध्यो नदीतप्तः ।

तच्चित्रं जन्तुजाद्यस्थितिरनृतमहापंकहेतुनं मध्यो ।

न श्रीमुक्तो न दोषाकररचितरतिनं द्विजिह्वाधिसेव्यः ॥ १६ ॥

चन्द्रार्घ्यं कुशधारणं प्रतिकृतं राजाङ्कुशेन स्वयं  
 देनाग्रैश्च न चित्रमेतदपुनर्मन्यामहे त प्रति ।  
 तच्चित्रं प्रतिभासते सुकृतिना निर्याणनारायण—  
 न्ययराचारणं भगकरणं श्रीदेवराज प्रति ॥ १७ ॥  
 पुण्यतपयिलासकर्ता विग्रहराजो जनिस्ततो चित्रम् ।  
 तत्तनयस्तच्चित्रं यत्र जडक्षीण सकलङ्कुः ॥ १८ ॥  
 आदानश्च कलमादानपतेर्यत्परस्य आदानः ।  
 यस्म दधत्करवालः विकरालः करतलाकलितः ॥ १९ ॥  
 कृतान्तपयसज्जोऽनूत सज्जनः सज्जनो भुवः ।  
 येकुन्त कुन्तपालोऽगाद यतो वंकुन्तपालकः ॥ २० ॥  
 जाबालिपुरं ज्वालापुरं कृता पल्लिका पल्ली ।  
 पातूलतूलतुल्यं रोपात् तद्वलं न शौर्येण ॥ २१ ॥  
 प्रतोल्यां च वलम्यां च येन विश्रामितं यशः ।  
 दिल्हिकाग्रहणग्रान्तमांशिकालाभलम्मितः ॥ २२ ॥  
 तज्ज्येष्ठभ्रातृपुत्रोऽनूत् पृथ्वीराजः प्रभूपमः ।  
 तस्मादजितदीनागो हेमपर्वतदानतः ॥ २३ ॥  
 यतिधर्मरते ..... पि पाशर्वनायस्वयंभुवे ।  
 दत्तं मोराकरी ग्रामं भुक्तिपुक्तिश्च हेतुना ॥ २४ ॥  
 स्वर्णादिदाननिवहैर्दशमिमहद्भिः—  
 स्तोत्रानरंनगरदानचर्मैश्च विप्राः ।  
 येनाचिताश्चतुरभूपतिवस्तुपाल—  
 माक्रम्य चारमनसिद्धिकरी गृहीतः ॥ २५ ॥  
 सोमेश्वराल् लब्धराज्यमततः सोमेश्वरो नृपः ।  
 सोमेश्वरनतो यस्माज् जनसोमेश्वरोऽभवत् ॥ २६ ॥  
 प्रतापलक्षेश्वर इत्यमिल्यां यः प्राप्तवान् प्रौढप्रभुप्रातापः ।  
 पश्यान्निमुह्ये वरवैरिमुह्याः केचिन्मृताः केचिदभिद्रुताश्च ॥ २७ ॥  
 येन श्रीपाशर्वनायाय रेवातीरे स्वयंभुवे ।  
 शासने रेवणागामो दत्तः स्वर्गाय कांक्षिणा ॥ २८ ॥

षड्विंशे द्वादशगते मासे कृष्णे च फाल्गुने ।  
 तृतीयायां तिथौ, वारे गुरौ, तारे च हस्तके ।  
 वृद्धिनामनि योगे च करणे तैत्तिले तथा ।  
 गृहिल पुत्र सदाम्बरमहंघणसिहाभ्यां दत्त.....  
 .....नैगमान्वय कायस्थ छोतिगसूनु केशवेन लिखितम् ।  
 नानिग गोविन्द सूनु पाल्हण पुत्र देल्हणेनोत्कीर्णम् ॥

—विजोलिया का शिलालेख

---

[ जनॅल आफ रायल एशियाटिक सोसाइटी आफ बङ्गाल,  
 जिल्द ४, भाग १, पृष्ठ ४९ । ]



स पुष्करं पुष्करपत्रनेत्रः स्वनेत्रयोराभरणीचकार ।  
 निर्वाणरन्मथ एति जगत्याः श्रेयः समापन्नमिव द्रवत्वम् ॥ २८ ॥  
 त तत्र विभ्रान्तदशं धरित्रीपुरन्दरं वीक्ष्य पुरः पुरोधाः ।  
 प्रस्ताववित् प्रस्तुतवस्तुतत्त्वविवेचिनीं वाचमिमां बभाषे ॥ ३१ ॥  
 प्रिया विनक्तात्मतनोरमुष्य धृतावतारस्य जगद्धिताय ।  
 नामापि कामं समुदीर्यमाणं नारायणस्येव पुनाति विश्वम् ॥ ३२ ॥  
 स्वयं विधाता स विधिविधीनां सकल्पमात्रोपचितैः पदार्यैः ।  
 प्रेतामिहाधाय जुहाव कुर्वन्मयोगिरो निश्चित्रीगुणाः कृतार्थाः ॥ ५० ॥  
 स्वयं स ईशः सकलस्य कर्ता सम समस्तरपि देवतैस्तैः ।  
 मत्तैरदृष्टैः कृतम् नु देव सप्रणीयामास न त विदामः ॥ ५१ ॥  
 तस्मिन् मन्त्रे ग्रहविदामुपीणां यः सामधोपस्त्रिदिवं जगाम ।  
 तिरोदधे दैवतकुन्दुमीनामनारतं तेन गभीरनादः ॥ ५५ ॥  
 इत्थं यितन्यन् विधिवद् वितानमुत्प्रेक्ष्य विघ्नस्य पुरोऽवतारम् ।  
 विधिविधिरसुः प्रतिकारमस्य दिदेश दृष्टिं दिवसाधिनाये ॥ ५७ ॥  
 विम्बादयाम्भोजयनस्य वन्द्योः स्वधामसन्दोहनिगूढदेहः ।  
 अयातरद् यातरयेण कश्चित् पुमान् पुरस्तात् परमेष्ठिनोऽस्य ॥ ५८ ॥  
 याणासनं सज्यमसि सशक्तिं महेषुधीं मार्गणपूगपूजां ।  
 विभ्रच्चतुर्बाहुरकातंवीर्यो वध विधास्यन् मलवाधकानाम् ॥ ५९ ॥  
 प्रुचं चतुर्बाहुरिति प्रसिद्धः स बाहुआणः किल लौकिकोत्तया ।  
 वशस्य कर्ता नयतां बभूव संरक्षितोऽधिक्षिति विश्वधात्रा ॥ ६० ॥

चीहानवशमवभूमिपुरन्दराणा-

माद्यो यथा तनुभृतां पुरुषः पुराणः ।

स्थातः क्षितावजनि दीक्षितवासुदेव-

नामा स्वधर्मसुमनीकृतवासुदेवः ॥ १ ॥

एतस्य वानसलिलव्ययितप्रवाहा

चमण्वती ध्रुवमघास्यत पङ्कमावम् ।

नापूरयिष्यत यदि प्रसमीपरुद्ध-

विद्वेषिवामनयनानयनाम्बुपूरः ॥ १८ ॥

वृन्दारकाधिपदशमपि लोभनीयां

वृन्दानि यः सुमनसां सुमना दधानाम् ।

वृन्दाटवीमभिमतामिव नन्दसुनु-

वृन्दावतीं पुरमनाकुलमध्युवास ॥ १९ ॥

तस्मावजायत सुतो नरदेवनाम्ना

घाम्ना परानधरयन् नरदेवमुख्यान् ।

रूपेण य निरुपमेण निरुप्यमाणं

नार्यो नराकृतिममन्वत देवमेव ॥ २० ॥

तेनाऽजनिष्ट यशसादितपूर्णचन्द्रः

श्रीचन्द्र इत्यमिहितस्तनयो नयज्ञः ।

यस्याऽऽसमुद्रमपनिद्रभुजप्रताप-

रेकातपत्रमवनीवलय वभूव ॥ २१ ॥

तस्मिन्नलङ्कृतवति त्रिदिव वयोन्ते

पुत्रः स्वपञ्चिकपद प्रतिपद्यते स्म ।

यः पालयन्नपि जय निजपीरुपेण

प्राप्तः क्षितावजयपाल इति प्रसिद्धिम् ॥ २२ ॥

उच्चैरतया ध्रुवमलङ्घ्यतया परेषां

तेनाजयेन निरमायि षरोऽपि मेरुः ।

तस्मादमूदजयमेरुरिति प्रसिद्ध

दुर्गं तददभुतफलं किल योगसिद्धेः ॥ २३ ॥

तेनापि स्रुतुरनुरूपगुणोज्ज्वलेन

राजन् जयेन जनितो जयराननामा ।

दोर्दण्डचण्डिमचमत्कृतिचारुदप्यत-

कोदण्डताण्डवितदण्डितवैरिवर्गः ॥ २४ ॥

मामन्तसिंह इति तस्य सुतः प्रतीतः  
 सिंहासन निजकुलोचितमारुह्यः ।  
 मामन्तधीरतपनास्तरसा रिपूणां  
 व्यद्राघवद् द्विपगणानिव दृप्तसिंहः ॥ २५ ॥  
 तस्यात्मजो गुरूपद्राः किल गूर्जकारव्यः  
 स्फूर्जत्प्रतापनरनजितवैरिवीजः ।  
 यस्मिन् वितन्वति निरन्तररत्नवर्षं  
 रत्नाकरा यवतिरेज्यिन एव सर्वे ॥ २६ ॥  
 तन्मन्दनो नरपतिभूवि चन्दनोऽभूद्  
 यन्मन्दनद्रव इवाखिलमन्दनोऽपि ।  
 लनो हवि प्रियविमुक्तारिपुप्रियाणां  
 नूमानमानयदनास्तमुग्रतापम् ॥ २७ ॥  
 प्रोद्धाहितावनिभूदुदतपक्षवज्रं  
 यज्यायुधप्रतिममायतविक्रमेण ।  
 राजन्यवीरनिकुरम्बकिरीटवज्रं  
 यज्यामिधं स तनय जनयोचकार ॥ २९ ॥  
 यज्यादजायत यशीकृतविश्वराज्यः  
 प्राज्येगुंणंजंगति विश्वपतिः प्रतीतः ।  
 यो विश्वनाथयनिताचरणावलम्बी  
 विश्वम्नराखिलपुत्रां विनरावनूय ॥ ३० ॥

( प्रथम सर्ग )

एवमुज्ज्वलितशीतिमण्डली मण्डलाग्रसचिवः शुचिग्रतः ।  
 घोरविश्वपतिरोजसाऽञ्जसा विश्वमेव वशमानिनाय सः ॥ ४२ ॥  
 मूनुस्स्य हरिराजसजया विधुतो हरिपदंजजीवनः ।  
 रहसा हरिगण विलङ्घयन् राजति स्म हरिवत् प्रभावतः ॥ ४३ ॥

( चतुर्थ सर्ग )

अजायतास्नादय सिंहराजः सिंहोजितो यस्य मूर्धे द्विपन्तः ।  
 विनेपुरागु स्फुटसिंहनादेन सिंहनादेरिव दानवेन्द्राः ॥ २ ॥  
 निजानुरूपं गुणरूपशीलैरयन्तिनायस्य ततस्तनूजाम् ।  
 मनोरमा नाम मनोमिरामागुदूदयानूढकुलप्रतिष्ठः ॥ १२ ॥

स्नेहेम पुत्रप्रतिमं ममापि जवीयसः पुत्रमतो युवानम् ।  
राज्येऽभिषेक्ष्यामि समक्षमेव भीमं रिपूणामिह भीमदेवम् ॥ ३० ॥

( पञ्चम सर्ग )

तस्य विग्रहदेवोऽभूत् तनयश्चाखिग्रहः ।  
विग्रहे वैरिवृन्दानां बहुशो दत्तनिग्रहः ॥ १ ॥  
स्वबलेन विनिजित्य गुर्जरान् भृशदुर्जयान् ।

राज्यं तेषां गुणप्राज्यमथ जग्राह विग्रहः ॥ ३ ॥

अजायत जयी तस्मात् तनुजो मनुजाधिपात् ।

कीर्तिनिन्दितकुन्देन्दुगुण्वदेव इति श्रुतः ॥ १५ ॥

सुतं बलमनामानं लभते स्म स भूपतिः ।

अगुणेया गुणा यस्य स्वर्गिणामपि बल्लभाः ॥ १६ ॥

तपस्वी तुरगारूढं गत्मानिव पद्मगम् ।

जीवग्राहं स जग्राह सप्राप्ते भोजभूपतिम् ॥ २२ ॥

ततस्तस्मिन् यशःशेषे शेषोपमयशोमरे ।

अभवत् पृथिवीनाथो रामनायस्तदात्मजः ॥ ३३ ॥

सुतोऽभूत् तस्य चामुण्डश्चण्डदोर्दण्डमण्डनः ॥

खण्डितारिचभूमुण्डश्चामुण्डागणतोषकृत् ॥ ३५ ॥

सुतं दुर्लभराजाख्यं कृत्वा राजानमार्यधीः ।

चामुण्डश्चण्डचूडस्य लोकं लोकोत्तरं ययौ ॥ ४३ ॥

सुतो द्रुसलदेवोऽथ जातो दुर्लभराजतः ।

कुशलो वीरचर्यायां चिरं वसुमतीमशात् ॥ ४४ ॥

तस्माद् विशालयशसो वीसलाख्यः सुतोऽजनिः ।

विषयान् वशयामास विश्वोद्गीतगुणेन यः ॥ ४५ ॥

भाकर्णकृष्टचापेन संगरे कर्णविक्रमम् ।

कर्णं संयम्य ककुभां कर्णपूरीकृतं यशः ॥ ४७ ॥

निबध्नाबन्धनिबन्धः स मूढे कर्णभूपतिम् ।

माबध्वेऽवन्तिमगरी जयश्रियमिवापराम् ॥ ४८ ॥

तस्मात् पृथुगुणात् पुत्रो जातो पृथुसमप्रभः ।

पूरयन् यशसा पृथ्वीं पृथ्वीराज इति स्मृतः ॥ ५२ ॥

चक्रप्रस्तनुजस्तस्य प्रपन्नो वनुजद्विषम् ।  
 विष्णोर्गो गुणदाहृत्य यत्हृणो यत्तमः सताम् ॥ ८३ ॥  
 यत्तमस्तपति नाक यत्हृणो वाहृलेय-  
 प्रतिविधिमधिष्ठत्तपद तस्य पुत्रः ।  
 अमरदेनलदेवः शत्रुवशाटवीना-  
 मनस इव समिद्धः सोमवद् बान्धवानाम् ॥ ८६ ॥

( षष्ठ सर्ग )

भजनि तस्य सुतः मुहृतालयः क्षितितले जगदेव इति श्रुतः ।  
 विपुलमस्त्यगुणो जगतोऽप्यलं वितरणाय वनीयंकवेत्सलः ॥ ८६ ॥  
 विशदश्रीतिमतोय विशालयन् विसलतमिव तामरसाकरः ।  
 न विल क्षीणलदेवमजीजनद् वसुसमानगुण यमुषाधिपः ॥ ८८ ॥  
 मुचरितः सतत जनरञ्जनव्यसनिनः खलु धीसलदेवतः ।  
 अजयपत इति प्रवितः सुतो रिपुसमाजजयी समजायत ॥ ८९ ॥

( अष्टम सर्ग )

नृक्ताऽयं चिरमयञ्चितयाचकोऽयं  
 योऽयं धर्माग्नपदधीमय योवनान्ते ।  
 व्यासञ्जयद्विजयिनी क्षितिपालतक्ष्मी  
 पुत्रे गुणोदयगरीयसि गङ्गादेवे ॥ ७३ ॥

( नवम सर्ग )

जगो गृदेवादेव गङ्गादेवात् सोमेश्वरो नाम समः स्मरेण ।  
 राज्यं गुणप्राज्यमनुक्रमतः क्रमागतं यः सुमुखः शशास ॥ १ ॥  
 शकुन्तलानां गुणरूपगीलः स कुन्तलानामधिपस्य पुत्रीम् ।  
 कपूरधारं जनतोचनानां कपूरदेवीमुदुवाह विद्वान् ॥ ४ ॥  
 अमृषतासो मुनयुतनूजो जयप्रनावाविक विक्रमद्विः ।  
 नृपतपोः पूर्वजमाह पृथ्वीराजं स माणिक्यमयानुजातम् ॥ ७ ॥  
 यमव्यधारा नवलक्षसंख्याः संख्येयसंख्येयगुणं भजन्ते ।  
 कन्या सताज्जायते काव्यकुञ्जक्षितीश्वरात् कान्तिमतीति नाम्ना ॥ १३ ॥  
 शनैः शनैः महःसमृद्धः सामन्तगुरवः सुमुखः समेतः ।  
 पनास्तिनाः पुनःपरिच्छदं च पुनोः परित्यज्य नृपः प्रतस्ये ॥ ५५ ॥

सामन्तमुख्यः समुपेत्य कश्चिन् मुदाऽयं मृपालमुवाजहार ।  
ससाधनः साधय तावद्विप्रस्थोन्मुखस्त्व सुमनाः सवारः ॥ १३३ ॥

ते हि प्रवीरा मनुजाकृतिं तां हठाध्वं वहन्तो दनुजावताराः ।  
आयोधनाग्रे निघन भजन्ते स्वभूतिलाभाय निजैच्छयेव ॥ ११७ ॥

एवं प्रवृत्ते पथि सपराये नृपो हरिप्रस्थमुपति यावत् ।  
क्रमेण तावत् पृथुविक्रमास्ते स्तोकावशेषाः सुमदा वसूवः ॥ १२५ ॥

कालेऽयं कालाग्निसमप्रतापो विजित्य सर्वाः स दिशः क्रमेण ।  
सहावदीनाह्वयम हवेषु महाबलं स्लेच्छपतिं ववन्ध ॥ १२९ ॥

जिह्वस्वभावं खलु राजनीतेर्दयाद्रभावाद्भवधीर्यं धीरः ।  
त्रिःसप्तकृतबोधिं निबध्य शत्रुं कारातिथीकृत्य विमुञ्चति स्म ॥ १३० ॥

तथोपकर्तारमसुं कृच्छन्ः कृत्वा सदम्भं यवनः प्रबन्धम् ।  
नियम्य देशं निजमानिनायं किमत्यकार्यं वत दुर्जनानाम् ॥ १३१ ॥

तं यन्त्रितं मन्त्रितमन्वनीतिर्धूपेतशस्त्रं विपरीतचेताः ।  
प्रणोदितः प्राणहरेण घात्रा वियोजयामास विलोचनाभ्याम् ॥ १३२ ॥

अथ भ्रमनं भूवल्लयं विवृण्वन् भोगावलीं भाग्यवितासमाजाम् ।  
चदाभिधः पूर्वमनेन विसृज्य मित्रीकृतं तत्र जगाम वन्दी ॥ १३५ ॥

इत्थं स निर्णयं समं नृपेण जगाम गोष्ठौ धवनाधिपस्य ।  
दिनैः कियद्भिर्निजविद्ययाऽसावरञ्जयत् तं सह मन्त्रिमुख्यैः ॥ १५३ ॥

अथैकदा चित्रकथाप्रसङ्गे साहावदीससवि स प्रगल्भः ।  
कुतूहलाद् भर्तारि सावधाने स्फीतां मुदा वाचमुवाजहार ॥ १५४ ॥

योऽसौ महाराज मूर्धे निरुध्य विनीतनेत्रो भवता निबद्धः ।  
अयंकटाहान् विशिखेन विध्येदेकेन सोऽतीक्ष्णमुखेन सप्त ॥ १५५ ॥

सुखोपविष्टेषु यथानिवेशं प्रवीरवर्गेषु कुतूहलेन ।  
आह्वाययामास सहावदीनः सहावनीशेन स बन्धिनं तम् ॥ १५९ ॥

अनावरारोपितकिञ्चिन्नीके सयोजिते तत्र शरेण चापे ।  
वन्दी वसाधे बहलीकृतेन स्वरेण शृण्वत्यधिपे घरण्याः ॥ १६३ ॥

उर्ध्वमहाराज यदा विदेशं वारत्रयं श्रोष्यति युष्मदीयम् ।  
शरेण कुण्ठेन धनुर्धरोऽयं लक्ष्यं तदा भेत्यति घः समक्षम् ॥ १६४ ॥

तथेति तस्य प्रहरेति वक्तुं व्यात्ताननस्य क्षततालुमूलः ।  
प्राणैः सहान्धङ्करणस्य शत्रोर्बवान्नियन्तुर्नि याय वागः ॥ १६५ ॥

निर्यातयन् धरमतीव तीव्रं यशो वितन्वन् विशदं जगत्याम् ।

फलेन हीनोऽपि महाफलोऽभूत् पृथ्वीपतेस्तस्य तवा पृषत्कः ॥ १६६ ॥

मयविस्मयशोकसङ्कुलान्तः-

करणवीरगणैरलक्ष्यमाणः ।

अधिरोप्य घनायुजं स वन्वी

क्षितिपाल कुरुजाङ्गल निनाय ॥ १६७ ॥

पुण्यक्षेत्रे तत्र स क्षत्रियाणां

वत्तानन्दे शौर्यशीटीर्यभाजाम् ।

पृथ्वीलोकं पूरयित्वा यशोभिः

पृथ्वीराजः प्रायतं प्राप लोकम् ॥ १६८ ॥

( दशम सर्ग )

[ सुर्जन चरित से ]

यज्ञाय पुण्यं कवचनं प्रवेशं द्रष्टुं विधातुर्भ्रमतः किलादी ।  
 प्रपेतिवत् पुष्करमाशु पाणिपद्मात् पराभूतमिवास्त्य मासा ॥ १४ ॥  
 ततः शुभं स्थानमिदं विमान्य प्रारब्धयज्ञो यमपास्तदन्यः ।  
 विशङ्क्य धीर्ति (दनुजव्रजेस्यः स्मेरस्य सस्मार सहस्ररस्मेः ॥ १५ ॥  
 अवातरन् मण्डलतोऽय मासां पत्युः पुमानुद्यतमण्डलाग्रः ।  
 तं चास्त्रियिच्याऽध्वदसीर्यैरक्षाविधौ व्यघादेयः सखः सुखेन ॥ १६ ॥  
 पपात यत पुष्करमंत्र पाणेः ख्यातं ततः पुष्करतीयमेतत् ।  
 यच्चायमेगोदय धीहमानः पुमानतोऽध्वारि स चाहमानः ॥ १७ ॥

(प्रथम सर्गः)

[ हम्मीर महाकाव्ये ]

॥ १४ ॥ यज्ञाय पुण्यं कवचनं प्रवेशं द्रष्टुं विधातुर्भ्रमतः किलादी ।  
 प्रपेतिवत् पुष्करमाशु पाणिपद्मात् पराभूतमिवास्त्य मासा ॥ १४ ॥  
 ततः शुभं स्थानमिदं विमान्य प्रारब्धयज्ञो यमपास्तदन्यः ।  
 विशङ्क्य धीर्ति (दनुजव्रजेस्यः स्मेरस्य सस्मार सहस्ररस्मेः ॥ १५ ॥  
 अवातरन् मण्डलतोऽय मासां पत्युः पुमानुद्यतमण्डलाग्रः ।  
 तं चास्त्रियिच्याऽध्वदसीर्यैरक्षाविधौ व्यघादेयः सखः सुखेन ॥ १६ ॥  
 पपात यत पुष्करमंत्र पाणेः ख्यातं ततः पुष्करतीयमेतत् ।  
 यच्चायमेगोदय धीहमानः पुमानतोऽध्वारि स चाहमानः ॥ १७ ॥



## हर्षनाथ के मंदिर का शिलालेख

( वि० सं० १०३० )

लाघः श्रीगुरुकाव्याप्रथितनरपतिश्राहमानान्वयोऽभूत्

श्रीमन्नागाद्यलोकप्रवरनृपसमालम्बवीरप्रतिष्ठः ।

प्रस्य श्रीहर्षदेवे चरसवनमयी मौतली कीर्तिमूर्ति-

लोकेश्यापि स्थिरंषा प्रपतति परमः..... ॥ १३ ॥

पुत्रः श्रीचन्द्रराजोऽभवदमलयशास्तस्य तीव्रप्रतापः

सुनुस्तस्याऽय भूपः प्रथम इव पुनर्गुरुकाव्यः प्रतापी ।

तस्माच्छ्रीचन्दनोऽभूत् क्षितिपतिभयवस्तोमरेशं सवर्षं  
हत्वा रुद्रेण भूपं समरभुवि वलाद्येन लब्ध्वा जयश्रीः ॥ १४ ॥

ततः परमतेजस्वी सदा समरजित्वरः ।

श्रीमान् वाक्पतिराजाख्यो महाराजोऽभवत् सुतः ॥ १५ ॥

येनादैर्न्यं स्वसैन्यं कथमपि दधता वाजिवत्या मुमुक्षु

प्रागेव प्रासितेभः सरसिक रिरटङ् डिडिमोडि..... ।

वन्दस्मामतु राज्ञां

समदमभिवहन्नागतोनन्तपादवं

क्षमापालस्तत्रपालो विशि दिक्षि गमितो ह्यनिषण्णः प्रसन्नः ॥ १६ ॥





लोकैर्यो हि महीतले ननु हरिश्चन्द्रोपमो गीयते  
त्यागैश्वर्यजयेषु कीर्तिरमला धर्मश्च यस्योज्ज्वलः ।  
येनावायि हराय मन्दिरकृते भक्त्या प्रभूतं वसु  
श्रीमद्वाक्पतिराजसूनु रसमः श्रीसिहराजोऽभवत् ॥ १७ ॥

हैममारोपितं येन शिवस्य भवनोपरि ।  
पूर्णचन्द्रोपमं स्वीयं भूतं यशः ..... पिण्डकम् ॥ १८ ॥  
( जित्वा ) तोमरनायकं सलवणं सैन्याधिपत्योद्धतं  
युद्धे येन नरेश्वराः प्रतिविशं निष्णाशिता निष्णुना ।  
कारावेक्ष्यनि मूरयश्च विधूतास्तावद्धि यावद् गूहे  
तन्मुत्तयर्थमुपागतो रघुकुले भूचक्रवर्ती स्वयम् ॥ १९ ॥  
श्रीमान् विप्रहराजोऽभूत् तत्सुतो वासवोपमः ।  
वङ्गलक्ष्मीजयश्रीश्च येनन्ते विधुरोद्धते ॥ २० ॥

श्रीसिहराजरहिता किल चिन्तयन्ती  
भीतेव सम्प्रति विभुर्ननु को ममेति ।  
येनात्मबाहुयुगले चिरसन्निवासं  
संवीरितेति वदता निजराजलक्ष्मीः ॥ २१ ॥  
येन दुष्टदमनेन सर्वतः साधिताऽखिलमहो स्वबाहुभिः ।  
लीलयेव दशवर्तिनी कृता किकरीव निजपादयोस्तले ॥ २२ ॥  
यस्य चारुचरितं सतां सदा शृण्वतां जगति कीर्तितं जनैः ।  
दृष्टिजातघनरोमकं ..... जायते तनुरलं मुहुर्मुहुः ॥ २३ ॥

मुक्ताहरैः सुतारैः प्रतरलतुरगैश्चास्वस्त्रैश्च शस्त्रैः  
कूर्पूरैः पूगपूरं मलयतश्चरैर्हैमभारैरपारैः ।  
उद्यद्दानैः समानैश्चलकुलगिरिभिर्दन्तवारैः सवारैः—  
निव्याजैः प्रातिरन्ध्रमिरिति भूतैः प्राभूतैर्यः सिद्धेवे ॥ २४ ॥  
छत्रधारी वरप्रामो द्वितीयः शंकराणकः ।  
तेनेमो हर्षनाथाय भक्त्या दत्तो सशासनो ॥ २५ ॥  
श्रीमद्बुलभराजेन योजुजेन विभूषितः ।

लक्ष्मणेनेव काकुत्स्थो विष्णुनेव हलायुधः ॥ २६ ॥

महाराजावली चासौ शम्भुमक्तिगुणोदया ।

श्रीहर्षः कुलदेवोऽस्यास्तरमाद् दिव्यः कुलक्रमः ॥ २७ ॥

अनन्तगोचरे श्रीमान् पण्डित औत्तरेश्वरः ।

पंचार्यलाकुलाम्नाये विश्वरूपोऽभवद् गुरुः ॥ २८ ॥

[ एपिग्राफिका इण्डिका, भाग द्वितीय, पृ० १२१ ]

## दोहा

इंद्रपथ्य यों पंडुकुल भुगतों वरष मनेक ।  
फिरि आई चौहान कै बिलसी घरं विवेक ॥ ११ ॥

## छन्द पद्धरी

चहुँवान कर्यो बहु वरष राज । प्रथिराज जुद्ध कीर्त वराज ॥  
लिय सात बार गोरी सुवष । पुनि भयो भूप तिय नेह अंध ॥  
बारह सै सम्बत् अन्त आई । लीनी सहाब दिल्ली दवाई ॥  
रन पकरि प्रथीराज सहाब । गजनई दुग लै गौ सिताब ॥  
तहँ गयो भट्ट वरबाइ चन्द । नूप सहित साहि कीनी निकंद ॥  
तब तै सुबद्यों तुरकान घोर । रोजानिवाज भुव भाई गोर ॥  
+ + ; । + + + ॥ १२ ॥

—छठा जंग

[ कवि सूदन, सुजान चरित, पृ० १५५, नांगरी प्रचारणी  
सभा काशी, सं० १९८०, द्वितीय संस्करण ]

## गाहड़वाल-वंश

१. यशोविग्रह

|

२. महीचन्द

|

३. चन्ददेव

|

४. मदनपाल

|

विग्रहपाल

|

( बदायूं की शाखा का मूल पुरुष )

५. गोविन्दचन्द

|

६. विजयचन्द

|

राजपाल

|

आस्फीतचन्द ( वत्सराज )

|

७. जयचन्द

|

माणिक्यचन्द

|

८. हरिश्चन्द

|

जजपाल (?)

|

मेघचन्द (?)

|

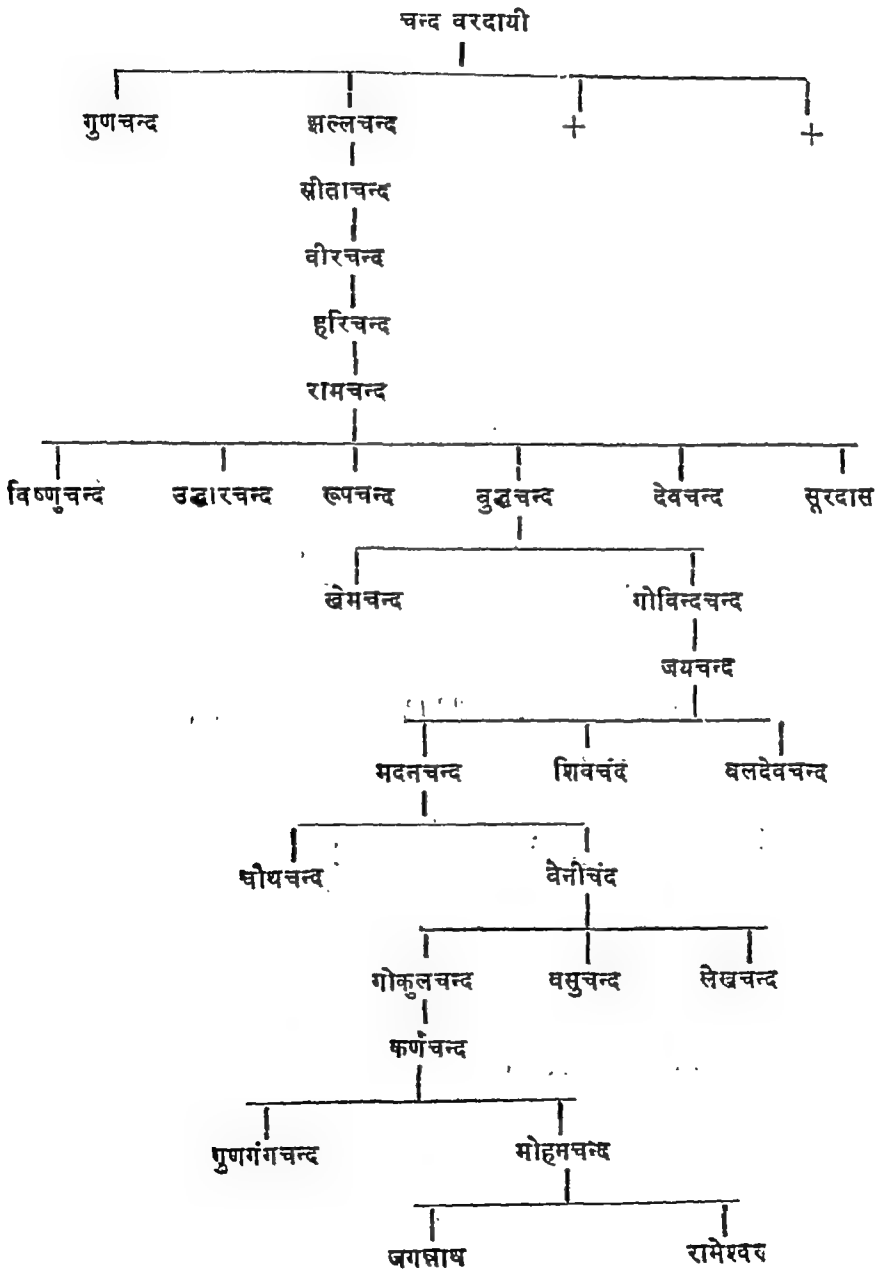
उदयपाल (?)

|

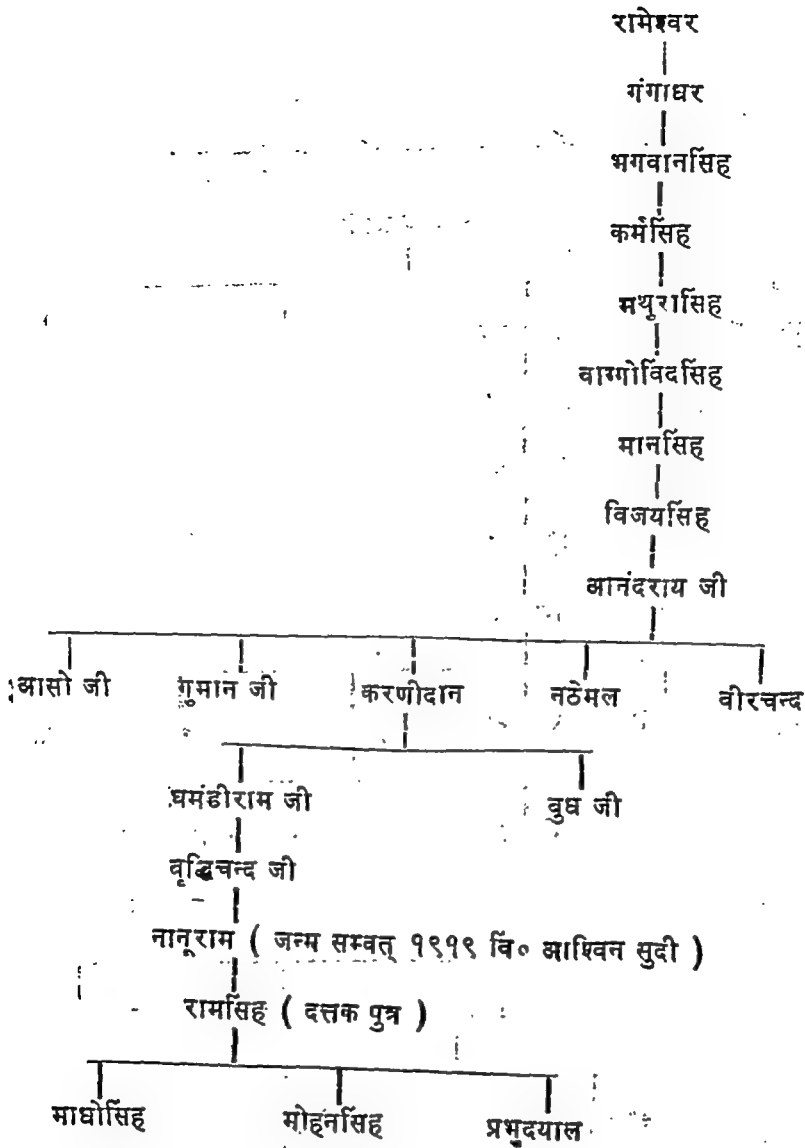
संयोगिता (?)

|

## महाकवि चन्द वरदायी का वंश वृक्ष







( सरस्वती, नवम्बर १९२९, पृ० ५१६ )

## दिल्ली के तंवरों की वंशावली (१)

[“श्री अगर्चंद नाहटा ने तंवरों की तीन वंशावलियाँ मेरे पास भेजी हैं। उनमें से एक जहांगीर कालीन है, दूसरी औरंगजेब कालीन और तीसरी लगभग सं० १८४५ की। दूसरी वंशावली पहली की नकल है, इसकी निजी स्वतंत्र सत्ता सर्वथा नगण्य है। तंवरों के राज्य के सैकड़ों वर्ष बाद लिखी हुई इन वंशावलियों में कुछ अशुद्धियों का होना स्वाभाविक है। तथापि इनके तुलनात्मक अध्ययन के लिए हम उनके अन्तर्गत आए हुए राजाओं के नाम यहाँ उद्धृत करते हैं।” — डॉ० दशरथ शर्मा ]

जहांगीर कालीन और औरंगजेब

सम्बत् १८४५ की वंशावली

कालीन वंशावली—

१. रउंपाल ( मणैपाल )	१. वीसलदेव
२. खडग	२. गंगदेव
३. हरिपाल	३. पृथ्वीराज
४. सुनपाल	४. सहदेव
५. तिहुणपाल	५. नरपाल
६. अनंगपाल प्रथम ( इसने सं० १०९९ में दिल्ली बसाई )	६. उदेरवि
७. शिवराज	७. जंदेव
८. पोपट	८. बछराज
९. महीराज	९. पीवक
१०. माहेदास	१०. विजैपाल
११. सधार	११. तेजपाल
१२. विग्रहराय	१२. गोपाल
१३. गोपाल	१३. सुलक्षण
१४. तिहुणपाल	१४. जसपाल
१५. हरपाल	१५. किरपाल
१६. जैतमल	१६. अनंगपाल
१७. अनंगपाल तृतीय	१७. तेजपाल
	१८. गोहणपाल
	१९. उकसपाल
	२०. पृथ्वीराज

नोट—डॉ० दशरथ ओझा उक्त दोनों वंशावलियों को अप्रामाणिक मानते हैं।

[ दिल्ली का तोमर ( तंवर ) राज्य, परिशिष्ट, पृ० २३, राजस्थानी नारती, नाग ३, अंक ३-४, जुलाई १९५३, ]

## दिल्ली के तंवरों की वंशावली (२)

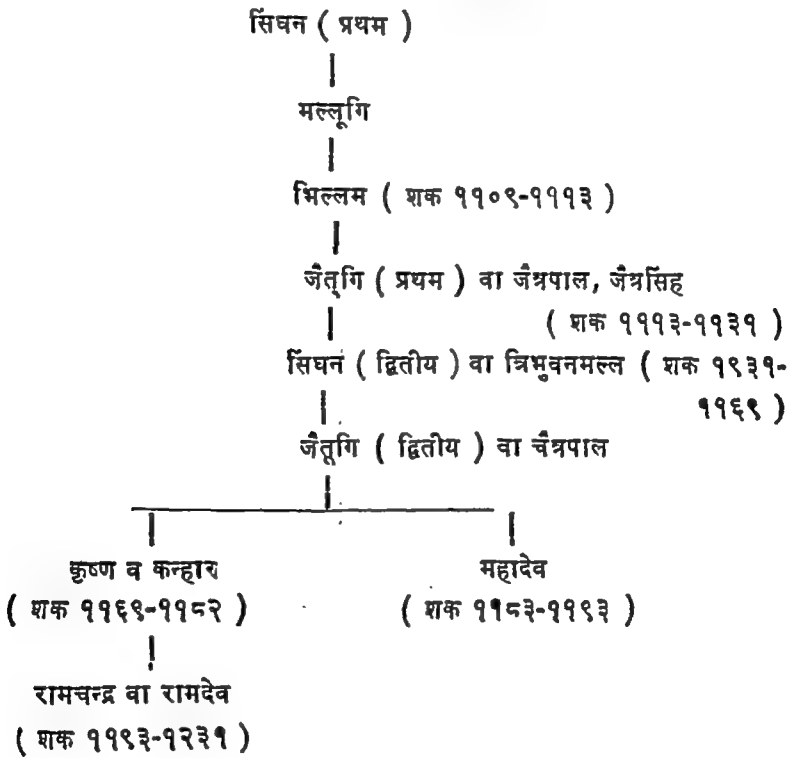
[ “श्री नाहुटा जी की वंशावलियों से कुछ प्राचीन आइने अकबरी की वंशावलियाँ हैं। दिल्ली के बीस राजाओं ने ४२७ वर्ष १ महिने और २८ दिन राज्य किया।” —डॉ० दशरथ शर्मा ]

		साल	महिना	दिन
१.	अनंगपाल	तंवर	१८	०
२.	बासदेव	”	१९	१८
३.	गंगू	”	२१	३
४.	पिरथीमल	”	१९	६
५.	जैदेव	”	२०	७
६.	निरपाल	”	१४	४
७.	अदह	”	२६	७
८.	विठ्ठराज	”	२१	२
९.	विल	”	२२	३
१०.	रघुपाल	”	२१	६
११.	नेकपाल	”	२०	४
१२.	गोपाल	”	१८	३
१३.	सुखलन	”	२५	२
१४.	जैपाल	”	१६	४
१५.	कंवरपाल	”	२९	९
१६.	अनेकपाल	”	२९	६
१७.	विजैपाल	”	२४	१
१८.	महीपाल	”	२५	२
१९.	अनेकपाल	”	२१	२
२०.	पिरथीराज	”	२२	३

नोट—डॉ० दशरथ शर्मा उक्त वंशावली को भी काल्पनिक मानते हैं और उनका राज्य काल भी।

[ दिल्ली का तोमर ( तंवर ) राज्य, परिशिष्ट, पृ० २४, राजस्थानी भारती, भाग ३, अंक ३-४, जुलाई १९५३। ]

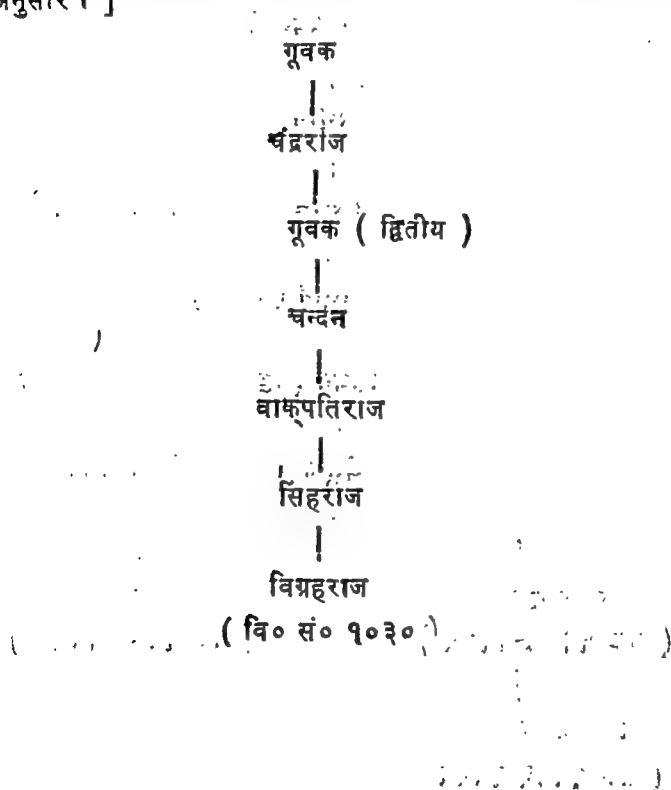
## [ देवगिरि के यादवों की वंशावली ]



[ हिन्दी शब्द सागर, पृ० १६१९ ]

## चौहानों की वंशावली (१)

[ महाराज विग्रहराज चौहान के, समकालीन वि० सं० १०३० की हर्षनाथ के मंदिर की प्रशस्ति के अनुसार । ]



[ हर्षनाथ के मंदिर के शिलालेख के लिए देखिए, परिशिष्ट सं० ६ ]

## चौहानों की वंशावली ( २ )

[ महाराज सोमेश्वर चौहान के समकालीन वि० सं० १२२६ के बिजोलिया के शिला-  
लेख के अनुसार ]

सामन्त

|

जयराज

|

विग्रह

|

चन्द्र

|

गोपेन्द्र

|

दुर्लभ

|

गुवक

|

शशिनूप

|

गुवक ( द्वितीय )

|

दन्दन

|

वाप्पयराज

|

सिहराज

|

विग्रह

|

दुर्लभ

|

गुंड

|

( १ ) वाक्पति

वीर्यराम

चामुंड

सिंहट

दुसल

वीसल

पृथ्वीराज

अजयदेव

अर्णोराज

विग्रहराज

पृथ्वीराज ( द्वितीय )

सोमेश्वर ( वि० सं० १२२६ )

[ बिजोलिया के शिलालेख के मूल पाठ के लिए देखिए, परिशिष्ट सं० ३ ]

## चौहानों की वंशावली ( ३ )

[ महाकवि जयानक कृत पृथ्वीराजविजय-महाकाव्य के अनुसार ]

चाहमान  
 ।  
 वासुदेव  
 ।  
 सामंतराज  
 ।  
 जयराज  
 ।  
 विग्रहराज  
 ।  
 चन्द्रराज  
 ।  
 गोपेन्द्रराज  
 ।  
 दुर्लभराज  
 ।  
 गोविंदराज  
 ।  
 चंद्रराज ( द्वितीय )  
 ।  
 गुवक  
 ।  
 चंदनराज  
 ।  
 वाक्पति  
 ।  
 सिहराज  
 ।  
 विग्रहराज ( द्वितीय )  
 ।



[ ४७० ]

दुर्लभराज

।

गोविंदराज

।

वाक्पतिराज ( द्वितीय )

।

वीर्यराय

।

चामुंड

।

दुर्लभ

।

विग्रहराज ( तृतीय )

।

पृथ्वीराज

।

अजयराज

।

अर्णोराज

।

विग्रह ( चतुर्थ )

।

अपरगंगेय

।

पृथ्वीभट

।

सोमेश्वर

।

---

पृथ्वीराज

हरिराज

[ पृथ्वीराजविजय महाकाव्य के मूलपाठ के लिए देखिए परिशिष्ट सं० २ ]

## चौहानों की वंशावली (४)

[ विक्रमी सम्वत् १५ वीं शताब्दी के आसपास विरचित प्रबन्ध-कोश के अन्त में दी हुई चौहानों की वंशावली के अनुसार । ]

वासुदेव

|

सामन्त

|

नरदेव

|

अजयराज

|

विग्रहराज

|

विजयराज

|

चन्द्रराज

|

गोविन्दराज

|

दुर्लभराज

|

वत्सराज

|

सिंहराज

|

दुर्योधन

|

विजयराज

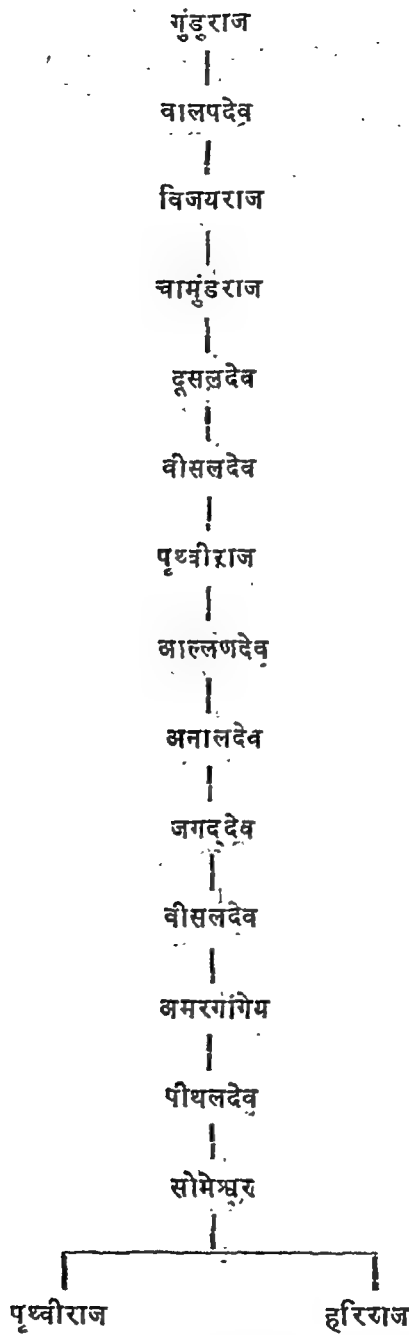
|

चप्पेयीवर

|

दुर्लभराज

|



नोट—[ प्रवन्ध कोश के मूल पाठ के लिए देखिए, परिशिष्ट सं० १ ]

## चौहानों की वंशावली ( ५ )

[ वि० सं० १४६० के आस-पास विरचित हम्मीर महाकाव्य के अनुसार ]

बाहसान

वासुदेव

नरदेव

चंद्रराज

जयपाल चक्री

जयराज

सामंत सिंह

गुप्तक

मंदत

वपराज

हरिराज

सिंहराज

भीम

विग्रहराज

गंगदेव

वल्लभराज

राम

चामुंडराज

दुलभराज

दुसल

बीसल

पृथ्वीराज

मलिहणदेव

जनालदेव

जगदेव

बीसलदेव

जयपाल

गंगपाल

सोमेश्वर

पृथ्वीराज

हरिराज

[ हम्मीर महाकाव्य के मूल पाठ के लिए देखिए, परिलिख्ट सं० ५ ]

## चौहानों की वंशावली (६)

[ वि० सं० १६३५ के आस-पास विरचित सुर्जन चरित काव्य के अनुसार ]

वासुदेव

नरदेव

अजयपाल

अजयराज

सामंतसिंह

गुजर

चंद्र

वज्र

विश्वपति

हरिराज

भीम

विग्रहदेव

गंडुदेव

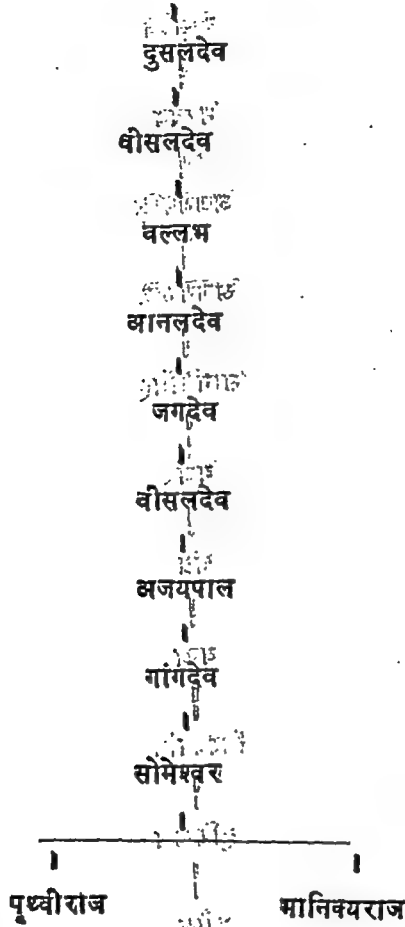
वल्लभ

रामनाथ

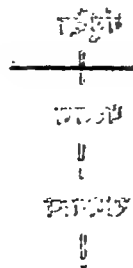
!

(३) चामुंडा के विजय

[ मातृका देवता का नाम दुर्गा देवी ]



[ सुबंन चरित के मूल पाठ के लिए देखिए, परिशिष्ट सं०-४ ]



## चौहानों की वंशावली ( ८ )

[ पंडित सदाशिव दीक्षित ने चौहानों की वंशावली शिलालेख एवं विभिन्न संस्कृत के ग्रन्थों के आधार पर इस प्रकार प्रस्तुत की है । ]

चाहमान

।

वासुदेव

।

सामंत

।

महादेव

।

जयराज

।

विग्रहराज

।

चंद्र

।

गोपेन्द्र

।

दुर्लभ

।

गुवक

।

चन्द्रराज

।

गुवक

।

चन्दन

।

धाकपतिराज

।



( ८ ) हरिराज ( अप्रमाणिक )

हरिराज ( अप्रमाणिक )

विग्रहराज

वपेयीवर ( अप्रमाणिक )

दुर्लभ

गुड्ड

वाक्पति

वीर्यराम

चामुण्ड

सिंहट

दूसल

वीसल

पृथ्वीराज

अजयदेव

अर्णोराज

जयसिंह

विग्रहराज ( चतुर्थ )

[ ४७९ ]

जयपाल

।

पृथ्वीराज

।

सोमेश्वर

।

पृथ्वीराज

[

४७९

[ भीमदेव चालुक्य का वंश वृक्ष, श्री के० एम० मुंशी के अनुसार ]

चालुक्य वंश (१)

१. मूलराज	सन्	९४२	—	९९६
२. चामुण्डराय	"	९९६	—	१०१०
३. वल्लभराज	"	१०१०	—	१०१०
४. दुर्लभराज	"	१०१०	—	१०२२
५. भीमदेव ( प्रथम )	"	१०२२	—	१०६४
६. कर्णदेव ( प्रथम )	"	१०६४	—	१०९६
७. जयसिंह ( सिद्धराज )	"	१०९६	—	११४४
८. कुमारपाल	"	११४४	—	११७३
९. अजयपाल	"	११७३	—	११७६
१०. मूलराज ( द्वितीय )	"	११७६	—	११७८
११. भीमदेव ( द्वितीय )	"	११७८	—	... ..

( The Glory that was Gurjaradesa pt. III Bharatiya Vidya Bhavan Bombay. 1 st. Edition 1944. )

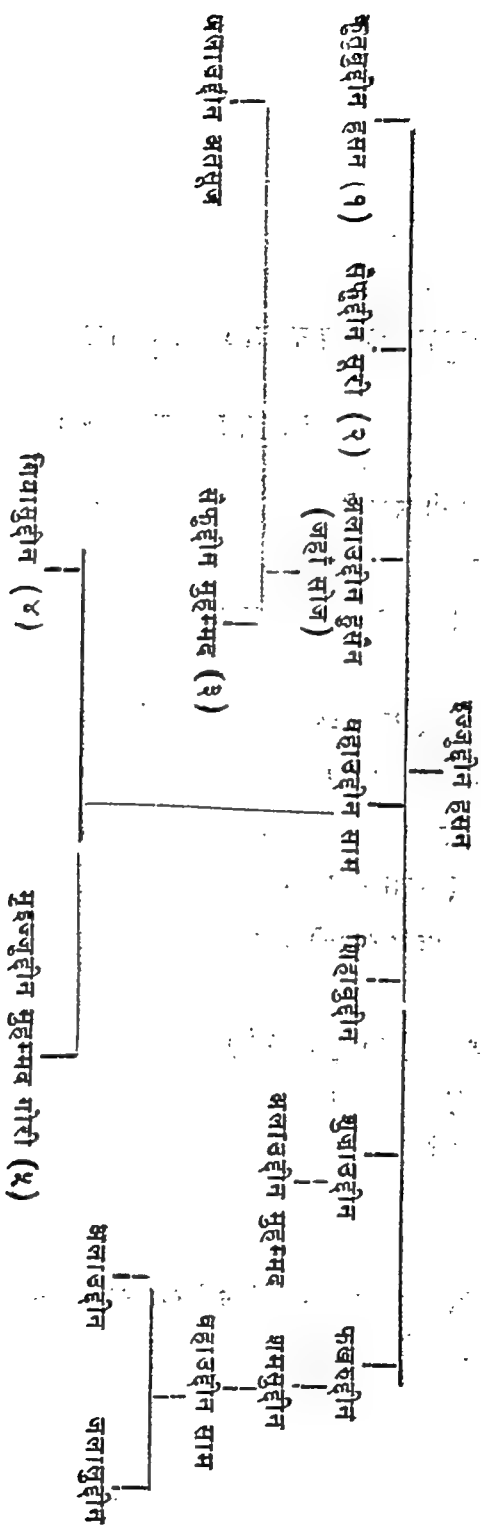
[ भीमदेव चालुक्य का वंश डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल के अनुसार ]

चालुक्य वंश—(२)

१. मूलराज ( पत्नी माधवी )	विक्रम	सम्बत्	९९८	—	१०५३
२. चामुण्डराज	"	"	१०५३	—	१०६६
३. वल्लभराज ( छह मास राज किया )	"	"	१०६६	—	.....
४. दुर्लभराज	"	"	१०६६	—	१०८०
५. भीमदेव प्रथम ( पत्नी उदयमती )	"	"	१०८०	—	११२२
६. कर्ण सोलंकी ( पत्नी मयवलन देवी )	"	"	११२२	—	११५०
७. जयसिंह, सिद्धराज	"	"	११५०	—	१२००
८. कुमारपाल ( पत्नी भूपाल देवी )	"	"	१२००	—	१२२९
९. अजयपाल ( पत्नी नायकी देवी )	"	"	१२२९	—	१२३२
१०. मूलराज द्वितीय	"	"	१२३२	—	१२३५
११. भीमदेव द्वितीय ( पत्नी सुभलादेवी ) ( भोलाराय )	"	"	१२३५	—	१२९८
१२. त्रिभुवनपाल देव	"	"	१२९८	—	१३०२

( फॉर्म विरचित 'रास माला' के हिन्दी अनुवाद की नूतिका, पृ० ७, मंगल प्रकाशन  
जयपुर, सन् १९५८ । )

## मुहज्जुद्दीन मुहम्मद गोरी का वंश वृक्ष



भारत में इसका उत्तराधिकारी ऐबक ग़ुलाम हुआ ।

## सहायक ग्रन्थ-सूची

अर्थशास्त्र	— कौटिल्य ।
अथर्ववेद	
अपभ्रंश काव्यत्रयी	— जिनदत्त सूरि, सं० लालचन्द भगवानदास गांधी ।
असली पृथ्वीराज रासो	— म० म० प० मयूराप्रसाद दीक्षित ।
आइने-अकबरी	— अबुलफजल ।
आबूरास	— —
आल्हा की कथा	— द्वारिकाप्रसाद चतुर्वेदी ।
आल्हखण्ड	— जगनिक, वेंकटेश्वर प्रेस बम्बई ।
आल्हखण्ड	— जगनिक, सरस्वती पुस्तकालय ।
इतिहास प्रवेश	— जयचन्द विद्यालकार, सं० काशीप्रसाद जायसवाल ।
उदयपुर राज्य का इतिहास	— म० म० प० गौरीशंकर हीराचन्द ओसा ।
उपदेश रसायन रास	— जिनदत्त सूरि ।
ऊंदर रासो	— —
ऋग्वेद	— —
ऐतिहासिक बातें	— कविराज बांकीदास ।
कछली रास	— प्रज्ञा तिलक ।
करहिआ री रायसो	— —
कान्हड़दे प्रबंध	— —
कायमरास	— कवि जान ।
काव्यानुशासनम्	— आचार्य हेमचन्द्र सूरि ।
कुमारपाल रास	— ऋषभदास ।
कोशोत्सव स्मारक संग्रह	— सं० गौरीशंकर हीराचन्द ओसा ।

छटमलरास	— —
खरतरगच्छ पट्टावली	— —
सुमान रासो	— दलपति विजय ।
गयसुकुमाल रास	— देहूण ।
गिरिनार रास	— —
गीतम रास	— विनय प्रभ ।
गोधा रास	— ज्ञानदास ।
चन्द्रवरदायी और उनका काव्य—	डॉ० विपिनविहारी त्रिवेदी ।
चन्दनवाला रास	— कवि आसगु ।
चर्चरी	— जिनदत्त सूरि ।
छत्रसाल रासो	— इंगरसी ।
जम्बूकुमार रास	— धर्म सूरि ।
जीवदया रास	— कवि आसगु ।
जोधपुर राज्य का इतिहास	— म०म० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा ।
तबकाते नासिरी	— हुसन निजामी ।
दशार्णभिद्र रास	— —
द्रव्यगुणपर्ययरासः	— यशोविजय ।
दिल्ली सल्तनत	— डॉ० आशीर्वादीलाल श्रीवास्तव ।
पद्मावत	— मलिक मुहम्मद जायसी, स० पं० रामचन्द्र शुक्ल ।
पद्मावत	— जायसी, स० डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल ।
परमाल रासो	— अज्ञात, स० बाबू श्यामसुन्दरदास ।
पुरातन प्रबंध संग्रह	— स० मुनिराज जिनविजय ।
पृथ्वीराज चरित्र	— बाबू रामनारायण दूगड़ ।
पृथ्वीराज रासो जि० १-७	— चन्द्र खरदायी, नागरी प्रचारणी सभा काशी ।
पृथ्वीराज रासो जि० १-४	— साहित्य संस्थान उदयपुर (राजस्थान) ।
पृथ्वीराज रासो (अप्रकाशित)—	रायल एशियाटिक सोसाइटी, लन्दन ।
पृथ्वीराज रासो (लघुतम रूपान्तर)—	धारणोज ।
पृथ्वीराज रासो (एक समीक्षा)—	डॉ० विपिनविहारी त्रिवेदी ।
पृथ्वीराज रासो की कथानक रूढ़ियाँ—	ब्रजविलास श्रीवास्तव ।
पृथ्वीराज रासो की भाषा	डॉ० नामवर सिंह ।
प्राचीन गुर्जर काव्य संग्रह	— चिम्मनलाल दर्लाल ।
प्रबंध कोष	— —
प्रेमी अभिनन्दन ग्रन्थ	— —
बलभद्र विलास	— —

बिहार एक ऐतिहासिक दिग्दर्शन—जयचन्द्र विद्यालंकार ।	
बुद्धिरास	— शालिभद्र सूरि ।
बुद्धि रासो	— जल्ह ।
भरतेश्वर बाहुबलिरास	— शालिभद्र सूरि ।
भविष्य पुराण	— —
भविष्यत कहा	— घणवाल ( घनपाल जैन ) ।
भारत का बृहत् इतिहास	— श्रीनेत्र पाण्डेय ।
भारतीय संस्कृति और उसका इतिहास—सत्यकेतु विद्यालंकार ।	
महाभारत	— व्यास ।
मारवाड़ का इतिहास	— जगदीशसिंह गहलोत ।
मांकड़ रासो	— कवि कान्ह ।
मिश्र बंधु विनोद	— मिश्र बंधु ।
मज्जु रास	— अज्ञात ।
मुक्तावलि रास	— जीवंधरे ।
मानव धर्म शास्त्र	— —
मुहणोत नैन सी की ख्यात	— नागरी प्रचारणी सभा काशी ।
यजुर्वेद	— —
रतन रासो	— कुंभकर्ण सांदू ।
राउ जैत सी री रासो	— अज्ञात ।
राजतरंगिनी	— कल्हण ।
राजपूताने का प्रारम्भिक इतिहास—सी० वी० वैद्य ।	
राजपूताने का इतिहास	— म० म० गोरीशंकर हीराचन्द जोषा ।
राजस्थान की जातियाँ	— बजरंगलाल लोहिया ।
राजस्थानी भाषा और साहित्य—पं० मोतीलाल मेनारिया ।	
राणा रासो	— दयालदास सिद्धायच ।
रामायण	— वाल्मीकि ।
राम रासो	— माधवदास दधवाडिया ।
रास माला (दो भाग)	— फावंस, अ० गोपालनारायण बहुरा ।
रास और रासान्वीय काव्य	— डॉ० दशरथ शर्मा एवं डॉ० दशरथ जोषा ।
रासो समीक्षा	— पं० सदाशिव दीक्षित ।
रासो सार	— श्यामसुन्दर दास, नागरी प्रचारणी सभा काशी ।
रासो साहित्य विमर्श	— डॉ० माताप्रसाद गुप्त ।
राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त अभिनन्दन ग्रन्थ—	
रेवंतगिरि रास	— विजयसेन सूरि ।



रेवातट	— डॉ० विपिनविहारी त्रिवेदी ।
ललित चित्रहराज नाटक	— —
वंशभास्कर	— सूर्यमल्ल मिश्रण ।
वस्तुपाल तेजपाल रास	— —
विचार और विवेचन	— डॉ० विपिनविहारी त्रिवेदी ।
विजयपाल रासो	— नल्लसिंह भट्ट ।
विष्णु पुराण	— —
वीर काव्य	— डॉ० उदयनारायण तिवारी ।
वीर सतसई	— सूर्यमल्ल मिश्रण ।
वीर सतसई	— श्री-वियोगी हरि ।
वीसलदेव रासो	— नरपति नाल्ह, सं० सत्यजीवन वर्मा ।
वेलक्रिसन रुक्मिणी री	— पृथ्वीराज राठौर ।
संक्षिप्त पृथ्वीराज रासो	— डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी और डॉ० नामवर सिंह ।
संदेश रासक	— अद्दहमाण, सं० मुनिराज जिनविजय ।
सगतसिंह रासो	— गिरधर चारण ।
समरसिंह रास	— —
साहित्य जिज्ञासा	— प्रो० ललिताप्रसाद सुकुल ।
सुजान चरित	— सूदन ।
सोलकियों का प्राचीन इतिहास—म० म० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा ।	
हम्मीर रासो	— जोषराज ।
हम्मीर हठ	— चन्द्रशेखर बाजपेयी ।
हिन्दी के विकास में अपभ्रंश का योग—डॉ० नामवर सिंह ।	
हिन्दी महाकाव्य का स्वरूप विकास —डॉ० शम्भूनाथ सिंह ।	
हिन्दी वीर काव्य	— डॉ० टीकमसिंह तोमर ।
हिन्दी साहित्य	— डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी ।
हिन्दी साहित्य का आदिकाल—डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी ।	
हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास—डॉ० रामकुमार वर्मा ।	
हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास—डॉ० अब्राहम जार्ज ग्रियर्सन, अ० किशोरीलाल गुप्त ।	
हिन्दी साहित्य का इतिहास	— आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ।
हेमशब्दानुशासनम्	— आचार्य हेमचन्द्र सूरी ।
क्षत्र कुल वंशावली-काव्य)	— राजा रणजोर सिंह ।

## कोश—

संक्षिप्त हिन्दी शब्द सागर ।

नालन्दा हिन्दी शब्द कोश ।

## पत्रिकाएं—

आलोचना ।

मरु भारती ।

माधुरी ।

नागरी प्रचारिणी पत्रिका ।

राजस्थान भारती ।

राजस्थानी ।

विशाल भारत ।

शोध पत्रिका ( उदयपुर ) ।

सरस्वती ।

साहित्य सन्देश ।

हिन्दुस्तानी ।

हिन्दी अनुशीलन ।

## संस्कृत—

अर्थशास्त्र

— कीटिल्य ।

अथर्ववेद

—

ऋग्वेद

—

कादम्बरी

— वाणभट्ट ।

तैत्तिरिय ब्राह्मण

—

नवसाह सांक चरित

— पद्मगुप्त (परिमल) ।

प्रबन्ध कोष

—

प्रबन्ध चिन्तामणि

—

पुरातन प्रबंध संग्रह

— सं० मुनि जिन विजय ।

पृथ्वीराज महाकाव्यम्

— जयानक ।

भविष्य पुराण

—

मनुस्मृति

—

महाभारत

— व्यास ।

मालविकाग्निमित्र नाटक

— कालिदास ।

रम्भा मंजरी ( नाटिका )	— नयचन्द सूरि ।
रामायण	— वाल्मीकि ।
ललित विग्रहराज नाटक	— —
विष्णु पुराण	— —
साहित्य दर्पण	— आचार्य विश्वनाथ ।
सुर्जन चरित महाकाव्य	— चन्द्रशेखर ।
सौन्दरानन्द काव्य	— अश्वघोष ।
हम्मीर महाकाव्य	— नयचन्द सूरि ।
हर्ष चरित	— बाण भट्ट ।

### अंग्रेजी—

आइने-अकबरी	— अबुल फजल, रा० ए० सी० बंगाल ।
आन युवान ज्वान ट्रेवल्स	— ले० वाटर्स ।
ऑक्सफोर्ड हिस्ट्री ऑव इंडिया—	वी० ए० स्मिथ ।
एनल्स एण्ड ऐटीक्वटीज ऑव राजस्थान—	कर्नल टॉड ।
एन्शियन्ट एंड मीडियल नैपाल —	रेजमी ।
ए डिस्क्रिप्सन ऑव इंडियन एण्ड ओरियंटल आर्म्स—	लाहंड ईगर्टन ।
ए हिस्ट्री ऑव संस्कृत लिटरेचर—	एस० एन० दास गुप्ता तथा एस० के० ई ।
कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑव इण्डिया —	वाट्स ।
कास्ट एण्ड ट्राइव	— रेसल ।
ग्लोरी दैट वाज गुर्जरदेश	— के० एम० मुंशी ।
तवकते-नासरी	— स० रेवर्टी ।
दि ले आव आल्हा	— डब्ल्यू वाटर फील्ड ।
दि आर्मी आव दि इण्डियन मुगल्स—	विलियम हरविन ।
दि फाउंडेशन ऑव मुस्लिम रूल इन इण्डिया—	ए० वी० एम० हबीबुल्ला ।
न्यू लाइट आन दि चाहमान हिस्ट्री—	यू० सी० भट्टाचार्य ।
ट्राइव्स एण्ड कास्ट्स आव नार्दन वेस्ट पंजाब एण्ड अवध—	—
डायनेस्टिक हिस्ट्री आव नार्दन इण्डिया—	डॉ० हेमचन्द राय ।
—	—

मिडीवल हिन्दू इण्डिया—डॉ० ईश्वरीप्रसाद ।

मैमरीज ऑव एशियाटिक सोसाइटी, बंगाल—रा० ए० सो० बंगाल ।

मैम्बायर्स ऑव बावर — लीडेन और एस लाइन ।

राजपूतस — एच० एस० विग्ले ।

राजतरंगिणी — कल्हन, सं० स्टेन कोनो ।

राजस्थान — कर्नल टॉड ।

रास माला — फार्बस ।

हिन्दू ट्राइव्स एंड कास्टम्स — श्रिग ।

हिस्ट्री ऑव इण्डिया ऐज टोल्ड वाई इट्स ओन हिस्टोरिअन्स—इलियट एण्ड हाउसन ।

हिस्ट्री ऑव कन्नौज — डॉ० रामशंकर त्रिपाठी ।

हिस्ट्री ऑव मेडीवल हिन्दू इंडिया — सी० वी० वैद्य ।

## विश्वकोश

एन्साइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका

## गजेटियर

डिस्ट्रिक्ट गजेटियर यू० पी० मिर्जापुर ।

गजेटियर ऑव बाम्बे प्रेसीडेन्सी ।

कैप्टन लुअर्ड सैन्ट्रल इण्डिया गजेटियर सीरीज ।

इम्पीरियल गैजेटियर ऑव इण्डिया—स्मिथ ।

इम्पीरियल गैजेटियर ऑव इण्डिया — जार्ज ग्रियर्सन ।

## जर्नल्स एण्ड पीरिओडिकल्स

आर्कैलाजिकल सर्वे ऑव इण्डिया ।

इण्डियन एण्टीक्वेरी ।

एशियाटिक जर्नल ।

एपिग्राफिया इण्डिका ।

जर्नल ऑव दि अमेरिकन ओरियंटल सोसाइटी ।

जनरल आव दि पंजाब हिस्टारिकल सोसाइटी ।

जनरल आव दि वाम्बे ब्रांच आव दि रायल एशियाटिक सोसाइटी ।

जनरल आव दि रायल एशियाटिक सोसाइटी आव बंगाल ।

प्रोग्रेस रिपोर्ट आव आर्क्योलॉजिकल सर्वे आव इण्डिया ।

प्रिलिमिनरी रिपोर्ट आन दि आपरेशन इनसचं आव मैनुस्क्रिप्टस आव वाडिक  
क्रानिकल्स—म० म० हरप्रसाद शास्त्री ।

